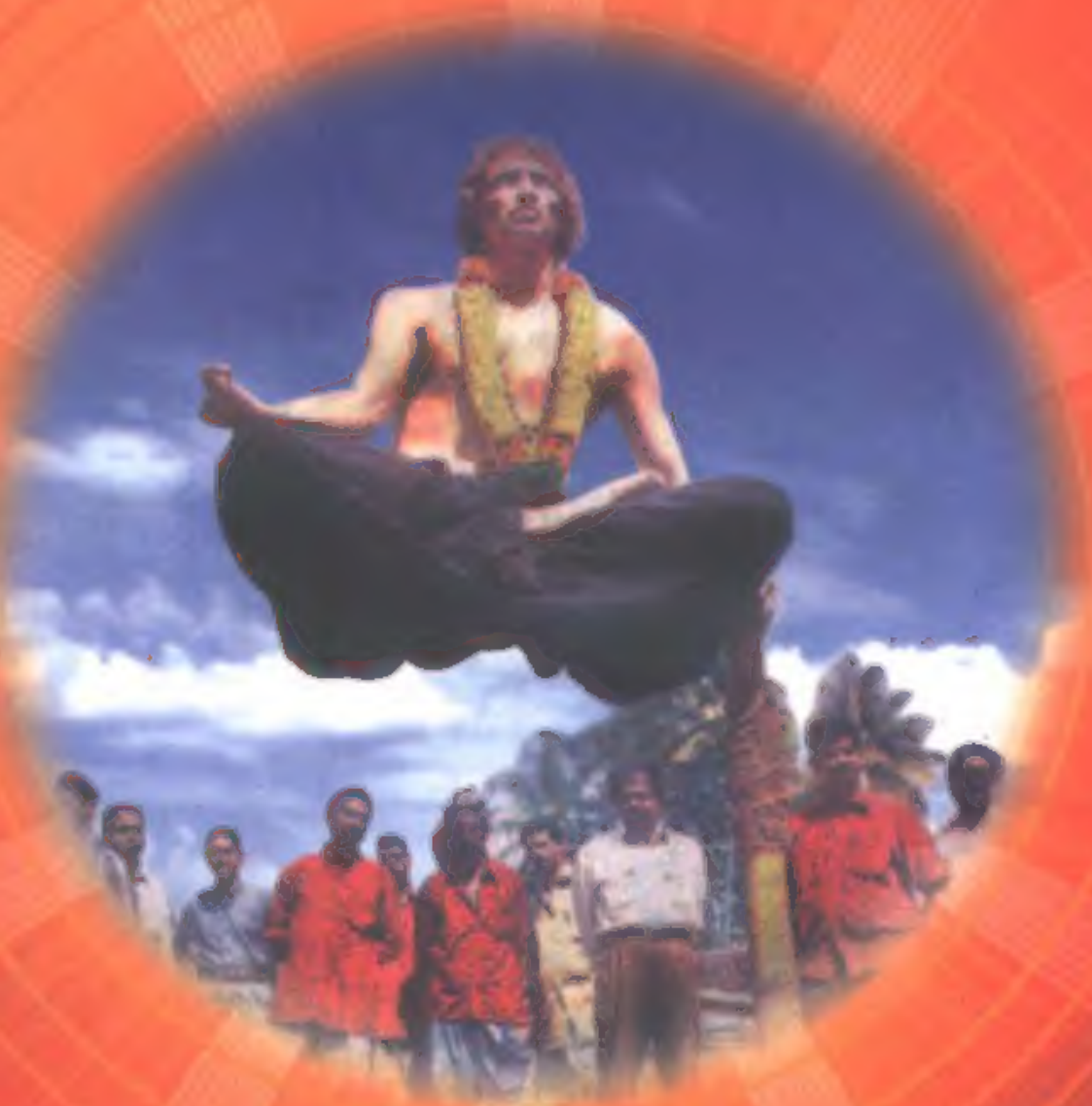


# विज्ञान आणि चमत्कार

लेखक  
प्राचार्य अढ्यानंद गळतगे





# विज्ञान आणि चमत्कार

अर्थात् आत्मविज्ञान

एष तु वा अतिवदति यः सत्येनातिवदति ।

यदा वै विजानाति अथ सत्यं वदति ।

छांदोग्य उप. ७.१६, १७

अर्थ :- हा (ग्रंथ) अतिवादी आहे. म्हणजे तो व्यवहारापलीकडील गोष्टी सांगतो. पण तो व्यवहारापलीकडील गोष्टी सत्य असल्यामुळे सांगतो. आणि सत्य केवळ विज्ञान जाणणाराच सांगू शकतो.

प्राचार्य अद्वयानंद राघोबा गळतगे

भोज (बेळगाव)

वेदांतविवेक प्रकाशन

**भाग २**

**विलक्षण वास्तवांचे विज्ञान**  
**(The Science of Strange Facts)**

\* अनुक्रमणिका \*

**भाग १ - विलक्षण वास्तवे**

| अ.नं. | प्रकरण  | पान. नं. |
|-------|---|----------|
| १     | कागवाडची भानामती  | १        |
| २     | रेठरे बुद्रुकची भानामती   | २९       |
| ३     | एका कुटुंबाला सतत दहा वर्षे छळणारी विलक्षण भानामती                  | ४५       |
| ४     | भेंडवाडची सर्वासमक्ष घडणारी भानामती                                 | ५४       |
| ५     | कवठेगुलंदची भानामती   | ५९       |
| ६     | एका संपूर्ण गावाला पीडणारी भानामती                                  | ६४       |
| ७     | वि.स. पागे यांना चोखोबांचा साक्षात्कार                              | ६९       |
| ८     | एक आधुनिक अमिदिव्य  | ७९       |
| ९     | महाभारतातील आकाशवाणीचे शास्त्रीय सत्यत्व                            | ९१       |
| १०    | आपुले मरण पाहिले म्या डोळा :<br>नचिकेत उपाख्यानाचे वैज्ञानिक संशोधन | १०२      |
| ११    | शून्यातून वस्तुनिर्मिती - अर्थात् सूर्यविज्ञान                      | १४६      |
| १२    | पैशांना जेव्हां पाय फुटतात  | १५३      |
| १३    | श्रद्धा जेव्हां मूर्त रूप धारण करते                                 | १६६      |
| १४    | पैसे देणारी भानामती   | १९१      |
| १५    | एका गावातील तीन चमत्कारयुक्त अनुभव                                  | १९६      |

**भाग २ - विलक्षण वास्तवांचे विज्ञान**

|    |   |     |
|----|---|-----|
| १६ | विज्ञान आणि चमत्कार   | २०७ |
|    | <input type="checkbox"/> विज्ञान आणि 'चमत्कार' यांच्यात खरोखर विरोध आहे काय ?       | २०९ |
|    | <input type="checkbox"/> तथाकथित चमत्कारांचे वैज्ञानिक संशोधन                       | २१८ |
|    | <input type="checkbox"/> भौतिक जगात दडलेली व संकट काळी प्रकट होणारी अतींद्रिय शक्ती | २२१ |
|    | <input type="checkbox"/> संदेश देण्यासाठी प्रकट होणारी अतींद्रिय शक्ती              | २२४ |
|    | <input type="checkbox"/> शरीरद्वारा प्रकट होणारी अतींद्रिय शक्ती                    | २३० |
|    | <input type="checkbox"/> भौतिक जग व चमत्कारांचे जग यामध्ये सीमारेषा आहे काय ?       | २३८ |
|    | <input type="checkbox"/> चमत्कार आणि ईश्वर  | २४५ |
|    | <input type="checkbox"/> 'डोळसपणा' व 'आंधळेपणा' यांची शास्त्रीय व्याख्या            | २४७ |
|    | <input type="checkbox"/> काही अशक्य कोटीतील अतींद्रिय घटना                          | २५० |
|    | <input type="checkbox"/> अन्नपाण्याशिवाय जगणारी माणिक्यम्मा                         | २५३ |
|    | <input type="checkbox"/> मनुष्य हा देह नाही, आत्मा आहे हे सिध्द करणारी गिरिबाला     | २५६ |



|  |     |
|--|-----|
| □ मनुष्य देह नाही, आत्मा आहे हे सिध्द करणारे आणखी 'चमत्कार'                          | २५८ |
| □ श्रध्दारूपी अन्नावर जगलेली थोरेसा न्यून  | २६२ |
| □ तेलाशिवाय २१ वर्षे जळणारे तीन कंदील  | २६५ |
| * तेलाविना जळणाऱ्या दीपांची इतर उदाहरणे / २७१  |     |
| * शून्यातून वस्तुनिर्मितीचे इतर प्रकार / २७२   |     |
| □ शस्त्र चालू न शकलेली बळीची बकरी  | २७४ |
| □ शस्त्र न चालण्याच्या 'चमत्कारां' ची साथ  | २७६ |
| □ अतींद्रिय शक्तीची विविध रूपे   | २७९ |
| * गायत्रीचे वासरू संस्कृत श्लोक म्हणते / २७९, * मूक प्राण्याशी बोलणारा किंबाल / २८२, |     |
| * ॐ काराचा जप करणारी मिसी कुत्री / २८५, * आपण होऊन संस्कृत श्लोक लिहिणारा            |     |
| लाकडाचा तुकडा / २८९, * सद्गुरूच्या व विविध देवतांच्या रूपाने प्रकटणारी अतींद्रिय-    |     |
| शक्ती / २९४, * अंगाचा दाह करणारी अतींद्रिय शक्ती / २९९, * अग्नीच्या रूपाने           |     |
| प्रकटणारी अतींद्रिय शक्ती / ३००, * शिष्याला मारलेल्या छडीचे वळ गुरूच्या पाठीवर       |     |
| / ३०२, * विचार व भावना यातून मूर्त रूपाने प्रकटणारी अतींद्रिय शक्ती / ३०४,           |     |
| * गरम नैवेद्याने देवाच्या जिभेवर फोड / ३०९, * निर्जीव वस्तूतून सजीव रक्त निर्माण     |     |
| करणारी अतींद्रिय शक्ती / ३१०, * न शिकलेल्या इंग्रजी भाषेतून अस्खलित भाषण / ३१२,      |     |
| * पूर्वजन्माचे स्मरण करून देणारी अतींद्रिय शक्ती / ३१५                               |     |
| □ अतींद्रिय दृष्टी, संमोहन आणि पुनर्जन्म संशोधन                                      | ३१९ |
| * अतींद्रियदृष्टीने पुढील जन्माचे अचूक भाकीत / ३२४                                   |     |
| □ आकाशलेखन (Akashic Record)  | ३२७ |
| □ थिऑसाफी, भगवद्गीता आणि योगसिध्दी   | ३२९ |
| □ ब्रह्मविद्या, भानामती आणि विज्ञान  | ३३३ |
| * ब्रह्मवादी ब्लॅक्लेट्स्की मृतात्मविद्येच्या प्रसारक का बनल्या ? / ३३६              |     |
| □ मॅडम ब्लॅक्लेट्स्की यांचे काही चमत्कार   | ३३८ |
| □ संकल्पशक्तीचा एक 'चमत्कार'   | ३४६ |
| □ मॅडम ब्लॅक्लेट्स्की यांची भानामती  | ३४८ |
| □ मॅडम ब्लॅक्लेट्स्की यांचा कृत्रिम मृतात्मा (भूत)                                   | ३५१ |
| □ ब्लॅक्लेट्स्की यांची 'यक्षिणी विद्या'  | ३५२ |
| □ मानसलेखन व आकाशलेखन विषयक 'चमत्कार'  | ३५४ |
| □ भानामतीची मीमांसा  | ३५८ |
| □ नरसोबावाडीतील दत्तमंदिराच्या पूजाऱ्याच्या घरी भानामती                              | ३६४ |
| □ विविध रूपानी भेटणाऱ्या निसर्गदेवता   | ३६९ |
| □ अस्तित्वात नसलेल्या ओढ्यात अंधोळ   | ३७५ |
| □ 'आज्ञाधारक भानामती' अर्थात् जादू   | ३८० |
| □ ईश्वर-गारुड्याची विश्वनिर्मितीची जादू  | ३८१ |
| □ भानामती, जादू व विश्वनिर्मिती यातील साम्य  | ३८४ |
| □ ऑलकॉट यांचे संपूर्ण हृदयपरिवर्तन करणारा एक 'चमत्कार'                               | ३८८ |
| □ आकाशगमनाची सिध्दी  | ३८९ |
| □ स्थूल देहानेही आकाशगमन होते ?  | ३९२ |
| □ 'चमत्कारां' चा (वेदांती) निषेध   | ३९२ |
| □ एकाच वेळी 'चमत्कार' हे खरे आणि खोटे, हे कसे ?                                      | ३९७ |
| □ अदृश्य पातळीवरून मदत   | ३९९ |

|   |     |
|---|-----|
| <input type="checkbox"/> वस्तू 'अदृश्य' कशी करता येते ?   | ४०१ |
| <input type="checkbox"/> अस्तित्वात नसलेली वस्तू दृश्य कशी करता येते ?  | ४०६ |
| <input type="checkbox"/> दृश्यरूप धारण करणारी 'कृत्रिम भानामती'   | ४१० |
| <input type="checkbox"/> जिवंत माणसांच्या वासना 'पिशाच' बनतात   | ४१८ |
| <input type="checkbox"/> कर्मणो गहना गति : ।  | ४२१ |
| <input type="checkbox"/> 'गणपतीचा चमत्कार'  | ४२५ |
| <input type="checkbox"/> गणपतीचा असाही एक अनुभव   | ४२८ |
| <input type="checkbox"/> प्राणीहत्या निषिद्ध असलेल्या देवता   | ४२९ |
| <input type="checkbox"/> पाश्चात्यांची आधुनिक पुराणकथा : यूफो   | ४३१ |
| <input type="checkbox"/> 'यूफो' कथा म्हणजे नव्या बाटलीतील जुनीच दारू  | ४३६ |
| <input type="checkbox"/> पुराणे ही माणसाची भावनिक गरज   | ४४० |
| <input type="checkbox"/> 'यूफो' व भानामती यामधील काही साम्ये  | ४४५ |
| <input type="checkbox"/> 'यूफो,' मरणानुभव आणि मानवाचे आध्यात्मिक पुनरुत्थान   | ४४६ |
| <input type="checkbox"/> देवदूत : आणखी एक पाश्चात्यांचे पुराण   | ४५० |
| <input type="checkbox"/> नवस न फेडल्याचे परिणाम   | ४५५ |
| <input type="checkbox"/> कर्मदेवता, लोकपाल आणि विश्वव्यवस्था  | ४५८ |
| <input type="checkbox"/> कर्म, कर्मफल आणि विधिलिखित   | ४५९ |
| <input type="checkbox"/> विधिलिखित आणि मानवाचे इच्छास्वातंत्र्य   | ४६३ |
| <input type="checkbox"/> ईश्वरेच्छेविरुद्ध एक संभाव्य आक्षेप  | ४७२ |
| <input type="checkbox"/> 'अर्थपूर्ण घटना' (Synchronicity)   | ४७४ |
| * फ्राँडला हादरून सोडणारी भानामती / ४८०, * ८०० वर्षांनंतर पडलेली अर्थपूर्ण घटना / ४८३, * काही अर्थपूर्ण अंक / ४८४, * ज्योतिष व कर्म : विश्वव्यवस्थेचा भाग / ४८७ |     |
| <input type="checkbox"/> खरी ठरलेली भविष्यसूचक स्वप्ने व भाकिते   | ५०४ |
| <input type="checkbox"/> नाडीभविष्य: 'आकाशलेखना'चा निर्णायक पुरावा  | ५१२ |
| <input type="checkbox"/> मानवाचे 'इच्छा स्वातंत्र्य' हे ईश्वराचेच 'इच्छा स्वातंत्र्य'   | ५१९ |
| <input type="checkbox"/> कार्यकारणभाव आणि 'अर्थपूर्ण' घटना : भौतशास्त्रीय चिकित्सा  | ५२५ |
| * स्थूल-सूक्ष्म हा भेद अशास्त्रीय / ५३१   |     |
| <input type="checkbox"/> जडचेतनामधील कौंटम अभेदत्व  | ५३५ |
| * सूक्ष्म-स्थूलभेद कसा निर्माण होतो ? / ५३७   |     |
| <input type="checkbox"/> कौंटम सिध्दांत आणि विश्वाचे अखंडत्व  | ५४२ |
| <input type="checkbox"/> विश्वाचे नियम कोणाकडून वा कसे निर्माण होतात ?  | ५५२ |
| <input type="checkbox"/> कौंटम सिध्दांत आणि नियतीवाद  | ५६१ |
| <input type="checkbox"/> कौंटम सिध्दांत आणि परमाणुसंश्लेष   | ५६४ |
| <input type="checkbox"/> विज्ञान आणि अध्यात्म   | ५७७ |
| <input type="checkbox"/> समारोप   | ५८३ |
| <input type="checkbox"/> संदर्भ व टीपा  | ५८५ |
| <input type="checkbox"/> परिशिष्ट - १   |     |
| चमत्कार विषयावर एका बुद्धिवाद्याशी ग्रंथकर्त्याचा झालेला पत्रव्यवहार  | ६२५ |
| <input type="checkbox"/> परिशिष्ट - २ नाडी भविष्यासंबंधी एका अंधश्रद्धानिर्मूलनवाद्याशी ग्रंथकर्त्याचा झालेला पत्रव्यवहार                                       | ६५२ |
| <input type="checkbox"/> परिशिष्ट - ३ ब्रह्मविद्या खोटी ठरवू पाहणारे जेव्हां स्वतःच खोटे ठरतात  | ६५७ |
| <input type="checkbox"/> परिशिष्ट - ४ दृष्टिक्षेपात ब्रह्मविज्ञान   | ६६० |

## प्रकरण सोळावे

# विज्ञान आणि चमत्कार

यदा वै विज्ञानाति अथ सत्यं वदति ।

न अविज्ञानं सत्यं वदति ।

विज्ञानं तु एव विजिज्ञासितव्यम् ॥

- छांदोग्य उप.

विज्ञान आणि चमत्कार या परस्परविरुद्ध संकल्पना असल्याची रूढ विज्ञानाच्या दृष्टिकोणातून जगाकडे पाहणाऱ्यांची धारणा आहे. म्हणजे असे की, विज्ञान खरे असेल (आणि विज्ञानाला खोटे कोण म्हणेल?) तर चमत्कार खोटे व चमत्कार खरे असतील तर विज्ञान खोटे, अशी या रूढ विज्ञानवाद्यांची याविषयीची भूमिका असते. तीनशे वर्षांपूर्वी युरोपात जन्मलेल्या या कल्पनेनुसार हे दृश्य जग काही विशिष्ट भौतिक नियमांवर आधारलेले असून त्या नियमांपलीकडे कसलेही नियम या विश्वात अस्तित्वात नाहीत; दुसऱ्या शब्दात या दृश्य जगाचे स्वरूप शुद्ध भौतिक आहे, असे हे रूढ विज्ञानवादी मानतात. कदाचित विश्वात भौतविज्ञानाच्या कक्षेत न येणारे काही नियम असतील, म्हणजेच या विश्वाचे मूलभूत स्वरूप भौतविज्ञान समजते त्याहून भिन्न असणे शक्य आहे, आणि तसे ते असेल तर ते स्वरूप व त्या स्वरूपाच्या जगाचे नियम शोधण्याचे काम भौतविज्ञानाच्या कुवतीपलीकडे वा कक्षेबाहेरचे आहे, ही गोष्ट हे रूढ विज्ञानवादी मान्य करीत असतील अशी कोणी कल्पना करील. पण अशी कोणी कल्पना करू नये. या रूढ विज्ञानाची तरफदारी करणारे लोक ही शक्यता तत्काळ फेटाळून लावतात. आपल्या विज्ञानाच्या कक्षेबाहेर, म्हणजे त्याला न समजणारे व न सापडणारे असे काही नियम, असे काही तत्त्व वा 'सत्य' या विश्वात दडले आहे, हे रूढ विज्ञानवादी मान्य करीत

नाहीत. दुसऱ्या शब्दात, या विश्वाचे स्वरूप मूलतः व तत्त्वतः शुद्ध भौतिक आहे, आणि हेच या विश्वाविषयीचे निरपेक्ष 'सत्य' आहे, अशी या रूढ विज्ञानवाद्यांची ठाम भूमिका व श्रद्धा आहे.

या संदर्भात दुसरी एक लक्षात ठेवायची गोष्ट म्हणजे आपल्या विज्ञानाने शोधून काढलेले हे भौतिक नियम अनुल्लंघनीय आहेत, असेही या रूढ विज्ञानवाद्यांचे म्हणणे असते. म्हणजे ज्यांना 'चमत्कार' समजण्यात येते ते खोटे आहेत, तसे प्रकार घडत नाहीत असे ते म्हणतात. कारण भौतविज्ञानाच्या नियमांचे उल्लंघन म्हणजे 'चमत्कार' अशी त्यांची 'चमत्कारा'विषयीची धारणा आहे. या नियमांचे उल्लंघन अशक्य असल्याने या दृष्टिकोणानुसार 'चमत्कार' अशक्य ठरतात. त्यामुळे अशा घटनांवर विश्वास ठेवणारे लोक स्वाभाविकच अंधश्रद्धाळू ठरतात. विज्ञानाचा मानवी जीवनावर हल्ली इतका जबरदस्त परिणाम झाला आहे (विज्ञानाने केलेल्या नेत्रदीपक भौतिक प्रगतीमुळे व त्याने निर्माण केलेल्या अभूतपूर्व सुखसोयींमुळे हा प्रभाव पडलेला आहे) की विज्ञान हे हल्लीच्या जगाचा नवा 'धर्म' बनला आहे आणि हे वैज्ञानिक या नव्या 'धर्मा'चे श्रेष्ठ पुरोहित (high priests) बनले आहेत. त्यामुळे पूर्वीच्या धार्मिक समाजातील पुरोहितांप्रमाणे या नव्या वैज्ञानिक समाजाचे हे नवे पुरोहित जे काही सांगतील, ते सर्व 'सत्य' असते असे सामान्य मनुष्य समजतो व ते डोळे झाकून स्वीकारतो. पण त्यामुळे त्याच्यापुढे एक मोठाच पेचप्रसंग निर्माण होतो. कारण या विज्ञानाच्या नियमांचे 'उल्लंघन' करणाऱ्या एखाद्या घटनेचा अनुभव आपल्या जीवनात एकदा तरी त्याला आलेला असतो. किंवा तो आलेला नसेल तर आपल्या परिवारातील किंवा परिचयातील एखाद्या व्यक्तीला असा अनुभव आल्याचे त्याने ऐकलेले असते किंवा त्याला ते माहीत असते. त्यामुळे हे रूढ विज्ञान खरे की हे चमत्कार खरे (त्यांचा अनुभव खरा) असा पेचप्रसंग त्याच्यापुढे निर्माण होतो. त्याची मनःस्थिती द्विधा बनते. क्वचित त्याचा बुद्धिभेदही होतो. म्हणजे असे की, एक तर त्याचा देवाधर्मावरचा विश्वास उडतो, किंवा विज्ञानावरचा तरी विश्वास उडतो. (हे ज्याच्या त्याच्या अनुभवावर व मनःपिंडावर अवलंबून असते.) कारण कोणालाही मनाच्या (वा बुद्धीच्या) द्विधा (वा दोलायमान) अवस्थेत फार काळ राहणे शक्य नसते. स्वतः वैज्ञानिकांनाही ते शक्य नसते. कारण तीही शेवटी माणसेच आहेत.

मात्र येथे लक्षात ठेवायची गोष्ट अशी, की या परिस्थितीला (वा पेच प्रसंगाला) देवधर्मही जबाबदार नसतात व विज्ञानही जबाबदार नसते, तर त्या दोन्हीकडे पाहणाऱ्या माणसाचा दृष्टिकोन, त्याचे तत्त्वज्ञान जबाबदार असते.

- आणि हे तत्त्वज्ञान खोटे असते, अवैज्ञानिक असते. ते कसे हे समजावून घेणे महत्त्वाचे आहे.

## विज्ञान व 'चमत्कार' यांच्यात खरोखर विरोध आहे काय?

'चमत्कार' खरे मानायचे की विज्ञान खरे मानायचे हा प्रश्न खरे तर 'बुद्धिवाद' नावाच्या खोट्या तत्त्वज्ञानामुळे निर्माण होत असून तो प्रश्न मुळातच भ्रामक आहे. विज्ञानविषयक चुकीच्या कल्पनेतून तो निर्माण झाला आहे. काही वैज्ञानिकांनी स्वतःच्या विशिष्ट तत्त्वज्ञानाच्या दावणीला विज्ञानाला बांधल्यामुळे तो निर्माण झाला आहे. हे वैज्ञानिक लोक बुद्धिवादी (वा भौतिकवादी) म्हणून ओळखले जात असून ते समजतात, की विज्ञान फक्त दृश्य भौतिक जगाचाच अभ्यास करते. पण विज्ञानाचा अभ्यास-विषय दृश्य भौतिक जगच का असावे, इतर विषय त्याला वर्ज्य का असावेत याचे समर्पक उत्तर ते देऊ शकत नाहीत. आणि त्याचे समर्पक उत्तर त्यांना देता येत नसल्यामुळे हे जग शुद्ध भौतिक (वा दृश्य) आहे, हा (विज्ञानाचा अभ्यासविषय दृश्य भौतिक जगापुरता मर्यादित करून त्यांनी काढलेला) निष्कर्ष शुद्ध अवैज्ञानिक व पूर्वग्रहयुक्त ठरतो. विज्ञानाच्या इतिहासाच्या अज्ञानाचेही तो द्योतक ठरतो. कारण विज्ञानाच्या इतिहासाकडे पाहिले, तर विज्ञान दृश्य भौतिक जगाचाच फक्त अभ्यास करते या समजुतीला कसलाही आधार सापडत नाही.<sup>१</sup> कोणत्याही विषयाचा अभ्यास वैज्ञानिक पद्धतीने करता येतो - कोणताही विषय विज्ञानाला वर्ज्य नाही, असे विज्ञानाचा इतिहास सांगतो. उदा. जीव (life) हा विज्ञानाचा अभ्यासविषय होऊ शकत असल्याचे जीवशास्त्राचा (biology) इतिहास सांगतो. मन (mind) हा विज्ञानाचा अभ्यासविषय होऊ शकत असल्याचे मानसशास्त्राचा (psychology) इतिहास सांगतो. त्याचप्रमाणे अतींद्रिय घटना (तथाकथित 'चमत्कार') हाही विज्ञानाचा अभ्यास विषय होऊ शकत असल्याचे परामानसशास्त्राचा (parapsychology) इतिहास सांगतो.<sup>२</sup>

अशा रीतीने विज्ञानाचा अभ्यासविषय कोणताही होऊ शकत असल्यामुळे विश्वाचे स्वरूप अमूकच आहे असा आग्रह बुद्धीला विशिष्ट तत्त्वज्ञानाची झापडे लावून विज्ञानपद्धती विशिष्ट विषयापुरती मर्यादित करणाऱ्या लोकांशिवाय इतर कोणीही धरणार नाही. जे लोक या विश्वाचे स्वरूप शुद्ध भौतिक आहे असे म्हणतात, ते विज्ञानपद्धती भौतिक जगापुरती मर्यादित करून संकुचित (म्हणजे बुद्धिवादी) तत्त्वज्ञानाच्या दृष्टिकोनातून म्हणतात. वैज्ञानिक पद्धतीने या जगाचे सर्व बाजूंनी संशोधन करून तसे ते सिद्ध झाले आहे म्हणून म्हणत नाहीत आणि म्हणून वैज्ञानिक पद्धतीने भौतिक जगाचेच फक्त संशोधन करता येते असे अगोदरच ठरवून हे जग शुद्ध भौतिक असल्याचा निष्कर्ष काढणे हा एक आडमुठा व पूर्वग्रहयुक्त दृष्टिकोन तर ठरतोच, पण तो विज्ञान पद्धतीशी विसंगतही ठरतो. त्या पद्धतीशी ती एक (वैज्ञानिक) प्रतारणा ठरते. पण ही विज्ञानपद्धतीशी प्रतारणा नसून तिच्याशी

एकनिष्ठताच कशी आहे हे दाखवण्याकरिता काहीजण (उदा. मार्टिन गार्डनरसारखे अमेरिकन बुद्धिवादी) आपल्या ठिकाणी हा बुद्धिनिष्ठ पूर्वग्रह असल्याचे प्रांजळपणे मान्य करून व दिखाऊ 'सत्यनिष्ठा' दाखवून बेसावध वाचकांच्या डोळ्यात धूळ फेकण्याचा अश्लाघ्य प्रयत्न करताना दिसतात. (त्याचे Fads and Fallacies in Science हे पुस्तक पाहा.) त्यांच्या या बौद्धिक कावेबाजपणाला महाराष्ट्रातील 'विज्ञानानंद' या नावाने प्रसिद्ध असलेले व अंधश्रद्धानिर्मूलनवाद्यांचे पितळ एके काळी जाहीरपणे उघडे पाडणारे लोणावळ्याचे एक नाणवलेले विचारवंतही बळी पडल्याचे दिसून येते. यावरून हे बुद्धिवादी धूळफेकीच्या या कसबात किती तरबेज आहेत याची वाचकांना कल्पना येईल. पण प्रांजळपणाच्या - तोही धूळफेकीच्या धूर्त उद्देशाने स्वीकारलेल्या - गुणामुळे अवैज्ञानिकपणाचा दोष लपून राहत नाही. प्रांजळपणा म्हणजे सत्यनिष्ठा नव्हे, आणि 'तत्त्वज्ञान' म्हणजे 'विज्ञान' नव्हे. खरी वैज्ञानिक दृष्टी बाळगणारा कोणीही शास्त्रज्ञ स्वतःला कोणत्याही तत्त्वज्ञानाच्या दावणीला कधीही बांधून घेत नाही. जो बांधून घेतो तो 'शास्त्रज्ञ' म्हणवून घेण्यास पूर्ण अपात्र ठरतो. विज्ञानाचा संबंध कुठल्याही तत्त्वज्ञानाशी नाही, तर केवळ वास्तवाशी (facts शी) आहे. व वास्तवांना स्वतःचे कसलेही तत्त्वज्ञान नसते. ती केवळ वास्तवे असतात - उघडीबोडकी. म्हणून टी. एच्. हक्सले याने म्हटले आहे की, शास्त्रज्ञांनी एखाद्या लहान बालकाप्रमाणे वास्तवापुढे बसावे. (Sit before the facts like a child) पण दुर्दैवाने काही शास्त्रज्ञांना लहान बालक बनता येत नाही; व ते 'चमत्कारां'कडे बुद्धिपुरस्सर डोळेझाक करतात. पण 'चमत्कारां'कडे डोळेझाक केल्याने 'चमत्कार' 'अवास्तव' ठरत नाहीत. त्याकडे डोळेझाक करणारे मात्र अवैज्ञानिक ठरतात. 'वास्तवे' कशी असावीत हे बुद्धिवाद ठरवू शकत नाही. कोणताही 'वाद' वा 'तत्त्वज्ञान' ते ठरवू शकत नाही. केवळ त्यांचे निःपक्ष व पूर्वग्रहविरहित दृष्टीने केलेले वैज्ञानिक संशोधनच त्यांचे खरे स्वरूप ठरवू - उघड करू - शकते. आणि अशा रीतीने उघडे झालेले त्यांचे खरे स्वरूप एखाद्याच्या बुद्धीला कितीही 'चमत्कारिक' वाटले तरी तो वास्तवांचा दोष नसून त्याकडे पाहणाऱ्या बुद्धीचाच तो दोष ठरतो. पण काही बुद्धिवादी इतके धूर्त असतात, की स्वतःचा दोष लपविण्यासाठी ते त्या वास्तवांचे संशोधन करणाऱ्या शास्त्रज्ञांवरच दोष लादून मोकळे होतात ! (कारण त्यांना वास्तवांना दोष देता येत नाही हे माहित असते ! ) पण हा त्यांचा धूर्त डावपेच विज्ञानपद्धतीच्या निर्घृण हल्ल्यापुढे फार काळ टिकू शकत नाही. मग या लोकांपुढे स्वतःच्या आंधळ्या बुद्धीशी एकनिष्ठ राहायचे, की वास्तवांना सामोरे जाऊन विज्ञानपद्धतीशी एकनिष्ठ राहायचे, असा नवा पेचप्रसंग निर्माण होतो. खऱ्या विज्ञानवादी शास्त्रज्ञांची निष्ठा वास्तवाशी असल्यामुळे ते अर्थात खोटा बुद्धिवाद टाकून देऊन वास्तवांना सामोरे जातात व वैज्ञानिकपद्धतीशी एकनिष्ठ राहून वैज्ञानिक

सत्याचे पुरस्कर्ते बनतात याच्या उलट बुद्धिवाद्यांना स्वतःच्या बुद्धीची - मग ती कितीही आंधळी असेना का - प्रतारणा करणे जड जाते व ते आपल्या बुद्धीला शरण जाऊन वास्तवापासून दूर असलेल्या एका स्वतःच्या काल्पनिक वा खोट्या जगात वावरणे पसंत करतात. ते मग 'चमत्कार' खोटे म्हणतात व त्यांचे संशोधन करणाऱ्या शास्त्रज्ञांवरच उलट अवैज्ञानिकपणाचा (खोटा) आरोप करतात. अशा रीतीने ते विज्ञान व 'चमत्कार' यात खोटा (काल्पनिक) विरोध कल्पून स्वतःची फसवणूक - तीही विज्ञानाच्या नावाखाली - करीत असताना दिसतात. विज्ञानात असे लोक असावेत हे आश्चर्य तर खरेच. पण यापेक्षा मोठे आश्चर्य म्हणजे अशा वास्तवापासून डोळे झाकून दूर पळणाऱ्या व काल्पनिक (खोट्या) जगात वावरणाऱ्या आत्मबंधक लोकांचे 'विज्ञान' हेच खरे व अधिकृत विज्ञान म्हणून हल्ली मिरवताना दिसते ! अशा लोकांच्या खोट्या व काल्पनिक जगावर आधारलेल्या विज्ञानाला विज्ञानपद्धतीनेच उत्तर देऊन उघडे पाडणे म्हणूनच आवश्यक ठरते. प्रस्तुत लेखकाचा तीन ग्रंथ लिहिण्यापाठीमागचा तोच मुख्य उद्देश आहे.

वर म्हटलेच आहे की, भौतविज्ञानाच्या नियमांचे 'उल्लंघन' म्हणजेच 'चमत्कार' असे समजून अशा घटना घडतच नाहीत असे रुढ विज्ञानवादी म्हणतात. कारण भौतविज्ञानाच्या नियमांचे उल्लंघन अशक्य आहे, असे त्यांचे म्हणणे आहे. असे जर असेल तर अशा घटनांचा अभ्यास परामानसशास्त्र करते, हे कसे, असा साहजिकच प्रश्न निर्माण होतो. न घडणाऱ्या घटनांचा अभ्यास परामानसशास्त्र करते काय, हा पहिला प्रश्न आणि भौतविज्ञानाच्या नियमांचे 'उल्लंघन' करणाऱ्या घटना खरोखरच घडत असतील तर अशा (शास्त्रीय नियमांचे 'उल्लंघन' करणाऱ्या) घटनांचा 'शास्त्रीय' अभ्यास कसा शक्य आहे, हा दुसरा प्रश्न. सुदैवाने या प्रश्नांचे उत्तर अमेरिकेच्या 'अमेरिकन असोसिएशन फॉर द ॲडव्हान्समेंट ऑफ सायन्स' (संक्षिप्तात AAAS) या राष्ट्रीय पातळीवरील मातब्बर अमेरिकन विज्ञानसंघाने परामानसशास्त्राला आपल्या विज्ञान संघाचे अधिकृत सदस्यत्व देऊन परस्परच दिले आहे. या घटनेचा अर्थ असा होतो की, तथाकथित 'चमत्कारां'चा शास्त्रीय अभ्यास शक्य असल्याचे व परामानसशास्त्र तो अभ्यास करीत असते ही वस्तुस्थिती असल्याचे, ही अमेरिकेची राष्ट्रीय विज्ञानसंघटना मान्य करते. या मान्यतेचा असा स्पष्ट अर्थ होतो की, ज्या भौतविज्ञानाच्या नियमांचे 'उल्लंघन' अशक्य असल्याच्या 'वैज्ञानिक' कारणासाठी 'चमत्कार' अशक्य असल्याची भूमिका हे भौतवैज्ञानिक स्वीकारतात, त्या नियमांचे 'उल्लंघन' करणाऱ्या घटना घडतात ही वस्तुस्थिती तर आहेच, म्हणजे अशा घटना भौतविज्ञानाच्या नियमांचो 'उल्लंघन' तर करतातच, पण हे 'उल्लंघन' ज्या कारणासाठी अशक्य आहे असे हे भौतवैज्ञानिक समजतात ते कारण वैज्ञानिक नाही, निदान भौतवैज्ञानिक नाही, हेही या घटना सिद्ध करतात असे ठरते.



येथे लक्षात ठेवायची गोष्ट अशी की भौतविज्ञानाने शोधून काढलेले नियम अनुल्लंघनीय (वा अबाधित) आहेत, हे त्या विज्ञानाचे एक मूलभूत गृहीतकृत्य आहे. हे गृहीतकृत्यच परामानसशास्त्रातील शोध, म्हणजेच अतींद्रिय घटनांचे (तथाकथित 'चमत्कारांचे') सत्यत्व प्रस्थापित करणारे त्या शास्त्राचे शोध, उलथून टाकतात. अशा रीतीने भौतविज्ञानाचे मूलभूत गृहीतकृत्यच परामानसशास्त्राचे शोध उलथून टाकत असल्याने ते संपूर्ण शास्त्रच धोक्यात आले आहे, हे उघड आहे. या विश्वाचे स्वरूप भौतिक असल्याच्या गृहीतकृत्यावर कार्य करणाऱ्या भौतविज्ञानावर इतर शास्त्रे आधारलेली असल्याने ती सर्व शास्त्रेही त्याचबरोबर या शोधामुळे धोक्यात आली आहेत, हेही उघड आहे. 'चमत्कार' घडत नाहीत असे हे शास्त्रज्ञ का म्हणतात, 'चमत्कारांना त्यांचा इतका कडाडून विरोध का, याचा आता वाचकांना उलगडा होईल. पण 'चमत्कार' (वा अतींद्रिय घटना) घडतात हे परामानसशास्त्रीय सत्य असेल, तर कोणीही शास्त्रज्ञ ते नाकारू कसे शकतो हा प्रश्न आहे. भौतिकवादाच्या समर्थनसाठी एखादे शास्त्रीय सत्य नाकारणे हा आडमुठेपणा ठरत नाही काय?

होय. हा आडमुठेपणाच (pigheadedness) ठरतो. पण भौतिकवादाच्या नव्हे तर बुद्धिवादी तत्त्वज्ञानाच्या आंधळ्या समर्थनासाठी हा आडमुठेपणाचा आरोपसुद्धा हे बुद्धिवादी शास्त्रज्ञ स्वीकारण्यास आनंदाने तयार असल्याचे दिसून येतात ! अशा काही शास्त्रज्ञांची उदाहरणे त्यांच्या विधानासकट विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथातील ३ऱ्या प्रकरणात दिली आहेत. येथे नमुन्यासाठी व्हॉन व्हेल्महॉल्ट्झ या शास्त्रज्ञाचे परिचितज्ञानविषयीचे म्हणणे काय आहे हे वाचकांना कळावे म्हणून एक अवतरण देत आहे. व्हॉन व्हेल्महॉल्ट्झ परिचिताचे अतींद्रिय ज्ञान कसे ठोकून लावतो हे हा उतारा सांगतो. तो म्हणतो,

"Neither the testimony of all the Fellows of Royal Society, nor even the evidence of my own senses could lead me to believe in the transmission of thought from one person to another independently of the recognised channels of sensation. It is clearly impossible..."

याचा अर्थ असा, "प्रस्थापित भौतिक माध्यमाखेरीज एका व्यक्तीचे विचार दुसऱ्या व्यक्तीला (अतींद्रिय मार्गाने) कळू शकतात असे रॉयल सोसायटीच्या एकजात सर्व फेलोंनी जरी सत्यप्रतिज्ञेवर मला सांगितले, तरी त्यावर मी विश्वास ठेवणार नाही. किंबहुना असे घडत असल्याचा माझ्या डोळ्यांनी मला पुरावा प्रत्यक्ष सादर केला तरी तोही मी मानणार नाही. कारण ही गोष्ट अशक्य आहे..."

आता जो शास्त्रज्ञ स्वतःच्या डोळ्यांनी सादर केलेला पुरावाही नाकारतो, वा आपण तो नाकारतो असे उघड म्हणतो, तो 'शास्त्रज्ञ' म्हणवून घेण्यास कितपत

लायक आहे हे वाचकानीच ठरवावे. 'वैज्ञानिक अंधश्रद्धा' या नावाचाही एक प्रकार असू शकतो याची या उदाहरणावरून वाचकाना कल्पना येईल ! या 'वैज्ञानिक अंधश्रद्धे'लाच 'बुद्धिवाद' म्हणतात. कारण तो शुद्ध तर्कवादावर आधारलेला आहे तो तर्कवाद खोडून काढणारा पुरावा आढळला तर तो नाकारण्यासाठी असल्याचा अवलंब करण्यासही हे बुद्धिवादी मागेपुढे पाहत नाहीत. आणि जेथे पुरावे इतके आढळून येतात की ते नाकारणे अशक्य होते, तेथे हेल्महॉल्ट्झप्रमाणे 'आपण ते स्वीकारत नाही' अशी शुद्ध आडमुठेपणाची भूमिका स्वीकारण्यावाचून त्यांना मग गत्यंतरच उरत नाही. अतींद्रिय घटनांच्या बाजूने बिनतोड पुरावे असल्याची अगोदरच खात्री झालेली असल्यामुळे काहीजण सुरुवातीपासूनच ही (आडमुठेपणाची) भूमिका स्वीकारतात. हेल्महॉल्ट्झ अशा शास्त्रज्ञांचेच एक उदाहरण आहे.

इंद्रियांनी सादर केलेले पुरावे ठोकलून केवळ तर्कावर आधारलेल्या बुद्धिवादी तत्त्वज्ञानाचा आंधळा पाठपुरावा करणे हे धार्मिक अंधश्रद्धेच्या मध्ययुगीन काळातील धर्ममार्तंडांना कदाचित शोभून दिसले असते. हेल्महॉल्ट्झसारख्या आधुनिक वैज्ञानिकाला ते मुळीच शोभत नाही. तरीही त्याच्यासारखे बुद्धिवादी शास्त्रज्ञ त्या तत्त्वज्ञानाचा आंधळेपणाने का पाठपुरावा करतात, याचे थोडे विवेचन वर केले आहे. त्या कारणाचा थोड्या अधिक विस्ताराने विचार केला पाहिजे. कारण त्यामुळे हे बुद्धिवादी लोक 'विज्ञान' कशाला म्हणतात यावर चांगलाच प्रकाश पडतो व ते 'चमत्कार' इतक्या अभिनिवेशाने का नाकारतात किंवा 'विज्ञान' व 'चमत्कार' यांच्यात कृत्रिम (वा खोटा) विरोध का निर्माण करतात हेही कळते.

वर म्हटलेच आहे की भौतवैज्ञानिक नियमांचे 'उल्लंघन' करणाऱ्या घटनांना हे बुद्धिवादी शास्त्रज्ञ 'चमत्कार' म्हणतात व हे 'नियमोल्लंघन' अशक्य असल्याने 'चमत्कार' अशक्य असल्याचे प्रतिपादन ते करीत असतात आता प्रश्न असा आहे की, भौतवैज्ञानिक नियम 'अनुल्लंघनीय' असतील तर या जगात भौतविज्ञानाचे (भौतिक) नियम धाब्यावर बसवून 'जीव' कसा निर्माण झाला? याचे उत्तर 'भौतिक नियमानुसारच जीव निर्माण झाला' असे हे शास्त्रज्ञ देतात. पण हे शास्त्रज्ञ हे नाकारू शकत नाहीत, की जैविक नियम हे भौतिक नियमाहून गुणात्मकरित्या भिन्न आहेत. ही भिन्नता व्यक्त करण्यासाठी पहिल्याला 'चेतन' हे विशेषण लावण्यात येते, व दुसऱ्याला 'जड' हे विशेषण लावण्यात येते. आता हा गुणात्मक भेद कसा निर्माण झाला? 'जडा'तून 'चेतन' कसे निर्माण झाले? दुसऱ्या शब्दात 'जड' नियमांचे 'चेतन' नियमांत कसे रूपांतर झाले? भौतिक विज्ञानाचे नियम ('जड' नियम) 'अनुल्लंघनीय' वा 'अबाधित' आहेत हे या शास्त्रज्ञांचे म्हणणे हे नियमातील रूपांतर वा गुणांतर खोटे ठरवत नाही काय? हीच गोष्ट मानवी मनालाही लागू आहे. मानवी पातळीवर जैविक नियमाचे रूपांतर वा गुणांतर मानसिक नियमात

झालेले आढळते. अशा रीतीने कोणतेही नियम 'अबाधित' वा 'अनुल्लंघनीय' मानण्यात खुद्द विज्ञानाचा उत्क्रांतिवादच आड येतो. उत्क्रांती आधळ्या 'नैसर्गिक निवडी'च्या (natural selection) तत्त्वाने झाली असल्याचे मानण्यात येते, हे खरे आहे. पण एका प्रकारच्या नियमांचे दुसऱ्या प्रकारच्या नियमात कसे रूपांतर (वा गुणांतर) प्रत्यक्षात झाले, यावर हे तत्त्व यत्किंचितही प्रकाश पाडू शकत नाही; किंवा त्याची उपपत्ती ते तत्त्व देऊ शकत नाही. यावर हे शास्त्रज्ञ असे उत्तर देतात की, 'जीव' जडाहून गुणात्मकरित्या भिन्न असला तरी तो कोणत्याही भौतवैज्ञानिक नियमांचे उल्लंघन करताना दिसत नाही. त्यांचे हे म्हणणे भौतिक ऊर्जेच्या अविनाशित्वाच्या (conservation of energy) तत्त्वापुरतेच खरे आहे. जीवाच्या कार्यपद्धतीच्या (function) बाबतीत खरे नाही. भौतविज्ञानाचा ऊर्जेच्या अविनाशित्वाचा नियम पाळूनही नैसर्गिक नियमातील गुणात्मक भिन्नता 'जीव' प्रकट करतो हे भौतवैज्ञानिक नाकारू शकत नाहीत. व ही गुणात्मक भिन्नता भौतिक (जड) नियमाच्या आधारे कशी निर्माण झाली हे ते सांगू शकत नाहीत.<sup>५</sup> उद्या प्रयोगशाळेत शास्त्रज्ञ 'जीव' निर्माण करू शकले, तरी भौतिक नियमांचे रूपांतर जैविक नियमात कसे झाले याचे कोडे सुटले असे ठरत नाही. कारण जीवाची शास्त्रज्ञांनी प्रयोगशाळेत केलेली निर्मिती निसर्गात अगोदरच अस्तित्वात असलेले नियम समजावून घेऊनच केलेली असणार. 'जीवा'चे नैसर्गिक नियम समजले म्हणजे ते नियम मुळात निसर्गात कसे निर्माण झाले हे समजले असे ठरत नाही. तात्पर्य, 'जीव' भौतविज्ञानाचे नियम पाळतो (उल्लंघन करीत नाही) म्हणजे तो केवळ भौतिक (physical) आहे, दुसरे काही नाही, असे ठरत नाही. काही जण 'जीव' म्हणजे 'अणूंचा संघात' याखेरीज दुसरे काही नाही, असे म्हणतात. अशा लोकांच्या अज्ञानाची कीव करावी तितकी थोडीच आहे. मानवी मन म्हणजे मेंदूतील अणूंच्या संघाताखेरीज दुसरे काही नाही असे म्हणण्यासारखे हे आहे. अशा लोकांनी असे विधान करण्यापूर्वी मानवी मनाच्या राग, लोभ इ. भावना अणूतून कशा निर्माण होतात, हे भौतविज्ञानाच्या नियमांच्या आधारे प्रथम स्पष्ट केले पाहिजे. पण हे स्पष्ट करणे हेच जणू विज्ञानाचे ध्येय आहे असे काहीजण म्हणतात. उदा जे. बी. एस्. हॉल्डेन हा शास्त्रज्ञ हायड्रोजन अणूचे गुणधर्म त्यातील इलेक्ट्रॉनच्या गुणधर्मानुसार कसे निर्माण होतात याचा शोध लागल्याच्या वस्तुस्थितीचा उल्लेख करून हाच वैज्ञानिक उपपत्तीचा नमुना (the model of scientific explanation) 'जीवा'लाही का लागू करू नये असे विचारतो. भौतविज्ञानाचे 'मॉडेल' कसे कार्य करते हे सांगून हॉल्डेन म्हणतो,

"I regard this as a model of scientific explanation. If we ever explain life and mind in terms of atoms, I think we shall have to attribute to the atoms the same nature as that of minds or constita-

याचा अर्थ असा, "वैज्ञानिक उपपत्तीचा हाच (भौतवैज्ञानिक) नमुना मी मानतो. जीव व मन यांची अणूंच्या स्वरूपात उपपत्ती द्यावयाची झाली तर मनाची किंवा इंद्रियज्ञानांची लक्षणे अणूंवर आपल्याला आरोपित करावी लागतील, असे मला वाटते." म्हणजे असे की अणूंनाही मानवी मनाप्रमाणे राग-लोभादी भावना होतात, किंवा शीतोष्णतेची जाणीव होते, असे हाल्डेनच्या मते मानावे लागते ! हीच हाल्डेनप्रणीत मानवी मनाची 'वैज्ञानिक उपपत्ती' होय. येथे अणूंचे मानवी मनात रूपांतर होत नाही, तर अणूंचा संघात म्हणजेच मानवी मन आहे असे हाल्डेन सुचवतो. मानवी मनाचे रागलोभ म्हणजेच अणूंच्या संघाताचे राग-लोभ ! उत्क्रांती म्हणजे गुणात्मक बदल नव्हे, म्हणजे जडाचे चैतन्यात रूपांतर नव्हे, तर जडाची जडातच अधिक वाढ होय ! ही उत्क्रांतीची थड्डा नव्हे काय? उत्क्रांती झाली ही वस्तुस्थितीच नाकारण्याचा हा प्रकार आहे. अशा शास्त्रज्ञांनी 'चमत्कार' नाकारावेत यात आश्चर्य कसले? कारण या शास्त्रज्ञांच्या मते भौतिक नियमांत बदलच होत नाहीत. मग ते उल्लंघनाचा प्रश्न कुठे येतो? जेथे जैविक उत्क्रांतीच्या पुराव्याची वासलात अशा रीतीने हे शास्त्रज्ञ भौतिक नियमांच्या अबाधितत्वाच्या (अनुल्लंघनीयतेच्या) तत्त्वावर लावतात, तेथे 'चमत्कारा'च्या पुराव्याची वासलात ते याच पद्धतीने लावत असतील असे कोणाला वाटेल. पण तशी वासलात लावता येत नाही ही खरी अडचण आहे. म्हणून ते तो पुरावाच नाकारतात आणि या पुराव्याकडे उघडउघड डोळेझाक करतात ! 'मी ते पुरावे माझ्या डोळ्यांनी सादर केले तरी स्वीकारणार नाही' असे हेल्महॉट्झ का म्हणतो हे यावरून स्पष्ट होईल. असे म्हणण्याची - पुरावेच नाकारण्याची - या शास्त्रज्ञांवर का पाळी येते हे 'परचित्तज्ञाना'चेच उदाहरण घेऊन स्पष्ट करता येईल.

'जीवा'ला व मानवी 'मना'ला भौतशास्त्राचे 'मॉडेल' लागू करणाऱ्या हाल्डेनसारख्या शास्त्रज्ञांना 'परचित्तज्ञाना'ला हे भौतविज्ञानाचे 'मॉडेल' लागू करता येईल काय? या प्रश्नाचे उत्तर स्पष्ट 'नाही' असे आहे. उदा. कोणत्या भौतिक 'मॉडेल'ने एका व्यक्तीच्या मनातील विचार दुसऱ्या व्यक्तीच्या मनाला कळतात, असे हे भौतिकवादी शास्त्रज्ञ सांगणार आहेत? अदृश्य अशा सर्वव्यापी गुरुत्वाकर्षण-शक्तीच्या वा प्रकाशशक्तीच्या 'मॉडेल'ने हे परचित्तज्ञान होणे शक्य नाही. कारण भौतिक शक्ती ही अंतराच्या वर्गाच्या व्यस्त प्रमाणात कमी होते असे भौतविज्ञानाचा नियम (inverse square law of physics) सांगतो. उदा. अंतर दुप्पट केले तर शक्ती चौपट कमी होते. पण परचित्तज्ञान अंतराच्या व्यस्त प्रमाणात कमी होताना दिसत नाही. हजारो मैल अंतरावरूनही परचित्तज्ञान अगदी जवळ असल्याप्रमाणेच होऊ शकते, हे रशियाच्या खुद्द जडवादी शास्त्रज्ञांनी १९६६

साली सप्रयोग सिद्ध केले आहे. (हा प्रयोग Grand Moscow-Siberia Telepathy Test या नावाने प्रसिद्ध आहे.)<sup>\*</sup> म्हणजे भौतविज्ञानाच्या एका मूलभूत नियमाचाच परचित्तज्ञानाची घटना भंग करताना दिसते. बरे, कोणत्या व्यक्तीला परचित्तज्ञान होते हे कसे ठरवायचे? म्हणजेच परचित्तज्ञान होणाऱ्या व्यक्तीची निवड कोणत्या भौतिक विज्ञानाच्या तत्त्वानुसार होते असे म्हणायचे? भौतिक शक्ती सर्वत्र सारखीच विखुरते. तिच्यात निवडीचा भागच नसतो. पण परचित्तज्ञान विशिष्ट व्यक्तीनाच होते असे आढळून येते. ही निवड कशी होते, वा कोण करते? रेडिओप्रमाणे संदेश पाठविण्याची व स्वीकारण्याची यंत्रणा मेंदूत आहे असे म्हणावे, तर अशी यंत्रणा मेंदूशास्त्रज्ञांना सापडलेली नाही. परचित्तज्ञानामुळे होणारा सर्वात मोठा भौतिक नियम-भंग म्हणजे कार्यकारणभावाचा भंग होय. परचित्तज्ञानाचे कारण कोणते हेच माहीत नसल्यामुळे 'अमुक कारणाचा अमुक परिणाम' हा भौतविज्ञानाचा नियमच परचित्तज्ञानाला लागू करता येत नाही. ही गोष्ट भविष्यज्ञानावरून विशेष स्पष्ट होते. मानवी मनाला भावी घटनांचे अतींद्रिय ज्ञान होते ही वस्तुस्थिती आहे. (विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथाचे ३ रे प्रकरण पाहा. पुढेही भविष्यविज्ञानाची उदाहरणे देण्यात येतील. **विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन** या ग्रंथातील नाडीभविष्यावरील प्रकरणही वाचकानी पाहावे.) आता जी घटना अजून घडलेली नाही, म्हणजे जी घटना अस्तित्वातच नाही, तिचा मानवाच्या मेंदूवर परिणाम कसा होईल? भौतविज्ञानाच्या कार्यकारणभावाच्या तत्त्वानुसार कोणत्याही वस्तूचा परिणाम मानवी मेंदूवर झाल्याखेरीज त्या वस्तूचे मेंदूला ज्ञान होणार नाही. भविष्यकालीन घटना अस्तित्वातच नसल्यामुळे, म्हणजे ती घडलेलीच नसल्यामुळे, तिचा कोणत्याही मानवी मेंदूवर परिणाम होणार नाही; व म्हणून तिचे ज्ञान कोणत्याही मेंदूला होणार नाही. अशा रीतीने भौतविज्ञानाच्या कार्यकारणभावाच्या तत्त्वानुसार मानवी मेंदूला भविष्याचे ज्ञान होणे अशक्य आहे. पण ते ज्ञान होते ही वस्तुस्थिती असून ती वस्तुस्थिती भौतविज्ञानाचे भौतिक कार्यकारणभावाचे तत्त्व भविष्यज्ञान खोटे ठरविते - धाब्यावर बसवते - हे दाखवून देते. **भविष्यज्ञान भौतिक तत्त्वावर चालणाऱ्या मानवी मेंदूला होत नसून मानवी मनाला होते व म्हणून मानवी मेंदू व मानवी मन ही एकच नव्हेत हे भविष्यज्ञानाची ही वस्तुस्थिती सिद्ध करते.** जडवादी भौतवैज्ञानिक व त्यांच्यामागून जाणारे काही मेंदूशास्त्रज्ञ, मेंदू व्यतिरिक्त मनाचे अस्तित्व नाकारतात. त्यांचा हा दृष्टिकोन चुकीचा असल्याचे भविष्यज्ञानामुळे सिद्ध होते.

नेहमीच्या व्यवहारात आपण पाहतो की, भौतिक घटना अगोदर घडते व नंतर तिचे मेंदूला ज्ञान होते. भविष्यज्ञानात याच्या उलट घडते. म्हणजे अगोदर भौतिक घटनेचे ज्ञान होते व नंतर ती घटना घडते. कालाचा प्रवाह भूतकालाकडून भविष्यकालाकडे वाहतो हे खरे असेल व भविष्यकालीन घटनेचा परिणाम भूतकालातील

घटनेवर वा वस्तूवर (मेदूवर) होणे शक्य नाही हेही खरे असेल, म्हणजेच भौतिक कार्यकारणभावाची भौतवैज्ञानिकांची कल्पना भविष्यज्ञान चुकीची ठरवत असेल, तर एकच निष्कर्ष निघतो, तो म्हणजे मानवी 'मन' हेच भविष्यातील घटनांचे 'कारक' आहे ! म्हणजेच मानसिक घटनेमुळे भौतिक घटना घडते - भौतविज्ञानिक समजतात तसे भौतिक घटनेमुळे मानसिक घटना घडत नाही ! मनामुळे भौतिक घटना घडतात हे काही भौतवैज्ञानिक आपल्या आवडत्या बुद्धिवादी तत्त्वज्ञानाच्या आहारी गेल्यामुळे मान्य करीत नाहीत. पण हा त्यांचा शुद्ध निर्बुद्धपणा आहे मी हे लेखन करीत आहे हे माझ्या मनामुळे करीत आहे, की हातातील स्वयंचलित स्नायूमुळे ? म्हणजे स्नायू आपोआप लेखन करीत आहेत, की माझ्या मनाच्या प्रेरणेमुळे करीत आहेत ? भौतिकवादी शास्त्रज्ञ म्हणतील की, माझ्या मेंदूरूपी गणकयंत्रामुळे हे लेखन होत आहे. येथे मनाचा काही संबंध नाही ! त्यांच्याकडून हे उत्तर अपेक्षित असल्यामुळेच प्रस्तुत ग्रंथात भानामतीच्या प्रकरणांचा इतक्या मोठ्या संख्येने समावेश केला आहे प्रस्तुत ग्रंथातील भानामतीची प्रकरणे कोणतेही भौतिक कारण नसताना घडताना दिसतात ! भौतविज्ञानाचे सर्वच नियम त्या घटना सर्रास धाब्यावर बसवतात. सर्व भौतविज्ञानच त्या 'खोटे' ठरवतात ! आणि तेही सार्वजनिकरित्या व सर्वासमोर ! (विशेषतः प्रकरण ४ व ५ पाहा.) त्या घटनांची भौतिक उपपत्तीच देता येत नसल्यामुळे व मानसिक उपपत्ती (मनाचे 'कारकत्व') या जडवादी शास्त्रज्ञांना त्यांच्या बुद्धिवादी तत्त्वज्ञानामुळे मान्य करता येत नसल्यामुळे, भानामतीच्या या घटना घडतात, ही वस्तुस्थितीच नाकारण्याशिवाय त्यांच्यापुढे पर्याय नाही ! अशा रीतीने वैज्ञानिक पुरावेच नाकारण्याचा मुलखावेगळा अवैज्ञानिकपणा त्यांना या ठिकाणी दाखवावा लागतो ! आंधळे बुद्धिवादी तत्त्वज्ञान (तर्कवाद) स्वीकारायचे, की इंद्रियांनी सादर केलेला पुरावा स्वीकारायचा असा पर्याय पुढे उभा ठाकला तर शास्त्रज्ञ - सत्यशोधक शास्त्रज्ञ - या नात्याने वास्तविक पुरावे स्वीकारण्याची त्यांची जबाबदारी आहे. पण त्यांचे बुद्धिवादावरील प्रेम इतके आंधळे आहे की, हेल्महॅट्झप्रमाणे सरळ पुरावे नाकारण्यात त्यांना कसलीही दिक्कत वाटत नाही. याचे कारण या 'चमत्कारा'च्या घटना संपूर्ण भौतविज्ञानच, त्याचे सर्व नियम धाब्यावर बसवून खोटे ठरवतात अशी त्यांची झालेली समजूत होय. पण अशा 'चमत्कारा'मुळे भौतविज्ञान खोटे ठरते असे मानण्याचे खरोखर काही कारण नाही. उत्क्रांतीची वस्तुस्थिती याला साक्ष आहे. उत्क्रांती हे दाखवून देते की, खालच्या पातळीवरील घटना व नियम वरच्या पातळीवरील घटनांच्या व नियमांच्या उत्क्रांतीमुळे गौण ठरतात; सापेक्षतः कमी महत्त्वाच्या ठरतात. खोट्या ठरत नाहीत. भौतिक जगात जडाची उत्क्रांती चेतनात झाली म्हणून जड खोटे ठरत नाही, तर गौण ठरते. मानवी मन जास्त महत्त्वाचे व प्रधान ठरते. एकीकडे निम्न जड तत्त्व व दुसरीकडे उन्नत आध्यात्मिक

(अतींद्रिय) तत्त्व यांना जोडणारे मध्यस्थ तत्त्व (Liaison principle) म्हणून मानवी मन काम करते. अतींद्रिय शक्ती हे त्या मनाचे प्रधान लक्षण असून ते मन जितके जास्त विकसित (वा उत्क्रांत) होईल तितकी त्या उन्नत आध्यात्मिक तत्त्वाशी ते जास्त जवळीक साधेल. या दृष्टीने विचार करता अतींद्रिय विज्ञान हेच सत्याकडे मानवाला नेणारे प्रधान विज्ञान असून जडवादी भौतविज्ञान हे गौण विज्ञान ठरते. बुद्धिवादी त्यालाच प्रधान विज्ञान मानण्यात मोठीच चूक करीत आहेत. अतींद्रिय घटनांच्या - तथाकथित 'चमत्कारांच्या' - वैज्ञानिक संशोधनाने ही गोष्ट सूर्यप्रकाशाइतकी स्पष्ट झाली आहे. तथाकथित 'चमत्कारांचे' वैज्ञानिक संशोधन कसे करण्यात आले आहे, हे संक्षेपाने समजावून घेणे म्हणूनच महत्वाचे आहे.

### तथाकथित 'चमत्कारांचे' वैज्ञानिक संशोधन

वर म्हटल्याप्रमाणे रुढ (भौतिकवादी) वैज्ञानिकांचे (यांना प्रस्थापितही - establishment - म्हणतात.) म्हणणे असे की, एका व्यक्तीच्या मनातील विचार दुसऱ्या दूरस्थ व्यक्तीला (तारायंत्र किंवा रेडियोसारख्या) भौतिक माध्यमाखेरीज कळणार नाहीत. दुसऱ्या शब्दात परचित्तज्ञान (telepathy) नावाचा 'चमत्कार' अस्तित्वात नाही व शक्यही नाही. पण बुद्धिवादी तत्त्वज्ञानाचा पाठपुरावा करणाऱ्या या शास्त्रज्ञांचे हे केवळ एक 'मत' आहे. तो काही शास्त्रीय निकषाखाली सिद्ध झालेला सिद्धांत नाही. 'मते' राजकीय क्षेत्रात मोठ्या दिमाखाने 'सिद्धांत' वा तत्त्वज्ञान म्हणून मिरवत असतात. पण विज्ञानात त्यांना शून्य किंमत असते. सुदैवाने 'जडवाद' (Materialism) राजकीय तत्त्वज्ञान म्हणून स्वीकारलेल्या कम्युनिस्ट रशियातच या 'मता'ची पहिल्यांदा शास्त्रीय निकषाखाली तपासणी करणारा शास्त्रज्ञ जन्मला, हे विज्ञानाचे एक मोठेच भाग्य म्हटले पाहिजे. आणि ही तपासणी त्याने ७० वर्षांपूर्वीच केली आहे. (पण ते प्रयोग त्याने लगेच प्रसिद्ध केले नव्हते. स्टालिन मेल्यानंतर व दडपशाहीचे वातावरण निवळल्यानंतर १९६२ साली त्याने ते प्रसिद्ध केले.) लिओनिड व्हॅसिलिएव हे त्या शास्त्रज्ञाचे नाव असून ज्या खोलीत विद्युच्चुंबकीय लहरी शिरणार नाहीत (अशा विद्युच्चुंबकीय लहरींना अटकाव करणाऱ्या खोलीला 'फॅरॅडे केज' म्हणतात.) अशा खोलीत प्रयुक्ताला बसवून त्याच्यावर संमोहनाचे त्याने प्रयोग केले आहेत. दुसऱ्यांदा शिशाच्या भिंती असलेल्या व त्या पाऱ्याने सीलबंद केलेल्या खोलीत प्रयुक्ताला (test subject) बसवून त्याने हे प्रयोग केले. हे प्रयोग १०० मैल अंतरावरूनही त्याने केले आहेत. या सर्व प्रयोगात त्याला ९० टक्के यश आले आहे. हे प्रयोग त्याने प्रसिद्ध करण्यापूर्वी (म्हणजे या प्रयोगांची माहिती नसतानासुद्धा) इंग्लंडमध्ये एस्. जी. सोल या शास्त्रज्ञाने नेमके अशाच प्रकारचे प्रयोग १९४७ साली केले होते. त्यानेही एकदा 'फॅरॅडे केज' मध्ये व



दुसऱ्यांदा दीड इंच जाडीच्या शिशाच्या भिंती असलेल्या खोलीत प्रयुक्तास बसवून, पण पत्ते (cards) ओळखण्यासंबंधीचे प्रयोग केले होते. आणि त्यालाही या प्रयोगात पूर्ण यश आले होते. (हे यश सांख्यिकीय - Statistics - पद्धतीने ठरविण्यात आले होते.)<sup>१</sup>

या प्रयोगांनी हे दाखवून दिले आहे की, एखाद्या व्यक्तीचे विचार (उदा. व्हॅसिलिएव्हच्या प्रयोगात त्याने प्रयुक्ताला दिलेल्या संमोहनाच्या सूचना) दुसरी व्यक्ती कोणत्याही भौतिक माध्यमाखेरीज ग्रहण करू शकते, (telepathy) किंवा तिला कोणत्याही भौतिक माध्यमाशिवाय दूरच्या वस्तू दिसू शकतात. (उदा. सोलच्या प्रयोगातील पत्ते) (clairvoyance). अशा रीतीने भौतिक माध्यमाशिवाय विचारांचे संक्रमण वा संदेशवहन - माहितीची देवाणघेवाण - होऊ शकते, हे या व इतरही (विशेषतः अमेरिकेतील ड्यूक युनिव्हर्सिटीच्या प्रयोगशाळेत केलेल्या) असंख्य प्रयोगांनी दाखवून दिले आहे. (अधिक माहितीसाठी विज्ञान आणि बुद्धिवाद हा ग्रंथ पाहा.) या सर्व प्रयोगावरून एक गोष्ट निर्णायकपणे सिद्ध होते ती ही की, भौतिकवादी समजतात तसे या दृश्य जगाचे स्वरूप मूलतः व तत्त्वतः भौतिक वा जड नाही. त्याच्या पाठीमागे अभौतिक स्वरूपाचे नियम वा अतींद्रिय तत्त्व वा सत्य दडले आहे. तात्पर्य, या दृश्य जगाविषयीचे जडवादी लोकांचे 'तत्त्वज्ञान' मुळातच खोटे आहे. म्हणून इंग्लंडमधील ऑक्सफर्ड युनिव्हर्सिटीचा तर्कशास्त्राचा प्राध्यापक एच्. एच्. प्राइस याने १९४९ सालच्या हिब्वर्ट जर्नलमध्ये पुढीलप्रमाणे घोषण केली आहे :

We must conclude, I think, that there is no room for telepathy in a Materialistic universe. Telepathy is something which ought not to happen at all, if Materialistic theory were true. But it does happen. So there must be something seriously wrong with the Materialistic theory, however numerous and imposing the normal facts which support it may be.

याचा अर्थ असा : "जडवाद्यांच्या जगात परचित्तज्ञानाला (अजिबात) थारा नाही. परचित्तज्ञान ही एक अशी घटना आहे, की जी जडवाद्यांचा (भौतिक) सिद्धांत खरा असेल तर घडता कामा नये. पण ती घडते असे आढळून येते. त्यामुळे असे म्हणावे लागते की, या जडवादी सिद्धांतामध्ये एक मोठाच दोष आहे. तो सिद्धांत स्वीकारणाऱ्यांची कोठेतरी मोठी चूक होत आहे. मग नेहमीच्या व्यवहारात त्या सिद्धांताच्या बाजूने कितीही मोठ्या प्रमाणातील व कितीही भव्य स्वरूपाचे पुरावे आढळून येवोत."

वरील उताऱ्यातील शेवटचे वाक्य महत्त्वाचे आहे. ते म्हणजे, "मग नेहमीच्या

व्यवहारात त्या (जडवादी) सिद्धांताच्या बाजूने कितीही मोठ्या प्रमाणातील व कितीही भव्य स्वरूपाचे पुरावे आढळून येवोत.” कारण भौतिकवाद्यांचा मुख्य भर नेहमीच्या व्यवहारात आढळून येणाऱ्या जडवादाच्या बाजूने आढळणाऱ्या घटनांवर (पुराव्यावर) नेहमी असतो. कारण नेहमीच्या व्यवहारात परिचितज्ञान किंवा दूरवस्तुदर्शन अतींद्रियरीतीने होत असल्याचे आढळून येत नाही. म्हणून या गोष्टी अशक्य आहेत असे भौतिकवाद्यांचे म्हणणे असते. पण मनुष्यात सुप्त असलेली अतींद्रिय शक्ती नेहमीच्या व्यवहारात आढळून येत नाही, म्हणून ती त्याच्यात अस्तित्वातच नाही असे ठरत नाही. ती शक्ती नेहमीच्या जीवनात हरघडीला प्रकट होऊ लागली तर माणसाला नेहमीचे जीवन जगणेच अशक्य होईल (पीटर हर्कोस या डच माणसाला ही शक्ती प्राप्त झाल्यामुळे त्याचे जीवन कसे दुःखमय झाले हे त्याचे चरित्रच सांगते. या माणसाला आपलेच लोक ‘हा मेला तर बरे’ असे मनात म्हणत असल्याचे कळत असल्यामुळे फार दुःख होई. त्याच्याविषयीच्या अधिक माहितीसाठी **विज्ञान आणि बुद्धिवाद** यातील ३ रे प्रकरण पाहा.) माणसाच्या मेंदूवर सर्व तऱ्हेचे संदेश सतत आदळू लागले, तर त्याला नित्याचे जीवन सामान्य माणसाप्रमाणे जगताच येणार नाही. प्रसिद्ध फ्रेंच तत्त्वज्ञ हेन्री बर्गसॉ याने म्हटल्याप्रमाणे निसर्गानेच सर्व तऱ्हेच्या बाह्य संदेशांपासून मानवी मनाचे संरक्षण केले आहे. निसर्गनिवडीच्या तत्त्वानुसार उत्क्रांत झालेली ही एक जीवशास्त्रीय व्यवस्था असून तिला ‘फिल्टर थेअरी’ (सिद्धांत) म्हणतात. या सिद्धांतानुसार नित्याचे जीवन जगण्यास आवश्यक तेवढेच संदेश मानवी मेंदू स्वीकारतो व बाकीचे नाकारतो. पण आणीबाणीच्या वेळी ही मेंदूची नैसर्गिक संरक्षण तटबंदी कोलमडते व आवश्यक अशा दृष्टिआडच्या (अतींद्रिय) संदेशांना कधीकधी तात्पुरती वाट मोकळी करून देण्यात येते, असे आढळून येते. आणि खरोखर आणीबाणीच्या वेळीच - संकटकाळीच - भौतिक जगाचे खरे स्वरूप प्रकट होते (माहीत होते) असे म्हटले पाहिजे. आणि ते असे प्रकट होत असल्यामुळे त्याच्या खऱ्या स्वरूपाची कल्पना नेहमीच्या जीवनावरून - नित्याच्या व्यवहारावरून - कोणालाही करता येणार नाही, व तशी ती कोणी करू नये. याच कारणासाठी नेहमीच्या जीवनात आढळून येणारे भारदस्त व मोठ्या संख्येचे भौतिक पुरावे भौतिकवादाच्या बाजूने देणे चुकीचे ठरते. एखादी इमारत बाहेरून कितीही भव्य दिसत असली तरी संकटकाळी - उदा. भूकंपाच्या वेळी - तिची जशी खरी परीक्षा होते, त्याप्रमाणे या भौतिक जगाचे आहे. आणि मानवी जीवनातील संकटाच्या वेळी प्रकट होणारे या जगाचे स्वरूपच खरे समजावयास पाहिजे. बाह्य दृश्य स्वरूपावरून कोणत्याही वस्तूच्या अंतरंगाची - अंतरंगाच्या त्याच्या खऱ्या स्वरूपाची - कोणालाही कल्पना येणार नाही. या जगाचे बाहेरून ‘जड’ दिसणारे स्वरूप दिखाऊ आहे, मिथ्या (भासमान) आहे, याची कल्पना

मानवाला त्याच्या जीवनातील आणीबाणीच्या वेळीच - संकटकाळीच - येते एखादी साखळी दिसायला कितीही जाड व लांब असली तरी तिचे खरे सामर्थ्य तिच्या जाडीत व लांबीत नसून तिच्या एखाद्या कच्च्या दुव्यात जसे असते, तसे बाहेरून भव्य दिसणाऱ्या या जड वा भौतिक जगाचे आहे. या बाहेरून भव्य दिसणाऱ्या भौतिक जगरूपी साखळीचा दुवा कच्चा असून तो संकटकाळी अकस्मात तुटतो असे आढळून येते. अशावेळी या जगाचे खरे अतींद्रिय (आध्यात्मिक) स्वरूप प्रकट होते व त्याचे बाह्य भौतिक स्वरूप खोटे, भासमान व दिखाऊ आहे हे सिद्ध होते हे त्याचे खरे अतींद्रिय स्वरूप संकटकाळी कसे प्रकट होते हे दाखवून देणारी असंख्य उदाहरणे असून फक्त नमुन्यासाठी येथे काही देतो.

### भौतिक जगात दडलेली व संकटकाळी प्रकट होणारी अतींद्रिय शक्ती

विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथातील 'बुद्धिप्रामाण्यवाद आणि परामानसशास्त्र' व 'मरणोत्तर अस्तित्व' या दोन प्रकरणांत नेहमीच्या जीवनातील अडचणीच्या व संकटाच्या वेळी अतींद्रिय शक्ती कशी प्रकट होते व ह्या बाह्य भौतिक जगाचे स्वरूप दिखाऊ असून त्याचे खरे स्वरूप अतींद्रिय (आध्यात्मिक) असल्याचे ती कशी दाखवून देते, याची बरीच उदाहरणे दिली आहेत. (प्रस्तुत ग्रंथातील १० व्या व १३ व्या प्रकरणातही अशी उदाहरणे दिली आहेत.) ती वाचकानी पाहावीत. येथे उपर्युक्त ग्रंथातील काही उदाहरणांचा वाचकांच्या माहितीसाठी फक्त नामनिर्देश करतो. संकटाची बातमी वृत्तपत्रात वाचून आपल्या पतीला सूक्ष्म देहाने जहाजात भेटणारी मिसेस विल्मॉट, संकटात सापडलेल्या आपल्या मालकाचा जीव अकल्पित रीतीने वाचवणारा व्हिटॅकर, आपल्या मुलग्याला लपविलेले मृत्यूपत्र स्वप्नात येऊन सांगणारा जेम्स चॅफीन, टिटॅनिक जहाजाला होणाऱ्या अपघाताची कित्येक दिवस अगोदर स्वप्नात दृश्ये पाहणारे असंख्य लोक इत्यादी.

येथे वर म्हटल्याप्रमाणे नमुन्यासाठी आणखी काही उदाहरणे देतो.

५ ऑक्टोबर १९३० रोजी R100 या ब्रिटिश विमानाला फ्रान्समध्ये झालेल्या अपघाताचे स्वप्न लिव्हरपूलच्या जे. एस. राइट या माणसाला कित्येक महिने अगोदर पडले होते. पुन्हा तेच स्वप्न त्याला एका आठवड्याच्या अंतराने दुसऱ्यांदा पडले. ते त्याने इतरांना सांगितलेही. नंतर त्याच अपघाताचे तसलेच स्वप्न, पण अपघाताच्या सर्व तपशीलांसह आर. डब्ल्यू. बॉर्ड या दुसऱ्या एका माणसाला अपघाताच्या केवळ दोनच दिवस अगोदर पडले. दोघांनीही या स्वप्नाची इतरांशी चर्चा केली होती. त्यामुळे हे स्वप्न अपघाताच्या अगोदर खरोखरच त्यांना पडले होते - म्हणजे ही स्वप्नाची घटना सत्य होती याबद्दलच्या साक्षी उपलब्ध आहेत.<sup>१०</sup>

डेव्हिड बूथ या एका कार कंपनीत मॅनेजर असलेल्या सिनसिनाटी शहरातील गृहस्थाला अमेरिकन एअर लाइन्सचे चिन्ह असलेल्या विमानाचा हवेत उडत असताना एकदम स्फोट होऊन ते एका बाजूला कलंडल्याचे व जमिनीवर पडून आगीच्या लोळात नष्ट झाल्याचे १५ मे १९७९ रोजी एक स्वप्न पडले व तो भयंकर घाबरून जागा झाला. त्यानंतर लागोपाठ तेच स्वप्न त्याला पुढे दररोज पडू लागले. ते स्वप्न लागोपाठ सात दिवस पडल्यानंतर त्याची मानसिक स्थिती फार बिघडून गेली व न राहवून त्याने सिनसिनाटी शहराच्या विमानतळावरील अमेरिकन वाहतुकीच्या फेडरल अक्विझिशन अॅडमिनिस्ट्रेशन ऑफीसला आपल्याला सतत सात दिवस पडणाऱ्या विमान अपघाताचे हे स्वप्न फोनवरून कळवले. त्यामुळे त्याला थोडे मानसिक स्वास्थ्य मिळाले. तरी त्या स्वप्नाने त्याची पाठ सोडली नाही. ते पुन्हा त्याला तीन दिवस पडले. अशा रीतीने सतत दहा दिवस ते स्वप्न पडल्यानंतर अकराव्या दिवशी म्हणजे २५ मे १९७९ रोजी शिकॅगो आंतराष्ट्रीय विमानतळावर अमेरिकन एअरलाइन्सच्या DC-10 या विमानाचा हवेत उडत असताना एकदम स्फोट होऊन त्यात झालेल्या आगीच्या लोळात २७३ लोक मृत्युमुखी पडल्याची बातमी त्याने टी. व्ही. वर ऐकली. अमेरिकन हवाई वाहतुकीच्या इतिहासातील तो सर्वात मोठा अपघात होता. बूथशी फोनवर बोललेले सिनसिनाटी विमानतळावरील अधिकारी विमान अपघाताची जागा बूथने वर्णन केल्याप्रमाणेच असल्याची पाहून आश्चर्यचकित झाले. ११

२१ ऑक्टोबर १९६६ रोजी इंग्लंडच्या वेल्स परगण्यातील एका डोंगराच्या कडेला असलेला कोळशाचा कचरा एकाएकी घसरून खालच्या शाळेवर पडला व त्याखाली सापडून १४४ लोक मृत्युमुखी पडले. यापैकी १२८ लहान मुले होती. या अपघाताचे संशोधन जे. सी. बार्कर याने केले असून त्याला या अपघाताची स्वप्ने (कित्येक दिवस अगोदर) शेकडो लोकांना पडल्याचे आढळून आले. पैकी ३५ लोकांच्या स्वप्नांची (व जागेपणीच्या दर्शनांची) त्याने तपशीलवार माहिती मिळवून *Journal of the Society for Psychical Research* च्या १९६७ सालच्या ४४ व्या अंकात दिली आहे. एका व्यक्तीला अवरफॅन हे अपघाताच्या गावचे नावसुद्धा स्वप्नात माहीत झाले होते. एका मुलीने आपल्या आईला अपघाताच्या १५ दिवस अगोदर “मी मरणाला भीत नाही” असे म्हटले होते. “तू अशी का बोलतेस? तुला खाऊ - लॉलीपॉप - पाहिजे काय?” असे तिच्या आईने तिला विचारले, तेव्हा ती म्हणाली, “नको. मी पीटर व ज्यून (तिचे शाळासोबती) यांच्याबरोबर असेन.” आणि अपघाताच्या

दोनच दिवस अगोदर तिने, आपण शाळेला गेलो, पण तिथे शाळाच नव्हती, सगळीकडे काळेच काळे पसरले होते असे स्वप्न आपल्याला पडल्याचे आपल्या आईला सांगितले. अपघातानंतर लोकांनी कोळशाचा कचरा उपसून काढला तेव्हा त्या मुलीच्या मृतदेहाच्या दोन्ही बाजूला तिचे शाळासोबती पीटर व ज्यून यांचे मृतदेह सापडले.<sup>११</sup>

भावी घटनांची सूचना सर्वांनाच मिळत असते. म्हणजे अतींद्रियशक्ती आपले कार्य नेहमीच करीत असते. पण तिची जाणीव आपल्या जागृत मनाला नसते. आपल्या अबोध (unconscious) मनाला मात्र ती निश्चित असते. डब्ल्यू. ई. कॉक्स या अमेरिकन संशोधकाने अमेरिकेत दररोज रेल्वेने प्रवास करणाऱ्या लोकांची संख्या जेव्हा तपासली, तेव्हा ज्या दिवशी रेल्वेला एखादा मोठा अपघात झाला होता त्या दिवशी इतर दिवसापेक्षा नेहमीच ती संख्या कमी असल्याची आढळून आली. याचा त्याने असा अर्थ काढला, की काही लोकांच्या अबोध मनाला त्या दिवशीच्या रेल्वे अपघाताची पूर्वसूचना मिळाली होती. म्हणून त्यांनी त्या दिवशीचा रेल्वेचा प्रवास टाळला होता.<sup>१२</sup>

चर्चिलच्या जीवनात त्याला अशा भावी संकटाच्या पूर्वसूचना मिळत असल्याबद्दलची माहिती त्याच्या चरित्रात त्याच्या पत्नीने दिली आहे. ड्रायव्हरशेजारी गाडीत नेहमी बसणारा चर्चिल एके दिवशी (ही दुसऱ्या महायुद्धाच्या वेळची गोष्ट आहे.) ड्रायव्हरने विनंती करूनही गाडीच्या मागच्या सीटवर तो बसला. त्यामुळे गाडीजवळ बाँब पडूनही तो कसा वाचला, याची हकीकत तिने तपशीलाने - चर्चिलच्या तोंडून ऐकूनच - त्याच्या चरित्रात सांगितली आहे.<sup>१३</sup> याच्या उलट अब्राहम लिंकन व केनेडी यांना भावी संकटांची (त्यांच्या खुनाची) सूचना मिळूनही त्यांनी तिकडे दुर्लक्ष केले. अशा वेळी विधिलिखिताची कास धरण्यावाचून गत्यंतर नसते. म्हणून अतींद्रिय शक्ती नेहमीच संकट टाळण्यासाठी कार्यरत असते, असे म्हणता येत नाही. वर दिलेल्या विमान दुर्घटनांच्या उदाहरणातील सामान्य लोकांना मिळालेल्या स्वप्नातील अतींद्रिय पूर्वसूचना त्या दुर्घटना टाळण्यासाठी नव्हत्या हे उघड आहे. मग त्यांना त्या (स्वप्नात) का मिळाल्या? या दुर्घटनांना धक्कामूल्य (shock value) असल्याचा परामानसशास्त्रज्ञांनी अंदाज बांधला आहे. उदा. टिटॅनिक हे जगातील सर्वात मोठे जहाज असून ते बुडणे अशक्य मानले गेले होते. त्यामुळे त्यातील प्रवाशांच्या संकटकाळच्या संरक्षणाची व्यवस्था दुर्लक्षिली गेली होती. पण ते जहाज बुडाले आणि त्यात दीड हजारावर लोक मेले. हा मानसिक धक्का होता. अँबरफॅनच्या अपघातात १२८ केवळ निष्पाप व कोवळी बालके मेली. हाही मानसिक - भावनिक - धक्का होता. अशा भावनिक धक्का देणाऱ्या अपघातांच्या

पूर्वसूचना माणसाच्या मनाला अतींद्रियरित्या होतो व म्हणून या अपघातांची स्वप्ने (व जागेपणाची दृश्ये) त्या अपघाताअगोदर इतर अपघातापेक्षा जास्त लोकांना पडली (व दिसली), असा परामानसशास्त्रज्ञांचा कयास आहे. विमान अपघातांची स्वप्ने पडणाऱ्या काही लोकांना विमानात व त्याच्या प्रवासात रस असल्याचे आढळून आले आहे. म्हणजे येथेही भावनेचा - भावनिक धक्क्याचा - संबंध येतो.

स्वप्न हे माणसाला अतींद्रिय ज्ञान होण्याचे एक प्रमुख साधन आहे. किंबहुना ते भविष्यातील घटनांच्या अतींद्रिय ज्ञानाचे सर्वात प्रभावी साधन असल्याचे आढळून येते. माणसाला अतींद्रिय ज्ञान करून देणाऱ्या स्वप्नांपैकी ६६ ते ७० टक्के स्वप्ने भविष्यातील घटनांच्या सूचना देणारी असतात, असे अमेरिका व ब्रिटनमध्ये केलेल्या सर्वेक्षणात आढळून आले आहे. अशी स्वप्ने वरचेवर पडतात व स्पष्ट असतात असे आढळून येते. तथापि, जागेपणी सुद्धा भावी घटनांची दृश्ये काहीना स्पष्ट दिसतात. लुइस व्हाईन यांनी सर्वेक्षण केलेल्या १३२४ भावी अतींद्रिय घटनांपैकी ३२ टक्के घटना जागेपणी (स्वप्नात नव्हे) दिसल्याचे आढळून आले आहे. <sup>११</sup>

### संदेश देण्यासाठी प्रकट होणारी अतींद्रिय शक्ती

संकटकाळी प्रकट होणारी अतींद्रिय शक्ती वास्तविक संदेश देण्यासाठीच प्रकट झालेली असते. आणि मृत्यू हे सर्वात मोठे संकट असल्यामुळे हा मृत्यूचाच संदेश असतो. पण तो सार्वजनिक मृत्यूचा व स्वप्नातील संदेश असतो. पण मृत्यू पावलेले लोक आपल्या नातेवाईकांना व मित्रांना स्वप्नात वा जागेपणी प्रत्यक्ष भेटून लगेच अदृश्य होतानाही - म्हणजे वैयक्तिक संदेश देतानाही - अनेकदा आढळून आले असून अशा प्रकारची संदेश-दर्शने त्या (भेट देणाऱ्या) व्यक्तीचा मृत्यू झाल्याची निदर्शक असतात, असे आढळून येते. हा मृत्यूचा संदेश असल्याचे ती व्यक्ती भेटून अदृश्य झाल्यानंतर सर्वसामान्य मार्गाने त्यांच्या मृत्यूचा (normal) संदेश नंतर संबंधित नातेवाईकांना मिळाल्याने स्पष्ट होते. अशा दर्शनांना 'संकटकाळी होणारी भासमान दर्शने' (crisis apparitions) म्हणतात. अशा दर्शनांची खानेसुमारी (census of hallucinations) शंभर वर्षांपूर्वीच ब्रिटिश अतींद्रिय संशोधकांनी प्रसिद्ध केली असून या विषयीचा गुनी व मायर्स यांचा **Phantasms of the Living** हा ग्रंथ प्रसिद्ध आहे. अलीकडे व्हिएटनामच्या युद्धात मेलेले काही अमेरिकन सैनिक तिकडे युद्धात मरतेवेळी आपले अमेरिकन मित्र व नातेवाईक यांना सूक्ष्म देहाने (भासमान रूपाने) भेटल्याची उदाहरणे आहेत. हा संदेश नेहमी मृत्यूचाच असतो असे नाही. काही खास संदेश देण्यासाठी सुद्धा मृतात्मे भेटतात असे आढळून येते. अशा प्रकारच्या संदेशासाठी भेटलेल्या एका मृतात्म्याचे उदाहरण येथे वाचकांच्या

माहितीसाठी संक्षेप रूपाने देतो.

“उपासाने रोड झालेल्या एका मुलाला रस्त्याच्या कडेला पडलेले ब्रेडचे तुकडे वेचून खात असल्याचे मी एकदा पाहिले. मुलगा थोडा ओळखीचा वाटल्याने त्याच्याकडे थोडे न्याहाळून पाहिले, तेव्हा तो पूर्वी माझ्याकडे कामावर असलेला, पण मध्येच ते सोडून गेलेला रॉबर्ट मॅकेझी आहे हे माझ्या लक्षात आले. त्याची दया येऊन मग मी पुन्हा त्याला कामावर घेतले. पुढे मी ग्लासगो हे शहर सोडून लंडनमध्ये राहू लागलो. एके दिवशी मला पुढील स्वप्न पडले. मी एका व्यक्तीशी धंद्यासंबंधी चर्चा करीत होतो. इतक्यात तेथे मॅकेझी आला व मध्येच बोलण्याचा प्रयत्न करू लागला. ‘मी कामात आहे हे तुला दिसत नाही काय?’ असे मी रागाने म्हणताच तो निघून गेला. पण पुन्हा लगेच आला व बोलण्याचा प्रयत्न करू लागला. मी पुन्हा रागे भरताच तो म्हणाला, ‘माझ्यावरचा आरोप खोटा आहे हे सांगण्यासाठी मी आलो आहे.’ मी म्हणालो, ‘कसला आरोप?’ ‘कळेल, लवकरच कळेल.’ असे भावनोद्रेकाने तीन वेळा तो म्हणाला आणि निघून गेला. याचवेळी मी जागा झालो. आणि थोड्याच वेळात माझी पत्नी हातात एक पत्र घेऊन खोलीत आली आणि म्हणाली, ‘मॅकेझीने आत्महत्या केल्याचे पत्र आलेय.’ मी म्हणालो, ‘हे खोटे आहे.’ ती म्हणाली, ‘हे तुम्हाला कसे माहीत झाले?’ मी म्हणालो, ‘स्वतः मॅकेझीच मला नुकताच भेटून हा आरोप खोटा असल्याचे सांगून गेला.’ दुसरे दिवशी माझ्या मॅनेजरचे दुसरे एक पत्र आले त्यात त्याने लिहिले होते की, मॅकेझीने आत्महत्या केली हे खरे नसून ‘अक्वा फोर्टिस’ हा द्रव व्हिस्की समजून प्याल्यामुळे तो मेल्या. अशा रीतीने आपल्या मालकाला आपल्यावरील आरोप खोटा असल्याचे मला सांगण्यासाठी मॅकेझी मेल्यानंतर मुद्दाम आला होता हे स्पष्ट झाले.”<sup>१९</sup>

आपला खून झाल्याचे सांगण्यासाठीही मृतात्मे जिवंत व्यक्तींना भेटतात किंवा ‘धरतात’ असेही आढळून येते. येथे ‘इंडियन एक्सप्रेस’ च्या ५-१-१९८० च्या अंकात प्रसिद्ध झालेली एक बातमी संक्षेपाने व इतर मजकूर गाळून देत आहे.

### खून झालेल्या मुलीचा आत्मा बहिणीच्या मुखाने बोलतो

भुवनेश्वर : ५. पुरी येथील सदाशिव संस्कृत कॉलेजची १९ वर्षांची सुरेखा दाश ही विद्यार्थिनी ३ डिसेंबर १९७९ रोजी आपल्या घराच्या छताला बांधलेल्या दोराला गळफास लावून लटकलेली तिची बहिण सुजाता दाश हिला घरी परतल्यानंतर दिसली. तिचा भाऊ काशीनाथ भुवनेश्वरहून परतल्यानंतर दोघांनी तिचा अंत्यविधी उरकला. नंतर मृत सुरेखाने सुजाताला धरले व तिच्या



मुखाने प्रताप दाश याने आपला गळा दाबून खून केल्याचे ती सांगू लागली. लगेच काशीनाथाने पोलिसात खुनाचा गुन्हा नोंदवला. पोलिसांनी सुजाताच्या मुखाने बोलणाऱ्या खून झालेल्या सुरेखाची जबानी टेपरेकॉर्डरवर ध्वनिमुद्रित करून घेतली आहे. प्रताप दाशला अजून अटक झालेली नाही. मात्र रात्री घरात दरवाजा आणि खिडक्या यांची दारे आपोआप बंद होणे, उघडणे, जोराचा आवाज होणे असले प्रकार सुरू आहेत.<sup>१५</sup>

वरील बातमीत खुनाच्या तपशीलाची माहिती नाही. (कदाचित पोलिसांनी ती ध्वनिमुद्रित केली असावी.) प्रस्तुत लेखकाने संशोधिलेल्या एका प्रकरणात मात्र ती उपलब्ध झाली आहे. हुन्नरगी (ता. चिक्कोडी, जि. बेळगांव) या गावी भीमाप्पा पुत्राप्पा लठ्ठे ही व्यक्ती अचानक बेपत्ता झाली. (१९५२ सालची ही घटना.) पुढे दहा वर्षांनंतर एका बाईच्या अंगात एका पिशाच्चाचा संचार होऊन ते मी भीमाप्पा असल्याचे तिच्या मुखाने सांगू लागले. आपला खून झाल्याचे व आपण धरलेल्या बाईच्या नवऱ्यानेच आपला खून केल्याचे तो मृत भीमाप्पा सांगू लागला. खून कुठे केला, कोणत्या शस्त्राने व कसा केला, किती लोक त्यावेळी तेथे होते इ. सर्व तपशीलही त्या बाईच्या तोंडून भीमाप्पाने सांगितला. आपल्याला मारण्यापूर्वी विडी ओढण्यासाठी त्यांनी दिली, काडेपेटीही दिली, त्यात दोनच काड्या होत्या अशा प्रकारचा बारीक तपशीलही त्याने सांगितला. हा खून गावातील लोकांना माहीत होता. पण भीतीने कोणी पोलिसांना कळवले नव्हते. भीमाप्पाच्या सांगण्यावरून त्याचे प्रेत पोत्यात बांधून पूर आलेल्या वाहत्या नदीत फेकून देण्यात आले होते. म्हणजे मुख्य पुरावाच नाहीसा करण्यात आला होता. त्या बाईने संचार अवस्थेत कुन्नूर या गावी दिलेली ही माहिती ऐकल्यानंतर प्रस्तुत लेखकाने तिच्या नवऱ्याला त्याच्या हुन्नरगी या गावी गाठले व त्याला विश्वासात घेऊन याविषयी विचारले. तेव्हा कुठेही नाव प्रकट (वा प्रसिद्ध) न करण्याच्या अटीवर त्याने आपल्या बायकोच्या तोंडून मृत भीमाप्पाने कुन्नूरच्या मारुतीच्या देवळात सांगितलेली सर्व माहिती तंतोतंत बरोबर असल्याचे (म्हणजेच पर्यायाने खून कोणी केला याविषयीची भीमाप्पाने दिलेली माहितीही बरोबर असल्याचे) प्रस्तुत लेखकाला सांगितले.<sup>१६</sup>

खून झालेल्या व्यक्तीच्या आत्म्याने खुनाची तपशीलवार माहिती व त्याचबरोबर पुरावेही उपलब्ध करून दिल्यामुळे खुनी माणसाला न्यायालयातर्फे जन्मठेपेची शिक्षा झाल्याचे एक प्रकरण अमेरिकेच्या गुन्हेगारीच्या इतिहासात घडले आहे. *Queer Evidence Convicts* (विचित्र पुराव्यामुळे गुन्हा शाबित) या मथळ्याखाली ३ जुलै १८९७ सालच्या *Chicago Evening Journal* च्या अंकात या प्रकरणाचे वृत्त प्रसिद्ध झाले व ते वाचून अमेरिकेच्या अतींद्रिय संशोधन संघाच्या हॉजसन या

संशयखोर म्हणून प्रसिद्ध असलेल्या व अनेक बुवाबाजीची प्रकरणे उघडी केलेल्या शास्त्रज्ञाने ते प्रकरण खरे असल्याचे त्याविषयीचे सर्व कागदोपत्री पुरावे तपासून व त्या प्रकरणाशी संबंध असलेल्या व्यक्तींना प्रत्यक्ष भेटून स्वतःची खात्री करून घेतली आहे. नवऱ्याने मिसेस शू या आपल्या पत्नीचा जेवणापूर्वी गळा दाबून खून केला होता. या प्रकरणत मिसेस शूच्या आईने शूची वरचेवर प्रार्थना करून तिला प्रसन्न केल्यामुळे ती प्रत्यक्ष आपल्यासमोर प्रकट झाल्याचे व खुनाची तपशीलवार माहिती व पुरावे तिने आपल्याला सांगितल्याचे शूच्या आईने कोर्टात सांगितले. मानेचे कोणते हाड मोडले होते हेही शूने आपल्याला सांगितले असल्याने, कोर्टाने त्याची खात्री करून घेण्याचे तिने न्यायाधीशांना आवाहन केले व शूचे प्रेत उकळून काढून ते तपासण्याचा तिने कोर्टापुढे हट्ट धरला. प्रेत उकळून डॉक्टरांनी ते तपासल्यानंतर शूने आपल्या आईला सांगितलेल्या क्रमांकाचेच मानेचे हाड मोडल्याचे आढळून आले. तसेच शूने सांगितलेला घरातील पुरावाही सापडला व नवऱ्याने तिचा गळा दाबून खून केल्याचे सिद्ध होऊन कोर्टाने त्याला जन्मठेपेची शिक्षा सुनावली. या प्रकरणाचे वैशिष्ट्य म्हणजे मृत शू हाडामांसाच्या रूपात आपल्याला भेटल्याचे तिच्या शरीराला आपल्या हातांनी दाबून खात्री करून घेतल्याचे तिच्या आईने कोर्टात शपथेवर सांगितले. <sup>१९</sup>

मनुष्य मेल्यानंतर संपतो हेच खरे असून त्याचा आत्मा उरतो हे म्हणणे खोटे आहे, असे म्हणणाऱ्या जडवाद्यांचे मेल्यानंतर मतपरिवर्तन होते व तसे मतपरिवर्तन झाल्याचा संदेशही त्यांचे मरणोत्तर आत्मे देऊ शकतात, याबद्दलचे हॅरी हुदिनी या प्रसिद्ध अमेरिकन जादुगाराचे उदाहरण अतींद्रिय संशोधन क्षेत्रात गाजलेले आहे. (असा करार करून दिलेला संदेश - म्हणजे आपण मरणोत्तर आत्मरूपाने अस्तित्वात असल्याचा हुदिनीने आपल्या पत्नीला सादर केलेला पुरावा - हुदिनीने फोर्ड या माध्यमामार्फत दिलेला संदेशच होता.) येथे असाच करार करून मेलेल्या व मरणोत्तर आपण आत्मा म्हणून अस्तित्वात असल्याचे पुराव्यानिशी सिद्ध करणाऱ्या एका प्रसिद्ध चित्रपट कथालेखकाचे अलीकडील उदाहरण देत आहे.

“डॉ. झिवॅगो (१९६५) व ‘ए मॅन फॉर ऑल सीझन्स’ (१९६६) या प्रसिद्ध ऑस्कर-विजेत्या चित्रपटांचा कथालेखक रॉबर्ट बोल्ट हा नास्तिक होता. तो फेब्रुवारी १९९५ साली वयाच्या ७० व्या वर्षी वारला. त्याच्या पत्नीच्या कथनानुसार मृत्यूपूर्वी तिने आपले (मृत्युनंतर आत्मा उरतो हे) म्हणणे खरे असेल तर आत्म्याच्या रूपाने परत येऊन ते आपल्यापुढे पुराव्यानिशी सिद्ध करावे, असा आपल्या पतीशी करार केला होता. आणि आश्चर्य म्हणजे त्या करारानुसार मेल्यानंतर बोल्टने तिचे म्हणणेच खरे असल्याचे पुरावे तिला दिले.

उदा. तो मेल्यानंतर घरातील वस्तू आपोआप इकडच्या तिकडे विचित्र रीतीने स्थलांतर करीत असत. तो पिण्याचा भारी शौकिन असल्यामुळे तिने पेल्यात दारू ओतली तर ती आपोआप अदृश्य होई. अशा घटना हल्ली वरचेवर घडत असून मी घरात एकटी नाही, नवरा अजूनही माझ्या सोबतीला आहे, असे बोल्टची विधवा पत्नी सर्रा माइल्स म्हणते.<sup>१०</sup>

मृत्यूचा संदेश, खुनाचा संदेश व मरणोत्तर अस्तित्वाच्या पुराव्याचा संदेश अशा तीन प्रकारच्या अतींद्रिय स्वरूपाच्या संदेशाची उदाहरणे वर दिली आहेत. परलोकाच्या म्हणजे स्वतंत्र अतींद्रिय जगाच्या अस्तित्वाचा पुरावा देणारे संदेशही काही वेळा मृतात्म्याकडून मिळतात.<sup>११</sup> (प्रकरण १० पाहा.) हे संदेश देण्यासाठी मृत्युशय्येवरील व्यक्तीच्या पूर्वी मेलेल्या आप्तेष्टांचे मृतात्मे येतात व तेही मृत्युशय्येवरील व्यक्तीला परलोकात बोलावून नेण्यासाठीच खास येतात असे आढळून येते. (हे ती व्यक्ती त्यांची नावे घेऊन ते आपल्याला परलोकात बोलावत असल्याचे सांगितल्यामुळे इतरांना माहीत होते.) त्या व्यक्तीला ते मृतात्मे प्रत्यक्ष खाटेजवळ येऊन काही अंतरावरून बोलावत असल्याचे स्पष्ट दिसत असतात अशा रीतीने ती परलोकात नेण्यासाठी आलेल्या मृतात्म्यांची भासमान दर्शने असल्यामुळे त्यांना take away apparitions (परलोकात नेण्यासाठी आलेल्या मृतात्म्यांची भासमान दर्शने) म्हणतात. अशा प्रकारे मृत्युशय्येवरील व्यक्तींना दिसणाऱ्या आप्तेष्ट, मित्र, यमदूत इत्यादींच्या हजारो भासमान दर्शनाची आकडेवारी कार्लिस ऑसिस व एर्लांडूर हॅरॉल्डसन या पाश्चात्य शास्त्रज्ञांनी अमेरिका व भारत येथील इस्पितळातील डॉक्टर्स, नर्सेस व संबंधित नातेवाइकांना भेटून संकलित केली आहे.<sup>१२</sup> (यमदूत भारतीयांनाच का दिसतात, अमेरिकनांना का दिसत नाहीत याविषयीच्या खुलाशासाठी प्रकरण १० पाहा.)

‘भासमान’ या शब्दावरून वाचकांना ही दर्शने खोटी (भ्रामक) असतात असे वाटण्याचा संभव आहे. पण तसे समजू नये. प्रत्यक्ष दिसणाऱ्या जिवंत व्यक्तीइतकीच ती खरी असतात. फरक इतकाच की ते मृतात्मे इतरांना दिसत नाहीत. ते जिवंत व्यक्तीइतकेच खरे असतात याचा पुरावाही मिळतो. पुढील उदाहरणावरून वाचकांना याची कल्पना येईल. डोरिस ही बाई मरणोन्मुख अवस्थेत आपल्या बिछान्यावर पडली होती. तिची बहिण व्हिडा ही परगावी मेली होती. पण तिच्या मृत्यूची बातमी डोरिसपासून लपवून ठेवण्यात आली होती. पण खुद्द व्हिडाच आपल्या (पूर्वी मेलेल्या म्हणजे स्वर्गवासी) पित्याबरोबर डोरिसला परलोकात बोलावून नेण्यासाठी तिच्या खाटेजवळ आलेली तिने पाहिले व ती व्हिडाला म्हणाली, “व्हिडा तू? मीही आलेच हं.” आणि थोड्या वेळाने तीही मेली.<sup>१३</sup>

मेल्यानंतर परलोकात जाऊन परत आलेल्या, म्हणजे मरून पुन्हा जिवंत झालेल्या लोकांची उदाहरणे दहाव्या प्रकरणात दिली आहेत. अशा लोकांच्या अनुभवांचे पुरावे शास्त्रीय निकषांवर तपासून पाश्चात्य देशातील डॉक्टर व मानसशास्त्रज्ञांनी ते अनेक संशोधनात्मक ग्रंथातून प्रसिद्ध केले आहेत.<sup>१४</sup> येथे प्रस्तुत लेखकाने स्वतः तपासलेले एक प्रकरण थोडक्यात कथन करतो.

लेखकाच्या भोज या गावातील त्यांच्या परिचयाच्या एका कुटुंबात १९७३ साली घडलेली ही घटना आहे. तारीख व महिना मात्र संबंधित कुटुंबातील लोकांना निश्चित आठवत नाही. शिवूबाई गुंडा साळुंखे ही सुमारे ७० वर्षांची बाई निरोगी अवस्थेत चालता-बोलताच एकाएकी मेली. तिच्या नातेवाईकांची रडारड सुरू झाली. परगावच्या तिच्या मुलीला तिच्या मृत्यूचा निरोप धाडण्यात आला. पण सुमारे एक - दीड तासाने ती पुन्हा आपोआप व अचानक जिवंत झाली व परलोकात आपल्याला दिसलेल्या दृश्यांचे व आलेल्या अनुभवांचे वर्णन करू लागली. तिच्या सांगण्यानुसार परलोकात 'यमदूतां'नी तिला नेल्यानंतर ती मेलेल्या लोकांच्या रांगेत आपला नंबर येईपर्यंत राहिली. तिचा नंबर येताच 'सुपाएवढ्या जाडजूड पुस्तकात' नावे पाहणाऱ्या एका माणसाने 'ही शिवूबाई आहे. तुम्हाला आऊबाईला आणायला सांगितले होते. हिला कशाला आणलंत?' असे त्या यमदूतांना म्हटले, तेव्हा ती म्हणाली, 'मला परत लवकर पाठवा. नाहीतर माझे प्रेत जाळतील.' आणि मग तिला खाली ढकलण्यात आले, आणि ती म्हणते, 'मला त्यांनी ढकलून देताच मी येथे पुन्हा शरीरात आले.' आश्चर्याची गोष्ट म्हणजे त्याच वर्षी प्रस्तुत लेखकाची आत्या (वडिलांची बहीण) त्याच गावी वृद्धावस्थेमुळे मेली, आणि तिचे नाव होते आऊबाई!

नावातील गेंधळामुळे हा घोटाळा झाला असावा असे शिवूबाईच्या 'मृत्यू'चा महिना तिच्या नातेवाईकांना निश्चित आठवत नसल्यामुळे, म्हणता येत नसले तरी, 'यमदूत' अशा चुका करीत असावेत याला अशीच उदाहरणे इतरत्रही सापडत असल्यामुळे आधार मिळतो. येथे बेळगावच्या 'तरुण भारत' दैनिकात प्रसिद्ध झालेले एक वृत्त अशा चुका होत असल्यात या म्हणण्याला पुष्टी देणारे असल्यामुळे संक्षेपाने देतो.

विजापूर जिल्ह्यातील गुळेदगुड गावात हातमागावर काम करत असलेली परम्मा कवडीमट्टी ही बाई काम करतानाच एकदम गतप्राण झाली. पण तिरडीवर तिचे प्रेत ठेवल्यानंतर एकदम परत जिवंत होऊन उठून बसली आणि ती सांगू लागली, 'मला उचलून नेले. तिथे बरीच गर्दी होती. सारे उभे होते. होता होता माझा नंबर आला. पण पुस्तकात माझे नावच नव्हते. हे लक्षात येताच परमेश्वराने

चित्रगुप्ताची कानउघाडणी केली 'पंपण्णा कवडीमट्टीला (परम्माचा सासरा) सोडून परम्मा कवडीमट्टीला का आणले? तिला परत पाठवा.' आणि मला त्यांनी अक्षरशः ढकलून दिले. आणि तुम्ही मला दिसला.' आश्चर्य म्हणजे या घटनेच्या तीनच दिवसानंतर परम्माचा सासरा पंपण्णा कवडीमट्टी हा मरण पावला.<sup>२५</sup>

येथे 'परमेश्वर' 'चित्रगुप्त' हे शब्द वार्ता देणाऱ्याने वापरले असले तरी ते बाईने स्वतः वापरलेले नसावेत. मी वर दिलेल्या प्रकरणातील शिवूबाईने असे शब्द वापरले नव्हते. ('यमदूत' हा शब्द प्रस्तुत लेखकाने वापरला असल्यामुळे तो अवतरण चिन्हात ठेवला आहे.) पण काही जण खरोखरच 'यमदूत' हा शब्द वापरतात आणि पाश्चात्य संशोधकांनी तो शब्द आपल्या संशोधनात आढळल्याची प्रत्यक्ष नोंद केली आहे. उदा. कार्लिस ऑसिस आणि हॅरोल्डसन यांनी आपल्या संशोधनात मृत्युशय्येवरील रुग्णांनी आपल्याला प्रत्यक्ष 'यमदूत' बोलावण्यासाठी आल्याचे म्हटल्याची नोंद केली आहे.<sup>२६</sup>

### शरीराद्वारा प्रकट होणारी अतींद्रिय शक्ती

वरील उदाहरणातील संदेश देण्यासाठी प्रकट होणारी अतींद्रिय शक्ती म्हणजे वास्तविक खुद्द मृतात्माच असल्याने अतींद्रिय शक्तीच्या अस्तित्वाबरोबरच मरणोत्तर आत्म्याचे अस्तित्वही ती उदाहरणे सिद्ध करतात. ती संकटकाळी (मृत्यूच्या वेळी) प्रकट होणारी भासमान दर्शने (crisis apparitions) म्हणूनच प्रसिद्ध आहेत. पण अतींद्रिय शक्ती हे एक 'तत्त्व' असल्यामुळे ते नेहमीच मृतात्म्याच्या रूपाने (मृताच्या भासमान दर्शनाने) प्रकट होईल असे काही नाही. अन्य तऱ्हेने, उदा. शारीरिक बदलातून वा परिणामातून ते प्रकट होऊ शकते. पुढील उदाहरणाने वाचकांना याची कल्पना येईल.

जेम्स विल्सन या केंब्रिज युनिव्हर्सिटीच्या दुसऱ्या सत्राच्या विद्यार्थ्याला एके दिवशी संध्याकाळी अचानक अस्वस्थ वाटू लागले. त्याची प्रकृती उत्तम असूनही काही कारण नसताना एकदम आपण आजारी पडलो आहोत असे त्याला वाटू लागले. तो थरथर कापू लागला. आता आपण मरणार असे त्याला वाटू लागले. हा त्रास त्याला बराच वेळ होत राहिल्यामुळे तो आपल्या मित्राच्या खोलीवर आला. त्याची ती वाईट अवस्था पाहून त्याच्या मित्राने एक व्हिस्कीची बाटली काढली. पण त्यामुळे त्याच्यात काहीच फरक पडला नाही. या अवस्थेत पूर्ण तीन तास गेल्यानंतर त्याला मग आपोआपच हलके वाटू लागले, व तो पूर्वस्थितीला आला. दुसऱ्या दिवशी त्याच्याकडे बातमी आली की आदल्या

दिवशी संध्याकाळी त्याचा जुळा भाऊ लिहूरपूलमध्ये मरण पावला.<sup>१५</sup>

येथे जुळ्या भावापैकी एका भावाच्या शरीरातील मृत्यूची लक्षणे दुसऱ्या भावाच्या शरीरातून प्रकट झालेली दिसून येतात. हा मृत्यूचा संदेशही मानता येतो. अशा रीतीने शारीरिक संदेशाचे संक्रमण अतींद्रिय रीतीने आईबाप व मुले यांच्यामध्येही होत असल्याचे आढळून येते. अशा रीतीने शरीरात घडणारे बदल वा परिणाम अतींद्रिय मार्गाने आईबापातून मुलात संक्रमित झाल्याची ५०० च्या वर उदाहरणे डॉ. बार्थोल्ड स्ववार्झ याने संकलित केली आहेत. ही उदाहरणे आईबापांचे विचार, भावना इत्यादी त्यांच्या मुलांच्या शरीरातून प्रकट होत असल्याचे दाखवून देतात. नमुन्यासाठी पुढील उदाहरण पाहा.

एका व्यक्तीला सकाळी उठताच भयंकर दाढदुखी सुरू झाली. ती इतकी तीव्र झाली की त्याने आपली दाढ दाखवण्यासाठी दुपारी दवाखान्यात येत असल्याचा संदेश दंतवैद्याला पाठवला. काही वेळाने त्याच्या आईने त्याला फोनवरून कळवले की कित्येक वर्षांनंतर आपण आज दाढ काढून घेतली आहे. दुपारी ठरल्याप्रमाणे दंतवैद्याकडे तो जाईपर्यंत त्याची दाढदुखी कमीही झाली होती. दंतवैद्याला त्याच्या दुखणाऱ्या दाढेत कसलाच दोष आढळून आला नाही. विशेष म्हणजे त्याच्या आईने काढून घेतलेल्या दाढेची व त्याच्या दुखणाऱ्या दाढेची जागा एकच होती.<sup>१६</sup>

जुळे भाऊ किंवा आईबाप व मुले यांच्यात दृढ भावनिक संबंध असल्यामुळेच अशा रीतीचे शारीरिक लक्षणांचे संक्रमण होत असले पाहिजे हे उघड आहे. एका व्यक्तीच्या शरीरातील व्याधी दुसरी व्यक्ती आपल्या शरीरात अशा भावनिक संबंधातून घेणे शक्य असल्याचे ही उदाहरणे दाखवून देतात. रामकृष्ण परमहंसांनी गिरीश या त्यांच्या परम भक्ताच्या पापांची निष्कृती त्यांचे प्रायश्चित्तरूपी रोग स्वतःच्या शरीरात (घशाच्या कॅन्सरच्या रूपाने) घेऊन केल्याचे सांगण्यात येते. ही केवळ कल्पना वा अंधश्रद्धा नाही हे वरीलसारखी प्रकरणे दाखवून देतात. (हे कसे शक्य आहे हे दाखवून देणाऱ्या वैज्ञानिक प्रयोगांचा पुढे विचार करावयाचा आहे.) सत्य साईबाबांनी आपल्या एका भक्ताचा पक्षघात आपल्या शरीरात अशा रीतीने घेतला व काही काळ तो सहन करून नंतर स्वतःच तो बरा केला असल्याची घटना अनेकांच्या साक्षीने प्रत्यक्षच घडली आहे.<sup>१७</sup> जर्मनीची थेरेसा न्यूमन या ख्रिश्चन जोगिणीने एका तरुण ख्रिश्चन पुरोहिताचा घशाचा रोग आपल्या घशामध्ये घेतला व त्यामुळे तिला जड अन्न गिळता येईनासे झाल्यामुळे पातळ अन्नावर तिला राहावे लागले व पुढे तेही तिने वर्ज्य केले व अन्नाशिवाय जगणारी स्त्री म्हणून ती पुढे जगप्रसिद्ध

झाली.<sup>१०</sup> (हिच्याविषयीची अधिक माहिती पुढे देण्यात येणार आहे.)

भावनिक संबंधांतून इतरांच्या विचारांचा परिणाम एखाद्याच्या शरीरावर होत असेल तर स्वतःच्या विचारांचा परिणाम स्वतःच्या शरीरावर का होऊ नये, असा साहजिकच प्रश्न निर्माण होतो आणि तो होत असल्याचे अनेक उदाहरणे दाखवून देतात. कारण आपला सर्वात जास्त भावनिक संबंध - तोही दृढ भावनिक संबंध - आपल्याच शरीराशी असतो. अशा रीतीने स्वतःच्या शरीरावर स्वतःच्या मनाच्या होणाऱ्या परिणामाचे एक स्वतंत्र शास्त्रच तयार झाले असून त्याला 'मनोदैहिक शास्त्र' (Psychosomatics) म्हणतात. अशा रीतीने स्वतःच्या मनातील कल्पनांमुळे स्वतःच्या शरीरात कसलेही शारीरिक (भौतिक) कारण नसताना काही रोग होऊ शकतात, किंवा (शारीरिक) कारणामुळे पूर्वी झालेले रोग अचानक (कसल्याही भौतिक कारणाशिवाय) आपोआप बरेही होऊ शकतात (Spontaneous remission), असे आढळून येते. एखाद्या औषधाचा शरीरावर कधी परिणाम होतो, कधी होत नाही असे आढळून येते आणि याचे कारणसुद्धा त्या औषधात नसून त्या रुग्णाचे विचार, कल्पना वा भावना हेच असू शकते. अशा रीतीने कॅन्सरवरचे रामबाण औषध अलीकडे शोधून काढण्यात आले आहे असे खोटेच सांगून दिलेल्या साध्या पाण्याने कॅन्सरसुद्धा बरा होऊ शकतो ! (अशा रीतीने साध्या पाण्याने कॅन्सर बरा झाल्याचे एक उदाहरण **विज्ञान आणि बुद्धिवाद** या ग्रंथातील ८ व्या प्रकरणात दिले आहे.) असे मुद्दाम खोटे सांगून रोग्यांना डॉक्टर लोक सर्रास खोटे औषध देत असतात व अशा खोट्या औषधाला placebo हे वैद्यकशास्त्रात नावही देण्यात आले आहे. यापेक्षा मोठे आश्चर्य म्हणजे मनाची समजूत पटली तर औषधाचे एखाद्याच्या शरीरावर उलटसुद्धा परिणाम होऊ शकतात ! उदा. झोपेचे औषध (उदा. बार्बिट्युरेट) जागे ठेवू शकते व जागे ठेवणारे औषध (उदा. अँफेटॅमाइन) झोप आणू शकते!<sup>११</sup> माणसावर संमोहनामुळे होणाऱ्या जादूसारख्या परिणामाचे हेच रहस्य आहे. संमोहनामध्ये केवळ सूचनेने एखाद्याच्या शरीरावर भाजल्याचे फोड उठवता येतात ! (याविषयीची माहितीही उपर्युक्त ग्रंथात दिली आहे.) चेटुक प्रकार म्हणजे दुसरे तिसरे काही नसून वर सांगितलेले व्हॅसिलिएव्ह या रशियन शास्त्रज्ञाने दूर अंतरावरून केलेले संमोहनाचे प्रयोगच असतात. (इंग्लंडच्या रॉयल सोसायटीला चेटुक प्रकार खरा असल्याचे संशोधनाअंती आढळून आल्याची माहिती **विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन** या ग्रंथातील ८ व्या प्रकरणात दिली आहे.)

स्वतःच्या मनाचा स्वतःच्या शरीरावर होणारा हा अविश्वसनीय व वैद्यकशास्त्राचे निकष खोटे ठरविणारा परिणाम म्हणजे वास्तविक श्रद्धेचाच (मनाच्या तीव्र शक्तीचाच) परिणाम असतो. अशा रीतीने 'श्रद्धा' वाटेल तो - म्हणजे रुढ विज्ञानाचे (वैद्यकशास्त्रीय) निकषसुद्धा खोटे ठरविणारा - 'चमत्कार' करून दाखवू शकत असल्यामुळे तो



एकीकडे 'आध्यात्मिक चमत्कार' ठरतो, तर दुसरीकडे मनःशक्तीमुळे घडून येणारा तो परिणाम असल्यामुळे त्याचवेळी तो 'मानसशास्त्रीय परिणाम' ही ठरतो. दोन्ही दृष्टींनी तो 'चमत्कारा'त मोडणारा परिणाम असल्यामुळे व वैज्ञानिक (वैद्यकशास्त्रीय) प्रयोगाच्या वस्तुनिष्ठ निकषावर तो खरा ठरत असल्यामुळे - आणि प्रायोगिक विज्ञानाचे वस्तुनिष्ठ पुरावे (objective evidences of experimental science) कोणाही शास्त्रज्ञाला नाकारता येत नाहीत - तो 'चमत्कार'रूपी परिणाम एक प्रयोगसिद्ध 'शास्त्रीय सत्य'च (scientific truth) ठरतो. अशा रीतीने अविश्वसनीय असले तरी हे शास्त्रीय सत्य प्रयोगसिद्ध असल्यामुळे त्या सत्याला 'आध्यात्मिक सत्य' म्हणावे की 'मानसशास्त्रीय सत्य' म्हणावे, असा एक प्रश्न येथे निर्माण होतो. पण 'सत्य' हे कोणत्याही नावाने संबोधिले तरी सत्यच असल्यामुळे त्याला कसले सत्य म्हणावे हा एक केवळ शाब्दिक चर्चेचा विषय ठरतो. 'अध्यात्म' व 'विज्ञान' हा मानवनिर्मित - म्हणजे कृत्रिम - भेद असून तो फालतू - निदान अशास्त्रीय - असल्याचे अशा उदाहरणावरून स्पष्ट होते.<sup>१२</sup> मनाचा (म्हणजे श्रद्धेचा) शरीरावर 'चमत्कार'मुक्त परिणाम होतो, याची तुकारामांचे 'मनी ध्याता पंढरीराया । मनासहित पालटे काया ।' हे प्रसिद्ध वचन साक्ष देते. (तुकारामांचे हे वचन मानसशास्त्र, वैद्यकशास्त्र व अध्यात्मशास्त्र ही तिन्ही शास्त्रे एकत्र आणणारे आहे.) कायापालटाच्या या तुकारामोक्त 'चमत्कारा'साठी 'पंढरीराया'चेच ध्यान केले पाहिजे असे मात्र नाही कोणाचेही ध्यान चालते. (कारण मुळात हा 'चमत्कार' पंढरीरायाचा नसून मनाचा आहे.) उदा. ख्रिश्चन जोगी-जोगिणीच्या शरीरावर त्यांच्या येशूवरील नितांत श्रद्धेमुळे निर्माण होणाऱ्या Stigmata (लांछन) नावाच्या प्रकाराकडे पाहा. हा एक खरोखर मती गुंग करणारा 'चमत्कार' आहे. हे सर्वांना माहितच आहे की येशूला सुळावर (क्रूसावर) चढवताना त्याच्या हातापायावर खिळे ठोकण्यात आले. त्यामुळे येशूच्या हातापायांना भयंकर जखमा झाल्या. Stigmata या प्रकारात तशाच प्रकारच्या जखमा अनेक ख्रिश्चन जोगी-जोगिणींच्या हातापायांना आपोआप होताना आढळून येतात ! ख्रिश्चन लोक हा 'दैवी' 'चमत्कार' समजतात. पण हा श्रद्धेचा - म्हणजे केवळ मनाचा परिणाम असतो. याला अनेक पुरावे देता येतील. पहिला पुरावा म्हणजे येशूला जेथे खिळे मारण्यात आले (उदा. मनगटावर) तेथे या जखमा न होता त्या हातांवर होताना दिसतात. याचे कारण हे दृश्य दाखवणाऱ्या सर्व चित्रकारांनी येशूच्या हातांवर खिळे मारल्याचे दाखविले आहे (मनगटावर मारल्याचे दाखवलेले नाही.) आणि ती चित्रे या जागी जोगिणींनी पाहिलेली असतात, व त्याचेच प्रतिबिंब त्यांच्या मनावर उमटते. (चित्रे न पाहतासुद्धा निव्वळ या कल्पनेनेसुद्धा असा परिणाम होऊ शकतो, हे Placebo चे प्रकरण सिद्ध करते.) हा केवळ मनाचा परिणाम असल्याचे सिद्ध करणारा दुसरा पुरावा म्हणजे ह्या जोग-जोगिणी 'हिस्टेरिक'

(म्हणजे अतिसंवेदनशील मन असलेल्या व्यक्ती) असल्याच्या डॉक्टरांना आढळून आल्या आहेत. (सर्वच जोगी-जोगिणीच्या शरीरावर असा परिणाम का होत नाही, या प्रश्नाचे उत्तर अशा रीतीने सापडते.) तिसरा पुरावा थोडासा न्यूमन या प्रसिद्ध (व इतरही अनेक अप्रसिद्ध) जोगिणींच्या जखमांच्या एका वैशिष्ट्यात आढळून येते. (ही जोगिणी १९६२ साली वारली. तिची तपासणी अनेक डॉक्टर लोकांनी केली आहे. अमेरिकेत योगश्रम स्थापणारे परमहंस योगानंद या प्रसिद्ध भारतीय योगीपुरुषाने या जोगिणीची जर्मनीत प्रत्यक्ष भेट घेऊन तिचे सर्व 'चमत्कार' खरे असल्याची स्वतःची खात्री करून घेतली आहे.<sup>३३</sup>) या जोगिणीच्या या जखमांचे हे वैशिष्ट्य म्हणजे तिच्या जखमातून वाहणारे रक्त नियमानुसार 'वरून खाली' न वाहता 'खालून वर' वाहताना - म्हणजे गुरुत्वाकर्षण शक्तीच्या नियमाविरुद्ध वागताना - दिसत असल्याचे अनेकांनी पाहिले आहे.<sup>३४</sup> येशूच्या जखमाचे रक्त असे भौतिक नियमाविरुद्ध वागल्याचा पुरावा नाही. म्हणजे हा 'दैवी' 'चमत्कार' नाही हे उघड आहे.<sup>३५</sup> ज्या मनामुळे शस्त्र न वापरता आपोआप शरीरावर जखमा होतात त्या मनामुळे गुरुत्वाकर्षण शक्तीच्या नियमाविरुद्ध रक्त वाहणे अशक्य नाही. गुरुत्वाकर्षण शक्तीच्या नियमाविरुद्ध वस्तू आपोआप इकडच्या तिकडे जाऊन पडण्याचा प्रकार तर भानामतीमध्ये सर्रास घडून येत असतो. (या ग्रंथाच्या वाचकांना ही गोष्ट आता चांगलीच परिचयाची झाली आहे.) हे सर्व प्रकार मनामुळेच घडून येत असतात. (भानामतीमधील मनाच्या कारकत्वाचा विचार पुढे करावयाचा आहे.) जड पदार्थांनी बनलेले हे दृश्य भौतिक जग व त्याचे भौतशास्त्रीय नियम मानवी मनाच्या आधीन आहेत, त्यांच्यावर मानवी मनाची सत्ता चालते हे या घटना अशा रीतीने निर्णायकपणे सिद्ध करतात. हे दृश्य जग वरवर 'जड' असल्याचे दिसत असले तरी त्याचे 'जडत्व' भ्रामक वा फसवे (खोटे) आहे, त्याचे खरे स्वरूप 'जडत्व' हे नसून, ज्यावर मानवी मन अधिष्ठित आहे ते अतींद्रिय वा आध्यात्मिक तत्त्व आहे, हे या घटना दाखवून देतात.

मनामुळे, म्हणजेच भावनेच्या वा श्रद्धेच्या सामर्थ्यामुळे शस्त्राचा वापर न करता, म्हणजे आपोआप जखमा शरीरावर होत असतील तर शस्त्रांचा वापर करूनही केवळ मनःशक्तीमुळे शरीरावर जखमा न होणे अशक्य नाही. आणि ही गोष्ट आपल्याकडील धार्मिक उत्सवात काही श्रद्धाळू लोक\* आपल्या जिभेतून,

---

\* प्रस्तुत लेखकाच्या एका परिचित कानडी प्राध्यापकाने अशा रीतीने गालातून अनेकदा मोठे जरब आरपार खूपसून घेतले आहेत. मात्र लगेच त्यावर भंडार टाकण्यात येतो. हळद ऑटिसेप्टिक असली तरी ती अँनल्जेसिक (वेदनाविरोधी) आहे असे वैद्यकशास्त्राने सिद्ध केलेले नाही.

गालातून व शरीराच्या इतर भागातून मोठमोठ्या सुया, जरब यासारखी तीक्ष्ण शस्त्रे आरपार खुपसून घेण्याचा जो प्रकार करतात ते दाखवून देतात. या प्रकारात होणाऱ्या जखमांतून रक्त येत नाही व वेदनाही होत नाहीत असे आढळून येते. काही प्रकार तर अंगावर शहारे आणणारे असतात. उदा. कर्नाटकाच्या विजापूर जिल्ह्यातील बागलकोट या शहरातील सायन्स कॉलेजमधील ग्रंथालयात काम करणारा संगमेश कमतगी नावाचा मनुष्य तीन इंच जाडीची व १२ फूट लांब सळी आपल्या खालच्या ओठातून खुपसून बाहेर काढतो. तसेच आतड्याच्या जाडीची व १६० फूट लांब दोरी आपल्या पोटाच्या एका बाजूने ओवून घेतो व दुसऱ्या बाजूने बाहेर काढतो. त्याच्या दोन्ही बाजूची दोन माणसे ही दोरी धरून त्याच्या पोटातून बाहेर काढण्याचे हे काम करतात. हे प्रयोग तिथिणी या गावाच्या मौनेश्वर देवालयासमोर व बागलकोटच्या वीरभद्र देवळात तो नेमाने करीत असतो.<sup>१६</sup>

हे प्रयोग देवळात किंवा धार्मिक उत्सवात केले जातात म्हणून ते 'दैवी' 'चमत्कार' आहेत असे एखाद्याला वाटेल. पण हे शुद्ध मनःशक्तीमुळे घडून येतात पुढील उदाहरण या गोष्टीची साक्ष देईल. हे उदाहरण हॉलंडच्या एका सामान्य माणसाचे असून तो आपले प्रयोग धार्मिक श्रद्धेचे अंग म्हणून करीत नसून लोकांची करमणूक म्हणून थिएटरमध्ये करीत असे. मिरिन दाजो हे त्याचे नाव असून १९४७ साली झुरिच (स्वित्झर्लंड) येथील कोर्सो थिएटरमध्ये त्याने आपल्या सहकाऱ्याकडून फेन्सिंगची (द्वंद्वयुद्धातील) तलवार सर्वासमोर आपल्या शरीरातून पूर्ण आरपार खुपसून घेऊन दाखवली व प्रेक्षकांना धक्का दिला. तलवार त्याच्या शरीरात आरपार जाऊनसुद्धा जराही रक्त आले नाही. तलवार बाहेर काढल्यानंतर फक्त एक लालसर खूण राहिली. हा प्रयोग पाहणाऱ्या एका व्यक्तीला ते पाहून हृदयाघात (हार्ट अटॅक) झाला. सरकारने नंतर त्याच्या प्रयोगावर कायदेशीर बंदी घातली. त्याच्या या प्रयोगावर डॉक्टर लोकांचा विश्वास बसला नाही. बॅसेल येथील डॉक्टरांनी व शास्त्रज्ञांनी त्याची शास्त्रीय (वैद्यकीय) तपासणी करण्याचा आग्रह धरला त्यांच्या शास्त्रीय तपासणीला दाजो आनंदाने तयार झाला. विशेष म्हणजे खुद्द डॉक्टरांनीच त्याच्या शरीरात तलवार आरपार खुपसली. एक-दोन नव्हे, तब्बल २० मिनिटे ती तलवार त्याच्या शरीरात खुपसलेल्या अवस्थेत होती. या अवधीत डॉक्टरांनी त्याच्या शरीराची क्ष-किरणांनी तपासणी केली. क्ष-किरणात ती तलवार त्याच्या शरीरात असल्याची स्पष्ट दिसली.<sup>१७</sup>

हा पुरावा वैद्यक शास्त्रज्ञांना बुचकळ्यात टाकणारा आहे. दाजोच्या शरीरातील अवयव तलवारीने फाटूनही पुन्हा पूर्वस्थितीला अल्पावधीत येत असले पाहिजेत, म्हणजेच सुरक्षित राहत असले पाहिजेत, हे उघड आहे. दुसऱ्या शब्दात दाजोच्या मनाच्या आज्ञा त्याच्या शरीरातील अवयव पाळत असल्याचा हा पुरावा आहे. (हीच

गोष्ट संगमेश कमतगीच्या उदाहरणालाही लागू होते.) कारण (कमतगीप्रमाणेच) दाजोने हे प्रयोग सार्वजनिकरित्या अनेकदा केले आहेत. Stigmata (लांछन) या प्रकारात शस्त्र न वापरता जखमा होताना दिसतात, तर या (कमतगी व दाजो यांच्या उदाहरणातील) प्रकारात शस्त्र वापरूनही जखमा होत नाहीत असे आढळून येते. ही परामानसशास्त्राच्या दृष्टीने मनाची अगाध शक्ती (psychic power) असली तरी अतींद्रिय (अध्यात्म) शास्त्राच्या दृष्टीने भौतिक जगाचे जडत्व दिखाऊ (खोटा) असल्याचे सप्रयोग सिद्ध करणारा हा सार्वजनिक व वस्तुनिष्ठ असा (वैद्यक) शास्त्रीय पुरावा आहे.<sup>३६</sup> या तथाकथित 'चमत्कारा'त कोणत्याही भौतिक (वैद्यक) शास्त्राच्या नियमाचा भंग नसून भौतिक (वा जीव) शास्त्रज्ञांनी शोधून काढलेल्या तथाकथित 'शास्त्रीय' (भौतिक वा जड) नियमांवर या भौतिक जगाचे अधिष्ठान असलेल्या (भौतिक जगात दडलेल्या) अतींद्रिय नियमांची (आध्यात्मिक तत्त्वाची) कुरघोडी (superposition) आहे, असे म्हणावे लागते. भौतिक जगातील आध्यात्मिक (अतींद्रिय) तत्त्वाचे हे संकटकालीन प्रकटीकरण आहे, असेही म्हणता येईल. कारण शेवटी भौतिक जग त्याच्या नियमांसकट मानवासाठी आहे, मानव भौतिक जगासाठी नाही, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. हे मी अध्यात्मशास्त्राच्या दृष्टीने म्हणत नाही, तर स्वतः भौतिक शास्त्रातील शोधांनीच हे दाखवून दिले आहे ! (या शोधाचा विचार पुढे करावयाचा आहे.)

विस्तवावरून चालण्याचे प्रयोगही धार्मिक उत्सवात भारतात व इतरत्र केले जातात. हवाई बेटातील काहुना हे लोक ज्वालामुखीच्या तप्त लाव्हारसावरून पायांना कसलीही इजा न होता चालून दाखवतात. त्यांचा हा पराक्रम नोंदवणाऱ्या ब्रिघॅम या संशोधकाला त्यांनी आपले हे सामर्थ्य देऊ केले. पण तो घाबरून त्याला तयार झाला नाही. शेवटी त्याला त्यांनी जबरदस्तीने लाव्हावर ढकलून दिले आणि नाइजालाने जेव्हा तो १५० फूट चालत गेला, तेव्हा त्याच्या बुटाचे तळवे व पायमोजे संपूर्ण जळून गेल्याचे त्याला पलीकडे गेल्यानंतर आढळून आले. पण आश्चर्य म्हणजे त्याच्या पायांना कसलीही इजा झाली नाही.<sup>३७</sup> न्यूझीलंडच्या कर्नल गुजिऑन या मॅजिस्ट्रेटला मावरी लोकांनी असाच आग्रह करून विस्तवावर बळजबरीने चालायला लावले. आणि त्यालाही कसलीही इजा झाली नाही.<sup>३८</sup> अतींद्रिय शक्तीचे एका व्यक्तीकडून दुसऱ्या व्यक्तीत संक्रमण होऊ शकते हे सिद्ध करणारी ही उदाहरणे आहेत. पण मुळात ही शक्ती मानसिक असून ती केवळ श्रद्धेतून निर्माण होते हे लक्षात ठेवले पाहिजे. आणि मानवी मन इथून तिथून एकच असल्यामुळे श्रद्धायुक्त व्यक्तीच्या मनात तीव्र इच्छा निर्माण झाली तर वरवर अश्रद्ध वाटणाऱ्या व्यक्तीच्या मनातसुद्धा त्या शक्तीचे संक्रमण ती व्यक्ती करू शकते, हे या घटना

दाखवून देतात. अध्यात्म क्षेत्रातील 'शक्तिपात योग' या नावाने ओळखल्या जाणाऱ्या प्रकारात हेच घडून येत असते.<sup>५९</sup> रामकृष्णांनी नरेंद्राला (विवेकानंदांना) केवळ पादस्पर्शाने समाधीत नेले ते शक्तीच्या याच संक्रमणपद्धतीने.

कोणतीही सामान्य व्यक्तीसुद्धा श्रद्धेच्या व एकनिष्ठतेच्या (अनन्यगतित्वाच्या) बळावर अग्नीच्या दाहकत्वाविरुद्धची शक्ती सहज प्राप्त करू शकते याचे ज्वलंत उदाहरण म्हणजे आपले चारित्र्य शुद्ध असल्याचे दाखवून देण्यासाठी उकळत्या तेलातून हाताला कसलीही इजा न होता त्या तेलातील नाणे बाहेर काढून ते पतीच्या हातावर ठेवणाऱ्या मदीनाबी या हिरेजेवरगीच्या पतिभक्तिपरायण स्त्रीचे ८ व्या प्रकरणात दिलेले उदाहरण होय. तिची अनन्य पतिनिष्ठाच तिला ते अतींद्रिय सामर्थ्य देती झाली. 'अनन्यश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते । तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।।' या गीतेतील श्लोकात 'माझी' अनन्य भक्ती करणाऱ्याची काळजी 'मी' वाहतो असे कृष्णाने म्हटले आहे. येथे 'मी' कोण व 'माझी' अनन्य भक्ती म्हणजे कोणाची, या प्रश्नांची उत्तरे वरील उदाहरणात मिळतात. मदीनाबीला कृष्ण माहीत नाही. गीताही माहीत नाही. ती अशिक्षित मुसलमान स्त्री आहे पण तिला पतीची अनन्य भक्ती माहीत आहे आणि तिच्या त्या अनन्य पतिभक्तीमुळे तिच्या पतीच्या हृदयातील कृष्णाने तिची काळजी वाहिली. कारण 'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।' असे कृष्णानेच म्हटले आहे. त्यामुळे गीतेचा 'कृष्ण' ('मी') मदीनाबीचा 'पती' होतो. आणि तिची पतीवरची निष्ठा वा भक्ती ही त्याच्या हृदयातील कृष्णावरची ('माझी') निष्ठा वा भक्ती ठरते. कोणत्याही व्यक्तीच्या अनन्य निष्ठेपुढे अग्नीही काही करू शकत नाही, हे आध्यात्मिक सत्य अशा रीतीने हे उदाहरण प्रस्थापित करते. (केनोपनिषदात साधी गवताची काडीसुद्धा अग्नीला जाळता आली नाही, अशी कथा असून ती याच सत्याचे प्रतिपादन करते.) कारण अग्नीच्या दाहकत्वाचा गुणधर्म अतींद्रिय (आध्यात्मिक) शक्तीच्या आधीन आहे. सूर्यसुद्धा जेथे स्वतः प्रकाशत नसून त्या शक्तीमुळे प्रकाशतो, तेथे अग्नीची काय कथा? (न तत्र सूर्यो भाति... कुतोऽयमग्निः ।) असे कठोपनिषदात म्हटले आहे. सर्व विश्वच त्या शक्तीवर चालले आहे. (तस्य भासा सर्वमिदं विधाति ।) असा कठोपनिषदाचा निष्कर्ष असून तो हेच सत्य साररूपाने सांगतो. सर्वच भौतिक नियम आध्यात्मिक नियमांच्या आधीन आहेत ही गोष्ट ही उदाहरणे अशा रीतीने प्रस्थापित करतात.

अशा रीतीने भौतिक जगाचे अधिष्ठान आध्यात्मिक तत्त्व असल्यामुळे भौतशास्त्राचे अधिष्ठान असलेले शास्त्र म्हणजेच अध्यात्मशास्त्र होय असे ठरते. भौतिक जग खोटे नाही व त्या जगाचे नियमही खोटे नाहीत. पण त्यांचे क्षेत्र मर्यादित आहे. म्हणून ते 'गौण सत्य' आहे. उलट अध्यात्म हे 'प्रधान सत्य' आहे.

भौतिक (वा गौण) सत्य 'जडा'तून कार्य करते. आध्यात्मिक (वा प्रधान) सत्य 'जीवा'तून कार्य करते. या दोहोवर सत्ता चालवते अर्थात् 'परम सत्य'. त्याला उपनिषदकारांनी 'ब्रह्म' म्हटले आहे. ज्ञानेश्वरांनी त्याला 'विश्वात्मक देव' म्हटले असून ते विश्वातून म्हणजे 'जड' 'जीव' या दोहोतून - सजीव-निर्जीव अशा सर्वातून - कार्य करते असे त्यांनी म्हटले आहे. (जे जडाते जीववी । चेतनेते चेववी । मनाकरवी मानवी । शोकमोहो ॥) सामान्य श्रद्धाळू लोक त्याला 'परमेश्वर' किंवा 'ईश्वर' म्हणतात. या अर्थाने त्याला 'देव' व त्याच्या शक्तीला 'दैवी' म्हटले तर काही बिघडत नाही. पण उपनिषदकार म्हणतात त्याप्रमाणे ते मुळात 'सत्याचे सत्य' आहे हे लक्षात ठेवावे. ('सत्यस्य सत्यमिति ।' बृ. उप. २.२.२०) 'सत्याचे सत्य' म्हणजे भौतिक जगाच्या 'गौण' सत्याचे ते अधिष्ठान (पाया) असलेले 'प्रधान' (परम) सत्य होय. भौतिक जग व त्याचे नियम 'सत्य' आहेत. पण त्यांची सत्यता आध्यात्मिक (पारमार्थिक) सत्यावर (त्या परम सत्याच्या नियमांवर) अधिष्ठित (उभी) आहे. म्हणून ते अंतिम सत्य वा 'सत्याचेही सत्य' आहे - 'परम सत्य' आहे.

### भौतिक जग व 'चमत्कारां'चे जग यामध्ये सीमारेषा आहे काय?

वरील संगमेश कमतगी व मिरिन दाजो यांच्या उदाहरणात शस्त्राने जखमा होतात, पण त्यामुळे वेदना होणे, त्यातून रक्त येणे, अवयव फाटून नादुरुस्त होणे यासारखे प्रकार होत नसल्यामुळे फार तर ते वैद्यकशास्त्राला बुचकळ्यात टाकणारे आहेत, असे म्हणता येईल. पण विस्ताराने न भाजणे हा शुद्ध 'चमत्कार' ठरतो; कारण येथे अग्नीने आपला दाहकत्व हा गुणधर्मच टाकून दिलेला दिसतो; आणि असे कधी घडत नाही, असे एखाद्याला वाटणे शक्य आहे. पण भानामतीमध्ये जड वस्तू आपोआप इकडच्या तिकडे जाऊन पडतात. (अदृश्यही होतात.) किंवा ख्रिश्चन जोगिणीच्या जखमांचे रक्त खाली वाहण्याऐवजी वर (उलटे) वाहते. या घटनाप्रकारात भौतिक वस्तू आपला नैसर्गिक 'जडत्व' हा गुणधर्म टाकून देत नाहीत काय? म्हणून या घटनाही तितक्याच 'चमत्कार'युक्त म्हटल्या पाहिजेत. अंधश्रद्धानिर्मूलनवादी तर म्हणतात, की कोणतीही भौतिक वस्तू बाहेरून शक्ती वापरल्याशिवाय एक इंचही जागची हलणार नाही. भानामतीमध्ये बाह्य शक्तीशिवाय आपोआप जड वस्तूंचे स्थलांतर तर सर्रास होतेच, पण ते एका अदृश्य 'बुद्धिमान' शक्तीकडून होत असताना दिसते. उदा. या ग्रंथाच्या पहिल्या प्रकरणातील, विष्टा नेमके अत्रातच पडण्याचे प्रकार, किंवा शरीराच्या विशिष्ट भागाला (उदा. ओठाला, गालाला) ती लावण्याचा प्रकार, पाचव्या प्रकरणातील, नेमके दुंगणाला खडे मारण्याचा प्रकार, चौदाव्या प्रकरणातील, कंदिलाचा ग्लास मुलाच्या काखेत जाऊन बसण्याचा प्रकार,

दुसऱ्या प्रकरणातील अंगणातील तुळशी वृंदावन आपोआप जागचे उठून काटकोन करून नेमके घराच्या दरवाजातून सोप्यात जाऊन बसण्याचा प्रकार इत्यादी. हे प्रकार विस्ताराने न भाजण्याच्या प्रकारापेक्षा कमी 'चमत्कार' युक्त आहेत असे म्हणता येईल काय?

जे गुणधर्म 'टाकून' दिल्यामुळे किंवा जे नियम 'उल्लंघल्या'मुळे जडवादी शास्त्रज्ञ 'चमत्कार' घडतात असे मानतात, ते गुणधर्म किंवा ते नियम स्वतःच किती 'चमत्कारिक' आहेत याचा त्यांनी कधी विचार केलेला दिसत नाही. उदा. चंद्रामुळे समुद्राला भरती येते, हा एक 'चमत्कार'च नाही काय? या प्रकाराला 'गुरुत्वाकर्षण' हे नाव दिल्यामुळे किंवा त्याच्याविषयीच्या गणिती सिद्धांत मांडल्यामुळे तो 'चमत्कार' नाही असे ठरत नाही. केप्लर या शास्त्रज्ञाने त्याला ते नाव दिले तरी गॅलीलियोने त्याला 'चमत्कार'च (Occult fancy) म्हटले, हा इतिहास आहे ! (विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथातील 'विज्ञानातील चमत्काराकडून...' हे प्रकरण पाहा.) विजेचे विषम ध्रुव एकमेकांना जवळ ओढतात व सम ध्रुव एकमेकांना दूर सारतात, हाही एक 'चमत्कार'च नाही काय? लोहचुंबक लोखंडाला आपल्याकडे खेचते याची 'चमत्कारा' खेरीज दुसरी कोणती उपपत्ती भौतशास्त्रज्ञांजवळ आहे? भौतिक जगाच्या या गुणधर्मांना व ते गुणधर्म ठरविणाऱ्या नियमांना 'चमत्कार' म्हणायचे नसेल तर ते गुणधर्म 'टाकून' देण्याला किंवा ते नियम 'उल्लंघण्या'लाही 'चमत्कार' म्हणण्याचे कारण नाही. ते गुणधर्म ठरविणारे नियम मुळात कसे निर्माण झाले हे जोपर्यंत भौतशास्त्रज्ञांना सांगता येत नाही, तोपर्यंत ते गुणधर्म कोणत्या नियमानुसार 'टाकून' दिले जातात, याविषयीही बोलण्याचा - त्यांना 'चमत्कार' म्हणण्याचा - त्यांना अधिकार नाही. आधुनिक भौतविज्ञानातील सिद्धांत स्वतःच 'चमत्कार'वर कसे आधारले आहेत हे आता दाखवून देऊ. त्यासाठी भौतविज्ञानाचा थोड्या विस्ताराने येथे विचार करणे भाग आहे.

अलीकडे Theories of Everything (प्रत्येक वस्तूची उपपत्ती देणारे, सिद्धांत, संक्षिप्तात TOE) याविषयी बरेच ऐकायला मिळते. हे सिद्धांत मांडणारे भौतशास्त्रज्ञ विश्वाचे रहस्य गणिती सिद्धांतात दडले आहे या कल्पनेने पछाडलेले दिसतात. जे. डी. बॅरो या शास्त्रज्ञाने या कल्पनेचा खरपूस समाचार घेतला आहे.<sup>४१</sup> पण एखाद्या वस्तूचा गणिती सिद्धांत मांडता आला तर तिचे रहस्य कळते या कल्पनेतील फोलपणा कळण्यासाठी या TOE चा विचार करण्याची जरूरी नाही. त्यासाठी सर्वांच्या परिचयाचे गुरुत्वाकर्षणाचे उदाहरण पुरेसे आहे. न्यूटन आणि आईन्स्टाइन यांनी गुरुत्वाकर्षणविषयक गणिती सिद्धांत मांडले आहेत, हे प्रसिद्ध आहे. पण त्यामुळे या शक्तीचे रहस्य शास्त्रज्ञांना उलगडले आहे असे मानता येत नाही.<sup>४२</sup> उदा. भौतिक वस्तूच्या 'जडत्व' या मूलभूत गुणधर्माची उपपत्ती न्यूटन व

आईन्स्टाइन यांच्या गुरुत्वाकर्षणाविषयक गणिती सिध्दांतामुळे मिळू शकत नाही हे कळण्यासाठी एक साधे उदाहरण घेऊ. कपातील चहा जोराने चमचाने ढवळला तर तो कपाच्या भिंतीच्या बाजूने वर चढताना दिसतो. तो असा वर का चढतो ? या चढण्याचे कारण त्या चहाचे 'जडत्व' हे आहे, असे सांगण्यात येते; आणि चहाच्या या जडत्वाला कारण आपल्या आकाशगंगेच्या बाहेर अनेक आकाशगंगा (तसलीच तारका विश्वे) आहेत हे आहे, असे भौतशास्त्रज्ञ सांगतात. याला भौतिशास्त्रात 'माखचे तत्त्व' (Mach's Principle) म्हणतात. (माख वा मॅच या शास्त्रज्ञाने प्रथम ते मांडले, म्हणून त्याचे नांव त्याला देण्यात आले. विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथातील 'विश्व आणि मानव' हे प्रकरण पाहा.) आता आपल्या आकाशगंगेच्या बाहेर अनेक तारकाविश्वे आहेत हे त्या कपातील चहाला कसे कळते? 'कसे कळते' असे म्हणण्याचे कारण हा भौतिक परिणाम नाही ! लांब अंतरावर अदृश्य रीतीने परिणाम करणारी एकच भौतिक शक्ती भौतशास्त्रज्ञांना माहीत आहे. ती म्हणजे गुरुत्वाकर्षण शक्ती. पण तारकाविश्व्यांच्या अंतरावर ती शून्य आहे. अशा रीतीने कसलाही भौतिक परिणाम नसतानाही कपातील चहा ढवळल्यामुळे वर चढतो, (म्हणजे त्याला 'जडत्व' येते) याचे कारण त्या चहाला लांब अंतरावर अनेक तारकाविश्वे आहेत हे कोणत्या तरी एका 'गूढ' तत्त्वामुळे कळते, असेच म्हटले पाहिजे ! आणि हे गूढ तत्त्व म्हणजेच 'माख' चे तत्त्व होय. पण असे म्हटले तर एखादा आधुनिक गॅलीलियो ही एक 'चमत्कारिक कल्पना' (Occult fancy) आहे असेच म्हणणार नाही काय ? आणि असे त्याने म्हटले तर त्याला दोष देता येईल काय ? पण हे 'गूढ' (वा 'चमत्कार युक्त') माखचे तत्त्व खुद्द आईन्स्टाइनने शास्त्रीय म्हणून स्वीकारले आहे हे विसरता येत नाही ! आणि ते तत्त्व 'गूढ' (अभौतिक) व अशास्त्रीय म्हणून शास्त्रज्ञांनी फेटाळले तरी चहाच्या (भौतिक वस्तूच्या) जडत्वाची उपपत्ती देण्याची जबाबदारी ते टाळू शकत नाहीत आणि त्याची उपपत्ती 'माखच्या तत्त्वा' खेरीज दुसरी कोणतीच सापडत नाही - भौतशास्त्रज्ञांजवळ नाही- ही वस्तुस्थिती आहे. तात्पर्य, भौतिक वस्तूचा मूलभूत जडत्व हा गुणधर्मच निसर्गाच्या एका 'गूढ' तत्त्वावर (नैसर्गिक 'चमत्कारा' वर) अधिष्ठित आहे !

या 'गूढ' वा 'चमत्कार' युक्त कल्पनेवरही ताण करणारा एक 'चमत्कार' युक्त सिध्दांत विश्वशास्त्रज्ञांनी भौतशास्त्रात मांडला आहे. याला विश्वोत्पत्तीचा 'महास्फोट सिध्दांत' (Big Bang Theory) म्हणतात. या सिध्दांतानुसार हे संपूर्ण विश्वच अक्षरशः शून्यातून निर्माण झाले आहे !<sup>१०</sup> (The Universe is created out of absolutely nothing.) काही जादूगार हॅट मधून ससा निर्माण करतात म्हणे. म्हणजे ससा निर्माण करण्यासाठी त्यांना हॅटची जरूरी आहे. पण भौत शास्त्रज्ञांना त्याचीही जरूरी नाही ! केवळ भौतिक नियम त्यासाठी पुरेसे आहेत ! (हे नियम



कॉटम व गुरुत्वाकर्षण सिध्दातावर आधारलेले आहेत.) शुध्द नियमातून संपूर्ण विश्व निर्माण करणाऱ्या या सिध्दांताला 'जादू' चा (किंवा 'चमत्कार' चा) सिध्दांत का म्हणू नये, हे कळत नाही. कारण हा जादूगार जसे ससा मुळात कोठे होता किंवा कोठून आला हे सांगत नाही, तसे हे भौतशास्त्रज्ञही शून्यातून विश्व निर्माण करणारे हे नियम मुळात कोठे होते किंवा कोठून आले हे सांगत नाहीत ! [जे.ए. व्हीलर सारखे मुळाचा विचार करणारे काही भौतशास्त्रज्ञ मात्र विश्वोत्पत्तीला कारणीभूत असलेला कॉटम सिध्दांत हा एक खरोखरच जादूचा (magic) सिध्दांत आहे हे मान्य करतात. -नव्हे त्याने तो जादूचाच सिध्दांत आहे असेच म्हटले आहे.<sup>४५</sup> तसेच हे 'जादू' चे नियम भौतशास्त्राबाहेरून (अर्तीद्रिय वा आध्यात्मिक जगातून?) आल्याचे मानल्यावाचून भौतशास्त्राची उपपत्ती लागत नाही, ते उभेच राहू शकत नाही, हे प्रांजळपणे कबूल करतात.<sup>४६</sup>]

[वरील शून्यातून विश्व निर्माण करणारा महास्फोट सिध्दांतही कमी 'चमत्कार' युक्त आहे म्हणून की काय काही भौत शास्त्रज्ञानी शून्यातून एकदाच नव्हे तर एकसारखे-सतत-विश्व निर्माण होत असल्याचा (continuous creation of matter) किंवा सतत घडणाऱ्या 'चमत्कारा' चा सिध्दांत मांडला आहे. बोंडी, गोल्ड आणि हॉइल या शास्त्रज्ञांच्या या सिध्दांताला अजून भक्कम पुरावे नसल्यामुळे तो विश्वशास्त्रात स्वीकृत झालेला नाही.]

अशा रीतीने संपूर्ण भौतिक (जड) विश्वच 'माखच्या तत्त्वा' सारख्या आणि 'शून्यातून विश्व निर्माण करणाऱ्या' कॉटम सिध्दांतासारख्या 'चमत्कार' युक्त वा 'जादू' च्या नियमावर आधारित असताना व हे 'चमत्कार' युक्त नियम कोठून व कसे (कोणत्या परिस्थितीत) निर्माण झाले हे भौतशास्त्रज्ञांना माहीत नसताना (सांगता येत नसताना) ते नियम कसे (कोणत्या परिस्थितीत) 'उल्लंघिले' जातात या विषयीचे ज्ञान आपल्याला असल्याचा दावा ते कसा करतात, हे कळणे कठिण आहे. भौतिक विश्वाचे नियम कोणत्या तत्त्वानुसार 'निर्धारित' होतात हे ज्यांना माहीत नाही, त्यांना ते कोणत्या तत्त्वानुसार 'उल्लंघिले' जातात याविषयीही काही बोलता येणार नाही हे उघड आहे. म्हणून त्या 'उल्लंघण्या' ला 'चमत्कार' म्हणण्याचाही त्यांना अधिकार नाही.

वास्तविक नियमांचे 'उल्लंघन' ही कल्पनाच अशास्त्रीय आहे. नियमांच्या 'उल्लंघना' ची भौतशास्त्रज्ञांची कल्पना भौतशास्त्रज्ञांच्या नियमांच्या 'मूलभूत' तेच्या कल्पनेवर आधारलेली आहे. हे भौतिक विश्व काही 'मूलभूत' नियमानुसार चालत असून हे नियम अनुल्लंघनीय आहेत, असे भौतशास्त्रज्ञांच्या या कल्पनेत गृहीत धरण्यात आले आहे. इतकेच नव्हे, तर हे अनुल्लंघनीय मूलभूत नियम 'भौतिक' आहेत व ते केवळ भौतिकच असू शकतात, असेही यात गृहीत धरण्यात आले आहे. भौतशास्त्रज्ञांचे हे गृहीतकृत्य बरोबर असेल तर कसलाही 'चमत्कार' घडता

कामा नये हे उघड आहे. पण या ग्रंथात वर्णन केलेले सर्व 'चमत्कार' हे गृहीतकृत्य सपशेल चुकीचे असल्याचे सिद्ध करतात. कारण ते भौतशास्त्राच्या सर्व भौतिक नियमांचे सर्रास 'उल्लंघन' करताना दिसतात. तात्पर्य, भौतशास्त्राचे हे भौतिक नियम भौतशास्त्रज्ञ समजतात त्याप्रमाणे 'अनुल्लंघनीय' नाहीत व म्हणून 'मूलभूत' नाहीत, हे उघड आहे.

पण मग 'नियमांचे उल्लंघन' ही कल्पनाच अशास्त्रीय आहे असे जे वर म्हटले आहे, त्याचे काय ? 'नियमांचे उल्लंघन' ही कल्पना अशास्त्रीय कशी हे कळण्यासाठी उत्क्रांतीचे उदाहरण देता येईल. जीवाची उत्क्रांती झाल्यामुळे जे जैविक नियम अस्तित्वात आले, ते नियम भौतिक शास्त्राच्या नियमांचे उल्लंघन करताना दिसत नाहीत. तरीही भौतिक शास्त्राच्या नियमातून ते कसे उत्क्रांत झाले याची उपपत्ती भौतिक शास्त्र देऊ शकत नाही. म्हणून त्यांचा दर्जा भौतशास्त्रीय नियमाहून वरचा व श्रेष्ठ ठरतो. जैविक नियम भौतिक नियमांवर 'आरुढ' (superimposed) झाले आहेत असे याच कारणासाठी म्हणावे लागते. त्याचप्रमाणे अर्तींद्रिय (अध्यात्म) क्षेत्रातील नियम कसे उत्क्रांत झाले याची उपपत्ती इतर (भौतिकशास्त्र, जीवशास्त्र व मानसशास्त्र ही) शास्त्रे देऊ शकत नाहीत. त्यामुळे ते इतर सर्व शास्त्रातील नियमाहून वरच्या दर्जाचे व श्रेष्ठ ठरतात व ते या सर्व शास्त्रांतील नियमांवर (त्या नियमांचे उल्लंघन न करता) आरुढ झाले आहेत, असे मानावे लागते. उदा. भानामती या अर्तींद्रिय प्रकारात भौतिक वस्तू अचानक अदृश्य होते. एखादी भौतिक वस्तू (उदा. पहिल्या प्रकरणात वर्णन केलेल्या अर्तींद्रिय घटनेतील विष्ठा) अदृश्य रीतीने कुठून तरी अचानक येऊन पडते - आणि तीही नको तिथे पडते. या घटना भौतिक विश्वाचे मूलभूत नियम भौतिक नसून अर्तींद्रिय आहेत हे निरपवादपणे व निर्णायकपणे सिद्ध करतात. भौतिक शास्त्रे या प्रकाराची उपपत्ती आपल्या नियमांच्या आधारे देऊ शकत नाहीत. [ती देऊ शकत नसल्यामुळेच भौतशास्त्राच्या नियमांचे त्या घटना 'उल्लंघन' करतात असे भौतशास्त्रज्ञ (अज्ञानाने) म्हणतात!] आणि ती उपपत्ती ते नियम देऊ शकत नसल्यामुळे त्यांचा दर्जा अर्तींद्रिय (वा अध्यात्म) शास्त्रातील नियमांहून खालचा असल्याचे आपोआपच सिद्ध होते. अर्तींद्रिय (अध्यात्मशास्त्रीय) नियम हे इतर सर्व शास्त्रांच्या नियमांवर 'आरुढ' (superimposed) झाले आहेत असे याच कारणासाठी म्हणावे लागते. याच कारणासाठी इतर सर्व शास्त्रे भौतिक विश्वाची उपपत्ती देण्याचे जे कार्य समाधानकारकपणे करू शकत नाहीत, ते कार्य अर्तींद्रिय (वा अध्यात्म) शास्त्र सहज करू शकते.<sup>१०</sup> याच कारणासाठी एखाद्या भौतिक वस्तूविषयीचा गणिती सिद्धांत भौतशास्त्रज्ञांना मांडता येतो म्हणून केवळ (किंवा मांडता आला तरी) त्या वस्तूच्या गुणधर्मांचे रहस्य त्यांना उलगडता येत नाही. (त्याची खरी उपपत्ती कळत नाही.) त्यासाठी त्यांना (माखच्या तत्त्वासारख्या) 'चमत्कार' युक्त (अर्तींद्रिय) तत्त्वाची कास धरावी लागते. आणि

याच कारणासाठी विश्वाच्या उत्पत्तीची उपपत्ती देण्यासाठी सुद्धा 'शून्यातून विश्वनिर्मिती' झाल्याचे सांगणाऱ्या क्लॉटम सिद्धांतासारख्या 'जादू'च्या (आध्यात्मिक) सिद्धांताचा त्यांना आधार घ्यावा लागतो.<sup>१८</sup> याच कारणासाठी भौतशास्त्रज्ञांना एक तर आपली 'चमत्कारा' ची अशास्त्रीय कल्पना टाकून द्यावी लागते किंवा सर्व विश्वच 'चमत्कार' युक्त (अतींद्रिय वा आध्यात्मिक) तत्त्वावर अधिष्ठित असल्याचे (अध्यात्म-शास्त्रीय सत्य) मान्य करावे लागते. म्हणजेच भौतिक जग (भौतिक सत्य) व अतींद्रिय जग (आध्यात्मिक सत्य) यांची क्षेत्रे भिन्न आहेत किंवा त्यांचा परस्परांशी काही संबंध नाही, ही अशास्त्रीय कल्पना टाकून द्यावी लागते. खुद्द भौतशास्त्रज्ञांच्या भौतशास्त्रातील 'चमत्कार' युक्त (अतींद्रिय वा आध्यात्मिक) सिद्धांतांनीच भौतिक व अतींद्रिय क्षेत्रातील सीमारेषा अशा रीतीने पुसून टाकली आहे - नव्हे अशी सीमारेषा आहे ही कल्पनाच खोटी - अशास्त्रीय - ठरवली आहे. तात्पर्य, सर्व भौतिक विश्वच अतींद्रिय वा आध्यात्मिक तत्त्वावर अधिष्ठित असल्याचे खुद्द भौतशास्त्रीय सिद्धांतच सांगतात !<sup>१९</sup>

भगवद्गीतेच्या दहाव्या अध्यायात कोणकोणत्या वस्तूत आपली (परमात्म्याची) विभूती आहे हे कृष्णाने विस्ताराने सांगितले आहे त्याचा सारांश शेवटच्या श्लोकात असा सांगितला आहे : अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन। विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत् ॥ (फार कशाला, हे सर्व जगच मी माझ्या एका-आध्यात्मिक-अंशाने व्यापून राहिलो आहे.) सर्व जगाचे अधिष्ठान सर्वश्रेष्ठ परम आध्यात्मिक तत्त्व असल्याचे गीता येथे सारांशाने स्पष्ट करते. हीच गोष्ट उपनिषत्कारांनी 'सत्यस्य सत्यमिति' या शब्दात सूत्ररूपाने सांगितली आहे. भौतिक सत्याच्या (म्हणजे दृश्य जगाच्या) आत दडलेले हे परम (अंतिम) सत्य (सत्याचे सत्य) किंवा परम 'आत्म' तत्त्व (परमात्म तत्त्व वा परब्रह्म) अदृश्य असल्यामुळे म्हणजेच भौतशास्त्रज्ञांच्या उपकरणात ते सापडत नसल्यामुळे ते अस्तित्वातच नाही, भौतिक जग (त्याच्या भौतिक नियमानुसार) स्वयंप्रेरणेनेच चालले आहे, असे जडवादी भौतशास्त्रज्ञ (व बुद्धिवादी तत्त्वज्ञ) समजतात; आणि जेव्हा ते (तथाकथित 'चमत्कारा' च्या रूपाने) प्रकट होते, ('दृश्य' होते) तेव्हा त्याच्या प्रकटीकरणाचे (आध्यात्मिक तत्त्वाचे) नियम त्यांना माहीत नसल्यामुळे किंवा त्यांना त्यांचा अद्याप शोध लागलेला नसल्यामुळे (अर्थात जे अस्तित्वातच नाही असे ते म्हणतात त्याचा ते बाकी शोध कसा लागणार म्हणा!) त्यांना ते 'चमत्कार' या सदरात ढकलून मोकळे होतात. म्हणजेच त्यांना 'भ्रम', 'भास' वा 'खोट' म्हणतात ! इतकेच नव्हे तर त्यांना खरे म्हणणाऱ्यांनाच ते उलट 'भ्रमिष्ट' व 'अंधश्रद्धाळू' म्हणतात. स्वतःच भ्रमात राहून व अंधश्रद्धा बाळगून इतरांना भ्रमिष्ट व अंधश्रद्धाळू म्हणणे हे एखादे वेळी अज्ञानी

लोकांच्या बाबतीत क्षम्य मानता येईल. पण सत्याचा शोध घेण्यासाठी विज्ञानाची कास धरल्याचा दावा करणाऱ्या शास्त्रज्ञांच्या बाबतीत ही भूमिका क्षम्य कशी मानता येईल? विज्ञान म्हणजे काही भौतिक विज्ञान नव्हे आणि सत्याचा शोध म्हणजे काही भौतिक सत्याचा शोध नव्हे. भौतिक सत्याचा शोध घेण्यासाठी विज्ञानाची कास कशाला धरयला पाहिजे? ते डोळ्यांना प्रत्यक्ष दिसतेच. जे डोळ्यांना दिसते तेच सत्य म्हणण्यात वैज्ञानिक शोध कसला? विज्ञानाचे काम या विश्वाविषयीचे सत्य, किंवा अंतिम सत्य, शोधणे हे आहे. 'अंतिम सत्य' (Ultimate Truth) हा विज्ञानाचा विषय नव्हे असे म्हणणाऱ्यांना विज्ञानातील सापेक्षता व क्वांटम सिद्धांतांनी केव्हाच खोटे ठरविले आहे. जे डोळ्यांना दिसते तेच सत्य म्हणण्याचा काळ केव्हाच इतिहासजमा झाल्याचे ह्या सिद्धांतांनी द्रव्य, काल, अवकाश व कार्यकारणभाव (substance, time, space, causality) याविषयीच्या शास्त्रज्ञांच्या रूढ कल्पना चुकीच्या ठरवून त्या कल्पनात आमूलाग्र क्रांती घडवून आणून दाखवून दिले आहे. विज्ञान आता विश्वाच्या मूलभूत तत्त्वज्ञानात्मक समस्यांना सामोरे जात असून त्याचा तोंडवळा पूर्ण आध्यात्मिक बनला आहे. विसाव्या शतकाच्या प्रारंभी ए. एस्. एडिंग्टन आणि जेम्स जीन्स यांनी आपल्या *The Nature of the Physical World* आणि *The Mysterious Universe* हे ग्रंथ लिहून बीजारोपण केलेल्या भौतविज्ञानातील तत्त्वज्ञानात्मक विचारांनी आता चांगलेच मूळ धरले असून नंतरच्या भौतशास्त्रातील शोधांनी त्यांचा पाठपुरावा केल्यामुळे त्यांचा एक मोठाच वृक्ष बनून फोफावत असल्याचा दिसून येतो. गेल्या काही दशकांत भौतशास्त्रज्ञांनी लिहिलेल्या लोकप्रिय ग्रंथावरून हे स्पष्ट होते.<sup>१०</sup> *Quantum Questions* (1984) या केन विल्बरसंपादित ग्रंथात भौतशास्त्रातील बहुतेक आघाडीचे शास्त्रज्ञ अध्यात्मवादीच नव्हे, तर गूढानुभूतिवादी (Mystics) कसे बनले आहेत, हे त्यांच्या ग्रंथातील उतारे देऊनच संपादकाने दाखवून दिले आहे. (विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथाची शेवटची दोन प्रकरणे पाहा.) भारतीय ऋषिमुनींनी आत्मानुभूतीच्या आधारे उपनिषदात प्रतिपादिलेले तत्त्वज्ञानच आधुनिक भौतविज्ञानातील शोधांनी उचलून धरल्याचे दिसून येते. डेव्हिस बोहम या प्रसिद्ध भौतशास्त्रज्ञाच्या सन्मानार्थ प्रसिद्ध केलेल्या *Quantum Implications* (1987) या हायली व पीट संपादित ग्रंथात स्वतः बोहमची रेनी वेबर या विदुषीने घेतलेली मुलाखत ग्रंथाच्या शेवटी समाविष्ट केलेली असून त्यात बोहमने *Atman equals Brahman of classical Hindu Philosophy* हा आधुनिक भौतविज्ञानाचा तत्त्वज्ञानात्मक निष्कर्ष असल्याचे म्हटले आहे.<sup>११</sup> आत्मा व ब्रह्म हे एकच असून भौतिक जग व मानवी मन (जीवात्मा) या एकाच नाण्याच्या दोन बाजू असल्याचे हिंदू (औपनिषदिक) तत्त्वज्ञानच आधुनिक भौतविज्ञानातील शोध पुरस्कारत असल्याचे बोहमने म्हटले आहे.

## ‘चमत्कार’ आणि ईश्वर

भौतशास्त्रीय नियमांचे ‘उल्लंघन’ ही कल्पना अशास्त्रीय कशी हे वर स्पष्ट केले आहे. जडवाद्यांची ‘चमत्कार’ विषयक कल्पना त्यामुळे अशास्त्रीय असल्याचे स्पष्ट होते. अध्यात्मवाद्यांची ‘चमत्कार’ विषयक कल्पनाही अशीच अशास्त्रीय आहे. ती कशी हेही येथे स्पष्ट केले पाहिजे. अध्यात्मवादी ‘चमत्कार’ म्हणजे भौतिक विश्वातील ईश्वराचा (Personal God) हस्तक्षेप होय असे म्हणतात. पण निसर्गात परमेश्वर हस्तक्षेप करतो असे म्हणणे म्हणजे नैसर्गिक घटना निसर्गनियमानुसार चालत नाहीत असे समजणे होय. परमेश्वराच्या लहरीवर चालणाऱ्या निसर्गाला निसर्गच म्हणता येणार नाही. परमेश्वराच्या लहरीवर चालणाऱ्या जगात विज्ञान अशक्य आहे. नैसर्गिक घटनांच्या पाठीमागे दडलेले नियम शोधून काढणे हे विज्ञानाचे काम आहे. अनियमित जगात- आणि परमेश्वराच्या लहरीवर चालणाऱ्या जगाला अनियमित जगच म्हटले पाहिजे - विज्ञानाला काही काम उरत नाही. पण असे काही घडत नसल्याचे विश्वातील नियम शोधण्यातील विज्ञानाचे यश दाखवून देते. म्हणून ‘नियमभंगा’ची जडवाद्यांची कल्पना जशी अशास्त्रीय आहे, त्याचप्रमाणे अध्यात्मवाद्यांची विश्वाच्या नियमातील परमेश्वराच्या हस्तक्षेपाची कल्पनाही अशास्त्रीय आहे. निसर्ग अगदी नियमबद्ध आहे. तो आपले नियम काटेकोरपणे पाळतो. आपल्याला ज्या घटनांमध्ये नियमभंग झाल्यासारखे वाटते, तेथे वास्तविक कोणत्याही नियमाचा भंग झालेला नसतो, किंवा परमेश्वराचा त्यामध्ये हस्तक्षेपही नसतो, तर दृश्य (खालच्या) विश्वातील (भौतशास्त्रज्ञांनी शोधून काढलेल्या) भौतिक नियमांवर ‘आरूढ’ झालेल्या अदृश्य अशा वरच्या (अतींद्रिय विश्वातील) नियमांची ती अंमलबजावणी असते. हे ‘वरचे’ (वा दृश्य जगात दडलेले ‘खालचे’) नियम आपल्याला माहीत नसल्यामुळे आपल्याला त्या घटना ‘चमत्कारा’च्या किंवा ‘नियमभंग करणाऱ्या’ वाटतात. (सश्रद्ध अध्यात्मवाद्यांना ती परमेश्वराची ‘लीला’ वाटते) वस्तुतः त्यामध्ये यापैकी काहीही नसते. ज्या नियमानुसार त्या घटना घडतात, ते नियम आपल्याला अज्ञात असल्यामुळे आपल्याला तसे वाटत असते. ते नियम वैज्ञानिक पद्धतीने शोधून काढणे व समजावून घेणे हे वैज्ञानिकांचे सत्यशोधक या नात्याने कर्तव्य आहे त्या घटना ज्ञात नियमात बसत नाहीत म्हणून नाकारणे, खोट्या म्हणणे ही पळवाट आहे. वैज्ञानिक दृष्ट्या ती आत्मवंचना आहे आणि बौद्धिक दृष्ट्या तो आडमुठेपणा आहे. कोणत्याही दृष्टीने त्याचे समर्थन करता येत नाही. पण दुर्दैवाने बुद्धिवादी तत्त्वज्ञ व जडवादी शास्त्रज्ञ तोच मार्ग पसंत करताना दिसतात. कारण तो त्यांना आपल्या आवडत्या तत्त्वज्ञानाच्या दृष्टीने सोयीस्कर वाटतो. पण एखादे तत्त्वज्ञान स्वतःच्या बुद्धीला कितीही सोयीस्कर असले तरी

वास्तवतेच्या कसोटीवर ते खोटे ठरत असेल, तर ते टाकून देणे हे त्यांचे वैज्ञानिक या नात्याने कर्तव्य ठरत नाही काय? पण त्यांची भौतिक नियमानुसार चालणारे दृश्य भौतिक जग खरे असल्याबद्दलची श्रद्धा इतकी बळकट आहे, की ती त्यांना वैज्ञानिक सत्यापेक्षाही गोड वाटते ! ही गोड पण आत्मवंचक व खोटी श्रद्धा हीच खरी अंधश्रद्धा आहे.

परमेश्वर विश्वात हस्तक्षेप करीत नाही ही कल्पना खरी मानली, तर परमेश्वर सर्वशक्तिमान (omnipotent) आहे ही कल्पना खोटी ठरत नाही काय? कारण परमेश्वर सर्वशक्तिमान असल्यामुळेच तो कृपाळू बनून आपल्या भक्तांवरील संकट दूर करू शकतो असा एक आक्षेप येथे अध्यात्मवादी घेतील. हा आक्षेप परमेश्वराच्या (तो आहे असे गृहीत धरले तर) सर्वशक्तिमानतेच्या व कृपाळूपणाच्या चुकीच्या कल्पनेवर आधारलेला आहे. परमेश्वर कृपाळू आहे, म्हणजे तो अहेतुक कृपा करतो असे समजण्यात येते. आणि 'कृपा' याचा अर्थ 'अहेतुक कृपा' असाच केला पाहिजे हे बरोबर आहे. पण परमेश्वराची 'अहेतुक कृपा' याचा अर्थ परमेश्वराच्या कृपेपाठीमागचा हेतू आपल्याला माहीत होत नाही एवढाच करावचा. 'अहेतुक' याचा अर्थ परमेश्वराच्या कृपेच्या पाठीमागे हेतूच नाही असा होत नाही. कारण कुणावरही परमेश्वर काही उगीच कृपा करीत नाही. कठोपनिषदात 'तमक्रतुः पश्यति वीतशोको धातुप्रसादान्महिमानमात्मनः ।' (कठ उप. १.२.२.) असे म्हटले आहे. यातील 'धातुप्रसाद' याचा अर्थ 'परमात्म्याची कृपा' असा करतात. तसा तो केला तरी ही परमात्म्याची कृपा 'अक्रतु' म्हणजे 'कामनारहित' व 'वीतशोक' म्हणजे 'दुःखाच्या व चिंतेच्या पलीकडे गेलेल्या' पुरुषालाच ती मिळते, वाटेल त्याला ती मिळत नाही, हे त्याचवेळी हे उपनिषद स्पष्ट करते. 'प्रसाद' हा शब्द प्र+सद् (= प्रसन्न होणे) या धातूपासून बनला आहे. आता परमेश्वर वाटेल त्याला व उगीचच प्रसन्न होतो काय? त्यासाठी काही कष्ट घेतले पाहिजेत व त्याच्या कृपेला पात्र ठरले पाहिजे. म्हणून त्याच उपनिषदात 'यमेवैष वृणुते तेन लभ्यः ।' (१.२.२३) असे म्हटले आहे. याचा अर्थ 'परमेश्वर ज्याला निवडतो किंवा वरतो त्यालाच तो मिळतो' असा करतात. पण 'तो वाटेल त्याला लहरीनुसार निवडतो किंवा वरतो' असा त्याचा अर्थ होत नाही. तर 'त्याच्यासाठी जो रात्रंदिवस तळमळतो व कष्ट घेतो, त्यालाच तो निवडतो, मिळतो' असाच त्याचा अर्थ केला पाहिजे. परमेश्वराची कृपा वाटेवर पडलेली नाही हे लक्षात ठेवले पाहिजे. त्याचेही काही नियम आहेत. कारण 'परमेश्वर' ही कल्पनाच 'नियमानुसार चालणारी वैश्विक अतींद्रिय शक्ती' या अर्थाची असून ती मुळात शास्त्रीय आहे. या विश्वात दडलेल्या नियमानुसार चालणाऱ्या या अतींद्रिय शक्तीला भक्तिमार्गी लोकांनी 'परमेश्वर' हे नाव दिले आहे. कारण त्यांच्या श्रद्धेला व भक्तीला ती शक्ती फलद्रूप होऊन त्यांच्या इच्छेनुसार ती

‘रूप’ धारण करते. (‘श्रद्धा जेव्हा मूर्त रूप धारण करते’ हे प्रकरण पाहा.) म्हणून गीता म्हणते, ‘ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम् ।’ याचा अर्थ, ‘या अतींद्रिय शक्तीला - परम सत्तेला - तुम्ही ज्या भावनेने भजाल, त्या भावनेप्रमाणे ती तुम्हाला दिसेल व फळ देईल.’ समजा तुमची तिच्यावर श्रद्धाच नाही तर मग ‘अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत्’ या गीतावचनानुसार ‘आत्माच (अतींद्रिय शक्तीच) अस्तित्वात नाही अशी श्रद्धा बाळगणाऱ्याला - म्हणजे आत्म्याचा शत्रू बनणाऱ्याला - तीही शत्रू बनते.’ म्हणजे चकवते. ती त्याला कुठेच दिसत नाही. आणि ती त्याला कुठेच दिसत नसल्यामुळे आपले ‘आत्मा नाही’ हे म्हणणेच खरे ठरते असे मानून तो जास्तच नास्तिक बनतो. अशा ‘नास्तिकाला (तिचे अस्तित्व पटेपर्यंत) पुनः पुनः जन्म घ्यावा लागून फजीत पावावे लागते’ असे तेच उपनिषद ‘नास्ति पर इति मानी पुनः पुनः वशमापद्यते मे ।’ (कठ उप. १.२.६) या वचनातून सांगते. अशा रीतीने ‘परमेश्वर’ रूपी अतींद्रिय शक्ती ‘भक्तां’ना संकटकाळी साह्य करते, हा या विश्वाच्या नियमातील ‘हस्तक्षेप’ नसून उलट विश्वाच्या नियमाचे ते पालनच आहे हे स्पष्ट होईल. कारण अतींद्रिय शक्ती नेहमी संकटकाळीच प्रकट होत असल्याचा नियमच असल्याचे यापूर्वी दिलेल्या अनेक उदाहरणावरून दिसून येते. त्यामुळे ‘परमेश्वर’ सर्वशक्तिमान आहे ही कल्पना खोटी तर ठरत नाहीच, उलट अतींद्रिय शास्त्राचे नियम इतर सर्व शास्त्रातील नियमांवर ‘आरूढ’ झाले असल्यामुळे - तसे ते झाले असल्याचे उत्क्रांती सिद्धांत दाखवून देत असल्यामुळे - त्या कल्पनेला जास्तच बळकटी येते. किंबहुना ती कल्पना शास्त्रशुद्ध असल्याचे सिद्ध होऊन अध्यात्मवाद्यांच्या ‘परमेश्वरी’ कल्पनेचा पाया जास्तच मजबूत होतो.

हे विषयांतर आहे असे काही वाचकांना वाटेल. पण या ‘चमत्कारा’विषयीच्या भौतिकवादी शास्त्रज्ञांप्रमाणेच अध्यात्मवाद्यांच्याही काही गैरसमजुती आहेत. म्हणून त्या नाहीशा करणे व ‘चमत्कार’ विषयक शास्त्रीय भूमिका स्पष्ट करणे हे आवश्यक असल्यामुळे वरील विवेचन करावे लागले आहे. ‘चमत्कारा’ची कल्पना वैज्ञानिक दृष्टीने चुकीची - निर्मूल - असेल तर ती अध्यात्माच्या दृष्टीनेही चुकीची - निर्मूलच - असणार. कारण अध्यात्म हेही विज्ञानच - शास्त्रच - आहे. (किंबहुना ते सर्व शास्त्रांचेही शास्त्र आहे.) पण दुर्दैवाने जडवादी भौतशास्त्रज्ञांप्रमाणेच अध्यात्मवाद्यांनाही याची कल्पना नाही !

### ‘डोळसपणा’ व ‘आंघळेपणा’ यांची शास्त्रीय व्याख्या

जे डोळ्यांना दिसते ते खरे आहे हे सिद्ध करण्यासाठी वैज्ञानिक संशोधन कशाला करायला पाहिजे, असे वर म्हटले आहे. आणि तसे ते सिद्ध करण्याचा जडवादी भौतशास्त्रज्ञांचा प्रयत्नच बूमरँग बनल्यामुळे, जे डोळ्यांना दिसते ते खोटे

असल्याचे - या दृश्य भौतिक जगाचे अधिष्ठान अदृश्य (अतींद्रिय) तत्त्व असल्याचे - 'चमत्कार' युक्त वा 'जादू'चे सिद्धांत भौतशास्त्रात स्वीकारून - त्यांना मान्य करावे लागले आहे. त्यामुळे वैज्ञानिक संशोधनाचे खरे उद्दिष्ट डोळ्यांना न दिसणाऱ्या (अतींद्रिय) जगाचे संशोधन करणे हेच असल्याचे सिद्ध होते.<sup>५९</sup> पण आपली दृश्य जगावरची श्रद्धा इतकी बळकट आहे, की ते 'खरे' नाही ही गोष्ट स्वीकारणे आपल्या जीवावर येते. पण भौतशास्त्रातील शोधापेक्षा अतींद्रिय विज्ञानातील शोधांनी आपली (भौतिक जग खरे असल्याबद्दलची) ही श्रद्धा शुद्ध आंधळी असल्याचे जास्त परिणामकारक रीतीने दाखवून दिले आहे. त्यामुळे आंधळेपणा व डोळसपणा यांच्या शास्त्रीय व्याख्याच आता बदलाव्या लागतात. कारण आपण जे डोळ्यांना दिसत असल्यामुळे 'खरे' आहे असे म्हणतो, (उदा. भौतिक जग) ते मुळात खोटे असल्याचे व जे डोळ्यांना दिसत नसल्यामुळे 'खोटे' आहे, अस्तित्वात नाही, असे म्हणतो, (उदा. अतींद्रिय जग) ते खरे असल्याचे या तथाकथित 'चमत्कारां'च्या शास्त्रीय संशोधनातून निर्विवादपणे सिद्ध होते. उदा. अग्नी जाळतो हे आपण 'खरे' म्हणतो. उकळत्या तेलात हात घातला तर तो पोळतो हे आपण 'खरे' मानतो. पण काहुना लोक लाव्हा रसावरून चालत जातात, पण त्यांना काही होत नाही, असे आढळून येते. मदीनाबी उकळत्या तेलातून नाणे काढते, पण तिचा हात पोळत नाही असे आढळून येते. येथे आपले 'खरे' जग खोटे ठरते व 'खोटे' जग - अतींद्रिय वा आध्यात्मिक जग, जे अदृश्य असल्यामुळे खोटे आहे असे आपण म्हणतो ते - खरे ठरते. या ग्रंथात दिलेली भानामतीची सर्व प्रकरणे भौतिक जगाच्या या भ्रामकत्वाचे अतींद्रिय शास्त्रीय सत्य (parapsychological truth) प्रकर्षाने आपल्या निदर्शनास आणून देतात.

व्यावहारिक जगात अग्नी जाळतो हे खरे असल्यामुळे क्वचित घडणाऱ्या प्रकारात तो जाळत नसल्याचे आढळून आले तर ते खोटे म्हणण्यात, किंवा त्यावर अविश्वास दाखवण्यात काही चूक नाही असे कोणी म्हणेल. येथे 'क्वचित घडणाऱ्या प्रकारात' हे शब्द महत्त्वाचे आहेत. पहिला प्रश्न म्हणजे 'क्वचित घडणारा प्रकार' खरा आहे की खोटा, हे प्रथम ठरवले पाहिजे आणि तो खरा असल्याचे आढळून आले तर तो 'खोटा' म्हणणे किंवा त्यावर 'अविश्वास' दाखवणे शास्त्रीय दृष्ट्या समर्थनीय आहे काय, हा दुसरा प्रश्न असून त्याचे उत्तर दिले पाहिजे. या प्रश्नाचे प्रामाणिक उत्तर देण्यावर शास्त्रीय संशोधनाचे सर्व भवितव्य अवलंबून आहे. तो 'खोटा' म्हणणे समर्थनीय मानले तर हे प्रकरण तिथेच संपते. जे 'खोटे' आहे त्याचे शास्त्रीय संशोधन कसले करणार? आणि 'खऱ्या'ला 'खोटे' म्हणणे हे जो समर्थनीय मानतो त्याचे मतपरिवर्तन कशानेही होणे शक्य नाही. अशा माणसाकडून शास्त्रीय जगात कसलीही भर पडणार नाही. अशा लोकांनी शास्त्रीय जग भरले तर शास्त्रीय



जगाची मृत्युघंटाच वाजली म्हणून समजावे. भौतशास्त्रच याला साक्ष आहे. भौतशास्त्राने शोधलेल्या नियमात, किंवा मांडलेल्या (व स्वीकृत झालेल्या) सिद्धांतात एखादा प्रकार बसत नसला, तर त्या प्रकाराकडे 'क्वचित घडणारा प्रकार' किंवा 'अपवाद' म्हणून दुर्लक्ष केले तर भौतशास्त्राची प्रगतीच कशी खुंटते हे भौतशास्त्राच्या इतिहासावरून दिसून येते. जीन्स आणि रॅले या भौतशास्त्रज्ञांनी प्रारणाचे - (radiation) जे सूत्र मांडले होते, त्यात नीलातीत किरणांची वागणूक बसत नव्हती. (याला भौतशास्त्रात ultraviolet catastrophe म्हणतात ही गोष्ट लुम्मेर आणि प्रिंगशीम या शास्त्रज्ञांनी दाखवून दिली होती.) हा प्रकार 'अपवाद' किंवा 'क्वचित घडणारा' म्हणून भौतशास्त्रज्ञांनी तिकडे दुर्लक्ष केले असते तर युगप्रवर्तक क्वांटम सिद्धांताचा शोधच लागला नसता (त्याचा शोध लावणाऱ्या मॅक्स प्लँकचाही आपण मांडलेल्या सिद्धांतावर कित्येक दिवस विश्वास नव्हता ! इतका 'दृश्य' जगावरील व प्रचलित गुहीतकृत्यावरील त्याकाळच्या शास्त्रज्ञांचा विश्वास प्रबळ व अविचल होता !) तसेच खगोलशास्त्रात बुध ग्रहाचा 'वाह्यातपणा' (eccentricity) न्यूटनच्या गुरुत्वाकर्षण सिद्धांताच्या नियमात बसत नव्हता. तोही प्रकार 'क्वचित घडणारा' किंवा 'अपवाद' म्हणून दुर्लक्षिणे समर्थनीय मानले गेले असते, तर आईन्स्टाइनच्या सापेक्षता सिद्धांताचा शोधही लागला नसता. तथाकथित 'अपवाद' हे वास्तविक अपवाद नसून आपल्या निसर्गनियमांच्या अभ्यासातील ती त्रुटी आहे हे ओळखून ती भरून काढण्याचा प्रयत्न केल्यास आपले निसर्गाचे ज्ञान समृद्ध होते. त्याकडे दुर्लक्ष केल्याने किंवा त्यांना 'खोटे' वा 'भ्रामक' म्हटल्याने होत नाही. काही जण अग्नीचा दाहकत्व हा गुणधर्म नाहीसा होण्याचा 'चमत्कार' किंवा परचित ज्ञान, भानामती यासारखे 'चमत्कार' नेहमी का घडून येत नाहीत असला एक अडाणी प्रश्न विचारतात व पुढे जाऊन म्हणतात, की ते नेहमी घडून येत नसल्यामुळे ते प्रकार ('चमत्कार') खोटे ! एखादी गोष्ट नेहमी घडते म्हणून ती खरी व तशी जी घडत नाही ती खोटी हे अजब तर्कशास्त्र आहे. या तर्कशास्त्रानुसार नेहमी उगवणारा सूर्य व तारे हेच खरे व नेहमी न उगवणारा धुमकेतू व नवतारे (सुपरनोव्हा) खोटे, असे म्हणावे लागेल ! निसर्गाला या 'बुद्धिमान' लोकांच्या बुद्धिवादी तर्कशास्त्रानुसार वागणे कळू नये हे किती मोठे दुर्दैव !

अशा रीतीने (वर दाखवून दिल्याप्रमाणे) अपवादात्मक परिस्थितीत घडणारे प्रकारच वास्तविक भौतिक जगात दडलेली सत्ये व नियम उघड करतात. (उदा. नवतार्यांमुळेच जडतत्त्वांची व परिणामी मानवाची उपपत्ती कळली.) हे विज्ञानाच्या इतिहासावरून दिसून येते. उदा. प्रस्तुत ग्रंथातील भानामतीच्या प्रकारात अदृश्य रीतीने विष्टा येऊन पडणे, बंद खोलीतील वस्तू अदृश्य रीतीने बाहेर येऊन पडणे, कपड्यांना आपोआप आग लागणे, एका गरोदर स्त्रीचा गर्भ अदृश्य रीतीने छपरावर

जाऊन पडणे, बंद कपाटातून पैसे अदृश्य होणे किंवा अदृश्य रीतीने तेथे येऊन पडणे, इ. प्रकार भौतिक जगात अपवादात्मकपणे घडतात, म्हणूनच ते या भौतिक जगाचे मिथ्यत्व व अतींद्रिय जगाचे सत्यत्व किंवा भौतिक जगावरचे त्या अदृश्य जगाचे व त्या जगाच्या नियमांचे अधिराज्य सिद्ध करतात. या ग्रंथात दिलेली अन्य 'चमत्कारांची' उदाहरणेही (उदा. शून्यातून वस्तुनिर्मिती, चोखोबाचा साक्षात्कार, श्रद्धेने मूर्तरूप धारण करणे इ.) भौतिक जगाचे मिथ्यत्व व अतींद्रिय जगाचे व त्या जगाच्या नियमांचे श्रेष्ठत्व सिद्ध करण्याबरोबरच या भौतिक जगाचे सूत्र-चालन ते जग ज्या तत्त्वावर अधिष्ठित आहे त्या अतींद्रिय तत्त्वाच्या आधारे चालत असून ते तत्त्व मानवी मनाशी निगडित असल्याचे दाखवून देतात. म्हणूनच कठोपनिषद 'मनसैवेदमाप्तव्यम् ।' (मनामार्फतच त्या अतींद्रिय सत्याशी जवळीक साधावी) असे म्हणते. मनामार्फत अतींद्रिय शक्तीशी जवळीक दोन मार्गांनी साधता येते. एक योगमार्गाने व दुसरे, भक्तिमार्गाने. पतंजली मुनींनी योगमार्गाने सिद्धी प्राप्त होतात असे म्हटले आहे. (व्युत्थाने सिद्धयः ।) (पातं. यो. सू. ३.३७) आणि नारदमुनींनी भक्तिमार्गानेही सिद्धी प्राप्त होतात असे म्हटले आहे. (यल्लब्ध्या पुमान् सिद्धो भवति ।) (नारद भक्तिसूत्र १.१.४) कोणत्याही मार्गाने मनामार्फतच सिद्धी प्राप्त होतात हे शास्त्रीय सत्य असल्यामुळे तुकारामांनी 'मन करा रे प्रसन्न सर्व सिद्धीचे कारण ।' असे म्हटले आहे. योगमार्ग सामान्य माणसाला झेपणारा नाही, भक्तिमार्ग मात्र कुणालाही, अगदी सामान्यातील सामान्य माणसालाही सहज चोखाळता येतो. त्यामुळे सामान्य वर्गातील किंबहुना हीन कुलातील सुद्धा ईश्वर-भक्तांच्या जीवनात 'चमत्कार' घडल्याच्या कथा भक्तिविजयासारख्या ग्रंथातून वाचावयास मिळतात. त्यावर बुद्धिवादींच नव्हे, तर हल्लीच्या काळातील सामान्य शिक्षित मनुष्यसुद्धा विश्वास ठेवत नसल्याचा आढळून येतो. पण त्यातील 'चमत्कारा'पेक्षाही अविश्वासनीय असे 'चमत्कार' भक्तियोगामुळे आधुनिक काळात घडल्याचे दाखले आहेत. हे अशक्य कोटीत जमा होणारे अतींद्रिय प्रकार (तथाकथित 'चमत्कार') असून ज्या भौतिक नियमांच्या 'अनुल्लंघनीयते'वर भौतिक जगाचे सत्यत्व अबाधितपणे उभे असल्याचे जडवादी भौतशास्त्रज्ञ ठामपणे मानतात, ते नियमच किती तकलादू आहेत व परिणामी त्या नियमावर उभे असलेले हे दृश्य भौतिक जग किती भ्रामक आहे, हे ते दाखवून देतात. अशा काही अशक्य कोटीतील अतींद्रिय घटनांचा येथे आपल्याला आता विचार करावयाचा आहे.

### काही अशक्य कोटीतील अतींद्रिय घटना

प्रथम 'अशक्य' या शब्दाविषयी थोडे स्पष्टीकरण केले पाहिजे. वास्तविक 'परचितज्ञाना'पासून 'भानामती' पर्यंतचा कोणताही तथाकथित 'चमत्कार' रूढ विज्ञानाच्या

दृष्टीने 'अशक्य'च आहे. तेव्हा येथे जे प्रकार वर्णन करावयाचे आहेत त्यांना 'अशक्य' हे विशेषण लावून 'परचित्तज्ञान' वगैरे प्रकार 'शक्य' आहेत असे मला सुचवायचे आहे, असे कोणी समजू नये. रूढ विज्ञानाच्या दृष्टीने सर्वच 'चमत्कार' 'अशक्य' असताना काही विशिष्ट 'चमत्कारांना' तेवढे अशक्य कोटीत ढकलण्याचे वास्तविक काही कारण नाही. म्हणून येथे 'अशक्य' या शब्दाने मला 'सापेक्षतः अशक्य' असे सुचवायचे आहे, हे वाचकांनी ध्यानात घ्यावे. म्हणजे असे की, 'परमचित्तज्ञाना'पासून 'भानामती'पर्यंतचे सर्व 'चमत्कार' नित्याच्या जीवनात अगदी दुर्मिळ नाहीत. पण मी आता वर्णन करणार असलेले 'चमत्कार' मात्र नित्याच्या जीवनात अगदीच दुर्मिळ आहेत. म्हणून त्यांना अशक्य म्हणण्याऐवजी 'अतिदुर्मिळ' म्हणणे हे अधिक सयुक्तिक होईल. अतिदुर्मिळ असले तरी ते इतर तथाकथित 'चमत्कारां'इतकेच सत्य आहेत हे मात्र विसरू नये.

ज्ञानेश्वरांनी भिंत चालवली, रेड्यामुखी वेद बोलविले असे भक्तिविजयसारख्या ग्रंथातून सांगण्यात येते. वास्तविक हे 'चमत्कार'ही वरील अर्थाने 'अशक्य'च आहेत असे कुणी म्हणेल. पण ते तसे नाहीत. भिंत चालवणे हा 'चमत्कार' वास्तविक भानामतीच्या - म्हणजे गुरुत्वाकर्षणशक्तीच्या नियमाविरुद्धच्या - 'चमत्कार' प्रकारात मोडतो. या अतींद्रिय प्रकाराचे शास्त्रीय नाव 'सायकोकायनेसिस' (PK) असे असून तत्त्वतः ही शक्ती सामान्य भाणसातसुद्धा असल्याचे ड्यूक युनिव्हर्सिटीच्या परामानसशास्त्रीय प्रयोगशाळेत जे. बी. व्हाईन प्रभृतींनी सप्रयोग दाखवून दिले आहे. काही माध्यमे टेबल इ. जड वस्तू उचलून दाखवत असल्याचे नियंत्रित प्रयोगातून सिद्ध झाले आहे.<sup>१३</sup> डी. डी. होम हा अंतराळातून (खिडकीतून) घराबाहेर गेल्याची व परत तरंगत आल्याची घटना साक्षीदारांनी नोंद केली आहे. सतराव्या शतकातील कोपर्टिनोचा जोसेफ डेसा हा तर 'उडणारा ख्रिस्ती मठवासी' (Flying Monk) म्हणूनच प्रसिद्ध आहे.<sup>१४</sup> रशियाच्या एमॅलेव या चित्रपट दिग्दर्शकाने एका नदीला झोपलेल्या अवस्थेत दोन फूट अंतराळी केवळ मनःशक्तीने उचलल्याची घटना ग्रेस आणि डिक यांनी नोंद केली आहे.<sup>१५</sup> (या सर्व घटनां क्षुल्लक ठरविणारी योगी विशुद्धानंदांची आकाशगमनाची घटना अनेकांनी अनेकदा पाहिली व नोंद केली आहे. त्यांना अणिमादि अनेक सिद्धी प्राप्त झाल्या होत्या. पाहा : स्वामी विशुद्धानंद परमहंसदेव : (१९९६) नंदलाल गुप्त) तेव्हा ज्ञानेश्वरांच्या या 'चमत्कारां'वर 'अशक्य' असा आरोप कुणालाही करता येणार नाही. तसेच रेड्यामुखी वेद बोलवणे हेही 'अशक्य' समजण्याचे कारण नाही. हा 'चमत्कार'ही अकराव्या प्रकरणात वर्णन केलेल्या 'आकाशवाणी'च्या 'चमत्कारा'पेक्षा काही जास्त अद्भुत नाही. (किंबहुना कमी प्रतीचाच ठरतो.) (एका गायीच्या वासराने 'मूकं करोति वाचालं । पंगुं

लंघयते गिरिम् ।' हा श्लोक अनेकांच्या साक्षीने म्हटल्याची घटना खुद्द बहिणाबाईनेच आपल्या चरित्रात नोंदवली आहे. <sup>११</sup>) तेव्हा प्रस्तुत ग्रंथात वर्णन केलेल्या 'चमत्कारां' च्या मानाने भक्तिविजयातील 'चमत्कार' सामान्यच ठरतात. पण संत ज्ञानेश्वरासारखा कोणीही मोठा संत किंवा राम वा कृष्ण यासारखा ईश्वरी अवतार समजला गेलेला महापुरुषसुद्धा अन्न व पाणी याशिवाय आपले आयुष्य जगून दाखवल्याचे एकही उदाहरण पुराणांतरी सापडत नाही - जे हल्लीच्या विज्ञानयुगात सामान्य माणसांनी घडवून आणले आहे!

मग ही सामान्य माणसे 'ईश्वरी अवतार असलेल्या' राम वा कृष्ण यांच्यापेक्षा श्रेष्ठ समजायची काय? तसे समजण्याचे कारण नाही. हे कळण्यासाठी या 'अवतारी' पुरुषांनी असा 'चमत्कार' का करून दाखवला नाही हे प्रथम समजून घेतले पाहिजे.

स्वतः कृष्णाने (म्हणजे गीताकारांनी) भगवद्गीतेत 'न बुद्धिभेदं जनयेत् अज्ञानां कर्मसंगिनाम् ।' (म्हणजे कर्माधिष्ठित जीवन जगणाऱ्या सामान्य माणसाचा महापुरुषांनी बुद्धिभेद करू नये.) असे म्हटले आहे. (ज्ञानेश्वरांनी हीच गोष्ट संत महात्म्यांनी 'मार्गाधारे वर्तवि' या शब्दात सांगितली आहे.) अन्नपाण्याशिवाय जगण्याने पोटापाण्यासाठी कर्म करणाऱ्या सामान्य माणसाचा बुद्धिभेद होतो हे स्पष्ट आहे. त्यामुळे कर्म करण्याची आवश्यकता नाही असे ठरते. मनुष्याला पोटापाण्यासाठीच कर्म करावे लागते, हे प्रसिद्ध आहे. अवतारी (समजले गेलेल्या) पुरुषांनी असा (अन्नपाण्याशिवाय जगण्याचा) 'चमत्कार' करून तो आदर्श लोकांसमोर ठेवला तर 'कर्म कर, कर्म केले नाहीस तर तुझा चरितार्थही चालणार नाही' (शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्धेदकर्मणः ।) या गीतेच्या (निष्काम कर्मयोगाच्या) शिकवणीविरुद्ध उपदेश केल्यासारखे होईल. म्हणजे गीतेच्या शिकवणुकीविरुद्ध लोकांसमोर तो आदर्श ठेवल्यासारखे होईल. म्हणजेच 'मी कर्म करतो' (वर्ते एव च कर्मणि ।) हा कर्मयोगाचा कृष्णाने सामान्य लोकांपुढे ठेवलेला आदर्शच, उपदेशच व्यर्थ ठरेल. नव्हे आध्यात्मिक जीवनाचीच वैयर्थ्यता त्यामुळे सिद्ध होईल. कर्म करण्याची गरज नसेल (आणि पोटापाण्याचा प्रश्न सुटला तर त्याची काय गरज?) तर आध्यात्मिक जीवन जगण्याचीही गरज उरत नाही ! थोडक्यात, अन्नपाण्याशिवाय जगण्याच्या 'चमत्कारा'चा संतमहात्म्यांनी सामान्य लोकांपुढे आदर्श ठेवला, तर तो आध्यात्मिक जीवनावर तात्त्विक प्रहार ठरतो. आध्यात्मिक तत्त्वाच्या मुळावरच तो धाव घालणारा ठरतो. म्हणून असा 'चमत्कार' संतमहात्म्यांनी व 'अवतारी' पुरुषांनी करून दाखवलेला नाही आणि म्हणून ज्यांनी तो करून दाखवला (वास्तविक त्यांच्या जीवनात तो आपोआप घडला, त्यांनी तो करून दाखवला नाही.) त्यांचे जीवन संतमहात्म्यांपेक्षा श्रेष्ठ ठरत नाही. मग त्यांच्या जीवनात तो 'चमत्कार' का घडला? ते लोक असामान्य होते म्हणून घडला नाही, तर उलट ते सामान्य होते म्हणूनच घडला. ते

लोक संकटात सापडल्यामुळे व अतींद्रिय शक्ती संकटात माणसाच्या मदतीला नेहमी धावून येत असल्यामुळे तो घडला. त्याच्या जीवनचरित्रावरून हे स्पष्ट होते

अन्नपाण्याशिवाय जगणाऱ्या व्यक्ती अनेक होऊन गेल्याचे सांगण्यात येत असले तरी तीनच व्यक्तींची उदाहरणे इतिहासप्रसिद्ध आहेत. (एक व्यक्ती हल्ली जिवंत आहे.) ही तीनही उदाहरणे स्त्रियांची आहेत हे लक्षात ठेवण्यासारखे आहे.<sup>५३</sup> जीवशास्त्रदृष्ट्या व उत्क्रांतिवादाच्या दृष्टीने विचार करता स्त्रीलिंग हे मूलभूत जीवशास्त्रीय प्राणीतत्त्व (biologically fundamental entity) असल्यामुळेच हा 'चमत्कार' स्त्रियांच्या बाबतीत घडू शकतो असे म्हणायला जागा आहे.<sup>५४</sup> हे जीवशास्त्रीय स्त्रीतत्त्व, स्त्री ही 'जीवशास्त्रीय प्रकृती' असल्याचे दाखवून देत असून ती (प्रकृती) 'भलतैसाही खेळु । लेखा आणी ।।' (वाटेल तो चमत्कार करून दाखवते) या ज्ञानेश्वरांच्या उक्तीप्रमाणे अध्यात्मशास्त्रातील (प्रकृति) तत्त्वाशीही जुळणारीच - सुसंगतच - आहे ! म्हणजे या 'चमत्कारा'च्या बाबतीत जीवशास्त्र व जीवशास्त्रीय स्त्री (प्रकृति) तत्त्व ही अध्यात्मशास्त्र व अध्यात्मशास्त्रीय 'प्रकृति' तत्त्व प्रतिबिंबित करतात, किंवा अध्यात्मशास्त्रीय कल्पनेला जीवशास्त्रीय अधिष्ठान-आधार-आहे हे दाखवून देतात असे म्हणता येईल. (खरे तर अध्यात्मशास्त्रीय तत्त्वच जीवशास्त्रात प्रतिबिंबित झाले आहे असे म्हणणे अधिक काटेकोर आहे )

### अन्नपाण्याशिवाय जगणारी माणिक्यम्मा

पहिले उदाहरण कर्नाटकातील - जिला 'महायोगिनी' असे तिचे भक्तगण म्हणतात व जी आजही गेली ५८ वर्षे अन्नपाण्याशिवाय जिवंत आहे व आरोग्यसंपन्न आहे - ती माणिक्यम्मा या स्त्रीचे आहे. माणिक्यम्मा हिचा जन्म १९३४ साली कर्नाटकातील गुलबर्गा जिल्ह्यातील सोडम तालुक्यातील मालाबाद या लहान खेड्यात झाला. तिला लहान वयातच शिवभक्तीची गोडी लागली होती. ती इतकी तीव्र होती की त्या भक्तीला अडथळा ठरणार्या विवाहाला तिचा त्या लहान वयातही तीव्र विरोध होता. पण तिच्या मनाविरुद्ध तिच्या लहान वयातच तिचे लग्न करण्यात आले. मनाविरुद्ध लग्न झाल्यामुळे ती सासरी जाण्यास व गेली तरी पत्नीधर्माप्रमाणे वागण्यास नाखूष होती. व नेहमी शिवध्यानात मग्न असे. त्यामुळे तिचा सासरी अतिशय छळ होऊ लागला. त्या छळाविरुद्ध तिने शेवटी उपवासाचे शस्त्र उपसले. हे शस्त्रच तिच्या मदतीला धावून आले व तिला वाचवू शकले. कारण सासरचे काम न करता खाण्याचा तिच्यावर त्या लोकांना आरोप करता येत नव्हता. पण तिच्या या सामर्थ्यामुळे सासरच्या लोकांचे व माहेरच्या लोकांचेसुद्धा डोळे उघडले नाहीत. तिच्या परिस्थितीत काही फरक पडला नाही व छळ सुरूच राहिला. शेवटी नवऱ्याचा आपल्या मनाविरुद्धचा अतिप्रसंग टाळण्यासाठी ती रानात निघून गेली. पण तिच्या

नवऱ्याचा तेथही त्रास होऊ लागल्यामुळे तिने त्याचे दुसऱ्या ँका मुलीशी लग्न लावून दिले व त्याच जिल्ह्यातील यादगिरी तालुक्यातील यानागुंदीजवळील डोंगरात जाऊन राहिली. याच ठिकाणी तिची अन्नपाण्याशिवाय जगणारी स्त्री म्हणून बाहेरच्या जगाला ओळख झाली. त्या ठिकाणी तिला असंख्य भक्त लोक येऊन मिळाले. यामध्ये कोडंगलचे तहशीलदार श्री. गोविंदराव हेही ँक होते. त्यांनी त्या डोंगरात तिच्यासाठी ँक स्वतंत्र ध्यानमंदिर बांधायचे ठरवून बांधकामास सुरुवात केली. त्यावेळी माणिक्यम्माने त्या मंदिरास दारे खिडक्या अजिबात ठेवू नका असे सांगितले. त्या मंदिरात तिचा ध्यानात बसण्याचा निश्चय होता. चोहोबाजूंनी सिमेंट काँक्रीटने बंद केलेल्या जागेत माणिक्यम्मा ध्यानात बसणार असल्याची वार्ता पसरायला वेळ लागला नाही. शासनाच्या कानावरही ही वार्ता गेली. हा आत्महत्येचा प्रयत्न असल्याची शासनाने भूमिका घेतली व या गोष्टीला विरोध केला. डॉ. अकबर अली यांच्यासारख्या माणिक्यम्माची परीक्षा करून तिचे अध्यात्मसामर्थ्य पटलेल्या लोकांच्या आग्रहावरून शंकरदेव या ँका मंत्र्याने यापूर्वी माणिक्यम्माची कडक तपासणी करून तिच्या अन्नपाण्याशिवाय राहण्याच्या सामर्थ्याची स्वतः खात्री करून घेतली असली, तरी बंदिस्त अशा हवाबंद जागेत राहणे हे मृत्यूलाच आमंत्रण आहे अशी शासन व पोलिखात्याची भूमिका होती. माणिक्यम्मांच्या भक्तांचाही प्रारंभी या योजनेला विरोध होता. पण अन्नपाण्याशिवाय राहणारी माणिक्यम्मा समाधीमध्ये गेल्यावर हवेशिवायसुद्धा राहू शकेल, अशा भरवशावर त्या गोष्टीला त्यांनी संमती दिली होती. त्यांनी व माणिक्यम्माचे परमभक्त श्री. रामरेड्डी पाटील यांनी माणिक्यम्माच्या जीवितास काही धोका झाल्यास आपली सर्व इस्टेट सरकारजमा करण्यात यावी असे लिहून देण्याची तयारी दर्शविली. शेवटी शासनातर्फे या प्रकरणी साधकबाधक विचार करण्यात येऊन या गोष्टीस संमती देण्यात आली. माणिक्यम्मा ध्यानमग्न झाल्यानंतर व खोलीच्या दरवाजा-खिडक्या सिमेंटने बंद केल्यानंतर त्या ठिकाणी शासनातर्फे अखंड पोलिस पहारा ठेवण्यात आला. तो दिवस होता २३ डिसेबर १९५३. आणि माणिक्यम्माने आपल्या भक्तांना अगोदरच सांगून ठेवले होते की महाशिवरात्रीच्या दिवशी आपण ध्यानातून बाहेर येऊ. ३ मार्च १९५४ या दिवशी महाशिवरात्र होती. पण त्याच्या आदल्या दिवशीच त्या ठिकाणी लोकांची तुफान गर्दी उसळली होती. पोलिसांचा अर्थात कडेकोट बंदोबस्त होता. सर्वजण माणिक्यम्माच्या समाधीतून बाहेर येण्याच्या क्षणाची आतुरतेने वाट पाहत होते. अन्नपाणी तर नाहीच, पण स्वतःला हवाबंद जागेत ७० दिवस बंदिस्त करून घेऊन बसलेली ही बाई जिवंत तरी बाहेर येईल काय अशी शंका बाळगणारे विज्ञानवादी आणि बुद्धिवादी त्यात होते. राज्याचे दोन मंत्रीही उपस्थित होते. पोलिस अधिकारी, पत्रकार, संशोधक, साधूसंत इत्यादीही होते. सर्चलाईट, पेट्रोमॅक्स अशा साधनांनी माणिक्यम्मा समाधिस्थ

असलेल्या बंदिस्त खोलीच्या चारी बाजू प्रकाशाने उजळून निघाल्या होत्या. लोकांची उत्कंठा शिगेला पोचली होती. माणिक्यम्मा केव्हा व कशी बाहेर येणार याची.

पहाटे चार वाजता सिमेंटने बंद असलेल्या दरवाजाच्या भिंतीला एकदम एक चीर पडलेली दिसली. एकच मिनिटात एक दगड निखळून पडला आणि मग एकामागून एक दगड पडून जणू ते कोणी गोळा करीत असल्याप्रमाणे ते आपोआप गोळा होऊ लागले ! डॉ. अकबर अलीनी भक्तीच्या मोठ्या उमाळ्याने 'अम्मा' असे म्हणून एकदम भिंतीवर पडून दंडवत घातला. माणिक्यम्माने डोळे उघडले. जमलेल्या हजारो लोकांच्या कंठातून माणिक्यम्माच्या नावाने एकच जयघोष झाला. यावेळी तिचे वय अवघे १९ वर्षांचे होते.<sup>५९</sup>

तेव्हापासून माणिक्यम्माची अन्नपाण्याशिवाय जगणारी स्त्री म्हणून सर्वत्र कीर्ती पसरली. या प्रसंगाने भारताचे योगसामर्थ्य केवळ पुस्तकी नाही, पातंजल योगशास्त्राच्या सिद्धी काल्पनिक नाहीत, तर अनुभव व प्रयोग यावर आधारलेल्या आहेत हे जगाच्या निदर्शनास आले. (पातंजल योगदर्शनाच्या 'विभूतिपाद' या ३ऱ्या भागात 'कण्ठकूपे क्षुत्पिपासानिवृत्तिः' म्हणजे कंठकूपाच्या ठिकाणी मनःसंयम केल्यास अन्नपाण्याची जरूरी राहत नाही असे सांगणारा ३० वा श्लोक आहे.) भारताला अन्नपुरवठा करणाऱ्या CARE या जागतिक संस्थेच्या अध्यक्षांनी भारतभेटीत मुद्दाम माणिक्यम्माची भेट घेऊन अन्नपाण्याशिवाय ही बाई कशी जगते याची तपासणी करण्यासाठी - तिचे मलमूत्र मिळत नसल्यामुळे - तिची थुंकी घेऊन तिचे अमेरिकेतील प्रयोगशाळेत रासायनिक पृथक्करण करून पाहिले आहे. योगसिद्धीचे रहस्य रासायनिक घटकात शोधणारे पाश्चात्य भौतिकशास्त्र अध्यात्मापासून हजारो मैल दूर असल्याचीच ही साक्ष आहे !

अन्नपाण्याशिवाय मनुष्य जगू शकतो - मग असे जगणारी एक शिवभक्त स्त्री असेना का - यावर विश्वास नसणाऱ्या डॉ. अकबर अलीसारख्या एका मुस्लिमाने स्वतःची खात्री करून घेण्यासाठी दीर्घकाळपर्यंत त्या स्त्रीची तपासणी करावी यात आश्चर्य नाही. (आणि ती खात्री पटल्यानंतर त्या स्त्रीला महायोगिनी मानून तिचे ते अनन्य भक्त बनले यात ही आश्चर्य नाही.) पण स्वतः योगसाधना करणाऱ्या व योगी म्हणून प्रसिद्ध असलेल्या एका भारतीय योग्यानेच त्या स्त्रीच्या या सामर्थ्याविषयी संशय बाळगावा हे आश्चर्य नव्हे काय? पण योगीच योग्याची खरी परीक्षा करू शकतो आणि जगाला योगसामर्थ्य खरे असल्याचे त्याची परीक्षा घेऊन दाखवून देतो. २ महिने १० दिवस हवाबंद जागेत समाधिस्थ राहणे आणि अगोदर ठरविल्याप्रमाणे महाशिवरात्रीच्या दिवशी पहाटे बरोबर ४ वाजता ब्राह्म मुहूर्ताला आपोआप सिमेंटची भिंत फुटून समाधीतून बाहेर येणे (तो महाशिवरात्रीचा दिवस होता हे इतके दिवस अंधारात राहिलेल्या तिला कसे कळले?) हा माणिक्यम्माच्या योगसामर्थ्याचा चमत्कार

धारवाडच्या तपोवन आश्रमाचे योगी कुमार स्वामी यांचे पुरेसे समाधान करणारा नव्हता असे दिसते. (हे स्वामी स्वतः एम. ए पीएच. डी. असून कित्येक दिवस समाधीत जात असत ) त्यांनी आपल्या शिष्यांना ही बाई अन्नपाण्याशिवाय खरोखरच जगते काय याची खात्री करण्यासाठी पाठविले. त्यांनी तीन महिने माणिक्यम्माजवळ राहून तिची परीक्षा करून स्वतःची खात्री करून घेतली व स्वामींना वृत्तांत खरा असल्याचे परत येऊन सांगितले. कुमारस्वामींनी मग स्वतःच माणिक्यम्माची भेट घेतली व तिच्या पुढे अक्षरशः साष्टंग दडवत घातला ! (नंतर स्वतः तिच्या सानिध्यात ते दोन महिने राहिले.)

‘गेली ५८ वर्षे माणिक्यम्मा अन्नपाण्याशिवाय जिवंत आहे. असाध्य रोग बरे करणे, बंदिस्त (कुलूप घातलेल्या) जागेतून अदृश्य होऊन दुसरीकडे जाणे यासारखे ‘चमत्कार’ही या योगिनीच्या नावावर नमूद असले तरी हा अन्नपाण्याशिवाय राहण्याचा एकच ‘चमत्कार’ तिला इतर योग्याहून वेगळा काढणारा आहे. (कारण असले इतर ‘चमत्कार’ इतर योग्यांनीही केले आहेत.) भौतिक विज्ञानाला हे अक्षरशः जिवंत व चालते बोलते आव्हान आहे. हे अध्यात्मशास्त्राचे भौतशास्त्राला आव्हान आहे. माणिक्यम्मा गेली ५८ वर्षे अन्नपाण्याशिवाय कशाच्या आधारे जिवंत आहे? हे कोडे भौतिकवादी शास्त्रज्ञांना आध्यात्मिक तत्त्वाचे शास्त्रीय सत्यत्व मान्य केल्याखेरीज शास्त्रीयदृष्ट्या सोडवणेच शक्य नाही. खऱ्या अर्थाने ‘शास्त्र’ कशाला म्हणावे याविषयी जडवाद्यांना अंतिम निर्णयास येण्यास भाम पाडणारे हे उदाहरण आहे. हे एक अपवादात्मक उदाहरण आहे असेही समजण्याचे कारण नाही. दुसरेही एक असलेच उदाहरण असून तेही भारतातलेच आणि भारतीय नारीचेच आहे.

### ‘मनुष्य हा देह नाही, आत्मा आहे’, हे सिद्ध करणारी गिरिबाला

या दुसऱ्या भारतीय नारीचे - नव्हे महायोगिनीचे - नाव आहे गिरिबाला. या सामान्य स्त्रीची योग्यता एका योगिनीची असल्याचे प्रथम बाह्य जगाला कळले, ते तिच्या अन्नपाण्याशिवाय पन्नास वर्षांपेक्षा जास्त काळ जगण्याचा तिने ‘चमत्कार’ करून दाखवल्याची माहिती योगानंदांनी आपल्या **Autobiography of a Yogi** या ग्रंथातून जगाला सांगितल्यामुळे. या स्त्रीची त्यांनी प्रत्यक्ष भेट घेऊन तिच्या तोंडून ऐकलेली माहिती तर या ग्रंथात त्यांनी दिली आहेच, पण तिच्या शेजारी राहणाऱ्या स्थितीबाबू नंदी यांनी तिला खोलीत बंदिस्त करून तिच्यावर केलेल्या प्रत्यक्ष निरीक्षण प्रयोगाची त्यांना दिलेल्या माहितीचीही नोंद त्यांनी आपल्या या ग्रंथात केली आहे. या ग्रंथात त्यांनी दिलेली माहिती अशी :

गिरिबाला हिचे लग्नही माणिक्यम्माप्रमाणेच तिच्या लहानपणीच-तिच्या वयाच्या नवव्या वर्षी-लावण्यात आले होते. नवाबगंज या गावात ती नवऱ्याच्या घरी वयाच्या



१२ व्या वर्षी नांदायला आली. सासरी ती भयंकर खादाड म्हणून प्रसिद्ध झाली होती. तिच्या खादाडपणामुळे तिला आपल्या सासुसासऱ्यांची बोलणी सतत खावी लागत असत. शेवटी ती बोलणी असह्य होऊन एके दिवशी तिने आपल्या सासूजवळ प्रतिज्ञा केली, की आजपासून मी आयुष्यात कधीही अन्नाला शिवणार नाही. आणि असे म्हणून ती गंगा नदीच्या घाटावर आली. तेथे तिने परमेश्वराची अत्यंत कळवळून प्रार्थना केली की, 'देवा, मला अन्नाशिवाय केवळ तुझ्या प्रकाशाच्या जोरावर जगण्याची विद्या शिकवणाऱ्या एखाद्या गुरूला पाठवून दे.' त्या निरागस बालिकेची ती अतःकरणापासून कळवळून केलेली प्रार्थना परमेश्वराने (म्हणजे त्या वैश्विक मनाने) ऐकली व तिच्यासमोर थोड्याच वेळात एक माणूस तिला दिसला. त्याने तिला सांगितले की, 'तुझी प्रार्थना ऐकून प्रसन्न झालेल्या परमेश्वराने मला तुझ्याकडे पाठवले आहे. आजपासून तू अनंताच्या शक्तीतून येणाऱ्या केवळ प्रकाशतत्त्वाच्या साहाय्याने जगू शकशील. तुला अन्नाची गरज भासणार नाही.' असे म्हणून त्याने तिला एक मंत्र दिला व योगातील प्राणायामाच्या काही कठीण क्रिया शिकविल्या. ती म्हणते, "तेव्हापासून मी आजतागायत - आज माझे वय ६८ वर्षांचे आहे - अन्नाचा एक कणही खाल्लेला नाही किंवा पाणीही प्यालेले नाही त्यामुळे संडास-लघवी करावी लागत नाही. मी कधी आजारी पडले नाही. मला रात्री झोपही नसते. दिवसा मी सर्व कामे करते व रात्री ध्यान करते. ध्यानात माझ्या गुरूचे दर्शन होते मला मुले झाली नाहीत. बऱ्याच वर्षांपूर्वी मी विधवा झाले."

योगानंदांनी तिला म्हटले की, 'अन्नाशिवाय कसे जगावे ही तुम्ही शिकलेली विद्या इतरांना शिकवली तर जगाची अन्नाची समस्या सुटेल. तेव्हा तुम्ही हे गुपित इतरांना का शिकवीत नाही?' यावर गिरिबाला जे म्हणाल्या ते लक्षात ठेवण्यासारखे आहे. त्या म्हणाल्या, "गुरूने हे रहस्य गुप्त ठेवण्यास मला सांगितले आहे. ईश्वरी कार्यात हस्तक्षेप होऊ नये अशी त्याची इच्छा आहे. नाहीतरी कर्म करण्याची आणि त्याची सुखदुःखरूपी फळे भोगण्याची माणसाला काय गरज उरेल? कर्म केले नाही व त्याच्या फळाचे तडाखे बसले नाहीत, तर जीवनाचा अर्थ शोधण्याचा माणूस प्रयत्न करील काय?"

गिरिबाला गीतेचे तत्त्वज्ञानच सांगत आहे, हे वाचकांच्या लक्षात आलेच असेल. योगानंदांनी शेवटी गिरिबालांना विचारले, "मग तुम्हा एकट्यांनाच ही अन्नपाण्याशिवाय जगण्याची विद्या का मिळाली?" याला त्यांनी उत्तर दिले, "माणूस हा जड देह नाही, तर आत्मा आहे, हे जगाला दाखवून देण्यासाठी."

हा प्रश्न विचारून योगानंदांना जगात 'चमत्कार' का घडतात याचे शास्त्र (गिरिबालांच्या मुखाने) तथाकथित 'शास्त्रीय' जगाला सांगायचे होते. त्यांच्या उपर्युक्त ग्रंथात 'The Law of Miracles' (चमत्कारांचा नियम) या नावाचे एक खास

प्रकरण त्यांनी याच उद्देशाने लिहिले असून त्यात त्यांनी मानवी मनच सर्व 'चमत्कारां'च्या बुडाशी असल्याचे स्पष्ट म्हटले आहे. कोणताही 'चमत्कार' मानवी मनातून सूक्ष्म रीतीने कार्य करणाऱ्या वैश्विक नियमानुसारच घडून येतो. (The subtle laws that operate in the inner cosmos of consciousness) असे त्यांनी म्हटले असून त्यांनी अनेक 'चमत्कार' करून दाखवणाऱ्या (आपल्या युक्तेश्वर या गुरूंचे गुरू) लाहिरीमहाशय यांच्या पुढील विधानावर हे आपले म्हणणे आधारले आहे. लाहिरीमहाशय योगानंदांचे गुरू युक्तेश्वर यांना एकदा म्हणाले होते,

"Thought is a force even as electricity or gravitation. The human mind is a spark of the almighty consciousness of God. I could show you that whatever your powerful mind believes very intensely would instantly come to pass " (P.112) (अर्थ : "मानवी मनातील विचार ही वीज किंवा गुरुत्वाकर्षणाप्रमाणेच एक शक्ती आहे. मानवी मन म्हणजे त्या सर्वसमर्थ जगच्चालक विश्वमनाचा एक स्फुल्लिंग आहे. तुला मी हे दाखवून देऊ शकतो, की प्रबळ श्रद्धेच्या जोरावर तू मनात जे आणशील ते क्षणात घडून येईल.") "A subtle spiritual structure is hidden behind the bodily mechanism. (P.117) (अर्थ : शरीररूपी यंत्राच्या पाठीमागे (मानवी मनरूपी) आध्यात्मिक तत्त्वाची सूक्ष्म रचना कार्यरत आहे.) ही मानवी शरीरातील आध्यात्मिक तत्त्वाची सूक्ष्म रचनाच मनुष्याला वाटेल तो 'चमत्कार' करून दाखविण्याचे सामर्थ्य देते. अन्नपाण्याशिवाय जगणे हा त्यापैकीच एक आध्यात्मिक 'चमत्कार' असून गिरिबाला यांनी म्हटल्याप्रमाणे 'मनुष्य हा देह नसून आत्मा आहे' हे जगाला हाच 'चमत्कार' उत्कृष्टरीतीने दाखवून देऊ शकतो. आध्यात्मिक तत्त्वाचे मानवी मनातून व मनाच्या द्वारे शरीरातून प्रकट होणारे हे सामर्थ्य भौतवैज्ञानिकांना भौतिक शक्तीच्या व नियमाच्या मर्यादा दाखवून देते व आत्मतत्त्वाची त्या भौतिक जगावर अनिर्बंध व सार्वभौम (वा सर्वश्रेष्ठ) सत्ता (supreme power) असल्याचे (वरीलसारख्या माणिक्यम्मा व गिरिबाला यांच्या) प्रत्यक्ष उदाहरणांनी दाखवून देते.

**मनुष्य देह नाही, आत्मा आहे हे सिद्ध करणारे आणखी 'चमत्कार'**

मनुष्य हा देह नाही, आत्मा आहे हे दाखवून देण्यासाठी अन्नपाण्याशिवाय जगणे हाच एक पुरावा किंवा साधन उपलब्ध आहे असे नाही. अन्य तऱ्हेनेही ते दाखवून देता येते. आणि हे खुद्द योगानंदांनीच आपल्या एका खास स्वतःच्या 'चमत्कारा'ने दाखवून दिले आहे. वर जे 'शरीररूपी यंत्राच्या पाठीमागे आध्यात्मिक तत्त्वाची सूक्ष्म रचना आहे' असे विधान केले आहे, ते त्यांचे गुरू युक्तेश्वर यांचे असून ते कठोपनिषदातील पुढील श्लोकावर आधारलेले आहे. अध्यात्म तत्त्व

जाणून घेण्याच्या उत्कंठेने आपल्या घरी आलेल्या नचिकेतास यम म्हणतो,

अस्य विश्वसमानस्य शरीरस्थस्य देहिनः ।

देहाद्विमुच्यमानस्य किमत्र परिशिष्यते ॥ एतद्वैतत् ॥

(कठ. उप. २.२४)

याचा अर्थ असा : एका शरीरातून दुसऱ्या शरीरात निघून जाणारा जीवात्मा शरीर सोडून निघून गेल्यानंतर पाठीमागे काय शिल्लक राहते? तेच हे आत्मतत्त्व, (ज्याच्याविषयी तू विचारत होतास.)

भौतिक शास्त्रानुसार देहातून प्राण निघून जाणे म्हणजे देहरूपी यंत्र निकामी बनणे. निकामी यंत्र जसे गंजते तसे निष्प्राण शरीर कुजते. ही प्रेताची कुजण्याची क्रिया इतकी तीव्र असते, की मनुष्य मेल्यानंतर ताबडतोब त्याच्या प्रेताची विल्हेवाट जाळून किंवा पुरून लावण्यात येते. पण योगानंदांनी देह सोडल्यानंतर त्यांचे शरीर २० दिवसानंतरसुद्धा ताजेच - ते जिवंत असताना जसे होते तसेच - होते. लॉस एंजल्स येथील हॅरी टी. रो या मॉर्ट्युअरी डॉक्टरनेच पुढीलप्रमाणे त्यांच्या मृत्यूच्या २० दिवसानंतरच्या शरीराचे वर्णन केले आहे. 'He looked on March 27 th as fresh and as unravaged by decay as he had looked on the night of his death.' म्हणजे त्यांचे शरीर महासमाधीच्या रात्री जसे होते तसेच वीस दिवसानंतरही होते. त्यावर कसल्याही प्रकारची कुजण्याची क्रिया दिसून येत नव्हती. अन्नपाण्याशिवाय शरीर कित्येक वर्षे जिवंत ठेवू शकणारे आत्मतत्त्व ते शरीर निर्जीव झाल्यानंतरसुद्धा न कुजता ठेवू शकते, हे योगानंदांनी आपले महासमाधीनंतरचे शरीर ताजे ठेवून पाश्चात्य जगाला प्रत्यक्ष दाखवून दिले आहे व आपल्या उपनिषदांतील वचने काल्पनिक नाहीत, तर अनुभव व प्रयोगसिद्ध आहेत याचा त्या भौतिकवादी पाश्चात्य जगाला साक्षात प्रत्यय आणून दिला आहे. स्वतः मृत्युदेवता यमच मनुष्य मेल्यानंतर त्याचे शरीर जीवात्म्याने सोडले तरी परमात्म्याने सोडले असे समजू नये, अशी नचिकेतास वरील श्लोकातून कठोपनिषदात ग्वाही देतो. योगी पुरुष हे परमात्मस्वरूपच असल्यामुळे आपले मृत शरीरसुद्धा ताजे ठेवू शकतात. मेलेल्या माणसांना संतसत्पुरुषांनी व योग्यांनी पुन्हा जिवंत केल्याच्या कथा काल्पनिक नाहीत, शंकराचार्यांनी मृत अमरूक राजाच्या शरीरात प्रवेश करून योग्य तो अनुभव घेऊन परत आपल्या शरीरात प्रवेश केला, ही दंतकथा नाही याची योगानंदांचा हा प्रयोग साक्ष आहे. भौतिक शास्त्रानुसार मनुष्य मेल्यानंतर त्याला परत जिवंत करण्याची वैद्यकशास्त्राने ठरविलेला अवधी पाच मिनिटांचा आहे. कारण हृदय बंद पडल्यानंतर मेंदूला रक्ताचा व पर्यायाने प्राणवायूचा (ऑक्सिजनचा) पुरवठा पाच मिनिटांपेक्षा जास्त कालपर्यंत होऊ शकत नाही. पण १० व्या प्रकरणात मृत्युनंतर कित्येक तासांनीसुद्धा काही व्यक्ती जिवंत झाल्याची उदाहरणे दिली

आहेत. वैद्यकशास्त्राने निर्धारित केलेली मर्यादा त्या शरीरातील जीवात्मे कशामुळे ओलांडू शकले? यमाने नचिकेताला सांगितल्याप्रमाणे निर्जीव देहात पाठीमागे राहिलेल्या त्या परमात्म (परब्रह्म) तत्त्वामुळेच होय. ते तत्त्व मृत व्यक्तीचे शरीरही पुन्हा जिवंत करू शकते. जर त्यांचे आयुष्य संपलेले नसेल तर. मग भौतिकवादी वैद्यकशास्त्र काही म्हणो. पाश्चात्य (व पौर्वात्यही) भौतिकवादी अध्यात्मशास्त्राच्या दृष्टीने कसे अंधश्रद्धाळू आहेत हे सप्रयोग दाखवून देण्यासाठीच परमहंस योगानंदांनी आपले मृत शरीर अमेरिकेच्या एका मोठ्या शहरात २० दिवस ताजे ठेवले. जसे मनुष्य मेल्यानंतरही संपत नाही, तसे प्राण निघून गेल्यानंतरही शरीर संपत नाही. कारण मनुष्य हा जसा देह नाही, आत्मा आहे, तसे भौतिक शरीर हे जड नाही, ब्रह्म आहे; हे योगानंदांनी भौतिकवादी पाश्चात्य जगाच्या निदर्शनास या प्रयोगाने आणून दिले आहे. उपनिषदांच्या तत्त्वज्ञानाला प्रायोगिक बैठक असल्याचे, म्हणजेच त्यातील श्लोक कल्पनेने रचलेले नसल्याचे त्या निमित्ताने भौतिकवादी जगाच्या निदर्शनास आले.

अन्नपाण्याशिवाय कित्येक वर्षे जगणे आणि मृत शरीर कित्येक दिवस ताजे ठेवणे ही दोन उदाहरणे 'मनुष्य हा देह नाही, आत्मा आहे,' हे सिद्ध करणारी म्हणून वर दिली आहेत. अध्यात्मशास्त्रातील तत्त्वे ज्या शास्त्रीय प्रयोगांनी सिद्ध होतात, त्या योगशास्त्रातील प्रयोगांची ती उदाहरणे असून पातंजल योग म्हणजे उपनिषदातील तत्त्वज्ञानांची प्रायोगिक तपासणी (experimental test) करणारे शास्त्र असल्याचे ती उदाहरणे अशा रीतीने दाखवून देतात. १० व्या प्रकरणात वर्णन केलेले मरणानुभव, योगाभ्यास नसलेल्या व तो करू न शकणाऱ्या पाश्चात्य भौतिकवादी लोकांना नैसर्गिकरीत्या घडून आलेल्या (अपघाती) प्रयोगाने आध्यात्मिक तत्त्वाचे - मनुष्य हा देह नाही, आत्मा आहे याचे - प्रत्यंतर आणून देणारे अनुभव आहेत. मरणानुभव हा मनुष्याला जीवनातील अविस्मरणीय असा आघातकारक (traumatic) अनुभव असून तो जडवादाची मुळे मृत्युरूपी भूकंपाच्या धक्क्याने उखडून काढतो किंवा क्वचित कुंडलिनी जागृत करून नेस्तनाबूत करतो. पण योगशास्त्रदृष्ट्या मरणानुभव व झोपेचा अनुभव यात तत्त्वतः काहीच फरक नाही हे लक्षात ठेवले पाहिजे. म्हणजे मृत्यू आणि झोप यात गुणात्मक भेद नसून केवळ प्रमाणात्मक भेद आहे. म्हणून योगशास्त्राच्या दृष्टीने जी गोष्ट मृत शरीराची, तीच गोष्ट झोपलेल्या माणसाच्या शरीराची मानणे आवश्यक आहे. म्हणजे असे की, माणसाचे शरीर निर्जीव (मृत) झाले तरी जसे त्यातील आत्मतत्त्व नाहीसे होत नाही, त्याप्रमाणे माणसाचे शरीर अबोध (झोपलेले) असले तरी त्यातील आत्मतत्त्व अबोध (झोपलेले) असत नाही. ते जागेच असते. ते कसे हे पुढील त्याच (कठ) उपनिषदातील श्लोक सांगतो :

य एष सुप्तेषु जागर्ति कामं कामं पुरुषो निर्ममाणः ।

तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म तदेवामृतमुच्यते ॥ एतद् वै तत् ॥

(कठ. उप. २.२८)

याचा अर्थ असा : जो हा पुरुष (परमात्मतत्त्व) माणूस झोपलेला असतानाही त्याच्या इच्छेनुसार (कर्मानुसार) फळे देतो, तो (कधी) झोपत नाही, जागाच असतो. (ते तत्त्व आपले नियत कार्य - कर्मानुसार-इच्छेनुसार फळे देण्याचे - करीतच असते.) तेच हे प्रकाशमय ब्रह्म-तत्त्व होय. त्यालाच अमृत म्हणतात, तेच हे आत्मतत्त्व होय. (ज्याच्याविषयी (हे नचिकेता) तू विचारत होतास )

योगाभ्यास नसलेल्या माणसाला वरील श्लोकाचा पडताळा पाहणे, अर्थातच कठीण आहे. त्यासाठी इंद्रियनिग्रहासारख्या (यमनियम प्राणायामादी) काही अटी पाळाव्या लागतात. पण यमाचे वरील श्लोकातील म्हणणे सत्य असल्याचे अक्कलकोटच्या स्वामी समर्थानी सोलापुरच्या गोविंदराव टोळांना एकदा प्रत्यक्षच अनुभवास आणून दिले आहे गोपाळबुवा केळकरांनी आपल्या स्वामी समर्थावरील बखरीत ती घटना सांगितली आहे. ती अशी :

एकदा अक्कलकोट येथे गणपतराव जोशी यांच्या घरी स्वामी आले असता त्यांना अथरूण घालून देण्यात आले. त्यावर स्वामी झोपले व थोड्याच वेळात घोरू लागले. जवळ गोविंदराव टोळ बसले होते. स्वामी घोरत असलेले पाहून त्यांना भगवद्गीतेतील पुढील श्लोक आठवला. 'या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी । तस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥' म्हणजे सर्व प्राणी जेव्हा झोपलेले असतात तेव्हा योगी (संयमी) जागा असतो, आणि ते लोक जागे असतात तेव्हाही तो जागाच असतो, पण त्यांच्या जगात तो रमत नाही गोविंदरावांच्या मनात आले की, 'झोपलेला योगीसुद्धा जागा असतो असे गीतेत म्हटलेले आहे, पण हे स्वामी योगी असूनही खुशाल घोरत आहेत !' हा विचार त्यांच्या मनात येण्याचा अवकाश, स्वामी निद्रेतच एकदम खाकरले । आणि म्हणाले, 'क्यो सोनार? नही, नही.' (का रे सोनारा, असे काही समजू नकोस.) आणि पुन्हा ते घोरू लागले ! (स्वामी गोविंदराव टोळांना 'सोनार' म्हणत असत.) स्वामींनी गोविंदरावांच्या मनातील विचार तर ओळखलाच, (परचित्तज्ञानाचा प्रयोग करून दाखवलाच, आणि तोही झोपेत) पण वरील कठोपनिषदातील उपनिषत्कारांचे यमाच्या तोंडी घातलेले वचनही सत्य असल्याचे त्याविषयीचे प्रात्यक्षिकही करून दाखवले.<sup>१०</sup>

वरील श्लोकात 'तदेव शुक्रं' असे त्या आत्मतत्त्वाचे वर्णन केलेले असून त्याचा अर्थ 'शुभ्र प्रकाशमय' म्हणजेच 'शुद्ध' वा 'तेजस्वी' असा होतो. हे शुद्ध वा तेजस्वी प्रकाशतत्त्व (जे मृत शरीरातही चैतन्यरूपाने असते, असे तत्पूर्वीच्या कठोपनिषदातील श्लोकात म्हटले आहे.) तथाकथित 'चमत्कार'रूपी घटनांच्या

पाठीमागे दडलेले आहे असे खुद्द योगानंदांनी आपल्या उपर्युक्त आत्मचरित्रातील 'The Law of Miracle' या प्रकरणात म्हटले आहे <sup>११</sup> (उदा. ते म्हणतात, "The law of miracles is operable by any man who has realised that the essence of creation is light" (अर्थ : सृष्टीच्या बुडाशी प्रकाशतत्त्व असल्याचे सत्य ज्याने आत्मसात केले आहे, त्यालाच चमत्काराचा नियम कार्यवाहीत आणता येतो.) हे प्रकाशतत्त्वच सृष्टी रचनेच्या बुडाशी असल्याचा शोध आधुनिक भौतशास्त्रालाही लागला आहे. याचा पुढे विचार करावयाचा आहे.)

### श्रद्धारूपी अन्नावर जगलेली थेरेसा न्युमन

तिसरे अन्नपाण्याशिवाय जगणाऱ्या स्त्रीचे उदाहरण जर्मनीच्या थेरेसा न्युमन या ख्रिश्चन जोगिणीचे आहे. (या जोगिणीचीही मुलाखत योगानंदांनी मुद्दाम जर्मनीत जाऊन घेतली होती.) बव्हेरियातील कॅनर्सरूथ या खेड्यातील या जोगिणीच्या बाबतीतही, माणिक्यम्मा व गिरिबाला या महायोगिनीप्रमाणेच संकटकालीच ही अतींद्रिय शक्ती तिच्या मदतीला धावून आल्याचे आढळून येते. मात्र हे संकट तिने आपल्यावर स्वतःहून ओढवून घेतले होते वयाच्या २३ व्या वर्षी या जोगिणीने एका तरुण ख्रिश्चन पुरोहिताचा घशाचा रोग आपल्या घशात घेतला व त्यामुळे तिला घट्ट अन्न गिळणे अशक्य होऊन पातळ अन्नावर जगावे लागले. पुढे १९२७ साली तिने तेही सोडून दिले व पाणीही सोडून दिल. आणि तेव्हापासून अन्नपाण्याशिवायच जगू लागली. या गोष्टीची शहानिशा व तपासणी करण्यासाठी रेगेन्सबर्गच्या बिशपने एक मिशन तिच्याकडे पाठवून दिले. १४ जुलै १९२७ ते २९ जुलै १९२७ पर्यंत - म्हणजे दोन आठवडे - त्या बिशपने या कामासाठी नेमलेल्या सीडल या डॉक्टराने चार फ्रान्सिस्कन सिस्टरांच्या मदतीने तिच्यावर २४ तास कडक नजर ठेवली. या १५ दिवसात ती जोगिणी शौचगृहाकडे एकदाही गेली नसल्याचे आढळून आले. या अवधीत तिला अंधोळीसाठी व चूळ भरण्यासाठी दिले जाणारे पाणी वजन करून मगच देण्यात येत असे व अंधोळीनंतर व चूळ भरल्यानंतर पुन्हा ते पाणी वजन करून पाहण्यात येत असे. अशी शास्त्रीय परीक्षा माणिक्यम्मा व गिरिबाला यांची घेतली गेलेली नाही असे कोणी म्हणेल. पण यापेक्षाही कडक चाचणीतून त्या दोघीही बाहेर आल्या आहेत हे विसरू नये. माणिक्यम्मा ७० दिवस सिमेंटने हवाबंद केलेल्या जागेत व कडक पोलिस पहाऱ्यात होती व गिरिबालेला बरदवानच्या महाराजांनी कुलूप घालून एकदा २ महिने, दुसऱ्या वेळी २० दिवस व तिसऱ्या वेळी १५ दिवस असे एकूण ९५ दिवस कायमच्या कुलूप-बंदिस्त खोलीत ठेवले होते. म्हणजे जर्मनीच्या जोगिणीला उपलब्ध करून दिलेल्या सोयीसुद्धा या भारतीय महायोगिनीना उपलब्ध नव्हत्या. या भारतीय योगिनींनी कधीच काही अन्न

खाल्ले नाही व पाणीही कधी प्यायल्या नाहीत. त्यामुळे त्यांना कधीच मलमूत्र विसर्जन करावे लागले नाही. पण थोरेसा न्यून दररोज सकाळी धार्मिक श्रद्धेस्तव एक नाण्याएवढा ब्रेडचा तुकडा खात असे. त्यामुळे तिला क्वचित शौचाला जावे लागे तथापि ती कधी पाणी प्यायली नाही. आठवड्यातून एकदा तिच्या हातावर व शरीराच्या इतर भागांवर आपोआप जखमा होत असत. (याविषयीचा मागे ६ व्या पोटमथळ्यात उल्लेख आला आहे.) त्यातून ९ पौंडाइतके रक्त जात असे. ते दोन दिवसात भरूनही निघत असे. ती खात असलेल्या अत्यल्प अन्नामुळे एवढ्या रक्ताची दोन दिवसांत भरपाई होणे शक्य नाही हे उघड आहे. त्यामुळे माणिक्यम्मा व गिरिबाला या भारतीय योगिनीप्रमाणेच तिचे उदाहरणही रूढ विज्ञानाला एक मोठे आव्हान ठरते.

दोन दिवसात थोरेसाचे वजन ९ पौंडांनी वाढत असे. (व सांडलेले रक्त भरून निघत असे.) पण योगानंदांचे गुरू युक्तेश्वर यांचे वजन एका दिवसात ५० पौंडांनी वाढल्याची घटना स्वतः युक्तेश्वरांनी सांगितल्याचे योगानंदांनी आपल्या आत्मचरित्रात लिहून ठेवले आहे.<sup>६३</sup> हा अल्पावधीत एकदम इतके वजन वाढण्याचा भौतशास्त्राच्या नियमात न बसणारा प्रकार, वर्षानुवर्षे अन्नपाण्याशिवाय जगण्याच्या प्रकाराप्रमाणे, दैवी 'चमत्कार' नसून अध्यात्मशास्त्राच्या नियमानुसारच तो घडतो, हे 'मनुष्य देह नाही, आत्मा आहे' या सूत्राखाली केलेल्या विवेचनावरून वाचकांना स्पष्ट होईल. यात मानवी मनाचे पात्र निर्णायक महत्त्वाचे आहे. युक्तेश्वरांचे वजन एका दिवसात ५० पौंडांनी वाढले ते त्यांचे गुरू लाहिरीमहाशय यांनी त्यांना मागे उल्लेख केल्याप्रमाणे, 'मानवी मनातील विचार बीज किंवा गुरुत्वाकर्षणप्रमाणेच एक शक्ती किंवा बल आहे. मानवी मन म्हणजे त्या सर्वसमर्थ जगच्चालक विश्वमनाचा एक स्फुल्लिंग आहे. तुला मी हे दाखवून देऊ शकतो, की प्रबळ श्रद्धेच्या जोरावर तू मनात जे आणशील ते क्षणात घडून येईल.' असे युक्तेश्वरांना सांगितल्यानंतर व 'मी आजारी आहे' ही भावना काढून टाकून स्वतःमध्ये बलवान असल्याची भावना रुजवण्यास बजावल्यानंतर, हे येथे लक्षात ठेवले पाहिजे. त्यानंतरच आजाराची तक्रार करण्याच्या युक्तेश्वरांचे वजन एका दिवसात ५० पौंडांनी वाढले ! हा वास्तविक कठोपनिषदातील 'मनुष्य हा देह नाही, आत्मा आहे' हे 'एतद्वै तत्' ('तेच हे आत्मतत्त्व ज्याच्याविषयी तू विचारत होतास') या यमाने नचिकेतास सांगितलेल्या सूत्रात व्यक्त केलेले तत्त्व प्रत्यक्षात उतरवून दाखवलेला शास्त्रीय प्रयोगच आहे. हा प्रयोग करायला सांगणारे गुरू म्हणजे लाहिरीमहाशय, तो प्रत्यक्ष करून अनुभव घेणारे त्यांचे शिष्य म्हणजे युक्तेश्वर, आणि तो नोंद करणारे योगानंद, यांनी असे इतरही अनेक प्रयोग केले आहेत. ते सर्व अध्यात्मशास्त्रातील तत्त्वे प्रायोगिक तपासणीनी सिद्ध करणारे आहेत. वरील प्रयोगानंतर काही तासांनी युक्तेश्वरांनी

आपले वजन करून खात्री करून घेतल्याचे म्हटले आहे. हे आध्यात्मिक वा 'आत्म-तत्त्व' मानवी मनातून कार्य करीत असल्यामुळे मन नेहमी प्रसन्न ठेवणाऱ्याला 'ईश्वर'ही प्रसन्न होतो. सर्व सिद्धी त्याच्यापुढे हात जोडून उभ्या राहतात. म्हणून तुकाराम म्हणतात, 'मन करा रे प्रसन्न सर्व सिद्धीचे कारण.' मन हाच गुरू, मन हेच बंध-मोक्षास ठरणारे कारण असे म्हणून शेवटी ते 'नाही नाही आनंद, तुका म्हणे दुसरे' असे 'साधक, वाचक, पंडित, श्रोते, वक्ते' या सर्वांना बजावतात. अशा रीतीने ज्याला सामान्य लोक 'दैवी' 'चमत्कार' म्हणतात, तो वास्तविक 'मानसिक' 'चमत्कार'च असतो ! खरे पाहता तो 'चमत्कार' मुळीच नसतो, तर मानवी मन, जे तुकारामांच्या शब्दात माणसाचे 'दैवत' आहे व लाहिरी महाशयांच्या शब्दात 'त्या सर्वसमर्थ जगच्चाळक विश्वमनाचा एक स्फुल्लिंग' आहे, त्या विश्वमनाशी जोडल्या गेल्यामुळे वैश्विक नियमानुसार घडून आलेला तो आध्यात्मिक (वैश्विक) परिणाम असतो - जो भौतशास्त्राच्या चौकटीत-भौतिक नियमात घडून येत नसल्यामुळे भौतशास्त्रज्ञ खोटा म्हणतात व सामान्य लोक 'दैवी चमत्कार' समजतात. हा 'चमत्कार' नसल्याचे, आध्यात्मिक (वा आत्म) तन्म मानवी मनातून कार्य करीत असल्यामुळे घडून येणारा तो परिणाम असल्याचे भूतपूर्व रशियन संघराज्याच्या कम्युनिस्ट राजवटीखालील एका शास्त्रज्ञानेच प्रत्यक्ष प्रयोगाने दाखवून दिले आहे. लाहिरी महाशयांच्या सल्ल्यानुसार जे युक्तेश्वरांनी स्वतः करून दाखवले, ते या शास्त्रज्ञाने इतरांवरील प्रयोगाने करून दाखवले आहे. तो प्रयोग असा :

झेकोस्लोव्हाकियाच्या ब्रेटिस्लाव काफ्का या अतींद्रिय संशोधकाने दुसऱ्या महायुद्धाच्या काळी केलेला हा प्रयोग आहे. त्याने एका माणसाला संमोहनाच्या प्रभावाखाली नेले व एका खोलीत तीन आठवडे त्याच अवस्थेत बंदिस्त करून ठेवले या तीन आठवड्यात त्या माणसाला कसलेही अन्न देण्यात आले नाही. मात्र तो माणूस सफरचंदाच्या बागेत असून तो त्यातील झाडांचे सफरचंद तोडून खात असल्याच्या सूचना काफ्का या तीन आठवड्यात वरचेवर त्याला देत असे. आणि तो माणूस ते 'सफरचंद' अगदी आवडीने 'खात'ही असे. तो प्रत्यक्षात काही खात नसल्यामुळे या तीन आठवड्यात त्याला शौचगृहाला कधी जावे लागले नाही. तथापि प्रयोगाच्या शेवटी तीन आठवड्यानंतर त्याचे वजन करून पाहता ते प्रत्यक्षात वाढल्याचे आढळून आले !<sup>६३</sup>

मानवी मन म्हणजे मेंदूव्यतिरिक्त काही नाही असे म्हणणाऱ्या भौतिकवादी शास्त्रज्ञांच्या डोळ्यात अंजन घालणारा हा प्रयोग आहे. या प्रयोगामुळे मानवी मनाचे स्वतंत्र अस्तित्व भौतिकवाद्यांना मान्य करावे लागतेच, पण त्याचे आध्यात्मिक दृष्ट्या महत्त्वही मान्य करावे लागते. एरव्ही काही अन्न न खाता शरीराचे वजन वाढण्याची उपपत्ती ते कशी देणार आहेत? हा नियंत्रित प्रयोग माणिक्यम्मा,



गिरिबाला आणि थेरेसा यांच्या अन्नपाण्याशिवाय वर्षानुवर्षे जगण्याच्या अघटित घटनाप्रकाराला शास्त्रीय अधिष्ठान प्राप्त करून देतो. मानवी जीवनात आढळून येणाऱ्या सर्व (अशक्य कोटीतल्यासुद्धा) 'चमत्कारां'च्या बुडाशी मानवी मनाचे हे आध्यात्मिक सामर्थ्यच - आध्यात्मिक जगाचे नियमच - ज्यांना the subtle laws that operate in the inner cosmos of consciousness (वैश्विक नियमानुसार कार्य करणारे मानवी मनातील सूक्ष्म नियम) असे योगानंदांनी म्हटले आहे - ते नियमच आहेत, हे सिद्ध करणारा हा शास्त्रीय प्रयोग आहे. श्रद्धा, भक्ती, ईश्वरी प्रेम, संमोहन, काळी जादू (black magic), चेटूक, परचित्तज्ञान, भानामती, भविष्यज्ञान, आपोआप शरीरावर जखमा होणे (stigmata), शस्त्राने जखमा न होणे, अन्नपाण्याशिवाय वर्षानुवर्षे जगणे, न खाता वजन वाढणे हे सर्व मनाचेच - विश्वमनाच्या स्फुल्लिंगाचेच - गुणधर्म असून ते या दृश्य विश्वाच्या बुडाशी असलेल्या सर्वश्रेष्ठ आध्यात्मिक तत्त्वावर आधारले आहेत. त्या तत्त्वाला आपल्या ऋषिमुनींनी 'ब्रह्म', 'परतत्त्व', 'परमसत्य' असे म्हटले आहे. त्या परम सत्याच्याच सर्वश्रेष्ठ व सर्वसमावेशक नियमानुसार हे दृश्य विश्व चालत असून त्याच्या सर्वश्रेष्ठ नियमाला त्यांनी 'ऋत' (Supreme law) या नावाने संबोधले आहे. हे 'ऋत' भौतशास्त्रांच्या भौतिक प्रयोगांनी मात्र कधीच ज्ञात होत नाही. ते 'ऋत' भौतिक प्रयोगांनी समजावून घेण्याचा प्रयत्न करणे म्हणजे पाण्यातील चंद्राचे प्रतिबिंब जाळ्यात पकडण्याचा प्रयत्न करणे होय. पण ते सापडत नाही म्हणून चंद्र खोटा ठरत नाही. तसे भौतिक प्रयोगाने त्या तत्त्वाचे सत्यत्व प्रस्थापित करता येत नाही म्हणून ते तत्त्व खोटे ठरत नाही. ते खोटे म्हणणाऱ्यांना वरीलसारखे अशक्य कोटीतील 'चमत्कार' ते तत्त्व खरे असल्याचे दाखवून देण्यासाठी निसर्गाने उपलब्ध करून दिलेले भौतिक पुरावेच आहेत. अन्नाशिवाय जगणे हा जैविक पुरावा असला तरी भौतिकच आहे. पण पुढील पुरावा शुद्ध भौतिक आहे.

### तेलाशिवाय २१ वर्षे जळणारे तीन कंदिल

कारवार जिल्ह्यात हुबळी-शिरसी रस्त्यावर मुंडगोड हे तालुक्याचे गाव असून तेथून ६ किलोमीटर अंतरावर चिगळळी नावाचे एक लहान खेडे आहे. या खेड्यात जन्मलेल्या शारदाबाई हिचे शिवमोग्याच्या (जि. हासन) अण्णाप्पा दैवज्ञ यांच्याशी विवाह झाला. हिला एक लहान भाऊ होता. त्याला दोन मुले होती. एक मुलगा व्यंकटेश व एक मुलगी नागरत्ना. तो मेल्यामुळे त्यांचे संगोपन करण्यासाठी व स्वतःला मुले नसल्यामुळे शारदम्मा व अण्णाप्पा दोघेही नवराबायको शिवमोग्याहून चिगळळीला येऊन राहिले. अण्णाप्पा चहाचे हॉटेल चालवत होता. पुढे त्याचाही मृत्यू झाला व शारदम्मा या एकटीवर भावाच्या मुलांची व स्वतःच्या चरितार्थाची

जबाबदारी येऊन पडली. हॉटेल बंद पडले व ती शेतीची मजुरी करून चरितार्थ चालवू लागली. तिच्या घरासमोर एक कल्मेश्वर (हे एक मोठे सत्पुरुष होऊन गेले) यांचा मठ असून त्या मठात शिशुनाळ शरीफ शिवयोगी यांच्यावर एक स्वामी एकदा प्रवचन देत होते. शारदम्मा ते प्रवचन ऐकण्यास अत्यंत भक्तिभावाने तेथे नेमाने जात असे. प्रवचनाच्या १७ व्या दिवशी स्वामींनी १० लोकांना अन्नदान केले तर गरिबी जाऊन शिवाय पुण्य प्राप्त होते असे सांगितले. तिच्या मनात १० लोकांना अन्नदान करण्याची तीव्र इच्छा निर्माण झाली. पण गरिबीमुळे व दुकानात तिला कोणी उधारीने धान्य न दिल्यामुळे ती आपली इच्छा पूर्ण करू शकली नाही व अतिशय खिन्न झाली. तशाच खिन्न मनाने ती प्रवचनाला गेली. जाण्यापूर्वी दोन मुले अधारात झोपतील म्हणून घरातील एक लहान (चिमणा) कंदिल तिने थोडे रॉकेल घालून लावून ठेवला. ती मध्यरात्री प्रवचनाहून परत आल्यानंतरही तो तसाच जळत होता. ती तशीच झोपी गेली. पहाटे तिला एक स्वप्न पडले. त्या स्वप्नात एकदम डोळे दिपवणारा विजेचा लखलखाट झाला व गडगडाटाचा आवाजही झाला. त्यामध्ये एक विमान घरात उतरल्याचे दृश्य तिला दिसले, व ती एकदम जागी झाली. तो कंदिल अजूनही जळत असल्याचा तिला दिसला. तो विझवण्याचा तिने प्रयत्न करताच विजेचा धक्का बसावा तसा धक्का तिला बसला व तिने तो विझवण्याचा प्रयत्न सोडून दिला. ही १९७९ ची घटना. तेव्हापासून तो कंदिल आजतागायत तसाच जळत आहे.

नंतर १९८० साली घरच्या उपयोगासाठी तिने आणखी एक कंदिल आणून लावला. तो कंदिलही विझला नाही. त्या कंदिलात पहिल्या कंदिलाप्रमाणे साईबाबा व इतर देवता दिसत असत. तिने मग तोही कंदिल पहिल्या कंदिलाजवळ देव्हान्यावर पूजेत ठेवून दिला. आणि तिसरा कंदिल आणून लावला. तोही जेव्हा विझला नाही तेव्हा मात्र ती घाबरली व तिने पुन्हा कंदिल लावला नाही. ते तिन्ही कंदिल तिने देव्हान्यावर ठेवून दिले. हे तीनही कंदिल एकाच तऱ्हेचे असून त्यांच्या ज्योतीचा रंग सूर्योदयापासून सूर्यास्तापर्यंत बदलत जातो. संध्याकाळी-सकाळी तांबड्या रंगाची असलेली ज्योत दुपारी जास्त तेजःपुंज बनते. (विशेषतः मधल्या कंदिलाची.) एकदा ही मधल्या कंदिलाची ज्योत एकदम जास्त मोठी झाली. इतकी की ती कंदिलाच्या बाहेरही आली. अशा रीतीने ती एक संपूर्ण दिवस जळत असल्याची गावातील अनेक लोकांनी पाहिली आहे. त्या घरापासून थोड्या अंतरावर राहणारे गावचे प्रमुख श्री. महालिंगप्पा ईराप्पनवर यांनीही ही घटना पाहिली असून तेच या कंदिलांचा अथवासून इतिपर्यंतचा वृत्तांत जाणणारे व त्यांचा अभ्यास केलेले गावातील प्रमुख नागरिक आहेत.<sup>१४</sup>

आजपर्यंत या कंदिलांची अनेकांनी तपासणी केली आहे. यामध्ये लिंगायत

स्वामीपासून बुद्धिवादी व विज्ञानवादी यांच्यापर्यंत सर्व तऱ्हेचे लोक आहेत न विझणारे कंदिल म्हणून त्याची ख्याती सर्वदूर पसरल्यामुळे लांबूनही लोक आले आहेत. एकदा गुलबर्गाचा विज्ञानसंघ मुद्दाम तपासणीसाठी आला होता. त्यांनी तसलाच एक कंदिल लावून तेथे ठेवला व ते रात्रदिवस तेथे बसून राहिले. त्यांचा कंदिल दुसरे दिवशी विझला. पण हे तीन कंदिल तसेच जळत होते. ते दोन दिवस तसेच बसून राहिले. सकत पहारा ठेवला. पण त्या कंदिलांचा प्रकाश तसाच अखंड होता. एक कंदिल २१ वर्षे जळत आहे व दुसरे दोन कंदिल १९८० पासून २० वर्षे - जळत आहेत. त्यामध्ये प्रारंभी शारदम्माने एकदा तेल घातले होते तेवढेच. त्यानंतर ते उचलून पाहून त्यांची पाइपने वा इतर कशाने कुठे संबंध नसल्याचीही अनेकांनी खात्री करून घेतली आहे. कंदिलात बोट घालूनही अनेकांनी आतून ते मोकळेच असल्याची खात्री केली आहे. म्हणजे ते तेलावर जळतच नसल्याची खात्री झाली आहे. म्हणूनच इतकी वर्षे जळूनही त्यांचे ग्लास तुलनेने स्वच्छ आहेत. अतिशंकेखोरांनी त्यांची नाना तऱ्हेने परीक्षा घेतल्यामुळे फजीत झाल्याचे, त्यांना बराच शारीरिक त्रास नंतर झाल्याचेही सांगण्यात आले आहे. (प्रस्तुत लेखकाकडे असा त्रास झाल्याचे मान्य करणाऱ्या स्वतःच्या हस्ताक्षरात 'शारदाबाई दीपगळ संरक्षणा समिती (रि)'ला लिहिलेल्या एका खासगी पत्राची झेरॉक्स प्रत आहे.)

धारवाडजवळील ॐ मठाच्या शिवयोगीद्र स्वामींनीही त्यांची परीक्षा केली असून यात मंत्रतंत्र वगैरे काही नसल्याचा त्यांनी निर्वाळा दिला आहे. तीन वर्षे हिमालयात तपश्चर्या करून आलेले हे स्वामी हिमालयात मला न भेटलेला परमेश्वर या गरीब साध्वीच्या खोपटात प्रकट झाला आहे, असे म्हणून तिच्यापुढे नतमस्तक होऊन तिच्या आशीर्वादाची त्यांनी याचना केली आहे. तिला आपल्या मठात नेऊन तिचा २ हजार लोकांच्या सभेत सत्कारही केला आहे. तिच्या हातून आपल्या मठात दीप प्रज्वलित केले. पण २-३ दिवसांत ते विझले यावरून या चिगळीच्या ३ कंदिलांच्या पाठीमागे स्थान-महात्म्य असल्याचे सिद्ध होते. उडपीजवळील पडुबिंद्री शर्मा या ज्योतिषविद्यापारंगत व आध्यात्मिक स्वामीना धर्मस्थळाच्या वीरेद्र हेगडे यांच्या सल्ल्यावरून चिगळी गावचे प्रमुख महालिंगप्पा ईरण्णावर व इतर ग्रामस्थ यांनी या कंदिलाच्या रहस्याविषयी विचारले असता शारदम्मा राहत असलेल्या ठिकाणी तीन महातपस्वी साधूंनी जिवंत समाधी घेतली असल्याचे त्यांनी सांगितले. १९९४ साली शारदम्मा वारल्या व नंतर त्यांनी वरीलप्रमाणे सांगितले होते. अधिक काही शारदम्मा सांगू देत नाहीत असे ते म्हणाले. (त्यांनी न विचारता त्या जाग्याचे वर्णन बरोबर केले होते व शारदम्मा मोठी साध्वी स्त्री असून भविष्यात हे स्थान आपोआप प्रसिद्ध पावणार असल्याचेही त्यांनी सांगितले.) नंतर शारदम्मा तेथे हल्ली वास करीत असल्याचे पुन्हा सांगितले व त्यांच्या सल्ल्यानुसार आता तेथे

अन्नदान, भजनगृह व पाठशाळा याकरिता व त्या तीन कंदिलांची ब्रह्मा, विष्णू, महेश म्हणून पूजा करण्यासाठी पूजागृह बांधण्याचे काम चालू झाले आहे. १० लाख रुपयांची ही योजना असून तिचा शुभारंभ २५ नोव्हेंबर १९९९ रोजी झाला आहे. कंदिल असलेली जागा तशी शाबूत ठेवली असून तिच्याभोवती तात्पुरते छोटे प्लायवूडचे संरक्षण उभे केले आहे.

या स्थानाबद्दलचे इतरही अनेक 'चमत्कार' ऐकावयास मिळाले. हुबळीतील कॅनरा बँकेचे एक कर्मचारी हासनचे राजेश्वरराव यांनी व हुबळीचे मंजुनाथ दैवज्ञ यांनी 'शारदाबाई दीपगळ संरक्षणा समिती (रि.)' निर्माण करून या कामाची जबाबदारी कशी शिरावर घेतली, नव्हे त्यांना ती घ्यावी लागली, यासंबंधीचे आपले 'चमत्कार' युक्त अनुभव प्रस्तुत लेखकाला सांगितले आहेत. ते त्यांचे वैयक्तिक अनुभव असल्यामुळे ते येथे देत नाही. (पण एवढे मोठे आर्थिक जबाबदारीचे काम कोणी सुखासुखी शिरावर घेणार नाही हे लक्षात घेता व त्याचा या जागेशी वा गावाशी पूर्वीचा कसलाही संबंध नव्हता, ही वस्तुस्थिती पाहता त्यांचे अनुभव वैयक्तिक असले तरी खोटे आहेत असे म्हणण्याचे धाडस होत नाही.) दोन चमत्कार मात्र सार्वजनिक व म्हणून विश्वसनीय असल्यामुळे येथे वाचकांना सांगतो

पहिला 'चमत्कार' शारदाम्मा असताना घडला. त्या स्वतः गणपतीच्या मूर्ती करून गणेशचतुर्थीला विकत असत. त्यापैकीच एक स्वतःसाठी बनवीत असत व त्याचे विसर्जन करीत असत. पुढे त्यांच्या डोळ्यांना दिसेनासे झाले व त्यांचे ऑपरेशन करावे लागले पण ते अयशस्वी झाले. दुसरे केले. तेही अयशस्वी झाले. तिसऱ्यांदा केले तरी काही सुधारणा दिसून येईना. एवढ्या अडचणीतही त्यांनी गणपतीच्या मूर्ती करण्याचे बंद केले नव्हते. पण शेवटी त्यांनी एका वर्षी हा आपला शेवटचा गणपती असे म्हणून त्यांनी गणपतीची मूर्ती करून आपल्या देव्हान्यावर ठेवली. पण विसर्जनाच्या दिवशी तो गणपती उचलेच ना. हा चमत्कार पाहून त्या मग त्याचे विसर्जन न करता तेथेच ठेवून त्याची पूजा करू लागल्या. त्यानंतर त्यांनी गणपती केला नाही. तोच गणपती हल्ली तेथे आहे. (गणपती न उचलता येण्याचा चमत्कार अन्यत्रही महाराष्ट्रात पूर्वी घडला आहे.)

दुसरा 'चमत्कार' शारदाम्मा वारल्यानंतर घडला आहे. त्यांची नात नागरत्ना व नातू व्यंकटेश याला त्या कंदिलांची जबाबदारी सांभाळणे व चरितार्थासाठी काही काम करणे या दोन्ही गोष्टी जमेनात, म्हणून एखाद्या देवस्थानला ते कंदिल देण्याचा त्यांनी निर्णय घेतला. त्यांचा चिगळी गाव सोडून दुसरीकडे चरितार्थासाठी जाण्याचा विचार होता. यावेळी शारदाम्मा हिची आकाशवाणी झाली की, 'हे कंदिल तुम्ही कोणालाही देऊ नका. तुम्हीच त्यांचे संरक्षण करा. पुढे हे ठिकाण प्रसिद्ध होणार आहे. कंदिल दिले तर कोणाचेही कल्याण होणार नाही. तुम्हालाही त्रास होईल.' ही

आकाशवाणी वरचेवर झाल्याचे सांगण्यात येते. त्यानंतर त्यांनी आपला विचार सोडून दिला व तसेच कष्टमय जीवन जगत राहिले (प्रस्तुत ग्रंथातील प्रकरण ९ मध्ये अशा आकाशवाणीची अन्य उदाहरणे दिली आहेत.)

असा हा चिगळ्ळीचा ३ कंदिलांचा अद्भुत इतिहास आहे. भौतविज्ञानाला आव्हान ठरणारा.

विज्ञानातील गतिविषयक न्यूटनच्या नियमाप्रमाणे उष्णता (किंवा शक्ती) विषयीही नियम आहेत. त्यातील पहिला नियम conservation of energy (शक्तीचे अविनाशित्व) या नावाने ओळखला जातो. लौकिक भाषेत There is no free lunch (फुकट जेवण मिळत नाही) या शब्दात तो व्यक्त केला जातो. कोणतेही कार्य भौतिक शक्ती खर्च केल्याशिवाय होत नाही, असा त्याचा अर्थ आहे. पृथ्वीवरील सर्व घडामोडींना सूर्यापासून शक्ती मिळते. विश्वात असे अज्जावधी सूर्य आहेत. त्यांना मुळात कुठून शक्ती मिळाली? आधुनिक विश्वोत्पत्तीशास्त्रानुसार (cosmogony) सुमारे १५ अब्ज वर्षांपूर्वी झालेल्या महास्फोटापासून ती मिळाली. हा महास्फोट (big bang) शून्यातून झाला असे आधुनिक क्वांटम गुरुत्वाकर्षणाचा (सापेक्षता) सिद्धांत सांगतो. (याला Quantum Gravity ची कल्पना म्हणतात.) शून्यातून एवढी प्रचंड शक्ती कशी निर्माण झाली या प्रश्नाचे उत्तर तात्त्विक दृष्ट्या क्वांटम गुरुत्वाकर्षणाचा सिद्धांत देत असला, तरी या दोन्हीचे (क्वांटम सिद्धांत आणि गुरुत्वाकर्षणाचा सापेक्षता सिद्धांत यांचे) अजून लग्न झालेले नाही. (म्हणजे त्यांच्यात गणिती संबंध प्रस्थापित झालेला नाही.) थोडक्यात, शून्यातून एवढी शक्ती कशी निर्माण झाली या प्रश्नाचे भौतशास्त्राजवळ तात्त्विक उत्तर असले तरी व्यावहारिक (गणिती) उत्तर नाही ! आणि ते असणार नाही हे ज्ञानेश्वरांनी पूर्वीच सांगून ठेवले आहे, ते पुढील ओवीत : 'आंबुला आंबुलिये । संगती ना सोये । की आंबुली जग विये । चोज ऐके ।।' (ज्ञाने. १३.९७९) या ओवीचा अर्थ असा - 'नवरा बायकोंचा संबंध नाही तरी बायको जग प्रसवते हा चमत्कार ऐका.' मागे खुद्द भौतशास्त्रच 'चमत्कारा'च्या कल्पनेवर आधारले असल्याचे स्पष्ट केले असून विश्व शून्यातून निर्माण झाल्याच्या सिद्धांताचाही उल्लेख केला आहे. ज्ञानेश्वरांनी विश्वोत्पत्ती मुळात शून्यातून झाली असल्याचे स्पष्ट म्हटल्याचाही उल्लेख केला आहे. (त्यांचे मूळ शब्द 'मूळ ते शून्य' असेच आहेत. ४७ क्रमांकाची टीप पाहा.) नवऱ्याच्या संबंधाशिवाय 'बायको' प्रजोत्पत्ती करीत असेल तर 'नवरा' कशाला पाहिजे, असा येथे प्रश्न निर्माण होतो. हा प्रश्न विचारणाऱ्या विचारसरणीलाच 'बुद्धिवाद' किंवा 'भौतिकवाद' म्हणतात. 'बायको'चा 'नवऱ्या'शी प्रत्यक्ष संबंध येत नसला तरी तिचे 'नवऱ्या'शिवाय चालत नाही - तिला प्रजोत्पत्ती करता येत नाही - ही वस्तुस्थिती असून (ती अर्थात आध्यात्मिक वस्तुस्थिती आहे, भौतिक नाही) ती

मान्य करणे या भौतिकवादी शास्त्रज्ञांच्या जिवावर आले असल्याचे गेली पाउणशेहे वर्षे क्वांटम सिध्दांताविषयी भौतविज्ञानात जो वाद चालला आहे त्यावरून स्पष्ट होते. (हा वाद क्वांटम सिध्दांताला प्रथम विरोध करून आईन्स्टाइनने भौतविज्ञानात सुरु केला; व १९८२ साली त्याचा निकाल प्रत्यक्ष प्रयोगाने लागून आईन्स्टाइनचे व त्याच्या पाठीमागे जाणाऱ्या बुद्धिवाद्यांचे सर्व युक्तिवाद फोल ठरले.)<sup>६५</sup>

विश्वोत्पत्तीच्या क्षणी आईन्स्टाइनचा गुरुत्वाकर्षणाविषयीचा सापेक्षता सिध्दांत कोलमडतो हे सर्व भौतशास्त्रज्ञ मान्य करतात. याचा अर्थ असा की गुरुत्वाकर्षण शक्तीला (बायकोला) क्वांटम सिध्दांताचा (नवऱ्याचा) आधार घेतल्याशिवाय विश्वोत्पत्ती करता येत नाही. मग भले तिचा त्या सिध्दांताशी 'प्रत्यक्ष' (गणिती) संबंध न येवो.<sup>६६</sup> ज्ञानेश्वर म्हणतात तो नवऱ्याच्या संबंधाविना बायकोची हीच प्रजोत्पत्ती (विश्वोत्पत्ती) असून तो 'चमत्कार' अध्यात्म शास्त्राच्या दृष्टीने मुळीच 'चमत्कार' नाही, तर तो अध्यात्मशास्त्रातील विश्वोत्पत्तीचा मूलभूत नियमच आहे. (मया अध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् । - मी साक्षीरूपाने समोर असल्यामुळेच प्रकृती जग प्रसवते - या शब्दात गीतेने तो नियम सांगितला आहे.) हा अध्यात्मशास्त्राचा नियम गणितात (किंवा गणिताच्या आधारे भौतिक वस्तूत) सर्व गोष्टींची उपपत्ती शोधणाऱ्या भौत शास्त्रज्ञांना अर्थातच मान्य होणार नाही. पण मग अन्न पाण्याशिवाय वर्षानुवर्षे जगणाऱ्या व्यक्ती कुठून शक्ती मिळवत होत्या व तेलाशिवाय वर्षानुवर्षे जळणारे कंदील कुठून ऊर्जा संपादन करीत होते ह्यांची उपपत्ती गणिताने (वा गणितावर आधारलेल्या भौतिक सिध्दांताने) ते कशी देणार ? (ती देता येत नाही म्हणून तर हे 'चमत्कार' ते खोटे म्हणतात किंवा त्यात लबाडी असल्याचा (खोटा) आरोप करतात ! ) पण मग शून्यातून विश्वाची उत्पत्ती झाली म्हणणारा (क्वांटम ग्रेव्हिटीचा व आता नवा स्ट्रिंगचा) सिध्दांत ते कसा काय मांडतात, हा प्रश्न आहे. हा 'चमत्कार' नसेल तर अन्नपाण्याशिवाय वर्षानुवर्षे मनुष्य जगणे किंवा तेलाशिवाय वर्षानुवर्षे कंदील जळणे हाही 'चमत्कार' नाही ! आणि (शून्यातून विश्वात्पत्ती) याला 'चमत्कार' च त्यांना म्हणावयाचे असेल तर सर्वच भौतिक शास्त्र 'चमत्कारा' वर ('जादू' च्या क्वांटम सिध्दांतावर) आधारले असल्याचे व्हीलरचे म्हणणे त्यांना मान्य करावे लागेल ! पण वस्तुतः खरा 'चमत्कार' नवऱ्याशिवाय बायको प्रजोत्पत्ती करते (शून्यातून विश्व निर्माण होते) हा नसून प्रजोत्पादनासाठी नवऱ्याचा संबंध येत नसूनही (गुरुत्वाकर्षण शक्तीचा क्वांटम सिध्दांताशी गणिती संबंध नसूनही) 'तो' असल्याशिवाय 'ती' प्रजोत्पत्ती करूच शकत नाही, हा आहे ! यालाच गीता 'मयाध्यक्षेण' म्हणते.<sup>६७</sup> आईन्स्टाइन यालाच spooky connection (भुताटकीचा संबंध) म्हणतो.<sup>६८</sup> बुद्धिवादाचे अंतिम प्रश्नात काही चालत नाही - नैषा तर्केण मतिरापनीया । (कठ उप.) - तेथे

अध्यात्मशास्त्राचा निर्णयच अंतिम मानावा लागतो, त्याचेच तेथे साम्राज्य आहे, याचा हा साक्षात पुरावा आहे. [चिगळ्ळीच्या कंदिलांचे तेलाशिवाय जळणे ही 'भुताटकी' असेलही. कारण तेथे तीन तपस्व्यांनी जिवंत समाधी घेतल्याचे एका अतींद्रिय दृष्टीने पाहणारे सत्पुरुष सांगतात. पण 'विश्वाची शून्यातून उत्पत्ती' ही कोणती 'भुताटकी' ? ही कोणती 'भुताटकी' हे बृहदारण्यक उपनिषदाने - 'हे अनंत व अपार असे केवळ विज्ञानात्मक मोठे भूत आहे' - इदं महद्भूतमनन्तमपारं विज्ञानघन एव । (बृ. उप. २.४.१२) या शब्दात सांगितले असून यालाच वेदांती 'परब्रह्म' म्हणतात. गीतेतील 'मी विश्वोत्पत्तीला साक्षीरूप असतो.' (मयाध्येक्षण) असे म्हणणारा श्रीकृष्ण हेच ते 'महाभूत' अर्जुनासाठी (व भक्तासाठी) सगुण रूप धारण करणारे बनले असून तुकारामांनी त्यालाच 'पंढरीचे भूत' म्हटले आहे.<sup>१९</sup> आणि तुकारामांची शिष्या बहेणाबाई हिने आपल्याला हेच (ब्रह्मरूपी) 'भूत' लागले असल्याचे आपल्या 'भूत' या अभंगात म्हटले आहे.<sup>२०</sup> दृश्य भौतिक विश्वाच्या बुडाशी आध्यात्मिक तत्वाचे अधिष्ठान असल्याची वैज्ञानिक भौतिकवाद्यांना (scientific materialists) आणि बुद्धिवाद्यांना (rationalists) शंभर टक्के खात्री पटवून देणारा 'तेलाविना जळणारे कंदील' हा सार्वजनिक स्वरूपाचा भौतशास्त्रीय प्रायोगिक पुरावा (experimental evidence of physical science) आहे. तो पुरावा जगाला सादर करणाऱ्या प्रयोगाचे वैशिष्ट्य असे की तो एका अर्किचन विधवा बाईने आपल्या साध्या लहान घरात केवळ श्रद्धेच्या व भक्तीच्या बळावर करून दाखवला आहे. कोट्यवधी डॉलर्स खर्चून शेकडो मैल लांबीच्या अणुविदलनाच्या (accelerators) प्रचंड प्रयोगशाळातून अणूचे गुपित शोधणाऱ्या शास्त्रज्ञांच्या संशोधनाने तो सापडणारा (सापडलेला) नव्हे !]

**तेलाविना जळणाऱ्या दीपांची इतर उदाहरणे :-** हे तेलाविना जळणारे चिगळ्ळीचे कंदील केवळ अपवादात्मक आहेत, असे समजण्याचे कारण नाही. अशा प्रकारच्या तेलाविना जळणाऱ्या दीपांचे अनेक ऐतिहासिक दाखले असून प्रसिध्द इतिहासकार प्लुटार्क व प्लिनीपासून सेंट ऑगस्टाइन पर्यंतच्या बत्तीसहून अधिक व्यक्तींचे अशा तेलाविना जळणाऱ्या दीपांच्या सत्यत्वाबद्दलचे ऐतिहासिक दाखले मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांनी आपल्या Isis Unveiled या ग्रंथात दिले आहेत. यापैकी काही दीप थड्यातील प्रेताजवळ सुरक्षित अवस्थेत सापडले असल्याचे, तर काही प्रसिध्द देवतांच्या मंदिरात व चर्चमध्येही सार्वजनिकरित्या उघडपणे जळत असल्याचे दाखले आहेत. ख्रिश्चन चर्चमधील तेलाविना जळणारे दीप 'दैवी चमत्कार' आहेत, तर पाखड्याच्या (pagans) देवळातील तसलेच दीप ही भुताची (devil) करामत आहे, असे सेंट ऑगस्टाइनचे म्हणणे असल्याचाही उल्लेख (अर्थात् उपरोधिकपणे) त्या करतात. भारतात त्रावणकोर संस्थानातील त्रिवेंद्रम (आताचे

तिरुवनंतपुरम्) येथील एका देवळात एक तेलाविना १२० वर्षे जळणाऱ्या दीपाचा उल्लेख लंडन मिशनच्या रेव्हंड एस् मॅटीरने केल्याचाही त्यांनी दाखला दिला आहे. हे तेलाविना जळणारे दीप खोटे म्हणणाऱ्यांनी आम्ही असे दीप पाहण्यासाठी जसे कष्ट घेतले तसे कष्ट प्रथम घ्यावेत व मगच त्यांना खोटे म्हणावे, हे बजावण्यास मात्र त्या विसरत नाहीत ! अशा तेलाविना जळणाऱ्या दीपांच्या विषयी इजिप्शियनांची अशी श्रद्धा होती (विशेषतः थडग्यातील दीपांविषयी) की ते मृतात्म्याच्या आत्मिक बळावर जळतात व तो मृतात्मा अनंतात विलीन झाला की ते विझतात.”

‘मी साक्षीरूपाने समोर आल्यामुळेच प्रकृति जग प्रसवते’ (मायाध्यक्षेण प्रकृतिः स्रूयते) हा (शून्यातून विश्वोत्पत्ती कशी झाली हे सांगणारा) गीतेचा (अध्यात्मशास्त्राचा) नियम विश्वोत्पत्तीच्या वेळीच कार्यवाहीत होता, आता तो नाही, असे कसे म्हणता येईल? हा नियम-तो ‘नियम’ असल्यामुळे-आताही कार्यवाहीत असून ‘तेलाविना जळणारे कंदील’ ही त्याची हल्लीची उदाहरणे आहेत. पण ‘शून्यातून शक्ती निर्माण होते’ याची ‘तेलाविना जळणारे दीप’ किंवा ‘अन्नपाण्याविना जगणारी माणिक्यम्मा’ सारख्या व्यक्ती एवढीच उदाहरणे आहेत, असे समजण्याचे कारण नाही. अन्य प्रकारांचीही याची उदाहरणे असून तीही येथे देतो.

‘शून्यातून शक्तिनिर्मिती’ चे इतर प्रकार - श्री. सीताराम तुकाराम माने (रा. कोल्हापूर) हे चिलेमहाराजांचे एक अनन्य भक्त असून त्यांच्या पत्नी सौ. श्रीमंताबाई ह्या एकदा आजारी पडल्या. त्यांचा तो आजार बरेच दिवस झाले तरी बरा होईना. एके दिवशी अचानक चिले महाराज त्यांच्या घरी आले आणि श्री. मानेना म्हणाले, “गाडी आण जा. आत्ताच्या आत्ता रत्नागिरीला आईला घेऊन जायचं.” त्यांच्या आज्ञेनुसार मानेनी लगेच टॅक्सी आणली व पत्नीला उचलून टॅक्सीत मागच्या सीटवर झोपवले व महाराज व माने गाडीत बसले. गाडी गंगावेसच्या दिशेने निघाली. ड्रायव्हर मानेना म्हणाला, “गाडीत पेट्रोल कमी आहे. लांबचा प्रवास आहे. तेव्हा पंपावर पेट्रोल टाकून जाऊया.” चिले महाराज लगेच त्याला म्हणाले, “गाडी कुठेही थांबवायची नाही. गाडी थेट रत्नागिरीला न्यायची, तू गाडी चालव.” मानेही म्हणाले, “गुरुदेव सांगतात तर गाडी कुठेही थांबवू नका.” ड्रायव्हरची पंचाईत झाली. तो बेचैन झाला. गाडी बंद पडली तर काय करायचे या विवंचनेत, पण त्यांच्यापुढे त्याचे कांहीच चालेनासे झाल्यामुळे तो अस्वस्थ मनाने गाडी चालवत राहिला. गाडी आत्ता बंद पडेल, मग बंद पडेल असे मनात म्हणत तो गाडी चालवत होता, आणि शेवटी जेव्हा रत्नागिरीला विनापेट्रोल तो पोचला, तेव्हा त्याच्या आश्चर्याला पारावार राहिला नाही. शेवटी माने त्याला म्हणाले, “अहो ड्रायव्हर साहेब, तुमच्या गाडीत दत्तगुरु बसले आहेत. कसली काळजी करता ? अहो,



अनेकवेळा हे गाडीत बसलेले असतांना पेट्रोल शिवाय गाडी चाललेली आम्ही पाहिली आहे. <sup>१७२</sup>

येथे 'मयाध्यक्षेण' म्हणजे 'मी साक्षीरूपाने समोर असल्यामुळे' हे शब्द चिले महाराजांना अक्षरशः गीतेतील कृष्णाच्या जागी लागू होतात. ते 'दत्तगुरु' आहेत, ही मानेची श्रद्धा व त्यांच्यावरील भक्ती फलद्रुप झाली, असेही म्हणता येते. येथे श्रद्धा ही केवळ श्रद्धा नसून वस्तुनिष्ठ सत्य असल्याचे, पेट्रोल सतत शून्यातून निर्माण होत होते या भौतिक वस्तुस्थितीवरून सिध्द होते. शून्यातून चराचर सृष्टी निर्माण करणारी प्रकृती 'त्यांच्या' अध्यक्षतेखाली पेट्रोल का निर्माण करणार नाही? चिले महाराज गाडीत होते म्हणून हा 'चमत्कार' घडला हे 'वस्तुतः' खरे असले तरी 'तत्त्वतः' असे म्हणावे लागते की श्रद्धा व भक्ती असेल तर चिले महाराजांच्या भौतिक उपस्थितीशिवाय सुध्दा (शून्यातून शक्ति-निर्मितीचा) हा 'चमत्कार' घडू शकतो. कारण हा अध्यात्मविज्ञानाचा (श्रद्धेचा) शास्त्रीय नियम आहे. हे पुढील उदाहरणावरून स्पष्ट होईल. हे पुण्यातील प्रसिध्द डॉ. प.वि. वर्तक यांचे असून त्यांच्याच शब्दात ते देतो.

"१९७२ साली श्री गणेशोत्सवात माझे सोलापूरला व्याख्यान ठरले होते. २ सप्टेंबर १९७२ रोजी सकाळीच मी घरच्या गाडीने निघालो. कारण तेंव्हा आगगाड्या व राज्य वाहने यांचा संप होता. व्याख्यान आटोपून ३ सप्टेंबरला मी हैद्राबाद बघितले. ४ सप्टेंबरला माझ्या अँबेसिडर गाडीची टाकी पेट्रोलने पूर्ण भरून पुण्याकडे निघालो. पण वाटेत गाणगापूरचे दर्शन घेऊन जाण्याचे योजले होते. गुलबर्ग्यावरून माणिकप्रभूची समाधी बघून गाणगापूरकडे निघालो. वाटेत पेट्रोल संपत असल्याचे मीटरवर दिसले. पण गाणगापूरला मी पेट्रोल भरीन या आशेवर गाणगापूरला आलो. दर्शन घेतले. तेंव्हा लोक म्हणाले की आता संगमावर जाऊन या. माझ्या गाडीत तर पेट्रोल नव्हते. मीटरचा काटा 'E' च्याही खाली येऊन स्थिर झाला होता. म्हणून मी पेट्रोल पंप कुठे आहे ते विचारले. तेंव्हा कळले की गाणगापूरमध्ये पेट्रोल मिळत नाही. तेवढ्यात एक राज्य वाहनाची बस आली. मी त्या चालकास विचारले. तोही म्हणाला, 'येथे पेट्रोल नाही. जवळ जवळ म्हणजे ५० कि.मी.वर अक्कलकोट येथे मिळेल.' मी हादरलोच. मग मी दत्ताची प्रार्थना करून म्हटले की 'मुले गाडीत आहेत, येथे पेट्रोल नाही. हे संकट माझ्यावर का आणलेस ? मी आजपर्यंत तुझी भक्ती केली आहे. माणिकप्रभू तुझेच अवतार, गाणगापूर तुझेच स्थान, अक्कलकोटही तुझेच. मी तिकडे जाणार आहे माझी लाज राख. भौतिक प्रयत्न मी सगळे करीन. पण अक्कलकोट पर्यंत पोचव.' उतार आला की गाडी बंद करीत मी निघालो. मुखात दत्ताचे नाम होते. मीटरवर पेट्रोल पूर्ण

संपलेले दिसत होते. अशा स्थितीत मी अक्कलकोट गाठले. पंपावर गेलो. तेथे ४० लिटर पेट्रोल घातले. म्हणजे टाकी पूर्ण रिकामी होती हे निश्चित. मग गाडी कशी चालली? दैवी शक्तीच्या बळावर चालली हेच खरे. हा चमत्कार नाही का?

“पुण्यात आल्यावर माझ्या मित्रांना हा प्रसंग सांगितला. काही जण म्हणाले, ‘मीटर चुकीचा असेल....’ त्या शंकेचे निरसन करण्यासाठी पेट्रोल न भरण्याचे मी ठरविले. ‘त्या’ पातळीवर काटा येईपर्यंत पेट्रोल टाकणार नव्हतो. एकदा सायंकाळी ५-६ दरम्यान मला डेक्कन जिमखान्यावर व्हिजिटसाठी बोलावणे आले. म्हणून मी गाडी घेऊन निघालो. कमला नेहरू चौकाजवळ गाडी बंद पडली. मला काही कळेना. एक रिक्शावाला आपणहून थांबला. त्यालाही प्रथम काही कळेना. त्याने पेट्रोलची नळी काढली व मला स्टार्टर घायला सांगितले. मी दिला. तेव्हा तो म्हणाला, “साहेब, गाडीत अजिबात पेट्रोल नाही.” त्याच्याच रिक्षाने कर्वे पथावर जाऊन पेट्रोल गाडीत ओतले व गाडी चालू झाली. मीटरमध्ये दोष नव्हता हे सिध्द झाले. याचा अर्थ गाडीत पेट्रोल नसताना गाडी ५० कि.मी. चालली होती. ही दैवी शक्तीच होती यात संशय उरला नाही. हा एक चमत्कार नाही का?”<sup>१३</sup>

हा अर्थात् ‘दैवी चमत्कार’ नसून अतींद्रिय विज्ञानाच्या नियमानुसार घडणारी ती एक नैसर्गिक घटना आहे. सामान्य लोकांना - जे भौतिक विज्ञानावर (तेच खरे म्हणून) विश्वास ठेवतात त्यांना - तो ‘दैवी चमत्कार’ वाटतो.

### शस्त्र न चालू शकलेली बळीची बकरी

बेळगांव दै.तरुण भारत च्या जून ११, १९९० च्या अकात खालील बातमी प्रसिध्द झाली. (योग्य तो संक्षेप करून ती देत आहे.)

#### यालाच म्हणतात दैवी चमत्कार

भंडारकवठे (द.सोलापूर) - आज जगात देव आहे की नाही, हा प्रश्न शास्त्रज्ञांनासुध्दा पडत असला तरी दक्षिण सोलापूर तालुक्यातील टाकळी येथील जागृत देवता चौडेश्वरीने खरोखरचे आपले दैवी सामर्थ्य प्रकट करून स्वतःच्या यात्रेत केल्या जाणाऱ्या पशुहत्येला प्रतिबंध करण्याचा जणू साक्षात्कारी चमत्कार सिध्द केला आहे.

दि. २३ ते २५ मे दरम्यान टाकळीच्या चौडेश्वरीची यात्रा प्रतिवर्षाप्रमाणे यंदाही भरली होती. परंपरेनुसार यात्रेत देवीला जिवंत प्राण्याचा बळी देण्यासाठी एका निर्दयी पूजाऱ्याने बकरीला देवालयामोर उभे करून तलवारीने वार केले. कितीही वार केले तरी त्या बकरीला जीवनास मुकावे तर लागले नाहीच, पण शरीरावर कुठल्याही जखमा झाल्या नाहीत. या चमत्कारिक दैवी सामर्थ्यामुळे या

परिसरात आश्चर्यकारक 'चर्चा' चालू असून जिवंत असलेल्या त्या बकरीला पाहण्यास दूरदूरचे लोक येत आहेत.

वरील बातमी वाचून तिची शहानिशा करण्यासाठी प्रस्तुत लेखकाने टाकळी या गावाला प्रत्यक्ष भेट दिली. टाकळी हे सोलापूर-विजापूर महामार्गावरील द.सोलापूर तालुक्यातील एक लहान खेडे आहे. ज्या चौडेश्वरीची यात्रा दरवर्षी गावात भरते त्या देवीचे पूजारी जातीने कुंभार आहेत. देवीचे देऊळ फार भव्य नसून लहानच आहे. पूजारी कुंभारांची घरे देवीच्या मंदिराजवळच आहेत. मनिगेण कल्लाप्पा कुंभार (हल्ली वय ५५) यांच्या आजोबात देवीचा पूर्वी संचार होत होता. आजोबा वारल्यानंतर मनिगेणाचा मुलगा चेन्नाप्पा याच्या अंगात १२ व्या वर्षापासून देवी येऊ लागली, असे प्रस्तुत लेखकाला सांगण्यात आले. (आजोबांचा एक मोठा फोटो देवळात लावण्यात आला आहे.) देवीची शोभा यात्रा वैशाख अमावास्येला निघते. गाव प्रदक्षिणा करून यात्रा वेशीत येताच तेथे बकरीचा बळी देण्यात येतो पण इ.स. १९९० च्या यात्रेच्या वेळी वर बातमीत वर्णन केलेला 'चमत्कार' घडला, हे सत्य आहे. त्या बकरीच्या मानेवर चेन्नाप्पा बंदाप्पा कुंभार (वय ५२) याने कितीही वार केले तरी बकरीला साधी जखमसुद्धा झाली नाही. मग मुंडके तुटणे दूरच. हा 'चमत्कार' पाहणाऱ्या गावातील अनेक लोकांपैकी श्री. हनमंत बोदलाप्पा पाटील (वय ५५) हे सोसायटी चेअरमनही होते. मात्र हा 'चमत्कार' फक्त १९९० च्या यात्रेच्या वेळीच घडला आहे. नंतर यात्रेत बकरी बळी देण्याची प्रथा पूर्वीप्रमाणे सुरळीतपणे चालू आहे ! बातमीत म्हटल्याप्रमाणे देवी 'जागृत' आहे हे खरेच आहे. कारण तिनेच हा 'चमत्कार' करून दाखवला आहे. पण एकाच वर्षी (१९९० साली) तो का केला, व नंतर तो का केला नाही (ती झोपी का गेली), याचा शोध घेण्यासाठी पुन्हा त्या गावाला प्रस्तुत लेखकाने भेट दिली असता, त्याला असे आढळून आले की प्रथेनुसार दरवर्षी बळी देण्यासाठी देवीला बकरी देणाऱ्या धनगर कुटुंबाने त्या वर्षी (१९९० साली) आपली बकरी दिली नाही. म्हणून गावकऱ्यांनी स्वतः आपली बकरी दिली. पण देवीला हे मान्य नव्हते ! त्या गावकऱ्यांच्या बकरीला साधी जखमसुद्धा न होण्याचे हे कारण होते ! तिला इतरांची बकरी बळी घेणे मान्य नव्हते हे तिने हा 'चमत्कार' करून अशारीतीने दाखवून दिले ! ज्या धनगर कुटुंबाने आपली बकरी देवीला प्रथेनुसार त्यावर्षी दिली नाही त्या कुटुंबाला नंतर अनेक बकरी रोग वा अन्य कारणांनी मृत्यूमुखी पडून गमावण्याचा कटू अनुभव घ्यावा लागल्याचेही लेखकाला सांगण्यात आले. म्हणजे देवीने 'चमत्कार' केला हे खरेच. पण तो पशुहत्येचा निषेध म्हणून केलेला नसून ठराविक पशूचीच हत्या करावी म्हणून केला आहे ! नंतरच्या घटना ही गोष्ट सिध्द करतात. ठराविक बकरीसाठीच देवीचा हट्ट का हा महत्त्वाचा प्रश्न असून त्याचा विचार आपल्याला अतींद्रिय विज्ञानाच्या दृष्टीने

पुढे करावयाचाच आहे. हा 'चमत्कार' प्रत्यक्ष घडला व तो अशक्य कोटीतील असून अतींद्रिय पातळीवर घडला आहे, एवढेच यथे वाचकांनी लक्षात ठेवायचे आहे.

असाच एक 'चमत्कार' अकलकोटमध्ये स्वामी समर्थांच्या कृपादृष्टीमुळे घडला असून गोपाळबुवा केळकरांनी आपल्या 'स्वामी समर्थ' या बखरीत क्र. १३० मध्ये नोंदवला आहे. एका धिप्पाड कानफाट्याने एका ब्राह्मणाच्या मानेवर तलवार वाकेपर्यंत सपासप अनेक वार केले. गोपाळबुवा म्हणतात की पाच-सहा माणसांची ताकद असलेल्या त्या कानफाट्याच्या एका बुक्कीने तो ब्राह्मण मेला असता. पण तलवार वाकेपर्यंत व वाकलेली तलवार पुन्हा पायाने नीट करून त्या ब्राह्मणाच्या मानेवर त्याने त्या तलवारीचे दहा-पंधरा वार करूनही काही जखमा होण्यापलीकडे त्या ब्राह्मणास काही झाले नाही. स्वामींची नजर त्या ब्राह्मणाकडे सारखी होती. ही कृपादृष्टीच त्याला वाचवू शकली, असे गोपाळबुवांनी म्हटले आहे आणि ते अक्षरशः खरे आहे.<sup>५४</sup>

शस्त्र न चालण्याच्या 'चमत्कारा' ची साथ - अशाच प्रकारचा 'चमत्कार' पण सामूहिक प्रमाणावर व एका 'साथी' च्या स्वरूपात तब्बल वीस वर्षे घडत राहिल्याचे एक अनोखे प्रकरण १८ व्या शतकात युरोपच्या इतिहासात नोंद झाले आहे. ते प्रकरण इतकी वर्षे सतत घडत राहिल्यामुळे ते इतके गाजले की (त्यावर अनेकांनी प्रत्यक्षदर्शी इतिवृत्ते व अनेक ग्रंथ लिहिले आहेत) ते खोटे म्हणण्याचे धाडस नंतरच्या काळातील एकाही कट्टर संशयवाद्यालाही झालेले नाही. चमत्कार अशक्य आहेत अशी जाहीर तात्त्विक भूमिका घेणाऱ्या डेव्हिड ह्यूम या प्रसिध्द स्कॉटिश तत्त्ववेत्त्यालाही त्यांची सत्यता आपल्या 'Philosophical Essays' मध्ये पुढील प्रमाणे मान्य करावी लागली आहे. शारीरिक दोष व व्याधी बरे करण्यासारख्या अनेक 'चमत्कारां' चा उल्लेख करून ह्यूम पुढे म्हणतो, "But, what is extraordinary, many of the miracles were immediately proved upon the spot, before judges of unquestioned credit and distinction, in a learned age, and on the most eminent theatre that is now in the world..... such is historic evidence" (म्हणजे "या घटनांचे ऐतिहासिक पुराव्यांच्या दृष्टीने असाधारण वैशिष्ट्य म्हणजे यापैकी बरेच चमत्कार निर्विवाद विश्वासाच्या श्रेष्ठ न्यायाधीशांपुढे तत्काल व घटनास्थळीच खरे म्हणून सिध्द करण्यात आले असून हे जगातील सर्वश्रेष्ठ रंगभूमीवर व या ज्ञानसंपन्न युगात घडले आहे.") ह्यूमने उल्लेखलेली जगातील सर्वश्रेष्ठ रंगभूमी म्हणजे फ्रान्स मधील पॅरिस शहर होय.<sup>५५</sup>

या 'चमत्कारां' ची पार्श्वभूमी म्हणजे कॅथॉलिक ख्रिश्चनांच्या विरोधातील जान्सेनिस्ट पंथाची चळवळ होय. अँबे पॅरिस हा प्रसिध्द जान्सेनिस्ट संत इ.स.

१७२७ साली वारला आणि लगेच त्याच्या कबरीला भेट देणाऱ्या श्रद्धाळू जान्सेनिस्टांची एकच झुंबड उडाली. या जान्सेनिस्ट लोकांची शरीरे कप पावत असल्यामुळे त्यांना 'कंप पावणारे' (convulsionnaires) म्हणून संबोधण्यात येत असे. या कंपाच्या वेळी त्यांच्या ठिकाणी लोकांचे नाना तऱ्हेचे रोग व अंधत्वासारखे अनेक तऱ्हेचे शारीरिक दोष दूर करण्याचे अलौकीक सामर्थ्य निर्माण झाले होते. तसेच त्यांच्या शरीरावर कसल्याही प्रकारच्या शस्त्रांनी जखमा होत नसत व त्यांना वेदनाही होत नसत. या गोष्टींची अनेक संशोधकांनी त्यांच्यावर प्रयोग करून स्वतःची खात्री करून घेतली आहे. उदा. एका स्त्रीच्या पोटावर लोखंडी ड्रिल ठेवून त्यावर कितीही प्रहार केले तरी तिच्या पोटाला काही होत नसे एरव्ही अशा प्रहारांनी तिच्या पोटात ते ड्रिल घुसून आतडी फाटली असती. उलट ती स्त्री म्हणे, "बा! काय मजा येते! शक्य असेल तर याच्याही दुप्पट जोराने मारा." आणखी एका स्त्रीला जमिनीत पुरलेल्या अणुकुचीदार मेखेवर तिच्या उताण्या शरीराची कंबर टेकेल अशारीतीने तिला शरीराची कमान करून (उताणी) झोपवून तिच्या पोटावर दोरीला बांधलेल्या पन्नास पौंड वजनाचा दगड छताइतक्या उंचीवरून (छताला जोडलेल्या) चल कप्पीवरून कितीही वेळा आदळला तरी तिच्या पाठीच्या मेख टेकलेल्या कंबरेच्या जागी जखमेची साधी खूणही आढळत नसे. आपल्याला कसल्या वेदनाही होत नाहीत हे दर्शविण्यासाठी ती म्हणे, "जोराने, आणखी जोराने !" जीन मॉले नावाच्या एका वीस वर्षाच्या तरुणीला भिंतीला तिची पाठ टेकेल अशारीतीने उभे करून तिच्या पोटावर ३० पौंड वजनाच्या धनाने एका सशक्त माणसाने एक-दोन नव्हे, शंभर प्रहार केले. या प्रहारांचे सामर्थ्य किती आहे हे अजमावण्यासाठी माँतजेरॉ या पार्लमेंटच्या सभासदाने त्याच भिंतीवर जेव्हा असे प्रहार केले, तेव्हा एकविसाव्या प्रहारालाच भिंतीतील एक दगड निखळून पलिकडे पडला व भिंतीला एक लहान भगदाड पडले. पण अशा शंभर प्रहरांनीही त्या तरुणीला काही झाले नाही.<sup>५५</sup>

सतराव्या शतकाच्या शेवटी फ्रान्स मधील 'केमिसार्ड' या नावाने ओळखल्या जाणाऱ्या ह्यूगोनॉट पंथाच्या लोकांनीही असेच 'चमत्कार' करून दाखवले असल्याची फ्रान्सच्या दप्तरात नोंद आहे. हे लोकसुद्धा 'कंप पावणारे' (convulsionnaires) म्हणूनच प्रसिध्द आहेत. लाव्हालचा मठाधिपती अँबे चैला याने या केमिसार्ड लोकांचा नाना तऱ्हेने छळ केला. उदा. तेलात भिजवलेल्या कापसाने त्यांची शरीरे लपेटून ती तो पेटवून देत असे. पण त्या आगीच्या ज्वाळांनी त्यांच्या शरीरावर भाजल्याचा साधा फोडही उठत नसे. त्यांच्या अंगावर गोळ्या झाडल्या तर त्या त्यांच्या शरीरावरील कपडे व त्वचा यामध्ये सापडून चपट्या होत. जणू त्यांची त्वचा लोखंडाची बनली होती.<sup>५६</sup>

कोणाचाही विश्वास बसणार नाही असे हे 'चमत्कार' तीन गोष्टीमुळे घडून

येत होते. एक, अँबे पॅरिस या संताची कबर. (या संताच्या कबरीच्या परिसरातच व तेही कंपाच्या साथीने हे लोक पछाडले गेल्या नंतरच हे 'चमत्कार' घडत. केमिसाई लोकांचे श्रद्धास्थान बनलेल्या मिडाई या संताची कबरही त्याच ठिकाणी होती, हे लक्षात ठेवण्यासारखे आहे.) दोन, त्यांचा कॅथॉलिक ख्रिश्चनाकडून होणारा छळ. आणि तीन, त्या छळामुळे अधिकच तीव्र व दृढ झालेली त्या लोकांची आपल्या पंथावरील निष्ठा व भक्ती.

वर 'अशक्य कोटीतील' म्हणून ज्यांचे वर्णन केले आहे, त्या सर्व 'चमत्कारां' ची उपपत्तीही याच घटकांनी देता येते. उदा. अन्नपाण्याविना जगणाऱ्या माणिक्यम्मा व गिरिबाला या स्त्रियांचाही त्यांच्या सासरी असाच छळ होत होता. (अर्थात् मानसिक) आणि त्या छळामुळे त्यांची अधिकच तीव्र बनलेली ईश्वरनिष्ठा त्यांना अन्नपाण्याविना जगण्याचे सामर्थ्य देती झाली. सोने बावनकसी असल्याचे सिध्द करण्यासाठी त्याला अग्नीत घालावे लागते. त्या स्त्रियांना आपली ईश्वरभक्ती बावनकसी असल्याचे सिध्द करण्यासाठी सासरच्या छळरुपी अग्नीला तोंड द्यावे लागले आणि त्यात त्या पूर्ण उतरल्यामुळे त्यांना हे अन्नपाण्याविना जगण्याचे अलौकिक सामर्थ्य प्राप्त झाले. थरेसा न्यूमन या जोगिणीलाही हे सामर्थ्य प्राप्त झाले, ते सुध्दा एका तरुण पुरोहिताच्या घशाचा रोग आपल्या शरीरात आपणवून घेण्याइतकी तिची ईश्वरनिष्ठा तीव्र बनल्यामुळेच होय. छळ वा संकटे हे ईश्वरनिष्ठा तीव्र व दृढ करणारी साधने आहेत. मुख्य महत्त्व आहे ईश्वर-निष्ठेला.<sup>२२</sup>

तेलाशिवाय जळणाऱ्या तीन कंदिलांची उपपत्तीही याच घटकांनी देता येते. शारदाबाई राहत असलेल्या ठिकाणी तीन संतांनी पूर्वी महासमाधी घेतली होती असे आढळून येते. (पृ. २६७) म्हणजे तिचे घर हे सुध्दा (अँबे पॅरिस व संत मिडाई या संतांप्रमाणे) तीन संतांची एक कबरच होती. तसेच शारदाबाई एका सत्पुरुषाच्या मठात एका स्वामीचे पुराण श्रवण करण्यास नेमाने जात असे. ही गोष्ट तिच्या ईश्वरभक्तीची निदर्शक आहे. आणि गरीबीने तर तिचा पुरताच छळवाद मांडला होता. इतका की तिला दहा लोकांना अन्नदान करण्यासाठी हवे असलेले धान्य कोणाही दुकानदाराने उधार दिले नाही. अशा मानसिक छळाच्या रूपातील तिच्या संकटाच्या वेळी तिच्या ईश्वरभक्तीमुळे त्या संतांची अतींद्रिय शक्ती तेलाशिवाय प्रकाश देणाऱ्या कंदिलांच्या रूपाने तिच्या घरी प्रकट झाली आणि तिचे घर एक देव मंदिर बनले. - त्या जागेचे भाग्य उदयाला आले.

मॅडम ब्लॅन्कट्स्की यांनी तेलाशिवाय जळणाऱ्या दीपांची जी उदाहरणे दिली आहेत, तीही कबरस्तानातील आहेत, हे लक्षात ठेवण्यासारखे आहे. (मृतात्म्यांच्या आत्मशक्तीने-म्हणजे अतींद्रिय शक्तीने -ते जळत असल्याच्या

इजिप्शियनांच्या श्रद्धेचा त्या ठिकाणी उल्लेख केलाच आहे.) देवळात जळणाऱ्या दीपांच्या बाबातीत त्या देवतांच्या भक्तांची असमान्य ईश्वरनिष्ठा हीच कारणीभूत झाली असणे शक्य आहे.

### अतींद्रिय शक्तीची विविध रूपे

आतापर्यंत अतींद्रिय शक्तींची जी उदाहरणे दिली आहेत त्यावरून ती कशी अनेक तऱ्हेने प्रकट होते याची वाचकांना कल्पना आलीच आहे. वस्तुतः तिच्या प्रकटीकरणाला कसलीच मर्यादा नाही. तथापि परचित्तज्ञान (telepathy), भूतभविष्यज्ञान (retro & precognition), किंवा संकटसूचना (संदेशवहन), स्वप्नदर्शन (वा स्वप्नसूचना), अधांतरी तरंगणे (levitation), दूरवस्तुज्ञान (clairvoyance), दूरवस्तुचलन ('psychokinesis'), किंवा भानामती (poltergeist), श्रद्धा मूर्तरूप धारण करणे किंवा साक्षात्कार किंवा भौतिक प्रकटीकरण (materialisation), आकाशवाणी (clairaudience), शून्यातून वस्तू वा शक्ती निर्माण होणे, किंवा एका वस्तूचे दुसऱ्या वस्तूत रूपांतर होणे (सूर्यविज्ञान), एकाचा रोग दुसऱ्याने घेणे, मनाने रोग निर्माण होणे किंवा बरा होणे, अन्नप्राण्याविना जगणे, अग्नी व शस्त्र यांचा मानवाच्या वा अन्य प्राण्याच्या शरीरावर काहीही परिणाम न होणे, हे प्रकार प्रमुख असून त्यांची काही उदाहरणे या ग्रंथात दिली आहेत. आता अतींद्रिय शक्तीचे काही अन्य प्रकार किंवा पूर्वीचेच पण अन्य रीतीने प्रकट होणारे प्रकार पहावयाचे आहेत.

गायीचे वासरू संस्कृत श्लोक म्हणते - प्रकरण ९ मध्ये 'आकाशवाणी' ही मृतात्म्याची असल्याबद्दलचे पुरावे सादर केले आहेत. पण ज्ञानेश्वरांनी जेव्हा रेड्याच्या तोंडून वेद बोलविला तेव्हा कोणता मृतात्मा त्यांच्या मदतीला धावून आला, असा साहजिकच प्रश्न निर्माण होतो. वेद म्हणणारे मृतात्मे आहेत (त्यांना ब्रह्मसमंथ म्हणतात), हे एक त्याचे उत्तर संभवते. दुसरे उत्तर, योगशक्तीने त्यांनी वेदवाणी प्रकट केली, असेही देता येते. कारण योग्यांना अशक्य काही नाही. [विशुद्धानंदानी आकाशगमन केल्याचे अनेक साक्षीदारांनी पाहिल्याचे अलीकडील काळातील उदाहरण दिले आहे. (पृ. २५१) त्यांनी व इतर सामान्य जीवन जगणाऱ्या व्यक्तींनी (गुप्त योग्यांनी) 'शून्या' तून वस्तू निर्माण केल्याचीही उदाहरणे दिली आहेत. (प्रकरण ११ पाहा)] तथापि पृ. २५१ वर बहेणाबाईंच्या गायीच्या वासराने संस्कृत श्लोक म्हटल्याचे जे उदाहरण दिले आहे त्याची उपपत्ती कशी लावायची, हा प्रश्न आहे. कारण बहेणाबाई एक सामान्य स्त्री-आहे. त्यासाठी बहेणाबाईंच्या चरित्राकडे आपल्याला थोडे वळले पाहिजे.

बहेणाबाईने आपले जीवनचरित्र आपल्या अभंगातून एका साध्या भोळ्या

स्त्रीने सांगावे तसे अगदी मनमोकळेपणाने सांगितले असून त्यात काहीही लपवून ठेवलेले नाही. त्यातील तिच्या पतीने तिचा केलेला छळ वाचून हृदय हेलावते. तिच्या जीवनात घडलेल्या अनेक महत्त्वाच्या घटना सार्वजनिक स्वरूपाच्या असल्यामुळे त्याचे अनेक साक्षीदार आहेत. त्यापैकी फक्त अतींद्रिय घटनांचा विचार आपल्याला येथे कर्तव्य आहे.

बहेणाबाईचा काळ इ.स. १६२८ ते १७०० असा आहे. तिचे जन्मगाव देवगाव (ता. कन्नड, जि. औरंगाबाद.) बरीच वर्षे संतती न झाल्यामुळे तिच्या वडिलांनी शिवाची उपासना आरंभली. तेव्हा एक ब्राह्मण त्यांच्या स्वप्नात येऊन त्यांना एक कन्यारत्न आणि एक पुतरत्न होईल असे सांगितले. त्याप्रमाणे एक वर्षात त्यांना कन्यारत्न झाले. हीच बहेणाबाई. (पुढे पुत्ररत्नही झाले.) येथे अतींद्रिय शक्तीने ब्राह्मणाच्या रूपाने तिच्या वडिलांच्या स्वप्नात येऊन त्यांच्या उपासनेचे फळ दिले आहे. (किंवा बरोबर भविष्यकथन केले आहे, असेही म्हणता येईल.)

यानंतरच्या महत्त्वाच्या घटना तिच्या नवऱ्याने-गंगाधरपंताने-स्थलांतर केल्यानंतर कोल्हापूर येथे घडल्या आहेत. कोल्हापुरात ज्या वाड्यात त्यांचे कुटुंब (बहेणाबाईचा नवरा, आईवडील व बंधू) राहत होते, त्याचा मालक बहिरंभट याच्या स्वप्नात एकदा एक ब्राह्मण आला व त्याला एका भक्ताकडून मिळालेली गाय व तिचे वासरू गंगाधरपंतास देण्यास सांगितले. त्याप्रमाणे त्याने ती त्यांना दिली. या गायवासरांवर बहेणाबाईचा जो जीव जडला व त्यामुळे ज्या घटना नंतरच्या काळात घडल्या, त्यावरून बहिरंभटाच्या स्वप्नातील (अतींद्रिय शक्तीचे) हे ब्राह्मण (रूपातील) दर्शन व त्याची आज्ञा किती निर्णायक महत्त्वाचे होते, याची कल्पना येते. ही कपिला गाय व तिचे वासरू हीच बहेणाबाईच्या चरित्राचे खरे शिल्पकार ठरल्याचे दिसून येतात. हे वासरू बहेणाबाईबरोबर जयरामस्वामी (वडगांवकर) यांच्या पुराण-कीर्तन श्रवणास नेमाने जात असे, तेथे शेणमूत न करता उभ्यानेच शेवटपर्यंत ते कीर्तन श्रवण करीत असे व शेवटी बहेणाबाई बरोबर स्वामींच्या चरणावर आपले डोके टेकवीत असे. हा 'चमत्कार' पाहून लोक आश्चर्यचकित होत. पण बहेणाबाईच्या नवऱ्याला ही गोष्ट मुळीच पसंत नव्हती. त्यासाठी तो तिचा छळ करीत असे. एकदा तिला कीर्तनाहून घरी येण्यास फारच उशीर झाला. तेव्हा तिला त्याने भरपूर मार दिला व शेवटी तिची मोट बांधून त्या गाय-वासरापुढे तिला नेऊन टाकले तेव्हा त्यांनी 'तृणपाणी' वर्ज्य केले. नंतर बहिरंभटाच्या दटावणीमुळे व त्या गाय-वासरांची केविलवाणी अवस्था पाहून गंगाधरपंताने बहेणाबाईची मोट सोडली. तथापि बहेणाबाईने स्वतः त्यांना तृणपाणी दिले तरी त्यांचा स्वीकार ती करीनात. हा 'चमत्कार' पाहण्यास तेथे लोक येऊ लागले. अशाच वेळी एकदा नेहमीच्या सवयी प्रमाणे बहिरंभट 'मूकं करोति वाचालं पंगुं लंघयते गिरिम् ।' हा संस्कृत



श्लोक म्हणत तेथे आला आणि लगेच त्या वासराने 'यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दं माधवम् ॥' हा श्लोकाचा पुढील चरण म्हटला व आपला प्राण सोडला. "तत्काल बहेणाबाईने धावत येऊन त्या वासराच्या अंगावर आपली मान टाकली व बेशुध्द झाली. ती पुढे चार दिवस बेशुध्द होती. चौथ्या दिवशी रात्री एका ब्राह्मणाने तिच्या स्वप्नात येऊन 'सावध हो' असे म्हणून तिला शुध्दीवर आणले. (अभंग क्र.२०) हा प्रकार पाहण्यास स्वतः जयराम स्वामी आले. (त्या वासराचा अंत्यविधी त्यांनीच केला.) येथे पुन्हा अर्तीन्द्रियशक्तीने बहेणाबाईला ब्राह्मणाच्या रूपाने संकटकाळी (बेशुध्दावस्थेत) मदत केल्याची दिसून येते.

कीर्तन ऐकणे, कीर्तनकाराच्या पायावर मस्तक ठेकणे, माणसाचा छळ पाहून तृणपाणी सोडणे, सस्कृत श्लोक म्हणणे, यासारख्या 'चमत्कार' युक्त व जनावरांच्या जातीला न शोभणाऱ्या' वर्तनाची उपपत्ती जयरामस्वामींनी अशी दिली आहे की, ही गायवासरु मागच्या जन्मीच्या योगभ्रष्ट व्यक्ती होत्या व काही अपराधामुळे त्यांना गायीच्या योनीत जन्म घ्यावा लागला. पण ही उपपत्ती उत्क्रांती तत्वाविरुद्ध म्हणजे अवैज्ञानिक आहे, असे खेदाने म्हणावे लागते. एखाद्या माणसाची उत्क्रांती थांबणे, किंबहुना अपक्रांतिसुध्दा होणे शक्य आहे. पण एखाद्या अपराधामुळे-मग तो अपराध कितीही मोठा असो-अपक्रांती झाली तरी ती माणसाच्याच पण अवनतयोनी (जाती) मध्ये होईल, माणसाचा पशुयोनीत जन्म होण्याइतकी त्याची अपक्रांती होईल, हे संभवत नाही. पुनर्जन्माच्या वैज्ञानिक संशोधनात तरी अशी उदाहरणे आढळून आलेली नाहीत. "भगवद्गीतेत योगभ्रष्ट व्यक्ती मनुष्याच्या शुध्द कुलातच जन्मते असे म्हटले आहे. क्रूर व ईश्वरद्वेष्यांना आसुरी योनी प्राप्त होते असे गीतेत म्हटले असले तरी 'आसुरी' याचा अर्थ पापी व हीन, पण माणसाचीच योनी असा केला पाहिजे. अन्य प्राण्यांची योनी असा त्याचा अर्थ करता येत नाही. बृहदारण्यक उपनिषदात 'कीटाः पतंगा यदिदं दंशूकम्' असे म्हटले असले (बृ.उप. ६.२.१६) तरी तेथे देवयान व पितृयान या दोन यानाहून (मार्गाहून) वेगळ्या 'तिसऱ्या' यानाचा (मार्गाचा) तो उल्लेख आहे. माणसाचा अन्य योनीत जन्म होतो हे सांगणारा तो संदर्भ नाही. हा तिसरा मार्ग म्हणजे 'तिर्यक्' योनी होय. (तिर्यक् याचा अर्थ मानवेतर) कठोपनिषदात 'योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिनः । स्थाणुमन्ये अनुसंयन्ति यथाकर्म यथाश्रुतम् ॥' (कठ. उप. २.५.७) असे जे म्हटले आहे, त्याचा अर्थ 'कर्म व ज्ञान जसे असेल तसे आत्म्याला निरनिरळ्या योनीत - जड वस्तूतसुध्दा - जन्म मिळतो' असा असून तो आत्म्याच्या निरनिरळ्या योनीतून होणाऱ्या उत्क्रांतीची माहिती देणारा सर्वसामान्य श्लोक आहे. मानवाची उत्क्रांती सांगणारा तो विशिष्ट श्लोक नाही, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. ही गोष्ट यमाने 'सनातन ब्रह्माचे गुह्य ज्ञान तुला सांगतो' असे

पूर्वीच्या श्लोकात नचिकेताला जे म्हटले आहे, त्यावरून स्पष्ट होते. 'ब्रह्मज्ञान' याचा अर्थ केवळ मानवी उत्क्रांतीचे ज्ञान नसून विश्वातील सर्व जडचेतनाच्या उत्क्रांतीचे ज्ञान असा आहे. तात्पर्य 'मानव चौऱ्याऐंशी लक्ष योनीतून फिरतो' ही नंतरची (पुराणिकांची) कल्पना आहे. ब्रह्मविज्ञानाची ती कल्पना नाही.

ब्रह्मविद्येचा अतींद्रिय विज्ञानाच्या दृष्टिकोनातून अभ्यास करणाऱ्या ब्रह्मविद्या वैज्ञानिकांनी (Theosophists) Transmigration - म्हणजे एका योनीतून दुसऱ्या योनीत जन्म-याचे वैज्ञानिक दृष्टिकोनातून जे स्पष्टीकरण दिले आहे, त्यावरून चौऱ्याऐंशी लक्ष योनीतील फेऱ्याची कल्पना कशी निर्माण झाली, याची कल्पना येते. त्यांचे म्हणणे असे की मनुष्य मेल्यानंतर त्याच्या शरीरातील भौतिक अणू इतर प्राण्यात, वृक्षात (वा दगडातसुद्धा) 'जन्म' घेतात. ब्रह्मविद्येनुसार (अध्यात्मविज्ञानानुसार) ज्यांना आपण जड सृष्टी म्हणतो ती वास्तविक जड नसून चैतन्ययुक्त आहे. पंचमहाभूते हीसुद्धा उत्क्रांतिप्रक्रियेतील विशिष्ट टप्पेच आहेत. हे पंचभौतिक अणू उत्क्रांतीतील आपापल्या टप्प्यानुसार त्या त्या टप्प्यावरील जीवंत प्राण्यांच्या शरीराच्या पेशीतील अणू बनतात व त्या त्या टप्प्याच्या पातळीवरील अनुभव घेतात. Transmigration म्हणजे 'एका योनीतून दुसऱ्या योनीत जन्म' याचा हा अर्थ आहे. माणसाच्या शरीरातील पेशींच्या अणूंचा इतर योनीत जन्म असा त्याचा अर्थ आहे 'त्याच्या आत्म्याचा इतर योनीत जन्म' असा त्याचा अर्थ नाही. म्हणजे माणसाच्या शरीराचे भौतिक अणू चौऱ्याऐंशी लक्ष योनीत फिरतात, त्याचा आत्मा फिरत नाही."

अशारीतीने ती गाय व वासरू पूर्वजन्मीची भट्ट योगी नसतील तर त्यांच्याकडून 'जनावरांना' न शोभणारे वर्तन कसे घडले, विशेषतः वासराने संस्कृत श्लोक म्हणण्याचा 'चमत्कार' व तोही 'भूकं करोति पाद्यालं' ('मूक प्राण्याला ईश्वर बोलायला लावतो') हा प्रसंगोचित श्लोक म्हणण्याचा 'चमत्कार' कसा घडला, हे सांगितले पाहिजे. याची दोन तऱ्हांनी उपपत्ती देता येते. एक, एखाद्या संस्कृतज्ञ मृतात्म्याचा त्या वासरात 'आवेश' झाला असावा किंवा दोन, बहेणाबाईच्या ईश्वरभक्तीमुळे अतींद्रिय शक्ती संस्कृतवाणीच्या रुपाने प्रगट झाली असावी. विज्ञानाच्या Parsimony (कमीत कमी गृहीतकृत्ये) या तत्त्वानुसार एखाद्या घटनेची उपपत्ती उपलब्ध तत्त्वानुसार देता येत असेल तर फालतू तत्त्वाची (उदा. मृतात्म्याची) जरूरी नाही; आणि या घटनेची उपलब्ध (अतींद्रिय) तत्त्वानुसार उपपत्ती देता येते. मात्र त्यासाठी अशाच अतींद्रिय घटनांचे दाखले द्यावे लागतील. असे दाखले भरपूर प्रमाणात मिळतात. काही दाखले येथे देतो.

मूक प्राण्याशी बोलणारा किंबाल - फ्रेड किंबाल हा अमेरिकन

माणूस मूक प्राण्याशी बोलणारा म्हणून प्रसिद्ध आहे. त्याला आपल्या ह्या देणगीचा कसा शोध लागला ? एकदा तो तेलवाहू जहाजावर रखवालदाराचे काम करत असताना 'अरे फ्रेड' असे शब्द त्याच्या कानांवर पडले. आपल्या नावाने कोण हाक मारत आहे म्हणून त्याने अवतीभोवती पाहिले. डेकवर बऱ्याच अंतरापर्यंत कोणीच नव्हते. फक्त एक समुद्रपक्षी (seagull) त्याच्या जवळून उडत होता. पुन्हा दुसऱ्यांदा जेव्हा त्याच्या कानांवर तेच शब्द पडले तेव्हा खात्री करून घेण्यासाठी पुन्हा जवळपास कोणी आहेत का याचा त्याने शोध केला. पण तो डेकवर एकटाच होता. मात्र आपल्या नावाचा शब्द त्याच्या कानावर पडला तेव्हा त्याच्या डोक्यावरून तो समुद्रपक्षी पुन्हा उडत वर गेला असल्याचे त्याने पाहिले. मग त्याच्या लक्षात आले की तो पक्षीच आपल्या नावाने आपल्याला हाक मारत आहे. म्हणजे त्या पक्ष्याचे विचार आपले मन पकडत आहे. (I was picking up the seagull's thought-waves) <sup>८१</sup>

येथे पक्षी आपल्या नावाने फक्त हाक मारत असल्याचे किंबालने ऐकले. पण पुढील उदाहरणात पक्ष्याने एका सत्पुरुषाच्या नावाने हाक मारण्याबरोबरच त्याला पुढील काळातील भविष्यही बरोबर सांगितलेले दिसून येते. हे उदाहरण दीनदयाळ आण्णा महाराज लाटकर यांच्या चरित्रग्रंथातील आहे. ते येथे आण्णामहाराजांच्या शब्दातच देतो.

“(अंधोळीहून) परत येताना रस्त्यात महावीर कल्लाप्पा गिरमल भेटला. म्हणाला, 'आण्णा, पावसानं कुठं दडी भारलीय? कितीतरी दिवस झाले, पावसाचा पत्ता नाही. केंव्हा पडणार आहे पाऊस?'

“मी म्हणालो, बघू काय होतय' मी पुढे चालत राहिलो. एक पक्षी माझ्या अगदी जवळून धिरट्या घालत राहिला. मी जाईन तसा येत राहिला आणि शब्द कानावर आले, 'आण्णा, आता खूप पाऊस पडतोय.' मी चमकून सभोवार पाहिले. कोणी व्यक्ती जवळपास दिसत नव्हती. हे शब्द कोणाचे असावेत? माझ्या बरोबर येत असलेल्या पक्ष्याकडे मी निरखून पाहिले. कदाचित माझी शंका पक्ष्यानं जाणली असावी. परत शब्द आले, 'आण्णा मीच बोललो.' आणि तो पक्षी माझ्यापासून दूर जात दिसेनासा झाला.

“मी विचार करतच परतलो. मी पहात होतो, वातावरणात झपाट्याने बदल होतोय. आकाशातील.... काळ्या ढगांचे प्राबल्य वाढले.... आणि (थोड्याच वेळात) धो धो कोसळून मेघ राजाने भूमातेची तृषा तृप्त केली.” <sup>८२</sup>

या घटना मानवेतर प्राण्यांचे विचार (thought-waves) स्पष्ट श्राव्य रूप धारण करू शकतात, ही गोष्ट जरी प्रथमदर्शनी ती अविश्वसनीय वाटली तरी-सत्य

असल्याचे सिध्द करतात.

मानवेतर प्राण्यांचे विचार (thought-waves) आपण पकडू शकतो हा शोध लागल्यानंतर किंबालने त्याचा पाठपुरावा केला आणि नंतर तो मूक प्राण्यांशी बोलणारा मनुष्य म्हणून प्रसिध्द झाला. याविषयीचे असंख्य प्रयोग करून आपले हे सामर्थ्य त्याने पुराव्यानिशी सिध्द केले आहे. नमुन्यासाठी काही उदाहरणे येथे देतो.

एकदा एका बाईने आपल्या पाळीव कुत्र्याला आपल्या रगवर विष्टा करण्याची एक नवी सवय लागल्यामुळे ती कशी घालवावी ही समस्या किंबालपुढे ठेवली. किंबालने जेव्हा त्या कुत्र्याला याविषयी विचारले, तेव्हा त्याने किंबालला सांगितले की ह्या बाईने आपल्या नवऱ्याला घटस्फोट देऊन विष्टेप्रमाणे बाहेर काढले (evacuated), म्हणून मी माझी विष्टा तिच्या रगवर बाहेर काढतो. किंबालने त्या बाईला विचारले, “तुम्ही अलीकडे नवऱ्याशी घटस्फोट घेतला आहे काय?” तिने आश्चर्याने “होय” म्हटले. किंबालला त्या कुत्र्याने असेही सांगितले की “ती बाई आपल्याला मुळीच आवडत नाही. आपले तिच्या नवऱ्यावर प्रेम असून त्याची चूक नसताना तिने त्याच्याशी घटस्फोट घेतला आहे. या घरात असेपर्यंत मी तिच्या अंथरुणावर विष्टा करणे सोडणार नाही.” किंबालने त्या बाईला दुसरा एखादा मालक त्या कुत्र्यासाठी पाहण्यास सांगितले.

एकदा जिना सर्मिनारा (एडगर केयसीच्या ‘पुनर्जन्म’ विषयावरील पुस्तकाची प्रसिध्द लेखिका) हिने किंबालला आपल्या घरी बोलावले व त्याला माहीत नसलेल्या सोळा लोकांना (आठ दांपत्यांना) त्यांच्या आठ पाळीव प्राण्यांसह बोलावून घरात बोलावीपर्यंत बाहेरच आपल्या टॅक्सीत थांबण्यास सांगितले. आत बोलाविलेल्या पहिल्याच व्यक्तीचा कुत्रा फारच अस्वस्थ दिसला. किंबालने त्याला त्याचे कारण विचारले तेव्हा आपण सहा महिन्यात मरणार असल्याचे त्या कुत्र्याने किंबालला भविष्य सांगितले. नंतर तो कुत्रा खरोखरच सहा महिन्यांच्या आत मेलाला.

येथे (किंवा वरील आण्णामहाराजांच्या उदाहरणात) हे (भविष्य खरे ठरणे) योगायोगाने घडले, असे कोणी म्हणतील; किंवा (वरील घटस्फोट घेणाऱ्या बाईप्रमाणे) जेथे संबंधित पाळीव प्राण्याची बरोबर माहिती किंबाल सांगतो तेथे त्या व्यक्तीच्या (उदा. त्या कुत्र्याच्या मालकाच्या) मनातील विचारच ओळखून-म्हणजे परचित्त ज्ञानाने (telepathy ने) - ती माहिती मिळवून सांगतो, असा युक्तिवादही कोणी करेल. पण हा तर्क व हे युक्तिवाद फोल असल्याचे याविषयीच्या अनेक प्रयोगांनी सिध्द झाले आहे. उदा. उपर्युक्त जिना सर्मिनारा या बाईच्या मांजराशी किंबाल जेव्हा बोलला तेव्हा त्या मांजराने आपले आरोग्य ठीक नसल्याचे त्याला सांगितले. ही गोष्ट सर्मिनाराला माहीत नव्हती. पुढे जाऊन त्या मांजराने किंबालला असेही सांगितले की आपल्या पोटात कृमी झाले असून पशुवैद्य त्यावर हिरव्या

रंगाच्या गोळ्या देतात. ही गोष्ट किंबालला किंवा त्या मांजराच्या मालकिणीला-सर्मिनाराला-मुळीच माहीत नव्हती. नंतर जेव्हा त्या मांजराला प्रत्यक्ष पशुवैद्याला दाखविण्यात आले तेव्हा त्याने त्याच्या पोटात कृमी झाल्याचेच निदान केले। पुढेचे आश्चर्य म्हणजे त्याने त्या कृमीवर उपाय म्हणून (त्या मांजराने सांगितल्याप्रमाणे) हिरव्या रंगाच्या गोळ्याच दिल्या !<sup>८३</sup>

किंबाल पाळीव प्राण्यांशी मोठ्यानेच बोलतो. पण कधी कधी त्यांच्या डोळ्यात पाहून मनानेच त्यांना प्रश्न विचारतो. दोन्ही पध्दतीने ते त्याला उत्तर देतात. हे उत्तर अर्थात शब्दात नसते. तर चित्ररूपात (images) असते. ही चित्रे त्याच्या मनश्चक्षू समोर ते प्राणी निर्माण करतात आणि त्यांचे मानवी भाषेत तो रूपांतर करतो.

किंबालप्रमाणेच मानवेतर प्राण्यांशी बोलणारी आणखी एक अमेरिकन व्यक्ती असून तिचे नाव लायडेकर. ही बाई एकदा रस्त्यातून जाताना अनेकवेळा एका घराच्या कोपऱ्यातून आपल्या नावाने कोणीतरी हाक मारत असल्याचे व ती हाक मदतीसाठी असल्याचे तिला जाणवले. जवळपास कोणीच मनुष्य नसल्यामुळे ती बुचकळ्यात पडली. शोध घेतल्यानंतर तिच्या लक्षात आले की त्या कोपऱ्यातील डोबरमन कुत्रा आपल्याला बोलवत आहे. ती त्याच्या जवळ गेली व त्याच्या डोक्यावरून व पाठीवरून हात फिरवू लागली. हा कुत्रा भयंकर दुष्ट म्हणून कुप्रसिध्द होता. तो कोणालाही जवळ येऊ देत नसे. पण त्याने तिला जवळ बोलावून आपल्या अंगावरून हात फिरवू दिला होता. आपले जीवन एकाकी असल्यामुळे कसे दुःखी बनले आहे याची करुण कहाणी त्याने तिला सांगितली. नंतर ही बाईही मानवेतर प्राण्यांशी बोलणारी व्यक्ती म्हणून किंबालप्रमाणेच प्रसिध्द झाली.

मानवेतर प्राण्यांची बुद्धिमत्ता मानवापेक्षा फारच खालची असल्याची आपली रुढ कल्पना कशी सपशेल चुकीची आहे, हे वरील उदाहरणे दाखवून देतात. आपला मृत्यू सहा महिन्यात होणार असल्याचे बरोबर भाकीत करणारा कुत्रा व आपल्या रोगाचे बरोबर निदान करणारे व त्यावर कोणता वैद्यकीय उपचार केला पाहिजे हे - त्या उपचाराच्या गोळ्यांच्या रंगसुध्दा - बरोबर सांगणारे मांजर सर्वसामान्य माणसांत न आढळणारी अतींद्रिय शक्ती मानवेतर प्राण्यांत असल्याचे सिध्द करतात.

**ॐकाराचा जप करणारी अंतर्ज्ञानी मिसी कुत्री - विज्ञान आणि बुद्धिवाद** या ग्रंथात प्रस्तुत लेखकाने 'लेडी वंडर' नावाच्या मनातील विचार ओळखणाऱ्या एका घोडीचे उदाहरण दिले आहे. (प्रकरण ६, पृ. १३३) हे परचित ज्ञानाचे उदाहरण आहे. पण मानवेतर प्राण्यांत भविष्य जाणण्याची (precognitive power) व दूरवस्तुज्ञानाची (clairvoyance) शक्तीही असल्याचे दाखवून देणारी उदाहरणे आहेत. डेन्व्हर शहरातील मिल्ड्रेड प्रोबर्ट या बाईची बोस्टन टेरियर जातीची मिसी नावाची कुत्री तिला व तिच्या मालकिणीला माहीत नसलेल्या व्यक्तीचे नाव

बरोबर सांगू शकत असे. उदा. Mary या नावाच्या बाईच्या नावात चार अक्षरे असल्यामुळे ती चारवेळा भुंके. Merry Christmas मधील "Merry" मध्ये किती अक्षरे आहेत, असे विचारले तर ती पाचवेळा भुंके. 'लग्ना' च्या अर्थाच्या "Marry" मध्ये किती अक्षरे आहेत असे विचारले तर पुन्हा पाचवेळा भुंके. प्रोबर्ट ही तिची मालकीण खोलीत नसली तरी ती बरोबर उत्तर देत असे. तिची पाच भाषामधून परीक्षा घेण्यात आली असून आणखी किती भाषा तिला अवगत आहेत, हे माहीत झालेले नाही. ती एखाद्या व्यक्तीचे नांवच नव्हे, तर त्या व्यक्तीची जन्म तारीख सुध्दा (दिवस, महिना, वर्ष) बरोबर सांगू शकत असे. पत्ताही बरोबर सांगू शकत असे. हे अतींद्रिय सामर्थ्य तिला प्रशिक्षण न देता म्हणजे उपजत प्राप्त झाले होते, असे आढळून आले आहे.

खेळातील ५२ पत्ते तिच्याकडे पत्त्यांची पाठ करून धरले व विचारले तर त्यावर असलेले ठिपके (spot) (तितक्यावेळा भुंकून) ती बरोबर ओळखी. ५२ पत्त्यांत एकदाही कधी चुकत नसे. हे पत्ते कुणीही पाहिलेले नसतांना व तिने ओळखल्यानंतरच दाखविले जात असल्यामुळे त्या पत्त्यांचे ज्ञान कुणाच्याही मनातील विचारामुळे म्हणजे telepathy ने, तिला होत नव्हते, तर ते पत्ते तिच्या अतींद्रिय दृष्टीला दिसत होते (clairvoyance) हे स्पष्ट होते. (राजा, राणी, गुलाम यांना ओळखण्याची तिची एक खास 'होय' किंवा 'नाही' हे सांगण्याची पध्दत होती.) एकदा तिच्या आरोग्याच्या तक्रारीमुळे तिला पशुवैद्याकडे नेले होते. प्रोबर्टने डॉक्टरला 'कोणत्या खोलीत हिला ठेवणार?' असे विचारले. डॉक्टरने अजून खोली ठरवलेली नसतांना ती पाचवेळा भुंकली. आणि नंतर जी खोली तिला देण्यात आली त्या खोलीचा क्रमांक पाचच असल्याचा आढळून आला. तिची राजकीय भाकितेही कधी चुकली नाहीत. उदा. निवडणूक केंव्हा घेण्यात येईल, राष्ट्राध्यक्षांच्या निवडणुकीत कोणता उमेदवार विजयी होईल. व्हिएतनाममधून केंव्हा सैन्य परत येईल, पॅरिस येथे केंव्हा शांततेच्या वाटाघाटी होतील इ. विषयीची तिची सर्व भाकिते खरी ठरली आहेत. राष्ट्रीय खेळातील सामन्यांचे निकालही ती बरोबर सांगत असे. तिची वैयक्तिक भाकितेही कधी चुकली नाहीत. उदा. गरोदर बाईला मुलगा होईल की मुलगी, ती केंव्हा बाळंत होईल, त्याची वेळ, तारीख, महिना इ. माहितीही ती बरोबर सांगे. एका महिलेचे सिझेरियन करण्याचे ठरले होते. पण मिसीने तिचे सिझेरियन होणार नाही, नैसर्गिकपणेच ती बाळंत होईल असे सांगितले आणि नेमके तसेच घडले. डॉक्टरने मुलगी होईल असे सांगितले होते. पण मिसीने मुलगा होईल असे सांगितले; आणि नेमका मुलगाच झाला. त्याचे वजनही तिने बरोबर सांगितले होते.

एकदा एका गृहस्थाला डॉक्टरानी त्याच्या पोटातील कॅन्सरमुळे तो पाच

महिन्यापेक्षा अधिक काळ जगणार नाही, असे सांगितले. त्याने आपण किती दिवस जगू? असा मिसीला प्रश्न विचारला. आणि मिसीने २ वर्षे ४ महिन्ये ३ दिवस असे सांगितले. आणि तो गृहस्थ बरोबर तितक्या दिवसांनीच मेला. असले (मृत्युसबधीचे) प्रश्न मिसीची मालकीण मिल्ड्रेड प्रोबर्ट कोणालाही विचारू देत नसे. त्या गृहस्थाने हट्टच धरल्यामुळे हा एकमेव अपवाद तिने केला होता. एकदा मिसी प्रोबर्टचे लक्ष वेळेकडे आकर्षित करून आठ वेळा भुंकली. प्रोबर्टला काही कळेना. कारण त्यावेळी आठ वाजले नव्हते. म्हणून तिने मिसीला किती वाजले आहेत, असे विचारले. मिसीने बरोबर वेळ सांगितली. पण पुन्हा आठ वेळा भुंकली. त्या दिवशी ती अशी सात वेळा तरी आठचा आकडा भुंकली असेल. आणि त्या रात्री बरोबर आठ वाजता घशात अन्न अडकून मिसी मेली. तिला एकाने तास काटा फिरविता येणारे खेळातील घड्याळ भेट दिले होते. मिसीने त्या घड्याळात आठवर तास काटा आणून ठेवल्याचे प्रोबर्टला नंतर आढळून आले ! या चिमुकल्या कुत्रीचे एक वैशिष्ट्य असे की ती पाहटे उठता क्षणी पुढच्या दोन पायावर आपले मस्तक वाकवून ओं ओं असा आवाज काढी. हा हिंदूंचा ॐकार जप असल्याचे नंतर प्रोबर्टला कळाले. मिसीसाठी तिने एक जपमाळेचीही सोय केली होती आणि मिसीच्या अंगावर तिला पाहटे ती ठेवावी लागे.<sup>५५</sup>

वर वर्णन केलेली अतींद्रिय शक्ती फक्त योग्यात व श्रेष्ठ ईश्वरभक्तातच असू शकते अशी आपली कल्पना आहे. उदा. अक्कलकोटचे स्वामी समर्थ व नाशिकचे गजानन महाराज गुप्ते हे आपल्याला भेटायला आलेल्या व्यक्तीच्या मनातील विचार अचूक ओळखत असत. स्वामी समर्थांनी १८५७ सालच्या बंडाचे भविष्य कित्येक वर्षे अगोदर वर्तविले होते व गजानन महाराज गुप्तेंनीही दुसऱ्या महायुद्धाचे भविष्य २५ वर्षे अगोदरच वर्तविले होते. इतकेच नव्हे तर त्यांनी या युद्धात जर्मनीचा पराभव होईल हेही अगोदरच सांगितले होते.<sup>५६</sup> चिले महाराजांमध्ये सर्व प्रकारची अतींद्रिय शक्ती कशी खच्चून भरली होती, याचे वर्णन परब्रह्मगुरु चिलेदेव या ग्रंथात श्री. बाबुराव अथणे यांनी पानोपानी केले आहे. गजानन महाराज गुप्ते यांचे शिष्य सोलापूरचे श्री. नाना पाठक यांना मिसी कुत्रीप्रमाणेच समोरच्या माणसाच्या हातातील खेळाचे पत्ते पाठीमागूनही स्पष्ट दिसत. त्यामुळे ते नेहमीच डाव जिंकत. म्हणून त्यांनी पत्ते खेळायचेच सोडून दिले.<sup>५७</sup>

येथे नाना पाठक या सत्पुरुषांना व मिसी कुत्रीला (अतींद्रिय शक्तीच्या दृष्टीने का असेना) एकाच मालिकेत बसविण्यामध्ये नाना पाठकांचा कोणत्याही प्रकारे अधिक्षेप करण्याचा लेखकाचा हेतू नाही. संत नामदेव आपली भाकरी घेऊन पळणाऱ्या कुत्र्याच्या पाठीमागून तुपाची वाटी घेऊन धावले, अशी भक्तविजय ग्रंथात कथा आहे. ते असे जेव्हा धावले तेव्हा त्यांना त्या कुत्र्यात 'कुत्रा' न दिसता

‘विठ्ठल’ दिसला होता. मिसी कुत्रीला व नाना पाठक या सत्पुरुषांना एकाच मालिकेत बसवताना दोहोंतील हा ‘विठ्ठल’च लेखकाला अभिप्रेत आहे. गीतेचे एक वचन सांगते की विद्याविनयसंपन्न ब्राह्मण व कुत्रा यांच्याकडे पंडित लोक सारख्याच दृष्टीने पाहतात. कारण त्यांना दोहोंत ईश्वरच दिसत असतो. ईश्वर सर्व प्राण्यांत सारखाच वास करतो (ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।) असे आणखी एक गीतेचे वचन आहे. सर्व प्राण्यात ईश्वराची अतींद्रिय शक्ती सारख्याच प्रमाणात वास करीत असल्याचे दाखवून देणारी वर दिलेली मानवेतर प्राण्यांची उदाहरणे गीतेचे हे वरील वचन शंभर टक्के कसे बरोबर आहे, हे दाखवून देतात. प्राण्यांतच काय, पण वनस्पतींमध्ये सुद्धा अतींद्रिय शक्ती वास करीत असल्याचे आता वैज्ञानिक प्रयोगाने सिध्द झाले आहे. क्लीव्ह बॅक्स्टर या संशोधकाला या शोधाचे श्रेय दिले पाहिजे.५

मिसी ही कुत्री दररोज पाहटे ओंकाराचा ‘जप’ करीत होती, या वस्तुस्थितीवरून ती सुद्धा जयरामस्वामी म्हणतात त्याप्रमाणे पूर्वजन्मीची कोणी योगभ्रष्ट व्यक्ती असावी असा कोणी तर्क करील. पण मिसी प्रमाणे असामान्य अतींद्रिय शक्ती असलेल्या इतरही असंख्य प्राण्यांची उदाहरणे आहेत. वर आपल्या मृत्यूचे बरोबर भाकीत करणाऱ्या एका कुत्र्याचे व आपल्या आजाराच्या स्वरूपाचे व त्यावरील योग्य वैद्यकीय उपचाराचे बरोबर निदान करणाऱ्या-त्या उपचाराच्या औषधाच्या गोळ्यांचा रंगही बरोबर सांगणाऱ्या-मांजराचे उदाहरण दिले आहे. ही अतींद्रिय दृष्टी योगी किंवा सिध्द पुरुषांनाच असू शकते अशी सर्वसामान्य कल्पना आहे. पण अशी योग्यासारखी अतींद्रिय शक्ती व माणसांनाही वरवर अशक्य असल्याचे दिसणाऱ्या काही गोष्टी करण्याचे सामर्थ्य कुत्री, मांजरे, घोडी यातच काय पण बदके, बीव्हर, डॉल्फिन यासारख्या इतर प्राण्यांत असल्याचे असंख्य दाखले आहेत. (ही सर्व उदाहरणे येथे देणे शक्य नाही. जिज्ञासूंनी याविषयीचे ग्रंथ पहावेत.५) हे सर्व प्राणी पूर्वजन्मीचे सिध्दपुरुषच समजायचे काय? असा येथे साहजिकच प्रश्न निर्माण होतो. येथे हे लक्षात ठेवले पाहिजे की अतींद्रिय शक्ती केवळ माणसाची मिरास नाही. तिच्या अस्तित्वाचे नियम सर्व प्राणीमात्राला लागू आहेत, हे ही उदाहरणे दाखवून देतात. जसे सर्व माणसांत अतींद्रिय शक्तीचे अस्तित्त्व जाणवत नाही, तसे सर्व मानवेतर प्राण्यांतही ते जाणवत नाही. पण म्हणून ती जशी माणसांत नाही असे म्हणता येत नाही, तशी ती मानवेतर प्राण्यात नाही असेही म्हणता येत नाही. ही शक्ती (देणगीच्या स्वरूपात) जशी काही माणसात उपजत आढळते, तशी ती मानवेतर प्राण्यातही उपजत आढळते, असा याचा अर्थ आहे. आणि अशी (देणगीच्या स्वरूपात) जेव्हा ती आढळते तेव्हा तिची अभिव्यक्ती दोहोंत सारखीच दिसून येते, हे वर दिलेली उदाहरणे दाखवून देतात. त्यासाठी त्या प्राण्यांना प्रशिक्षण दिले पाहिजे, असे काही नाही. मात्र जेथे मनुष्य आणि त्याचा



पाळीव प्राणी यांच्यात प्रेमाचे वा जिह्याळ्याचे नाते आढळून येते, तेथे या शक्तीचा प्रादुर्भाव प्रकर्षाने होताना आढळतो. मानवेतर प्राणी प्रेमाची, अंतःकरणाची भाषा चटकन पकडतात. तिला ते उत्स्फूर्तपणे प्रतिसाद देतात. प्रशिक्षणातही हीच गोष्ट आढळून येते. प्रशिक्षणात बडग्याच्या भीतीपेक्षा किंवा अन्नाच्या प्रलोभनापेक्षा प्रेम त्यांचे मन चटकन जिंकू शकते, असे आढळून आले आहे. हृदयाची भाषा सर्व प्राणी ओळखतात. कार्लिस ऑसिस आणि ईस्थर फॉस्टर यांनी मांजराच्या पिलावरील प्रयोगांनी हे दाखवून दिले आहे. आणि हृदय हे जसे प्रेमाचे स्थान आहे तसे ते भक्तीचेही स्थान आहे. म्हणून जेथे प्रेम व ईश्वरभक्ती तीव्र असतात, तेथे अतींद्रिय शक्ती ही तात्परतेने प्रगट होताना दिसते. बहेणाबाईचे वासरु संस्कृत श्लोक म्हणण्यामागील रहस्य हेच की बहेणाबाईच्या ईश्वरभक्तीमुळे त्या वासरात अतींद्रिय शक्ती प्रवर्तित झाली. मनुष्यवाणीने संस्कृत श्लोक म्हणण्याची अतींद्रिय शक्ती-जी बहेणाबाईच्या वासरात प्रगट झाली ती-प्राश्नात्यांच्या वर दिलेल्या उदाहरणातील कोणत्याही प्राण्यांत आढळून न येण्याचे कारणही हेच की त्या लोकांत ईश्वरभक्तीचा तीव्र अभाव होता. ईश्वर हा प्राण्यात व माणसांत सारखाच वास करीत असल्यामुळे प्रेमाला ईश्वरभक्तीची जोड मिळाली तर तिला काय अशक्य आहे ? काही अशक्य नाही याची साक्ष म्हणजे बहेणाबाईचे वासरु. योग्यांना अतींद्रिय शक्ती आपोआप प्राप्त होण्याचे-त्यांना ती तत्परतेने वश होण्याचे-कारण ईश्वरभक्ती हेच आहे. 'ईश्वरप्रणिधानात्' हे तर योगाचे पतंजली मुनींनी सांगितलेले एक महत्त्वाचे सूत्र असून त्यातूनच योग्यांचे सर्व 'चमत्कार' घडून येतात. ज्ञानेश्वर रेड्याच्या तोंडून वेद बोलविण्यासारखे अघटित कार्य करू शकले ते या ईश्वरप्रणिधानातूनच याचा अर्थ असा की ज्ञानेश्वरांच्या योग शक्तीमुळे रेड्याच्या माध्यमातून जे घडले ते बहेणाबाईच्या ईश्वरभक्तीमुळे (तसेच तिच्या वासरावरील आत्यंतिक प्रेमांमुळे) वासराच्या माध्यमातून घडले. ज्या गोष्टी योगशक्तीमुळे घडू शकतात त्या सर्व ईश्वरभक्तीमुळेही घडू शकतात असा याचा अर्थ आहे. अन्नपाण्याविना जगण्यासारखे अशक्यकोटीतील जे 'चमत्कार' वर वर्णन केले आहेत, ते सर्व ईश्वरभक्तीचेच फलस्वरूप आहेत, हे वाचकांना एव्हाना माहीत झालेच आहे. ईश्वरभक्तीमुळे वासरातूनच काय पण निर्जिव वस्तूतून सुध्दा अतींद्रिय शक्ती संस्कृत (किंवा कोणत्याही) भाषेच्या रूपाने प्रगट होऊ शकते, याचीही उदाहरणे आहेत. अशा प्रकारच्या एका उदाहरणाची माहिती येथे देतो.

**आपण होऊन संस्कृत श्लोक लिहिणारा लाकडाचा तुकडा -** हे एक प्रयोगाचे उदाहरण असून हा प्रयोग त्रिवेंद्रमचा गोविंदस्वामी या तामिळ 'फकीरा' ने जॅकोलियो या पाँडिचेरीच्या फ्रेंच चीफ जस्टीससमोर १८७० च्या दशकात काशीत केला आहे. एकदा गोविंदस्वामीने जॅकोलियोला समोरच्या टेबलाजवळ कागद व पेन घेऊन बसायला सांगितले. सोबत आणलेल्या पिशवीतील वाळू जमिनीवर

ओतून ती त्याने हाताने सारखी केली. नंतर जॅकोलियोकडून त्याने एक टोकदार लाकडी तुकडा मागून घेतला व तो त्या वाळूवर अलगद ठेवला. नंतर जॅकोलियोला तो म्हणाला, “आता मी पितृदेवतांना बोलावणार आहे. ती लाकडी वस्तू खडी होईल. तिचे फक्त टोक वाळूला टेकलेले असेल. तुम्ही तुमच्या समोरच्या कागदावर कसलीही आकृती काढा. तसलीच आकृती ती लाकडी पेन्सिल वाळूवर काढील.”

आता पुढील घटनांचे वर्णन खुद्द जॅकोलियोच्या शब्दातच देतो.

“नंतर गोविंदस्वामीने आपले दोन्ही हात आपल्या समोर जमिनीला समांतर रूपात पसरले व तो काहीतरी पुटपुटू लागला. थोड्याच वेळात त्याने म्हटल्याप्रमाणे ती लाकडी काठी सावकाश उठली. लगेच मी माझ्या समोरच्या कागदावर माझ्या मनाला येईल ती आकृती काढली. मी जसे लिहीन तशी ती वस्तूही लिही. मी लिहिणे बंद केले की तीही बंद करी. मी नंतर ती वाळूवरील आकृती पाहिली तेंव्हा ती मी कागदावर काढलेल्या आकृतीसारखीच हुबेहूब असल्याची आढळून आली.

“नंतर पुन्हा वाळूतळहाताने सारखी करून गोविंदस्वामी म्हणाला, ‘मनातच कोणतेही एक संस्कृत वाक्य म्हणा.’\* मला संस्कृत येत असल्यामुळे मी मनातल्या मनात एक संस्कृत वाक्य म्हटले. त्या बरोबर त्या लाकडी पेन्सिलने पुढील वाक्य लिहिले :

**अधिशेते वैकुण्ठं हरिः । (विष्णु वैकुण्ठात झोपतो.)**

“मी तेच वाक्य मनात म्हटले होते. नंतर मी गोविंदस्वामीला ‘मनुस्मृतीच्या ४थ्या अध्यायातील २४३वा श्लोक पितृदेवता लिहील काय?’ असे विचारले. मी हा प्रश्न विचारता क्षणीच त्या पेन्सिलने पुढील श्लोक लिहिला :

**धर्मप्रधानं पुरुषं तपसा हतकिल्बिषम् ।**

**परलोकं नयत्याशु भास्वन्तं स्वशरीरिणम् ॥**

(अर्थ: तपश्चर्येने पापनाश केलेल्या धर्मप्रधान पुरुषाला उच्च प्रकारच्या स्वर्गादि लोकास एकटा धर्मच पोहोचविण्यास समर्थ आहे.)

“शेवटी, अखेरचा प्रयोग म्हणून मी ऋग्वेदाच्या ऋचा असलेल्या एका झाकलेल्या पुस्तकावर हात ठेवून त्याच्या २१व्या पृष्ठावरील पाचव्या ओळीतील पहिला शब्द कोणता, असे विचारले. लगेच पुढील शब्द लिहिला गेला:

**देवदत्त । (देवाने दिलेला)**

“पुस्तक उघडून मी पाहिले तेंव्हा तो शब्द बरोबर असल्याचे आढळले.

\* संस्कृतच काय, पण इंग्रजी भाषाही निजीव वस्तू जाणू शकत असल्याचा प्रयोग गोविंदस्वामीने जॅकोलियोला करून दाखविला असून विस्तारभयास्तव त्याची माहिती येथे दिलेली नाही.

नंतर गोविंदस्वामी मला म्हणाला, 'मनातच कोणताही एक प्रश्न विचारा.' मी मान हलवताच पुढील शब्द त्या पेन्सिलिने वाळूवर लिहिला :

वसुंधरा । (पृथ्वी)

'आम्हा सर्वांची एकच माता कोणती ?' असा प्रश्न मी मनातच विचारला होता.

"या घटनांची मला कोणतीही उपपत्ती देता येत नाही."८९

जॅकोलियोला या घटनांची कोणतीही उपपत्ती देता येत नसली तरी व गोविंदस्वामीने या पूर्वी त्याने केलेल्या अशाच अनेक 'चमत्कारां'ची उपपत्ती वीस वेळा त्याला सांगितली असली तरी पुन्हा एकदा जॅकोलियोने गोविंदस्वामीला या 'चमत्कारा' ची उपपत्ती विचारली. आणि उत्तरादाखल गोविंदस्वामीने पुढील संस्कृत श्लोक म्हटला :

स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्यात्

अंबरात् अवतरति देवः ।

(अर्थ: स्वाध्यायात सतत मग्न असावे, म्हणजे आपोआप आकाशातून देव उतरतो.)

'स्वाध्याय' म्हणजे 'ईश्वरभक्ती' सतत केली तर 'देव' (येथे पितृदेव) अतींद्रिय शक्तीच्या रुपाने आकाशातून उतरून कोणताही 'चमत्कार' करू शकतो, असा याचा अर्थ आहे. वरील प्रयोगात गोविंदस्वामीच्या 'स्वाध्याय' रुपी ईश्वरभक्तीमुळे निर्जीव लाकूडसुद्धा कोणत्याही पुस्तकातील किंवा कोणाच्याही मनातील संस्कृतश्लोक (किंवा कोणतेही वाक्य) लगेच वाळूवर लिहू शकते, असे आढळून येते. मग बहेणाबाईच्या ईश्वरभक्तीमुळे सजीव वासरु बहिरंभटाने म्हटलेल्या संस्कृत श्लोकाचा पुढील भाग लगेच मनुष्यवाणीने का म्हणू शकणार नाही ? लाकडासारख्या निर्जीव पदार्थाला जे शक्य आहे ते गायीच्या वासरा सारख्या जिवंत प्राण्याला का अशक्य असावे? गोविंदस्वामीने सांगितलेल्या वरील संस्कृत श्लोकातील 'स्वाध्याय', 'आकाश' आणि 'देव' या तीन शब्दांत सर्व 'चमत्कारां' ची गुरुकिल्ली सामावलेली आहे. आणि उपनिषदांनी सुद्धा याच तीन शब्दांतून ब्रह्मविद्येचीही गुरुकिल्ली सांगितली आहे. ब्रह्मविद्या ही सर्व विद्यांची विद्या असून सर्व वैश्विक नियमांचे (Cosmic Laws) माहेरघर असलेले 'ब्रह्म' हा तिचा विषय आहे. याच 'वैश्विक नियम' मुळे सर्व वैश्विक घटना व तथाकथित 'चमत्कार' ही घडत असतात, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. असे हे 'ब्रह्म' आत्म्याचेही निदर्शक आहे. म्हणजे 'आत्मा' व 'ब्रह्म' हे एकच आहेत. ('अयमात्मा ब्रह्म' असे बृहदारण्यक उपनिषद म्हणते. बृ.उप.४.४.५) असा हा ब्रह्मरुपी 'आत्मा' आणि गोविंदस्वामीच्या उपर्युक्त श्लोकातील 'आकाश' यांचा काय संबंध? तैत्तिरीय उपनिषद हा संबंध

सांगते :

तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः संभूतः ॥ (तै.उप.ब्रह्मवल्ली, २.१)

अर्थ:- त्याच या (ब्रह्मरूपी) आत्म्यातून आकाश प्रथम निर्माण झाले. 'आकाश' सृष्टिनिर्मितीतील पहिले 'तत्त्व' असल्यामुळे सर्व 'चमत्कारां' चे माहेरघर असलेल्या 'आत्म्या' ला वा 'ब्रह्मा' ला ते सर्वात जवळचे आहे. म्हणूनच आकाशशरीरं ब्रह्म । (आकाश हे ब्रह्माचे शरीर आहे.) असे तेच उपनिषद म्हणते. (तै.उप. शिक्षावल्ली, १.६) म्हणजे 'आत्म्या'च्या व 'ब्रह्मा'च्या सर्व 'चमत्कारां'चे (वैश्विक) नियम त्याच्या 'आकाश' रुपी शरीरातच अनुस्यूत आहेत; त्यातूनच ते प्रगट होतात असा याचा अर्थ आहे. म्हणून गोविंदस्वामी 'आकाशा'तून (कोणताही 'चमत्कार' करू शकणारा) 'देव' उतरतो, असे म्हणतो. हे 'आकाश' कुठे व कसे आहे ? छांदोग्य उपनिषद याचे उत्तर देते :

यावान्वा अयमाकाशस्तावनेषोऽन्तर्हृदय आकाशः । यच्चास्येहास्ति यच्च नास्ति सर्वं तदस्मिन्समाहितमिति ॥ (छां.उप. ८.१.३)

अर्थ:- हे भौतिक आकाश (महदाकाशरूपाने) जेवढे 'बाहेर' आहे, तेवढेच (चिदाकाशरूपाने) ते सर्व चराचर वस्तूंच्या हृदयाच्या 'आत' ही आहे. जे आहे (भूत व वर्तमान) व जे नाही (भविष्य) असे सर्व काही यात आहे. म्हणजे यात नाही असे काही नाही. (म्हणजे हे 'आकाश' रुपी तत्त्व करू शकणार नाही, अशी कोणतीही गोष्ट वा 'चमत्कार' या विश्वात नाही.)

आता 'देव' या शब्दाबद्दल उपनिषदे काय म्हणतात पाहा. श्वेताश्वतर उपनिषद म्हणते :

एको देवः सर्वभूतेषू गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा ॥ (श्वे.उप. ६.११)

अर्थ:- एकच देव सर्व पंचमहाभूतात व प्राण्यांत दडलेला आहे. तो सर्वव्यापी आहे. सर्व (चराचर) भूतांचा तो अंतरात्मा आहे.

अशारीतीने हा 'देव' सर्वव्यापी व सर्व भूतमात्रात आत्म्याच्या रूपाने वास करीत असल्यामुळे तो 'आकाशातून खाली उतरतो' हे गोविंदस्वामीचे म्हणणे अलंकारिक अर्थानेच खरे आहे. तो सर्वभूतात्मा असल्यामुळे त्याच्या (आत्म्याच्या आतून) प्रगटण्याला 'आकाशातून खाली उतरणे' असे गोविंदस्वामीने म्हटले आहे. त्याला 'ब्रह्म' समजून 'महदाकाश' म्हटले की त्याचे 'खाली उतरणे' होते, व 'आत्मा' समजून 'चिदाकाश' म्हटले की त्याचे 'बाहेर प्रगटणे' होते. कारण वर म्हटल्याप्रमाणे 'आकाश' (महदाकाशरूपाने) जेवढे 'बाहेर' आहे, तेवढे (चिदाकाशरूपाने) सर्व चराचर वस्तूंच्या 'आत' ही आहे. हे 'उतरणे' वा 'प्रकटणे' अर्थात् स्वाध्यायामुळेच (ईश्वरभक्तीमुळेच) शक्य होते, हे लक्षात ठेवले पाहिजे.

म्हणून उपनिषदे सांगतात :

स्वाध्यायान्मा प्रमदः ॥ (तै.उप.१.११) (स्वाध्यायापासून कधीही ढळू नये.)

तात्पर्य, 'देव' सर्वव्यापी व सर्वभूतान्तरात्मा असल्यामुळे स्वाध्यायामुळे (म्हणजे ईश्वराची भक्ती किंवा प्रेम व अभ्यास यामुळे) आकाशातून (महदाकाशातून) खाली उतरतो; म्हणजेच चिदाकाशातून-अंतरात्म्यातून-बाहेर प्रकटतो. या त्याच्या बाहेर प्रकटण्याला (किंवा खाली उतरण्याला) 'चमत्कार' म्हणतात. (कारण वरील प्रयोगाप्रमाणे तो प्रकटताच निर्जीव लाकूड 'जिवंत' असल्याप्रमाणे व सर्वकांही त्याला 'माहीत' असल्याप्रमाणे वागताना दिसते.) पण तो 'चमत्कार' नसतो. कारण तो देव सर्वव्यापी असल्यामुळे त्याला माहीत नाही असे या विश्वात काहीच नाही. [भगवत् गीता म्हणते: न तदस्ति विना यत्स्यात् मया भूतं चराचरम् । (१०.३९) मत्तः परतरं नान्यत् किंचिदस्ति धनंजयः । (७.७) म्हणजे मी (ईश्वर) ज्यात नाही अशी वस्तू या विश्वात नाही. ज्ञानेश्वर म्हणतात: म्हणोनि अर्जुना मी नसे असा कवणु ठाव असे । (१.३३)] अशारीतीने सर्व चराचरात ईश्वर असल्यामुळे त्यात भरलेल्या त्याच्या शक्तीमुळे जसे एखादे लाकूड कोणताही संस्कृत श्लोक लिहू शकते तसे एखादे गायीचे वासरु संस्कृत श्लोक म्हणू शकते. 'माहीत असणे-नसणे' किंवा 'सजीव-निर्जीव' किंवा 'मूक-बोलका' हा भेद अज्ञानी (मायोपाधीत अडकलेल्या) आपल्या सारख्यांच्या दृष्टीने. 'देवा' च्या ('आकाश' रुपी नैसर्गिक 'तत्त्वा' च्या) दृष्टीने नाही. म्हणून आपल्या (अज्ञान्यांच्या) दृष्टीने तो 'चमत्कार' ठरतो. पण 'देवा' च्या-त्या श्रेष्ठ अतींद्रिय शक्तीच्या-दृष्टीने ती एक वैश्विक नियमानुसार (Cosmic Law) घडणारी नैसर्गिक घटना असते. (वास्तविक या 'वैश्विक नियमाला' च श्रेष्ठ अतींद्रिय शक्ती' हे दुसरे नांव आहे.) हे नियम माहीत करून घेण्याच्या शिस्तबद्ध अभ्यासालाच 'योगशास्त्र' म्हणतात. ह्या शास्त्राची व या वैश्विक नियमाची ओळख नसणारे अज्ञानी लोक अशा घटनांना 'दैवी चमत्कार' म्हणतात, तर 'जास्त शिकलेले' लोक त्यांना 'थोतांड' (fraud) म्हणतात. पण त्या घटना यापैकी काहीही नसतात. ज्यांना ज्ञानही नाही व ईश्वरभक्तीही नाही, असे लोक अज्ञानातून या घटनांचे असे (वरील प्रमाणे) वर्णन करतात.

म्हणून उपनिषदे सांगतात की 'स्वाध्यायापासून कधीही ढळू नये.' आणि चार बोटाइतकी लंगोटी फक्त घातलेला गोविंदस्वामी हा नंगा 'फकीर' ही तेच सांगतो. म्हणून त्याच्या हातून वरील सारखे 'चमत्कार' घडू शकले. म्हणून ज्ञानेश्वर रेड्याच्या मुखाने वेद बोलवू शकले; आणि बहेणाबाईचे गायीचे वासरु संस्कृत श्लोक म्हणू शकले. ज्ञानेश्वरांसारखे योगी, बहेणाबाई सारखी एकनिष्ठ ईश्वरभक्त व गोविंदस्वामींसारखे 'स्वाध्यायात नित्ययुक्त' 'फकीर' कितीजण आहेत? असे

‘चमत्कार’ नेहमी का घडत नाहीत, असा प्रश्न विचारणाऱ्यांनी या गोष्टीचा, अशी शका काढण्याअगोदर, अवश्य विचार करावा. (वास्तविक असे ‘चमत्कार’ या ना त्या स्वरूपात नेहमीच घडत असतात, हे वर वर्णन केलेले ‘अशक्य कोटीतील चमत्कार’ सिध्द करतात; आणि म्हणून त्यांना ‘थोतांड’ म्हणणारेही नेहमीच असणार हेही उघड आहे!)

**सद्गुरुच्या व विविध देवतांच्या रुपाने प्रकटणारी अतींद्रिय शक्ती**  
- प्रस्तुत प्रकरणात अतींद्रिय शक्ती संकटकाळीच विशेषत्वाने प्रकट होत असल्याचे प्रतिपादन केले आहे. तसेच त्यासाठी ईश्वरभक्तीची आवश्यकता असल्याचा दृष्टिकोनही मांडला आहे. याचा अर्थ असा की संकटाबरोबरच तीव्र ईश्वरभक्तीही असेल तर अतींद्रिय शक्तीचे प्रकटीकरण जास्त सहजसुलभ होते. किंबहुना संकटामुळे ईश्वरभक्ती अधिक तीव्र व दृढ बनते, व परिणामी अतींद्रिय शक्तीचे प्रकटीकरण जास्त तत्परतेने होते असे म्हणता येईल. खुद्द बहेणाबाईंचे जीवन चरित्रच याचे उत्तम उदाहरण आहे. किंबहुना स्वतः बहेणाबाईंचे आपल्या अभंगातून हा मुद्दा न कळत प्रतिपादिलेला दिसून येतो. उदा. ती म्हणते :

संकट मांडिले धाव तू झडकरी । विवेक उत्तरी बोधी चित्त ॥२॥  
बहिणी म्हणे ऐशी संकटे दाटती । क्लेश ते वाढती काय सांगू ॥६॥  
(अभंग क्र. ५८५)

न सोडी भजन प्राणही गेलिया । आता देवराया दीनबंधु ॥२॥  
आता या संकटी तुझे शिरी हत्या । राखाव्या अपत्या आपुलिया ॥९॥  
(अभंग क्र. ५८८)

‘प्राण गेला तरी ईश्वरभजन सोडणार नाही,’ ‘या संकटात माझा प्राण गेला तर, हे देवा, त्याचे पातक तुझ्याच माथी बसेल,’ अशा निर्धाराने ईश्वरभक्ती करणाऱ्या बहेणाबाईंसाठी ईश्वररूपी अतींद्रिय शक्ती धावून आली नाही तरच नवल; आणि ती कशी विविध रुपाने धावून आली हे बहिरंभटाच्या स्वप्नात ब्राह्मणाच्या रुपाने येऊन तिला गाय-वासरु देवविणे, त्या गाय-वासरानी बहेणाबाईंचा छळ पाहून ‘तृण-पाणी’ यांचा त्याग करणे, मनुष्यवाणीने त्या वासराने संस्कृत श्लोक म्हणणे यासारख्या ‘चमत्कारा’ तून दिसून येतेच, पण अशाच अन्य ‘चमत्कारा’तूनही नंतर ते दिसून आले आहे. उदा. जयराम स्वामींच्या तोंडून ऐकलेल्या तुकारामांच्या अभंगामुळे तिची तुकारामांवर इतकी भक्ती जडली की मनानेच तुकारामांना तिने आपला गुरु मानले. आणि याचा परिणाम म्हणून एकदा तुकाराम तिच्या स्वप्नात आले व गुरुच्या रुपाने त्यांनी तिला मंत्रदीक्षा दिली. तिने तुकारामांना कधीच पाहिले नव्हते. तथापि नंतर देहूला गेल्यावर जेव्हा तिने तुकारामांचे प्रत्यक्ष

दर्शन घेतले तेव्हा ते स्वप्नात दिसले तसेच होते, असे तिने म्हटले आहे :  
स्वप्नी जो देखिला तेचि ध्यान तेथे / (अभंग क्र. ४२) येथे अतींद्रिय शक्तीने तुकारामांचे  
रूप घेऊन तिची इच्छा तिच्या तुकारामांवरील निष्ठेतून पूर्ण केल्याचे दिसून येते.

माणसाची जशी भक्ती व श्रद्धा असेल तसे त्याचे फळ देण्यात अतींद्रिय  
शक्ती नेहमीच तत्पर असते, हे या उदाहरणावरून दिसून येते. मात्र ही भक्ती बहेणाबाई  
प्रमाणे अंतःकरणापासून केलेली व तळमळीने अभिव्यक्त झालेली असली पाहिजे.  
अशा भक्तीचे फळ तिच्या तीव्रतेनुसार मिळालेच पाहिजे, असा नियम आहे. या  
नियमानुसार घडणाऱ्या घटनांची उदाहरणे हल्लीही पुष्कळ आढळून येतात.  
नमून्यासाठी काही निवडक उदाहरणे दिली तर वाचकांना या नियमाचे स्वरूप चांगले  
कळेल असे वाटल्यावरून काही उदाहरणे येथे देतो.

कोल्हापूर येथील जयश्री दत्तात्रय कुलकर्णी या मुलीला आपल्या  
रामदासपंथी आजीमुळे त्या पंथाचा ओढा लागला होता. श्रीधर स्वामींचे शिष्य  
सज्जन गडावरील करमरकर बुवा यांची कोल्हापूरला कीर्तने व्हायची. ती कीर्तने  
ऐकून जयश्रीला श्रीधरस्वामींबद्दल भक्ती निर्माण झाली. त्यांना तिने मनानेच गुरु  
मानले. कॉलेजला असताना एकदा १९६८ साली दिवाळीच्या सुटीत ती  
सातान्याजवळील बुध या गावी आपल्या आत्याकडे गेली होती. तेथे आत्या धार्मिक  
ग्रंथ वाचत असत. शेजारच्या बायका ऐकायला येत. पण जयश्रीला श्रीधरस्वामींचा  
ध्यास लागला होता. ती स्वामींचा धावा करायची. रात्रंदिवस तोच विचार. रात्री  
झोपही लागायची नाही. कित्येकवेळा ही तळमळ अनावर होऊन ती रडत बसायची.  
त्यावेळी श्रीधरस्वामी कर्नाटक येथील वरदहळ्ळीला (शिवमोगा जिल्हा) होते.  
तिने त्यांना भेटण्याचे ठरवून वरदहळ्ळी विषयीची माहितीही स्टेशनमास्तरकडून  
मिळविली होती. मात्र हे तिने कोणालाही सांगितले नव्हते. तिच्या आत्याकडे ग्रंथ  
ऐकायला येणाऱ्या एका आजीबाईच्या स्वप्नात एकदा एक त्रिशूळधारी विभूती  
आली व तिला तिने सांगितले की, 'तू जेथे ग्रंथ ऐकायला जातेस तेथे एक गाणारी  
मुलगी येते. तिला पाच वर्षांनी मी भेटणार आहे, असा तिला निरोप सांग' असे  
म्हणून ती विभूती अंतर्धान पावली. ही गाणारी मुलगी म्हणजेच जयश्री कुलकर्णी  
होय. दुसरे दिवशी जयश्रीला आजीबाईने आपले स्वप्न सांगितले. ते ऐकून जयश्रीची  
पक्की खात्री झाली की श्रीधरस्वामींनीच स्वप्नात येऊन आपल्याला भेटण्याचे  
आश्वासन दिले आहे. पाच वर्षांनी आपल्याला ते नक्की भेटणार याची तिला खात्री  
झाली व ती वरदहळ्ळीला जाण्याचा बेत रद्द करून कोल्हापूरला आली.

यानंतर तिचे लग्न झाले. पण स्वामींचा दृष्टांत मिळावा म्हणून ती तळमळत  
होती. अचानक एके दिवशी तिला कळाले की श्रीधरस्वामींचे निर्वाण झाले आणि  
तिला मोठाच धक्का बसला. पण सद्गुरु अविनाशी असतात. दृष्टांताप्रमाणे ते

आपल्याला पाच वर्षांनी भेटतील, असे तिचे मन तिला सांगू लागले. त्यासाठी तिने उपवास सुरु केले. आणि खरोखरच पाच वर्षांनी तिचे सद्गुरु तिला भेटले. तिच्या पतीने गांधीनगरला घर घेऊन तेथे आपले बिऱ्हाड केले होते. गांधीनगरला सौ. पागे यांच्या घरी एकदा चिले महाराज आले होते. त्यांच्या भेटीस ती गेली असता ते म्हणाले, “श्रीधरने हे बाळ मला सांभाळायला दिले आहे.” श्रीधरस्वामींचे नांव ऐकून ती बेभान झाली. तिने पुन्हा साश्रू नयनांनी सद्गुरु चरणावर आपले डोके ठेवले. चिले महाराजांच्या रुपाने श्रीधरस्वामीच तिला पाच वर्षांनी भेटले होते !

**साधू दिसती वेगळाले । पती ते स्वरूपी मिळाले । अवघे मिळूनी एकचि झाले । देहातीत वस्तू ॥** ह्या रामदास स्वामींच्या वचनाचा अशारीतीने तीव्र भक्तीमुळे तिला प्रत्यय आला. जिला रामदास स्वामी ‘देहातीत वस्तू’ म्हणतात ती वस्तू म्हणजे त्या परब्रह्माची श्रेष्ठ अतींद्रिय शक्तीच होय. ती ईश्वरावरील भक्तीतून व श्रद्धेतून माणसाला सद्गुरुच्या रुपाने कशी भेटते व त्याची इच्छा पुरविते याचे हे साक्षात उदाहरण आहे. ही जयश्री दत्तात्रय कुलकर्णी म्हणजेच चिले देवांची एकनिष्ठ शिष्या व परब्रह्मगुरु चिलेदेव या ग्रंथाची प्रकाशिका होय. या ग्रंथाचे लेखक कै. बाबूराव अथणे वरील जयश्रीबाईंचे उदाहरण देऊन या संदर्भात म्हणतात, “कुठेही श्रद्धा ठेवून भक्ती करायला लागले की ती भक्ती, तो ध्यास, ती तळमळ परमेश्वरालाच पोहोचते. ताईने (जयश्री बाईंनी) श्रीधरस्वामींना कधीच पाहिले नव्हते. प्रथम भेटीपूर्वीच भगवंताचा निरोप ताईला मिळाला होता. माणसाला देवाचा ध्यास असला की सद्गुरु आपण होऊन त्याच्याजवळ येतो.” १०

ईश्वरभक्तीतून ही अतींद्रिय शक्ती कोणत्याही रुपाने भेटून भक्ताच्या श्रद्धेला कशी फळ देते, त्याची इच्छा पुरविते, याचे आणखी एक उदाहरण देतो.

नर्मदापरिक्रमा किती खडतर आहे व केवळ तीव्र भक्तीतूनच ती कशी पूर्ण होऊ शकते, हे या मार्गातील सर्व लोकांना माहीत आहे. श्री. आबाजी गोखले हे नागपूरचे गृहस्थ. तात्याराव सावरकरांचे पुतणे. विक्रमराव सावरकर आबाजींचे जावई. हे आबाजी एकदा नर्मदापरिक्रमा करीत होते. “एका ठिकाणी नर्मदा किनारी एक मुलगी दिसली. बारा-एक वर्षांची पोर. सुंदर पिवळं पातळ नेसलेली. तशी मुलगी त्या परिसरात कुठेच दिसली नव्हती. नदीकिनारी शेण्या गोळा करीत होती. हळूहळू एकेक टोपलीत टाकत होती. जणू कसलीच घाई नाही. आबाजींना वाटलं, तिला मदत करावी. ते गेले. ते तिला शेण्या भरू लागले. आबाजींनी विचारलं,

“तुम्हारा नाम?” मुलगी म्हणाली, “गंगा.” “गंगा? गंगा कैसे?” आबाजी.

“जी ! ठीक तो है । जब लोग नर्मदा के किनारे रहते हैं तब गंगा ही याद



करते हैं। और गंगा के किनारे नर्मदा याद आती है। है या नहीं?" मुलगी.

"ठीक है। मान लिया।" आबाजी. "अकेले यात्रा करते हैं, कहीं डर तो नहीं लगता?" मुलगीचा प्रश्न.

"क्या कहूँ माई, नर्मदामैय्या की याद करते जाता हूँ। वह आगे है, पिछे है।"

"हाँ। और सामने भी।" मुलगी.

"हाँ। नर्मदामैय्या सब ओर है।" आबाजी. "और सामने भी।" मुलगी.

आबाजींनी ती वाक्ये ऐकली. पण त्यावेळी काही कळलं नाही. तिच्या डोक्यावर टोपली देवून ते आठ-दहा पाऊले गेले मात्र, त्या वाक्याचा अर्थ त्यांच्या घ्यानी आला. अरे, ही दोनदा-दोनदा 'और सामने भी' का म्हणाली? ते चटकन परत फिरले. पण ती मुलगी कुठेच दिसली नाही! याचा अर्थ? अर्थ असा की, नर्मदा मातेनं त्यांना साक्षात दर्शन दिलं होतं."

नर्मदेवरील तीव्र भक्तीमुळे व श्रद्धेतून त्या अतींद्रिय शक्तीने एका मुलीच्या रूपाने नर्मदेवरील भक्ती 'सफळ' केली होती.

तिसरा अनुभव डॉ. माधव रा. पोतदार (M.A. Ph D. आचार्य), धनकवडी, पुणे, यांचा आहे. तो त्यांच्याच शब्दात येतो.

"१९६६ सालापासूनच श्री एकविरा देवीकडे माझा जास्त ओढा सुरू झाला. काही अनुभव आल्यामुळे या देवतेचा मी भक्त बनून गेलो. पण ही भक्ती श्रद्धेची होती. ती प्रदर्शनीय होणार नाही, अशी मी नेहमीच काळजी घेतली होती. का कोण जाणे महाडला (माध्यमिक शिक्षक म्हणून) असताना एकसारखे कार्याला जावेसे वाटू लागले. मी मनाने तसा निश्चय करून एकटाच निघालो. त्यावेळी लोणावळा ते कार्ला अशी गाडी होती. मी जेव्हा गाडीने कारल्याला आलो त्यावेळी टळटळीत दुपार झाली होती. सर्वांगाला उन्हाचे चटके जाणवत होते. जेव्हा गड चढायला लागलो तेव्हा रस्ता जवळ जवळ निर्मनुष्य होता. कुठेतरी एखाद्या झुडुपात कसला तरी आवाज होई तेवढाच. बाकी सगळीकडे शांतता होती. पहिल्यांदाच गड चढत होतो. त्यामुळे दम खात-खात जाणे भाग होते. रस्ता बराचसा खडकाळ होता. साधारणपणे मी मध्यावर आलो आणि मळकट भरलेली एक तय्योवृद्ध बाई माझ्यापुढे आली. ही अचानक कोठून आली असा विचार करीत असतानाच ती अगदी जवळ येऊन उभी राहिली. जुने नेसलेली, चेहऱ्यावर सुरकुत्या पडलेली आणि आपल्या गरीबी परिस्थितीची ओळख करून देणारी तिची शरीरयष्टी पाहून माझ्या मनात दया आली. तिने कसे ओळखले कोण जाणे, माझा हात खिशाकडे जाण्यापूर्वीच तिने माझ्यापुढे हात पसारले. मात्र काहीही बोलली नाही. फक्त लाचारीची स्पष्ट छटाच चेहऱ्यावर स्पष्टपणे उमटली होती. मला वाटते, हिला बोलताही येत नसावे. कारण तिच्या सर्व हालचालींतून फक्त खुणाच स्पष्ट होत

होत्या खिशातून मी काही नोटा व सुटी नाणी काढून तिच्या हातावर ठेवली आणि आपल्याला अजून पल्ला गाठायचा आहे असे म्हणून निघालोही. फक्त चार पाउले पुढे गेलो आणि का कोण जाणे सहज वळून पाहवेसे वाटले; आणि पाहतो तो काय? तिथे कोणीच नव्हते. अरे, एका क्षणात ही बाई गेली कुठे म्हणून मी मागे येऊन शोध घेतला. पण ती कुठेच दिसली नाही.

“हा प्रसंग मी महाड येथे आल्यानंतर काही श्रद्धाळूंना सांगितला, तेव्हा ते म्हणाले, ‘माधवराव तुम्ही भाग्यवंत आहात. एकविराची जी श्रद्धेने भक्ती केलीत त्याची तुम्हाला तिने पावतीच दिली!’ ”<sup>११</sup>

प्रकरण ७ मध्ये वि.स.पागे व संत फुटाणे यांना त्याच्या पंढरपूर येथील हरिजन मंदिरप्रवेशाच्या सत्याग्रहाच्या वेळी संत चोखोबांचे दर्शन असेच अचानक झाल्याचा वृत्तांत कथन केला आहे. त्यावेळीही संत चोखोबा असेच दोन पाउलावर अचानक अदृश्य झाले होते. वरील तिन्ही उदाहरणांत व्यक्ती अचानक ‘दृश्य’ स्वरूपात दिसणे व अचानक ‘अदृश्य’ होणे हा प्रकार घडला आहे. ही अतींद्रिय शक्तीचीच करामत आहे. ह्या अतींद्रिय शक्तीने त्या त्या व्यक्तीच्या भक्तीनुसार व श्रद्धेनुसार त्या त्या प्रसंगी ती ती रूपे घेऊन दर्शन दिले व त्यांची इच्छा (त्याची अपेक्षा नसतानासुद्धा) पुरविली, असे दिसून येते. (त्याची अपेक्षा धरली तर मात्र ती कधीच फलद्रुप होत नाही असे आढळून येते !) आध्यात्मिक प्रगतीच्या दृष्टीने पाहता अशा अनपेक्षित दर्शनांना मानसिक समाधानापलीकडे वास्तविक काहीच महत्त्व नाही.<sup>१२</sup> जयश्रीबाई व बहेणाबाई यांची गोष्ट मात्र वेगळी आहे. त्यांना आपल्या जन्माचे सार्थक करणाऱ्या सद्गुरूचा ध्यास लागला होता आणि तो अंतःकरणापासून होता. त्यासाठी त्या दोघी तळमळत होत्या. भक्तीपुढे प्राणाचीही त्यांना पर्वा नव्हती. (प्राण गेला तरी भजन सोडणार नाही, असे बहेणाबाई म्हणते, आणि एकदा जयश्रीबाईंनी निराशेतून झोपेच्या २५ गोळ्या खाल्ल्या होत्या. पण चिलेदेवांनी तिच्या प्राणांचे रक्षण केले होते.) अशावेळी अतींद्रिय शक्तीला सद्गुरूंचे केवळ दर्शनच नव्हे तर त्यांचा सततचा सहवास मिळवून देणे भाग पडते; आणि तिने तो सहवास त्यांना प्रत्यक्ष मिळवूनही दिला. जयश्रीबाईंना, त्यांनी मनानेच वारलेले श्रीधरस्वामी हे सद्गुरू चिलेमहाराजांच्या रुपाने भेटले, आणि त्यांच्या कित्येक वर्षांच्या सहवासाने त्यांनी आपल्या जीवनाचे सार्थक करून घेतले. (उपयुक्त संदर्भग्रंथ पाहा.) बहेणाबाईलाही तुकारामांचा ध्यास लागला होता; आणि वर म्हटल्याप्रमाणे तिने तुकारामांना पूर्वी कधीही पाहिलेले नसताना सुद्धा तिला ते स्वप्नात जसे दिसले, तसेच प्रत्यक्षात असल्याचे तिला नंतर आढळून आले. हीही अतींद्रिय शक्तीची करामतच. पण मनुष्यजन्माचे कल्याण करणारी, जशी माणसाची भक्ती व श्रद्धा असेल तसे फळ देणारी. नर्मदेला एका मुलीच्या रुपात पाहण्याचे ‘भाग्य’ फारच

थोड्याना लाभते, हे खरे आहे. (वासुदेवानंद सरस्वती उर्फ टेबेस्वामींनाही तिचे असे दर्शन झाले होते.) पण ह्याचा टिकाऊ स्वरूपातील आध्यात्मिक लाभ काय? शेवटी ते 'दृश्य' क्षणाभंगूरच. शेवटी ती 'माया'च. मायेचे ज्यांना आकर्षण आहे, अशाना तो 'भाग्या' चा क्षण वाटतो. पण शेवटी माया ती मायाच. तिच्यात गुरफटणे हे, खऱ्या आध्यात्मिक प्रगतीच्या दृष्टीने (म्हणजे वासना व मनोविकार जिंकण्याच्या दृष्टीने) पाहता एकप्रकारचे बंधनच, अडथळाच आहे. मायेच्या पलीकडे फक्त सद्गुरूच नेऊ शकतो; आणि अशा सद्गुरूंचा लाभ बहेणाबाईला व जयश्रीबाईंना झाला, आणि तोही त्याच अतींद्रिय शक्तीमुळे. 'या' अतींद्रिय दृष्टीने पाहता त्या खऱ्या भाग्यवान होत.

अशारीतीने बहेणाबाईला तुकारामांनी स्वप्नात गुरुरूपाने दर्शन दिले व मंत्रदीक्षा देऊन आपल्या कृपाछात्राखाली घेतले. पण ही अतींद्रिय शक्तीची माया (म्हणजे खोटे रूप) नसेल कशावरून? कारण बहेणाबाईला तुकारामांच्या भेटीची शक्यता मुळीच वाटत नव्हती, आणि ही माया नसल्याचे पुन्हा त्या अतींद्रिय शक्तीनेच दाखवून दिले. पुन्हा काही दिवसांनी तुकाराम तिच्या स्वप्नात आले आणि 'येथे राहू नका, देहूस या' असा आदेश त्यांनी तिला दिला.

तथापि याचा परिणाम वेगळाच झाला. तिची तुकारामांवरील भक्ती वाढत असल्याचे पाहून गंधाधरपंत तुकारामांचा मोठा द्वेष बनला. शूद्र तुकारामामुळे आपली बायको पुरती बिघडली, ब्राह्मणधर्म बुडवायला ती निघाली, याची मनाशी खूणगाठ बांधून त्याने तीन महिन्यांची गरोदर पत्नी व घर यांचा त्याग करून संन्यास घेण्याचा निर्णय घेतला. नवऱ्याच्या या निर्णयामुळे बहेणाबाईपुढे एक नवेच संकट उभे ठाकले. कारण पतीव्रता अशा त्या कुलस्त्रीला 'भ्रताराविण' जगणेच अशक्य होते.

**अंगाचा दाह करणारी अतींद्रिय शक्ती -** आणि या नव्या संकटात अतींद्रिय शक्ती पुन्हा तिच्या मदतीसाठी धावून आली. पुन्हा 'चमत्कार' घडला. उद्या तो घर सोडून जाणार तोच आदल्या दिवशी त्याच्या शरीराची भयंकर आग होऊ लागली. त्या भयानक त्रासाने तो अंथरुणाला खिळला. नाना तऱ्हेचे वैद्यकीय उपचार केले. शेवटी देवदेवस्कीही केली. पण कशानेही गुण येईना. अन्नाशिवाय एक महिना गेला. अंथरुणाजवळ बसून सतत त्याची सेवासुश्रूषा करणारी ती पतीनिष्ठ स्त्री त्याच्या तळमळीचे वर्णन करताना म्हणते, '**व्यथा ही अद्भुत सोशितसे!**' (अभंग क्र. ३९)<sup>१४</sup>

शेवटी ही व्यथा सहन न होऊन 'मी तुकारामांचा द्वेष केल्यामुळे ही व्याधी मला जडली असेल तर मी तुकारामांची मनापासून क्षमा मागतो, ही माझी व्याधी जाऊ दे,' असे पश्चात्तापाचे उद्गार त्याच्या तोंडून निघाले. त्याबरोबर पुन्हा

‘चमत्कार’ घडला. एक वृध्द ब्राह्मण त्याच्याकडे आला आणि त्याने बहेणाबाईची बाजू घेऊन त्याला खऱ्या ब्राह्मणधर्माचा उपदेश केला. त्या वृध्द ब्राह्मणाचे वरण वंदून गंगाधरपंताने त्याच्याकडे जीवदान मागितले व येथून पुढे पत्नीला एका शब्दानेही (वाईट) बोलणार नाही, असे त्यास वचन दिले. त्याबरोबर तो ब्राह्मण अदृश्य झाला आणि अल्पावधीत त्याच्या शरीराचा दाह नाहीसा झाला. म्हणजे पुन्हा तिसऱ्यांदा दोन ‘चमत्कार’ घडले.

अशारितीने बहेणाबाईच्या ईश्वरभक्तीमुळे तिच्या संकटकाळी तिच्या नवऱ्याच्या शरीराचा दाह होणे, वृध्द ब्राह्मणाच्या रुपाने उपदेश करणे, वचन देताच दाह अल्पावधीत नाहीसा होणे, अशा स्वरूपात तिच्यासाठी अतींद्रिय शक्ती धावून आली असल्याचे येथे दिसून येते.

**अग्नीच्या रुपाने प्रकटणारी अतींद्रिय शक्ती** - नंतर तुकारामांच्या स्वप्नातील आदेशाप्रमाणे बहेणाबाईचे कुटुंब (नवरा, आईवडील व बंधू) आपल्या कपिला गायीसह देहूस रहावयास आले. पण देहूत थोड्याच दिवसात मंबाजी गोसाव्याच्या रुपाने त्यांच्यापुढे एक नवेच संकट उभे राहिले. कारण शूद्र तुकारामाला सोडून त्यांनी आपले शिष्यत्व पत्करावे असा लकडा त्याने त्यांच्या पाठीमागे लावला. शेवटी ते आपले ऐकायला तयार नाहीत हे पाहून एके दिवशी त्यांची कपिला गाय त्याने चोरून नेली व तिला तृणपाणी न देता तीन दिवस कोंडून ठेवले. वर सोढ्याने तिला मारही दिला. इकडे तिचा शोध सुरू झाला. एका रात्री तुकारामांना स्वप्नात आपल्याला कोणीतरी सोढ्याने मारत असल्याचे जाणवले आणि जागे होताच अंगावर वळ उठलेले व अंग सुजलेले आढळून आले. याचवेळी तिकडे मंबाजी गोसाव्याच्या घराला अचानक आग लागली आणि गाय ओरडू लागली. तेंव्हा लोकांनी तिची त्या घरातून सुटका केली. गाय सापडल्याचा आनंद झाला, पण तिच्या अंगावर माराचे वळ लोकांना दिसले आणि ते वळ तुकारामांच्या अंगावर व पाठीवर जसे होते तसेच नेमके असल्याचे त्यांनी पाहिले. स्वतः रामेश्वर भट्ट (एके काळचा तुकारामांचा द्वेषी, पण गंगाधरपंताप्रमाणेच अतींद्रिय शक्तीचा ‘धडा’ मिळाल्यामुळे शहाणपणा येऊन तुकारामांचा एकनिष्ठ भक्त बनलेला) तेथे आला व त्याने दोघांच्या अंगावरील वळ सारखेच असल्याची आपली खात्री करून घेतली. (अभंग क्र. ५३)

येथे पुन्हा अतींद्रिय शक्ती अग्नी बनून मंबाजीचे घर जाळणे व गायीची सोडवणूक करणे, गायीला मारलेला मार तुकारामांना बसणे, तसेच त्या माराचे वळ तुकारामांच्या अंगावर उठणे अशा स्वरूपात, बहेणाबाईच्या तुकारामांवरील भक्तीमुळे व निष्ठेमुळे, तिच्या मदतीला धावून येऊन तिला तिने संकटमुक्त केल्याचे दिसून येते. अशारितीने ईश्वरभक्ती कोणताही ‘चमत्कार’ करू शकते, हे वरील उदाहरणांतील

अतींद्रिय शक्तीचे विविध रुपातील प्रकटीकरण दाखवून देते. गायीला मारलेला मार आपल्याला बसल्यामुळे व त्याचे वळही आपल्या अंगावर उडून अंग सुजल्यामुळे तुकारामांना सर्वाभूती एकच आत्मा वास करीत असल्याची रोकडी प्रचीती आली व 'तुझा माझा एक, आत्मा सर्वांगत। ते साक्षी निश्चित आली मज।' असे गायीला उद्देशून त्यांनी उद्गार काढले व तिला प्रदक्षिणा घालून नमस्कार केला. (अभंग क्र.५२) पण हा गायीने केलेला 'चमत्कार' नसून बहेणाबाईची ईश्वरभक्ती व तुकारामांवरील गुरुनिष्ठा यातूनच अतींद्रिय शास्त्राच्या एका प्रसिध्द नियमानुसार घडलेली ती एक नैसर्गिक घटना होती. या नियमाला The Law of Sympathetic Vibrations (सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांचा नियम) म्हणतात. हा नियम शास्त्रीय आहे. कारण गायीला मारलेला मार इतर कोणालाही न बसता (वास्तविक सर्वाभूती एक आत्मा वास करीत असेल तर तो मार इतर कोणालाही का बसू नये?) किंबहुना बहेणाबाईलाही तो मार न बसता, तुकारामांचा का बसला, याची शास्त्रीय उपपत्ती तो नियम देतो. मंबाजीचा राग वस्तुतः त्या गायीवर नव्हता, बहेणाबाईवरही नव्हता, तर तो 'शूद्र' तुकारामांवर होता. मंबाजीचा खरा शत्रू (त्याच्या दृष्टीने) तुकाराम होते. गाय किंवा बहेणाबाई नव्हती. 'सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांचा नियम' सांगतो की ज्या व्यक्तीशी आपले भावनिक संबंध गुंतले आहेत-मग ती भावना प्रेमाची असो अगर द्वेषाची-ती व्यक्ती त्या भावनेच्या सादाला प्रतिसाद देते. (मात्र ती भावना उत्कट असावी लागते.) हा भावनिक प्रतिसाद मानसिक पातळीवर 'टेलिपथी'च्या (विचार संक्रमणाच्या) रूपाने प्रकट होतो, तर शारीरिक पातळीवर मार, वळ, रोग, वेदना या रूपाने प्रकट होतो. याच नियमानुसार मंबाजीने गायीला मारलेला मार तुकारामांना बसला व त्यांच्या अंगावर वळ उठले. (येथे गाय व तुकाराम यांचा 'आत्मा' च नव्हे तर 'शरीर' सुध्दा 'एक' च असल्याचे हा अतींद्रिय पातळीवरील नियम सिध्द करतो.) अशा प्रकारे एकाला मारलेला मार दुसऱ्याला बसण्याचा प्रकार अतींद्रिय पातळीवरील संबंधामुळे-म्हणजे ईश्वरभक्तीमुळे वा आध्यात्मिक नात्यामुळे (उदा. गुरु-शिष्य संबंध) प्रामुख्याने घडतो. तथापि तो रक्ताच्या नात्यातील व उत्कट प्रेम संबंधातूनही घडू शकतो. येथे आध्यात्मिक संबंधातून अशा प्रकारे अलीकडे घडलेले एक उदाहरण देतो. हा अनुभव सोलापूरचे सद्गुरु नाना पाठक यांचे शिष्य श्री. पाटोळे यांचा आहे.

**शिष्याला मारलेल्या छडीचे वळ गुरूच्या पाठीवर** - "आता मी जो अनुभव सांगणार आहे, तो अनेकांना अनाकलनीय वाटेल. पण माझ्या याच डोळ्यांनी मी तो प्रत्यक्ष पाहिला आहे."

"घरगुती पेचप्रसंग सोडवण्यासाठी मी एकदा पुण्याला गेलो होतो. आमचे नातेवाईक जमले होते. दुदैवाने गोष्ट मुद्यावरून गुद्यावर आली व माझ्या एका

नातेवाईकाने रागाच्या भरात मला एकदम वेताच्या छडीने झोडपणे सुरु केले. वेताच्या छडीचा मार खूप लागतो. पण मला त्यावेळी असे जाणवले की ज्या आवेगाने मला मारले जात होते, त्याप्रमाणात मला मार बसत नव्हता. मनुष्य कितीही कठोर असला तरी वेदना होताच 'आईडगं' हे उद्गार येतातच. पण येथे मात्र माझ्या तोंडून माझी गुरु माऊली "नाना" असाच उद्गार बाहेर पडत होता. मी सोलापूरला परतलो. दुःख हलके करावे म्हणून दुसऱ्यादिवशी नानांकडे गेलो. नानांनी नेहमीप्रमाणे स्वागत केले, "काय पाटोळे, कशी काय झाली पुण्याची ट्रिप?" त्यावर मी उदास होऊन नानांना पुण्यातील प्रसंग सांगू लागलो. तो कॉटवरून उठून नाना एकदम उभे राहिले व अंगावरील कपडे काढून त्यांनी आपली पाठ मला दाखवली. नानांच्या पाठीवर ते वळ बघताच माझे अश्रु मला आवरेनात ! मंबाजी गोसाव्याने बहेणाबाईच्या गायीला सोट्याने मारले, तो ते घाव तुकोबांनी सोसले व त्याचे वळ पाठीवर उमटले! धन्य ते सद्गुरु ज्यांनी माझ्यासारख्या सामान्य भक्ताच्या वेदना सहन केल्या व आत्मैक्य भावनेचा प्रत्यक्ष अनुभव दिला.

वि. कृ. पाटोळे, (सिनियर क्लार्क)

सेंट्रल रेल्वे, मॅनेजर ऑफिस, सोलापूर. "१५

याच 'सहानुभूतीयुक्त अनुकंपनांच्या नियमा' ला अनुसरून गुरु आपल्या शिष्यांचे रोग आपल्या शरीरात घेतात, स्वतः त्यांचे दुःख सोसतात व त्यांना रोगमुक्त करतात. कोल्हापूर येथे चिलेमहाराजांनी आपल्या अनेक भक्तांचे रोग अशारीतीने आपल्या शरीरात घेऊन त्यांना रोगमुक्त केल्याची उदाहरणे आहेत. येथे अशा प्रकारचे एक उदाहरण देतो. चिलेमहाराजाचे एक परमभक्त कोल्हापूरचे सिनेव्यावसायिक श्री. बाबूराव अथणे लिहतात,

"मी गुरुदेवांच्या दर्शनासाठी जांभळीकर मास्तरांच्या घरी गेलो. 'गुरुदेव एक तासापूर्वी बाहेर गेलेत' असे श्री. जांभळीकरांच्या मातोश्रींनी मला सांगितले. देवांना हुडकण्यासाठी मी त्यांच्या घरातून बाहेर पडणार, तोच मातोश्रींनी काहीतरी आठवल्यासारखे होऊन मला हाक मारली. मी पुन्हा आत गेलो. त्यांच्या चेहऱ्यावर उत्सुकता दिसली. तशा आविर्भावातच त्यांनी मला प्रश्न केला, 'अहो अथणे, गुरुदेव म्हणत होते की अथणेला गिळता येत नाही, मलाही गिळता येत नाही. देव आज एक घासही जेवले नाहीत. खरंच तुम्हाला गिळता येत नाही?' त्यांचा प्रश्न ऐकून नकळत माझे डोळे पाणावले. पुन्हा त्यांनी मला विचारले, 'खरंच तुम्हाला त्रास होतो का?' त्यांची उत्सुकता पाहून मी घडलेली बस्तुस्थिती सांगू लागलो; 'मातोश्री, माझा घसा खरोखरच ठणकत होता. उद्या टॉन्सिल्स काढायच्या असं नाइलाजानं मी ठरवलं होतं. आज सकाळी डॉक्टरकडून औषध आणलं. घरी आल्यावर ठणका अतिशय वाढला. पलंगावर पडलो आणि अचानक मला गाढ

झोप लागली. संध्याकाळी पाच वाजता मी जागा झालो. आणि काय सांगू! माझा असह्य ठणका कुठल्या कुठे पळून गेला होता. खात्री करण्यासाठी मी जेवलो आणि देवांच्या दर्शनासाठी मी तुमच्याकडे आलो. आईसाहेब, तुम्ही सांगता की, 'देवांना गिळता येत नव्हतं, देव जेवले नाहीत.' खरोखर, माझाच आजार देवांनी घेतला आणि मला बरे केले.' त्यावर त्या म्हणाल्या, 'देव भक्ताची सर्व काळजी घेतो बाबा. तुम्ही भाग्यवान आहात.' "

अनन्यश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।

तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥ (भ. गी. ९. २२)

म्हणजे 'माझी अनन्यभावाने जो भक्ती व उपासना करतो त्याची भौतिक (क्षेम) व पारमार्थिक (योग) अशा दोन्ही क्षेत्रातील सर्व काळजी मी वाहतो.' या गीतेतील कृष्णाच्या वचनाप्रमाणे गुरु आपल्या शिष्यांची सर्व जबाबदारी आपल्यावर कशी घेतात, याविषयीची चिलेदेवांची श्री. अथणे यांनी अनेक उदाहरणे आपल्या ग्रंथात दिली असून वरील उदाहरण त्याचा फक्त एक नमूना आहे. ('स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्यात्, अंबरात् अवतरति देवः' या गोविंदस्वामींच्या वचनाप्रमाणे येथे 'आकाशा'तून अगोदरच 'अवतरलेल्या' चिलेदेवांनी असे अनेक 'चमत्कार' करून दाखवले आहेत.) एका भक्ताची पोटदुखी त्यांनी घेतली, तर आणखी एका भक्ताच्या आईची (उपर्युक्त जांभळीकरांच्या मातोश्रींची) असाध्य पोटदुखी 'दुरून ऑपरेशन' करून. (म्हणजे एक कागद कात्रीने कातरून व परत तो सुईदोऱ्याने शिवून!) श्री. तानाजी जाधव यांच्या पत्नीच्या प्रसूतिवेदना आपल्या शरीरात घेवून एक तासपर्यंत तेलाने चिलेदेवांनी आपली कंबर चोळून घेतल्यामुळे तिची प्रसूति सुलभ झाली. अशाप्रकारची त्यांनी दिलेल्या अनेक उदाहरणांपैकी ही काही उदाहरणे. गुरुदेव भक्तासाठी कोणतेही दुःख सहन करायला तयार असतात, याचे रामकृष्ण परमहंस हे एक उत्कृष्ट उदाहरण आहेत. त्यांनी याच 'सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांच्या नियमा'नुसार आपले परमभक्त गिरीष यांच्या पापांची निष्कृती घशातील कॅन्सरच्या रूपाने आपल्या शरीरात घेऊन केल्याचे मागे सांगितले आहे. (याच रोगाने त्यांनी आपले अवतारकार्य संपविले.) सत्यसाईबाबांनीही आपल्या एका भक्ताचा पक्षघात आपल्या शरीरात याच पध्दतीने घेतला. थोरेसा न्यून या जोगिणीने एका तरुण पुरोहिताचा घशाचा रोगही याच नियमानुसार घेतला. (पृ. २३१) अशा प्रकारचे 'सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांच्या नियमा'नुसार होणारे संदेशवहन किंवा रोग संक्रमण आईबाप व मुले, जुळे भाऊ व बहिणी यांच्यातही होत असल्याची ५०० च्या वर उदाहरणे डॉ. बर्थोल्ड स्क्वार्झ याने संकलित केल्याचे मागे सांगितले आहे. (पृ. २३१) त्याच ठिकाणी जेम्स विल्सन या केंब्रिज युनिव्हर्सिटीच्या विद्यार्थ्याला लिव्हरपूलमधील मरणासन्न अवस्थेतील आपल्या जुळ्या भावाच्या मृत्यूचा साक्षात

अनुभव कसा आला याचे वर्णन केले आहे. मेहेरबाबांच्या निर्याणाचा संदेश उपरोल्लेखित सद्गुरु नाना पाठक यांना अशाचरीतीने (अस्वस्थतेने) शरीराच्या माध्यमातून मिळाला व “मला जाळा, वाटल्यास पुरा ! किंवा बर्फात ठेवा” असे ते बडबडू लागले. दुसरे दिवशी मेहेरबाबांच्या निर्याणाची बातमी व नंतर बाबांच्या देहाबद्दल काय करावे ही तेथे सुरु असलेली चर्चा इ. गोष्टी कळाल्या व वरील ‘बडबड’ म्हणजे मेहेरबाबांचाच नाना पाठकांच्या मुखाने आलेला ‘संदेश’ असल्याचे स्पष्ट झाले. डॉ. बर्थोल्ड स्व्वार्झने दिलेल्या अनेक उदाहरणांपैकी एका उदाहरणात आपल्या आईच्या दाढदुखीचा अनुभव एका व्यक्तीला कसा आला, त्यामुळे दंतवैद्याकडे तो कसा गेला, हेही मागे (त्याच ठिकाणी) सांगितले आहे. विशेष म्हणजे त्याच्या आईने काढून घेतलेल्या दाढेची व त्याच्या दुखणाऱ्या दाढेची जागा एकच होती. ही सर्व sympathetic vibrations च्या (सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांच्या) नियमानुसार घडणाऱ्या घटनांची उदाहरणे असून आध्यात्मिक क्षेत्रातील गुरु-शिष्यांच्या संबंधात गुरु आपण होऊन त्या घटना घडवून आणतात. तर आईबाप व जुळी भावंडे यांच्या बाबतीत त्या अभावितपणे (नैसर्गिकरीत्या) घडून येतात.

**विचार व भावना यातून मूर्त रूपाने प्रकटणारी अतींद्रिय शक्ती**  
 - मंबाजीने गायीला मारलेला मार जसा तुकारामांना बसला, तसे पंढरपुरात विठ्ठलाच्या पूजाऱ्याने चोखोबाच्या थोबाडात मारल्यामुळे तो मार मूर्तीला बसून त्या मूर्तीचा गाल सुजल्याची घटना महीपतीने भक्तविजय ग्रंथात वर्णिली आहे. ईश्वर सर्व वस्तूत वास करीत असल्यामुळे (एको देवः सर्वभूतेषु गूढः - श्वेता.उप.) चोखोबाला बसलेला मार विठ्ठलाच्या दगडी मूर्तीला बसू शकतो, ही अतींद्रिय वस्तुस्थिती आहे. चोखोबांच्या (आध्यात्मिक) दृष्टीने विठ्ठलाची मूर्ती दगड नसून प्रत्यक्ष विठ्ठलच असल्यामुळे (व ‘पाषाण देव पाषाण पायरी। पूजा एकावरी पाय ठेवी ॥ सार तो भाव सार तो भाव। अनुभवी देव तेचि झाले ॥’ या तुकारामांच्या वचनाप्रमाणे पाषाणातसुद्धा देवाचा भाव ठेवला तर तो देव अनुभवाला येतो हा अतींद्रिय-आध्यात्मिक-विज्ञानाचा नियम असल्यामुळे) चोखोबांच्या थोबाडात मारलेला मार विठ्ठलाच्या थोबाडात बसून त्या मूर्तीचा गाल सुजावा, यात अतींद्रिय विज्ञानाच्या दृष्टीने काहीच आश्चर्य नाही. वस्तुतः ‘सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांचा नियम’ सुद्धा एका मूलभूत आध्यात्मिक नियमावर आधारलेला असून तो नियम योगसारोपनिषदात पुढीलप्रमाणे सांगितला आहे. - ‘चितिमूर्तिमती। सा चाप्रतिहता शक्तिः ॥’ म्हणजे ‘विचार (किंवा भाव) ही प्रत्यक्ष वस्तूच असून (Thought is thing) त्याची शक्ती अप्रतिहत आहे; म्हणजे त्या शक्तीच्या प्रकटीकरणाला सजीव/निर्जीव, मुका/बोलका इ. प्रकारचे कसलेही भेद अडथळा करू शकत नाहीत.’ ‘विचार’ म्हणजेच ‘वस्तू’ असा नियम असल्याचे कारण सर्व



‘वस्तू’त एकच ‘देव’ आहे. (एको देवः सर्वभूतेषु गूढः) म्हणजेच सर्व वस्तूत एक ‘चैतन्य’ भरले आहे, हे आहे. म्हणूनच ‘निर्जीव’ लाकडी तुकडा जिवंत असल्याप्रमाणे आपणहोऊन संस्कृत श्लोक लिहू शकला. (या आपोआप लिहिण्यालाच पाश्चात्य अतींद्रिय विज्ञानात psychokinesis-मनश्चलनशक्ती-म्हणतात. पण या शक्तीमुळे तो तुकडा कोणताही संस्कृत श्लोक (किंवा कोणत्याही भाषेतील वाक्य) कसा लिहू शकतो याची उपपत्ती लागत नाही. ती उपपत्ती केवळ ब्रह्मविज्ञानच-तिचे अतींद्रिय तत्त्वच-देऊ शकते. आणि ती उपपत्ती देणारे तत्त्व म्हणजे वर स्पष्ट केल्याप्रमाणे ‘ब्रह्म’ किंवा ‘आत्मा’ यापासून पहिल्या प्रथम उत्पन्न झालेले व अंतर्बाह्य सर्व चराचर विश्व व्यापून राहिलेले ‘आकाश’ हे तत्त्व होय-ज्या तत्त्वाला ‘माहीत नाही’ असे या विश्वात काहीच नाही व ते करू शकत नाही अशी कोणतीही गोष्ट वा ‘चमत्कार’ या विश्वात नाही. (पृ. २९२-९३) हे तत्त्व सजीव-निर्जीवामध्ये सारखेच व्याप्त असल्यामुळे विठ्ठलावरील चोखोबाच्या तीव्र भावभक्तीमुळे विठ्ठलाच्या दगडी मूर्तीचा गाल चोखोबाच्या थोबाडात मारल्यामुळे सुजला. म्हणजे येथे चोखोबा विठ्ठलच (विठ्ठलाची मूर्तीच) झाले आणि तुकारामांचे ‘अनुभवी देव तेचि झाले’ हे वचन ‘सार तो भाव । सार तो भाव ॥’ (Thought is thing = चित्तिर्मूर्तीमती ।) या अतींद्रिय नियमाप्रमाणे सत्य ठरले. (सार म्हणजे thing, भाव म्हणजे thought)

या तत्त्वाचे प्रात्यक्षिक चिलेमहाराजांनी जांभळीकरांच्या मातोश्रींवर वर सांगितल्याप्रमाणे अलीकडच्या काळात करून दाखवले आहे. कोल्हापूरच्या श्रीमती अनुसया विष्णुपंत जांभळीकर यांना पोटदुखीचा असाध्य रोग जडला होता. जेवण झाले की पोट असह्य वेदनांनी दुखू लागायचे. आपला यातच शेवट होणार असे त्यांना नेहमी वाटायचे. एकदा चिले महाराज त्यांच्या घरी आले आणि त्यांना “आई, ऑपरेशन करूया हं.” असे म्हणाले. कागद, सुई, दोरा व कात्री हे साहित्य त्यांनी मागून घेतले आणि पंचगंगा घाटाच्या गोपाळकृष्ण मंदिराकडे त्यांना व इतर भक्तांना ते घेऊन गेले. त्यांनी अनुसयाताईंना मंदिराच्या कट्ट्यावर बसविले व आपण काही अंतरावर बसून बरोबर आणलेला कागद विशिष्ट रीतीने कातरून, पुन्हा विशिष्ट रीतीने तो सुईदोन्याने शिवला. कागद कातरतांना आपल्या पोटात काहीतरी कातरले जात आहे अशी अनुसयाताईंना जाणीव होत होती. पुन्हा तो कागद शिवत असतानाही पोटात शिवत असल्याची जाणीव होत होती. हे ‘ऑपरेशन’ संपल्यानंतर त्यांना हलके वाटू लागले. महाराजांनी अनुसयाताईंना थोडे पाणी प्यायला दिले आणि प्रेमळ शब्दात म्हणाले, “आई, तू आता घरात दोन दिवस पडून राहा. कोठे फिरू नको.” त्यानंतर आजतागायत २५ वर्षांत अनुसयाताईंचे पोट एकदाही दुखले नाही.”

येथे 'कागद' हे चिलेमहाराजाच्या विशिष्ट विचारामुळे अनुसयाताईंच्या पोटातील 'दुखणारे अवयव' बनले आणि ते कातरण्याची व शिवण्याची त्यांची क्रिया हे त्या अवयवावरील 'ऑपरेशन' बनले. हे ऑपरेशन अर्थात् त्यांनी 'सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांच्या नियमा'नुसार म्हणजे दुरुन-त्यांच्या शरीराला हात न लावता-केले. येथे 'निर्जीव' (जड) वस्तूवरील 'ऑपरेशन'मुळे 'सजीव' (चैतन्ययुक्त) व्यक्तीची व्याधी बरी झाली आहे. सजीव-निर्जीव हा भेद अनुसयाताईंच्या गुरुभक्तीमुळे (त्या चिलेदेवांच्या अनन्य भक्त होत्या) आणि चिलेदेवांच्या आपल्या भक्तांवरील प्रेयामुळे येथे नाहीसा झाला आहे. 'स्वाध्याये नित्ययुक्तः स्यात्, अंबरात् अवतरति देवः' या (गोविंदस्वामीच्या) वचनाप्रमाणे स्वाध्यायरूपी भक्तीमुळे (अशिक्षितांची 'भक्ती' हाच 'स्वाध्याय' आहे.) 'आकाश' तत्त्वातून चिलेदेवांच्या रूपाने उतरलेल्या 'देवा' ने (श्रेष्ठ अतींद्रिय शक्तीने) -सजीव-निर्जीव हा भेद येथे नष्ट केला आहे-जसे चोखोबांच्या विठ्ठलभक्तीमुळे चोखोबा व विठ्ठलाची दगडी मूर्ती यातील भेद नष्ट केला होता.

विचार (किंवा भावना) आणि भौतिक (जड) पदार्थ यात अतींद्रिय विज्ञानाच्या दृष्टीने कसलाच भेद नसल्यामुळेच वरीलसारखे व्यावहारिक पातळीवर 'अविश्वसनीय' (incredible) वाटणारे 'चमत्कार' घडतात. याच 'विचार' म्हणजेच वस्तू' (thought is thing) तत्त्वातून माणसाला कल्पनेने रोग होतात व झालेले रोग अकल्पितपणे बरे होतात. " जालीम (रामबाण) औषध म्हणून नुसते साधे पाणी दिले तरी (placebo) असाध्य रोग बरे होतात. 'हृदयावरील शस्त्रक्रिया करतो' म्हणून काही शस्त्रविशारद डॉक्टरांनी केवळ छाती उघडून काही न करता परत शिवल्यामुळे काही जणांची हृदयाची दुखणी बरी झाल्याची उदाहरणे आहेत. " मनाच्या याच (जड पदार्थावरील) सामर्थ्यामुळे मनाला केलेल्या सूचनेमुळे औषधाचे थेट उलटे परिणामसुध्दा होऊ शकतात. उदा. अम्फेटामाईन हे माणसाला जागे ठेवणारे औषध झोप आणू शकते व बार्बिट्युरेट हे झोप आणणारे औषध त्याला जागे ठेऊ शकते ! " (पृ. २३२) मनाच्या या सामर्थ्यालाच 'श्रद्धा' म्हणतात व त्यातूनच असे 'चमत्कार' घडून येतात. सद्गुरूवरील श्रद्धेतूनच सद्गुरू शिष्याचे कसलेही शारीरिक रोग बरे करू शकतात किंवा त्याचे कर्म बलवत्तर असेल तर ते रोग स्वतःच्या शरिरात घेऊन त्याचे फळ स्वतः भोगतात व शिष्याला वेदनामुक्त करतात. 'विचार हीच वस्तू' या तत्त्वातून (म्हणजे श्रद्धेतून) भक्ताला गुरु सांगतील ती 'वस्तू' 'औषध' बनून त्याचा रोग बरा होण्याचा प्रकारही घडू शकतो. उदा. चिले महाराजांनी दिवसातून १०-१५ वेळा शौचाला जाणाऱ्या एका भक्ताला मूठभर हिरव्या मिरच्या खायला सांगितले आणि त्याने त्या खाल्ल्यामुळे शौचाला जाणे बंद झाले ! " (वास्तविक हिरव्या मिरच्यांनी शौचास जाणे वाढते.) सोलापूरचे

सद्गुरु नाना पाठक यांच्या लघवीतून एकदा साखर जाऊ लागली. डॉक्टरांनी साखर खाऊ नका असे त्यांना सांगितले. पण रानअंत्रीहून (त्यांचे गुरु गजानन महाराज यांच्या गुरुंच्या-नारायण सरस्वतींच्या-समाधी स्थळाहून) त्यांना एकदा प्रसाद म्हणून नुसती साखरच आली आणि त्यांनी ती खाल्ल्यामुळे त्यांचा मधुमेह कायमचा बरा झाला.<sup>१०२</sup> (वास्तविक साखर मधुमेहाला अपाय आहे, उपाय नाही.) अकलकोटचे स्वामी समर्थ आपल्या भक्तांना मनात येईल ती वस्तू औषध म्हणून सांगत. (उदा. म्हशीचे मूत, बैलाचे मूत इ.) आणि त्यांचा त्याने कसलाही रोग बरा होई!<sup>१०३</sup> लाटेचे आण्णामहाराज यांनी, जन्मल्यानंतर काही महिन्यांतच लागोपाठ पाच अपत्ये मेल्यामुळे सहाव्यांदा गरोदर असलेली एक बाई त्यांच्याकडे आली असता सहावे मूल जन्मताच त्याला गाढविणीचे दूध पाजायला सांगितले आणि आश्चर्य असे की त्या दूधामुळे ते मूल जगले. नंतर जन्मलेल्या मुलांनाही त्यांनी तेच सांगितले आणि त्यामुळे तीही मुले जगली.<sup>१०४</sup> असे हे श्रद्धेचे 'चमत्कार' म्हणजे योगसारोपनिषदातील 'चितिमूर्तिमती । सा चाप्रतिहता शक्तिः ।' (Thought is thing. It has unhindered power.) या महान आध्यात्मिक तत्त्वाची व्यावहारिक पातळीवरील प्रात्यक्षिकेच होत.

याच आध्यात्मिक तत्त्वानुसार संमोहनात एखाद्या व्यक्तीला दिलेल्या सूचना त्या व्यक्तीचे शरीर तंतोतंत पाळते असे आढळून येते. उदा. साधा कागद तप्त लोखंड आहे, असे म्हणून तो संमोहित व्यक्तीच्या शरीरावर चिकटवला तर थोड्याच वेळात तेथे भाजल्याचे फोड उठतात.<sup>१०५</sup> जादूटोणा किंवा करणी हा सुध्दा योगसारोपनिषदातील उपरोल्लेखित तत्त्वावर आधारलेल्या 'सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांच्या नियमा'नुसार घडणारा प्रकारच आहे. प्रस्तुत ग्रंथातील प्रकरण ३ मध्ये श्री. रजपूत व त्यांची पत्नी यांना अदृश्य मार बसू लागल्याचे, विशेषतः रजपूतांना चाबकाने मारल्याचा अनुभव येत असल्याचे वर्णन आले आहे. (पृ.४८) त्यांच्या पत्नीच्या अंगावर जेथे मार बसे तेथे अर्ध्या इंचाची जखमसुध्दा होत असे. संमोहनात दिलेल्या सूचना मनाप्रमाणे शरीरसुध्दा कसे पाळते याचे हे उदाहरण असून यालाच 'करणी' म्हणतात. [ 'करणी' किंवा 'चेटूक' हा दुरून केलेल्या अदृश्य संमोहनाचा प्रकार असून तो खरा असल्याचे लंडनच्या रॉयल सोसायटीला संशोधनाअंती आढळल्यामुळे १७३५ साली 'चेटूक कायदा' (Witchcraft Act) इंग्लंडच्या पार्लमेंटने पास केला.<sup>१०६</sup>] 'करणी' किंवा 'चेटूक' हा दुरून केलेल्या (अजाण) संमोहनाचा प्रकार असल्याचे मागे याच ग्रंथात रशियन शास्त्रज्ञ व्हॅसिलिएव्ह याने सप्रयोग दाखवून दिले असल्याचे सांगितले आहे. (पृ.२१८) एका व्यक्तीच्या विचारांचे वा भावनांचे दुसऱ्या दूरस्थ व्यक्तीच्या शरीरातील भौतिक रूपातील प्रकटीकरणाचेच (thought is thing चेच) हे अतींद्रिय पातळीवरील उदाहरण असून

संपूर्ण अतींद्रिय विज्ञान याच केंद्रवर्ती आध्यात्मिक तत्त्वावर अधिष्ठित आहे. याचा अर्थ असा की अतींद्रिय शक्ती भक्तीमुळे अग्नीच्या रुपाने प्रकट होऊन गंगाधरपंताच्या अंगाचा दाह करणे, किंवा मंबाजीचे घर जाळणे अशा प्रकारातून बहेणाबाईसारख्या भक्तांचे जसे संकट निवारण करू शकते, तसे द्वेषामुळे भानामतीच्या स्वरूपातील अग्नीच्या रुपाने प्रकट होऊन कपडे जाळणे, घर जाळणे किंवा विष्टेच्या रुपाने प्रकट होऊन अन्नात पडणे अशा प्रकारातून शत्रूसाठी संकटही निर्माण करू शकते. (प्रकरण २,४,१ पाहा) स्वतः अतींद्रिय शक्ती तटस्थ असून त्या शक्तीचा उपयोग जसा करावा तसा होतो. म्हणजे तो जसा चांगल्यासाठी करता येतो, तसा तो वाईटासाठीही करता येतो.\* तिच्या चांगल्या वापराला White Magic (पांढरी जादू) म्हणतात, तर वाईट वापराला Black Magic (काळी जादू) म्हणतात. ईश्वरभक्ती ही पांढरी जादू आहे, तर करणी, भानामती, चेटूक ही काळी जादू आहे. चोखोबांच्या विठ्ठलभक्तीतून (चांगल्या विचारातून) त्यांच्या थोबाडात मारलेला मार विठ्ठलाच्या मूर्तीला बसून (चांगला परिणाम म्हणून) त्या मूर्तीचा गाल सुजणे ही पांढरी जादू आहे. याच्या उलट रजपूतांच्या शत्रूच्या द्वेषातून (वाईट विचारातून) रजपूतांच्या शरीराला (त्याचा वाईट परिणाम म्हणून) चाबकाचे मार बसणे, त्याच्या पत्नीच्या शरीरावर मार बसेल तेथे जखमा होणे, ही काळी जादू (करणी) आहे. [एका बाईने आपल्या कामगार नवऱ्याला वाईट वागणूक देणाऱ्या मालकाविषयीच्या द्वेषातून एके दिवशी रात्री तो ज्या बाजूवर झोपतो त्या बाजूच्या पलंगावर लक्ष केंद्रित करून त्याच्या शरीरात एकेक टाचणी मनानेच घुसवू लागली. दुसऱ्या दिवशी त्याच्या पत्नीला पोटात कळा येऊ लागल्यामुळे दवाखाण्याला नेण्यात आले. पण पोटात कसलाच दोष आढळला नाही. हा करणीचा प्रकार स्वतःत्या कामगाराच्या पत्नीने कॉलिन विल्सनला पत्राने कळविला आहे. (Mysteries - C. Wilson, p.452)] नामदेवाने विठ्ठलापुढे ठेवलेला नैवेद्य नाहीसा होणे (विठ्ठलाच्या मूर्तीने तो खाणे), जगभराच्या लोकांनी गणपतीच्या मूर्तीच्या सोंडेजवळ नेलेले दूध नाहीसे होणे (गणपती दूध पिणे)<sup>१००</sup> ही पांढरी जादू आहे. [ही कुणाच्या चांगल्या विचाराची जादू-म्हणजे चांगला परिणाम-(good) thought is (good) thing -याची माहिती 'पुराणे ही माणसाची भावनिक गरज' या पोटमधळ्याखाली दिली आहे.] तर गुजरात मधील आदित्यन खेड्यातील शेठजीच्या स्वयंपाक घरातील अन्न नाहीसे होणे व तेथे खारकटी ताटे येऊन पडणे<sup>१०१</sup> ही काळी जादू आहे. (पृ.१६४) कधी कधी अनवधानाने किंवा गाफीलपणामुळे 'पांढऱ्या जादू' चे रुपांतर 'काळ्या जादू'त

\* ये यथा मां प्रपद्यंते तांस्तथैव भजाम्यहम् । म्हणजे मला जसे लोक शरण येतात (माझ्याशी वागतात) तसेच त्यांच्याशी मीही वागतो, असे गीतेत श्रीकृष्णाने जे म्हटले आहे त्याचा हाच अर्थ आहे

होऊ शकते. ते कसे हे पुढील उदाहरणावरून समजून येईल. हा गाफीलपणा आपण कसा केला व चांगला हेतू (विचार) वाईट परिणाम कसा अनवधानातून करून गेला, हे स्वतः बाबूराव अथणे हे चिलेमहाराजांचे कोल्हापूरातील एकनिष्ठ शिष्य पुढील प्रमाणे सांगतात.

गरम नैवेद्याने देवाच्या जिभेवर फोड - “गांधीनगरला असताना एके दिवशी मी देवांच्या (चिलेमहाराजांच्या) प्रतिमेसमोर गडबडीने चहा ठेवला आणि बोलण्याच्या नादात तसाच उचलून घेतला. देव थोड्या वेळाने गांधीनगरला आले. त्यांनी मला स्वतःची जीभ दाखवली आणि म्हणाले, ‘हे बघ, माझ्या जिभेला फोड आले रे ! तू मला गरम चहा दिलास. बशी भोवती पाणी सोडून मला चहा देत जा.’ माझा गलथानपणा माझ्या लक्षात आला. तेंव्हापासून आठवणीने सभोवती पाणी सोडून देवांना नैवेद्य अर्पण करू लागलो. देवांच्या प्रतिमेशी व्यवहार करतांना भक्तांने कसे सावध आणि मन देऊन वागले पाहिजे, हे देवाने मला शिकविले.”<sup>१०९</sup>

नेहमीच्या देवाला ‘नैवेद्य दाखविण्याच्या’ प्रकारात यांत्रिकपणा असेल तर तो केवळ उपचार (formality) ठरतो. पण वरील उदाहरणात श्री. अथणे आणि चिलेमहाराज यांच्यातील गुरु-शिष्यांचे संबंध केवळ औपचारिक स्वरूपाचे (यांत्रिक म्हणजे भावनाहीन) नव्हते, तर भक्ती-प्रेमाचे होते. आणि म्हणून तेथे ‘नैवेद्य दाखविणे’ हा प्रकार नेहमीसारखा उपचार न ठरता ‘वास्तविक सत्य’ (objective fact) ठरला. त्यामुळे नैवेद्य दाखविण्यात गलथानपणा केल्यामुळे (नैवेद्याभोवती पाणी न सोडल्यामुळे) चिलेमहाराजांची जीभ भाजून फोड उठले. (हिंदू धर्मातील प्रथा केवळ ‘उपचार’ नाहीत हे यावरून लक्षात येईल ! ) चोखोबा या ‘जिवंत’ व्यक्तीला मारल्यामुळे विठ्ठलाच्या ‘निर्जीव’ मूर्तीला मार बसून तिचा गाल सुजण्याच्या विरुद्ध स्वरूपातील हा प्रकार (‘चमत्कार’) आहे. कारण येथे नैवेद्यातील ‘निर्जीव’ चहामुळे ‘जिवंत’ चिलेमहाराजांची जीभ भाजून फोड उठले आहेत. पहिल्या (चोखोबाच्या) प्रकारात ‘सजीवा’ वर दुरून म्हणजे ‘सहानुभूतियुक्त अनुकंपना’ तून परिणाम (मूर्तीचा गाल सुजणे) घडला आहे. तर दुसऱ्या (नैवेद्याच्या) प्रकारात ‘निर्जीवा’ पासून ‘सजीवा’ वर दुरून म्हणजे त्याच नियमानुसार परिणाम (जिभेवर फोड उठणे) घडला आहे. आणि ‘दुरून परिणाम’ घडून येण्याच्या या अतींद्रिय घटनेमुळे (‘चमत्कारा’मुळे) सजीव व निर्जीव असा वस्तूंमध्ये भौतवैज्ञानिक (आणि सामान्य लोक) करीत असलेला नित्याचा भेद कसा भ्रामक (अनित्य) आहे, सर्व वस्तू परस्पराशी कशा ‘आतल्या धाग्या’नी जोडल्या गेल्या आहेत, सर्व वस्तूंमध्ये ‘आकाश’ (जे सर्व ‘चमत्कारां’ चे माहेरघर असलेल्या ‘ब्रह्मा’चे किंवा ‘आत्म्या’चे ‘शरीर’ आहे = ‘आकाशशरीरं ब्रह्म’ - तै.उप.) कसे ओतप्रोत भरले आहे, हे या चोखोबांच्या आणि चिलेदेवांच्या संबंधातील-वरील घटना दाखवून देतात.

‘आकाश’ (आत्म्याची भौतिक स्वरूपातील पहिली अभिव्यक्ती) ‘विचार’ (Thought) व ‘वस्तू’ (thing) यात सारखेच व्याप्त असल्यामुळे या दोहोंत (विचार व वस्तूत) कसलाच फरक आढळून येत नाही. म्हणूनच विठ्ठलाच्या दगडी मूर्तीचा कठिण गाल चोखोबाच्या भक्तीरुपी विचारातून-भावनेतून-चोखोबांचा मऊ गाल बनला व पूजाऱ्याच्या मारामुळे (सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांच्या नियमाला अनुसरून) सुजला. (Thought is thing हा नियम अंमलात आला.) म्हणूनच ‘केमिसाई’ या मिडार्ड संताच्या अनुयायांची मऊ त्वचा (त्यांच्या मिडार्डवरील श्रद्धेमुळे व भक्तीमुळे) लोखंडासारखी कठिण बनली व बंदुकीच्या गोळ्या तिच्यावर आदळून चपट्या झाल्या. टाकळीतील चौडेश्वरी देवीला बळी दिल्या जाणाऱ्या बकरीचे मऊ शरीरही (लोखंडासारखे) कठिण बनले व तलवारीच्या वारांचे त्यावर काहीच चालू शकले नाही. (पृ. २७४-७५) मात्र ह्या ‘आकाश’ रुपी अतींद्रिय तत्त्वाचा (आत्म्याच्या या पहिल्या अभिव्यक्तीचा) हा ‘चमत्कार’ केवळ श्रद्धेतूनच (भक्तीतूनच) होऊ शकतो हे लक्षात ठेवले पाहिजे. श्रद्धेतून ‘विचारां’चे ‘वस्तू’त रूपांतर कसे होऊ शकते किंवा तथाकथित ‘निर्जीव’ वस्तूचे ‘सजीव’ प्रमाणे वर्तन कसे घडू शकते याची ही (अशक्य कोटीतील ‘चमत्कारां’ची) उदाहरणे आहेत.

‘निर्जीव’ पदार्थांचेसुद्धा श्रद्धेतून किंवा भक्तीतून कसे ‘सजीव’ प्रमाणे वर्तन घडू शकते, याचे हल्लीसुद्धा दरवर्षी नेमाने घडणारे युरोपमधील एक प्रसिध्द ‘चमत्कारा’ चे उदाहरण असून ते येथे वाचकांच्या माहितीसाठी देतो.

**निर्जीव वस्तूतून सजीव रक्त निर्माण करणारी अतींद्रिय शक्ती -**  
 सेंट जॅन्युएरियस या ख्रिश्चन संताचा रोमन सम्राट डायोक्लेशियन याने इ.स. ३०५ साली इटली येथील नेपल्स शहराजवळ शिरच्छेद केला. त्यावेळी त्या संताच्या एका स्त्री सेवकाने त्याचे रक्त एका बाटलीत साठवले आणि त्या संताचा मृतावशेष (relic) म्हणून दोन काचनळीत नेपल्स शहरातील चर्चमध्ये हल्ली तो जतन करून ठेवण्यात आला आहे. काळसर तपकिरी रंगाचा पापुद्रा बनलेला तो घनपदार्थ खरोखर त्या संताचा मृतावशेष आहे का? इतकी वर्षे तो कसा टिकला? इ. प्रश्न कोणाच्याही मनात निर्माण होतील. पण हे प्रश्न महत्त्वाचे नसून ते त्या संताचेच रक्त आहे ही त्या संताच्या अनुयायांची श्रद्धा महत्त्वाची असून त्या श्रद्धेतून जो ‘चमत्कार’ हल्ली वर्षातून दोनदा नेमाने घडतो, तो महत्त्वाचा आहे. हा ‘चमत्कार’ म्हणजे प्रत्येक वर्षी मे महिन्याच्या पहिल्या रविवारी व सप्टेंबरच्या १९ तारखेला (त्या संताचा मृत्यूचा दिवस) तो पापुद्रा बनलेला काचनळीतील काळा पदार्थ द्रव (पातळ) बनतो व त्याचे लाल रक्तात रूपांतर होते. त्या रक्ताने ती नळी कधी कधी पूर्ण भरते, म्हणजे त्या रक्ताच्या प्रमाणात वाढही होते व बुडबुडेही येतात. पण कधीकधी हा ‘चमत्कार’ घडत नाही. आणि जेव्हा तो घडत नाही, तेव्हा कोणते तरी संकट इटलीवर कोसळते

असे नेपल्स शहरवासी समजतात. (ह्या 'चमत्कारा'चा इतिहास १३८९ पासून लिहून ठेवण्यात आला आहे.) उदा. व्हेसुव्हियस ज्वालामुखीच्या उद्रेकापूर्वी व नेपोलियनने इटलीवर स्वारी करण्यापूर्वी हा 'चमत्कार' घडला नाही. अलीकडे १९७६ साली हा 'चमत्कार' घडला नाही आणि त्यावर्षी इटलीच्या इतिहासातील सर्वात मोठा भूकंप झाला. पुन्हा १९७८ साली हा 'चमत्कार' घडला नाही आणि त्यावर्षी नेपल्स शहराच्या नगरपरिषदेत कम्युनिस्ट पक्ष सत्तेवर आला.

या संताचा दुसरा एक 'चमत्कार' म्हणजे ज्या तीन फूट उंच व दोन फूट रुंदीच्या दगडावर त्याचा शिरच्छेद करण्यात आला (हा दगडही चर्चमध्ये त्या संताचे स्मृतिचिन्ह म्हणून जतन करून ठेवण्यात आला आहे.) त्या दगडातून क्वचित प्रसंगी रक्त खवू लागते. हे रक्त रासायनिक पृथक्करणाने तपासून पाहिले असता ते मानवी रक्तच असल्याचे सिध्द झाले आहे. (वरील काचनळीतील घन पदार्थ जेव्हा रक्त बनते तेव्हा त्यावर प्रकाशकिरण पाडून स्पेक्ट्रोस्कोपच्या सहाय्याने तपासले असता तेही मानवी रक्तच असल्याचे सिध्द झाले आहे.) \*११०

दीड-दोन हजार वर्षांपूर्वी केलेल्या एका संताच्या शिरच्छेदातून सांडलेल्या रक्ताचा प्रतिसाद त्याच्या अनुयायांच्या श्रद्धेतून व भक्तीतून निर्जीव घनपदार्थाचे सजीव रक्तात रुपांतर होणे व दगडातून मानवी रक्त खवणे यासारख्या 'चमत्कारा' तून प्रकट होत असेल तर चोखोबासारख्या एकनिष्ठ विठ्ठलभक्ताच्या गालावर बसलेल्या पूजाऱ्याच्या माराचा प्रतिसाद विठ्ठलाच्या दगडी मुर्तीच्या गालावर, तो सुजण्याच्या 'चमत्कारा' तून, तत्काळ का प्रकट होऊ शकणार नाही ? हा सर्व सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांचाच (Sympathetic vibrations चाच) अतींद्रिय पातळीवरील परिणाम आहे. अतींद्रिय शक्तीला जसे सजीव-निर्जीव या भेदाचे बंधन नाही, तसे कालाचेही बंधन नाही, हे दीड हजार-अधिक वर्षांपूर्वीच्या जॅन्युएरियस संताच्या रक्ताचा हल्ली घडणारा 'चमत्कार' दाखवून देतो. त्या शक्तीला बंधन आहे ते फक्त सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांचे; आणि ही सहानुभूतियुक्त अनुकंपने केवळ श्रद्धेतून आणि भक्तीतूनच (आध्यात्मिक प्रेमातून) निर्माण होतात. ही श्रद्धा व भक्ती असेल तर सजीव-निर्जीव, मूक-बोलके इ. भेदच नव्हे तर स्थल-कालाचेही भेद तिच्या प्रकटीकरणाला अडथळा ठरू शकत नाहीत. हे सर्व भेद श्रद्धेमुळे व भक्तीमुळे अर्थहीन वा अप्रस्तुत (irrelevant) ठरतात. म्हणूनच बहेणाबाईच्या तुकारामांवरील श्रद्धेमुळे व भक्तीमुळे तिच्या गायीला बसलेल्या माराचे वळ तुकारामांच्या पाठीवर उठले; पाटोळ्यांना त्यांच्या नातेवाईकाने पुण्यात मारलेल्या छडीचे वळ सोलापूरातील पाटोळ्यांचे गुरू

\* याच स्पेक्ट्रोस्कोपच्या तंत्राने सूर्य व तारे यांच्यामधील मूलद्रव्यांचा शोध लावण्यात आला. हेलियम हे मूलद्रव्य याच तंत्राने सूर्यात प्रथम सापडले. 'हेलियोस' हे सूर्यदेवतेचे ग्रीक नांव असून ते द्रव्य प्रथम सूर्यात सापडले म्हणून त्याला हेलियम हे नांव देण्यात आले.

नाना पाठक यांच्या पाठीवर उठले; चिलेमहाराजांनी कागद कातरून व पुन्हा शिवून दुरुन (त्यांना स्पर्श न करता) केलेल्या 'ऑपरेशन' मुळे त्यांच्या एकनिष्ठ शिष्या सौ. अनुसयाताई जांभळीकर यांची पोटदुखी गेली. अथण्यांनी पाणी न सोडता घरी दाखवलेल्या गरम चहाच्या नैवेद्यामुळे दूरस्थ चिलेदेवांची जीभ भाजून तीवर फोड उठले. तात्पर्य, श्रद्धा व भक्तीमुळेच वर वर्णन केलेले सर्व अशक्य कोटीतील 'चमत्कार' घडू शकले.

### न शिकलेल्या इंग्रजी भाषेतून अस्खलित भाषण

बहेणाबाईंच्या ईश्वरभक्तीमुळेच गायीचे वासरु ('ज्याच्या कृपेने मूक प्राणी बोलू शकतो') हा संस्कृत श्लोक म्हणू शकले. ईश्वराची अतींद्रिय शक्ती ईश्वरावरील भक्तीमुळे व निष्ठेमुळे कोणत्याही रूपाने प्रकट होऊन कोणताही 'चमत्कार' करू शकते हे, वासराचा हा 'चमत्कार' दाखवून देतो ज्या ईश्वराच्या अध्यक्षतेखाली (मयाध्यक्षेण) प्रकृती शून्यातून चराचर विश्व निर्माण करू शकते, ती त्या ईश्वराला भक्तीने व प्रेमाने वश केले तर काय करू शकणार नाही? याच शक्तीच्या कृपेने भाऊसाहेब उमदीकर या गुरुदेव रानडे यांच्या गुरुनी स्वतःला इंग्रजी भाषेचे ज्ञान नसतांनासुद्धा एका इंग्रजी पुस्तकातील उताऱ्याचा अर्थ सांगितला. या 'चमत्कारा' चे रहस्य काय? असे स्वतः त्यांचे शिष्य गुरुदेव रानडे यांनी विचारले असता उमदीकरांनी सांगितले की ज्या परमेश्वरापासून सर्व भाषा उगम पावल्या आहेत, त्या एकट्या परमेश्वराला जाणले की सर्व भाषा जाणता येतात.<sup>१११</sup> इंग्रजीचा गंध नसतांनासुद्धा इंग्रजीतून अस्खलित भाषणसुद्धा त्या परमेश्वराच्या अतींद्रिय शक्तीच्या कृपेने कसे करता येते याचे नाशिकचे गजाननमहाराज गुप्ते हे अलीकडच्या काळातील एक उदाहरण असून ते त्यांचे श्रेष्ठ शिष्य सोलापूरचे सद्गुरु नाना पाठक यांच्या शब्दात वाचकांच्या माहितीसाठी येथे देतो.

"माझे गुरुबंधू श्री. मोहिते यांनी या संदर्भात एक गोष्ट सांगितली ती अशी. एकदा ते श्रींना घेऊन नाशिक-कल्याण मार्गे पुणे येथे जात होते. ते दुसऱ्या महायुद्धाचे दिवस. गाड्यांना सर्व वर्गात खूप गर्दी. म्हणून ते फर्स्ट क्लासमध्ये कल्याणला बसले. इतक्यात एक गोरा मिलिटरी ऑफिसर डब्यात आला व त्यांना बाहेर जा म्हणून सांगू लागला. त्याच्या या धमक्याची पर्वा न करता श्रींनी त्याच्याकडे पाहून अस्सल इंग्रजीमध्ये फ्रान्सच्या रणभूमीवरील झालेल्या चुकांबद्दल माहिती सांगण्यास सुरवात केली. तो ऑफीसर थक झाला. त्याला वाटले, हे मिलिटरीचे मोठे ऑफीसर असले पाहिजेत व पांगळे असल्यामुळे सोबतीला कुणीतरी घेऊन प्रवास करीत आहेत. पुण्यापर्यंतचा प्रवास त्याच्या बरोबर इंग्रजी संभाषणामुळे सुखकर झाला. श्रींचे फक्त मराठी चौथीपर्यंत शिक्षण झाले होते."<sup>११२</sup>



येथे गजाननमहाराज मागच्या जन्मी भ्रष्ट योगी होते असे कदाचित म्हणता येईल. (कारण योग्यांना अशक्य काहीच नाही.) पण त्यांच्या तोंडून कोणी इंग्रज मृतात्मा बोलत होता असे कोणाला म्हणता येणार नाही. रानड्यांचे गुरु उमदीकर यांच्याप्रमाणेच गजाननमहाराज गुप्ते हे सुध्दा 'यत्कृपा तमहं वन्दे परमानन्दं माधवम्' या (बहेणाबाईच्या वासराच्या तोंडून बाहेर पडलेल्या) श्लोकातील 'परमानन्द माधवा' च्या (अतीन्द्रिय शक्तीच्या) कृपेमुळेच इंग्रजीसारख्या, त्यांनी पूर्वी कधीही न शिकलेल्या, परकीय भाषेतून अस्खलितपणे बोलू शकले, असे म्हणावे लागते.\* जोडीला फ्रान्सच्या रणभूमीवर झालेल्या चुकाही त्यांनी बरोबर सांगितल्या, त्यासुध्दा 'पांगळ्याला डोंगर पार करण्याचे' सामर्थ्य देणाऱ्या त्या परमानन्द माधवाच्या (अतीन्द्रिय शक्तीच्या) कृपेमुळेच होय. त्याच कृपेमुळे बहेणाबाईचे वासरु 'मूकं करोति वाचालम्' (मुक्या प्राण्याला जी शक्ती बोलायला लावू शकते) हा संस्कृत श्लोक म्हणू शकले. उमदीकर आणि गजाननमहाराज यांच्याप्रमाणेच बहेणाबाईवरसुध्दा तिच्या ईश्वरावरील श्रद्धेमुळे व भक्तीमुळे - 'प्राण गेला तरी ईश्वरभजन सोडणार नाही' या तिच्या दृढ ईश्वरनिष्ठेमुळेच-त्या ईश्वराच्या शक्तीची कृपा झाली आणि त्या कृपेमुळे तिचे वासरु संस्कृत श्लोक म्हणण्यासारखा अशक्य कोटीतील 'चमत्कार' घडला ! ईश्वर हा अतीन्द्रिय शक्तीच्या रूपात भूतमात्रात-सर्व चराचर सृष्टीत सारखाच वास करीत असल्यामुळे असा 'चमत्कार' घडू शकतो. म्हणूनच समुद्रपक्षी (sea-gull) किंबालला त्याच्या नावाने हाक मारू शकतो. दुःखी कुत्रा लायडेकरबाईला तिच्या नावाने हाक मारून मदतीसाठी बोलावू शकतो. मिसी कुत्री भावी घटनांचे भाकीत बरोबर करू शकते, ओंकाराचा जप करू शकते, पाच भाषांमधून विचारलेले प्रश्न समजू शकते व बरोबर उत्तरही देऊ शकते. आण्णा महाराजांना पक्षी पावसाचे बरोबर भविष्य सांगू शकतो. लोकांना चावणारी अकलकोटातील वानरी 'तुला स्वामी समर्थ बोलावीत आहेत' ही स्वामींच्या सेवकामार्फत पाठवलेली स्वामींची आज्ञा समजू शकते, त्याच्या पाठीमागून मुकाट्याने येऊ शकते, स्वामीचरणावर 'गडबडा लोळू' शकते व "काय गे चावटे, लोकांना चावतेस काय ? आजपासून कोणाला चावू नकोस. चावलीस तर कोरडे मारू !" या स्वामींच्या आज्ञेप्रमाणे लोकांना चावणे सोडून देऊ शकते.<sup>113</sup> एका लिंबाच्या झाडावरील चिमणीला स्वामींनी "अगं, आम्ही गावास जाऊन येईपर्यंत येथेच राहा. येथून हलू नको" अशी आज्ञा करून एक कोसावरील वाडी गावी जाऊन परत येईपर्यंत ती तेथेच राहू शकते व स्वामींनी परत येऊन "तुला भूक

\* मॅडम ब्लॅन्केट्स्कीनी न शिकलेल्या हिंदीतून आर्यसमाजसंस्थापक दयानंद सरस्वतींना देवनागरी लिपीत एक टिपण लिहून पाठवले होते. त्यांचे गुरु मौर्य अशाच अतीन्द्रियशक्तीने न शिकलेल्या इंग्रजीतून पत्रे लिहीत असत (Old Diary Leaves, Vol. I Olcott. p. 262)

लागली असेल, आता जा” असे म्हणून जाण्यास परवानगी दिल्यानंतरच भूर्कन उडून जाऊ शकते.<sup>११४</sup> प्राणीच काय, पण वनस्पतीसुद्धा अतींद्रिय पातळीवर माणसाच्या सादाला प्रतिसाद देऊ शकतात व आपल्या भावना व्यक्त करू शकतात, हे बॅक्स्टरने पॉलिग्राफ (लायव्ह डिटेक्टर) या यंत्राच्या सहाय्याने दाखवून दिले आहे.<sup>११५</sup> याच अतींद्रिय शक्तीमुळे उमलण्याचा ऋतू नसतानासुद्धा ज्ञानेश्वरांच्या पुण्यतिथीच्या दिवशी नेमके ब्रह्मकमळ उमलू शकते.<sup>११६</sup> अजानवृक्ष आपल्या मुळ्या फक्त दोन फूट अंतरावरील (कुंपनापलीकडील) ओसाड प्रदेशात न पसरता केवळ ईश्वरोपासना जेथे चालते अशा वास्तूच्या परिसरात दहा-वीस फूटापर्यंत देखील पसरविण्याचा ‘चमत्कार’ करू शकतो.<sup>११७</sup> ‘मला तोडू नका. मी सर्व ऋतूत तुम्हाला जांभळे देतो’ असे परावाणीने जांभळाचे झाड एखाद्या सत्पुरुषाला सांगू शकते व त्याप्रमाणे आपला शब्द पाळून सर्व ऋतूत त्याला जांभळे देण्याचा ‘चमत्कार’ करू शकते.<sup>११८</sup> योग्य वातावरण उपलब्ध झाले तर ‘सहानुभूतियुक्त अनुकंपनां’ च्या लहरी निर्माण होऊन सर्व चराचर सृष्टी व्यापून राहिलेली त्या परमेश्वराची (गोविंदस्वामीच्या ‘अंबरातील देवा’ ची) अतींद्रिय शक्ती कोठेही व केंव्हाही प्रकट होऊ शकते, हे बरील उदाहरणे दाखवून देतात.

‘त्या परमानन्द माधवाच्या कृपेनेच (गायीच्या वासरासारखा) मूक प्राणीसुद्धा बोलू शकतो’ हे (संस्कृत श्लोकातून) ते गायीचे वासरु स्वतःच सांगत असताना जयराम स्वामींनी त्याची उपपत्ती तो ‘भ्रष्ट योगी’ होता अशी दिल्यामुळे आपल्या ईश्वरभक्तीमुळेच ‘परमानन्द माधव’ रुपी ईश्वर गायीच्या वासराच्या मुखाने बोलला, या ‘चमत्कारा’ ची बहेणाबाईला कल्पना आली नाही. म्हणजे तो ‘चमत्कार’ आपल्याच भक्तीतून प्रकट झालेल्या ईश्वराच्या अतींद्रिय शक्तीचा होता, हे तिला कळले नाही; आणि कळणे शक्यही नव्हते. स्वतः गजाननमहाराज गुप्ते यांनाही आपल्या हातून ‘चमत्कार’ का व कसे घडतात, हे कळत नव्हते. त्यांच्या चरित्रात याविषयी तसा स्पष्टच उल्लेख आढळतो. उदा. एकदा बरीच मंडळी गजाननमहाराजांजवळ जमली असता सर्वांच्या शरीरावर, कोटावर, सतरंजीवर बुक्क्याचा जणू काय पाऊस पडू लागला, त्यांना आंघोळ घातली तर अंगावरून ओघळणाऱ्या पाण्याला अत्तराचा वास येई. अशा ‘चमत्कारा’ विषयी त्यांना विचारले असता त्यांनी दिलेले उत्तर लक्षणीय आहे.

“आपण हे चमत्कार वकील व इतर लोकांसमोर करू शकाल काय असे विचारले असता गजाननमहाराज म्हणाले, ‘यासंबंधी मी काय सांगणार ? हे चमत्कार काय आहेत, ते का व कसे होतात हे मला समजत नाही... मी एके ठिकाणी बसून ध्यान करीत असतो. याशिवाय मी जास्त काय सांगू शकणार ?’ ”

“या चमत्कारा-संबंधी दुसऱ्या लोकांकडून जेव्हा गजाननमहाराजांच्या

कानावर आले तेंव्हा हे जर खरे असेल तर आपला भुता-खेताशी किंवा अधोरी विद्येशी संबंध असावा असे लोकांना वाटून त्यांचा आपल्याविषयी भलताच ग्रह होऊन बसेल, असे वाटून त्यांना एक प्रकारची भीती उत्पन्न झाली. पुढे पुढे तर हा एक मोठा काळजीचा विषय होऊन बसला. त्यावेळी त्यांचे वय लहान होते. अशा स्थितीत ते एकदा ध्यानस्थ बसले असता त्यांच्या कानावर शब्द पडले, 'योगी लोकांसंबंधी जेंव्हा असे चमत्कार घडून येतात, तेंव्हा ते स्वतः सिध्द असतात. म्हणजे योगी लोकांना न समजता किंवा त्यांनी होऊन काही प्रयत्न न करताही ते सहज व आपोआप घडून येतात. म्हणून त्यासंबंधी काही काळजी करण्याचे कारण नाही.' या दृष्टान्ताने सर्व काळजी दूर होऊन त्यांना अत्यानंद झाला.<sup>१११</sup>

येथे दोन 'चमत्कार' घडले आहेत. एक, त्यांच्या कानावर शब्द पडले, म्हणजे त्यांनाच ऐकायला येणारी (खासगी) 'आकाशवाणी' झाली. आणि दोन, मागच्या जन्मी त्यांनी योगसाधना केली असल्यामुळे त्यांच्याकडून बालवयात आपोआप 'चमत्कार' घडत होते, हे त्यांना कळले. म्हणजे त्यांना 'आकाशवाणी'तून (Clairaudience) आपला मागचा जन्म कळला व आपल्या पूर्वजन्मीच्या सुकृतामुळे आपल्या हातून 'चमत्कार' घडतात हे समजले. पुढे ते लोककल्याणासाठी स्वतः होऊन 'चमत्कार' करू लागले. उदा. त्यांनी अनेकांचे रोग, दोष, आजार इ. बरे केले. ते स्वतः पांगळे असूनही एका स्त्रीचा पक्षघात (अर्धांगवायू) बरा केला.<sup>११२</sup> आणि 'यत्कृपा पंगुं लंघयते गिरिम्' (ज्याच्या कृपेने पांगळ्याला डोंगर पार करण्याचे सामर्थ्य येते) तो 'परमानन्द माधव' (म्हणजे नारायण) स्वतः कोणीही मनुष्य योगसाधनेने कसा बनू शकतो-म्हणजे नराचा नारायण कसा होऊ शकतो - हे स्वतःच्याच उदाहरणाने सप्रयोग दाखवून दिले. या संदर्भात त्यांना एक प्रश्न विचारण्यात आला होता आणि त्याला त्यांनी समर्पक उत्तरही दिले होते. ते पुढील प्रमाणे: " 'महाराज, लोकांचे रोग तुम्ही घेतो असे म्हणता, मग तुमचा रोग का काढत नाही?' त्यास मी असे उत्तर देतो की, बाबा रे, संतमंडळी रोग घेतात, पण दुसऱ्यांच्या दयेमुळे. पण स्वतः त्यांच्या कर्मानुसार झालेले रोग ते बरे करीत नाहीत. कारण त्याकरिता पुन्हा जन्म घेणे प्राप्त होते. या जन्मातच ते देहप्रारब्ध भोगून अलिप्त राहतात. मी संत नसल्याकरणाने मजकरवी गुरु महाराजानी ते सहज बरे केले. मी केवळ निमित्तमात्र आहे. सर्व सामर्थ्य त्यांचे आहे."<sup>११३</sup> [गजाननमहाराजांचे गुरु जांभोरा (ता. चिखली, जि. बुलढाणा) येथील नारायण सरस्वती होते.] येथे गजानन महाराज आपण संत नसल्याचे सांगून आपल्या हातून घडणाऱ्या सर्व 'चमत्कारांचे' श्रेय आपल्या गुरूंना देतात, हा त्यांचा खऱ्या सत्पुरुषांना शोभणारा विनम्र भाव आहे.

पूर्वजन्मांचे स्मरण करून देणारी अतींद्रिय शक्ती - स्वतः

बहेणाबाईला (तिच्या अनेक जन्मांच्या ईश्वरभक्तीतून) प्राप्त झालेल्या अतींद्रिय शक्तीमुळेच तिचे गायीचे वासरु संस्कृत श्लोक म्हणू शकले, म्हणजे तिची अतींद्रिय शक्ती (योग्याप्रमाणे) असामान्य होती, या समजुतीला पुष्टी देणारे व सर्व संतांच्या चरित्रात ठळकपणे उठून दिसणारी अशी एक असामान्य अतींद्रिय घटना तिच्या आयुष्याच्या अखेरीस घडली आहे. ही घटना म्हणजे आपल्या पाठीमागच्या बारा जन्मांचे नांव-गाव इ. सर्व तपशीलासह तिला झालेले स्मरण होय. हे बारा जन्मांचे स्मरण व आपल्या मृत्यूचा दिवस याचे स्मरण तिला मृत्यूच्या अठरा दिवस अगोदर झाले होते व ते तिने आपला मुलगा विठ्ठल यास लिहून घेण्यास सांगितले व त्याने ते तिने सांगितल्याप्रमाणे अभंगरूपाने लिहून घेतले. सांप्रतचा तेरावा जन्म धरून एकूण ३५१ वर्षांतील हे सर्व जन्म तिला स्त्रीदेहातच झाले असल्याचे ती म्हणते. तिचा या जन्मातील मुलगा विठ्ठल हा तिने सांगितलेल्या जन्मांपैकी सहा जन्मात पुरुष म्हणूनच जन्मला असून तो तिचा बंधू, पुत्र इ. नात्यांनी तिच्या जीवनात सतत आला आहे. हे तिचे तेरा जन्म वैश्य, क्षत्रिय, गवळी व ब्राह्मण कुलात (जातीत) झाले असून तिच्या सर्व जन्मात तिने ईश्वरभक्ती केल्याचे, ती भक्ती प्रत्येक जन्मात वृद्धिंगत होत-होत प्रस्तुत जन्मात तिने अत्युच्च शिखर गाठल्याचे दिसून येते. या जन्मात आपला वासनाक्षय झाला असून आता आपल्याला पुन्हा जन्म घेणे नाही - 'स्वरूपी निवांत चित्त' झाले - असे ती म्हणते. आपला पुत्र विठ्ठल याला मात्र अजून पाच जन्म घ्यावे लागणार असून ते कोठे घ्यावे लागतील याचे भाकीतही तिने केले आहे. (अभंग क्र. १९९) पाचव्या जन्मात १८ व्या वर्षीच त्याला विदेहत्व प्राप्त होईल, असे तिने म्हटले आहे. तिच्या मागच्या १२ जन्मांपैकी चौथा ते सातवा - म्हणजे चार जन्म - गवळ्याच्या घरी झाल्यामुळे सांप्रतच्या तिच्या तेराव्या (शेवटच्या) जन्मात पुन्हा तिचा गाय-वासराशी-ती ब्राह्मण कुलात जन्मूनही-संबंध आला. जन्मजन्मांतरांचा ऋणानुबंध असतो तो असा. तिने गोसेवेने चार जन्मात केलेले गोजातीवरील ऋण फेडण्यासाठी त्या गाय-वासरांनी पुन्हा तिच्या प्रस्तुत जन्मात येऊन तिच्या पारमार्थिक उत्कर्षाला हातभार लावलेला दिसून येतो. (त्या वासराने संस्कृत श्लोक म्हणणे हा त्याचाच एक भाग म्हणता येईल.)

बहेणाबाई देहूस आल्यानंतर बाळंत होऊन तिला कन्यारत्न झाले आणि कोल्हापुरात मेलेले ते वासरुच आपल्या पोटी मुलीच्या रूपाने जन्माला आले, असे ती म्हणते. (अभंग क्र. ५४) हे खरे मानले तर त्या गाय-वासरांनी तिच्या पारमार्थिक प्रगतीला जसा हातभार लावला तसा तिनेही त्या वासरावर प्रेम करून त्याची मानवयोनीत उत्क्रांती होण्यास हातभार लावला, असे म्हणता येईल. अध्यात्म (ब्रह्म) - विज्ञानानुसार (Theosophy) तिर्यक् योनी हा उत्क्रांतीतील एक टप्पा असून माणसांच्या पाळीव प्राण्यांतूनच-त्यांच्यावर माणसांनी प्रेम केल्यामुळे व त्या

प्राण्यांनी माणसांची बुद्धी-शक्ती ग्रहण केल्यामुळे-मानवात त्या योनीची उत्क्रांती होत असते.<sup>१२१</sup> एका बैलाचा मानवयोनीत जन्म झाल्याचे एक उदाहरण विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथात दिले आहे.<sup>१२२</sup> अशा प्रकारच्या योनीरूपांतराच्या कसोट्या माहीत नसल्यामुळे अशी उदाहरणे आधुनिक पुनर्जन्माच्या वैज्ञानिक संशोधनात विशेष आढळत नाहीत. किंबहुना अशी उदाहरणे आढळत नसल्यामुळेच त्याविषयीच्या कसोट्या कोणत्या हे ठरविता आलेले नाही, असे म्हणता येईल. पण म्हणून असे योनीरूपांतर (Transmigration) होत नाही असे समजण्याचे कारण नाही. तसे समजले तर उत्क्रांतीला काही अर्थच उरणार नाही. उत्क्रांती तत्त्वानुसार योनीरूपांतर अवश्य होते. (पतंजलीनी याला 'जात्यंतर' म्हटले आहे. यो.सू.४.२) पण हे योनीरूपांतर म्हणजे माणसाचे चौऱ्याऐशीलक्ष योनीतून फिरणे म्हणजे त्याचे खालच्या योनीत जन्मणे (अवक्रांती होणे) नसून तिर्यक् (मानवेतर) योनीतील प्राण्यांची मानव-योनीत किंवा मानवाचे देव-योनीत किंवा सिध्द (मुक्त) पुरुषात उत्क्रांती होणे होय. [मात्र हे सिध्द पुरुष मानव कल्याणासाठी स्वच्छेने मानव-देह पुन्हा धारण करू शकतात, म्हणजेच 'अवतार' घेऊ शकतात. हे 'अवतार' स्वच्छेने व मानवाच्या आध्यात्मिक प्रगतीसाठी असल्याने त्याला 'अवक्रांती' (सामान्य भाषेत 'अधोगती') म्हणता येणार नाही. कारण ते कर्म बंधनाने बांधले गेलेले नसतात-जरी ते तसे बांधले गेले असल्याप्रमाणे वागून दाखवत असतात.<sup>१२३</sup>]

बहेणाबाईच्या १२ जन्मांचे स्मरण कितपत विश्वासाह मानावे असा एक प्रश्न येथे निर्माण होतो. कारण त्याची शहानिशा करणे शक्य नाही. पण म्हणून ते खोटे म्हणता येत नाही. कारण संमोहनातून वा अन्य रीतीने (उदा. मागच्या जन्मी अपघात वा खून होऊन मेल्यामुळे लगेच जन्मलेल्या लहान मुलांना पुढच्या जन्मी) होणाऱ्या (मागच्या जन्माच्या) स्मरणांची आधुनिक पुनर्जन्म संशोधकांनी वैज्ञानिक निकषांच्या सहाय्याने जी छाननी केली आहे, तिच्यामुळे अशा पूर्वजन्माच्या स्मृती खऱ्या असल्याचे -सत्यापनाच्या वैज्ञानिक निकषांना त्या उतरत असल्याचे-सिध्द झाले आहे. (अपघात वा खून यासारख्या आकस्मिक कारणाने मृत्यू झाला तर बहुधा लगेच पुनर्जन्म होतो व अशा व्यक्तींना कधीकधी बालपणी पूर्वजन्माची आठवण होते.) योगसूत्रात पतंजलीनी सांगितलेल्या 'अपरिग्रहस्थैर्घे जन्मकथांतसंबोधः ॥' (यो.सू.२.३९) (म्हणजे अपरिग्रहामुळे-वस्तू संग्रह न करण्याचे व्रत पाळल्यामुळे-पूर्वजन्माची स्मृती होते) आणि 'संस्कारसाक्षात्करणात् पूर्वजातिज्ञानम् ॥' (यो.सू.३.१८) (म्हणजे संयमद्वारा \* संस्कारांचा साक्षात्कार केल्याने पूर्वजन्माचे ज्ञान होते.) या दोन सूत्रांनुसार योग्यांना पूर्वजन्मांचे (आपल्या

\* येथे 'संयम' याचा अर्थ धारणा, ध्यान आणि समाधि यांचा एकत्रित परिणाम असा आहे.

व इतरांच्या) ज्ञान होतेच, पण ईश्वरभक्तीतूनही ते होऊ शकते, हे बहेणाबाईचे उदाहरण दाखवून देते. (ईश्वरप्रणिधानात् वा। हे पातंजल योगसूत्र हेच सांगते.) आणि हे स्मरण वैज्ञानिक सत्यापनाच्या कसोट्यांना कसे उतरू शकते, हे वैज्ञानिकांनी आधुनिक संमोहन पद्धतीने व लहान (५-७ वर्षे वयाच्या) मुलांच्या उत्स्फूर्तपणे झालेल्या पूर्वजन्मस्मृतींचे जे वैज्ञानिक संशोधन केले आहे त्यातून दिसून आले आहे. अशाप्रकारच्या वैज्ञानिक संशोधनाची माहिती देण्याचे हे स्थळ नव्हे, तो एक स्वतंत्र ग्रंथाचा विषय आहे. जिज्ञासूंनी या विषयावरील ग्रंथ पहावेत.<sup>११</sup> (विज्ञान आणि बुद्धिवाद या प्रस्तुत लेखकाच्या ग्रंथात या विषयावर एक खास प्रकरण लिहिले आहे ते पहावे.) पूर्वजन्मी खून, अपघात इ. कारणांनी मेलेल्या व्यक्ती लगेच पुनर्जन्म घेतात व लहान वयात त्यांना त्या घटना आठवतात, हे स्टिव्हेंसन, बॅनर्जी इ. संशोधकांमुळे आता सर्वांना माहीत झाले आहे. पण बहेणाबाईप्रमाणे प्रौढांनाही अशा स्मृती होऊ शकतात, याचीही अनेक उदाहरणे असून ती पाश्चात्य संशोधकांनी पुराव्यानिशी वैज्ञानिक कसोट्यावर सिध्द केली आहेत. येथे अशा प्रकारचे एक उदाहरण दिले तर बहेणाबाईला प्रौढपणी झालेल्या पूर्वजन्मस्मृतीची शहानिशा झालेली नाही यास्तव ती अविश्वासाह आहे, असे म्हणण्याचे वाचकांना कारण उरणार नाही असे वाटते.

हे प्रकरण पॅरिसच्या डॉ. डुर्निल यांनी संशोधिले आहे. पॅरिसच्या मादाम रेनॉड या बाईला एकदा अचानक व उत्स्फूर्तपणे आपल्या एका पूर्वजन्माची स्मृती उफाळून आली. तिला त्या जन्मात आपण ज्या घरात राहत होतो, त्या घराच्या गच्चीवर फिरत आहोत याचे स्मरण होऊ लागले. पण ते घर नेमके कोठे आहे हे तिला आठवेना, एकदा इटलीतील जिनोआ शहराला काही कारणाने तिने भेट दिली असता तिला आपण याच शहरात १०० वर्षांपूर्वी राहत होतो हे स्पष्ट आठवले. येथील रस्ते तिला ओळखीचे वाटले. (अशा पूर्व ओळखीच्या भावनेला de javu म्हणतात.) आणि तेथील लोकांच्या मदतीने तिने आपल्या त्या जन्मातील घर बरोबर शोधून काढले. ते घर पाहताच तिच्या आणखी काही स्मृती उफाळून आल्या. आपण शंभर वर्षांपूर्वी क्षयरोगाने मेलो होतो व आपले प्रेत इतरांप्रमाणे जिनोआ शहराच्या स्मशानात पुरलेले नसून तेथील एका चर्चमध्ये पुरले असल्याची तिला स्पष्ट जाणीव झाली. डॉ. डुर्निलनी मग जिनोआतील सॅनफ्रान्सिस्को डी आल्बेरो या चर्चमध्ये ठेवलेले जुने कागदपत्र तपासले आणि योगायोगाने त्यांना तिच्या मृत्यूचा दाखला सही शिक्क्यानिशी सापडला. त्यात ती क्षयाने मेल्याचा उल्लेख होताच, शिवाय तिला त्या शहराच्या नगराध्यक्षाच्या लेखी परवानगीने त्या चर्चमध्ये पुरल्याचाही त्यात उल्लेख होता. तिने आपल्या मृत्यूचा सांगितलेला काळही जुळला. अशारीतीने तिने सांगितलेल्या तीन गोष्टींचे वस्तुनिष्ठ पुरावे मिळाले. एक, तिचा

त्या जन्मात क्षयरोगाने झालेला मृत्यू; दोन, तिचे प्रेत प्रथेनुसार जिनोआच्या स्मशानात न पुरता चर्चमध्ये पुरले होते ही गोष्ट; आणि तीन, तिचा मृत्यूचा काळ. या प्रकरणातील सर्वात मोठा आश्चर्याचा भाग म्हणजे वरील सर्व वस्तुनिष्ठ पुरावे मिळण्यापूर्वी डॉ. डुव्हिल यांना पॅरिसमधील एका अतींद्रिय शक्तीच्या स्त्रीवरील संमोहन-प्रयोगात तिच्या तोंडून मादाम रेनॉडच्या पूर्वजन्माचा वरील सर्व तपशील प्रत्यक्ष ऐकावयास मिळाला होता. उदा. त्या बाईचा जन्म ज्या शहरात झाला होता त्या शहराचे नाव-जे खुद्द मादाम रेनॉडला आठवत नव्हते-त्या स्त्रीने बरोबर सांगितले होते. इतकेच नव्हे तर तिचे त्या जन्मातील नाव जोअन्ना असल्याचे आडनावासह बरोबर सांगितले होते. आणि डॉ. डुव्हिल यांना तेथील चर्चमधील कागदपत्रात ते बरोबर असल्याचे नंतर आढळून आले होते.<sup>१२६</sup> अशारीतीने या प्रकरणामुळे प्रौढपणी झालेल्या पूर्वजन्माच्या स्मृतीबरोबरच पूर्वजन्मातील घटनांचे सत्य शोधण्यामध्ये अतींद्रिय शक्ती व संमोहन यांनाही किती वैज्ञानिकदृष्ट्या महत्त्व आहे हे स्पष्ट होते.

या संशोधनाला आणखी एका दृष्टीने महत्त्व आहे. ख्रिश्चन धर्माच्या शिकवणुकीप्रमाणे मनुष्याचा पुनर्जन्म होत नाही. स्वतःच्या धर्माच्या शिकवणुकीविरुद्ध हे पाश्चात्य वैज्ञानिकांचे संशोधन असल्यामुळे त्याला खास महत्त्व आहे. कारण भारतीयाप्रमाणे ते शास्त्रज्ञ कर्म व पुनर्जन्म कल्पनांच्या संस्कारात वाढलेले नसल्यामुळे या गोष्टींची सत्यता पडताळून पाहिल्याशिवाय म्हणजे शास्त्रीय संशोधनाने त्याविषयी प्रत्यक्ष पुरावे मिळाल्याशिवाय त्या गोष्टी ते खऱ्या म्हणून स्वीकारत नाहीत, आणि अशाच संशोधनातून आयन स्टिव्हेंसन या अमेरिकन शास्त्रज्ञाने अमेरिकेसह जगातील अनेक देशांतील २५०० च्या वर पुनर्जन्म प्रकरणे तपासून त्याविषयीचे वस्तुनिष्ठ पुरावे गोळा केले आहेत व पुनर्जन्म सिध्दांत भक्कम वैज्ञानिक बैठकीवर प्रस्थापित केला आहे. (टीप क्र.१२५ पाहा.)

पुनर्जन्माबरोबर कर्मसिध्दांतही कसा बरोबर आहे (पुनर्जन्म खरा असेल तर कर्मसिध्दांतही आपोआपच खरा ठरतो, कारण एकाशिवाय दुसऱ्याला अर्थ नाही) हे अतींद्रिय दृष्टीने पाहून दाखवून देणारी प्रसिध्द व्यक्ती म्हणजे अमेरिकेतील व्हर्जीनिया बीचचा एडगर केयसी होय. आणि संमोहनाच्या सहाय्याने कर्मसिध्दांत कसा कार्य करतो हे वस्तुनिष्ठ पातळीवर दाखवून देणारा डॉक्टर शास्त्रज्ञ म्हणजे डॉ. जोएल व्हिटन हा होय. (त्याचा **Life Between Life** हा ग्रंथ पाहा.)

### अतींद्रिय दृष्टी, संमोहन आणि पुनर्जन्म संशोधन

आयन स्टिव्हेंसन हे पुनर्जन्माच्या वैज्ञानिक सिध्दांताचे जागतिक पातळीवरील अधिकारी ठरण्यापूर्वी अनेक पाश्चात्य संशोधकांनी अतींद्रिय शक्ती व संमोहन यांच्या साहाय्याने पाश्चात्य जगात तो सिध्दांत प्रस्थापित केला होता, हे मात्र

या संदर्भात लक्षात ठेवले पाहिजे. यापैकी अँलन कार्डेक हा एक फ्रेंच सशोधक असून त्याने माध्यमांच्या अतींद्रिय शक्तीच्या साह्याने-म्हणजे मृतात्म्यांच्या द्वारा एकोणिसाव्या शतकातच हे कार्य केले होते. त्याचा याविषयावरील ग्रंथ **Spirit Book** या नावाने प्रसिध्द असून तो प्रथम १८५७ साली प्रसिध्द झाला. (त्याची आजही पुनर्मुद्रणे वरचेवर होत असतात.)

या क्षेत्रातील दुसरे पाश्चात्य संशोधक म्हणजे लेडबीटर व अँनी बेझंट हे ब्रह्मविद्याविशारद (Theosophists) होत. या दोघांनी स्वतःच्या कुंडलिनी शक्तीच्या जागरणाने प्राप्त झालेल्या अतींद्रिय दृष्टीच्या (Clairvoyance) साह्याने स्वतः बरोबरच इतर शेकडो लोकांच्या अनेक पूर्वजन्मांची अत्यंत तपशीलवार माहिती मिळवून ती मानवी उत्क्रांतीच्या संदर्भात (तिचा भाग म्हणून) आपल्या अनेक ग्रंथातून प्रसिध्द केली आहे.<sup>१२०</sup> इतक्या लोकांच्या अनेक जन्मांची इतकी तपशीलवार माहिती पुराव्यांच्या अभावी, केवळ अतींद्रियदृष्टीने पाहून त्यांनी सांगितली आहे म्हणून, कितपत खरी किंवा विश्वासाह मानावी, असा एक येथे साहजिकच प्रश्न निर्माण होतो. हे संशोधकही सर्वांनी ती माहिती डोळे झाकून खरी म्हणून स्वीकारावी, असे म्हणत नाहीत. त्यांचे याविषयीचे म्हणणे इतकेच की इतरांना आपल्या भौतिक डोळ्यांनी प्रत्यक्ष पाहिलेल्या गोष्टी जशा व जितक्या खऱ्या वाटतात, तशाच व तितक्याच आपल्यालाही आपल्या अतींद्रिय दृष्टीने प्रत्यक्ष पाहिलेल्या गोष्टी खऱ्या वाटतात. या संदर्भात अँनी बेझंट यांनी म्हटले आहे की “अतींद्रियदृष्टीच्या साह्याने केलेल्या संशोधनाची सत्यता सामान्य लोकांना पटवून देणे हे आंधळ्याला रंगाचे अस्तित्व पटवून देण्यासारखे आहे.”<sup>१२१</sup> दुसऱ्या शब्दात, सामान्य लोकांना आपल्याप्रमाणे अतींद्रियदृष्टी प्राप्त झाली तर ते आपले म्हणणे स्वीकारल्याशिवाय राहणार नाहीत, असे त्यांना वाटते. आणि म्हणून त्या पुढे म्हणतात की ती दृष्टी त्यांना नसल्यामुळे “आपले या क्षेत्रातील लेखन वाचून बहुसंख्य लोकांना वाटेल की आम्ही एक तर स्वतःला फसवत आहोत किंवा दुसऱ्यांना फसवत आहोत.”<sup>१२२</sup> पण यापैकी आपण काहीही करत नाही, असे दोघेही आत्मविश्वासपूर्वक सांगतात. हा त्यांचा आत्मविश्वास भविष्यात आपले लेखन विज्ञानाच्या कसोट्यांवर सिध्द होईल असे त्यांना वाटत असल्यामुळेच त्यांच्यात निर्माण झाला होता, हे निःसंशय आणि हा आत्मविश्वास अनाटायी नव्हता, हे पुनर्जन्माबरोबरच ब्रह्मविद्येच्या इतरही अनेक गोष्टीविषयी त्यांनी जे लिहिले आहे, ते नंतरच्या वैज्ञानिक संशोधनाने वैज्ञानिक व वस्तुनिष्ठ कसोट्यांना उतरले असल्यामुळे सिध्द झाले आहे.<sup>१२३</sup> उदा. त्यांनी अतींद्रिय दृष्टीने पाहून वर्णन केलेल्या मूलभूत भौतिक कणांची (fundamental particles) जी माहिती आपल्या **Occult Chemistry** या संयुक्तपणे लिहिलेल्या ग्रंथात १९०८ साली विस्ताराने प्रसिध्द केली आहे, ती नंतरच्या भौतिक शास्त्रातील



संशोधनाने पूर्णपणे खरी ठरली आहे. ती कशी खरी ठरली आहे, याविषयीची माहिती स्टीफेन एम्. फिलिप्स या भौतशास्त्राज्ञाने आपल्या **Anima (Evidence of Yogic Siddhi)** (1996) आणि **ESP of Quarks and Superstrings** (1999) या ग्रंथात सर्व भौतशास्त्रीय पुराव्यानिशी दिली आहे. त्यावरून असे दिसून येते की सॉडी व अँस्टन या भौतशास्त्रज्ञांनी समस्थानीयांचा (isotopes) शोध लावण्याच्या पाच वर्षे अगोदरच अँनी बेझंट व लेडबीटर यांनी अतींद्रियदृष्टीने पाहून त्यांचा शोध लावला होता व **Theosophist** या मासिकात त्याची माहिती दिली होती. तसेच प्रोटॉन व न्यूट्रॉनमध्ये धन व ऋण क्वॉर्क (Quark) असतात, असा जो सिध्दांत भौतशास्त्रज्ञांनी १९६४ साली मांडला, तो प्रथम १८९५ सालीच, म्हणजे त्या शोधाच्या ६९ वर्षे अगोदरच त्या दोघांनी अतींद्रिय दृष्टीने पाहून तो मांडला होता व त्याचे आकृतीसह सविस्तर वर्णन केले होते. (पाहा **Occult Chemistry**) यावरून कुंडलिनी जागृतीने मिळवलेली व प्रवृत्त्यालोकन्यासात सूक्ष्मव्यवहित - विप्रकृष्टज्ञानम् ॥ (यो.सू.३.२५) (म्हणजे 'प्रज्ञालोकाचा प्रकाश पाडून योगी कितीही व कुठलीही सूक्ष्म वस्तू मोठी करून किंवा स्वतः सूक्ष्म बनून पाहू शकतो, तिचे ज्ञान मिळवू शकतो.') या पातंजल योगशास्त्रात सांगितलेली अणिमा सिध्दी प्रत्यक्षात भौतिक कसोट्यांना कशी उतरते हे (म्हणजेच ती कपोलकल्पित नसल्याचे) भौतवैज्ञानिकांच्या संशोधनास मिळालेल्या या वस्तुनिष्ठ पुराव्यांनीच सिध्द झाले आहे. इतकेच नव्हे तर १९७० नंतर व १९८२ साली भौतशास्त्रज्ञांनी मांडलेला अनुक्रमे तंतू व महातंतू (string and superstring) हे सिध्दांतसुध्दा अँनी बेझंट व लेडबीटर यांनी १९०८ सालीच, म्हणजे त्याच्याही ६० ते ७० वर्षांपूर्वीच **Occult Chemistry** या ग्रंथात प्रत्यक्ष पाहून आकृतीसह वर्णन केले होते.<sup>१३</sup> हे सर्व येथे सांगण्याचा हेतू इतकाच की अतींद्रिय दृष्टीला (clairvoyance) जे दिसते ते ती दृष्टी ज्यांना नाही, त्यांना ते खोटे म्हणता येणार नाही, हे वाचकांना पटावे. म्हणूनच त्या दोघांनी अतींद्रियदृष्टीने पाहून वर्णिलेल्या अनेकांच्या पूर्वजन्मातील गोष्टीही त्यांना खोट्या म्हणता येणार नाहीत, असे म्हणावे लागते. डॉ. डुर्व्हिल यांनी एका सामान्य अतींद्रिय शक्तीच्या व दृष्टीच्या स्त्रीवर केलेल्या संमोहन प्रयोगाने एकाद्या व्यक्तीच्या पूर्व-जन्मातील घटना कशा बरोबर पाहता व सांगता येतात, हे मादाम रेनॉड या बाईच्या पूर्वजन्माच्या संशोधनात आढळलेल्या वस्तुनिष्ठ पुराव्यांच्या आधारे दाखवून दिले असल्यामुळे वैज्ञानिकांबरोबरच सामान्य माणसाच्या दृष्टीनेही व्यवहारात अतींद्रिय दृष्टीला किती महत्त्व आहे, हे स्पष्ट होते. त्या संशोधनामुळे एखाद्या व्यक्तीला प्रौढपणी झालेल्या पूर्वजन्माच्या स्मृतीही वस्तुनिष्ठ कसोट्यांना कशा उतरतात हेही दिसून येते. आणि म्हणून अनन्य ईश्वर-भक्तीतून प्राप्त झालेल्या असामान्य अतींद्रिय शक्तीच्या बहेणाबाईसारख्या धार्मिकवृत्तीच्या स्त्रीला प्रौढपणी पूर्वजन्माच्या

स्मृती झाल्या तर त्यात आश्चर्य नाही व त्याही कोणाला खोट्या म्हणता येणार नाहीत, हे उघड आहे.

‘संमोहन’ व ‘अतींद्रिय दृष्टी’ या दोन पध्दतीनी केलेले व वस्तुनिष्ठ पुराव्यांनी सिध्द झालेले डॉ. डुर्व्हिल यांचे पूर्वजन्मसंशोधनाचे हे उदाहरण अपवादात्मक किंवा एकमेव आहे, असे मात्र कोणी समजू नये. अशी अनेक उदाहरणे पाश्चात्य शास्त्रीय संशोधन-इतिहासात आढळून येतात. संमोहनाच्या साह्याने पूर्वजन्माच्या अनेक स्मृती वस्तुनिष्ठ पुराव्यावर तपशीलवार तपासून सत्य असल्याचे सिध्द केलेले पाश्चात्य देशातील एक प्रसिध्द उदाहरण म्हणजे मोरी बन्स्टाइन या लेखकाच्या *The Search For Bridey Murphy* या गाजलेल्या पुस्तकातील अमेरिकेच्या डेनव्हर शहरातील एका सामान्य गृहिणीचे होय. (जुन्या काळातील आयर्लंडमध्ये जन्मलेल्या एका बाईचा डेनव्हर शहरात विसाव्या शतकात झालेला हा पुनर्जन्म होता.) प्राचीन इजिप्तमधील एका स्त्रीचा विसाव्या शतकात ब्लॅकपूल शहरातील एका मुलीचे-जी तंद्रीत गेल्यानंतर जगात कोणालाही बोलता न येणाऱ्या इजिप्शन भाषेत बोलू शकत होती-संमोहनविरहित केवळ अतींद्रिय शक्तीने सिध्द झालेले आणखी एक उदाहरण आहे.<sup>१३२</sup>

अतींद्रिय दृष्टीच्या साह्याने वस्तुनिष्ठ पुराव्यांच्या आधारे पूर्वजन्मातील घटना सत्य असल्याचे सिध्द करणाऱ्या व्यक्तीचे युरोपमधील आणखी एक उदाहरण म्हणजे जोन ग्रॅट या इंग्लीश बाईचे होय. ह्या बाईने आपल्याबरोबरच इतरही अनेक व्यक्तींच्या पूर्वजन्मांची माहिती अतींद्रिय शक्तीने-जिला ती level shifting म्हणते-बरोबर सांगितली आहे. हिने अनेकांच्या मनोव्याधी, वाईट सवयी, भयगंड (phobias) इ. - जिची पाळेमुळे पूर्वजन्मातील विशिष्ट घटनात आढळून येतात. - त्यांच्या त्या स्मृती जाग्या करून बऱ्याही केल्या आहेत.<sup>१३३</sup> (त्या व्याधी बऱ्या झाल्यामुळे त्यांना करणीभूत ठरलेल्या पूर्वजन्मातील त्या घटना सत्य असल्याचे सिध्द होते.) असलेच नेमके कार्य इव्हॅनोव्हा व्हॅरव्हॅरा या युनिव्हर्सिटीची पदवी धारण करणाऱ्या स्त्रीने रशियात केले आहे. या स्त्रीचे वैशिष्ट्य म्हणजे दुरून फोनवरून सुध्दा अतींद्रिय दृष्टीने रोगनिदान करून ती ते बरे करीत असते. तिचे हे सामर्थ्य खोटे नसल्याचे तिच्या जीवनातील एका महत्त्वाच्या घटनेने सिध्द होते. ती घटना म्हणजे अतींद्रिय शक्तीचे अस्तित्व जडवादात बसत नसल्यामुळे जडवादी कम्युनिस्ट राज्यसत्तेखाली ती करीत असलेल्या नोकरी व निवृत्तीवेतन या दोन्हींना तिला मुकावे लागले.<sup>१३४</sup>

असलेच कार्य अमेरिकेत करून जागतिक कीर्ती मिळवणारी व्यक्ती म्हणजे ‘व्हर्जीनिया बीचचा झोपेतील दृष्टा’ किंवा ‘व्हर्जीनिया बीचचा चमत्कार करणारा माणूस’ (*The sleeping Prophet of Virginia Beach or The Miracle man of Virginia Beach*) या नावांनी प्रसिध्द असलेल्या एडगर केयसी हा होय. (या

व्यक्तीच्या नावाचे एक प्रतिष्ठान अमेरिकेत हल्ली कार्यरत आहे.) हा एडगर केयसी खाटेवर झोपून स्वसंमोहनाने क्षणात तंद्रीत (trance) जात असे व समोरच्या व्यक्तीचे (किंवा कधीकधी समोर नसलेल्या व्यक्तीचे सुध्दा केवळ त्याचे नांव व पत्ता यांच्या आधारे) शारीरिक दोष, रोग इ. अतींद्रिय दृष्टीने पाहून बरोबर सांगत असे. तो व्यवसायाने फोटोग्राफर होता व शरीरशास्त्राचे त्याला कसलेही ज्ञान नव्हते. तथापि तंद्रीत गेल्यानंतर एखाद्या व्यक्तीच्या शरीरातील अवयवांचे वर्णन त्यातील दोषासह तो एखाद्या कसलेल्या डॉक्टरप्रमाणे व ते सर्व प्रत्यक्ष पाहिल्याप्रमाणे करीत असे. त्याचे निदान बरोबर असल्याचे वैद्यकीय तपासणीत नंतर सिध्द झाले आहे. पण सर्वात मोठे आश्चर्य म्हणजे तो रुग्णांच्या दोषावर जे उपचार सांगत असे-मग तो रुग्ण जगणार नाही म्हणून डॉक्टरांनी घरी पाठविलेला मरणासन्न रुग्ण असेना का-त्या उपचाराने हटकून बरा होत असे ! एखादा दोष अपघातामुळे त्याच्या शरीरात निर्माण झाला असेल तर तो अपघात त्याला केव्हा झाला, कसा झाला इ. गोष्टी तो अपघात समोर घडलेला पाहिल्याप्रमाणे वर्णन करून सांगत असे. अतींद्रिय दृष्टीने या सर्व गोष्टी केयसीला दिसत असतील तर गूढ विषयातील गोष्टीही त्याला का दिसू नयेत, असे वाटून लॅमर्स नावाच्या एक गूढ विद्येची आवड असलेल्या व्यक्तीने त्याला आपली जन्म कुंडली सांगून ज्योतिष व ग्रह यांच्याविषयी विचारले. आणि आश्चर्य म्हणजे एकदम केयसीने त्याला तो मागच्या जन्मात संन्याशी होता असे सांगितले ! तो तंद्रीत गेल्यानंतर जे सांगत असे ते सर्व जवळच बसलेली एक व्यक्ती लघुलिपीत तत्काळ लिहून घेत असे. (ध्वनीमुद्रणयंत्राचा शोध लागण्यापूर्वीची-१९२३ सालची-ही गोष्ट आहे.) तो शुध्दीवर आल्यानंतरच आपण तंद्रीत काय बोललो हे त्याला कळत असे; आणि जेव्हा लॅमर्सच्या पूर्वजन्माची माहिती आपण-म्हणजे आपल्या अबोध मनाने-तंद्रीत सांगितल्याचे त्याला नंतर कळले, तेव्हा तो अतिशय अस्वस्थ झाला. कारण तो नियमितपणे बायबल वाचणारा एक निष्ठावंत ख्रिश्चन होता; आणि पुनर्जन्म सिध्दांत ख्रिश्चन धर्माच्या शिकवणुकीविरुद्ध असल्याने तो स्वीकारणे त्याला जड वाटू लागले. पण इतर अनेक गोष्टींची अचूक माहिती सांगणाऱ्या आपल्या अबोध मनाच्या अतींद्रिय शक्तीवर व दृष्टीवर पुनर्जन्मातील गोष्टींच्या बाबतीतच तेवढे अविश्वास दाखविणे कितपत सयुक्तिक होते ? तथापि अशा गोष्टींची सत्यता पडताळून पाहून मगच ती स्वीकारण्याचे धोरण त्याने ठेवले; आणि जेथे पडताळा पाहणे शक्य झाले तेथे त्याला प्रत्यक्ष पडताळा मिळालाही; आणि अशा तपासणीनंतर हळुहळु त्याच्या मनातील पूर्वजन्माच्या खरेपणाविषयीचा संशय नाहीसा झाला. याचे एक उत्तम उदाहरण म्हणजे एका व्यक्तीला त्याने तंद्रीत तो पूर्वजन्मात अमेरिकन यादवी युध्दात एक शिपायी होता असे सांगितले. त्या जन्मातील त्याचे नांव बार्नेट सी असून व त्याचे दस्तऐबज हेन्रिको काऊंटी येथे ठेवले असल्याचेही त्याने सांगितले. त्या व्यक्तीने ताबडतोब हेन्रिको काऊंटीला

जाऊन त्या कागदपत्रांचा त्याने सांगितल्याप्रमाणे शोध घेतला. तेव्हा ते दस्तऐवज त्याला थोड्या प्रयत्नांअंती खरोखरच सापडले. इतकेच नव्हे तर त्याचे नाव व इतर तपशीलही केयसीने सांगितल्याप्रमाणे सर्व बरोबर असल्याचे आढळून आले.<sup>११५</sup>

लॅमर्सने ज्योतिषशास्त्राविषयी विचारले होते. पण त्याला त्याच्या पूर्व जन्माची माहिती केयसीने दिली, असे का ? त्याचा खुलासाही केयसीच्या अतींद्रिय दृष्टीच्या वाचनात मिळतो. त्यानुसार ग्रहांचा व मानवी जीवनाचा-त्याच्या पुनर्जन्माचाही-घनिष्ट संबंध असून ज्योतिषशास्त्रात पृथ्वी पुरतेच मानवी जीवनाचा विचार करून चालत नाही. त्याच्या मरणोत्तर जीवनातील जगाचाही विचार करावा लागतो. हा मरणोत्तर जीवनक्रम अनेक लोकातून होत असून त्याचा व ग्रहांचा परस्परसंबंध आहे. (हे मरणोत्तर लोक ब्रह्मविद्येनुसार सात आहेत. उदा. भूः, भुवः, स्वः, महः, जनः, तपः व सत्य; आणि महत्त्वाचे ग्रहही सातच आहेत. उदा. रवि, चंद्र, मंगळ, बुध, गुरु, शुक्र व शनी. म्हणून त्यांची ही नावे वारांनाही देण्यात आली आहेत.) या संबंधाचा विचार रुढ ज्योतिषशास्त्रात होत नाही. म्हणून ते शास्त्र हल्ली शंभर टक्के अनुभवाला उतरत नाही. मनुष्य 'मरतो' म्हणजेच 'परलोकवासी' होतो असे नुसते म्हणायचे, पण त्या परलोकवासाचा त्याच्या पुढील जन्मावर काय परिणाम होतो याचा ज्योतिषशास्त्रात विचार करावयाचा नाही, हे डॉक्टरांनी रुग्णाच्या पूर्वयुष्याचा विचार न करता रोगनिदान करण्यासारखे आहे. ते निदान चुकीचे ठरले तर तो वैद्यकशास्त्राचा दोष नसून तसे रोगनिदान करणाऱ्या वैद्याचा तो दोष ठरतो. हल्लीचे ज्योतिषशास्त्र शंभर टक्के अनुभवाला उतरत नाही म्हणून ते शास्त्रच नव्हे असे म्हणणारे व मरणोत्तर लोकातील जीवनाचा व ग्रहांचा परस्परसंबंध विचारात न घेता ज्योतिषशास्त्राचा अभ्यास करून भविष्य वर्तविणारे हे दोघेही तितकेच दोषी ठरतात. अतींद्रिय शक्तीचे काही मोजके ज्योतिषी ग्रहांच्या स्थानाबरोबरच आपल्या अतींद्रिय शक्तीचाही उपयोग ज्योतिषशास्त्रात करताना आढळतात. त्यांचे भविष्य मात्र कधीच चुकत नाही असे आढळून येते, आणि याचे कारण त्यांची अतींद्रिय दृष्टी रुढ (अपूर्ण) ज्योतिषशास्त्राच्या मयदिच्या पलीकडे जाऊन पाहू शकते हेच आहे.<sup>११६</sup> अशारीतीने अतींद्रिय दृष्टी कधीच चुकत नसल्यामुळे त्या दृष्टीने पाहिले तर मागील जन्मच काय, पण पुढील जन्मही केव्हा व कोठे होईल याचे अचूक भविष्य वर्तविता येते. अशाप्रकारे अतींद्रिय दृष्टीने पाहून केलेल्या पुढील जन्माच्या एका अचूक भाकिताचे पडताळून पाहिलेले उदाहरण येथे देतो. त्यामुळे अतींद्रिय दृष्टीला दिसणारा मागील जन्म खोटा नसतो, हे वाचकांना पटेल.

**अतींद्रिय दृष्टीने पुढील जन्माचे अचूक भाकीत -** गुजरातमधील भद्रन येथील एक उच्चविद्याविभूषित साधू कृष्णानंद हे भारताचा प्रवास करीत एकदा ओरिसामधील जगन्नाथपुरी येथे आले होते. एके दिवशी ते राहत असलेल्या खोलीतून

त्यांना काही अंतरावरील रस्त्याच्या कडेला एक भिकारी उन्हात बसलेला दिसला. कृष्णानंदांच्याकडे त्यावेळी काही मोसंबी शिल्लक होती. ती त्या भिकार्याला त्यांनी नेऊन दिली. तेव्हा त्याने ती न घेता पलीकडच्या गल्लीतील झोपडीत राहणाऱ्या एका गरीब बाईला त्यांची गरज असून तिला नेऊन देण्यास त्याने सांगितले. ती देऊन परत येईपर्यंत आपण कोठेही जाणार नाही, येथेच बसून राहू असेही त्याने त्यांना सांगितले. आपल्या मनातील विचार त्याने ओळखल्याचे पाहून त्यांच्या मनात त्या भिकार्याविषयी कुतूहल निर्माण झाले. कारण कृष्णानंदाना मोसंबी नाकारणारा व दुसऱ्या एक अज्ञात व्यक्तीला ती देण्यास सांगणारा हा भिकारी विलक्षणच वाटला होता व हा मोसंबी देऊन परत येईपर्यंत कदाचित निघून जाईल असा संशय त्यांच्या मनात निर्माण झाला होता. तो संशय त्या भिकार्याने ओळखला होता, हे बरील त्याच्या उत्तरावरून त्यांना कळले व त्याच्याविषयी त्यांच्या मनात जास्तच कुतूहल निर्माण झाले. ते त्याने सांगितलेल्या माहितीच्या आधारे ती झोपडी त्यांनी शोधून काढली तेव्हा त्या बाईचा मुलगा आजारी असून त्याला मोसंबीची खरोखरच गरज होती असे त्यांना आढळून आले आणि त्या भिकार्याच्या या अंतर्ज्ञानाने ते जास्तच प्रभावित झाले. ते परत आल्यानंतर त्या भिकार्याने त्यांना जवळ बसवून घेतले व उद्या आपण सकाळी बरोबर १० वाजून ५५ मिनिटांनी मारवाडी धर्मशाळेजवळ हा देह सोडणार असून तुम्ही माझ्या शरीराचे समुद्राच्या काठी दफन करावे, असे त्यांना सांगितले व त्यासाठी लागणारे पैसे त्याने कृष्णानंदांना दिले. पुढे त्याने असेही सांगितले की 'उद्यापासून बरोबर दोन महिन्यांनी, म्हणजे २५ फेब्रुवारी १९५४ रोजी कलकत्त्यातील 'बेहला' नावाच्या उपनगरीत राहणाऱ्या हरिमोहन नावाच्या एका लोहाराच्या कुटुंबात मी मुलगी म्हणून जन्मणार असून तो माझा शेवटचा जन्म असेल. त्या मुलीच्या देहात १६ वर्षे राहून मी तो देह सोडणार आहे. ही १६ वर्षे मी अगदी सामान्य जीवन जगणार आहे.' जणू काही एक घर सोडून दुसऱ्या घरात राहायला आपण जात आहोत, अशा थाटातील त्याचे हे बोलणे व पुनर्जन्माचे भाकीत ऐकून हा कोणी सामान्य भिकारी नसून महान योगी असला पाहिजे याची कृष्णानंदांना खात्री झाली. तथापि त्यांना एका गोष्टीचे कोडे पडले. हा दोन महिन्यांनंतर जन्मणार असे म्हणतो. पण नऊ महिने किंवा २६६ दिवस मातेच्या गर्भात राहिल्याशिवाय कोणत्याही मुलाचा जन्म होत नाही; तेव्हा हे कसे शक्य आहे ? त्यांच्या मनातील ही शंकाही त्याने ओळखली व त्यांनी न विचारता त्याचा खुलासा त्याने असा केला की मनुष्याचा आत्मा स्त्रीच्या गरोदरपणाच्या सातव्या ते आठव्या महिन्याच्या दरम्यान तिच्या गर्भाच्या शरीरात प्रवेश करतो. त्यामुळे दोन महिन्यांनंतर अगोदरच गर्भ राहिलेल्या स्त्रीच्या पोटी जन्म घेणे अशक्य नाही. त्याच्या या खुलाशाने कृष्णानंदांचे समाधान झाले.<sup>१३</sup>

दुसरे दिवशी त्या भिकाऱ्याने बरोबर १० बाजून ५५ मिनिटांनी आपला देह त्याने सांगितल्याप्रमाणे मारवाडी धर्मशाळेजवळ सोडला असल्याचे कृष्णानंदाना आढळून आले. त्यावेळी तेथील दुकानदार लोक 'हा एक वेडसर भिकारी होता' असे बोलत होते, असे त्यांना आढळून आले. त्याची खरी ओळख कुणालाच नव्हती. "The greatest men in the world have passed away unknown" (On Freedom) (जगातील सर्वश्रेष्ठ पुरुष कोणालाही माहीत नसताना जगले व मेले) हे विवेकानंदांचे म्हणणे कसे अगदी खरे आहे, हे यावरून दिसून येते. (सामान्य जीवन जगणाऱ्या अशा अज्ञात योग्यांची भारतात अनेक उदाहरणे सापडतात. त्याची सोदाहरण माहिती या ग्रंथात प्रकरण ११ व पृ. १५१ वर दिली आहे.) कृष्णानंदांनी त्याच्या प्रेताची त्याने सांगितल्याप्रमाणे त्यानेच दिलेल्या पैशातून विल्हेवाट लावली. पुढील जन्माचे त्याचे भाकीत कितपत खरे ठरे, हे जाणण्याचे त्यांना कुतूहल होते, त्या उद्देशाने ते दोन महिन्यांनंतर कलकत्त्याला गेले व 'बेहला' या उपनगरीत हरिमोहन लोहाराचा शोध घेतला, तेव्हा त्या नावाचा माणूस राहत असलेले घर तेथे त्यांना खरोखरच आढळले. कृष्णानंदांनी त्याला आपली ओळख करून दिली व आपला येण्याचा उद्देश सांगितला. त्यांची कथा ऐकून तो आश्चर्यचकित झाला. आपल्या पत्नीला आपणाला मुलगी होणार असल्याचे एक स्वप्न पडले असल्याचेही त्याने त्यांना सांगितले. तथापि ते सांगत असलेल्या वेळापत्रकातील दिवस चुकत असल्याचे व आपल्या पत्नीला नुकताच आठवा महिना सुरु झाला असल्याचे त्याने सांगितले. पण कृष्णानंदांना खात्री होती की त्या सत्पुरुषाने सांगितलेली घटना व दिवस चुकणार नाही. म्हणून ते २५ फेब्रुवारी १९५४ रोजी पुन्हा हरिमोहनच्या घरी गेले. आणि आश्चर्य म्हणजे त्या दिवशी रात्री १२ वाजता त्याची पत्नी बाळंत होऊन तिला मुलगी झाली. त्या सत्पुरुषाने २५ फेब्रुवारी १९५४ रोजी आपण मुलगीच्या रूपाने जन्म घेणार असल्याचे केलेले भाकीत अशारीतीने अगदी तंतोतंत खरे ठरले.<sup>१८</sup>

पुढे १९५९ मध्ये व पुन्हा १९६७ मध्ये असे दोन वेळा कृष्णानंदांनी कलकत्त्याला हरिमोहनच्या घरी भेट दिली व त्या मुलीचे जीवन व स्वभाव याविषयीची माहिती मिळवली. ती एक निर्भय व आनंदी स्वभावाची मुलगी असून घराजवळील देवळात एक दोन तास दररोज व्यतीत करण्यापलीकडे तिच्या जीवनात काही विशेष घडले नसल्याचे त्यांना आढळून आले. मात्र एकदा एक साप तिने धरला होता व त्यांच्याबरोबर ती खेळत होती. ते पाहून घरच्या लोकानी तो साप मारला, तेव्हा दोन दिवस ती जेवली नसल्याचे हरिमोहनने सांगितले. ती १६ व्या वर्षी मरणार असल्याचे मात्र कृष्णानंदांनी हरिमोहनला सांगितले नाही. पण ते भविष्य खरे ठरणार याविषयी त्यांना कसलाही संशय नव्हता. मात्र त्याचा पडताळा पाहण्यासाठी कलकत्त्याला आपण पुन्हा जाऊ शकलो नाही, असे कृष्णानंदांनी

म्हटले आहे. आपण प्रत्यक्ष अनुभवाच्या आधारे वर लिहिलेली ही गोष्ट ज्यांना संशयास्पद वाटते, अशा लोकांसाठी त्यांनी आपल्या लेखाच्या शेवटी हर्बर्ट स्पेन्सर यांच्या एका तत्त्वाची आठवण करून दिली आहे. ते तत्त्व असे : “शोध न घेता एखादी गोष्ट खोटी म्हणून उडवून लावणे (CONDEMNATION WITHOUT INVESTIGATION) यासारखी दुसरी कोणतीही गोष्ट माणसाला कायमच्या अज्ञानात ठेवू शकत नाही.” \*

### आकाशलेखन (Akashic Record)

अतींद्रिय दृष्टीने पाहून माणसांच्या (स्वतःच्याच नव्हे तर इतरांच्याही) अनेक पूर्वजन्मांची अचूक माहिती सांगणारा केयसी त्याच कारणासाठी जगप्रसिध्द झाला आहे. लॅमर्सच्या ज्योतिषविषयक प्रश्नांच्या निमित्ताने केयसीने त्याच्या पूर्वजन्माची माहिती सांगितल्यानंतर इतरांचीही अशीच माहिती सांगण्यास त्याने सुरुवात केली. पुढील बावीस वर्षांच्या काळात केयसीने सुमारे २५०० लोकांच्या जन्मपत्रिकांचे (पूर्वजन्माचे) वाचन (Life reading) केले आहे. माणसांच्या पूर्वजन्माची माहिती आपण कुठून मिळवतो, हेही त्याने सांगितले आहे. तो म्हणतो की विश्वातील प्रत्येक घटनेची, इतकेच नव्हे तर प्रत्येक व्यक्तीच्या मनातील विचारांची सुध्दा, नोंद ‘आकाश’ तत्त्वावर अगोदरच झालेली असून ती अतींद्रिय दृष्टीच्या कोणत्याही माणसाला वाचून सांगता येते. या आकाश-तत्त्वावरील लेखनाला केयसीने ‘आकाशिक रेकॉर्ड’ (Akashic record) म्हटले आहे. (संस्कृतचे कसलेही ज्ञान नसलेल्या केयसीने ‘आकाश’, ‘कर्म’ यासारखे ब्रह्मविद्येतील शब्द वापरले आहेत, ही गोष्ट अर्थपूर्ण आहे. ब्रह्मविद्येतील सनातन तत्त्वे वा सत्ये सार्वत्रिक वैश्विक असल्याचे ती दाखवून देते.) ‘आकाशशरीरं ब्रह्म’ या तैत्तिरीय उपनिषदातील वचनानुसार व गोगिंदस्वामीच्या ‘अंबरात् (आकाशात्) अवतरति देवः’ या म्हणण्यानुसार जॅकोलियोच्या मनातील विचार किंवा ऋग्वेदातील (किंवा कोणत्याही ग्रंथातील) कोणताही शब्द किंवा कोणतीही माहिती एक साधा लाकडाचा तुकडा (किंवा पितृदेवांची अतींद्रिय शक्ती) जे अचूक लिहून दाखवू शकला (पृ. २८९ पाहा) ते आकाश-तत्त्वावरील ही नोंद वाचूनच होय, हे आता वाचकांच्या लक्षात येईल. आकाश हे परब्रह्मापासून निर्माण झालेले विश्वनिर्मितीतील पहिले प्रकृति-तत्त्व असल्यामुळे व विश्वाच्या नियोजनाचे प्रतिबिंब या तत्त्वापासून निर्माण झालेल्या दिक्कालावर (space and time) पडलेले असल्यामुळे ते वाचू शकणारी व्यक्ती

\* हे कृष्णानंद प्रस्तुत लेखकाच्या गावी एकदा काही दिवस येऊन राहिले होते; त्यामुळे त्यांना प्रत्यक्ष भेटण्याच्या योग प्रस्तुत लेखकाला लाभला आहे, हे येथे सांगणे उचित होईल. जवळच्याच गळतगा गावातील सिध्देश्वर मंदिरातही काही दिवस ते राहिले होते. तेथे अनुभवलेल्या एका ‘दैवी चमत्कारा’ची माहिती त्यांनी आपल्या ग्रंथात ‘शिवाचे विंचू’ या प्रकरणात दिली आहे.

विश्वातील कोणतीही घटना-भविष्यकालीन घटनासुद्धा-अचूक जाणू व सांगू शकते.<sup>१३९</sup> केयसीने काही भविष्यकालीन घटनांचे भाकीत हे आकाश लेखन वाचूनच केले असून आतापर्यंतची त्याने केलेली भाकिते कशी खरी ठरली आहेत हे एका संशोधक लेखकाने दाखवून दिले आहे.<sup>१४०</sup> या २५०० व्यक्तींच्या जन्मपत्रिका वाचून केयसीने त्यांच्या पूर्वजन्मातील कोणत्या कर्मांमुळे त्यांना या जन्मात कोणती फळे भोगावी लागत आहेत, हे विस्ताराचे सांगितले आहे. त्यामुळे कर्मसिद्धांत हा कार्यकारणभावाच्या नियमानुसार चालणारा वैज्ञानिक सिद्धांत असल्याचे स्पष्ट होते. जसे भौतिक जग भौतिक कार्यकारण भावाच्या नियमानुसार चालले आहे, तसे मानवी जीवनातील घटना क्रम नैतिक व अध्यात्मिक कार्यकारणभावाच्या नियमानुसार चालले आहे. मानवी जीवनातील कोणतीही घटना कोणत्याही कारणाशिवाय घडत नाही; आणि हे कारण प्रत्येक व्यक्तीच्या पूर्वजन्मातील कर्मांचे कसे सापडते हे केयसीने लग्न, घटस्फोट, व्यवसाय, रोग, वेड, शारीरिक व्यंगे, स्वभाव, आवडी-निवडी, शिक्षण, अपघात, कौटुंबिक नाती इ. विषयासंबंधीने प्रत्येक व्यक्तीच्या जन्मपत्रिकेच्या वाचनाच्या प्रसंगाने स्पष्ट केले आहे. उदा. एक कॉलेजचा प्राध्यापक जन्मजात आंधळा होता. केयसीने इ.स.पू. १००० च्या काळात तो पर्शियामध्ये युद्धातील कैद्यांना त्यांच्या डोळ्यांना तापलेल्या लोखंडाने डागणी देऊन आंधळे करी असे सांगितले.\* एका तीन आठवड्यांच्या बालकाचे भविष्य जाणण्याच्या हेतूने त्याच्या आईवडिलांनी केयसीकडून त्याच्या जन्मपत्रिकेचे वाचन करून घेतले असता केयसीने तो एक बुद्धिमान वैद्य व शरीरशास्त्रज्ञ होणार असल्याचे भविष्य वर्तविले. आश्चर्य म्हणजे तो अवघ्या आठव्या वर्षीच मृत प्राण्यांचे शरीरविच्छेदन करू लागला, तेराव्या वर्षी वैद्यकशास्त्रावरील विश्वकोशाचा अभ्यास करू लागला. त्याच्या व्यापार-उद्योग करणाऱ्या वडिलाने त्याला आपल्या व्यापार व्यवसायाकडे ओढण्याचा प्रयत्न केला. पण त्याला त्यात यश आले नाही आणि तो नंतर नामांकित डॉक्टर झाला व केयसीचे भाकीतच खरे ठरले. एका स्त्रीने आपल्या बदफैली पतीविषयी केयसीला विचारले असता मागच्या जन्मी ती त्याच्याशी बदफैली बनल्याचे या जन्मी फळ भोगत असल्याचे सांगितले. पुनर्जन्म सिद्धांत पूर्णपणे नैतिक आहे. 'जसे पेगल तसे उगवेल' आणि Man meets himself (माणसाला आपलेच कर्म भेटते.) या शब्दात केयसीने कर्म सिद्धांताचे तत्त्व सांगितले आहे. युरोप-अमेरिकेतील हल्लीचे वैज्ञानिक शोध लावणारे लोक इ.स.पू. १०,००० या काळात 'अटलांटिस' नावाच्या समुद्रात बुडालेल्या देशातील रहिवासी होते,

\* या भूतकालीन घटनेची शहानिशा करणे शक्य नसले तरी पूर्वी दाखवून दिल्याप्रमाणे अशी शहानिशा एका प्रकरणात प्रत्यक्षात करण्यात आली आहे. (पृ ३२३-४) शिवाय पुढील त्याने केलेले भाकीत प्रकरणही याला पुष्टी देते.)



असे केयसीने म्हटले असून, लेडबीटर व अॅनी बेझंट यांनीही या अटलांटिस देशाच्या अस्तित्वाचे अतींद्रिय दृष्टीने वर्णन केलेले आढळून येते. हल्ली तेच लोक युरोप-अमेरिकेत जन्मले असल्याचे त्यांनीही म्हटले आहे.<sup>१११</sup> प्लेटोने इजिप्तच्या पुरोहिताकडून ऐकलेल्या अटलांटिस नावाचे मोठे बेट नऊ हजार वर्षांपूर्वी बुडाल्याच्या एका परंपरेने चालत आलेल्या कथेचा उल्लेख आपल्या 'टिमियस' आणि 'क्रिटियस' या ग्रंथात केला आहे. ही ऐतिहासिक संदर्भ सांगणारी गोष्ट अतींद्रिय दृष्टीला पुष्टी देणारीच आहे. (हे अटलांटिस देशाचे लोक अत्यंत स्वार्थी बनल्यामुळे त्यांच्यावर तो देश बुडण्याची दैवी आपत्ती कोसळल्याचे अतींद्रिय दृष्टीला आढळून आले आहे.)

### थिऑसॉफी, भगवद्गीता आणि योगसिध्दी

अशारीतीने अतींद्रिय दृष्टीने (व संमोहनाने) पूर्वजन्माची अचूक माहिती मिळविता येते हे पुराव्यानिशी सिध्द झालेले वरील दाखले पाहता, तसेच अॅनी बेझंट आणि लेडबीटर यांनी भौतिकशास्त्रातील मूलभूत कणांचे अतींद्रिय दृष्टीने पाहून जे वर्णन केले आहे, ते ६०-७० वर्षांनंतर भौतशास्त्रातील संशोधनाने प्रत्यक्षात खरे ठरले असल्याची वस्तुस्थितीही पाहता त्यांनी शेकडो लोकांची पूर्वजन्माची अतींद्रिय दृष्टीने पाहून आपल्या ग्रंथात जी माहिती दिली आहे, ती केवळ तिची शहानिशा करता येत नाही म्हणून खोटी म्हणता येणार नाही, हे उघड आहे. स्वतः त्यांना आपल्या या माहितीच्या खरेपणाची इतकी खात्री वाटत होती की स्वतः लेडबीटर यांनी आपल्या **How Theosophy Came To Me** (ब्रह्मविद्या माझ्याकडे कशी आली) या पुस्तकात पहिलेच पुढील आश्चर्यकारक वाक्य लिहिलेले आढळून येते. लेडबीटर म्हणतात, "My first touch with anything that could definitely be called Theosophy was in the year 504 B.C., when I had the wonderful honour and pleasure of visiting the great philosopher Pythagoras." (म्हणजे "इ.स.पूर्व ५०४ साली म्हणजे अडीच हजार वर्षांपूर्वी-जेव्हा पायथॅगोरस या थोर तत्त्वज्ञाला भेटण्याचा मला आश्चर्यकारक मान व आनंद मिळाला, तेव्हांच जिला निश्चितपणे ब्रह्मविद्या म्हणता येईल अशा विद्येशी माझा पहिला संबंध आला."<sup>११२</sup> येथे लेडबीटर अशा काही थाटात लिहितात की जणू काही ब्रह्मविद्येशी त्यांचा संबंध येण्याची घटना याच आयुष्यात काही वर्षांपूर्वी घडली आहे ! (मनुष्याचा पुनर्जन्म होणे हे तरुणपण जाऊन म्हतारपण यावे तसे आहे, या भगवद्गीतेतील वचनाची येथे कोणालाही आठवण होईल. भ.गी.२.१३) त्यांनी अशा थाटात एका पुस्तकाच्या पहिल्याच प्रकरणात पहिलेच वाक्य लिहावे, ही गोष्ट त्यांना आपल्या पूर्वजन्माच्या स्मृती एखाद्या माणसाच्या तरुणपणातील स्मृतीप्रमाणे किती ताज्या व खऱ्या वाटत होत्या, हे दाखवून देते. पायथॅगोरसच्या

काळी म्हणजे अडीच हजार वर्षांपूर्वी; आपण अथेन्स शहरात कोणत्या कुटुंबात जन्मलो होतो, हेही लेडबीटरनी नांवा निशी सांगितले आहे.<sup>१४३</sup> आपल्याला जे प्रत्यक्ष दिसते, म्हणून अनुभवास येते-मग तो अनुभव भौतिक दृष्टीचा असो अगर अतींद्रिय दृष्टीचा असो- तो सारखाच खरा असतो, याची अतींद्रिय दृष्टी (शक्ती) प्राप्त झालेल्या व्यक्तीला भौतिक दृष्टीप्रमाणेच खात्री वाटते, याची लेडबीटर व अँनी बेझंट यांचे अतींद्रिय दृष्टीने ब्रह्मविद्येवर आत्मविश्वासपूर्वक लिहिलेले अशा प्रकारचे लेखन साक्ष देते. अशा प्रकारे अतींद्रिय प्रत्यक्षाने त्यांना जे दिसले व अनुभवास आले, ते त्यांच्या जीवनाला संपूर्ण कलाटणी देणारे ठरले यात आश्चर्य नाही. उदा. बिशप लेडबीटर हे इंग्लंडमधील एका चर्चमध्ये अधिकारी होते, आणि ख्रिश्चन धर्म पुनर्जन्माच्या विरुद्ध शिकवण देत असूनसुद्धा त्यांना त्याचा प्रत्यक्ष अनुभव आल्यामुळे-म्हणजे कुंडलिनीच्या जागृतीने प्राप्त झालेल्या त्यांच्या अतींद्रिय दृष्टीला आपला पूर्वजन्म प्रत्यक्ष दिसल्यामुळे-त्यांनी चर्चमधील ती जागा सोडली व ते ब्रह्मविद्येचे उपासक बनले. त्यांनी ब्रह्मविद्येच्या उपासनेसाठी इंग्लंड हा आपला मायदेशही सोडला व ते भारतात येऊन राहिले. आपले उर्वरीत आयुष्य त्यांनी या विद्येलाच पूर्ण वाहून घेतलेले दिसून येते.

अँनी बेझंट यांच्या बाबतीतही असेच घडले. त्या पूर्वाश्रमी जडवादी (materialist) आणि नास्तिक (atheist) होत्या. पण योगायोगाने एकदा त्यांच्याकडे मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांचा **Secret Doctrine** हा ब्रह्मविद्येवरील ग्रंथ समीक्षणासाठी आला आणि तो वाचून त्यांच्याही जीवनाला कलाटणी मिळाली. ही कलाटणी त्या खऱ्या सत्यशोधक असल्यामुळेच मिळाली, हे मात्र लक्षात ठेवले पाहिजे. जीवनाचे व विश्वाचे सत्य भौतिकवादी विज्ञानात (materialist science मध्ये) आहे या विश्वासाने त्या इंग्लंडमध्ये कार्य करीत होत्या. पण ब्लॅन्हेट्स्की यांचा उपर्युक्त ग्रंथ वाचल्यानंतर त्यांचा भौतिकवादावरील विश्वास उडाला व (भौतिकविज्ञानात त्या हुडकत असलेले) सत्य ब्रह्मविद्येत असल्याचे त्यांना आढळून आले, आणि त्याही आपल्याला सापडलेल्या सत्यासाठी-ब्रह्मविद्येसाठी-इंग्लंड सोडून भारतात येऊन राहिल्या. त्यांची सत्यावरची निष्ठा किती जाज्वल्य होती हे, त्यांनी सत्यासाठी केलेल्या त्यागावरून दिसून येते. सत्यासाठी घरदार, मित्रपरिवार, आपला समाज, इतकेच नव्हे तर सर्वस्वावर पाणी सोडायला आपण कसे तयार झालो, हे त्यांनी आपल्या आत्मचरित्रात ब्रह्मवैज्ञानिक सत्याचे समर्थन करून सांगितले आहे. सत्यासाठी मृत्यूही पत्करायला आपण तयार असून आपल्या थडग्यावर 'हिने सत्याची अनुयायी बनण्याचा प्रयत्न केला' असे शब्द कोरावेत, असे म्हटले आहे.<sup>१४४</sup>

मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या **Secret Doctrine** बरोबरच त्यांच्या

ब्रह्मविद्येवरील इतर ग्रंथांचाही परिणाम अॅनी बेझंट व इतर अनेक वैज्ञानिक सत्यशोधकांवर झालेला दिसून येतो. यावरून ब्लॅन्हेट्स्की यांचा ब्रह्मविद्येतील सनातन सत्ये वैज्ञानिक पध्दतीने मांडण्यात कसा हातखंडा होता, हे दिसून येते.<sup>१५</sup> असे असूनसुद्धा ब्लॅन्हेट्स्कीनी म्हटले आहे की “आपले ब्रह्मविद्येवरील ग्रंथ वाचले नाही तरी चालेल; पण भगवद्गीता वाचण्यास कधी चुकू नये.”<sup>१६</sup> या त्यांच्या उत्तीवरून ब्रह्मविद्येचे सार भगवद्गीतेत सापडते असे त्या मानत होत्या हे स्पष्ट होते. आणि त्यांचे हे म्हणणे वस्तुस्थितीवर आधारलेले आहे. कारण ब्रह्मविद्येचा उगम उपनिषदात असून उपनिषदांचे सार म्हणजेच भगवद्गीता होय, असे खुद्द गीताकार व्यास महर्षींनीच म्हटले आहे. उदा. गीतेच्या प्रत्येक अध्यायाच्या शेवटी आढळणाऱ्या ‘श्रीमद् भगवद्गीतासु उपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे’ या पुष्पिकेवरून हे स्पष्ट होते की सर्व उपनिषदांचे सार सांगणारी भगवद्गीता ही ब्रह्मविद्या तर आहेच, पण (व्यावहारिक पातळीवर वैज्ञानिक निकषांना उतरणारे) ते योगशास्त्रही आहे; म्हणजे सामान्य लोक व्यवहारामध्ये ज्या घटनांना ‘चमत्कार’ म्हणतात. त्या घटनातून प्रकटणारी ती आत्मशक्ती किंवा आत्मविद्याही आहे. (आणि ‘अयमात्मा ब्रह्म’ हे उपनिषद वचन सांगते की आत्मा व ब्रह्म एकच आहेत. म्हणून आत्मविद्या व ब्रह्मविद्या ह्याही एकच आहेत, हे स्पष्ट होते. ऋ.उप.४.४.५) आणि ब्रह्मविद्या (किंवा आत्मविद्या) आणि योगशास्त्र हेही एकच आहेत असे स्वतः कृष्णानेच भगवद्गीतेत म्हटले आहे. उदा. यत् सांख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते । एकं सांख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति ॥ (६.५) म्हणजे जे ब्रह्मविद्येने प्राप्त होते ते योगशास्त्रानेही प्राप्त होते आणि ब्रह्मविद्या आणि योगविद्या ही दोन्ही शास्त्रे एकच आहेत. अशारीतीने ब्रह्मविद्या, आत्मविद्या व योगशास्त्र (किंवा ‘चमत्कार’ मीसांसा) ही सर्व एकच असून भगवद्गीतेत ती सर्व समाविष्ट झालेली आहेत, असे म्हणता येईल; आणि म्हणून ब्रह्मविद्येचा उपासक व्यवहारात कर्म करताना अनेकदा योगशास्त्राच्या सिध्दी प्राप्त करून घेऊ शकतो - म्हणजे देवतांना वश करून (स्वेच्छेने वा अनिच्छेने) अनेक ‘चमत्कार’ तत्काल करू शकतो, असे भगवद्गीतेत म्हटले आहे. (कांक्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः । ४.१२)

मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांनी ‘माझे ग्रंथ वाचले नाही तरी चालेल, पण भगवद्गीता वाचण्यास चुकू नये’ असे म्हणण्याचे आणखी एक कारण आहे. ते म्हणजे स्वतः त्यांनी प्रारंभीच्या काळी ब्रह्मविद्येच्या (वा ब्रह्मवेत्त्यांच्या) बळावर जे अनेक ‘चमत्कार’ करून दाखवले, (तसेच Isis Unveiled या ग्रंथात ज्या ‘चमत्कारां’ चे वर्णन त्यांनी केले आहे), ते सर्व जडवादी पाश्चात्यांची मने ब्रह्मविद्येकडे वळविण्यासाठी असून ब्रह्मविद्येच्या खऱ्या उपासकांना त्यांची मुळीच गरज नाही, फक्त भगवद्गीतेचा अभ्यास त्यासाठी पुरेसा आहे, असे

त्या मानत होत्या, हे होय. वस्तुतः ब्रह्मविद्येत चमत्कारांना मुळीच स्थान नाही. (येथे 'चमत्कार' हा शब्द रुढार्थाने-म्हणजे 'भौतिक विज्ञानातील नियमांचा भंग करणाऱ्या घटना' या अर्थाने घ्यावयाचा आहे.) पण भौतिक विज्ञानाने शोधून काढलेले नियम हेच फक्त खरे व 'अंतिम' वैज्ञानिक नियम आहेत, त्यांच्या पलीकडे या विश्वात कसलेच नियम नाहीत, असे मानणाऱ्या जडवादी पाश्चात्यांसाठी 'चमत्कारां' ची (म्हणजे या तथाकथित 'अंतिम' भौतिक नियमांचा भंग करणाऱ्या आध्यात्मिक घटनांची) गरज आहे. पाश्चात्य देशांत उदय पावलेल्या आधुनिक विज्ञानामुळे-विशेषतः न्यूटनच्या काळानंतर-विश्व हे एक प्रचंड यंत्र असून या यांत्रिक विश्वात निर्माण झालेला मानव हाही एक यंत्रच - फक्त अधिक गुंतागुंतीचे यंत्र- असल्यामुळे व यांत्रिक नियमानुसार चालणाऱ्या जगात चमत्कार अशक्य असल्याच्या भौतविज्ञानाच्या गृहीतकृत्यामुळे, पाश्चात्य माणूस अध्यात्म व धर्म यांच्याकडे पूर्णपणे पाठ फिरवून विज्ञानाच्या नावाखाली शुध्द जडवादी बनला होता.<sup>१४३</sup> त्याचा हा जडवाद कसा खोटा (व अवैज्ञानिक) आहे हे सिध्द करण्यासाठी तथाकथित 'अंतिम' आणि 'अनुल्लंघनीय' मानले गेलेले भौतिक नियम भंग करणाऱ्या घटना ('चमत्कार') प्रत्यक्षात कशा घडतात, हे दाखवून देणे आवश्यक होते; आणि त्या घटना किंवा 'चमत्कार' सर्वशक्तीमान (सर्व शक्तींचे मूळ स्रोत) अशा आत्म्यामुळेच घडतात, हे आत्म्याचे अस्तित्व नाकारणाऱ्या पाश्चात्य भौतिक विज्ञानवाद्यांना मृत्यूनंतरचे आत्म्याचे अस्तित्व व 'लीला' ('चमत्कार') दाखवून देऊनच सिध्द करणे भाग होते. हे दाखवले तरच भौतिक शरीराच्या नाशाबरोबर सर्व काही संपते असे मानणारा आपला जडवाद कसा खोटा आहे, हे त्यांना पटणार होते. हे अध्यात्मवाद्यांपुढील एक फार मोठे आव्हान होते, आणि हे आव्हान केवळ भारतीय ब्रह्मवैज्ञानिक ऋषीच स्वीकारू शकत होते; आणि ते त्यांनी कसे स्वीकारले याचे वर्णन, ज्याला जागतिक पातळीवर कार्य करणारे Himalayan Brotherhood (हिमालयाचा भ्रातृसंघ) म्हणून संबोधण्यात येते, त्या संघाची माहिती देऊन लेडबीटर यांनी आपल्या Astral Plane (भुवर्लोक) या पुस्तकात थोड्या विस्ताराने केले आहे.<sup>१४४</sup> एकोणिसाव्या शतकाच्या मध्यास (१८४८ नंतर) युरोप-अमेरिकेत Spiritualism (मृतात्मविद्या) या नांवाची सर्व जगाचे लक्ष वेधून घेणारी व भौतिकवाद्यांना आव्हान ठरणारी 'चमत्कारां' ची जी प्रख्यात चळवळ फोफावली, तिचे हे मूळ आहे. या चळवळीमुळे काही चांगले घडले व काही वाईटही घडले हे खरे आहे.<sup>१४५</sup> या तिच्या प्रवर्तकांनी ज्या उद्देशाने त्या चळवळीला जन्म दिला तो उद्देश पूर्णपणे सफळ झाला, यात संशय नाही. या चळवळीचे फलित म्हणून पाश्चात्य देशात अतींद्रिय विज्ञानाच्या संशोधनाला चालना मिळाली. त्यासाठी प्रथम इंग्लंड व नंतर अमेरिका येथे Society for Psychical Research या अतींद्रिय घटनांचे

शास्त्रीय संशोधन करणाऱ्या संघाची स्थापना झाली. त्याचबरोबर ज्याला ब्रह्मविद्येचा आधुनिक अवतार म्हणता येईल त्या Theosophical Society चीही अमेरिका व इंग्लंड येथे याच काळात स्थापना झाली.<sup>१०</sup> वस्तुतः ज्या दोघांनी या संघाची अमेरिकेत स्थापना केली, त्या मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की व कर्नल ऑलकॉट यांची पहिली भेट मृतात्म्यांच्या 'लीला' ('चमत्कार') दाखविणाऱ्या एका सार्वजनिक बैठकीत (जिला इंग्रजीत seance म्हणतात) झाली, हा एक मोठाच योगायोग म्हटला पाहिजे. (पण ब्रह्मविद्येनुसार कुठलीही घटना कधीच योगायोगाने घडत नाही-There is nothing like chance in the universe-हे लक्षात ठेवले पाहिजे.) त्याच्या पाठीमागे वर म्हटल्याप्रमाणे हिमालयीन भ्रातृसंघाशी संबंधित लोक होते. ब्रह्मविद्येच्या संघस्थापनेत मुख्यतः मौर्य व कुथुमी हे ब्रह्मवेत्ते होते.<sup>११</sup> ब्लॅन्हेट्स्की यांचे गुरु मौर्य यांनीच त्यांना रशिया या आपल्या मायदेशातून अनेक देशांना भेटी देण्याची व शेवटी अमेरिकेला जाण्याची आज्ञा केली होती.

अशारीतीने पाश्चात्य जगात बोकाळलेला व वाढीस लागलेला जडवाद उखडून काढण्यासाठी व तेथे ब्रह्मविद्येचा प्रसार करण्यासाठी 'हिमालयीन भ्रातृसंघा' शी पूर्वी संबंध असलेल्या लोकांनी, तसेच मौर्य व कुथुमी या भारतीय ब्रह्मवेत्त्यांनी (पहिले राजस्थानी व दुसरे काश्मिरी) रशियाच्या मॅडम. एच्. पी. (हेलेना पेट्रोव्हना) ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या माध्यमातून व मृतात्मविद्येच्या चळवळीतून (spiritualistic movement) अमेरिकेच्या हेन्री स्टील ऑलकॉट या पूर्वाश्रमीच्या कर्नलशी मृतात्म्यांची लीला दाखविणाऱ्या एक बैठकीत ब्लॅन्हेट्स्कींची प्रथम प्रत्यक्ष भेट घडवून आणली आणि त्या भेटीचे रूपांतर नंतर त्या दोघांच्या गाढ मैत्रीत होऊन, जिला ब्रह्मविद्येचा नवा अवतार म्हणता येईल त्या 'थिऑसॉफिकल सोसायटी' च्या स्थापनेत तिचे शेवटी १७ नोव्हेंबर १८७५ या रोजी पर्यवसान झाले.

### ब्रह्मविद्या, भानामती आणि विज्ञान

पाश्चात्य देशात विज्ञानाच्या नावाखाली बोकाळलेला जडवाद मोडून काढण्यासाठी 'हिमालयीन भ्रातृसंघा' शी संबंध असणाऱ्यांनी 'मृतात्मविद्ये'च्या रूपाने चळवळ सुरू केल्याचे वर म्हटले आहे. त्यासाठी त्यांनी काही मृतात्म्यांना हाती धरून काही माध्यमांकरवी त्यांच्या 'लीला' ('चमत्कार') दाखविण्याच्या कामाला जुंपले. त्या लीलांचे सविस्तर वर्णन येथे करण्याचे कारण नाही. कारण 'मृतात्मविद्या' म्हणजेच 'भानामती' असल्याने-म्हणजे भानामतीचे प्रकार मृतात्म्यांकडूनच घडतात अशी सर्वसाधारण समजूत असल्याने-प्रस्तुत ग्रंथाच्या वाचकांना अशा ('मृतात्मविद्ये'च्या) घटनांची एव्हाना चांगलीच ओळख झालेली आहे. मृतात्मविद्या व भानामती या दोहोमधील फरक इतकाच की पाश्चात्य मृतात्मविद्येच्या बैठकीत अशा घटना-उदा. टेबल आपोआप उचलणे, इच्छित वा

अनिच्छित वस्तू कोटून तरी येऊन पडणे, मृतात्मे बोलणे, किंवा दिसणे इ. एखाद्या माध्यमाकरवी (त्यासाठी खास घेतलेल्या) बैठकीत इच्छेनुसार घडवून आणल्या जातात; याच्या उलट भानामतीत या घटना अनपेक्षितपणे कोठेही व केव्हाही 'आपोआप' व सार्वजनिकरीत्या कोणाचीही इच्छा नसताना घडतात. सामान्यतः या घटना वयात येऊ घातलेल्या मुलामुलींच्या माध्यमातून घडताना आढळतात. (मात्र त्या मुलांना व इतरांनाही याची अनेकदा कल्पना नसते.) म्हणजे दोन्ही प्रकारात कोणीतरी माध्यम असतोच. तथापि कधीकधी भानामतीत कोण माध्यम आहे, हे स्पष्ट होत नाही; (येथे 'आपोआप' याचा अर्थ काही कारण नसताना असा होत नाही हे सांगणे नको.) त्या कोणत्याही कारणाने व कशाही घडून येत असल्यातरी (त्याचा आपण पुढे विचार करणार आहोतच) भौतिक विज्ञानाने प्रस्थापित केलेल्या नियमांचे त्या घटना उघड उघड उल्लंघन करीत असल्यामुळे पाश्चात्य भौतिक विज्ञानाला त्या आव्हान ठरतात; आणि येथेच त्यांचे ब्रह्मविद्येच्या 'सत्या' च्या दृष्टीने महत्त्व आहे. कारण विज्ञान 'सत्या' चा शोध घेते हे पाश्चात्य भौतिक विज्ञानवाद्यांचे म्हणणे खरे असेल तर भौतिक विज्ञानाने शोधून काढलेल्या भौतिक नियमांचा अमल 'दृश्य' जगावर अबाधितपणे चालतो असे जे ते समजतात ते खरे नाही - ते 'वैज्ञानिक सत्य' नव्हे - हे अशा भौतिक नियमांचे उल्लंघन करणाऱ्या (भानामती वा मृतात्मविद्येच्या) घटना दाखवून देतात. याचाच अर्थ असा की भौतिक विज्ञान भौतिक जगाविषयीसुद्धा भौतिक नियमांद्वारा अधिकारवाणीने निरपवाद 'वैज्ञानिक सत्य' काय आहे हे सांगू शकत नाही. (अन्यथा त्यांच्या भौतिक नियमांचा भंग कधीच झाला नसता.) पाश्चात्य भौतिक विज्ञानाचा तथाकथित 'सत्याचा शोध' हा शुद्ध भौतिकवादातून होणे शक्य नाही, असे म्हणूनच म्हणावे लागते. तात्पर्य, पाश्चात्य वैज्ञानिक (भौतिक विज्ञानवादी) ज्याला 'विज्ञान' (science) म्हणतात ते 'सत्या'चा (खऱ्या अर्थाने वैज्ञानिक सत्याचा) शोध घेणारे विज्ञान नव्हे, असे ठरते.

याचा अर्थ भानामती किंवा मृतात्मविद्या यांच्या संशोधनातूनच केवळ वैज्ञानिक सत्याचा शोध घेणे शक्य आहे, असा अर्थातच होत नाही. कारण ज्या भौतिक जगात या घटना घडतात त्या जगाचाच त्या (भानामती इ. घटना) भाग अगर अंग असल्यामुळे त्या जगाइतक्याच त्या घटनाही खऱ्या (किंवा खोट्या) म्हणाव्या लागतात. इतकेच की त्याविषयीचे नियम भौतिक विज्ञानाच्या अभ्यासाने कळणारे नाहीत. कारण ते त्या विज्ञानाच्या कक्षेत येत नाहीत. ते नियम 'अतींद्रिय' पातळीवरील घटनांच्या वा तत्त्वांचा अभ्यासानेच कळणारे असून तो अतींद्रिय विज्ञानाच्या अभ्यासाचा व संशोधनाचा विषय ठरतो. अशारीतीने वैज्ञानिक सत्याचा शोध घेण्यासाठी भौतिक विज्ञानाप्रमाणेच अतींद्रिय विज्ञानाच्या अभ्यासाचीही गरज

असून या गोष्टीची भौतिक विज्ञानवाद्यांनी वैज्ञानिक दखल घेणे जरूरीचे आहे. तथापि येथे हे लक्षात ठेवले पाहिजे की अतींद्रिय विज्ञान ज्या 'सत्या' चा शोध घेते ते दृश्य जगाचेच 'सत्य' असले व म्हणून भौतिक जगाप्रमाणे 'भानामती' सारख्या अतींद्रिय जगाचेही ते 'सत्य' असले (कारण त्या अतींद्रिय घटनाही भौतिक जगातच घडतात) (अतींद्रिय हेही 'दृश्य'<sup>१५२</sup> जगच आहे, हे लक्षात ठेवावे) तरी ते 'अंतिम सत्य' नव्हे; आणि म्हणून भौतिक विज्ञान हे जसे 'अंतिम सत्या' चा शोध घेणारे विज्ञान ठरू शकत नाही, तसेच अतींद्रिय विज्ञान (भानामती व 'चमत्कार' यांचे संशोधन करणारे विज्ञान) हेही 'अंतिम सत्या' चा शोध घेणारे विज्ञान ठरू शकत नाही. पण म्हणून भौतिक विज्ञान व अतींद्रिय विज्ञान ही अंतिम सत्याच्या शोधासाठी निरुपयोगी आहेत असे ठरत नाही. उलट ती विज्ञाने त्या अंतिम सत्याकडे नेणारी विज्ञानेच (साधनेच) ठरतात. कारण ती विज्ञाने ज्या सत्याचा शोध घेतात ते 'दृश्य' जगाचे अंशात्मक सत्य असून शाखा-चंद्र न्यायाने त्या अंतिम सत्याकडे नेणाऱ्या खुणा किंवा पायऱ्या आहेत, असे म्हणता येईल.<sup>१५३</sup> म्हणून उपनिषदांनी 'दृश्य' जगाला (वेदांताच्या परिभाषेत) 'मिथ्या' म्हटले असले तरी अंतिम सत्याकडे नेणारे हे साधन असल्यामुळे ते 'सत्य' च आहे असे म्हटले असून अंतिम सत्य हे त्या सत्याचे सत्य (सत्यस्य सत्यम्) आहे असे म्हटले आहे. (बृ.उप.२.१.२०) म्हणून कर्मसंन्यासवादी शंकराचार्यानीसुद्धा भगवद्गीतेतील कर्मयोगाची (निष्काम कर्म करण्याची) आवश्यकता प्रतिपादितांना कर्म हे भौतिक जगात करावयाचे असल्यामुळे भौतिक जगाप्रमाणेच ते मिथ्या असले तरी ब्रह्मरूपी सत्याकडे पायरीपायरीने नेणारे ते साधन असल्यामुळे प्रत्यगात्म्याइतकेच त्याला प्रामाण्य आहे व तेही तितकेच सत्य आहे असे म्हटले आहे.<sup>१५४</sup> या दृष्टीने विचार केला तर भौतिक विज्ञान ही अतींद्रिय विज्ञानाकडे नेणारी पायरी, व अतींद्रिय विज्ञान ही अध्यात्मविज्ञानाकडे (ब्रह्मविज्ञानाकडे) नेणारी पायरी ठरते. ज्या भौतिक वैज्ञानिकांना (Physicists) या गोष्टीची कल्पना आहे ते म्हणूनच शुद्ध जडवादी (materialists) कधीच बनू शकत नाहीत; आणि ज्या अतींद्रिय वैज्ञानिकांना या गोष्टीची कल्पना आहे ते शुद्ध मृतात्मविद्यावादी (परलोकविद्यावादी) ही कधीच बनू शकत नाहीत. पण दुर्दैवाने प्रत्यक्षात अशी परिस्थिती नाही. बहुतेक भौतिक शास्त्रज्ञ शुद्ध जडवादी बनलेले दिसतात. त्यामुळे शास्त्रीय जडवाद मोडून काढण्यासाठी 'मृतात्मविद्ये' ची चळवळ (ब्रह्मवैज्ञानिकांना) वर म्हटल्याप्रमाणे हाती घ्यावी लागली. त्या चळवळीमुळे जडवाद खोटा आहे हे बऱ्याच अंशी अनेक भौतवैज्ञानिकांना पटले असले व त्याचा प्रभाव कमी झाला असला तरी मृतात्मविद्येचे एक नवे खूळ पाश्चात्य जगात त्यातून फोफावले. भौतिक शास्त्राच्या संशोधनामुळे जसे भौतिक शास्त्रज्ञ भौतिकवादी बनले तसे मृतात्मविद्येच्या संशोधनामुळे मृतात्मविद्या संशोधक मृतात्मविद्यावादी

बनले-म्हणजे मृतात्म्यापलीकडे जाणण्यासारखे 'सत्य' या जगात काही नाही, मृतात्मे हेच काय ते जाणण्यासारखे 'सत्य' आहे, असे मानू लागले व ब्रह्मविद्या बाजूला पडली. त्यांची दृष्टी मृतात्म्यापलीकडे जाऊ शकली नाही. (काही मृतात्मे आत्म्याचा पुनर्जन्म होत नाही असे सांगत आणि हे त्यांचे भक्त ते खरे मानत !) त्यामुळे ज्या ब्रह्मविद्यावादी मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांनी प्रारंभी मृतात्मविद्येचे समर्थन केले व तिच्या बाजूने प्रसार केला त्यांच्यावर त्या विरोधात प्रचार करण्याची -अर्थात् खासगीत- नंतर पाळी आली. त्यासाठी त्यांना मृतात्मे ज्या गोष्टी करतात त्या सर्व गोष्टी आपण केवळ आपल्या आत्मशक्तीच्या जोरावर करून दाखवू शकतो, हे प्रत्यक्ष प्रयोगाने दाखवून द्यावे लागले व मृतात्मविद्येचे काही लोकांना वाटत असलेले महात्म्य मोडून काढावे लागले. अर्थात् तेही खासगीतच. ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या अशा अनेक खासगी प्रयोगांचे वर्णन त्यांच्याबरोबर न्यूयॉर्क येथे 'थिऑसॉफिकल सोसायटी' या आधुनिक ब्रह्मविद्येच्या संघाची स्थापना करणाऱ्या कर्नल ऑलकॉट यांनी आपल्या *Old Diary Leaves* या आधुनिक ब्रह्मविद्येच्या सोसायटीचा साद्यंत इतिहास सांगणाऱ्या सहा खंडांच्या ग्रंथात व ए.पी. सिनेट यांनी आपल्या *The Occult World* या थिऑसॉफीकडे आपण कसे वळलो हे सांगणाऱ्या ग्रंथात सविस्तरपणे केले आहे. त्या सर्व 'चमत्कारां'ची माहिती येथे संक्षेपाने सुद्धा देणे अर्थातच शक्य नाही, तथापि भानामतीच्या सर्व घटना पिशाचामुळे (मृतात्म्यामुळे)च घडतात ही समजूत कशी चुकीची आहे, हे वाचकांना कळण्यासाठी व त्यांचे कार्यकारणभावाच्या दृष्टीने योग्य आकलन होण्यासाठी त्यांच्या काही ब्रह्मविद्यात्मक 'चमत्कारां'चे वर्णन येथे संक्षेपाने करतो. त्यामुळे प्रारंभी मृतात्मवादी असलेले कर्नल ऑलकॉट हे ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या या 'चमत्कारां'मुळे ब्रह्मविद्येकडे कसे वळले, म्हणजे खऱ्या अर्थाने spiritualist (अध्यात्मवादी) कसे बनले व अमेरिकेत थिऑसॉफिकल सोसायटीची स्थापना करण्यासाठी कसे व का पुढे सरसावले, याची वाचकांना कल्पना येईल. पण ते वर्णन करण्यापूर्वी ब्रह्मविद्यावादी ब्लॅन्हेट्स्की मृतात्मविद्येच्या प्रचारक का बनल्या हे सांगितले पाहिजे.

ब्रह्मवादी ब्लॅन्हेट्स्की मृतात्मविद्येच्या प्रसारक का बनल्या - कर्नल ऑलकॉट यांनी आपल्याला ब्रह्मविद्येकडे खेचण्यासाठी मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांनी स्वतः माध्यम नसताना सुद्धा मृतात्म्यांचे सर्व 'चमत्कार' आपल्याला कसे करून दाखविले व आपल्या आत्मशक्तीचे पुरावे दिले, हे उपर्युक्त ग्रंथात विस्ताराने सांगितले आहे. पण हे सांगण्यापूर्वी ब्लॅन्हेट्स्की यांनी आपल्या मृत्यूनंतर जगाला माहीत व्हावे म्हणून IMPORTANT NOTE अशा शब्दाखाली स्वतःच्या हस्ताक्षरात लिहिलेला व त्यांच्या Scrap Book मध्ये आढळलेला पुढील मजकूर त्यांनी दिला असून तो या संदर्भात महत्त्वाचा असल्याने तो मराठीत संक्षेपाने भाषांतर करून प्रथम



देतो. ब्लॅन्हेट्स्की म्हणतात, “या मृतात्मविद्येच्या माध्यमांना जडवादी वैज्ञानिकांच्या हल्ल्यापासून वाचविण्यासाठीच व त्यांच्या उपस्थितीत मृतात्मवाद्यांच्या बैठकात ज्या ‘चमत्कारां’ च्या घटना घडतात त्या खऱ्या असतात, पण त्या सर्व मृतात्म्यामुळे घडत नाहीत, हे दाखवून देण्यासाठीच मला अमेरिकेला माझ्या गुरुंनी पाठविले होते. पण हे सर्व ‘चमत्कार’ मी स्वेच्छेने-स्वतःच्या इच्छाशक्तीने-करू शकते, त्यासाठी कुठल्याही मृतात्म्याची जरूरी नाही, हे मला दाखवून द्यावयाचे होते. पण मृतात्मविद्येच्या (कधीकधी बनवेगिरी करणाऱ्या) माध्यमांना वाचविण्यासाठी मी हे उघडपणे करून दाखवू शकत नव्हते. कारण ब्रह्मविद्येच्या प्रसारासाठी मला मृतात्मविद्या जिवंत ठेवणे जरूर होते. लोकांची मरणोत्तर आत्म्याच्या अस्तित्वावरील श्रद्धा मला अध्यात्माच्या दृष्टीने ढासळू द्यावयाची नव्हती. त्यासाठी ज्या माध्यमांची बनवेगिरी उघड झाली होती, त्या माध्यमांच्या बैठकांना मला मुद्दाम हजर राहून माझे गुरु मौर्य यांच्या सामर्थ्याच्या जोरावर जॉन किंग व केटी किंग हे मृतात्मे खोटे असूनही मला स्थूल देहाने त्यांना प्रत्यक्ष त्या बैठकांत प्रगट करावे लागले. त्यामुळे (बनवेगिरी करणारे) ते माध्यमही भयंकर घाबरले. यात मी काही चूक केली काय? पाश्चात्य जगाचे मन अजून ब्रह्मविद्येतील गूढ रहस्ये व तत्त्वे समजण्याइतके तयार (पक्व) झालेले नाही. ते तयार होईपर्यंत त्याला निदान एवढी खात्री देणे आवश्यक होते की या विश्वात अतींद्रिय पातळीवर काही ‘आत्मे’ आहेत-मग त्या आत्म्यांना तुम्ही मृतात्मे म्हणा अगर निसर्गात्मे (elementals) म्हणा-आणि मानवात असे सुप्त सामर्थ्य आहे की जे त्याला पृथ्वीवरील देव (god on earth) बनवू शकते.

“माझ्या मृत्यूनंतर मी हे निःस्वार्थ बुद्धीने केले हे लोकांना माहीत होईल. जिवंत असेपर्यंत लोकांना सत्य मार्ग दाखवण्याची मी शपथ घेतली असून ती मला पाळावी लागणार आहे, मग लोक मला भले माध्यम म्हणोत, बनवेगिरी करणारी म्हणून माझी निंदा करोत. मी मेल्यानंतर खरे काय ते त्यांना कळेल.”<sup>१५५</sup>

या संदर्भात स्वतः ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे की माध्यमांच्या बैठकात प्रगट होणारे जॉन किंग व केटी किंग हे मृतात्मे नसून मृतात्म्यांच्या फसव्या रूपाने वावरणारे प्रत्यक्ष निसर्गात्मे (elementals) आहेत. (जॉन किंग हा आपण हेन्री मॉर्गन या चाच्याचा मृतात्मा असल्याचे सांगत असे. या फसव्या रूपांना ब्रह्मविद्येत ‘मायावी’ रूप म्हणतात.) हा ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या ‘स्क्रेप बुक’ मधील महत्त्वाचा उतारा देऊन ऑलकॉट पुढे म्हणतात, “या उताऱ्यात सर्व गोष्टींचा स्पष्ट खुलासा केलेला आढळतो. पाश्चात्य मृतात्मविद्येच्या जागी पौर्वत्य अध्यात्मशास्त्राची-ब्रह्मविद्येची-तरफदारी व स्थापना करण्यासाठी ब्लॅन्हेट्स्की यांना अमेरिकेला पाठविण्यात आले होते. पण हे काम यशस्वीरीत्या पार पाडायचे तर मृतात्मविद्येतील ‘चमत्कार’ खरे असतात, हे प्रथम सिध्द करणे आवश्यक होते व त्यासाठी

मृतात्मविद्येचे पूर्वग्रहदूषित व लढावू शत्रू-भौतिक विज्ञानालाच सर्व काही समजते या भ्रमात वावरणारे त्याचे भक्त व पुढारी-यांच्याशी प्रथम ब्लॅन्हेट्स्की यांना सामना करावा लागणार होता.”<sup>१५६</sup> आणि त्यासाठी पाश्चात्य जगाच्या सर्व तऱ्हेच्या आरोपांना, निंदानालस्तीला तोंड देण्याची मानसिक तयारी ब्लॅन्हेट्स्की यांना करावी लागणार होती. आणि ती त्यांनी केली होती, हे वरील उतान्यावरून स्पष्ट होते. पण आपल्या मृत्यूनंतर आपल्याला न्याय मिळेल अशी त्यांना आशा व खात्रीही वाटत होती. ऑलकॉट यांनीही शेवटी ती खात्री व आशा व्यक्त केली आहे.

अशारीतीने मृतात्मविद्या खोटी नसली तरी पाश्चात्य जगाला ब्रह्मविद्येकडे नेण्यासाठी तयार केलेली ती एक तात्पुरती पायरी (Scaffold) होती. त्यासाठी ती खोटी म्हणणाऱ्या जडवादी भौतिक शास्त्रज्ञांच्या हल्ल्यापासून एकीकडे तिचे संरक्षण करणे व आपण मृतात्मविद्यावादी असल्याचा बाहेरून सोंग वठविणे ब्लॅन्हेट्स्कींना भाग होते, तर दुसरीकडे आतून त्या मृतात्मविद्येचेही मूळ उखडून काढून त्या जागी ब्रह्मविद्येची स्थापना त्यांना करावयाची होती. पण हे त्यांना उघडपणे करता येत नव्हते. त्यासाठी ऑलकॉट सारख्या मृतात्मविद्येच्या निष्ठावंत भक्तांना हाताशी धरून खासगीत आपण माध्यम नसतानासुद्धा केवळ स्वतःच्या इच्छाशक्तीने (will power) मृतात्मविद्येचे सर्व ‘चमत्कार’ करू शकतो, हे प्रत्यक्ष प्रयोगाने दाखवून देऊन मनुष्य जिवंतपणी पृथ्वीवरील देव (‘god on earth’) बनू शकतो, हे सिद्ध करायचे होते. शेवटी ‘ब्रह्मविद्या’ [म्हणजे ‘मी ब्रह्म आहे-ईश्वर आहे’ (अहं ब्रह्मास्मि।) ही उपनिषदांची आध्यात्मिक शिकवण] व्यवहारात आणायची तर स्वतः जवळ ईश्वरी सामर्थ्य असल्याचे ब्लॅन्हेट्स्कींना सिद्ध करून ती व्यवहारात आणावी लागणार होती, आणि त्यासाठी जडवादी पाश्चात्य जगाला हे सामर्थ्य स्वतःचे (ईश्वरी) ‘चमत्कार’ सामर्थ्य दाखवूनच ब्लॅन्हेट्स्कींना सिद्ध करता येणार होते. त्यातून भौतिक जगातील भौतशास्त्रज्ञांनी शोधून काढलेले ‘सर्वसमर्थ’ भौतिक नियम कसे तकालादू आहेत, हे सिद्ध होऊन पाश्चात्य जगाच्या जडवादी शास्त्रज्ञांचा अहंकार नष्ट होणार होता. हे वर म्हटल्याप्रमाणे त्यांना उघडपणे करता येत नसले तरी त्यांनी खासगीत ते कसे करून दाखविले, हे ऑलकॉट यांनी थिऑसॉफिकल सोसायटीचा इतिहास सांगणाऱ्या आपल्या उपर्युक्त ग्रंथात त्यांचे पाश्चात्यांना चकित करणारे अनेक ‘चमत्कार’ वर्णन करून सांगितले आहेत. त्यातील काही निवडक व नमूनेदार उदाहरणे वाचकांच्या माहितीसाठी येथे देतो.

### मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांचे काही चमत्कार

या ‘चमत्कारां’ची माहिती ऑलकॉट यांच्या Old Diary Leaves या सहा खंडांच्या ग्रंथात विखुरली असून त्याविषयीचे संदर्भ (खंड व पृष्ठ क्रमांक)

शेवटी कंसात दिले आहेत. इतर ग्रथांचे संदर्भ टीप क्रमांकाने दाखवले आहेत.

ब्लॅव्हेटस्की अमेरिकेला आल्यानंतर प्रथम न्यूयॉर्कमध्ये राहू लागल्या. त्यांच्याकडे त्यांना भेटण्यासाठी ऑलकॉट व इतर अनेक लोक अधूनमधून येत असत. त्यांच्या बैठका होत व चर्चेत अनेक विषय येत. एकदा पाश्चात्य व पौरात्य वस्त्र-निर्मितीच्या दर्जाविषयी चर्चा चालू असता हैटीच्या हॉरिसे या परराष्ट्र वकिलाने आपल्या एका नातेवाईकाने चीनहून उत्तम प्रतीचा रेशमी 'क्रेप' चा (सुरकुत्या असलेला) हातरुमाल आणला होता व तो आपण पाहिला आहे असे सांगितले. तत्काळ ब्लॅव्हेटस्की यांनी आपल्या गळ्याजवळ हात नेला व छातीजवळून एक हातरुमाल काढून 'तो असाच होता का?' असे विचारले. तो तसाच असल्याचे हॉरिसेनी मान्य केले. ऑलकॉट यांनी नंतर तो रुमाल आपल्याजवळ ठेवून घेतला. नंतर अमेरिकेचे ओ सलिव्हान हे परराष्ट्र वकील त्यांना भेटायला आले असता ऑलकॉट यांनी ही घटना त्यांना सांगितली व तो हातरुमाल त्यांना दाखवला. तो पाहून ओ सलिव्हान यांनी ब्लॅव्हेटस्कीकडे त्याची मागणी केली. तेव्हा त्यांनी तो हातरुमाल त्यांना दिला. ऑलकॉट लगेच थड्डेने ब्लॅव्हेटस्कीना म्हणाले, "तुम्हाला दुसऱ्यांच्या वस्तू अशारीतीने देण्याचा अधिकार नाही." ब्लॅव्हेटस्की यांनी "तुम्हाला तसलाच दुसरा देईन, काळजी करू नका" असे म्हणून ओ सलिव्हान यांच्याकडून तो हातरुमाल परत मागून घेतला व थोडावेळ त्यांच्याकडे त्यांनी पाठ फिरवली, लगेच परत त्या त्यांच्याकडे वळल्या. त्यावेळी त्यांच्या दोन्ही हातात दोन हातरुमाल होते. त्यांनी नवनिर्मित हातरुमाल ऑलकॉट यांना दिला. तो जुन्यासारखाच हुबेहूब होता.

काही वेळाने ब्लॅव्हेटस्की यांनी जवळच्या खिडकीतून येणाऱ्या गार वाऱ्यापासून संरक्षण करण्यासाठी गळ्याभोवती पांघरायला काहीतरी देण्याची ऑलकॉटना विनंती केली. तेव्हा त्यांनी नुकताच जादूने निर्माण केलेला हातरुमाल दिला. तो ब्लॅव्हेटस्की यांनी <sup>आपल्या</sup> ~~असल्या~~ गळ्याभोवती गुंडाळला. पण तो गळ्याला पुरत नसल्याचे पाहून ऑलकॉट म्हणाले, "थांबा, पुढे जोडण्यासाठी एक पिन देतो." आणि ते पिन शोधण्यासाठी उठले. लगेच ब्लॅव्हेटस्कीनी "तुमची पिन नको, आणि तुमचा हा हातरुमालही नको" असे म्हणून तो हातरुमाल गळ्यातून काढून त्यांच्याकडे फेकला. त्यावेळी त्यांचा गळा वास्तविक मोकळा व्हावयास हवा होता. पण आश्चर्य असे की तसलाच हातरुमाल परत लगेच त्यांच्या गळ्याभोवती निर्माण झाला होता ! आणि तो निर्माण होतांना प्रत्यक्ष ओ सलिव्हान यांनी स्वतःच्या डोळ्यांनी पाहिल्यामुळे त्यांनी त्याची त्यांच्या 'चमत्कारा' ची आठवण म्हणून मागणी केली. ब्लॅव्हेटस्कीनी ती आनंदाने मान्य केली व तोही हातरुमाल दिला. ऑलकॉट यांनी या हातरुमालाच्या एका कोपऱ्याचे छायाचित्र आपल्या ग्रंथात

दिले आहे. (Vol. I p. 338 - 341)

ह्या सर्व घटना विस्ताराने वर्णन करून सांगण्याचा आपला उद्देश शेवटी ऑलकॉट यांनी पुढील शब्दात स्पष्ट केला आहे. 'यानंतर ब्लॅन्हेट्स्कीनी आपला एकही चमत्कार मला दाखवला नसता तरी केवळ एवढ्या 'चमत्कारा' वरून त्यांच्या योगसिध्दीच्या खरेपणाविषयीची आपली खात्री कधीच भंग पावली नसती. त्या सिध्दीच्या पाठीमागे असलेल्या मनाच्या सामर्थ्याचे जे नियम ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या शिकवणुकीतून प्रकट होत होते, त्या (प्रयोगसिध्द) नियमांचे अस्तित्व मला कधीच नाकारता येण्यासारखे नव्हते.' (p. 341) पण असले असंख्य 'चमत्कार' त्यानंतरही ब्लॅन्हेट्स्की यांनी ऑलकॉट यांना व इतर अनेकांना करून दाखवले आहेत. वरील 'चमत्कार' वर्णन करून सांगण्यापूर्वी ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे की हे 'चमत्कार' म्हणजे शून्यातून वस्तू निर्माण करण्याचा प्रकार आहे असे समजण्यात येते. पण हे खरे नाही. कारण असे कधी घडत नसते. (p. 339) 'आकाश' या तत्त्वापासून सर्व वस्तू व घटना निर्माण होत असून त्याचे ज्ञान माणसाला मिळवता येते. (p. 334) या 'आकाश' तत्त्वापासून यापेक्षाही जास्त अविश्वनीय सिध्दीचे 'चमत्कार' ब्लॅन्हेट्स्की करून दाखवू शकतात असे म्हणून New York World च्या २१ एप्रिल १८७८ च्या अंकातील कर्टिस या वार्ताहाराच्या काउंटेस पॅस्काफ या फ्रेंच स्त्रीने कथन केलेला एक प्रत्यक्षदर्शी वृत्तांत ऑलकॉट यांनी दिला आहे. (Vol. I. p. 334 seq.) वर वर्णन केलेला रेशमी रुमालांचा वृत्तांतही Spiritualist नियमकालिकात ओ सलिव्हान यांनी नंतर प्रसिध्द केला होता.

न्यूयॉर्कमध्ये असताना एकदा एक व्यक्ती त्यांना भेटायला आली होती. तिच्या बरोबरच्या मुलाने तिला घरी चलण्यास सारखा लकडा लावल्यामुळे 'थांबा, त्याला एक खेळणे देऊ या' असे म्हणून ब्लॅन्हेट्स्की खुर्चीवरून उठल्या व पाठीमागच्या सरकत्या दारावर हात घालून तेथून एक चाके असलेल्या लाकडी मेंढीचे खेळणे काढून त्या मुलाला दिले. ते खेळणे तेथे एका घटकेपूर्वी नव्हते, असे ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे. (Vol. I. p. 344)

अशारीतीने लहान मुलांच्या किरकोळ आवडी पुरविण्यासाठी सुध्दा ब्लॅन्हेट्स्की आपल्या सिध्दीचा उपयोग करीत असत. असा प्रसंग त्यांच्यावर अधूनमधून येई. उदा. एकदा ब्लॅन्हेट्स्की, ऑलकॉट व माक्वॅट या डॉक्टरबाई डॉ. डिट्सन यांना भेटण्यासाठी अल्बेनीला गेले होते. जाण्यापूर्वी कपड्यांची बॅग स्वतः ऑलकॉट आणि माक्वॅट यांनी भरली होती; आणि तीही दाबून व खच्चून. इतकी की तिच्यात दुसरा एकही जास्तीचा कपडा घालता येणार नव्हता. अल्बेनीला डिट्सन यांच्या घरी पोचताच ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या अंगाशी घरच्या मालकिणीच्या मुलीने सलगी सुरु केली. तिला दूर ठेवण्यासाठी ब्लॅन्हेट्स्की सहज म्हणाल्या 'तुला एक

भेट वस्तू देते हं. खेळ जा." ती मुलगी लगेच म्हणाली, "कुठाय भेट वस्तू?" आता आपल्याला अल्बेनीतील दुकानातून एखादी वस्तू भेट देण्यासाठी विकत आणावी लागणार असे ऑलकॉट यांना वाटले. तेवढ्यात ब्लॅन्हेट्स्की म्हणाल्या, "काळजी करू नकोस, त्या बॅगेत आहे." ऑलकॉट यांना माहीत होते की त्या बॅगेत कपड्याशिवाय काही नव्हते. कारण त्यांनी स्वतःच ती बॅग भरली होती; आणि तीही इतकी खच्चून की तिच्यात नंतर कुणालाही काहीही घालता येणार नव्हते; आणि ब्लॅन्हेट्स्की यांनी तर त्या बॅगेला हातही लावला नव्हता, असे ऑलकॉट यांनी या संदर्भात म्हटले आहे. पण ब्लॅन्हेट्स्की यांनी त्या बॅगेत 'भेटवस्तू' असल्याचे म्हटले असल्यामुळे ऑलकॉट यांनी डिट्सन यांच्या घरी आल्यापासून न उघडलेली ती बॅग लगेच किल्ली लावून उघडली व एकेक कपडा बाजूला काढला. तेव्हा मध्यभागी १५ इंच लांब व ४ इंच रुंद हार्मोनिकॉन हे लहान मुलांचे खेळणीचे वाद्य व्यवस्थित मांडून ठेवलेले त्यांना आढळले ! या संदर्भात ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे की फुटण्याइतके खच्चून भरलेल्या त्या बॅगेत ते खेळणीवाद्य कसे व्यवस्थित पॅक केले गेले, हे कोडे मला तरी सोडवणे अशक्य आहे." (Vol. I p. 349)

वर उल्लेख केलेले ओ सलिव्हान हे अमेरिकेचे परराष्ट्र वकील मृतात्मविद्यावादी होते. त्यांचे मतपरिवर्तन करून त्यांना अध्यात्माकडे, ब्रह्मविद्येकडे ओढण्यासाठी वर वर्णन केलेला चिनी रेशमी रुमालाचा 'चमत्कार' ब्लॅन्हेट्स्की यांनी चालता-बोलता सहज करून दाखवला होता. दुसऱ्यांदा ते वकील त्यांच्याकडे आले असता त्यांनी पुढील एक 'चमत्कार' करून दाखवला. ऑलकॉट यांनी एक हजार डॉलरची चलनी नोट सुरक्षित ठेवण्यासाठी ब्लॅन्हेट्स्की यांच्याकडे दिली होती. ती टेबलाच्या खणातून ब्लॅन्हेट्स्कीनी बाहेर काढून ओ सलिव्हान यांच्या हातात दिली व त्याची सुरळी करून हातात धरण्यास सांगितले. त्यांनी तसे करताच उलगडून ती पाहण्यास त्यांनी लगेच सांगितले. त्यांनी ती उलगडून पाहिली तेव्हा त्यांना त्याच नंबरची हुबेहूब दुसरी एक हजार डॉलरची नोट मूळ नोटेबरोबर आढळून आली. "वा !" ओ सलिव्हान म्हणाले, "श्रीमंत होण्याचा हा नामी उपाय आहे !" "मुळीच नाही" ब्लॅन्हेट्स्की म्हणाल्या, "ही मनःसामर्थ्याची जादू आहे. तिचा उपयोग स्वतः साठी किंवा इतरासाठी करायचा नसतो. तसे केले तर ती सरकारची चोरी किंवा फसवणूक ठरेल." त्यांनी ती नोट कशारीतीने दुप्पट केली, हे मात्र सांगितले नाही. त्या हसून इतकेच म्हणाल्या की हे त्यांनीच शोधावे .

ओ सलिव्हान निघून गेल्यानंतर ब्लॅन्हेट्स्कीनी ऑलकॉटना टेबलाचा खण उघडून त्यात एकच हजार डॉलरची नोट असल्याचे दाखवले. दुसरी नोट गायब झाली होती. (Vol. I p. 434-35)

वरील 'चमत्कार' मात्र नजरबंदी किंवा हिप्नॉटिझमचा प्रयोग नव्हता.

पुढील 'चमत्कारा' वरून हे स्पष्ट होईल. एकदा ब्लॅन्हेट्स्की यांचा टेबलाला धक्का लागून त्यावरील शाई त्यांच्या स्कर्टवर सांडली व त्याचा पुढचा भाग खराब झाला. लगेच त्या आपल्या बेडरूमकडे गेल्या. पण आत प्रवेश करण्यापूर्वीच खाली वाकून स्कर्टवरून हात फिरवून तो साफ केला. त्या परत वळल्या तेव्हा त्यांचा सफेद रंगाचा स्कर्ट चॉकलेटी रंगाचा झालेला ऑलकॉट यांना दिसला ! हा 'चमत्कार' वर्णन करून ऑलकॉट यांनी "Was it Maya?" (ही माया होती काय?) असा प्रश्न उपस्थित करून पुढे म्हटले आहे की "पण तिला माया तरी कसे म्हणावे ? कारण तो चॉकलेटी स्कर्ट त्यांनी नंतर जीर्ण होईपर्यंत वापरला व मला त्यांचा मूळचा सफेद स्कर्ट पुन्हा कधीच पाहवायास मिळाला नाही. माया अशी जीर्ण होते काय ? होत असेल तर त्यासाठी किती काळ लागतो ?" (Vol. I. p. 432)

हिप्पॉटिझमने निर्माण केलेली 'दृश्य' पण खोटी वस्तू म्हणजे 'माया' म्हणायची झाल्यास अशी वस्तू दीर्घकाळ (जीर्ण होईपर्यंत) टिकू शकत नाही. त्यामुळे वरील (जीर्ण होईपर्यंत टिकलेला) चॉकलेटी स्कर्ट ही माया म्हणता येत नाही. तसेच वरील एकाच नंबरची दुसरी एक हजार डॉलरची नोटसुद्धा, नंतर ती 'अदृश्य' झाली असली तरी माया होती असे म्हणता येत नाही. चॉकलेटी स्कर्ट माया होती-म्हणजे तो स्कर्ट खोटा होता-असे म्हणावयाचे झाल्यास मूळचा सफेद स्कर्ट कायमचा अदृश्य झालेला असल्यामुळे तोच माया (खोटा) होता असे येथे म्हणावे लागेल ! म्हणजे येथे मूळचा खरा स्कर्ट 'माया' (खोटा) व नंतरचा 'माये' चा (खोटा) स्कर्ट खरा म्हणण्याचा तर्कविसंगत प्रसंग गुदरतो. पण असा प्रसंग ब्रह्मविद्या गुदरू देत नाही. कारण ब्रह्मविद्येनुसार ('ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' या उपनिषदाच्या शिकवणुकीनुसार) ब्रह्माखेरीज बाकी सर्व गोष्टी खोट्या (माया) असल्यामुळे मूळचा सफेद स्कर्ट जसा माया ठरतो, तसाच नंतरचा चॉकलेटी स्कर्टसुद्धा मायाच ठरतो. ब्रह्मविद्येनुसार दोन्ही स्कर्ट मायाच आहेत. (तसेच वरील दोन्ही एकाच नंबरच्या चलनी नोटाही मायाच आहेत.) मनुष्य पृथ्वीवरील ईश्वर (god on earth) बनू शकतो ही (ब्लॅन्हेट्स्की यांनी वर सांगितलेली) ब्रह्मविद्येची शिकवण असल्यामुळे फार तर असे म्हणता येईल की सफेद स्कर्ट ही ईश्वरी माया तर चॉकलेटी स्कर्ट ही 'पृथ्वीवरील ईश्वर' बनलेल्याची (ब्लॅन्हेट्स्कीयन) माया आहे ! मनुष्य हा ईश्वराचा अंश असल्याचे भगवद्गीतेचे म्हणणे (भ.गी.१५.७) हे वैज्ञानिक सत्य असल्याचे वैज्ञानिक निकषांवर सिद्ध करण्यासाठी ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या आणखी कोणत्या (निर्णायक) वैज्ञानिक प्रयोगाची (वा पुराव्याची) गरज आहे ?

मायेने (जादूने) निर्माण केलेली वस्तू अशारीतीने दीर्घ काळपर्यंत (जीर्ण होईपर्यंत) टिकू शकत असल्यामुळे जादूने निर्माण केलेली एक हजार डॉलरची

चलनी नोट ब्लॅव्हेटस्की चलनात आणू शकत होत्या. पण त्यांनी ती कायमची अदृश्य केली. कारण ती चलनात आणणे ही चोरी ठरली असती. तसे त्यांनीच म्हटल्याचे वर सांगितले आहे. तथापि भारतात अनेक सत्पुरुष चलनी नोटा प्रसंगोपात आपल्या आसनाखालून 'चमत्कारा' ने काढून भक्तांना देत असल्याच्या कथा आहेत. उदा. बिडकर महाराज काही काळ अशारीतीने पैसे काढून प्रसंग निभावून नेत असल्याचे त्यांच्या चरित्रात म्हटले आहे. त्यांचा हा 'चमत्कार' दुप्पट नोटा करण्याचा प्रकार नव्हता, हे खरे असले तरी ते पैसे चलनात आणले जात असल्यामुळे तो चोरीचाच प्रकार ठरतो. एक तर त्या नोटा बनावट होत्या किंवा खऱ्या होत्या. पहिल्या पक्षी सरकारची फसवणूक ठरते व दुसऱ्या पक्षी दुसऱ्यांच्या पैशांचा अपहार ठरतो. पुढील प्रकार मात्र दोन्ही ठरतो. कारण यात नव्या नोटा निर्माण करण्याचा 'चमत्कार' आहे.

हा 'चमत्कार' अलीकडच्या काळातील कर्नाटक-महाराष्ट्र सीमेवर प्रसिध्द पावलेल्या धनगर समाजातील बाळूमामा या सत्पुरुषांचा आहे. (यांनी १९६६ साली आदमापूर, ता. कागल, जि. कोल्हापूर. येथे समाधी घेतली.)

“एकदा चिकोत्रा नदीकाठी (आपल्या बकऱ्यासाठी) मामांनी काही चारा विकत घेतला. त्या दिवशी मामांचा उजवा हात काही दुखापतीमुळे सुजला होता. चान्याचे पैसे ताबडतोब द्यावयाचे होते. म्हणून मामांनी आपले पाकीट (गलगले गावच्या) अंबाजी पाटलाकडे देऊन अंबाजीला पाकिटातील पैसे चान्याच्या मालकाला देण्यास सांगितले. तेव्हा ते पाकीट रिकामे आढळले.

“अंबाजी म्हणाला, “मामा, पाकीट रिकामे आहे.”

मामा - “काय सांगतोस लेका. दे इकडे पाकीट,” मामांनी आपल्या हातात पाकीट घेऊन नव्या नोटांचे बंडल काढले व पैशाचा व्यवहार पूर्ण केला. 'चमत्कारा'शिवाय नमस्कार नाही' असे म्हणतात ते खोटे नाही. त्या क्षणापासून अंबाजी पाटील मामांचा निष्ठावंत भक्त बनला.”<sup>१५७</sup>

संत-सत्पुरुषांनी असले 'चमत्कार' केल्यामुळे भाबड्या लोकांना चुकीचे मार्गदर्शन होत नाही काय ? लोकांना भाबडे म्हणण्याचे कारण त्यांना हा 'चमत्कार' म्हणजे सार्वजनिक पैशाचा अपहार (चोरी) आहे हे कळत नाही. तथापि येथे हे लक्षात ठेवले पाहिजे की ब्लॅव्हेटस्की यांनी हा चोरीचा/फसवणुकीचा प्रकार आहे, असे जे म्हटले आहे, ते असा प्रकार 'सार्वत्रिक' होऊ नये म्हणून. तसा तो झाला तरच ती चोरी ठरते. सत्पुरुषांचा 'चमत्कार' हा या अर्थाने 'सार्वत्रिक' ठरत नाही. कारण त्यांचा उद्देश फसवणूक वा चोरी नसतो. उलट ते ईश्वरी कार्य करीत असतात. अशा लोकांचा योगक्षेम स्वतः ईश्वर चालवतो, असे भगवद्गीतेचे वचन आहे. (नित्ययुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् । भ.गी.१५.७) या संदर्भात ऑलकॉट यांनी

काही उदाहरणे देऊन म्हटले आहे की थिऑसॉफिकल सोसायटीचे कार्य हे ईश्वरी कार्य असल्यामुळे-ईश्वरनिष्ठेने ते चालवले जात असल्यामुळे-त्या कार्याला पैशाची कमरतता कधीच पडली नाही. अमेरिकेतून सोसायटीचे मुख्य कार्यालय भारतात हालविल्यानंतर जेव्हा ब्लॅन्हेट्स्की यांना पैशांची आत्यंतिक गरज भासली तेव्हा हवे ते पैसे त्यांना कोटूनतरी मनी ऑडरीने नेहमी उपलब्ध झाले, असे ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे. (Vol I. p. 437-9) हे पैसे कसे मिळतात असे ऑलकॉट यांनी ब्लॅन्हेट्स्की यांना एकदा विचारले तेव्हा त्या म्हणाल्या की ब्रह्मवेत्ते हे सर्वच संपत्तीचे मालक / संरक्षक असतात. ते त्याचा चांगल्या कामासाठी कसाही व केव्हाही उपयोग करू शकतात. या कामी त्यांना निसर्गदेवता (elementals) सतत मदत करीत असतात. (p - 438) ईश्वरी कार्यासाठी 'पृथ्वीवरील देवा' ने (god on earth = भूदेव) म्हणजे पृथ्वीवरील संपत्तीच्या मालकाने, स्वतःच्या संपत्तीचा उपयोग स्वतःच्या (ईश्वरी) कार्यासाठी करणे ही चोरी ठरू शकत नाही, हे ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या या म्हणण्यावरून स्पष्ट होते. येथे वाचकांना आठवण करून देतो की ऐदमाळे साहेबांच्या मुलाच्या लग्नात त्यांच्या खिशात पैशाचे आहेराचे पाकीट घालणारा 'केरबा बैलकर' कोण होता, हे मेतक्याच्या केरबा बैलकरला - आणि ऐदमाळेसाहेबांनाही - माहीत नव्हते. मग त्याने ते पैसे कोटून आणले हे कसे माहीत होणार ? (पृ. १८०) मिरज हॉस्पिटलमधील आर्. के. तेंडुलकरांचे दवाखान्याचे बिल चुकते करणारे 'जी. व्ही. कुलकर्णी' कोण होते, हेही कोणालाच माहीत नव्हते. मग ते बिलाचे पैसे त्या व्यक्तीने कोटून आणले, हे कोणाला कसे माहित होणार ? (पृ. १८७) ते पैसे त्यांनी जेथून आणले तेथूनच बाळू मामानीही आपले पैसे (नव्या नोटांचे बंडल) चान्याच्या मालकाला देण्यासाठी आणले हे उघड आहे. मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांना त्यांच्या थिऑसॉफीच्या ईश्वरी कार्यासाठी अडचणीच्या वेळीही तेथूनच पैसे मिळाले; हेही तितकेच स्पष्ट आहे; आणि बिडकर महाराजांनीही तेथूनच अडचणी निभावून नेण्यासाठी आसनाखालून पैसे काढले, हे काय वेगळे सांगावयास पाहिजे ? या सर्वांना ऐष-आरामात राहण्यासाठी-म्हणजे गरजेपेक्षा जास्त पैसे कधीच मिळाले नाहीत. पण गरजेच्या वेळी त्यांना पैसे कधी कमीही पडले नाहीत. यालाच ईश्वरी कार्य म्हणतात व यालाच भगवद्गीता (ईश्वरनिष्ठांचा) 'योगक्षेम ईश्वर चालवतो' असे म्हणते (भ. गी. १५.७)

मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांनी आपण कशा रीतीने एक हजार डॉलरची नोट दुप्पट केली हे का सांगितले नाही, हे आता वाचकांच्या लक्षात येईल. ओ सलिव्हान या Spiritualist (मृतात्मवादी) वकीलाला खऱ्या अर्थाने Spiritualist (अध्यात्मवादी) बनवण्यासाठी-त्याचे मतपरिवर्तन करण्यासाठी-फक्त नोटेची (त्या चमत्कारापुरती) गरज होती. ओ सलिव्हान समजत होते त्याप्रमाणे श्रीमंत होण्यासाठी



त्या नोटेची गरज नव्हती. म्हणून ती जेथून आली तेथे ती निघून गेली- अदृश्य झाली. तिचे तेवढेच काम होते. ती निर्माण करण्याचे तंत्र जाणून घेणे महत्वाचे नव्हते. म्हणून ते ब्लॅव्हेटस्कीनी सांगितले नाही. ते तंत्र जाणून घ्यावयाचे असेल तर त्यांचा खालील 'चमत्कार' अभ्यासावा.

पाश्चात्य देशात भोजनगृहात नेहमी काटे-चिमटे वापरतात हे सर्वांना माहीत आहे. एकदा चहा करताना साखरेच्या बड्या चहात टाकण्याचा चिमटा ब्लॅव्हेटस्कीना सापडेना. ऑलकॉटना त्यांनी याबाबत विचारता त्यांनी चांदीच्या इतर सामानातून तो आपल्या घरी पाठविल्याचे सांगितले. तेव्हा ब्लॅव्हेटस्कीनी खुर्चीखाली आपला हात घातला व एक चिमटा बाहेर काढला. त्या चिमट्याचा फोटो ऑलकॉट यांनी आपल्या ग्रंथाच्या १ ल्या खंडात ३४६ पृष्ठावर दिला असून तो धड चिमटा नाही व धड काटा नाही अशाप्रकारचा आहे. असले संकरित (हैब्रीड) साधन बाजारात कोठेही मिळणे शक्य नसल्यामुळे तो ब्लॅव्हेटस्की यांचा एक खास अस्सल मानसिक 'चमत्कार' ठरतो. भानामतीत नेहमी आढळणाऱ्या वस्तुसारखी इतर ठिकाणाहून निसर्गदेवतांनी (elementals) आणलेली ती वस्तू नसून ब्लॅव्हेटस्की यांच्या शुद्ध संकल्पशक्तीने निर्माण झालेली ती अस्सल (original) वस्तू असल्याचे ती सिध्द करते. [ती हल्लीसुद्धा अड्यार, मद्रास (चेन्नई) येथे ठेवण्यात आली आहे असे ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे. ती ब्लॅव्हेटस्की यांच्या अस्सल (genuine) 'चमत्कारा' ची वस्तू असल्याची दुसरी खूण म्हणजे तिच्या आतील भागावर त्यांच्या गुरुंचे नाव कोरलेले आढळते.] येथे ब्लॅव्हेटस्की यांच्या मनातील काटा व चिमटा यांच्या आकार व रचनेविषयीच्या गोंधळाचे प्रतिबिंब उमटले असल्याचे - म्हणजे दोन भिन्न वस्तूंची त्यांच्या मनात गल्लत झाली असल्याचे दिसून येते, असे ऑलकॉट म्हणतात. (Vol. I. p. 346)

ईश्वराच्या संकल्पशक्तीने जसे 'शून्या' तून विश्व निर्माण झाले, तसे ईश्वराचा अंश असलेल्या व स्वसामर्थ्याने भूदेव (god on earth) बनलेल्या ब्रह्मवेत्त्याच्या संकल्पशक्तीने कोणतीही वस्तू कशी निर्माण होऊ शकते याचे हे उदाहरण असून ते निर्मितीचे कार्य तो कसे करतो हे कुथुमी या ब्रह्मवेत्त्याने ए.पी. सिनेट यांना लिहिलेल्या एका पत्रात पुढीलप्रमाणे सांगितले आहे. कुथुमी म्हणतात, "ब्रह्मवेत्ता संपूर्ण नवीन असे काहीच निर्माण करीत नाही, तर सभोवतालच्या वातावरणातील उपलब्ध अणूंचाच तो आपल्याला हव्या त्या वस्तूच्या निर्मितीसाठी वापर करतो आणि त्यांना मूर्त आकार देतो,"<sup>१५</sup> हे हवे त्या वस्तूच्या निर्मितीचे कार्य संकल्पशक्तीने किती जलद तो करू शकतो, हे ब्लॅव्हेटस्की यांच्या वरील संकरित वस्तूच्या उदाहरणावरून दिसून येते. एक हजार डॉलरची नोट त्यांनी ओ सलिव्हान यांच्या हातात अशीच तत्काल निर्माण केली होती. ती नोट नंतर अदृश्य झाली असली तरी

ती हिर्नॉटिझमची 'माया' नव्हती, हे वरील चॉकलेटी स्कर्ट व संकरित काटा-चिमट्याच्या उदाहरणावरून सिध्द होते. (ती संकरित वस्तू नंतर ऑलकॉटनी अड्यारमध्ये या 'चमत्कारां' चे स्मृतीचिन्ह म्हणून ठेवली.)

### संकल्पशक्तीचा एक 'चमत्कार'

निःस्वार्थबुद्धीने लोक-कल्याणाचे-लोकांना ब्रह्मविद्याज्ञान देण्याचे-ईश्वरी कार्य करण्यासाठी सर्वस्वाचा त्याग करून कार्यरत झालेल्या मनुष्याचा संकल्प ईश्वरी संकल्पच कसा बनतो याचे उदाहरण म्हणून स्वतःच्याच एका 'चमत्कारा' चे उदा. ऑलकॉट यांनी दिले आहे. ते देण्यापूर्वी आपल्याकडून घडलेला हा चमत्कार आपल्या आध्यात्मिक प्रगतीचे लक्षण समजू नये-कारण असे चमत्कार अध्यात्मात कसलेच स्थान व ज्ञान नसलेल्या सामान्याकडूनही अभावितपणे कधीकधी होतात-असे वाचकांना बजावण्यास ते विसरले नाहीत. त्यावेळी ब्लॅन्हेट्स्की *Isis Unveiled* हा ग्रंथ लिहीत होत्या व त्यांचे इंग्रजी शुध्द करण्याच्या कामी ऑलकॉट त्यांना यांच्याजवळ बसून मदत करीत होते. एकाच इमारतीत ऑलकॉट वरच्या मजल्यावर झोपत व ब्लॅन्हेट्स्की खालच्या मजल्यावर झोपत. एकदा रात्रीचे पुस्तक लेखनाचे काम संपल्यानंतर झोपण्यासाठी ऑलकॉट वर गेल्यानंतर झोपण्याच्या वेळी शेवटच्या परिच्छेदातील वाक्यात तीन विशिष्ट शब्द घालायला हवेत असे त्यांना तीव्रतेने वाटले. उद्यापर्यंत आपण ते शब्द कदाचित विसरून जाऊ, असेही त्यांना वाटले. म्हणून त्यांनी रात्री झोपल्यानंतर लिंगदेहाने ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या लिहिण्याच्या खोलीत जाऊन टेबलावरील हस्तलिखितात ही दुरुस्ती करण्याचा संकल्प केला. यापूर्वी असा प्रयोग त्यांनी कधी केला नव्हता. तथापि इच्छाशक्तीच्या केंद्रीकरणाने हे करता येते, हे त्यांना माहीत होते. म्हणून त्यांनी तो प्रयत्न करण्याचे ठरवून तसा दृढ संकल्प केला. झोपून उठेपर्यंत आपण काय केले हे मात्र त्यांना माहीत झाले नाही. सकाळी उठून खाली गेल्यानंतर ब्लॅन्हेट्स्की म्हणाल्या, "रात्री माझ्या खोलीच्या भिंतीतून तुमचे शरीर बाहेर येताना मी पाहिले. मी तुम्हाला बोलावले. पण तुम्ही बोलला नाही. लिहिण्याच्या खोलीत तुम्ही कागदाशी काही चाळा केल्याचा आवाज आला. तेथे काय करत होता?" ऑलकॉटनी मग त्यांना आपल्या आदल्या रात्रीच्या संकल्पाची कल्पना त्यांना दिली. दोघांनी नंतर खोलीत जाऊन टेबलावरील हस्तलिखित तपासले, तेव्हा त्यांनी योजिलेल्या तीन शब्दांपैकी दोन शब्द एका वाक्यात जास्तीचे घातल्याचे व तिसरा शब्द अर्धवट लिहिल्याचे आढळून आले. हे त्यांनी कसे लिहिले हे त्यांना कळले नसले तरी त्यांना आपला प्रयोग यशस्वी झाल्याचे समाधान वाटले. हा ईश्वराच्या विश्वनिर्मितीच्या संकल्पशक्तीसारखाच आपल्या संकल्पशक्तीचा प्रयोग असल्याची त्यांची खात्री झाली. त्यासाठी त्यांनी तैत्तिरीय उपनिषदाच्या 'ब्रह्मवल्ली' मधील पुढील श्लोकाचा

संदर्भ दिला आहे, सोऽकमायत बहुस्याम प्रजायेयेति । स तपोऽतप्यत । इ. (तै.उप.३.अनुवाक ६) [अर्थ :- त्याने (ब्रह्माने) संकल्प केला की आपण अनेक रुपाने प्रकट व्हावे. त्याने 'तप' (खोल विचार) करून सर्व (मानव व विश्व) निर्माण करून त्यात प्रवेश केला. प्रवेश (केल्यामुळे) मूर्त-अमूर्त इ. (निर्माण) केले (झाले).]

येथे ब्रह्माने विचार (संकल्प) करून त्यातून (विचार किंवा thought मधून) जसे (मानवाचे) रूप (form) निर्माण केले, तसे ऑलकॉट यांनी विचार (संकल्प) करून त्यातून (ब्लॅव्हेट्स्कीनी पाहिलेले) आपले रूप (लिंगशरीर) निर्माण केले. ब्रह्माने जसे (निर्माण केलेल्या) त्या मानवात प्रवेश केला (त्याचा आत्मा बनला) तसे ऑलकॉट यांनी स्वतः निर्माण केलेल्या त्या लिंगदेहात प्रवेश करून (ब्रह्माने निर्माण केले तसे) मूर्त-अमूर्त (कागदावरील शब्द व विचार) निर्माण केले. थोडक्यात ब्रह्माने सृष्टी निर्माण केली तशी ऑलकॉट यांनीही (आपली) स्वतःची एक (छोटी) सृष्टी निर्माण केली. म्हणून हा श्लोक आपल्या दृष्टीने सखोल अनुभवाचा व अर्थपूर्ण आहे असे ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे. (Vol.Ip 387)

विश्वामित्राने प्रतिसृष्टी निर्माण केली ही कथा कपोकल्पित मानण्याचे कारण नाही, हे यावरून स्पष्ट होईल. लेडबीटर यांनी स्वतःचे स्थूल शरीर रात्री अंधरुणात विश्रांती घेत असताना लिंगदेहाने स्थूल जगात फिरून अनेकांना संकटातून वाचवले असल्याची अनेक उदाहरणे वस्तुनिष्ठ पुराव्यासह आपल्या Invisible Helpers या पुस्तकात दिली आहेत. (हे कार्य अंती बेझंटही करित असत.) जिज्ञासूनी ती अवश्य पाहावीत. (आपण नशीबानेच वाचलो, आपल्या मदतीला देवच आला, आपण कसे वाचलो हे कळले नाही इ. शब्दांनी अशा घटनांचे वर्णन संबंधित व्यक्ती करताना आढळतात. खरी गोष्ट त्यांना माहीत नसते.)

आपण कागदावर ते शब्द कसे लिहिले हे आपल्याला कळू शकले नाही, असे ऑलकॉट यांनी म्हटल्याचा वर उल्लेख केला आहे. पण त्याच ठिकाणी त्यांनी ब्लॅव्हेट्स्की यांच्या निसर्गदिवतांनी (elementals) या कामी आपल्याला मदत केली असणे शक्य आहे, असा तर्कही केला आहे. असा तर्क करण्याचे कारण ब्लॅव्हेट्स्की यांची बरीच कामे निसर्गात्म्यांनी अनेकदा केल्याचे त्यांनी पाहिले होते. म्हणजे ब्लॅव्हेट्स्की यांच्या अनेक 'चमत्कारां'चे कर्तृत्व त्यांच्या आज्ञाधारक निसर्गात्म्याकडेच जाते हे त्यांना अनुभवाने माहीत झाले होते. अशा त्यांच्या अनुभवांची काही उदाहरणे येथे दिली तर अशा 'चमत्कारां'च्या स्वरूपाची वाचकांना कल्पना येईल असे वाटते. या 'चमत्कारां'ना 'ब्लॅव्हेट्स्की यांची भानामती' असे म्हणता येईल. (निसर्गात्म्यांच्या मदतीने असा चमत्कार, करता आला असे म्हटल्याने तो संकल्पशक्तीचा चमत्कार नाही, असे ठरत नाही, हे येथे लक्षात ठेवावे. कारण मुळात एखाद्याने संकल्प केल्याशिवाय तो घडत नाही.)

## मॅडम ब्लेव्हेट्स्की यांची भानामती

आपण मृतात्मविद्यावादी होतो, हे मान्य करून आपले मत बदलावे असे उघडपणे न सांगता ते ब्लेव्हेट्स्की यांनी कसे आपल्याला बदलायला भाग पाडले व आपल्याला ब्रह्मविद्यावादी बनवले हे सांगताना हे 'चमत्कार' ऑलकॉट यांनी सांगितले असून शास्त्रीय संशोधन करताना वैज्ञानिक विगमन (scientific induction) कसे करावे हेही अशा प्रसंगाच्या निमित्ताने कळते असे म्हटले आहे. (त्यासाठी त्यांनी प्रस्तुत लेखकाने ग्रंथाच्या पहिल्या प्रकरणात दिले तसे न्यूटनचा सफरचंद पडण्याच्या निरीक्षणाचे उदाहरण दिले आहे.) हे 'चमत्कार' सांगत असताना आध्यात्मिक क्षेत्रात शास्त्रीय दृष्टिकोन फक्त पौर्वात्य देशातच (भारतात) आपल्याला आढळल्याचे त्यांनी म्हटले असून त्यासाठी मंत्रशास्त्राचे उदाहरण (ते शास्त्र पश्चिमेत कुठेही आढळत नाही, असे म्हणून) दिले आहे. भारतातील रस्त्यात लंगोटीवर फिरणाऱ्या फकीरांनाही ही विद्या अवगत असल्याचे त्यांनी (अन्यत्र) म्हटले आहे.

त्यावेळी फिलडेल्फिया शहरात ऑलकॉट हे ब्लेव्हेट्स्की यांच्या बरोबर राहत होते. एकदा घरात वापरण्यासाठी पुरेशा संख्येने टॉबेल नसल्याचे पाहून ऑलकॉट यांनी टॉबेलसाठी एक मोठे कापड खरेदी केले. त्याचे टॉबेलप्रमाणे वापरता येईल असे कापून त्या दोघांनी नंतर अनेक तुकडे केले. पण ते तसेच वापरणे प्रशस्त नाही असे वाटल्यामुळे त्यांचे काठ दुमडून शिवले पाहिजेत असे ऑलकॉटना वाटले, तसे त्यांनी ब्लेव्हेट्स्कीना सुचविले. मग ब्लेव्हेट्स्की थोड्या नाखुषीनेच सुई-दोरा घेऊन ते काम करू लागल्या. त्यांनी ते काम सुरू केले नाही तोच त्या काम करीत असलेल्या टेबलाखालचा आपला पाय झाडून "मूर्खा, चल, चालता हो." असे म्हणाल्या. चमकून ऑलकॉट यांनी "काय झाले?" असे विचारले. तेव्हा त्या म्हणाल्या, "एक छोटा उपद्रवी निसर्गात्मा काम सांगावे म्हणून माझे कपडे ओढत आहे." "छान !" ऑलकॉट म्हणाले, "टॉबेलचे काठ शिवण्याचे काम त्याला सांगा ना." मग ब्लेव्हेट्स्की थोड्या नाखुषीने म्हणाल्या, "ते टॉबेल, सुई व दोरा त्या पुस्तकाच्या कपाटात झाकून ठेवा आणि त्याला कुलूप लावा." त्याप्रमाणे ऑलकॉट यांनी केले. नंतर थोडा वेळ ते दोघे गप्पा मारीत बसले. पंधरा-वीस मिनिटांनंतर टेबलाखालून उंदरासारखा आवाज आला. ब्लेव्हेट्स्की म्हणाल्या, "त्या पीडेने काम केलेले दिसते." ऑलकॉटनी कपाटाचे कुलूप काढून दार उघडून पाहिले तेव्हा डझनभर टॉबेलचे काठ फार उत्तम नसले तरी व्यवस्थित शिवलेले त्यांना आढळले ! यावेळी आपणा दोघाशिवाय खोलीत दुसरे कोणीही नव्हते, असे ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे. (Vol. I. p.44 - 5)

वरील प्रकारचा ब्लेव्हेट्स्की यांचा अनुभव पाँडीचेरीच्या 'माताजी' (मदर)

यांनाही आला असल्याचे आढळून येते. तो अनुभव कथन करताना त्यांनी ब्लॅव्हेट्स्की यांचा आवर्जून उल्लेख केला असून त्या म्हणतात की नेहमी (भानामतीसारख्या) पीडादायक काम करणाऱ्या या निसर्गात्म्यांना मॅडम ब्लॅव्हेट्स्की मात्र चांगल्या कामाला जुंपतात. त्या त्यांना चांगल्या कामाला कशा जुंपतात हे मात्र आपल्याला माहीत नाही, असे म्हणून त्यांनी आपला स्वतःचा अनुभव पुढीलप्रमाणे सांगितला आहे: “त्यावेळी अरविंदांसाठी मी स्वतःच स्वयंपाक करीत असे. एकदा दूध तापवायला ठेवून बाहेरच्या खोलीत अरविंदांच्या बरोबर एक व्यक्ती करीत असलेल्या चर्चेत मी सहजपणे येऊन सहभागी झाले, आणि दूध तापवायला ठेवल्याचे विसरले. तिकडे दूध उतू जाण्याच्या बेतात होते. इतक्यात एक छोटा निसर्गात्मा माझ्या साडीचा पदर धरून ओढू लागला. (त्यावेळी मी साडी नेसत असे.) त्यामुळे मला दुधाची आठवण झाली आणि धावतच स्वयंपाक घरात गेले. पाहतो तो दूध उतू जाण्याच्या बेतात आहे. निसर्गात्म्यांचा अशाप्रकारचा अनुभव मला अनेकदा आला आहे.” १५९

प्रस्तुत ग्रंथाच्या पहिल्या भागातील अनेक प्रकरणातून वाचकांनी भानामतीच्या भयंकर पीडादायक करामती वाचल्या आहेत. येथे ब्लॅव्हेट्स्की यांनी आपले कपडे टेबलाखालून ओढून पीडा देणाऱ्या भानामतीला चांगल्या कामाला जुंपून आपल्याला हवा तसा जो तिचा उपयोग करून घेतला आहे, तो आपल्या आध्यात्मिक शक्तीच्या जोरावर होय. [पाँडीचेरीच्या मातार्जींना निसर्गात्म्यांनी जी मदत केली ती सुध्दा त्यांच्या आध्यात्मिक शक्तीमुळेच, हे उघड आहे. योगी अरविंदांना मात्र त्यांनी आपल्या नेहमीच्या खोडकर स्वभावानुसार एकदा चकविले होते. पण ‘ही थट्टा बरी नव्हे!’ असे त्यांनी म्हणताच त्यांनी आपली चूक लगेच दुरुस्त केली होती, तीसुध्दा अरविंदांच्या आध्यात्मिक शक्तीमुळेच होय. (टीप क्र. १५९ पाहा.)] येथे एका महत्त्वाच्या निसर्गानियमाचा शोध लागतो. भानामती ही काही नित्याच्या व्यवहारात भौतिक नियमानुसार घडणारी घटना नाही. भौतिक जगात नेहमी घडणाऱ्या घटना (उदा. पिकलेले सफरचंद जमिनीवर पडणे) व त्यांचे नियम (उदा. गुरुत्वाकर्षण शक्तीचे) भानामती आपल्या करामतीने खोटे सिध्द करीत नाही. ते नियम समजून घेणे मानवाला आपल्या भौतिक जीवनासाठी अगत्याचे आहे याविषयी वाद नाही. पण तेवढ्याने भागत नाही. कारण हे मानवी जीवन (जग) काही शुध्द भौतिक (म्हणजे भौतिक नियमावर चालणारे) नाही. या जगात भौतिक शक्तीखेरीज अतींद्रिय शक्तीही कार्यरत असल्याचे मानवी मनाच्या आधाराने घडणाऱ्या भानामतीसारख्या घटना सिध्द करतात. या घटना नेहमी घडत नाहीत, अपवादात्मक परिस्थितीत घडतात, म्हणून त्या खऱ्या असल्यातरी मानवाच्या नित्याच्या जीवनाच्या दृष्टीने त्यांना महत्त्व देण्याचे कारण नाही, असे म्हणून त्याकडे

दुर्लक्ष करावे, असे काही जणांना वाटणे शक्य आहे. पण असे वाटणे वा म्हणणे शहाणपणाचे नाही. कारण अशा अपवादात्मक घटनातूनच - त्यांच्या अभ्यासातूनच महत्त्वाचे शोध लागतात. उदा. स्फोट पावणारे तारे भानामतीपेक्षाही जास्त अपवादात्मक आहेत. पण त्यातूनच तान्यातील जड मूलतत्त्वे विश्वात विखुरली जातात व पृथ्वीसारखे ग्रह निर्माण होऊन मानवाचा जन्म शक्य व निश्चित होतो, हा महत्त्वाचा शोध खभौतशास्त्रज्ञांना लागला आहे. तसेच भौतिक नियमांचा भंग करणाऱ्या अपवादात्मक भानामतीच्या घटनातूनच मानवी मनाच्या गूढ शक्तीचा व भौतिक जगात दडलेले या भौतशास्त्रज्ञांना अज्ञात असलेल्या अतींद्रिय (निसर्ग) शक्तींचा शोध लागलेला आहे. मानवी मनातूनच भानामतीच्या अतींद्रिय घटना (निसर्गात्म्याकडून) घडतात, हे प्रत्यक्ष शास्त्रीय प्रयोगाने सिध्द झाले आहे. [उदा. 'कृत्रिम भूत निर्माण करण्याचा एक यशस्वी प्रयोग' <sup>१६</sup> तसेच 'मॅडम ब्लॅव्हेट्स्की यांचा कृत्रिम मृतात्मा (भूत)' हा पुढील पोट मधळा पाहा.] वरील कुलूपबंद कपाटातील कपडे शिवण्याच्या प्रयोगातून ब्लॅव्हेट्स्की यांनी भौतिक (शक्तीच्या) नियमांचा भंग करणाऱ्या निसर्गशक्ती या विश्वात अतींद्रिय पातळीवर (astral and mental plane) कार्यरत असून त्यांना आपल्या कामाला स्वतःच्या आत्मशक्तीने जुंपता येते, हा नियम सिध्द केला आहे. हे काम करण्यासाठी मानवाला कोणत्याही बाहेरच्या शक्तीची आवश्यकता नाही. त्यासाठी स्वतःचीच आत्मशक्ती उपयोगात आणता येत असून ती (ब्लॅव्हेट्स्कीप्रमाणे) कोणालाही विकसित करता येते. भानामतीच्या घटना कधीकधी मृतात्म्यामुळे होतात, हे खरे आहे. (उदा. खून झालेल्या सुजाता दास या मुलीचा मृतात्मा दारे खिडक्यांची उघड झाक करणे, आवाज काढणे इ. भानामतीचे प्रकार आपल्याकडे लक्ष वेधण्यासाठी करीत असे. पृ. २५५) अशा घटनामुळे जडवादी तत्त्वज्ञान खोटे ठरविणे व माणसाच्या मरणोत्तर आत्म्याचे अस्तित्व सिध्द करणे शक्य होते, हे खरे आहे. पण मृतात्मेच असले 'चमत्कार' करू शकतात - म्हणजे असले 'चमत्कार' करण्याची योग्यता व क्षमता मेल्यामुळेच येते - अशी चुकीची समजूत त्यामुळे निर्माण होऊन माणूस मृतात्मवाद हेच सर्वश्रेष्ठ तत्त्वज्ञान मानू लागतो व स्वतःच्या आत्मोद्धार करणाऱ्या अध्यात्माला - ब्रह्मविद्येला - पारखा होतो, हे एक संकट निर्माण होते. हे संकट काल्पनिक नसून खरे असल्याचे अमेरिकेतील मृतात्मवाद्यांची चळवळ व त्यांचे संघ सिध्द करतात. हे मृतात्मविद्येचे जडवादाच्या ठिकाणी नव्याने उदयाला आलेले खूळ वा संकट नाहीसे करण्यासाठीच भारतीय ब्रह्मवेत्त्यांनी ब्लॅव्हेट्स्कींना अमेरिकेला पाठविले होते. त्यांनी असले 'चमत्कार' करण्यासाठी मृतात्मा बनण्याची - म्हणजे मरण्याची - मुळीच जुरी नाही, जिवंतपणीच आपल्या आत्मशक्तीचा विकास करून ह्या गोष्टी मनुष्याला निसर्गशक्तीच्या माध्यमातून किंवा 'ब्रह्मविद्येच्या ज्ञाना'तून

(योगसाधनेने) करता येतात, हे प्रत्यक्ष प्रयोगांनी वरीलप्रमाणे अनेकदा दाखवून दिले. याच्याही पुढे जाऊन मृतात्मवाद्यांच्या बैठकामधून वावरणारे तथाकथित 'मृतात्मे' हे मृतात्मे नसून आपणच आत्मशक्तीने निर्माण केलेली निसर्गात्म्यांची (मायावी) रूपे असल्याचेही त्यांनी प्रत्यक्ष प्रयोगाने एकदा ऑलकॉट यांना दाखवून दिले. त्यांच्या या प्रयोगाची माहिती येथे थोडक्यात देणे उद्बोधक आहे.

### मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांचा कृत्रिम मृतात्मा (भूत)

फिलडेल्फिया शहरात राहायला आल्यानंतर एके दिवशी ऑलकॉट यांनी ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या टेबलाच्या माध्यमातून येणारे मृतात्म्यांचे संदेश लिहून घेण्यासाठी बाजारातून एक वही खरेदी केली व घरी आल्यानंतर ती वही ब्लॅन्हेट्स्की यांना दाखवून तिचा उद्देश सांगितला. यावेळी ब्लॅन्हेट्स्की खुर्चीत बसल्या होत्या व ऑलकॉट त्यांच्यापासून काही अंतरावर उभे होते. ब्लॅन्हेट्स्की यांनी ऑलकॉट यांना ती वही आपल्या कोटाच्या आत छातीजवळ ठेवण्यास सांगितले. त्यांनी तसे केले. थोड्या वेळाने ती वही बाहेर काढून उघडून पाहण्यास त्यांनी सांगितले. त्यावेळी ऑलकॉट यांना पहिल्या पानावर खालील मजकूर शिसपेन्सिलने लिहिलेला आढळला.

**“JOHN KING,  
HENRY DE MORGAN**

his book

4th of the Fourth month in A.D. 1875”

त्याच्याखाली एका गूढविद्येच्या संघाचे चिन्ह, FATE हा शब्द व त्याच्या खाली “Helen” (ब्लॅन्हेट्स्की यांचे खुद्द नाव) लिहिले होते. त्याच पानाच्या खालच्या एका कोपऱ्यात ऑलकॉट यांचेही नाव होते. ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे की दुकानातून (नवी) वही खरेदी केल्यानंतर तिला माझ्याशिवाय कोणाचाही स्पर्श झालेला नव्हता. मी स्वतःच माझ्या कोटाच्या आत ती वही ठेवली व नंतर बाहेर काढली. ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या मनःसामर्थ्याचा प्रयोगाचा जॉन किंग या काल्पनिक मृतात्म्याच्या शिसपेन्सिलच्या लेखनाचा हा पुरावा असून १७ वर्षांनंतर आजही वहीतील ती अक्षरे स्पष्ट दिसतात व ती वही हल्ली माझ्या समोर टेबलावर हे लिहीत असताना आहे, असे ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे. वहीतील अक्षर जॉन किंगचे नेहमी मृतात्म्याच्या बैठकीत आढळणारे वैशिष्ट्यपूर्ण हस्ताक्षरच आहेत व ते ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या हस्ताक्षराहून वेगळे आहेत. असेही ऑलकॉटनी म्हटले आहे. याचा अर्थ असा की आपण हेन्री मॉर्गनचा मृतात्मा आहोत असे सांगणारा हा ‘जॉन किंग’ स्वतःच्या वैशिष्ट्यपूर्ण हस्ताक्षरासह ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या मनातून

निर्माण झाला होता. (म्हणजे ते त्यांचे मानसिक 'भूत' होते.) तो निर्माण करण्याचे सामर्थ्य ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या इच्छा व संकल्प शक्तीत (will power) होते, याचा हा वरील 'मृतात्म्याचा चमत्कार' साक्षात पुरावा असून मनात कल्पनेने निर्माण केलेल्या व्यक्तीला त्यांनी (मृतात्म्यांच्या बैठकात) जे मूर्त स्वरूप दिले व लेखन केले ते विश्वातील भौतिक पदार्थ व ऊर्जा यांच्या माध्यमातून, त्यांचा वापर करून केले, असे ऑलकॉट यांनी या संदर्भात म्हटले आहे. (Vol. I. p. 42-3)

कल्पनेने एखादा मृतात्मा निर्माण करून त्याच्या स्वतःच्या वैशिष्ट्यपूर्ण हस्ताक्षरामध्ये इतरांच्या खिशातील नव्या वहीत तिला स्पर्श न करता दुरुन त्याचा संदेश लिहून दाखविण्याचे मनःसामर्थ्य ज्या ब्लॅन्हेट्स्की दाखवू शकतात, त्या पृथ्वीवर जिवंत असलेल्या (दूरस्थ) व्यक्तीचा संदेश अशाच रीतीने का लिहून दाखवू शकणार नाहीत ? आणि तोही प्रयोग त्यांनी ऑलकॉट यांना एकदा प्रत्यक्ष करून दाखवला असून त्याची थोडक्यात माहिती येथे देतो.

ऑलकॉट यांना एका ब्रह्मवेत्त्या सिध्द पुरुषाशी पत्रव्यवहार करावयाचा होता. त्यांना एक प्रश्न विचारवयाचा होता. ब्लॅन्हेट्स्की यांनी ऑलकॉटना आपला प्रश्न एका कागदावर लिहून तो कागद एका लिफाफ्यात घालून तो लिफाफा सील करायला सांगितले. त्याप्रमाणे ऑलकॉटनी केले. नंतर तो सील केलेला लिफाफा दोघांनाही दिसेल अशारीतीने समोरच्या घड्याळाच्या फळीवर ठेवण्यास सांगितले. नंतर ते दोघेही निरनिराळ्या विषयावर चर्चा करीत बसले. एक तासानंतर ब्लॅन्हेट्स्कीनी ऑलकॉटना त्यांचे उत्तर आले असल्याचे सांगितले. ऑलकॉटनी तो लिफाफा उचलून पाहिला. त्याचे सील होते तसेच होते. तो फोडून त्यांनी लिफाफा उघडून पाहिला तेव्हा आतील त्यांनी लिहिलेल्या कागदात हिरव्या रंगाचा दुसरा एक कागद त्यांना आढळला. त्या हिरव्या कागदावर त्या ब्रह्मवेत्त्याच्या हस्ताक्षरात त्यांच्या प्रश्नाचे उत्तर होते. ऑलकॉट यांनी या संदर्भात म्हटले आहे की यावेळी आपण अमेरिकेत होतो व ते ब्रह्मवेत्ते सिध्द पुरुष आशिया खंडात होते. यावेळी आपण पूर्ण शुध्दीवर होतो व आपल्याला चाळीस वर्षांचा हिन्पोटिझम व मेस्मेरिझम या विषयांचा अभ्यास व अनुभव असून त्या अनुभवाच्या व ज्ञानाच्या आधारे आपण असे निश्चित विधान करू शकतो की आपल्यावर हिन्पोटिझमचा प्रयोग करण्यात आलेला नव्हता. (Vol. I. p 359-360)

### ब्लॅन्हेट्स्की यांची 'यक्षिणी विद्या'

त्यावेळी ब्लॅन्हेट्स्की Isis Unveiled हा ग्रंथ लिहीत होत्या व मागे सांगितल्याप्रमाणे ऑलकॉट त्यांचे इंग्रजी शुध्द करण्याच्या कामी त्यांना मदत करीत होते. एकदा ते लेखन करीत असताना रात्रीचा एक वाजला व ऑलकॉट यांच्या



घशाला कोरड पडली. ते सहज म्हणाले, “यावेळी द्राक्षे खायला मिळाली असती तर काय बहार झाली असती !” त्यावर ब्लॅव्हेटस्की म्हणाल्या, “असे का? अवश्य मिळतील.” ऑलकॉट म्हणाले, “यावेळी कोठून मिळणार ? दुकाने बंद झाली असतील.” ब्लॅव्हेटस्की म्हणाल्या, “त्याची चिंता नको. तुम्हाला द्राक्षे हवीत ना ? मग ती अवश्य मिळतील,” “पण कसे ?” “तुम्हाला कसे ते दाखवून देते. तो घासलेटचा दिवा थोडा कमी करा.” त्याप्रमाणे ऑलकॉट यांनी तो कमी केला. पण कमी करण्याच्या त्यांच्या त्या प्रयत्नात तो विझला. “तुम्हाला तो विझवायला नाही सांगितला. कमी करा म्हटले. ताबडतोब पुन्हा लावा.” काडी ओढून ऑलकॉटनी तो पुन्हा लगेच लावला. ब्लॅव्हेटस्की उद्गारल्या, “ते पाहा.” आणि त्यांनी समोरच्या भिंतीवरील पुस्तके ठेवण्याच्या फळीकडे बोट केले. ऑलकॉट यांच्या आश्चर्याला पारावार राहिला नाही. त्या फळीच्या दोन्ही कडांना हँबुर्ग द्राक्षांचे दोन घोस लोंबकळत असलेले त्यांना दिसले. त्या दोघांनीही ती द्राक्षे नतर खाल्ली. हा चमत्कार त्यांनी कसा केला, या ऑलकॉट यांच्या प्रश्नाला त्यांनी उत्तर दिले की काही निसर्गात्म्यांवर (Nature Spirits) आपला अमल चालत असून आपण सांगू ती कामे ते करतात. या घटनेनंतर Isis हा ग्रंथ लिहिताना दोनदा त्यांनी अशाच रीतीने फळे निर्माण केल्याचे ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे. या ‘चमत्कारा’ ला त्यांनी ‘यक्षिणी विद्या’ म्हटले आहे. (यक्ष-यक्षिणी ही निसर्गात्म्यांची भारतीय नावे आहेत.) (Vol II 16-17)

ऑलकॉट यांनी ब्लॅव्हेटस्की यांच्या वरील व इतर अनेक चमत्कारांच्या प्रयोगाची वर्गवारी पुढीलप्रमाणे केली आहे :-

- १) ‘आकाश’ तत्त्वाचे ज्ञान ज्यात उपयोगात आणले जाते असे प्रयोग. यात वस्तूच्या अणू-परमाणूंच्या विघटनाचे व संघटनांचे ज्ञान असते.
- २) ज्यात निसर्गात्म्यांना किंवा निसर्गशक्तींना (elementals) आपल्या इच्छित कार्यासाठी जुंपले जाते असे प्रयोग. या निसर्गात्म्यांना ब्रह्मविद्येत निसर्गदेवता, ग्रामदेवता, क्षेत्रदेवता, यक्ष, गंधर्व इ. नावे आहेत. (ही निसर्गातील पंचमहाभूतेचं (elements) आहेत.
- ३) ज्यात मोहिनी-विद्येचा (मेस्मेरिझम् किंवा हिप्नॉटिझम्) उपयोग केला जातो असे प्रयोग.
- ४) ज्यात मनातील विचारांना कागदावर शब्दातून, पण दुरून, मूर्तरूप देण्याच्या विद्येचा उपयोग केला जातो असे प्रयोग. या प्रयोगाला ऑलकॉट यांनी precipitation हे नांव दिले असून त्याला Psychography असेही म्हणतात. त्याला मराठीत ‘मानसलेखन’ म्हणता येईल.
- ५) अतींद्रिय दृष्टीने (clairvoyance) इतरांचे विचार ओळखणे (telepathy) या

शक्तीचा ज्यात उपयोग केला जातो असे प्रयोग. या शक्तीला दिव्यदृष्टी किंवा अंतर्ज्ञान असे ब्रह्मविद्येत म्हटले जाते.

६) ज्यात ब्लॅन्हेट्स्की यांचे मन त्यांच्याइतक्या किंवा त्यांच्यापेक्षा जास्त सामर्थ्यशाली ब्रह्मवेत्त्यांच्या मनाशी जोडले जाते असे प्रयोग. यात ब्रह्मवेत्त्यांचे ज्ञान मिळविण्याच्या सामर्थ्याचाही समावेश होतो; आणि

७) ज्यात चित्रगुप्ताचे लिखाण वाचण्याच्या शक्तीचा उपयोग केला जातो असे प्रयोग. याला थिऑसॉफीमध्ये 'आकाशलेखनाचे वाचन' (Reading of Akashic Records or of Astral Light) म्हणतात. याला 'नक्षत्रविद्या' ही म्हणतात.

आतापर्यंत वर्णन केलेले ब्लॅन्हेट्स्की यांचे सर्व 'चमत्कार' वरील ऑलकॉट यांच्या वर्णवारीतील कोणकोणत्या प्रकारात मोडतात, हे थोड्या विचारांती वाचकांना सहज कळण्यासारखे आहे. उदा. क्रेपचा हातरुमाल, संकरित काटा-चिमटा किंवा एक हजार डॉलरची दुसरी तसलीच चलनी नोट किंवा चॉकलेटी स्कर्ट हे सर्व पहिल्या 'आकाश' तत्त्वाच्या ज्ञानाच्या प्रकारात मोडणारे 'चमत्कार' आहेत. (त्याची प्रक्रिया कुथुमी या ब्रह्मवेत्त्याने सांगितली असून ती पृ. ३४५ वर त्यांच्याच शब्दात दिली आहे.) याला संकल्पशक्तीचा 'चमत्कार' ही म्हटले असून मायावी रुप असलेला 'जॉन किंग' हा याच शक्तीचा परिणाम आहे. सील केलेल्या लिफाफ्यात सील न फोडता दुरून अदृश्य रुपात आलेले ब्रह्मवेत्त्याचे उत्तर घालणे हाही प्रयोग याच प्रकारात मोडतो. यात दिव्य दृष्टी, अंतर्ज्ञान या पाचव्या क्रमांकातील प्रकाराबरोबर सहाव्या क्रमांकातील ब्रह्मवेत्त्याचे ज्ञान मिळविणे व त्याच्या मनाशी संपर्क साधणे हा प्रकारही मोडतो. जे 'चमत्कार' निसर्गात्म्यांच्या मदतीने केले आहेत, ते तसा उल्लेख करून त्या त्या ठिकाणी सांगितलेच आहेत. आतापर्यंत ब्लॅन्हेट्स्की यांचे 'मानसलेखना' चे (क्र.४) व 'चित्रगुप्ताचे लिखाण' पाहण्याचे (क्र.७) 'चमत्कार' सांगितलेले नाहीत. ते आता पाहू.

### **‘मानसलेखन’ व ‘आकाशलेखन’ विषयक ‘चमत्कार’**

अमेरिकेहून भारतात थिऑसॉफिकल सोसायटीचे मुख्य कार्यालय प्रथम मुंबईत हालवण्यात आले होते. तेथे ब्लॅन्हेट्स्की व ऑलकॉट यांचा श्री. रॉस स्कॉट या आयरिश गृहस्थांशी संबंध आला व ते सोसायटीचे सभासद झाले. त्यांनी ब्लॅन्हेट्स्की यांचा कोणताही 'चमत्कार' अद्यापि पाहिलेला नव्हता व तो पाहण्याची त्यांची फार इच्छा होती. म्हणून त्यांनी तो दाखविण्याची ब्लॅन्हेट्स्कींना एकदा विनंती केली. ब्लॅन्हेट्स्की म्हणाल्या, "कोणता चमत्कार दाखवू?" स्कॉट यांनी त्यांच्या हातातील हातरुमाल मागून घेतला. त्यांच्या एका कोपऱ्यात ब्लॅन्हेट्स्की यांचे 'हेलियोना' हे नाव कशीद्यात काढलेले त्यांनी पाहिले. ते म्हणाले, "हे तुमचे

नांव या हातरुमालातून अदृश्य व्हावे व त्याठिकाणी 'हिराचंद' हे नाव कशीद्यात काढले जावे," (हिराचंद हे आर्य समाजाचे अध्यक्ष होते. ब्लॅन्हेटस्की व ऑलकॉट यांचे अमेरिकेतून भारतात स्वागत करणारे ते मुंबई येथील पहिले गृहस्थ होत.) ब्लॅन्हेटस्की यांनी मग स्कॉट यांना आपले नांव असलेला हातरुमालाचा कोपरा हातात घट्ट पकडण्यास सांगितले व त्या रुमालाचा दुसरा कोपरा आपल्या हातात धरला. एका मिनिटानंतर त्यांना तो रुमाल पाहण्यास त्यांनी सांगितले. स्कॉट यांनी तो रुमाल पाहिला, तेव्हा ते अत्यंत उत्तेजित होऊन एकदम म्हणाले, "कुठाय तुमचे भौतिक शास्त्र ? या 'चमत्कारा' मुळे जगातील एकजात [भौतिकशास्त्राचे] प्रोफेसर्स चितपट झाले आहेत ! मॅडम, तुम्ही हा हातरुमाल मला द्याल तर मी पाच पौंड आर्यसमाजाला देतो." (त्यावेळी थिऑसॉफिकल सोसायटी व आर्य समाज यांचे एकमेकात विलीनीकरण झाले होते.) ब्लॅन्हेटस्कींनी तो हातरुमाल त्यांना आनंदाने दिला, हे सांगावयास नको. या 'चमत्कारा' ची माहिती भारतीय वृत्तपत्रातून प्रसिध्द झालेली नसली तरी त्याची माहिती कर्णोपकर्णी प्रसृत होऊन सोसायटीचा नावलौकिक त्यामुळे वाढला, असे ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे. (Vol II 17-18) (असलेच 'चमत्कार' सत्यसाईबाबांनी अनेकांच्या बाबतीत केले आहेत. पाश्चात्य शास्त्रज्ञ ई. हॅरॉल्डसन व कार्लिस ऑसिस यांच्या समक्ष त्यांच्याच आंगठीतील चित्र अदृश्य करणे व पुन्हा त्याच आंगठीत दुसरे दृश्य करणे असे प्रयोग त्यांनी केले आहेत.)

अशा प्रकारच्या मानसलेखनाने कुथुमी या ब्रह्मवेत्त्यांची पत्रे ब्लॅन्हेटस्की, ऑलकॉट व इतरही अनेक सोसायटीच्या सदस्यांना नेहमीच मिळत असत. ती पत्रे त्यांना कुठेही (प्रवासातसुद्धा) मिळत असत. अड्यार (मद्रास) या मुख्य कार्यालयाच्या इमारतीतील एका खोलीत भिंतीवर लटकवणारी एक पेटी अशा पत्रासाठी श्री. कूलंब नावाच्या सुतारकामात निष्णात असलेल्या पाश्चात्य गृहस्थाकडून मुद्दाम करवून घेण्यात आली होती. या पेटीला 'पवित्र पेटी' (shrine) म्हणण्यात येत असे. या श्री. कूलंब पतीपत्नींनी मॅडम ब्लॅन्हेटस्की यांच्याकडे काही काम द्यावे म्हणून याचना केली असता त्यांची दयाबुद्धीने ब्लॅन्हेटस्कींनी आपल्याकडे घरकामासाठी नेमणूक केली होती. पण नंतर त्यांचा कपटी स्वभाव त्यांच्या निदर्शनास आल्यामुळे त्यांना कामावरून काढून टाकले होते. त्यामुळे सूडबुद्धीने त्या दोघांनी काही बनावट पत्रे तयार केली व ती मॅडम ब्लॅन्हेटस्की यांनी हिमालयीन महात्म्यांच्या नावावर स्वतःच लिहिली, असा दावा करून ती लंडनच्या अतींद्रिय विज्ञानाच्या संशोधन संघाकडे पाठवली. त्याची शहानिशा करण्यासाठी त्या संघाने डॉ. हॉजसन या सदस्याची नेमणूक केली. हॉजसन यांनी कूलंब दांपत्याचा इतिहास व पार्श्वभूमी न तपासता व हस्ताक्षरांची चुकीच्या पध्दतीने तपासणी करून कूलंब दांपत्याची बनावट पत्रे ब्लॅन्हेटस्कींनीच लिहिली आहेत

असा चुकीचा निष्कर्ष काढून ब्लॅन्हेट्स्कींना दोषी ठरविले. अशारीतीने हे कूलंब प्रकरण खोट्या पुराव्यावर उभे असूनही थिऑसॉफिकल सोसायटी व खुद्द ब्लॅन्हेट्स्की यांची बदनामी करणारे ठरले. लंडनच्या ज्या अतींद्रिय संघाची (Society for Psychological Research) अतींद्रिय घटनांचे शास्त्रीय संशोधन करण्यासाठी स्थापना झाली होती, तो संघच अशारीतीने दुसऱ्या एका मातब्बर अतींद्रिय संघाच्या, नव्हे ब्रह्मविद्येच्या संघाच्या, बदनामीला अशास्त्रीय संशोधन पध्दतीमुळे कारणीभूत ठरला; ही गोष्ट निश्चितच त्या संघाला कमीपणा आणणारी आहे. पण त्याची कल्पना १०० वर्षे कुणालाही आली नाही व ब्लॅन्हेट्स्कींनी लबाडी केली अशीच समजूत शास्त्रीय जगात व आध्यात्मिक क्षेत्रात १०० वर्षे टिकून राहिली. थिऑसॉफिकल सोसायटीवर व खुद्द ब्लॅन्हेट्स्कीवर झालेला हा अन्याय त्या संघाने व खुद्द ब्लॅन्हेट्स्की यांनी केवळ ब्रह्मविद्येवरील प्रेमातून व सत्यावरील निष्ठेतून सहन केला.\* पण 'सत्यमेव जयते' हे ब्रह्मविद्येचे वचन खोटे कधी ठरत नाही. शंभर वर्षांनंतर सत्य बाहेर आले व त्याच लंडनच्या अतींद्रिय संघाने शंभर वर्षांनी का होईना आपल्या मुखपत्रात सत्यस्थिती शेवटी प्रसिध्द केली व आपल्या हातून झालेल्या अन्यायाचे परिमार्जन केले. (प्रस्तुत ग्रंथाचे 'परिशिष्ट ३' पाहा.)

पण अशाप्रकारचे मानसलेखनाचे 'चमत्कार' हिमालयीन ब्रह्मवेत्ते नेहमीच करीत असत व थिऑसॉफिकल सोसायटीच्या सदस्यांचे प्रश्न अडचणीच्या वेळी सोडवत असत. याचे कोणाचाही विश्वास बसणार नाही असे एक उदाहरण येथे देतो. दामोदर मावळंकर हे सोसायटीचे सेक्रेटरी अड्यारहून तिबेटला जायला निघाले. (त्यावेळी तिबेटमध्ये कोणालाही जाता येत नव्हते.) दार्जीलिंगपर्यंत त्यांच्या प्रवासाची माहिती मिळत होती. पण नंतर त्यांचे काय झाले हे, एक वर्ष उलटले तरी, कुणालाच काही कळले नाही. तुकाराम तात्या या सोसायटीच्या सदस्यांनी दामोदरची काळजी वाटून मुंबईहून त्यांची चौकशी करणारे एक पत्र अड्यारला लिहिले. ते पत्र त्यांनी मुंबईत ५ जून १८८६ रोजी लिहिले व त्याच दिवशी पोष्टात

\* कूलंब दांपत्याला कोर्टात खेचण्याचे ब्लॅन्हेट्स्की यांनी प्रथम ठरविले होते. पण हितचिंतकांच्या सल्ल्यावरून त्यांना तो विचार नंतर सोडून द्यावा लागला. कारण कोर्ट प्रकरणामुळे सोसायटीची व त्याची जास्तच बदनामी झाली असती. पहिली गोष्ट म्हणजे या कूलंब कटाचे मूळ सूत्रधार भारतातील ख्रिश्चन मिशनरी होते. त्यांनीच कूलंब दांपत्याला हा खोटा आरोप करण्यास चिथावले होते. कारण हिंदू धर्माचा प्रसार करणारी संघटना म्हणून थिऑसॉफिकल सोसायटीचे ते प्रारंभापासून मोठे द्वेष व शत्रू होते. (वास्तविक ब्रह्मविद्या कोणत्याही धर्माचा प्रचार करीत नाही. ती फक्त सनातन सत्ये सांगते जी बीजरूपाने सर्व धर्मात आहेत.) कोर्टप्रकरण केले असते तर हिमालयीन ब्रह्मवेत्ते त्यात ओढले गेले असते व ती गोष्ट त्यांच्या दर्जाला थेट विरोधी ठरणारी होती. दुसरी गोष्ट म्हणजे तत्कालीन ब्रिटिश सरकारचे धोरण मिशनर्यांना अनुकूल व हिंदूविरोधी होते. त्यामुळे ब्लॅन्हेट्स्कींना न्याय तर मिळाला नसताच, उलट ब्रह्मविद्येची बदनामी मात्र झाली असती.

टाकले. ते ऑलकॉटना अड्यार येथे ७ जून रोजी मिळाले. ते फोडून वाचल्यानंतर ऑलकॉट हे फारच आश्चर्यचकित झाले. कारण त्या पत्रातच त्या पत्राचे उत्तर म्हणून मोकळ्या जागी कुथुमी या ब्रह्मवेत्त्यांनी स्वतःच्या सहीनिशी दामोदराविषयीची माहिती देणारा मजकूर लिहिलेला त्यांना आढळला. हा मजकूर कुथुमी यांनी त्या पत्रात - त्या पत्रातील मोकळ्या जागी - ते पत्र पोष्टात पडल्यानंतर मानसलेखन पध्दतीने लिहिले होते हे उघड आहे. यावरून ब्रह्मवेत्त्यांचे लक्ष सोसायटीच्या सदस्यांच्या सर्व हालचालीवर, इतकेच नव्हे तर त्यांच्या विचारांवरसुद्धा कसे असते, याचे प्रत्यंतर येते. हे पत्र हल्ली अड्यारमध्ये जतन करून ठेवण्यात आले असून त्याची फोटोकॉपी सी. जिनराजदास यांनी आपल्या **Did Madame Blavatsky Forge Mahatma Letters ?** या पुस्तिकेत छापली आहे. (त्याचीच कॉपी बार्बोर्का यांनी **H. P. Blavatsky, Tibet and Tulku** या ग्रंथात छापली आहे.) पोष्टात पडल्यानंतर मानसलेखनाने त्या पत्राला त्यावरच उत्तर देणारे किंवा त्यावर टीकाटिप्पणी करणारे हे एकमेव उदाहरण आहे, असे मात्र समजू नये. अशाप्रकारची अनेक पत्रे असून ती सर्व हल्ली अड्यारमध्ये जतन करून ठेवली आहेत. ती अनेक ग्रंथातून प्रसिध्दही करण्यात आली आहेत.

आता ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या 'आकाशलेखन' विषयक 'चमत्कारा' कडे वळू. हा 'चमत्कार' त्यांनी बडोद्याचे महाराज गायकवाड यांच्या आमंत्रणावरून बडोद्याला भेट दिली असता त्यांचे दरबारी श्री. कीर्तने व जज गाडगीळ यांच्या विनंतीवरून बडोद्यात केला होता. त्यावेळी ऑलकॉटही उपस्थिती होते. श्री कीर्तने व जज गाडगीळ यांना ब्लॅन्हेट्स्की पेन-पेन्सिलीशिवाय किंवा कसल्याही साधनाशिवाय कागदावर किंवा वस्त्रावर कशा लिहितात, हा प्रयोग प्रत्यक्ष पाहावयाचा होता व त्याच्या पाठीमागचे तंत्र-विज्ञान समजून घ्यावयाचे होते. ब्लॅन्हेट्स्की यांनी टेबलावरील एक कोरा कागद घेतला व तो कीर्तने व गाडगीळ यांना देऊन त्यावर खूण करण्यास सांगितले. हेतू हा की तो कागद हातचालखीने बदललेला नाही याची त्यांना खात्री व्हावी. त्यांनी खूण केल्यानंतर तो कागद ब्लॅन्हेट्स्कीनी परत घेतला व त्या त्यांना म्हणाल्या, "आता मला थिऑसॉफिकल सोसायटीविषयी अत्यंत शत्रुत्वाची भावना असलेल्या एखाद्या व्यक्तीचे नांव सांगा. त्या व्यक्तीचा माझा किंवा ऑलकॉट यांचा पूर्वपरिचय नसावा." त्यांनी ताबडतोब बडोद्याच्या ब्रिटिश रेसिडेंटचे नांव सांगितले. (कारण हा रेसिडेंट ब्लॅन्हेट्स्की व ऑलकॉट यांच्याविषयी अनुदार उद्गार काढण्याची एकही संधी वाया दवडत नसे. गायकवाड महाराजांना त्या दोघांना भेटीचे आमंत्रण देण्यापासून त्यानेच प्रथम परावृत्त केले होते. पण जज गाडगीळ यांच्या आग्रहामुळे महाराजांनी शेवटी त्यांना आमंत्रण दिले होते.) नंतर ब्लॅन्हेट्स्की त्यांना म्हणाल्या, "आता मला त्या रेसिडेंटच्या

घराच्या दिशेला वळवा.” त्यांनी त्यांना तसे केल्यानंतर त्यांनी तो कोरा कागद आपल्या दोन्ही तळहातात जमिनीशी समांतर असा थोडा वेळ धरून शांत राहिल्या. नंतर तो कागद त्यांना पाहण्यास सांगितले. तो पाहिल्यानंतर त्यांच्या आश्चर्याला पारावार राहिला नाही. कारण पूर्वी कोरा असलेल्या त्या कागदावर त्या ब्रिटिश रेसिडेंटचे सहीनिशी लिहिलेले पत्र होते ! त्या पत्रात त्या रेसिडेंटने ब्लॅव्हेट्स्की व ऑलकॉट यांची पूर्वी अनुदार उद्गार काढल्याबद्दल क्षमा मागितली होती व आपल्याला थिऑसॉफिकल सोसायटीचा सदस्य करून घेण्याची विनंती केली होती ! हे पत्र खुद्द त्याच्याच हस्ताक्षरात व त्याच्यात सहीचे होते ! ब्लॅव्हेट्स्की यांनी त्या रेसिडेंटचे हस्ताक्षर पूर्वी कधीच पाहिले नव्हते व तो कसा सही करतो हेही त्यांना माहीत नव्हते. त्या त्याला पूर्वी भेटल्याही नव्हत्या किंवा त्याला पाहिलेही नव्हते; आणि येथे त्याच्याच हस्ताक्षरातील त्याच्याच सहीचे पत्र ब्लॅव्हेट्स्की यांच्या हातात तीन साक्षीदारासमोर भर दुपारी तयार झाले होते ! हे कसे ? त्याच्या पाठीमागचे विज्ञान ब्लॅव्हेट्स्की यांनी असे सांगितले की सर्व वस्तूंच्या व घटनांच्या प्रतिमा ‘आकाश’ तत्त्वावर नोंद केलेल्या असतात. त्यामुळे एखाद्या व्यक्तीचे हस्ताक्षर माहीत नसतानासुद्धा ‘आकाश’ तत्त्वावरील त्याची प्रतिमा पाहून त्याला मूर्तस्वरूप, ‘आकाश’ तत्त्वाचे ज्ञान असणाऱ्याला देता येते. त्यासाठी संबंधित व्यक्तीचे नांव व पत्ता मात्र माहीत असावे लागतात. म्हणून ब्लॅव्हेट्स्कींनी त्याचे नांव विचारले होते व त्याच्या घराच्या दिशेला आपल्याला वळवायला त्यांना सांगितले होते. (Vol II. pp. 365-7)

ब्रिटिश रेसिडेंटचे वरील पत्र कोणत्याही रुढ निकषाखाली बनावट आहे असे कोण म्हणेल ? एखादे पत्र अस्सल आहे की बनावट हे ठरविण्याची ‘हस्ताक्षर’ ही कसोटी कशी निरूपयोगी आहे, हे वरील ‘चमत्कार’ संप्रयोग सिध्द करतो ! अतींद्रिय घटनांचे ‘वैज्ञानिक’ संशोधन करणाऱ्या लंडनच्या SPR संघाने ब्लॅव्हेट्स्की व महात्मे (ब्रह्मवेत्ते) यांच्या पत्रांची कोणत्याही निकषाखाली परीक्षा केली तरी जोपर्यंत खऱ्या ‘विज्ञाना’ ची त्याला ओळख नाही, तोपर्यंत त्याला ‘सत्य’ माहीत होण्याचा सुतराम् संभव नाही. कारण पंच-ज्ञानेंद्रियांना ज्याचे ज्ञान होत नाही, तेच फक्त अतींद्रिय विज्ञानाचा विषय होऊ शकते, या चुकीच्या कल्पनेत तो संघ अडकून पडला आहे. ब्रह्मविद्येच्या ‘अतींद्रिय’ विज्ञानाची (ब्रह्मविज्ञानाची) त्याला अजीबात ओळख नाही ! अशा संघाने ब्लॅव्हेट्स्की यांची ‘शास्त्रीय’ निकषाखाली तपासणी करावी यासारखा दुसरा विनोद नाही.

### भानामतीची मीमांसा

भानामतीचे सर्व प्रयोग हे वरील वर्गवारीतील दुसऱ्या प्रकारात मोडणारे आहेत. म्हणजे हे सर्व प्रकार निसर्गात्मे (Nature Spirits) करीत असतात. मृतात्मेही

हे प्रकार करू शकतात. कारण निसर्गात्म्यांप्रमाणे तेही वायूरूपात (Astral Body) वावरत असतात. [येथे 'वायू' म्हणजे हवा नव्हे, हे लक्षात ठेवणे जरूर आहे. ब्रह्मविद्येत वायूच्या पातळीला भुवर्लोक (Astral Plane) म्हणतात. मृतात्मे हे निसर्गात्म्यांप्रमाणेच भुवर्लोकाचे रहिवासी असून ते 'वायूरूप' असतात.]"

भुवर्लोकाचे रहिवासी जेव्हा भूलोकात हस्तक्षेप करतात, तेव्हा भूलोकीच्या लोकांना भौतिक नियमांचा भंग झालेला दिसतो, म्हणजे त्यांच्या दृष्टीने 'चमत्कार' घडतो. पण भुवर्लोकाच्या रहिवाशांच्या दृष्टीने ती नैसर्गिक घटनाच असते. कारण ती घटना त्यांच्या भुवर्लोकातील कोणत्याही नियमांचा भंग करीत नाही. म्हणून त्यांच्या, व अतींद्रिय विज्ञानाच्या, दृष्टीने तो चमत्कार नसतो.] मृतात्मे व निसर्गात्मे या दोहोतील फरक असा की पहिले (मानवी आत्मे) बुद्धिमान-म्हणजे नैतिक जबाबदारीने वागणारे असतात, तर दुसरे (निसर्गात्मे) निर्बुद्ध-नैतिक जबाबदारी नसलेले पण जाणीवयुक्त (Semi-intelligent) असतात. त्यामुळे ते खोड्याही (pranks) करू शकतात - नव्हे खोड्या करणे हाच त्यांचा अंगभूत गुण व नित्याचा उद्योग असतो, व त्यात ते पटाईत असतात. तथापि ब्लॅन्हेट्स्कीसारखे ब्रह्मवेत्त्यांचे शिष्य त्यांच्यावर अंकुश ठेवून त्यांच्याकडून हवी ती कामे करून घेऊ शकतात. मग अशा मालकांचे नोकर बनून ते त्यांना हव्या त्या वस्तू-द्राक्षे, फळे इ. हवे तेव्हा कुठूनही आणून देतात. (या वस्तू बंद जागेतही येऊन पडत असून त्यांना इंग्रजीत apporters म्हणतात.) पण त्याचबरोबर विस्थापित मनाच्या (disturbed mind) मुलांच्या डोक्यावर अगर त्यांच्या जेवणाच्या ताटात विष्टाही आणून टाकू शकतात ! प्रस्तुत ग्रंथाच्या पहिल्या प्रकरणातील 'कागवाड्याच्या भानामती' च्या बाबतीत शांता या विस्थापित मनाच्या मुलीच्या बाबतीत हेच घडत होते. म्हणून त्या शक्तीला प्रस्तुत लेखकाने प्रकरणाच्या शेवटी 'ही शक्ती बुद्धिमान पण निर्बुद्ध' असे म्हटले आहे. (पृ. २१) शेजारच्या भिंतीवर विष्टा थापण्याची-तो प्रकार भाणसाने केल्याप्रमाणे त्यावर हाताच्या बोटांच्या खुणासुद्धा दाखविण्याची - कलाही ह्या निसर्गात्म्यांचीच ! शांताला बाहुल्या दिसणे, बाळूचा शर्ट जाळायला तिला प्रवृत्त करणे ह्या खोड्याही त्यांच्याच. शांताने दाखवली तरच व दाखवील तेथेच इतरांना विष्टा दिसायची, अन्यथा नाही, या गूढ प्रकारातील रहस्य असे की शांताच्या मनातच भानामतीने-निसर्गदिवतेने-ठाण मांडले होते ! शांताच्या मनातच तिने ठाण मांडल्यामुळे पौर्णिमेच्या दिवशी अंधारात हिरवे पातळ नेसलेली बाई शेजारच्या भिंतीला विष्टा थापत असल्याची फक्त तिलाच दिसू शकली, इतर कुणालाही नाही ! म्हणून शांता ही या शक्तीचे माध्यम असून तिला या "विष्टा पडण्याच्या घटनेशी स्वतःचे नाते जुळविणे जणू आवडते" असे प्रस्तुत लेखकाने म्हटले आहे. (पृ. २३) तसेच १४ व्या प्रकरणातील माळवदे कुटुंबातील विस्थापित मनाच्या पवन या मुलाच्याही मनातच 'पैसे देणाऱ्या

भानामती' ने ठाण मांडले होते. त्यामुळेच फक्त त्यालाच ती 'विसत' होती; व ती नंतर काय करणार आहे हेही तो बरोबर सांगू शकत होता ! आणि त्याप्रमाणे घडतही होते ! म्हणूनच घरातून अदृश्य झालेले तराजूचे एक पारडे एका 'मुला' ने नेले असल्याचे एका ज्योतिष्याने सांगितले. कारण ते पारडे नेणारा 'मुलगा' पवनच्या मनातील भानामतीच असल्यामुळे पवन आणि त्याच्या मनातील भानामती यांच्यामध्ये (ज्योतिष-शास्त्राच्या आणि अतींद्रिय शास्त्राच्या दृष्टीने) काही फरक नव्हता. अशारीतीने 'भानामती' व तिचे लक्ष्य बनलेल्या व्यक्तीचे 'मन' यात अतींद्रिय वास्तवाच्या दृष्टीने काही फरक नसल्यामुळे बुद्धिवाद्यांसारखे या गोष्टीचे ज्ञान नसलेले लोक ती व्यक्तीच भानामतीचे प्रकार करते-म्हणजे हा तिचा बनाव असतो-असा तिच्यावर (अज्ञानातून) आरोप करतात. असा आरोप पहिल्या प्रकरणातील शांतावर व १४ व्या प्रकरणातील पवनवर करता येत नसल्याचे पुराव्यानिशी तेथे दाखवून दिले आहेच. ज्या अर्थाने टोरोंटो (कॅनडा) येथील 'कृत्रिम भूत निर्माण करण्याचा यशस्वी प्रयोग' करणाऱ्या लोकांनी भानामतीचे प्रकार केले,<sup>१६</sup> किंवा फिलडेल्फिया येथे मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांनी ऑलकॉटना जॉन किंग या 'कृत्रिम मृतात्म्या' चे (भानामतीचे) प्रकार करून दाखवले (पृ. ३५१), त्याच अर्थाने कागवाड येथे शांता (प्रकरण १) व रेंदाळ येथे पवन (प्रकरण १४) या मुलांनीही ते करून दाखवले. फरक इतकाच की टोरोंटो येथील लोकांचा भानामतीचा प्रयोग शास्त्रीय अभ्युपगम (hypothesis) तपासण्यासाठी हेतुपुरःसर करण्यात आला व तो (शास्त्रीय प्रयोग) यशस्वी झाला व फिलडेल्फिया येथील प्रयोगात ब्लॅन्हेट्स्की यांनी भुवर्लोकावरील-त्यातील आत्म्यावर-आपले अध्यात्मिक प्रभुत्व व सामर्थ्य सिध्द करण्यासाठी तो प्रयोग ऑलकॉटना योजनापूर्वक करून दाखविला. याच्या उलट शांता व पवन ही मुले विस्थापित मनामुळे आपल्या इच्छेविरुद्ध परिस्थितीचे गुलाम म्हणून भानामतीचे लक्ष्य बनली व त्यामुळे त्यांच्या माध्यमातून ते (भानामतीचे) प्रकार घडले (निसर्गात्म्यानी केले). विस्थापित मनाच्या व्यक्तीकडे निसर्गात्मे नेहमीच आकर्षिले जातात, त्यांचे त्या व्यक्ती लक्ष्य बनतात. विस्थापित मनाच्या व्यक्तीच्या बाबतीतच सामान्यपणे भानामतीचे प्रकार घडताना आढळून येण्याचे हेच कारण आहे. उदा. शांता या मुलीला तिच्या इच्छेविरुद्ध तिच्या आईवडिलांपासून तिची ताटातूट करून तिला कोल्हापूर जिल्ह्यातील बसरगे गावातून कर्नाटकातील कागवाड या गावी बहिणीचे मूल सांभाळण्यासाठी आणून ठेवण्यात आले होते. तिला ही गोष्ट मुळीच पसंत नव्हती. पण आपला त्याविषयीचा विरोध तिला उघडपणे प्रकट करता येत नसल्यामुळे तिच्या मनातील तो विरोध 'भानामती' च्या रूपाने प्रकट झाला-स्फोट पावला. आपल्याला दररोज शंभर भाकऱ्या कराव्या लागतात या तिच्या (खोट्या) विधानाचे कोडे, ही वस्तुस्थिती लक्षात घेतली तर सहज



सुटते. (पृ. १५) पवन या मुलालाही पंढरपूरहून कोल्हापूर जिल्ह्यातील रेंदाळ या गावी त्याच्या आईवडिलांपासून विभक्त करून शिक्षणासाठी आणून ठेवण्यात आले होते. शाळेला जाण्याची तयारी तो मुलगा करित असताना हे भानामतीचे प्रकार घडत. त्याचे परीक्षेचे पेपर (उत्तरपत्रिका) फाडल्या जात, या गोष्टी या दृष्टीने सूचक आहेत. विज्ञान आणि अंधश्रद्धा निर्मूलन या पुस्तकातील पहिल्या प्रकरणातील तनुजा या मुलीच्या डोळ्यातून खडे येण्याचा भानामतीचा प्रकार शाळेतच सुरू झाला, ही गोष्टही या दृष्टीने लक्षणीय आहे. कारण तिलाही तिच्या सांगाव या कोल्हापूर जिल्ह्यातील कागल तालुक्यातील गावाहून सांगली जिल्ह्यातील खानापूर तालुक्यातील कडेगाव येथे शिक्षणासाठी आणून ठेवण्यात आले होते. तिच्याप्रमाणे तिच्या शाळेतील इतर मुलींच्या डोळ्यातूनही खडे येण्याचा प्रकार का घडला, किंवा तिला परत सांगावला पाठवल्यानंतरही किंवा शांताला परत बसण्याला पाठवल्यानंतरही भानामती का थांबली नाही, हे प्रश्न वरवर अडचणीचे वाटत असले तरी तसे ते मुळीच नाहीत. उलट अशा घटना भानामतीचे कर्तृत्वच सिध्द करतात. कारण असे प्रकार निर्बुध्द निसर्गात्म्याशिवाय अन्य कोणी करूच शकत नाही ! यालाच भानामतीच्या खोड्या (pranks) म्हणतात-म्हणावयाचे असते ! असे काही तर्कहीन प्रकार घडले नसते तर तिला 'भानामती' कोण म्हणाले असते ? विस्थापित मन हे फक्त बंदूकीचा चाप ओढण्याचे (triggering action) काम करते व लगेच भानामतीचा स्फोट होतो. त्या प्रकारांचा जोर मूळ विस्थापित मनाची शक्ती असेपर्यंत टिकतो व मग हळुहळु कमी होतो. म्हणून तिचा आलेख (graph) घंटेच्या आकाराचा निघतो. (पृ. ३) व त्या केंद्र बनलेल्या व्यक्तीभोवतीच (focal person) ते प्रकार घडताना दिसतात. मग ते प्रकार ती व्यक्ती जाईल तेथे घडतात. बसणे व कागवाड हा भेद ती (निर्बुध्द) भानामती जाणत नाही. दुसऱ्या प्रकरणातील शांताच्या बाबतीतही असेच घडत होते.\*

\* भानामती माणसाच्या मनातून कशी निर्माण होते याचे ब्रह्मवैज्ञानिक विवेचन कुथुमी या ब्रह्मवेत्त्यांनी ए. ओ. ह्यूम यांना लिहिलेल्या एक प्रदीर्घ पत्रात केले असून ते इंग्रजी जाणणाऱ्या वाचकासाठी येथे त्याच्याच शब्दात देतो. कुथुमी म्हणतात, "Every thought of man upon being evolved passes into the inner world, and becomes an active **entity** by associating itself, coalescing we might term it, with an **elemental**- that is to say, with one of the **semi-intelligent forces** of the kingdoms. It survives as an active intelligence - a creature of the mind's begetting - for a longer or shorter period proportionate with the original intensity of the cerebral action which generated it. Thus, a good thought is perpetuated as an active **beneficent power**, an evil one as a **maleficent demon**. And so man is continually **peopling** his current in space with a world of his own, crowded with the offsprings of his fancies, desires, impulses and passion; a current which reacts upon any sensitive or nervous organisation which comes in contact with it, in proportion to its dynamic intensity. (तळटीप ३६२ वर)

लग्न होऊन नवऱ्याच्या घरी नांदायला आलेल्या मुलीही विस्थापितच असतात. अशा मुली जर विस्थापित मनाच्या असतील, म्हणजे मानसिकदृष्ट्या विस्थापित असतील, तर नांदायला आल्यानंतर काही दिवसातच भानामतीचे प्रकार सुरु होताना दिसतात. उदा. उपर्युक्त (विज्ञान आणि अंधश्रद्धा-निर्मूलन या) पुस्तकातील ४ थ्या प्रकरणातील विमल हिचे लग्न होऊन नवऱ्याच्या घरी ती नांदायला आल्यानंतर सहा महिन्यांनी भानामतीचे प्रकार सुरु झाले, आणि ते सात वर्षे चालू राहिले. प्रस्तुत ग्रंथाच्या 'भेंडवाडची भानामती' या ४ थ्या प्रकरणातील सावकाश ही मुलगी सिदलिंगा अंदाणी याच्या घरी नांदायला आल्यानंतर चारच दिवसांनी भानामतीचे प्रकार सुरु झाले. आणि तिला सोडचिठ्ठी देऊन तिच्या माहेरी तिला पाठविल्यानंतर ते थांबले. (या भानामतीने संबंध नसलेल्या लोकांच्या-केवळ ती पाहण्यासाठी आलेल्यांच्या-गाड्या पंक्चर करण्याची खोडीही केलेली दिसून येते. भानामतीवर उपाय करण्यासाठी आलेल्या मांत्रिकाला कोलांट्या उड्या मारायलाही तिने लावले ! पाश्चात्य देशातही ती बंद करण्यासाठी आलेल्या धर्मगुरुवर किंवा तिची तपासणी करण्यासाठी आलेल्या शास्त्रज्ञांवर निसर्गात्म्यांनी अशाच खोड्या केल्याच्या दिसून येतात !)

पाश्चात्य देशातही अशा विस्थापित मनाच्या मुलींच्या बाबतीत त्या नवऱ्याच्या घरी नांदायला आल्यानंतर भानामतीच्या घटना घडल्या असल्याची अनेक उदाहरणे सापडतात. ब्राझीलमधील एका पोर्तुगीज कुटुंबात नोरा ही मुलगी लग्न होवून नवऱ्याकडे नांदायला आल्यानंतर तेथे भानामतीचे प्रकार सुरु झाले, ते सहा वर्षे चालू राहिले.<sup>१६२</sup> अमेरिकेतील फ्लॉरिडा प्रांतातील मियामी या शहरातील एका वखारीत काम करणाऱ्या ज्युलिओ या १९ वर्षांच्या मुलाच्या उपस्थितीत वखारीतील वस्तू इकडून तिकडे जिवंत असल्याप्रमाणे उडत असत वा आपोआप फेकले जात. हा मुलगा क्यूबा येथील आपल्या आईपासून ताटातूट झालेला विस्थापित मनाचा निर्वासित मुलगा होता.<sup>१६३</sup> विस्थापित झालेल्या किंवा लग्न

(तळटीप ३६१ बरून चालू) The Buddhists call this his 'Skandhas;' the Hindu gives it the name of 'Karma' The adept evolves these shapes consciously; other man throw them off unconsciously " [The Occult World (1881) A P Sinnett pp. 131-2] या उताऱ्यातील विचारांचे सोदाहरण विवेचन प्रस्तुत ग्रंथात ठिकठिकाणी दिलेले असल्यामुळे त्याचे वेगळे भाषांतर येथे देत नाही. यातील अधोरेखित शब्द महत्त्वाचे असून त्यातून माणसाचे विचार वस्तरूप धारण करतात (जिवंत बनतात) हा मुख्य विचार व्यक्त होतो. चांगले विचार चांगले कर्म व चाईट विचार चाईट कर्म निर्माण करीत असतात. Adept म्हणजे ब्रह्मवेत्ता जाणीवपूर्वक (चांगले) कर्म निर्माण करीत असतो. इतर लोक अजाणतेपणे आपले कर्म निर्माण करतात. भानामती हे विचाररूपी कर्मांचेच मूर्त रूप असून (मूर्त परिणाम करणारे असून) ते अपवादात्मक परिस्थितीत (कर्मफल देण्यासाठी) फक्त प्रकट होते. विस्थापित मन हे त्यापैकी एक आहे.

झालेल्या सर्वच व्यक्तींच्या बाबतीत असे प्रकार घडून येत नाहीत, याचे कारण प्रतिकूल परिस्थितीला समर्थपणे तोंड देण्याची-तिच्याशी जुळवून घेण्याची मानसिक क्षमता (tolerance level) बऱ्याच व्यक्तींच्या ठिकाणी चांगली असते. याच्या उलट ज्या व्यक्तींच्या ठिकाणी ती नसते किंवा कमी असते व ज्या व्यक्ती आक्रमक मनोवृत्तीच्या (aggressive) व वैफल्यग्रस्त (frustrated) वा तणावग्रस्त (stressful) होण्याकडे कल असणाऱ्या असतात, अशा व्यक्तीकडे निसर्गात्मे चटकन आकर्षित होतात. (सुदैवाने अशा व्यक्तींची संख्या कमी आढळून येते.) दडपलेली आक्रमकता (repressed aggression) ही निसर्गात्म्यांना आपल्या खोड्या करण्यासाठी अत्यंत अनुकूल (सुपीक) मनोभूमी असते. मग ते अशा व्यक्तींच्या माध्यमातून / सान्निध्यात आपल्या करामती करू लागतात. ते त्या व्यक्तीच्या तोंडालाच विष्टा फासतील किंवा शेजारच्या घराच्या भिंतीला ती थापतील. (पृ.७) घरातील कामगारांच्या अंगावर लघवी करतील किंवा त्याच्या कामाच्या तडीत वरून दगड टाकतील. (पृ.१९३) लहान बालकाच्या काखेत कंदिलाचा ग्लास घालतील किंवा त्याच्या डोळ्यांना त्याच्या आजोबाचा चष्मा लावतील (पृ.१९४) इ. असले प्रकार बेजबाबदार व्यक्तीने निर्बुध्दपणे खोड्या कराव्यात अशा स्वरूपाचे असले तरी काही प्रकार भयानक त्रासदायक व अतिशय नुकसान करणारेही असतात. प्रस्तुत ग्रंथातील २ ते ६ या प्रकरणातील सर्व भानामतीचे प्रकार या सदरात मोडतात. विशेषतः बरीच वर्षे टिकणारे व भयंकर त्रासदायक व नुकसान करणारे भानामतीचे प्रकार हे काळी जादू (Black Magic) किंवा करणी (चेटूक) (Witch-craft) या प्रकारात मोडणारे असतात.<sup>११४</sup> प्रस्तुत ग्रंथातील ३, ४ व ५ या प्रकरणातील भानामतीचे प्रकार या स्वरूपाचे असून त्याविषयीचे परिस्थितीजन्य पुरावे त्याठिकाणी दिले आहेत. प्रकरण ६ मधील भानामती करणाऱ्या गुन्हेगारांना पुराव्यासह पोलीसांनी पकडलेही आहे. (विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिमूलक या पुस्तकातील ८ व्या प्रकरणाच्या शेवटी यासंबंधीचे पुरावे दिले आहेत. पृ.१०८) हे प्रकार क्वचित पिशाचे (मृतात्मे) करीत असतात हे खरे असले तरी सामान्यतः हा निसर्गात्म्यांचाच उद्योग असतो. ४ व्या प्रकरणातील कवठेगुलंदचे आणासाहेब पाटील यांनी आपल्या मक्क्याच्या पिकाच्या राखणीसाठी आणलेल्या माणसांच्या नेमके ढुंगणाला खडे मारणे, त्यांच्या खोलीत झोपलेल्या लोकांच्या कपड्यात किडे, विंचू यासारखे प्राणी वळवळणे, खोपीत लटकवलेला कंदील फोडणे, घरावर लावलेला बल्ब फोडणे, बोटाने दाखवेल तो फोटो नेमका फोडणे अशा खोड्यांच्या प्रकाराबरोबरच त्यांच्या गड्याच्या पोरग्याला शेताच्या रस्त्यात “तुझ्या (पिस्तूल देर म्हणणाऱ्या) मालकाजवळ पिस्तूल तरी आहे काय रे ? हे बघ पिस्तूल” असे म्हणून त्याच्यावर पिस्तूल रोखणारी माणसे भेटणे, असले प्रकार खोडकर निसर्गात्मेच करू शकतात.

काही निसर्गात्मे चांगले असतात. (हे अर्थात् संबंधित व्यक्तीच्या विचारावर अवलंबून आहे.) \* पण त्याचबरोबर दुष्ट व माणसांचे भयंकर नुकसान करणारे, त्याला अतिशय पीडा देणारे निसर्गात्मेही असतात. (हे त्या त्या व्यक्तीच्या कर्मावर अवलंबून असते.) अशा वाईट (evil) निसर्गात्म्यांना कामाला जुंपण्याची विद्या अवगत असलेली माणसे समाजात सर्वत्र विखुरलेली असून त्यांची भयानक पीडा फक्त खेड्यातील अशिक्षित लोकांनाच होते असे समजण्याचे कारण नाही. मानसशास्त्रात एम्. ए. ची पदवी घेतलेल्या एका विदुषीला एका भयंकर भानामतीने कसे घेरले याचे पाश्चात्य देशातील एक उदाहरण प्लेफेअर या संशोधकाने आपल्या ग्रंथात दिले आहे.<sup>१६४</sup> ही लांबची उदाहरणे असल्यामुळे वाचकांच्या मनावर फारसा परिणाम करू शकणार नाहीत. म्हणून आपल्याकडील एका पवित्र तीर्थक्षेत्रात अलीकडे घडलेले एक भयानक भानामतीचे उदाहरण येथे वाचकांच्या माहितीसाठी संक्षेपाने देतो. त्यामुळे प्रस्तुत ग्रंथातील ३ व्या प्रकरणातील रजपूतांचे उदाहरण अपवादात्मात्मक आहे, असे कोणाला वाटण्याचे कारण नाही.

### नरसोबा वाडीतील दत्तमंदिराच्या पूजाऱ्याच्या घरी भानामती

श्री. दामोदर नारायण घाटे हे नरसोबाच्या वाडीतील दत्तमंदिराच्या पूजाऱ्यापैकी एक असून ते नरसोबा वाडीच्या ग्रामपंचायतीचे माजी उपसरपंच आहेत. त्यांच्या घरात भानामतीचे भयानक प्रकार ८ सप्टेंबर १९७७ रोजी सुरू झाले. प्रथम पेटीत ठेवलेल्या नव्या पातळाला ब्लेडने चिरणे, नंतर त्यांच्या पत्नीच्या अंगावरील पातळे व ब्लाऊज हेही अंगावर असतानाच चिरणे सुरू झाले. चिरलेल्या ठिकाणी त्यांच्या अंगावर जखमा होत. त्याचबरोबर दंडावर, पोटावर, ओटीपोटावर भस्माचे पट्टे ओढलेले दिसत. अंगणात पाण्यात घातलेल्या कुकवाचा सडाही पडत असे. यावर त्यांनी अनेक उपाय केले. पण हे प्रकार वाढतच गेले. डोक्याचे केस कापून पडणे, तोंडात शेण, राख, कोळसे येऊन पडणे हे प्रकारही सुरू झाले. शेवटी तर विझाही येऊन पडू लागली. सौ. घाटे जेथे तात वा बसत तेथे कुंकू पडत असे. पडताना दिसत नसे. पडल्यावरच दिसे. त्यावेळी त्या बेशुध्द होत. दत्ताचे तीर्थ अंगावर टाकताच त्या शुध्दीवर येत. अंगावर जेथे कुंकू पडलेले असे तेथे दत्ताचे भस्म लावताच तो क्षणार्धात मावळत असे. घरात गुरुचरित्र इ. ग्रंथांचे पारायण चालू करण्यात आले. पण वाचन संपताच पुन्हा कुंकू पडण्यास सुरुवात होई. अनेकांच्या उपायानंतर शेवटी बेळगावकडील डॉ. आर्. एम्. कलबर्गी यांना बोलावण्यात

\* पांडीचेरीच्या माताजींना दूध उतू जात असल्याचे त्यांची साडी ओढून सांगणारा निसर्गात्मा हा अशापैकी असून त्याने माताजींच्या चांगल्या (आध्यात्मिक) विचारामुळेच त्यांना ही मदत केली, हे उघड आहे.

आले. हे नामांकित एम.बी.बी.एस. डॉक्टर असून या विद्येच्या लहानपासूनच्या गोडीमुळे बगदाद येथे १२ वर्षे स्थायिक होऊन ही विद्या त्यांनी संपादन केली होती. (त्यांचे गुरु धारवाडचे रहिवासी आहेत.) त्यांनी आजपर्यंत गानरत्न पं. भीमसेन जोशी, महाराष्ट्र मंत्रिमंडळातील काही मंत्री यांचेवर यशस्वी उपचार केले होते. त्यांनी २५-९-१९७७ रोजी सायंकाळी ७-३० वाजता आपल्या कार्यक्रमास सुरुवात केली. पूजा मांडून डोळ्यास अंजन लावले. सौ. घाटे यांच्या पायाखाली दोन लिंबे मंत्रून देण्यात आले. विजेचे दिवे बंद करण्यात आले व डॉक्टर आपल्या गुरुचे मार्गदर्शन घेऊ लागले. त्यांना गुरुकडून असा आदेश मिळाला की गावाच्या ईशान्येस स्मशान आहे. त्या ठिकाणी बरोबर सव्वा दहा वाजता जाणे. त्याठिकाणी ४ ताईत व २ लिंबे पुरलेली आहेत. त्याप्रमाणे ते १०.१५ वा तेथे ४०-५० आसामी सह गेले. स्मशानात येताच डॉक्टरांनी परत डोळ्यास अंजन लावले. वस्तू ज्या ठिकाणी पुरल्या होत्या तेथे ४०० वर्षांपूर्वीपासूनचे एक थडगे आहे. त्याच्या पूर्वेस ह्या वस्तू दि. २७-७-१९७७ रोजी पुरण्यात आल्या होत्या. ही तारीख ज्या पिशाचाचा माध्यम म्हणून उपयोग करण्यात आला होता त्यानेच सांगितली. सहा फूट खोल खड्डा काढण्याचे काम रात्री १-३० पर्यंत चालले. सर्व वस्तू मिळाल्यानंतर श्री. घाटे यांच्या घराजवळ असलेल्या म्हसोबाच्या देवालयानजीक येऊन ताईत सोडण्यात आले. हे ताईत म्हणजे एक चौकोनी कागद, त्यावर अरबी लिपीत काही लेखन, श्री. व सौ. घाटे यांच्या बाहुल्या व घराचा नकाशा असे सर्व त्यात होते. तो कागद व वस्तू सिगरेटच्या चकाकीच्या कागदात गुंडाळून त्यावर एक बिब्बा ठेवून त्या वस्तू बांधण्यात आल्या होत्या, त्या वस्तू भिजू नयेत म्हणून त्यावर मेणाचा जाड थर बसवण्यात आला होता. डॉक्टर अरबी जाणणारे असल्यामुळे त्या लिखाणाचा अर्थ त्यांनी कथन केला. तो असा : १२ वर्षात संपूर्ण घराण्याचा नायनाट, श्री. व सौ. घाटे यांचा १ वर्षपर्यंत संपूर्ण नाश... थोडक्यात सर्व नष्टांश होणार होता. पत्रिकेखरीज बाकीचे सर्व नष्ट करण्यात आले. नंतर डॉक्टरांनी उतारा करून दिला. तो टाकण्यासाठी पाच इसम गेले. उतारा प्रथम १। किलो वजनाचा होता. पण गावाच्या बाहेर जाईपर्यंत तो २ ॥ किलो वजनाचा झाला. परंतु धाडसाने पूर्वी ठरलेल्या जागी तो पुरण्यात आला. या प्रयोगात जे लोक आहेत त्यांची नावे सांगण्यासाठी दि. ३०-९-७७ रोजी बेळगावला बोलाविले होते. श्री. घाटे इतर दोघांना घेऊन बेळगावला गेले. यावेळी डॉक्टरांनी नेलेल्या लिंबावर दोन पिशाचे नाचत असून ते सांगत नाहीत असे सांगितले. त्या पिशाचांना लाच म्हणून २ मीटर कापड देण्यात आले. नंतर त्यांनी नावे सांगितली. ही वेळ रात्री ९ ॥ ची होती. घरी आल्यानंतर चार दिवसांनी पुन्हा पूर्वीचेच प्रकार सुरू झाले. फोनने डॉक्टरांना येणेस सांगितले. पण ते टाळाटाळ करू लागले. दत्तभक्ती सोडून मांत्रिकांचा मार्ग धरल्याची

घाटे यांना खंत होती. पण परिस्थिती दत्ताकडे मन लागू देत नव्हती.

दुसरे दिवशी सकाळी सौ. घाटे यांच्या हातावर सिनेमा स्लाइडप्रमाणे या कटात सहभागी असलेल्या व्यक्तींची नावे झळकू लागली. ती नावे कुंकवाने उमटली जात. हा प्रकार नरसोबाच्या वाडीच्या हजारो लोकांनी पाहिला आहे. काही लोक यात बनाव असावा असे म्हणू लागले, तर काही हा जादूटोण्याचा प्रकार आहे असे म्हणू लागले. शेवटी कटातील व्यक्तीचा मुलगा बेळगावला जाऊन डॉक्टरांना भेटला. असता डॉक्टरांनी सत्य प्रकार सांगून ही बाब माझ्या हातात नसल्याचे सांगितले.

दिनांक ६-१०-७७ रोजी एक सुवासिनी सौ. घाटे यांना घरात आलेली दिसून आली. तिने सर्व सौभाग्यवतीचे अलंकार घातलेले होते. अंगावर हिरवे पातळ नेसलेले होते. सौ. घाटे यांना आज मी कुंकू लावणार आहे व ते पुसू नकोस असे तिने सांगितले व ती अदृश्य झाली. त्यावेळी सौ. घाटे यांच्या कपाळावर मोठे कुंकू, त्याखाली हळदीची टिकली, पोटावर स्वस्तिक, दोन्ही हातावर स्वस्तिक उमटले. दोन प्रहरी शिवलीलामृत वाचन झाल्यावर नमस्कार करण्यासाठी हात जोडले असता हातात गंध, फुले, तुळशी व डोक्यावर तांदूळ पडले. हा भगवती अंबाबाईने प्रसाद दिला आहे अशी सर्वांची समजूत झाली. याबाबत डॉक्टरांशी संपर्क साधला असता त्यांनी हे पिशाचाचेच खेळ असल्याचे सांगितले.

श्री. घाटे यांनी एकदा हिंदीत सौ. ना विचारले की आप कौन है ? तुम्हे क्या चाहिए ? तेव्हा सौ. घाटे म्हणाल्या की, हम कागवाडमे रहते है और मुझे ७ धान की रोटी चाहिए, और मैं जाना चाहता हूँ. हा प्रकार दि. १०-१०-७७ रोजी घडला. त्यादिवशी सकाळी व सायंकाळी मी जात आहे, आता संपले, अशी सौ. घाटे यांच्या हातावर अक्षरे उमटत होती. परंतु दि. १५-१०-७७ ला पूर्वीसारखेच प्रकार परत सुरू झाले. डोक्यात १० मिनिटाला काजळ लावल्याप्रमाणे बिंबा येऊ लागला. खोबरेल तेलाने ते पुसण्यात येत असे. अंगावर सुयाने भोके पडून रक्ताच्या चिळकांड्या उडत असत. नंतर डोक्यात चटणी पडू लागली. सौ. घाटे माशासारख्या तळमळत. परत डोक्याचे केस कापून पडणे, तोंडात शेण, राख, कोळसे येणे वगैरे प्रकार सुरू झाले. अनेक मांत्रिक लांबलांबून आणले, पण प्रकार कमी होण्याऐवजी जास्तच वाढले. अंगावरील कपडे रस्त्यावर, संडासात पडणे, झोपलेल्या स्थितीत बाहेर खाटेसह जाणे, तोंडामधून विष्टा पडणे, डोक्याच्या केसात विष्टा कालवली जाणे, जेवणाच्या पानात शेण येणे इ. प्रकार घडू लागले.

श्री. घाटे यांचे शेतीचेही नुकसान होत होते. आठ-दहा दिवस मोटार चालून परत जळायची. अशा प्रकारामुळे शेतीतील पीक वाळू लागले. शेवटी हजारो रुपये मांत्रिकासाठी खर्चून श्री. घाटे यांनी त्यांचा नाद सोडला व स्वतःच



मंत्रशास्त्रावरील पुस्तके मागवून त्यांचा अभ्यास व दत्तभक्ती चालू केली. व्रत व अनुष्ठान चालू केले. परिणामी २ फेब्रुवारी ७८ राजी भानामती बंद झाली. तथापि पुन्हा २० जुलै रोजी ती चालू झाली. पण त्यांनी आपला मार्ग सोडला नाही. मिरजेच्या नामवंत डॉक्टरांनी वंशवृद्धी होणार नाही, असे सांगितले होते. पण वंशवृद्धी झाली. ही दत्तप्रभूची कृपा असे ते मानतात. नरसोबा वाडी हे पवित्र व जागृत स्थान असताना त्यांच्या पूजाऱ्यांच्या घरी ही भानामती कशी ? या प्रश्नाचे श्री. घाटे यांनी असे उत्तर दिले की आपले पूर्वजन्माचे कर्म म्हणून हे पापी आत्मे येथे आले व माझा भोग संपल्यानंतर ते गेले.

वरील घाटे यांच्या कुटुंबातील भानामतीमध्ये व ३ व्या प्रकरणातील रजपूत यांच्या कुटुंबातील भानामतीमध्ये विलक्षण साम्य आढळून येते. अशी भानामतीची प्रकरणे दुष्ट पिशाचामुळे घडतात अशी समजूत असली तरी ही पिशाचे मृतात्मे नसून बहुधा निसर्गात्मेच असतात. तेच असले प्रकार करू शकतात. पूर्वी म्हटल्याप्रमाणे त्यांना नैतिक जाणीव नसल्यामुळे ते जसे भयंकर यातना देणारे प्रकार करू शकतात, तसे 'सुवासिनी' बनून कुंकू लावणे, गंधफुलांचा 'प्रसाद' येणे, असले शुभ व मंगलकारक दिसणारे प्रकारही करू शकतात. १४ व्या प्रकरणातील माळवदे कुटुंबाला एकीकडे ते शेकडो रुपये देत होते तर दुसरीकडे त्याच घरात दुर्गंधीयुक्त लघवी, विष्टाही टाकत होते. ते केवळ मानवाच्या वृत्ती प्रतिबिंबित करीत असतात. घाटे यांनी म्हटल्याप्रमाणे ते फक्त माणसांची कर्मफळे देण्यासाठी येतात. (पृ. ३६१-२) वरील तळटीप पाहा.) ही गोष्ट अशा प्रकरणांच्या पाश्चात्य संशोधकांनाही मान्य करावी लागली आहे. उदा. ज्यांना ते झपाट्यात किंवा त्रास देतात त्यांना त्यांच्या इच्छेविरुद्ध किंवा त्यांच्या सहकार्यांशिवाय ते झपाटू किंवा त्रास देऊ शकत नाहीत, असे त्यांचे मत बनले आहे.<sup>१५५</sup> 'कागवाडच्या भानामती' ने शांताच्या मनात तिच्या इच्छेविरुद्ध ठाण मांडले नव्हते-तिच्या इच्छेनेच ठाण मांडले होते. [म्हणून प्रस्तुत लेखकाने शांताला "विष्टा पडण्याच्या घटनेशी स्वतःचे नाते जुळविणे जणू आवडते" असे म्हटले आहे. (पृ. २३) म्हणून प्रत्येक अन्नपदार्थ उघडून "यात विष्टा आहे का पाहू" असे ती म्हणायची व त्यात विष्टा पडलेली हटकून दाखवायची ! पण दूध उघडायला तिच्या बहिणीने मनाई करताच त्यात मात्र विष्टा पडलेली दिसली नाही ! (पृ. ५) अशारीतीने या 'चमत्कारा' ची उपपत्ती देता येते.] हे सहकार्य शांताच्या विस्थापित मनामुळे (म्हणजे तिच्याच चालू-प्रारब्ध-कर्मांमुळे) निसर्गात्म्यांना मिळाले, तर सी. घाटे यांच्या बाबतीत त्यांच्या पूर्व-संचित-कर्मांमुळे त्यांना ते मिळाले. जेथे भानामतीचे लक्ष्य व्यक्ती ऐवजी कुटुंब असते (उदा. प्रकरण ५), किंवा व्यक्ती व कुटुंब ही दोन्ही असतात (बाकीची प्रकरणे) तेथे 'सामूहिक कर्म' हेच भानामतीचे कारण ठरू शकते. कारण दोन्ही ठिकाणी सहानुभूतियुक्त स्पंदने

(sympathetic vibrations) हीच निसर्गात्म्यांना आकर्षित करणारी साधने असतात. 'करणी' लाही तीच कारणीभूत माध्यम असतात.

मृतात्म्याऐवजी निसर्गात्मेच अशा घटनांना जबाबदार असण्याचे दुसरे कारण म्हणजे मानवाला भुलविण्यासाठी वाटेल ती (मायावी) रूपे घेण्याचे त्यांचे सामर्थ्य होय. श्री. घाटे यांच्या घरच्या भानामतीत सर्व सौभाग्यालंकार घातलेल्या सुवासिनीचे रूप त्यांनी घेतले, तर रेठरे बु ॥ च्या भानामतीत ते खोलीत 'दही मागणारी' स्त्री (पिशाच) बनले. कवठेगुलंदमध्ये शेताच्या रस्त्यात आणासाहेब पाटलांच्या गड्याच्या पोरग्याला 'पिस्तूल दाखविणारी माणसे' बनले. पाश्चात्य देशातील काही भानामती प्रकरणात ते 'शिंगे असलेले राक्षस' ही बनले असल्याचे आढळून येते. आपल्याकडे साधकांना भेडसावणारी भयानक रूपे ते नेहमीच घेताना आढळतात. उदा. अंजनविद्येची साधना (वेदगंगा) नदीच्या काठी (हुन्नरगी गावाजवळ) करीत असताना रात्री अक्राळविक्राळ राक्षस आपल्या अंगावर धाऊन आल्यामुळे आपली भीतीने गाळण उडाली (धोतरात विधी झाला) असा आपला अनुभव प्रस्तुत लेखकाला जयसिंगपूर (उदगाव) च्या बापू पंडीत या प्रसिध्द अंजनविद्यातज्ञांनी सांगितला आहे. सोलापूरच्या पंडीत सुदर्शन यांनी बीजमंत्राचा जप करताना ७२ हजार जप पूर्ण झाल्यानंतर हातात भाले घेतलेले राक्षसासारखे भासणारे, त्या भाल्यावर मानवी मुंडकी लटकत असून त्यातून रक्त ठिबकत आहे, असे प्राणी अंगावर धाऊन येत असलेले दिसले, असा आपला अनुभव मंत्रतंत्र विषयावरील आपल्या पुस्तकात नमूद केला आहे.<sup>१५</sup> (प्रस्तुत लेखकाकडे असलेच अनुभव आलेल्या इतर अनेक साधकांची निवेदने आहेत स्थळाअभावी ती देता येत नाहीत.) भुवर्लोकातील हे निसर्गात्मे किंवा देवता माणसांना भिवविण्याची दोन कारणे लेडबीटर यांनी आपल्या Astral Plane (भूवर्लोक) या पुस्तकात सांगितली आहेत. एक, सामान्यतः मानवजातीशी असलेले त्यांचे नैसर्गिक वैर, व दुसरे, अलीकडच्या मानवातील, सामूहिक पातळीवर दिसून येणारी, क्षुद्रवृत्ती किंवा वैचारिक अप्ररालभता व स्वार्थीवृत्ती. भुवर्लोकातील देवतांवर भूलोकातील माणसांच्या वृत्तीचा व विचारांचा परिणाम होत असतो. त्याचे प्रतिबिंब त्यांच्यात पडत असते. (अशावेळी त्यांना elementals म्हणतात.) येथील माणसे अविचारी, स्वार्थी व दुष्ट झाली तर त्या देवताही तशाच बनतात. सत्प्रवृत्त माणसांच्या वाटेला त्या न जाण्याचे कारण, त्यांना त्यांच्यापासून त्रास न होण्याचे कारण, त्यांची स्पंदने (evil vibrations) सत्प्रवृत्त लोकात आढळत नाहीत, हेच आहे. पूर्वीच्या काळी निसर्गात्मे व देवता माणसांना मदत करीत असत याचे हेच (पूर्वीच्या लोकांची सद्भावना) कारण असल्याचे लेडबीटर यांनी म्हटले आहे.<sup>१६</sup> म्हणून जेव्हा भेडसावणारी रूपे घेऊन साधकांच्या अंगावर ते धावून येतात, तेव्हा धैर्याने



(आध्यात्मिक विचाराने) त्यांना तोंड दिल्यास ते आपोआप मागे सरतात असे त्यांनी म्हटले आहे.\* (आपल्या गुरुंनी आखून दिलेल्या रिंगणाच्या बाहेर, भिऊन धोतरात विधी केला तरी, आपण गेलो नाही, म्हणून वाचलो, असे बापू पंडीतांनी प्रस्तुत लेखकाला सांगितले आहे.) सामान्य लोकांना सुध्दा कधीकधी मोहक रूपे घेऊन भुलवतांना ते आढळून येतात. प्रस्तुत लेखकाला अलीकडे घडलेली अशाप्रकारची तीन उदाहरणे माहीत असून ती उद्बोधक असल्याने येथे देतो.

### विविध रूपांनी भेटणाऱ्या निसर्गदेवता

संकेत (जि. बेळगाव) येथील सौ. सुमन महादेव भोसले, R.M.P. या वैद्यकीय व्यवसाय करणाऱ्या महिलेच्या घरी दि. २० ऑक्टो. २००१ रोजी शारदीय नवरात्राच्या चौथ्या दिवशी घडलेली ही घटना आहे. नवरात्राचे देव बसवलेले होते. संध्याकाळचे पावणेसहा वाजले होते. सौ. भोसले यांची पी. यू. सी. पहिल्या वर्गात शिकणारी टिना (पद्मावती) ही मुलगी सोप्यात खुर्चीवर पुस्तक वाचत बसली होती. अशावेळी 'आकुंदी जोगवा' असे शब्द तिच्या कानावर पडले. एक स्त्री जोगवा (यल्लम्मा देवीची भिक्षा) मागायला आली आहे असे वाटून टिना आत गेली व तिला वाढण्यासाठी ओंजळीतून तांदूळ घेऊन आली. एव्हाना ती स्त्री, जिचा फक्त तिने आवाज ऐकला होता, पूर्वेकडील पायऱ्या चढून उत्तरेकडील दरवाज्यातून घरात आली होती. तिने हिरवी साडी व हिरवी चोळी परिधान केली होती. हातात हिरव्या बांगड्या घातल्या होत्या. गळ्यात जुन्या पध्दतीचे ५-६ सोन्याचे दागीने घातले होते. तिला पाहताच ही मठ गल्लीतील आईच्या ओळखीची स्त्री आहे, हे टिनाने ओळखले व तिला खुर्चीत बसायला सांगितले. ती म्हणाली, "ती माझी जागा नव्हे, मी माझ्या जाग्यावर जाते. तू मला शिवू नकोस. तू अस्पृश्य (विटाळशी) आहेस." तिने टिनाकडून तांदूळ घेतले. आश्चर्य म्हणजे तिच्या हातात तांदूळ (वरुन) पडताच ते एकदम लाल झाले. नंतर ती म्हणाली, "तू बाजूला उभी राहा. मीच आत जाऊन हळद-कुंकू घेते." ती देव्हान्याच्या खोलीत गेली. इतक्यात टिनाची आई (सौ. भोसले) बाहेरून आली. टिनाने तिला "तुझ्या ओळखीची मठ गल्लीतील x x बाई आली आहे. देव्हान्यात हळद-कुंकू घेत आहे." असे सांगितले. सौ. सुमन भोसले आत आली व तिने पाहिले. ती मठ गल्लीतील बाई नव्हती हे तिने ओळखले. ती पाठमोरी असली तरी तिचा पदर डोक्यावरून खाली पडला असल्यामुळे तिचे मोकळे केस सुमनला दिसले. मठ गल्लीतील बाईचे केस कुरळे होते. या बाईचे

\* देवतांना सामान्यतः माणसांनी आपली सेवा-चाकरी-पूजा इ. सोडून ब्रह्मज्ञान मिळविण्याच्या मार्गे लागवे हे आवडत नाही (म्हणून त्यांच्या मार्गात ते अडथळा आणतात) असे उपनिषदात म्हटले आहे. (उदा. बृ.उप. ४.४.१०)

केस सरळ होते. ती बाई कुंकू लावून घेत होती. इतक्यात सुमनच्या नजरेसमोरच, तिला ती पाहात असतानाच ती बाई एकदम अदृश्य झाली. या प्रकाराने सुमन इतकी घाबरली की तिला कापरे भरले. ती भीतीने थरथरू लागली. पण आपण भ्यालो तर मुलीची अवस्था भीतीने जास्तच वाईट होईल, हे ओळखून स्वतःला सावरून मुलीला तिने बाहेर आणले. (टिनाला बाजूला उभे राहण्यास त्या बाईने सांगितले असल्यामुळे ती स्वयंपाक घरातील बर्षाने कटूट्याजवळ लांब उभी होती.) ती बाई डोळ्यासमोरच अदृश्य झाली असली तरी न जाणो शेजारच्या झोपण्याच्या खोलीत असेल असे वाटून सौ. सुमन भोसलेने बेडरूममध्ये जाऊन पाहिले. तिथे ती नव्हती. तेथून दुसरीकडे जाण्याच मार्गच नव्हता. ती देव्हान्याच्या खोलीत ज्या ठिकाणी उभी होती, तेथे नंतर कुंकवाच्या पाण्यात पाय बुडवल्यानंतर उठावीत तशी पाउले फरशीवर उमटली होती. तसेच पावलांच्या मागच्या बाजूला अत्यंत सुबक अक्षरात तांदळाचे दाणे व्यवस्थित मांडून तयार केलेले 'मुलीस धोका' असे शब्द आढळले. ही अक्षरे तांदळाने इतकी व्यवस्थित रीतीने तयार केली होती की ती तयार करण्यास कमीत कमी अर्धा तास तरी लागला असता. पण ती बाई देव्हान्याच्या खोलीत दोन-तीन मिनिटापेक्षा जास्त वेळ नव्हती. तेवढ्यातच ती अदृश्य झाली होती. यावेळी सहा वाजले होते. म्हणजे वर वर्णन केलेला सर्व घटनाक्रम १५ मिनिटात घडला होता.

नंतर मठ गल्लीतील त्या बाईला भेटण्यास मुद्दाम गेले असता ती बाई नवरात्र बसलेली आढळली. म्हणजे ती चार दिवसापासून बाहेर कुठेच गेली नव्हती. भोसल्यांच्या घरी ती येण्याचा प्रश्नच नव्हता. अदृश्य झालेल्या बाईने घरात प्रवेश केल्यानंतर जे भाषण केले ते वर दिलेच आहे. याखेरीज ती टिनाला एवढेच म्हणाली की, "तू शाळेला जातेस ना ? उद्यापासून जाऊ नको." तिने असे म्हटल्यामुळे व 'मुलीस धोका' असे तांदळाने शब्द लिहिलेले आढळल्यामुळे मुलीचे कॉलेज शिक्षण बंद करण्यात आले.\*

नंतर एके दिवशी टिनाला पाहटे स्वप्न पडले की तिला एक बाई कुंकू

\* निसर्गात एखाद्या जिवंत ओळखीच्या व्यक्तीचे रूप घेऊन फसवू शकतात, (येथे तसे घडले नसले तरी,) याची अनेक उदाहरणे सापडतात कॉलिन विल्सन या लेखकाने *Mysteries* मध्ये पृ. ५७४ वर असले एक उदाहरण दिले आहे. प्रस्तुत लेखकाच्या चुलत पुतण्यास (श्री. मारुती गळतगे यास असा एक १९९४ साली अनुभव आला आहे. निपाणीच्या 'किंगो फार्मास्युटिकल्स' च्या मालकाची बायको स्वयंपाक घरात स्वयंपाक करीत असताना त्याचवेळी लॅबमध्ये टेस्टिंग करीत असलेली मारुतीस दिसली. एका क्षणात ही येथे कशी आली म्हणून तो लॅबमध्ये आत गेला, तेव्हा ती ए.सी. रूमकडे जात असलेली दिसली. तिच्या पाठोपाठ तोही ए.सी. रूममध्ये गेला. पण तेथे कोणीच नव्हते, ही घटना 'कार्मिक' ठरली. एका वर्षात कोट्यवधी रुपयांची ती फॅक्टरी बंद पडली. विल्सनने दिलेल्या इंग्लंडमधील उदाहरणातील ज्या 'फार्म हाऊस' मध्ये अशीच घटना घडली, ते 'फार्म हाऊस' ही मालकाला नंतर सोडावे लागले. नंतर ते पाडण्यात आले.

लावत आहे. आश्चर्याची गोष्ट म्हणजे तिच्या आईला तिच्या कपाळावर प्रत्यक्ष कुंकू दिसले ! (टिना कपाळाला कुंकू कधी लावून घेत नसे. टिकली चिकटवीत असे.) इतकेच नव्हे तर ते पाहता-पाहता मोठे होऊ लागले ! टिनाला तिची आई हाका मारून उठवू लागली, तेव्हा “थांब, मला कुंकू लावत आहेत.” असे ती अर्धवट झोपेतच म्हणाली. टिना कपाळाला कुंकू लावत नसल्यामुळे हा खरा ‘चमत्कार’ होता. भूवल्लोकातील (स्वप्नातील) कुंकू लावण्याची घटना भूलोकात (स्थूल पातळीवर) मूर्त रूपाने उतरू शकते, हे ही घटना सिध्द करते.\* (स्वप्न ही भूवल्लोकातील घटना असून स्वप्नात - व मरणोत्तर अवस्थेत-मनुष्य लिंगदेहाने भूवल्लोकात वावरत असतो.)

देव्हाराच्या खोलीत त्या स्त्रीची कुंकवाच्या पाण्यात उमटलेली पाउले तशीच कित्येक दिवस जतन करून ठेवण्यात आली होती. (प्रस्तुत लेखकाने ती पाहिली आहेत.) मनुष्य मेल्यानंतर त्याचा आत्मा भूवल्लोकात (Astral Plane) लिंगदेहाने काही काळ वास करतो. मनुष्य झोपल्यानंतर (स्वप्नात) भूवल्लोकात जातो. निसर्गातले सुध्दा याच भूवल्लोकाचे रहिवासी असतात. त्यामुळे त्यांच्या परस्पर भेटी होऊ शकतात. एखाद्या व्यक्तीच्या (स्वप्नातील) लिंगदेहावर (उदा. कपाळावर) भूवल्लोकातील व्यक्तीने (तिच्या लिंगदेहाने) काही परिणाम केला (उदा. कुंकू लावले) तर तो प्रत्यक्ष भूलोकात दृग्गोचर होऊ शकतो, याचे हे उदाहरण आहे. (याला इंग्रजीत Repurcussion म्हणतात.) निसर्गात्म्याचे एखाद्या जोगतिणीच्या रूपाने प्रकट होणे, फरशीवर कुंकवाच्या पाण्यात पाउले उमटविणे, हे भूवल्लोकातील, सूक्ष्म पातळीवरील, भूलोकात, स्थूल पातळीवर उतरून भौतिक परिणाम घडवून आणणे असून भानामतीत हे नेमाने घडत असते. (अंगावर बिब्याच्या फुल्या उठणे, अंगातून सूया, दाभण इ. निघणे असे जे प्रकार घडताना कधीकधी आढळतात ती याचीच उदाहरणे आहेत.‘‘‘) रिक्त हातातून भस्म, गुलाल, बेल, रुद्राक्ष इ. वस्तू काढणे हा ‘चमत्कार’ याच प्रकारात मोडतो.‘‘‘ (प्रस्तुत लेखकाने अंगात सोमनाथांना संचार झाल्यावेळी हा ‘चमत्कार’ करणाऱ्या अनुराधाताईंना,

\* असाच ‘चमत्कार’ गुलाबराव महाराज यांच्या चरित्रात आढळतो. महाराजांचे शिष्य नारायण पंडीत यांच्या स्वप्नात महाराज, त्यांच्या निर्याणानंतर एकदा आले व त्यांनी पंडितांना भस्माची एक पुडी दिली. ते जागे होऊन पाहतात तो प्रत्यक्ष त्यांच्या उशीजवळ ती होती. (श्री गुलाबराव, चरित्र, उत्तरार्ध, पृ. ३९५) चिले महाराजांनी श्री. तानाजी जाधव या आपल्या शिष्याला दररोज सलग पाच दिवस स्वप्नात येऊन डायब्लिंग शिकवले. (जाधव कोल्हापूरला एस.टी.त कंडक्टरची नोकरी करीत होते.) सहव्या दिवशी त्यांनी प्रत्यक्षात उत्तमरीतीने एस.टी. चालवली ! गीअर कसे घालावेत हे महाराजांनी स्वप्नात शिकवल्यामुळे ते प्रत्यक्षात सराइताप्रमाणे गीअर घालू लागले ! (परब्रह्मगुरु चिलेदेव पृ. १७-८)

म्हणजे 'सोमनाथां' ना, संचाराच्या वेळी 'या वस्तू आपण कुठून आणता?' असे एकदा विचारले असता 'पृथ्वीवरीलच, पण अन्य ठिकाणाहून' असे उत्तर दिले होते.) मुंबईचे डॉ. अजगावकर यांच्या पत्नी ललिताबाई वारल्यानंतर आपले बंधू श्री. सामंत यांच्या स्वप्नात आल्या आणि म्हणाल्या की 'तुम्हांस संतती होण्यासाठी मी देवाजवळ धरणे धरले आहे. माईस (सौ. सामंतांना) डॉ. करंडे यांस दाखवा.' सौ. माई सामंतांच्या गर्भाशयाची वाढ झालेली नसल्यामुळे (Infantile uterus) त्यांना मूल होत नव्हते. पण वरील स्वप्नानंतर माईना अधूनमधून डॉ. करंडे यांना दाखवल्यानंतर पाच महिन्यात त्यांच्या गर्भाशयाची पूर्ण वाढ होऊन 'नॉर्मल' रीतीने त्यांना गर्भधारणा झाली.<sup>१०</sup> हा 'चमत्कार' देवाने म्हणजे निसर्गदेवतानी भुवर्लोकातून ललिताबाईंच्या पुण्यकारक 'संकल्पा' मुळे (प्रार्थनेने) केला. निसर्गात्म्यांना काही अशक्य नाही. भानामतीत ते जसे वाईट परिणाम (त्रास देण्याचा) करू शकतात, तसा चांगला परिणामही करू शकतात. (ललिताबाईंनी २५ वर्षे अखंड वटसावित्रीचे व्रत निष्ठेने केले होते. माणसे आपले 'पुण्य' अशारीतीने दुसऱ्यांना देऊ शकतात.)

वरील नरसोबावाडीच्या भानामतीतील प्रकरणात सौ. घाटे यांना 'तुला कुंकू लावणार आहे, ते पुसू नकोस' असे म्हणणारी 'सुवासिनी' स्त्री व सौ. भोसले यांच्या टिना या मुलीला स्वप्नात कुंकू लावणारी (व प्रत्यक्षात ते उमटवणारी) व देव्हान्याच्या खोलीत कुंकू लावून घेणारी स्त्री यांच्यात कुंकू लावण्यापूरतेच साम्य नाही. दोघीही सौभाग्यालंकार घातलेल्या व हिरवे पातळ नेसलेल्या होत्या, हे साम्य महत्वाचे आहे. कागवाडच्या भानामतीत शेजारच्या भिंतीला विष्ठा थापणाऱ्या स्त्रीनेही हिरवे पातळ नेसले होते, हे येथे आठवावे. निसर्गात्म्यांचा माणसांना भुलविण्याचा हा एक सामान्य प्रकार आहे. कागवाड, नरसोबावाडी व संकेश्वर या तिन्ही ठिकाणी ही भुलवणूक करण्यात 'हिरवे पातळ' हे एक सामान्य सूत्र असले व दोन ठिकाणी ते 'सौभाग्यालंकार' व 'कुंकू' हे असले, तरी उद्दिष्टे वेगवेगळी होती. कागवाडच्या भानामतीत 'करणी करणारी कोणी स्त्रीच आहे' अशी तेथील लोकांची कल्पना करून देणे, नरसोबावाडीत 'फुले, गंध याचा 'प्रसाद' देणारी साक्षात भगवती अंबाबाई आहे' अशी घाटे कुंटुंबीयांची कल्पना करून देणे व संकेश्वरात 'कुंकूवाच्या पाण्यात पावले उमटवून व 'मुलीस धोका' अशी तांदळांने अक्षरे लिहिणारी व 'अदृश्य होणारी' ही आपली कुलस्वामीनी लक्ष्मीच आहे' अशी भोसले पतीपत्नींची कल्पना करून देणे, ही ती उद्दिष्टे होती. (स्वतः श्री. व सौ. भोसले यांनी, ही जोगतिणीच्या रूपाने नवरात्रात आपल्या घरी आलेली आपली कुलस्वामिनी साक्षात लक्ष्मीच आहे, अशी आपली कल्पना झाली असल्याचे प्रस्तुत लेखकाजवळ नंतर बोलून दाखवले आहे.) पण तिन्ही ठिकाणी निसर्गात्म्यांचा खरा उद्देश मात्र वेगळाच होता. कागवाडची भानामती मुळात शांताच्या विस्थापित मनातून निर्माण झाली

होती व तिला शांताची कागवाडमधून सुटका करावयाची होती; आणि शेवटी ती सुटका झाली. नरसोबावाडीच्या भानामतीला (कोणा शत्रूचे निमित्त करून) घाटे कुटुंबाचे पूर्वकर्माचे-संचित कर्माचे-फळ चुकते करावयाचे होते आणि ते केल्यानंतर ती नाहीशी झाली. संकेतचरची भानामती टिनाच्या विस्थापित मनातून निर्माण झाली होती. तिला कॉलेज शिक्षणाच्या जोखडातून मुक्त करावयाचे होते; आणि ते काम तिने केले. टिना कॉलेजचा अभ्यास करित असताना ही भानामती घरात प्रकटली व टिनाला 'उद्यापासून शाळेला जाऊ नको' म्हणाली, ही गोष्ट अर्थपूर्ण आहे. पण तेवढ्यावरून तिच्या आई-वडीलांनी तिचे कॉलेज शिक्षण बंद केले नसते. म्हणून 'मुलीस धोका' असे नवरात्र बसलेल्या देवासमोर तांदळात अक्षरे लिहून दाखवण्याचा दुसरा एक 'चमत्कार' त्या भानामतीला करावा लागला. हा 'चमत्कार' होता; कारण जे काम करायला अर्धा तास लागला असता ते काम तिने काही मिनिटातच केले होते. असा चमत्कार निसर्गात्म्यांच्या हातचा मळ आहे, हे ब्लॅन्व्हेटस्की यांचे एक डझन टावेल १५-२० मिनिटात एका निसर्गात्म्याने हातांनी सुईदोऱ्यांनी शिवावे तसे व्यवस्थित शिवले होते, या वस्तुस्थितीवरून यापूर्वीच वाचकांना माहीत झाले आहे. (पृ. ३४८) नंतर त्या मुलीला कोणताच धोका कधीच निर्माण झाला नाही, या वस्तुस्थितीवरून कॉलेजशिक्षण चालू ठेवणे हाच एकमेव धोका असल्याचे त्या भानामतीला-म्हणजे टिनाच्या विस्थापित मनाला-या 'चमत्कारा'तून दाखवून द्यावयाचे होते, हे स्पष्ट आहे. कॉलेजचे शिक्षण हा 'धोका' आहे, हे त्या मुलीखेरीज-तिच्या विस्थापित मनाखेरीज-इतर कोण मान्य करील? एखाद्या मुलाच्या (विस्थापित) मनातून (मग ती मुलगी १०-११ वर्षांची कागवाडची शांता असो, ८ वर्षांची कडेगावची तनुजा असो, अगर संकेतचरची १६ वर्षांची टिना असो) भानामतीच्या रूपाने असे 'चमत्कार' युक्त नाट्य घडू शकते, यावर सहसा कोणी विश्वास ठेवणार नाही. पण पाश्चात्य देशातही अशाच प्रकारची भानामतीची प्रकरणे घडली असून त्यांचा अभ्यास करून जर्मनीच्या हॅन्स बेंडर या भानामतीच्या संशोधक शास्त्रज्ञाने पुढीलप्रमाणे या संदर्भात आपले मत व्यक्त केले आहे. "मानव, त्याचे निसर्गातील स्थान व खुद्द निसर्ग यांचे आकलन विस्तारित प्रमाणात व्हायचे झाल्यास (म्हणजे यागोष्टी पूर्ण समजून घेण्यासाठी) भानामतीच्या 'चमत्कारा'चा अभ्यास करणे हाच एकमेव राजमार्ग (royal road) आहे."<sup>१०२</sup>

दुसरे उदाहरण कशामुळे घडले हे कळायला मार्ग नाही. हे प्रकरण नाजूक असल्यामुळे नावे प्रकट करता येत नाहीत. गळतगा (ता. चिक्कोडी, जि. बेळगाव) या गावाचे दोन तरुण रात्री १० वाजता भोज गावाकडे मोटर-सायकलीने चालले होते. भोज गळतगाहून सात किलोमीटर अंतरावर आहे. तीन कि.मी. अंतर गेल्यावर त्यांना एक तरुण स्त्री भोजेच्या दिशेने रस्त्याने चालत जात असलेली दिसली. तिने

त्यांना हात केल्यामुळे त्यांनी मोटर-सायकल थांबवली. आपल्याला भोजेला जावयाचे असून गाडीवर घ्यावे अशी तिने त्यांना विनंती केली. त्यांनी मग तिला दोघांच्या मध्ये बसवले व ते निघाले. थोडे अंतर गेल्यावर तिने आपल्याला लघवी करायची असल्यामुळे मोटार सायकल थांबविण्याची ती हाकरण्याच्यास विनंती केली. त्याने मोटारसायकल थांबवली. ती स्त्री रस्त्याच्या बाजूला पाठीमागे गेली आणि पाठीमागच्या सीटवर बसलेला तरुणही तिच्या पाठीमागून गेला. मोटर सायकल हाकरणारा तरुण मनात काय समजायचे ते समजला व त्यांची परत येण्याची वाट पाहत राहिला. पण बराच वेळ वाट पाहूनही ते परत न आल्यामुळे तो शेवटी कंटाळून निघून गेला. दुसरे दिवशी सकाळी परत गळतग्याला आल्यानंतर आपल्या मित्राला भेटायला त्याच्या घरी गेला असता आदल्या रात्री त्याच्याबरोबर गेलेला तो परत आलेला नाही, असे घरच्या लोकांनी त्याला सांगितले. आता मात्र त्याला घरच्या लोकांना घडलेली हकीकत सांगण्यावाचून गत्यंतर नव्हते. नंतर त्याचा शोध घेतला असता जेथे मोटरसायकल त्यांनी थांबवली होती त्या ठिकाणाहून पूर्वेकडे असलेल्या एका खड्ड्यात तो बेशुध्द पडलेला आढळला. त्याने नंतर सांगितले की ती स्त्री त्या खड्ड्याजवळ गेल्यानंतर त्या खड्ड्यावरून हवेतून चालत गेली व तो प्रकार पाहून आपण भयंकर घाबरलो. पुढे काय झाले हे मला माहीत नाही, असे तो म्हणाला.

तिसरे उदाहरण प्रस्तुत लेखकाच्या चिरंजीवाचा वर्गमित्र श्री. अमृत मगदुम (वय ३५) याचा आहे. हा तरुण २००२ साली एप्रिलमध्ये कारदगा या भोजेच्या उत्तरेकडील गावच्या उरुसाचे मित्राकडील जेवण जेवून मोटरसायकलीवरून भोज येथील आपल्या मळ्यातील घराकडे रात्री १२ ॥ वाजता येत होता. मळा भोजेच्या दक्षिणेला गावापासून ३ कि.मी. अंतरावर आहे. तो भोज गाव ओलांडून दक्षिणेच्या रस्त्यावर अर्ध्या कि.मी. अंतरावर आला असता त्याला रस्त्यात एक तरुण स्त्री त्याच दिशेने चालत जात असलेली दिसली. तिने त्याला थांबवले व आपल्याला साळोख्यांच्या मळ्याला जायचे असून तेथपर्यंत गाडीवर घेण्याची विनंती केली. (साळोख्यांचा मळा भोजेहून दक्षिणेस २ कि.मी. अंतरावर आहे.) त्याने तिला आपल्या गाडीवर घेतले व तो निघाला. दोघेही बोलत अर्धा-पाऊण कि.मी. अंतरापर्यंत आले असता ती स्त्री धावत्या गाडीवरून पाठीमागच्या सीटवरून जागच्याजागी नाहीशी झाली. या अकल्पित प्रकाराने त्याची भीतीने गाळण उडाली. त्याने मोटारसायकल भरधाव मारली व मळ्यापर्यंत ती आपण कशी आणली हे आपल्याला कळाले नाही, असे तो नंतर म्हणाला. घरात येताच तो जमिनीवर धाडकनू पडला व काही वेळ काहीच बोलू शकला नाही. भीतीने त्याने पँटमध्ये लघवी केली होती. (ही गोष्ट त्याच्या पत्नीने प्रस्तुत लेखकाला सांगितली.) या

प्रकरणातील एक विशेष 'चमत्कार' असा की-आणि तो अमृत मगदुमने मुद्दाम प्रस्तुत लेखकाला सांगितला-ज्यावेळी ती स्त्री रस्त्यात दिसली त्यावेळी आपण रात्री प्रवास करीत आहोत याचे आपल्याला भानच राहिले नाही. भरदुपार असल्याचे व सर्व आसमंतात चक्रे ऊन पसरल्याचे आपल्याला दिसले, असे तो म्हणाला.

वरील दोन प्रकरणातील व्यक्तींना आपल्याला 'पिशाच' भेटले असल्याची खात्री झाली असली तरी ही पिशाचे म्हणजे निसर्गात्मचे होते. हा माणसांना भुलविण्याचा त्यांच्या नित्याच्या खेळाचाच एक खोडकर प्रकार होता. रात्रीच्या वेळी दुपार असल्याचा भास निर्माण करणे हा खेळ निसर्गात्म्यांचाच असून तो अपवादात्मक आहे, असे समजण्याचे कारण नाही. असे अनुभव इतर अनेकांना आले असून पुढील काही उदाहरणे या गोष्टीची साक्ष देतात.

### अस्तित्वात नसलेल्या ओढ्यात अंधोळ

शांती आश्रम, भद्रन (आनंद), गुजरात येथील स्वामी कृष्णानंद (यांना आपण या ग्रंथात यापूर्वी अनेकदा भेटलो आहोत) १९५२ साली एका बुधवारी गिरनार पर्वत चढत होते. ३००० पायऱ्या चढल्यानंतर जैन मंदिरे लागतात. तेथे थोडी विश्रांती घेऊन अंबाजीच्या मंदिराकडे अंदाजे ५०० पायऱ्या चढून ते गेले असतील, तोच एक अरण्या खात्यातील कामगार त्यांना भेटला. त्याने एका वाकड्या वळणाच्या रस्त्याकडे बोट करून म्हटले की "दोन फलांगावर एक छोटे शंकराचे मंदिर असून तेथे थोडा वेळ घालवणे तुम्हाला आवडेल." कृष्णानंदांना तेथे जावेसे वाटले. ते त्या रस्त्याने गेले. खरोखरच ३०० फूटावर एक शिवालय गर्द झाडीमध्ये होते. जवळच एक शुध्द पाण्याचा ओढा वाहत होता. कृष्णानंदांनी त्या ओढ्यात अंधोळ केली व शिवालयात जप करण्यासाठी ते बसले. जप करून झाल्यानंतर ते ताजेतवाने झाले व आलेल्या रस्त्याने परत फिरले. एका तासाने ते अंबाजीच्या मंदिराजवळ पोहोचले. तेथे थोडा वेळ त्यांनी विश्रांती घेतली. मंदिराचा पुजारी आलेल्या पाहुण्याबरोबर बोलत बसला होता. त्यांच्या बोलण्यावरून तो दिवस ते चुकीने गुरुवार असल्याचे समजत होते, हे त्यांच्या लक्षात आले व त्यांची चूक त्यांनी त्यांच्या निदर्शनास आणून दिली. आज गुरुवार नसून बुधवार आहे, असे त्यांनी सांगितले. तेव्हा ते थट्टेने म्हणाले की महाराजांचे कॅलेंडर एक दिवसाने मागे आहे असे दिसते. त्यांच्याशी अधिक वाद न घालता ते तेथून उठले. नंतर रस्त्यात भेटलेल्या लोकांना त्यांनी 'आज कोणता वार आहे ?' असे विचारले. ते म्हणाले, 'गुरुवार.' ते बुचकळ्यात पडले. खात्री करून घेण्यासाठी पुन्हा त्यांनी पुढे भेटलेल्या लोकांना तोच प्रश्न केला. त्यांनीही गुरुवार असल्याचे म्हटले. आता मात्र त्यांची खात्री झाली की आपण त्या शिवालयात २४ तास घालवले आहेत, पण आपल्याला

त्याची जाणीव नाही ! या विचाराने ते अस्वस्थ झाले व पुन्हा त्या शिवालयाचा त्यांनी शोध घेतला. पण ते शिवालय त्यांना सापडले नाही ! तिथल्या कामगारांना त्यांनी त्या शिवायलाबद्दल विचारले, तेव्हा त्यांनी असले शिवालय येथे नसल्याचे त्यांना सांगितले. तो अरण्यखात्यातील कामगार कोण, कुठला याचाही पत्ता लागला नाही. ते म्हणतात की आजतागायत ह्या गूढ प्रकाराचा उलगडा झालेला नाही.<sup>१०९</sup>

असे प्रकार पाश्चात्य देशातही घडले आहेत. (निसर्गातून हा काही भारताचा मक्ता नाही.) आणि ते सर्व काळात सापडतात. इतिहासात त्यांच्या नोंदी आढळतात. नमून्यासाठी फक्त एकच उदाहरण देतो.

१९५४ सालच्या उन्हाळ्यात श्री. आणि सौ. अॅलन यांनी एक दिवस विरंगुळा म्हणून निसर्ग-सान्निध्यात घालवण्याच्या उद्देशाने डॉर्किंगमध्ये (इंग्लंड) बसमध्ये चढले व वोटन या खेड्यात उतरण्याऐवजी वोटन हॅच येथे उतरले. मग परत फिरण्याऐवजी तेथील चर्चमध्ये जाण्याचे त्यांनी ठरविले. चर्चमधून बाहेर पडल्यानंतर उजवीकडच्या रस्त्याने गर्द झाडीमधून ते एका झाडेझुडपे नसलेल्या टेकडीजवळ आले. तेथे त्यांना एक लाकडी बैठक आढळली. त्यावर बसून दोघांनीही बरोबर आणलेली सँडविचेस खाण्याचे ठरविले. तेथे बसल्यानंतर सौ. अॅलन यांना पाठीमागून तीन माणसे आल्याची चाहूल लागली. पण पाठीमागे वळून पाहण्याचा प्रयत्न करूनही त्या वळू शकल्या नाहीत; व श्री. अॅलन यांना “एकदम थंडी पडली का?” असे असे त्यांनी विचारले. श्री. अॅलन यांनी सौ. अॅलनचा हात धरून पाहिला, तेव्हा तो प्रेतासारखा अतिशय थंड लागला. ते दोघेही मग तेथून एकदम उठले व परतले. नंतर काय घडले हे दोघांनाही आठवत नाही. फक्त आपण तेथील गवतावर गाढ झोपलो होतो एवढेच त्यांना आठवते. आपण डॉर्किंगला कसे पोचलो हेही त्यांना कळले नाही.

दोन वर्षांनंतर सौ. अॅलन ह्या एकट्याच वोटन हॉचला आल्या. तेथील चर्चला त्यांनी भेट दिली व चर्चमधून बाहेर पडल्यानंतर पूर्वीप्रमाणे उजवीकडे टेकडीकडे जाणारा रस्ता धरण्याच्या उद्देशाने तो सापडेल या अपेक्षेने त्या वळल्या. पण तेथे रस्ता व टेकडी नव्हती. पुढे सर्व भाग सपाट होता. घरी आल्यानंतर त्यांनी नवऱ्याला ही गोष्ट सांगितली. नवऱ्याने तिला वेड्यात काढले. मग ते स्वतःच खात्री करण्यासाठी त्या ठिकाणी आले; आणि त्यांना आपली पत्नी जे म्हणत होती ते खरे असल्याचे आढळले. तेथे टेकडी नव्हती. ती लाकडी बैठकही नव्हती. सर्व प्रदेश सपाट होता. हा प्रकार बुचकळ्यात टाकणारा असल्यामुळे त्यांनी इंग्लंडच्या अतींद्रिय विज्ञानसंघाला (Society for Psychical Research) ही गोष्ट कळवली. त्या संघाच्या दोघा सदस्यांनी स्वतः त्या जागेची तपासणी केली. त्यांनाही तेथे ती टेकडी व लाकडी बेंच आढळले नाहीत या प्रकारावर १९७४ मध्ये त्या दोघा



सदस्यापैकी एकाने एक पेपर सादर केला आहे.<sup>१७४</sup>

नरसोबावाडीची भानामती हा 'करणी' चा प्रकार समजले तरी संकेश्वरची भानामती ही कुणाची 'करणी' समजायची ? अर्थात् ती टिनाच्या विस्थापित मनाचीच 'करणी' समजली पाहिजे ! कारण 'करणी' शिवाय भानामती घडत नाही. मग गळतगा व भोज येथील रस्त्यात भेटलेल्या भानामतीची 'करणी' कोणाची ? तीही त्या त्या तरुणांच्या मनाचीच 'करणी' समजली पाहिजे ! कारण संबंधित व्यक्तीच्या सहकार्याशिवाय किंवा इच्छेशिवाय भानामती कोणालाही भेटत नाही, हा सहानुभूतियुक्त सहकंपनाचा (अबाधित) नियम (The law of sympathetic vibrations) आहे. कृष्णानंदांचा व श्री. व सौ. अॅलन यांचाही अनुभव या नियमाला अपवाद नाही. त्यांच्या इच्छेविरुद्ध त्या घटना घडलेल्या नाहीत. कृष्णांदांना (ईश्वरनिष्ठ व्यक्तीला) शंकराचे मंदिरच का दिसावे ? किंवा ते तेथे असल्याचे सांगणारा कामगार का भेटावा ? त्या तरुणाना ती तरुण स्त्रीच रात्री का दिसावी ? किंवा आपल्याला गाडीवर घेण्यास तिने त्यांना का सांगावे ? अॅलन दांपत्याला (विरंगुळा म्हणून घराबाहेर पडलेल्यांना) ती टेकडी व लाकडी बैठकच का दिसावी ? निसर्गातले माणसाला भुलविण्याच्या खोड्या करतात हे खरे आहे. पण संबंधित व्यक्तीच्या सहकार्याशिवाय किंवा इच्छेशिवाय ते त्या करू शकत नाहीत. मग प्रत्येक व्यक्तीच्या बाबतीत त्याचे स्वरूप व परिणाम वेगळे असतील. श्री. व सौ. घाटे, श्री. व सौ. अॅलन, गळतगा व भोज येथील तरुण यांच्या बाबतीत त्या खोड्या शेवटी त्रासदायक ठरल्या असतील व टिना व कृष्णानंद यांच्या बाबतीत त्या आनंददायक ठरल्या असतील. पण शेवटी त्यांच्या इच्छेनेच-सहकार्यानेच-त्या घडल्या. त्यांच्या इच्छेविरुद्ध किंवा त्यांच्या सहकार्याशिवाय त्या घडल्या नाहीत. अर्थात् त्यांच्या जागृत मनाच्या इच्छेने वा सहकार्याने ते प्रकार घडलेले नाहीत, हे खरे आहे. त्यांच्या सुप्त वा अबोध मनातील इच्छेने ते प्रकार घडले आहेत. मग त्या व्यक्तींच्या सुप्त वा अबोध मनातील त्या इच्छा चांगल्या असतील अगर वाईट असतील. इच्छा म्हटल्या की त्या बहुधा वासनारूपच असतात. कृष्णानंदासारखे उच्च, आध्यात्मिक इच्छा व विचार बाळगणारे विरळाच. सर्वच जण इच्छांच्या अधीन असतात-त्यांचे गुलाम असतात. मग सर्वच जणांच्या बाबतीत असे (भानामतीचे) प्रकार का घडत नाहीत ? सर्वत्रच रोगजंतू असतात. मग सर्वांनाच का रोग होत नाहीत ? कारण त्याला अनुकूल परिस्थिती नसते. तसेच हे आहे. येथे कर्माचाही संबंध येतो. कर्मांमुळे भानामतीचे स्वरूप बदलूही शकते. ती वेगळे रूपही घेऊ शकते. मराठीतील प्रसिध्द लेखिका वसुंधरा पटवर्धन यांच्या 'संघर्ष' या आत्मचरित्रावरून भानामतीने अकलकोट स्वामींचे रूप घेऊन स्वप्नातून त्यांना दीर्घकाळ छळल्याचे दिसून येते.<sup>१७५</sup> लेखिकेने आपण ईश्वर मानत असलो तरी

त्याच्याकडे आपला ओढा कमीच असल्याचे व बुद्धिवादी वडिलांच्या कडक शिस्तीत आपण वाढल्याचे प्रारंभीच मान्य केले आहे. त्यामुळे पुढील जीवनात त्यांना 'अकलकोट स्वामी' स्वप्नात नेहमी येऊन 'अमुक कर, तमुक कर' अशा निर्बुध्द आज्ञा - ज्या आज्ञा निर्बुध्द असल्याचे स्वतः लेखिकेने मान्य केले आहे - का कराव्यात, हे कळत नाही. उदा. वेश्येला बांगड्या व पोळ्या दे. एक किलो मांसाचा गोळा समुद्राच्या ओल्या वाळूवर ठेव. १॥ किलो बटाटे उकडून समुद्रात टाक. या खांबाला नऊ पोळ्या बांध (ज्या पोळ्या खाल्ल्यामुळे खाणारी कुत्री मेली) इ. इ. दररोज नारळ, निरांजने, वाती यांचा तर हिशेबच नव्हता. स्वप्नातील ह्या आज्ञा बाईंनी का पाळाव्यात याचे वाचकांना मोठे कोडे पडते. ते कोडे कर्माचा आधार घेतल्याशिवाय सुटत नाही. स्वामींच्या रुपाने भानामतीच वसुंधराबाईंना छळत होती ही गोष्ट त्यांना स्वप्नात काळ्या बाहुल्या दिसायच्या व त्या ओरडत उठायच्या; कोणी नसताना भांडी वाजायची, खाट (आपोआप) हालायची, कोणी कुजट हसायचे, यासारख्या भानामतीत नेहमी अनुभवाला येणाऱ्या गोष्टींवरून स्पष्ट होते. स्वतः बाईंच म्हणतात, "मी सांगतो म्हणून ऐक, हे (स्वामींचे) म्हणणे पटत नव्हते. साधूसंतांच्या कृपेने मन शांत व्हायला हवे. येथे तर सर्व उलटच." सर्व उलटच, कारण ते स्वामी नव्हतेच मुळी ! ती होती भानामती. पुढे बाई म्हणतात, "स्वामीच नाहीत असे धरून चालायचे असे ठरवून निरांजने, नारळ ठेवायचे सोडून दिले तर ५ रु.च्या कामाला १०० रु. लागायचे. असा छळ का म्हणून व्हावा ? स्वप्नातले करायचे नाही असे ठरवले की मला स्वप्नात महारोग झालेला दिसायचा." महारोगाची भीती सतसत्पुरुष कधीही घालत नाहीत. दुष्ट शक्तीच घालतात. शेवटी भगवद्गीता वाचणे हाच सर्व संकटावरील उपाय आहे असे सांगणाऱ्या एका कृष्णभक्त बाईंशी वसुंधराबाईंची योगायोगाने गाठ पडली. त्या बाईंनी स्वामींच्या आज्ञेकडे दुर्लक्ष करण्यास सांगितले. इतकेच नव्हे तर त्यांचा फोटोही त्यांच्याच सल्ल्यावरून बाईंनी पूजेतून काढून टाकला ! आणि हा छळ कायमचा बंद झाला ! बाईंच्या शब्दात सांगायचे तर "फोटोतील स्वामी चंबूगबाळे घेऊन निघून गेले." बाईंना खरोखर कोण निघून गेले हे माहीत झालेच नाही !

[सर्व संकटावर भगवद्गीतेचे वाचन हाच एकमेव उपाय असल्याचे सांगणारी लीलाताई नावाची वसुंधराबाईंना भेटलेली कृष्णभक्त बाई साधी प्राथमिक शाळेतील शिक्षिका. पण कृष्ण तिच्याबरोबर बोलत असल्याचे वसुंधराबाईंनी म्हटले आहे. या गोष्टीचा पुरावा दिलेला नसला तरी लोकांनी दिलेल्या वस्तु (उदा.पेढा इ.) त्याने स्वीकारल्या तर त्यावर ॐ हे अक्षर कोरल्याप्रमाणेच उठायचे या एका सार्वजनिक 'चमत्कारा'चा पुरावा मात्र बाईंनी दिला आहे.]

भानामती (नरसोबावाडीप्रमाणे) सौभाग्य लेणे ल्यालेली 'सुवासिनी'

(अंबाबाई), किंवा (संकेश्वराप्रमाणे) कुलस्वामिनी लक्ष्मी, अशा (देवीच्या) रूपातच येते असे नसून स्वप्नात अक्कलकोट स्वामींच्या रुपानेही ती येऊ शकते व निर्बुध्द व पीडादायक आदेश देऊ शकते, हे या उदाहरणावरून दिसून येते. लहानपणी खेळत असताना कोणी आपल्या केसाच्या बटा कापून नेल्यामुळे हा 'संघर्ष' आपल्या जीवनात घडला असे लेखिकेने म्हटले आहे. यावरून हा 'करणी' चा प्रकार असावा असे दिसते. तथापि त्याचा परिणाम त्यांच्या जीवनात दीर्घकाळ टिकला ही वस्तुस्थिती त्यांचे पूर्वकर्मच त्याला कारणीभूत असल्याचे दाखवून देते. स्वप्नातील निर्बुध्द आदेश जागेपणी पाळण्याची एखाद्याला बुध्दी झाली तर ती त्या व्यक्तीच्या पूर्वकर्माशिवाय कशी होईल ? ('बुध्दी कर्मानुसारिणी' हे सुभाषित प्रसिध्दच आहे!) स्वप्नातील निर्बुध्द आदेश लेखिकेने कुणाच्याही बाह्य दडपणाशिवाय (स्वेच्छेनेच) पाळले ना? भानामती कुणाच्याही इच्छेविरुद्ध घडत नाही, हा सिध्दांत अशारितीने येथे अबोधित राहतो. येथे मानवी इच्छा, भानामती आणि कर्म यांची उत्तम सांगड पडलेली दिसून येते.

भानामतीचे प्रकार अतींद्रिय जगातील निसर्गात्म्यामुळे -म्हणजे नैसर्गिक शक्तीमुळे घडत असल्यामुळे निसर्गातील भौतिक शक्तीचा उपयोग मानवाने जसा भौतिक जगाच्या अभ्यासाने (भौतशास्त्रीय नियमांचा शोध लावून) आपल्या सुखासाठी करून घेतला आहे, तसा अतींद्रिय जगातील या शक्तींचा उपयोगही मानव त्या जगाच्या अभ्यासाने त्याच्या नियमांचा शोध लावून आपल्या सुखासाठी करून घेऊ शकतो; आणि मॅडम ब्लॅव्हेट्स्की यांनी अशा अभ्यासातून त्या शक्तीवर आपली सत्ता चालवून तो कसा करून घेता येतो हे दाखवून दिल्याचे आपण यापूर्वी पाहिले आहे. ('मॅडम ब्लॅव्हेट्स्की यांची भानामती' हा पोटमथळा पाहा.) ऑलकॉट यांनी भारतातील रस्त्यात लंगोटीवर फिरणाऱ्या फकीरांनाही हे ज्ञान (ब्लॅव्हेट्स्की यांना असलेले अतींद्रिय ज्ञान) असल्याचे म्हटले असून त्याचा मागे उल्लेख आला आहे. (पृ. ३४८) भारतातील रस्त्यावरील फकीरांच्या या ज्ञानालाच 'जादू' म्हणतात. मात्र त्यामध्ये हल्ली स्टेजवर करण्यात येणाऱ्या हातचलाखीच्या जादूप्रमाणे प्रेक्षकांची फसवणूक नसते, तर ती खरीखुरी अस्सल जादू असते. म्हणजे निसर्गात्म्याकडून केली जाणारी ती एक प्रकारची 'आज्ञाधारक भानामती' च असते. हल्ली हे रस्त्यावरील जादूगार परिस्थिती बदलल्यामुळे-कदाचित् स्टेजवरील धंदेवाईक जादूगारामुळे-नाहीसे झाले आहेत. पण पूर्वी हे रस्त्यात सर्रास आढळत असत. अशा जादूगारांचे अनेक प्रयोग पाहण्याची संधी प्रस्तुत लेखकाला लाभली असून त्या प्रयोगापैकी काही महत्त्वाच्या प्रयोगांची माहिती येथे संक्षेपाने देतो. त्यामुळे भौतिक शक्तीप्रमाणेच या विश्वात अतींद्रिय शक्तीही (निसर्गात्म्यांच्या रुपाने) अस्तित्वात असून त्या कशा मनुष्याच्या आज्ञेने (भानामतीचे) कार्य रस्त्यावरसुध्दा

हक्काने करतात याची वाचकांना कल्पना येईल.

### ‘आज्ञाधारक भानामती’ अर्थात् जादू

अशा जादूपैकी ‘भारतीय दोरीची जादू’ (Indian Rope Trick) ही जगप्रसिध्द आहे. प्रस्तुत लेखकाने ती पाहिलेली नसली तरी तिची नकल करणारी कमी प्रतीची जादू पाहिली आहे. ती अशी :- जादूगार आपल्या मुलगााला जमिनीवर झोपवतो. त्याच्यावर कापड झाकतो. नंतर हातात सुरी घेवून कापडाच्या आत हात घालून त्या मुलाचा गळा कापतो व एक शीर वगळता मुंडके धडापासून वेगळे झाले असल्याचे ते वाटेल तसे फिरवून दाखवतो. हातातील सुरी कापडाच्या बाहेर काढल्यानंतर ती रक्ताने माखलेली सर्वांना स्पष्ट दिसते. नंतर राहिलेली एक शीरही कापून मुंडके धडापासून पूर्ण सुटे करण्यासाठी पुन्हा सुरी हातात घेतो. ती कापण्यापूर्वी प्रेक्षकांची ती कापण्याची इच्छा असेल तर तीही कापतो असे म्हणतो. पण प्रेक्षकांना त्याने काहीच साध्य होणार नाही, असे वाटून ते ‘नको’ म्हणतात. कापड काढून कापलेले मुंडके दाखवू काय ? असेही तो प्रेक्षकांना विचारतो. पण मुंडके कापलेले दृश्य पाहण्याची कुणाचीच इच्छा नसल्याने ते ‘नको, नको’ म्हणतात. (याचा अर्थ मुंडके कापले असल्याची प्रेक्षकांची पूर्ण खात्री झालेली असते असा होतो.) नंतर तो काही वेळ काही तरी पुटपुटतो, दुसरा मुलगा ढोल वाजवतो व जादूगार त्या मुलावरील कापड काढतो. तेव्हा तो पूर्वीप्रमाणेच धडधाकट असल्याचा दिसून येतो व उठून बसतो. रक्ताचा एक थेंबही जमिनीवर कुठे पडलेला दिसत नाही.

पुढील प्रयोग जीवशास्त्राचा नियम धाब्यावर बसवणारा आहे. प्रस्तुत लेखकाने तो जसा पाहिला तसा वर्णन करून सांगतो. जादूगार एक मातीचे भांडे घेतो. त्यात थोडी माती घालतो व त्यावर पाणी घालतो. नंतर एक आंब्याची कोय घेऊन त्या भिजलेल्या मातीत ती पुरतो. नंतर त्यावर कापड झाकतो, थोड्या वेळाने ते काढतो, तेव्हा त्या बाठाला अंकुर फुटलेला दिसतो. पुन्हा त्यावर कापड झाकतो. थोड्या वेळाने पुन्हा ते काढतो. तेव्हा तो अंकुर वाढून त्याचे लहान रोपटे झालेले असते. पुन्हा त्यावर कापड झाकतो. थोड्या वेळाने ते पुन्हा काढतो, तेव्हा ते रोपटे बरेच उंच वाढलेले असते. असे अनेकदा केल्यानंतर त्याला शेवटी आंबेही लागलेले दिसतात. मात्र झाड दीड-दोन फूट इतकेच असते. हे सर्व १० ते १५ मिनिटात घडते. पॉल ब्रंटन याने हा प्रयोग आपण भारतात पाहिल्याचे **A Search in Secret India** या ग्रंथात म्हटले आहे. (p.160) त्याने जादूगाराला लाच दिल्यानंतर त्यातील हातचलाखी त्याने उघड करून त्याला सांगितली. पण हा जादूचा प्रयोग हातचलाखी न करता मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांनी भारतात व तिबेटमध्ये जादूगारांनी केलेला अनेकदा पाहिला असल्याचे म्हटले आहे.<sup>१७</sup> या प्रयोगात जादूसाठी लागणारे सर्व साहित्य ब्लॅन्हेट्स्कीनी स्वतःचेच दिले होते. कोणते बी परायचे हे जादूगाराला माहीत

नसल्यामुळे, हे आपण ठरवत असल्यामुळे, जादूगाराला हातचलाखी करणेच अशक्य ठरते. शिवाय आपण दिलेल्या बियावर आपण खूण करून दिल्यामुळे त्याच बियाला अंकुर फुटले आहे की नाही, हे आपण नंतर पाहून खात्री करून घेऊ शकतो. हा प्रयोग ब्लॅन्हेट्स्की यांनी स्वतःच्या खोलीत करवून घेतला होता. जॅकोलियोनेही असा प्रयोग गोविंदस्वामीकडून करवून घेतला आहे.<sup>१५३</sup>

यावरही ताण करणारा जादूचा प्रयोग प्रस्तुत लेखकाने पहिला आहे. हा प्रयोग म्हणजे नाग साप व मुंगूस यांच्यातील लढत होय. ही लढाई इतका वेळ चालते की ती खरी नाही असे ती पाहणारा कोणीही म्हणणार नाही. (प्रस्तुत लेखकाने सापा-मुंगसाची खरी लढाई पाहिलेली असल्यामुळे तो असे म्हणण्याचे धाडस करतो.) या लढाईत सापाला बऱ्याच जखमा होतात व तो साप शेवटी मरतो. तो मेलेला साप फेकून देण्याशिवाय आता जादूगाराला गत्यंतर नाही असे प्रेक्षकांना वाटते. पण तो जादूगार गरुडी पुंगी वाजवू लागतो. हे पुंगी वाजवणे बराच वेळ चालते; आणि आश्चर्य असे की त्या सापाच्या जखमा सर्वासमक्ष हळुहळु नाहीशा होतात व तो साप थोडी हालचाल करतो व नंतर पूर्वीप्रमाणे पूर्ण धडधाकट होऊन फिरू लागतो. ही जादू आहे यावर विश्वास बसत नाही. तथापि कर्नल ऑलकॉट यांनी आपण हा जादूचा प्रयोग भारतात पाहिल्याचे आपल्या ग्रंथात म्हटले आहे. (Vol II. p. 123)

### ईश्वर-गरुड्याची विश्वनिर्मितीची जादू

वरील जादूचे प्रयोग हे नजरबंदी किंवा सामूहिक संमोहन (Mass Hypnotism) या सदरात मोडणारे आहेत, असे समजण्यात येते. म्हणजे अस्तित्वात नसलेल्या गोष्टी आपल्याला अस्तित्वात असल्याच्या दिसतात (भास होतो) असे मानण्यात येते. पण ब्लॅन्हेट्स्की यांनी आंब्याच्या झाडाच्या जादूत आंबे झाडाला लागल्यानंतर ते प्रेक्षकांना तोडून खायला दिल्याचे व पिकू घातलेल्या आंब्याप्रमाणे त्यांची चव आंबट-गोड लागल्याचे म्हटले आहे. यावरून हा सामूहिक संमोहनाचा प्रयोग नाही हे सिद्ध होते. (प्रस्तुत लेखकाने पाहिलेल्या प्रयोगात प्रेक्षकांना जादूगाराने आंबे खायला दिले नव्हते-देणे शक्य नव्हते. कारण तो संमोहनाचा किंवा हातचलाखीचा प्रयोग होता.) तेव्हा सर्वच प्रयोग नजरबंदीचे (संमोहनाचे किंवा हातचलाखीचे) आहेत असे म्हणता येत नाही. अमृत मगदुम याला रात्री १२ ॥ वाजता भर दुपार असल्याचे जे दृश्य दिसले ते नजरबंदीमुळे दिसले, असे समजले तरी त्याला किंवा गळतग्याच्या तरुणांना भेटलेली स्त्री ही खरीखुरी हाडामांसाची स्त्री होती; तो भास नव्हता, ही गोष्ट तिच्याशी ते बोलले होते, तिचा त्यांना स्पर्श झाला होता या वस्तुस्थितीवरून सिद्ध होते. कृष्णानंदांना जे शिवालय दिसले ते खोटे किंवा भासमान नव्हते. कारण त्या मंदिरात बसून त्यांनी जप केला

होता. जो ओढा त्यांना दिसला तो खोटा नव्हता. कारण त्यात त्यांनी अंघोळ केली होती. श्री. व सौ. अलन यांना दिसलेली टेकडी खोटी नव्हती. त्यावरील लाकडी बेंच खोटा नव्हता. कारण त्या टेकडीवर चढून त्या बेंचवर ते प्रत्यक्ष बसले होते. येथे इंद्रियांची फसवणूक असेल तर ती फक्त डोळ्यांचीच नव्हे तर माणसाच्या सर्वच इंद्रियांची फसवणूक आहे असे मानावे लागते; आणि माणसाच्या सर्वच इंद्रियांची अशी फसवणूक होणे शक्य असेल तर आपण आपले नित्याचे जग खरे आहे असे ज्या इंद्रियांच्या द्वारे समजतो, ते जग तरी खरे कशावरून, असा साहजिकच प्रश्न निर्माण होतो. कारण वरील घटनांप्रमाणे आपली इंद्रिये आपणा सर्वांना फसवीत नसतील कशावरून ? येथेच ब्रह्मविद्येचे महत्त्व ध्यानात येते, तिचा संबंध येतो. ब्रह्मविद्येनुसार हे जग माया आहे, भास आहे. फक्त ब्रह्म एकच सत्य आहे. जीव, जगत् व ब्रह्म या त्रिपुटीतील जगाप्रमाणे जीव हा सुद्धा मायाच आहे, असे ब्रह्मविद्या सांगते. माणूस ज्याला 'मी' म्हणतो तोसुद्धा (जीव) ब्रह्मविद्येनुसार खरा नाही. तो 'मी' म्हणजे केवळ या जगरूपी रंगमंचावरील (नाटकातील) एक तात्पुरते 'पात्र' आहे. नट ज्याप्रमाणे निरनिराळ्या नाटकात वेगवेगळ्या भूमिका घेऊन त्या वठवतो, त्याप्रमाणे या जगातील निरनिराळ्या परिस्थितीत वेगवेगळ्या देहात जन्म घेऊन आपल्या वेगवेगळ्या 'मी' च्या भूमिका तो (खरा 'मी') वठवीत असतो; (म्हणजे बरचेवर पुनर्जन्म घेत असतो.) म्हणून खरा 'मी' (आत्मा) त्या रंगभूमीवरील (नाटकातील) नटाप्रमाणे त्या त्या 'पात्रा'हून-त्या त्या 'भूमिका'हून-स्वतःला वेगळा समजतो. तो नट स्वतःला जसे निरनिराळी 'पात्रे' समजत नाही, तसे 'खरा मी' स्वतःला निरनिराळ्या देहात पुनर्जन्म घेणारा 'देहाभिमान मी' (संसारी मी) समजत नाही. पण या खऱ्या 'मी'ची ओळख नसल्यामुळे प्रत्यक्षात मनुष्य स्वतःला 'देहाभिमान मी' च समजतो. म्हणजे देह धारण करणारा 'मी' हाच खरा 'मी' आहे असे समजतो. यालाच 'अज्ञान' (nescience) म्हणतात. हीच 'माया' होय. प्रत्येक जन्मात बदलणाऱ्या (खोट्या) व्यक्तिमत्त्वाला (personality) खरा 'मी' समजणे व स्वतःचे न बदलणारे (खरे) आत्मस्वरूप विसरणे हीच माया (अविद्या) आहे. नटाने स्वतःला (हॅम्लेट) नाटकातील 'पात्र' (हॅम्लेट) समजण्यासारखे व स्वतःला विसरण्यासारखे हे आहे. या जगात वेगवेगळ्या तऱ्हेचे अनुभव घेण्यासाठी, निरनिराळ्या (प्रतिकूल) परिस्थितीला तोंड देऊन त्यातून तावून-सुलाखून निघण्यासाठी, अशा परीक्षेतून, अनुभवातून आध्यात्मिक धडे शिकण्यासाठी मनुष्याला अनेक जन्म (पुनर्जन्म) घ्यावे लागतात. या अनेक जन्मातील वेगवेगळ्या अनुभवातून मानवाला स्वतःचा शोध घेऊन परिपूर्ण व्हायचे आहे. ईश्वर बनायचे आहे. कारण तो मुळात ईश्वरस्वरूपच आहे.

ईश्वराने हे जगरूपी नाटक रचून-निर्माण करून-त्यात निरनिराळ्या भूमिका

वठविण्यासाठी अनेक जीव निर्माण केले आहेत. नव्हे तो स्वतःच अनेक रुपांनी नटला आहे. जन्म घेतला आहे. तैत्तिरीय उपनिषदातील 'सोऽकामयत बहुस्याम प्रजायेयेति।' 'त्याने (ब्रह्माने) संकल्प केला की अनेक रुपांनी आपण नटावे, जन्म घ्यावा' या पूर्वी उल्लेख केलेल्या वचनात हेच सांगितले आहे. हा संकल्प ब्रह्माने का केला ? हे नाटक त्याने का रचले ? ही जगरूपी रंगभूमी त्याने का निर्माण केली ? हे ब्रह्मांड का निर्माण केले ? हा सर्व तत्त्वज्ञाना नेहमी सतावणारा प्रश्न असून शास्त्रज्ञांनीही तो 'Why is there something rather than nothing?' म्हणजे 'हे दृश्य जग निर्माण केले नसते तर काय बिघडले असते ?' या शब्दात व्यक्त केला आहे.<sup>१५</sup> याचे उत्तर बादरायण व्यासांनी ब्रह्मसूत्रात दिले आहे. ते असे की 'लोकवत्तु लीलाकैवल्यम्।' (ब्र.सू.२.१.३३) म्हणजे 'लोकांना जसा खेळ आवडतो तसा परमेश्वराचा हा (आवडीचा) खेळ आहे.' नाटक आहे. लहान मुलापासून मोठ्या माणसापर्यंत सर्वांना खेळ आवडतो. नाटक आवडते. ते सर्व खोटे असते हे माहित असूनही आवडते. किंबहुना ते खोटे असणे हेच ते आवडण्याचे मुख्य कारण आहे; आणि गमकही. लहान मुले लुटपुटीचा (भातुकलीचा इ.) खेळ खेळतात. तीच मुले पुढे मोठे झाल्यावर मोठ्या (आणि खोट्या) साहित्यकृती, कथा-कादंबऱ्या, नाटके रचतात. त्यासाठी मोठमोठी पारितोषिके ठेवतात. जागतिक पातळीवरील श्रेष्ठ साहित्यिकाला त्याच्या साहित्यकृतीबद्दल नोबेल पारितोषिक देतात. त्या साहित्यिकाने काय केलेले असते ? सर्व खोटे लिहिलेले असते. पण ते सृजनशीलतेतून, (creative urge मधून) निर्माण झालेले असते. जीवन हेच मुळात ईश्वराच्या सृजनशीलतेतून खोटे निर्माण झालेले असताना त्याचे प्रतिबिंब दाखवणारी साहित्यकृती खरे तर त्याहूनही जास्त खोटी असते. पण ती निर्माण करणे व ती केलेली वाचणे-पाहणे माणसाला आवडते. कारण तो स्वतःच ईश्वराचे प्रतिबिंब आहे. नाटक-सिनेमा खोटेच असतात. पण ते स्टेजवर व पडद्यावर पाहणे माणसाला आवडते. येथे माणूस ईश्वराचेच पात्र वठवीत असतो. ईश्वराप्रमाणे तो स्वतःच खोटे जग निर्माण करून त्यात रममाण होतो. हा गारुड्यासारखाच खेळ आहे. तो खेळ खोटा आहे, 'जादू' आहे, ती गारुडी विद्या आहे यातच त्या खेळाचा खरा आनंद सामावलेला असतो. नाटक जसे खोटे आहे हे माहित असूनही ते पाहणे माणसाला आवडते, तसे १॥ फूट उंच अंब्याच्या झाडाला १०-१५ मिनिटात आंबे लागतात हे खोटे असूनही, ती 'जादू' असूनही, ते पाहणे माणसाला आवडते. येथेही ही जादू करणारा व ती पाहणारा माणूस ईश्वराचेच पात्र वठवत असतो. कारण ईश्वर हा स्वतःच गारुडी (जादूगार) आहे व विश्वानिर्मिती ही त्याची एक जादू किंवा 'चमत्कार' (गारुडी विद्या) आहे. आणि हे आधुनिक भौतशास्त्रज्ञांनीच क्वांटम सिध्दांताच्या आधारे म्हटले असल्याचे आपण यापूर्वी पाहिले आहे. ('भौतिक

विश्व व 'चमत्कारां'चे विश्व यात सीमारेषा आहे काय?' हा पोटमथळा पाहा.) (विश्वोत्पत्ती ज्या क्वांटम सिध्दांताच्या आधारे झाल्याचे प्रतिपादण्यात येते तो क्वांटम सिध्दांत हाच एक 'जादू'चा सिध्दांत असल्याचे प्रसिध्द भौतशास्त्रज्ञ व्हीलर याने तेथे म्हटले आहे.) येथे भौतिक शास्त्रज्ञ उपनिषदांचे म्हणणेच उचलून धरत असताना दिसतात. कारण उपनिषदांनी परमेश्वराला प्रत्यक्षात गारुडीच ('जालवान') म्हटले आहे. (श्वे.उ.प.३.१) हे जग त्या ईश्वररूपी गारुड्याची 'जादू' (इंद्रजाल) आहे व तो स्वतः विविध रूपांनी (बहुरूपी बनून) नटला आहे, असे उपनिषदांचे म्हणणे आहे. (बृ.उप. २.५.१५) आणि भानामती नेमके हेच करते. ती अनेक रूपे घेऊन माणसांना भुलविते. म्हणून ब्लॅन्क्हेडस्की यांनी भानामतीच्या द्वारे पाश्चात्यांना ब्रह्मविद्येचे धडे दिले आहेत. त्यातून ब्रह्मविद्येचे धडे सर्वांनाच मिळतात. म्हणून भानामतीचा जर्मन संशोधक हॅन्स बेंडर म्हणतो की मनुष्य, त्याचे निसर्गातील स्थान व स्वतः निसर्ग यांचे खरे आकलन व्हायचे झाल्यास भानामतीचा अभ्यास करणे हाच राजमार्ग आहे.<sup>१३</sup>

### भानामती, जादू व विश्वनिर्मिती यातील साम्य

शून्यातून विश्व निर्माण झाल्याचा आधुनिक विश्वशास्त्राचा (cosmology) सिध्दांत असल्याचे यापूर्वी सांगितले आहे. त्यासाठी ज्या क्वांटम सिध्दांताचे साह्य घेण्यात येते तोच एक जादूचा सिध्दांत असल्याच्या व्हीलर या शास्त्रज्ञाच्या विधानाचाही भाग उल्लेख आला आहे. (व्हीलरने क्वांटम सिध्दांताची तुलना जादूने अनेक रूपे घेणाऱ्या मर्लिन या जादूगाराशी केली आहे.<sup>१४</sup> तो म्हणतो की क्वांटम सिध्दांताबद्दीही अनेक रूपे घेतली आहेत. या दृष्टीने पाहता अनेक रूपे घेणाऱ्या अतींद्रिय शक्तीशी किंवा भानामतीशी क्वांटम सिध्दांताची तुलना करता येईल. या कारणासाठी व शून्यातून विश्व निर्माण करण्यासारख्या जादू किंवा 'चमत्कार' करण्याच्या कारणासाठी क्वांटम सिध्दांत हा जादूचा सिध्दांत आहे असे व्हीलरने म्हटले आहे.) अर्थात् भौतिक शास्त्रज्ञ ईश्वर किंवा ब्रह्म यासारख्या भौतिक विश्वाच्या पलीकडच्या तत्त्वाचे अस्तित्व वा सत्ता मानत नसल्यामुळे त्यांना 'शून्या'चा आधार घ्यावा लागतो. म्हणून शून्यातून विश्व निर्माण झाले असे ते म्हणतात. अध्यात्मशास्त्र यालाच (शून्यातून वस्तू निर्माण करण्यालाच) 'गारुडी विद्या' किंवा 'इंद्रजाल' म्हणते; आणि हे गारुडी विद्येचे रहस्यच 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' या ब्रह्मविद्येच्या शिकवणुकीच्या मुळाशी दडलेले असून ते रहस्य (सत्य) ब्लॅन्क्हेडस्की यांनी भारतीय ब्रह्मवेत्त्यांच्या मार्गदर्शनाखाली भौतिकवादी विज्ञानाची (materialist science) कास धरून त्याची जीवनात तरफदारी करणाऱ्या पाश्चात्य शास्त्रज्ञांच्या गळी 'चमत्कारां'च्या माध्यमातून उतरविण्याचा प्रयत्न केला. हे 'चमत्कार' म्हणजे परमेश्वराची गारुडी विद्याच असल्याचे यापूर्वी वर्णन केलेल्या त्यांच्या काही



‘चमत्कारां’ वरुन वाचकांच्या लक्षात आलेच असेल. त्यासाठी न्यूयॉर्कमध्ये ‘थिऑसॉफिकल सोसायटी’ ची त्यांनी ऑलकॉट आणि इतर मृतात्मविद्यावादी लोकांच्या सहकार्याने स्थापना केली. पण अमेरिकेसारख्या पाश्चात्य देशापेक्षा त्या विद्येचे माहेरघर असलेल्या भारतातूनच त्या विद्येचा जगात प्रसार करणे औचित्यपूर्ण ठरणार असल्यामुळे शेवटी न्यूयॉर्क येथील सोसायटीचे मुख्य कार्यालय भारतात हलविण्यात आले. आणि भारतात आल्यानंतरही पाश्चात्य संस्कृतीचा व विद्येचा भारतात प्रसार करणाऱ्या ब्रिटिश अधिकाऱ्यांना हे ‘चमत्कार’ करून दाखवले व त्यांचे मतपरिवर्तन केले. त्यावेळी दिल्लीऐवजी सिमला हे, थंड हवेचे ते ठिकाण असल्यामुळे, ब्रिटिशांचे मुख्य शासकीय केंद्र व निवासस्थान होते. तेथे त्यांनी अनेक ‘चमत्कार’ करून दाखवले. त्यापैकी काही निवडक ‘चमत्कारां’ ची माहिती येथे अत्यंत संक्षेपाने देतो, ते यासाठी की ते सर्व ‘भानामती’ व ‘जादू’ या सदरात मोडणारे असल्यामुळे, म्हणजे गारुडी विद्येत त्यांचा समावेश होत असल्यामुळे, त्यांचा ईश्वराच्या (ब्रह्माच्या) विश्वनिर्मितीशी असलेले साम्य आपोआपच वाचकांच्या मनात भरेल व विश्वनिर्मिती ही ईश्वराची गारुडी विद्या (जादू) कशी आहे, हे त्यांना पटेल.

सिमल्यात एकदा वनभोजनासाठी ब्लॅव्हेट्स्की व अनेक ब्रिटिश लोक डोंगर भागात गेले होते. तेथे गेल्यानंतर लक्षात आले की जितके लोक होते, तितक्या कपबशांचे जोड नव्हते. एका व्यक्तीला एक जोड कमी पडत होता. (लोक सात होते आणि कपबशांचे जोड सहा होते.) तेव्हा ब्लॅव्हेट्स्की यांनी एक नवा जोड जुन्या जोडासारखाच हुबेहूब निर्माण केला. हा ‘चमत्कार’ ब्लॅव्हेट्स्की यांनी केला, तेव्हा ऑलकॉट हजर होते, आणि त्यांनी आपल्या ग्रंथात त्याचे वर्णन केले आहे. (Vol. II. p. 234) त्यावेळी लखनौच्या **Pioneer** दैनिकाचे ब्रिटिश संपादक ए.पी. सिनेट हेही उपस्थित होते. त्यांनीही या ‘चमत्कारा’चे वर्णन आपल्या **The Occult World** या ग्रंथात केले आहे.<sup>१०</sup> हे कपबशांचे जोड ए.पी.सिनेट यांच्याच घरातून त्यांच्या नोकराने आणले होते. वनभोजनासाठी त्याने सहा जोड आणले होते व घरी तीन शिल्लक होते. (त्याने सहा जोड आणण्याचे कारण वनभोजनासाठी सहा जणच निघाले होते. सातवा माणूस बाहेर पडल्यानंतर सामील झाला होता.) अशारीतीने घरी एकूण नऊ कपबशांचे जोड होते. (तीन जोड-डझनपैकी-वापरात फुटले होते.) ‘चमत्कारा’ने निर्माण केलेला नवा जोड हा आता दहावा जोड झाला होता व तो हुबेहून जुन्यासारखाच होता. अशा तऱ्हेच्या कपबशा भारतात नसल्याचे व त्या जुन्या काळातील असून त्या लंडनहून आणल्याचे सिनेट यांनी म्हटले आहे. विश्वनिर्मितीचे वर्णन करताना ऋग्वेदात म्हटले आहे की धाता यथापूर्वमकल्पयत्। (ऋ. १०.१९०.३) म्हणजे ब्रह्माने पूर्वीसारखीच नवी सृष्टी निर्माण केली. हे वर्णन

ब्लॅव्हेट्स्कीनी जुन्यासारख्याच नवीन निर्माण केलेल्या कपबशीच्या जोडाला लागू होते, हे वेगळे सांगितले पाहिजे असे नाही.

सिमला येथे अनपेक्षितरीत्या कोणीही सुचविलेल्या वस्तू ब्लॅव्हेट्स्की यांनी अनेकदा निर्माण केल्या आहेत. ऑलकॉट व सिनेट यांनी त्या प्रयोगांचे वर्णन आपापल्या ग्रंथात केले आहेत. नमून्यासाठी फक्त एक-दोन उदाहरणे घेऊ. एकदा सिनेट यांच्या पत्नीने ब्लॅव्हेट्स्की यांच्या बोटवरील रत्नजडित आंगठीसारखीच हुबेहूब दुसरी आंगठी आपल्याला निर्माण करून द्यावी, असे सुचविले; आणि लगेच ब्लॅव्हेट्स्की यांनी दुसऱ्या हाताची दोन बोटे त्या आंगठीवर थोडी फिरवली व तसलीच दुसरी आंगठी आपल्या त्या रिक्त हातातून काढून सौ. सिनेट यांना दिली. (Vol. II. p.243)

सिमला येथील वास्तव्यात 'इंडियन नॅशनल काँग्रेस' ची ज्यांनी नंतर स्थापना केली, ते प्रसिध्द ब्रिटिश सनदी अधिकारी अॅलन ओ.ह्यूम हेही होते. एकदा त्यांच्या पत्नीने बऱ्याच वर्षांपूर्वी हरवलेले 'ब्रूच' (स्त्रिया कपड्यावर लावत असलेला एक शोभेचा पिनरूपी अलंकार) आपल्याला परत मिळवून द्यावा असे ब्लॅव्हेट्स्कीना सुचविले. तेव्हा त्यांनी ते कसे आहे याचे चित्र आपल्या नजरेसमोर आणण्यास सौ. ह्यूमना सांगितले व त्यांच्याकडे टक लावून थोडा वेळ पाहिले. नंतर ते बागेतील तारकाकृतीच्या वाफ्यात जमीन खोदून पाहा, तेथे सापडेल, असे त्यांना सांगितले. त्याप्रमाणे शोध केला असता ते एका फुलझाडाजवळ जमीन खोदल्यानंतर कागदात गुंडाळलेले आढळले. यात कोणाला अशी शंका येईल की ब्लॅव्हेट्स्की यांनी अगोदरच त्या ठिकाणी ते पुरून ठेवलेले असावे. पण सौ. ह्यूम यांनी अवचितपणे आपले हरवलेले 'ब्रूच' मागितले होते. शिवाय ते फार वर्षांपूर्वी हरवले होते. ते कसे होते हे सुध्दा ब्लॅव्हेट्स्की यांना माहीत असणे शक्य नव्हते. ते मोत्यांनी मढवलेले होते व ते आपले हरवलेलेच 'ब्रूच' असल्याचे ते सापडल्यानंतर सौ. ह्यूम म्हणाल्या.

सिमल्याच्या याच वास्तव्यात श्री. सिनेट यांचा कुथुमी या ब्रह्मवेत्याशी पत्रव्यवहार चालू होता. त्यांना ब्लॅव्हेट्स्की म्हणाल्या की 'कुथुमी तुमच्या पत्राचे उत्तर देऊ इच्छितात. ते तुम्हाला कुठे मिळावे अशी इच्छा आहे ?' पूर्वी एकदा एका झाडाच्या फांदीवर ते मिळाले होते. आता काहीतरी वेगळे सांगावे असेही त्यांनी सुचविले. नंतर बराच विचार करून ते एकदम एका स्त्रीकडे बोट करून म्हणाले, "ती स्त्री ज्या उशीला टेकून बसली आहे, त्या उशीत मिळावे." तेव्हा लगेच सौ. सिनेट म्हणाल्या, "नको नको. त्यांच्या उशीत नको. माझ्या उशीत ते मिळावे." नंतर सर्वानुमते ते सौ. सिनेट यांच्याच उशीत मिळावे असे ठरल्यानंतर ब्लॅव्हेट्स्की यांनी त्या उशीवर सौ. सिनेटना रंग झाकण्यास सांगितले व त्यांनी तसे केल्यानंतर

रग काढून ती उशी उसकढून पाहण्यास सांगितले. ती उशी चाकूने उसकढून काढण्यास बराच वेळ लागला. कारण दोन आवरणांनी ती उशी तयार करण्यात आली होती दुसरे आवरण उसकढल्यानंतर आतील पिसात सौ. सिनेट यांनी हात घातला. तेव्हा त्यांच्या हाताला एक कागद लागला. तो कागद म्हणजे कुथुमी यांचे सिनेटच्या पत्राला दिलेले उत्तर होते व ते कुथुमी यांच्याच हस्ताक्षरात होते. ते पत्र श्री. सिनेट यांनी वाचले. त्यातील पहिलेच वाक्य “तुमची ब्रूचविषयी खात्री पटावी म्हणून दुसरे एक ब्रूच याच उशीत घातले आहे.” असे होते. ते ‘दुसरे ब्रूच’ ही नंतर त्याच उशीत सापडले. आश्चर्य म्हणजे ते ब्रूच स्वतः सौ. सिनेट यांचेच होते व ते त्यांनी आदल्या रात्री आपल्या ड्रेसिंग टेबलावर ठेवलेले होते. (वापरात नसेल तेव्हा त्या तेथे ते नेहमी ठेवत असत.) तेच हे होते व आपलेच ते असल्याचे सौ. सिनेटनी ओळखले.<sup>१८</sup> कुथुमी यांनी सौ. सिनेट यांचे ‘ब्रूच’ कोणीही विचारलेले नसताना उशीत का घातले याचा खुलासा त्या पत्राच्या पहिल्याच वाक्यात कुथुमी यांनी केला होता. तो खुलासा असा: यापूर्वी बागेतील तारकाकृतीच्या फुलांच्या वाफ्यात सापडलेले सौ. ह्यूम यांचे ‘ब्रूच’ ब्लॅन्हेट्स्की यांनी अगोदरच पुरून ठेवले असावे, असा संशय या ‘चमत्कारा’च्या बाबतीत भारतातील वृत्तपत्रातून काही बुद्धिवाद्यांनी व्यक्त केला होता. हा संशय कसा चुकीचा आहे हे दाखवून देण्यासाठी कुथुमी यांनी स्वतः सौ. सिनेट यांच्याच ड्रेसिंग टेबलावरील ‘ब्रूच’ स्वतः सौ. सिनेटनीच सुचविल्याप्रमाणे स्वतः त्यांच्याच उशीत घातले होते. ही उशी उसकढून काढताना तिच्यावरील कापड फाडून न काढता त्या उशीची प्रत्येक शिवण चाकूने उसवून काढून ती उशी खुली केली होती, हेही या संदर्भात लक्षात ठेवले पाहिजे. म्हणजे त्या उशीची जुनी शिवण जशी होती तशीच होती. त्यामुळे यापूर्वी ती उसवण्यात आली नव्हती, याची तेथील व्यक्तींची खात्री झाली होती. या प्रयोगात सिनेट पतीपत्नीनी ब्लॅन्हेट्स्की यांच्याशी संगमनत केल्याचा आरोपही कोणाला करता येणार नव्हता. कारण श्री. सिनेट यांची ब्लॅन्हेट्स्की यांच्याशी नुकतीच ओळख झालेली होती. इतकेच नव्हे तर उलट ब्लॅन्हेट्स्की यांची ते परीक्षाच घेत होते.<sup>१९</sup>

ज्या प्रयोगविषयी कोणालाही संशय येणार नाही, असे ‘चमत्कारा’चे प्रयोग ब्लॅन्हेट्स्की यांनी नंतर काशीमध्ये केले आहेत. ते येथे सांगता येतील. या प्रयोगाच्या वेळी ऑलकॉटखेरीज मॅक्समुल्लरचे शिष्य व बनारस कॉलेजचे प्रिन्सिपाल श्री. थीबो हे जर्मन पंडित, आर्यसमाजाचे संस्थापक दयानंद सरस्वती व इतरही अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ती उपस्थित होत्या. संभाषणाच्या ओघात थीबो सहज म्हणाले, “भारतात पूर्वी अनेक सिध्दी प्राप्त झालेले योगी होते. ते हवेतून गुलाबपुष्पांची सुध्दा वृष्टी करू शकत असत. हल्ली असे योगी नाहीत.” ब्लॅन्हेट्स्की म्हणाल्या, “अस्स ! आता पाहा.” असे म्हणून त्यांनी हवेतून हात फिरवला. त्याबरोबर एक

डझनभर गुलाब फुले हवेतून पडली. आश्चर्याने उपस्थितांनी ती सर्व गोळा केली. थीबो मात्र जागचे हालले नाहीत. थोड्या वेळाने ते म्हणाले, “मॅडम, मला एकही फूल मिळाले नाही. आठवण म्हणून संग्रही बाळगण्यासाठी पुन्हा एकदा अशी गुलाब फुलांची वृष्टी कराल काय?” ब्लॅव्हेटस्कींनी पुन्हा हवेत हात फिरवला. त्याबरोबर पुन्हा तशीच गुलाब फुलांची वृष्टी झाली. एक फूल तर थेट थीबोंच्या डोक्यावरच पडले ! तेथून ते खाली त्यांच्या मांडीवर आले ! त्यांनी ते उचलले. त्यांना अशारीतीने जागचे हालावेच लागले नाही ! (Vol. II. p.130-1)

थोड्या वेळाने सर्वजण जाण्यास निघाले. आता अंधार पडला असल्यामुळे दामोदर एक लोंबकळता दिवा घेऊन आला. त्याबरोबर ब्लॅव्हेटस्की यांनी त्या दिव्याच्या ज्योतीकडे बोट करून म्हणाल्या, “वर जा !” (Go up) आणि आश्चर्य म्हणजे ती दिव्याची ज्योत एकदम मोठी होऊन ग्लासच्या वरच्या टोकाला आली ! पुन्हा त्या म्हणाल्या, “खाली जा !” (Go down) लगेच ती पुन्हा पूर्वीसारखी खाली गेली. अग्नी-देवतेवर (तत्त्वावर) ब्लॅव्हेटस्की यांची सत्ता चालत असल्याचा व कोणालाही हातचलाखीचा संशय घेणे अशक्य असलेला हा प्रयोग होता. (Vol II. p.134)

बरील उशीचा प्रयोग व गुलाब फुलांचा प्रयोग अनुक्रमे अणु-परमाणूंचे विघटन-संघटन करण्याच्या ब्रह्मवेत्त्यांच्या सामर्थ्याची व निसर्गात्म्यावरील सत्तेची साक्ष देतो. \* ब्रह्मविद्येचे हे ब्लॅव्हेटस्की यांचे ‘चमत्कार’ पाहूनच ए. पी. सिनेट व ए. ओ. ह्यूम हे थिऑसॉफिकल सोसायटीचे सभासद झाले. (सिनेट यांनी Pioneer या ब्रिटिश वृत्तपत्राच्या संपादक पदाचा राजीनामा दिला.) ऑलकॉट यांच्यावर तर अॅनी बेझंट व लेडबीटर यांच्याप्रमाणे अमेरिका सोडून कायम भारतात येऊन स्थायिक होण्याइतका तो परिणाम झाल्याचा दिसून येतो. अमेरिका सोडून भारताला येताना ‘मी ऋषीमुनींच्या देशात राहायला का आलो’ हे सांगताना त्यांनी अमेरिकेला स्वार्थी जग म्हटले असून या “स्वार्थी जगाने फुकट दिलेल्या सुखात लोळण्यापेक्षा भारतातील श्रेष्ठ आध्यात्मिक पुरुषांचा द्वारपाल बनणे मी जास्त पसंत करतो,” असे त्यांनी म्हटले आहे.<sup>१८</sup>

**ऑलकॉट यांचे संपूर्ण हृदयपरिवर्तन करणारा एक ‘चमत्कार’**

काही संशयवादी लोक थिऑसॉफिस्टांचे ब्रह्मवेत्ते (महात्मे, मास्टर्स किंवा सिध्द पुरुष) अस्तित्वातच नाहीत, असे म्हणतात. ते हिमालय व तिबेट येथे राहात

\* अणुपरमाणूंच्या संघटन-विघटनाचे सामर्थ्य शास्त्रज्ञांना २३ व्या शतकाच्या शेवटी प्राप्त होणार असल्याचे समोहन पद्धतीने व्यक्तीला भविष्यकाळात नेण्याच्या अनोख्या पद्धतीने माहीत झाले आहे. याला disassembling and reassembling of molecules (molecular assembly) म्हटले आहे. पाहा, Past Lives, Future Lives (1982) B. Goldberg p 147

असल्यामुळे क्वचितच कोणास भेटतात, हे खरे आहे. पण ते अस्तित्वातच नाहीत, असे म्हणणे अज्ञानाचे लक्षण आहे. थिऑसॉफीशी घनिष्ठ संबंध असलेल्यांना ते भेटतात. अनेकांशी त्यांचा पत्रव्यवहार होत असतो. ऑलकॉट यांच्याशी त्यांचा पत्रव्यवहार होत होता. पण अद्यापि ते त्यांना भेटले नव्हते. एकदा न्यूयॉर्क येथील आपल्या घरात ते आपल्या खोलीत रात्री पुस्तक वाचत बसले असता खोलीचा दरवाजा बंद असूनही त्यांच्या समोर त्यांचे गुरु अचानक प्रकट झाले. त्यावेळी त्यांना इतके आश्चर्य वाटले की ते वाचत असलेले पुस्तक हातातून गळून पडले. पण लगेच स्वतःला सावरून ते त्यांच्या पुढे गुडघे टेकून नतमस्तक झाले. त्यांच्या मस्तकावर त्यांच्या गुरुंनी आपला आशीर्वादपूर्वक हात ठेवला व त्यांना खुर्चीवर बसायला सांगितले. नंतर समोरच्या खुर्चीवर बसून आपला त्यांना भेटण्याचा उद्देश सांगितला. ब्लॅन्हेट्स्की यांच्याशी त्यांची भेट विशिष्ट कार्यासाठी मुद्दाम घडवून आणली असल्याचे व त्यात त्यांनी आपला वाटा उचलावा अस सांगितले. त्यांच्याशी अनेक विषयावर अर्धा तास चर्चा केल्यानंतर ते जाण्यासाठी उठले. (ऑलकॉट यांनी त्यांच्या भव्य व्यक्तिमत्त्वाचे विस्ताराने वर्णन केले आहे. ते येथे देत नाही.) त्यावेळी त्यांच्या मनात विचार आला की आपल्या गुरुंची ही भेट म्हणजे भ्रम तर नव्हे ? त्यांच्या मनातील हा विचार त्यांच्या गुरुंनी ओळखला व हसून त्यांनी आपल्या डोक्यावरील फेटा काढून त्यांच्या हातात दिला व ते नमस्कार करून जागच्या जागी अदृश्य झाले. (Vol. I. pp. 377-381)

ऑलकॉट यांनी आपल्या खोलीत आपले गुरु कोठे भेटले याची सविस्तर माहिती घराचा व खोलीचा नकाशाकाढून दिली असून त्यांच्या फेट्याच्या पदराचा विस्तारित फोटोही छापला आहे. गुरुंच्या या प्रत्यक्ष भेटीमुळे आपले (भारतात ब्रह्मविद्येच्या प्रसारासाठी येऊन राहण्याचे) भवितव्य कायमचे निश्चित झाले, त्यावर शिक्षामोर्तब झाले, असे त्यांनी म्हटले आहे. तो फेटा त्यांची स्मृती म्हणून नंतर त्यांच्याकडे कायमचा राहिला. या भेटीमुळेच त्यांनी अमेरिका सोडून भारतात येऊन कायम राहण्याचे ठरविले.

### आकाशगमनाची सिध्दी

वरील घटनेवरून ब्रह्मवेत्ते इच्छेनुसार कुठेही जाऊ शकतात व प्रगट होऊ शकतात, तसेच अदृश्यही होऊ शकतात, हे सिध्द होते ऑलकॉट यांनी स्वतः ब्लॅन्हेट्स्की ह्यासुध्दा एकदा खोलीतून अचानक नाहीशा झाल्याचा व काहीवेळाने त्याच खोलीतून बाहेर आल्याचा आपला अनुभव विस्ताराने कथन केला आहे. (Vol. I p.46-7) [असा दोनदा अनुभव त्यांच्या बाबतीत ऑलकॉट यांना आला असून दुसरा भारतात कार्ली येथे आला होता. (Vol II p.54-5)] 'तुम्ही कुठे गेला होता ?' या ऑलकॉट यांच्या प्रश्नाला त्यांनी 'काही गूढविद्येच्या (Occult)

कामासाठी आपल्याला जावे लागले' असे दोन्ही वेळा त्यांनी उत्तर दिले होते. हे अदृश्य होणे व प्रगट होणे दोन तऱ्हांनी करता येते, असे ऑलकॉट यांनी म्हटले आहे. एक, लिंग देह <sup>१८४</sup> (Astral body) धारण करून व दुसरे, नजरबंदीने (संमोहनाने). मौर्य यांनी स्वतःचा फेटा ऑलकॉट यांना दिला तो त्यांची भेट भ्रम नव्हता हे सिद्ध करण्यासाठी, भौतिक पुरावा म्हणून दिला होता. मौर्य हे लिंगदेहाने ऑलकॉट यांना भेटले तेव्हा त्यांचा फेटा हाही लिंगदेहानेच त्यांच्याबरोबर आला होता. तो नंतर कायमचा भेट स्वरूपात ऑलकॉट यांच्याकडे राहिला असल्यामुळे फेट्याचे लिंग शरीर स्थूल शरीरात नंतर रूपांतरित झाले असे म्हणावे लागते. ही गोष्ट लिंगशरीराने जे स्थलांतर (म्हणजेच 'आकाशगमन') होते ते स्थूलशरीराने केलेल्या स्थलांतरासारखेच (आकाशगमनासारखेच) असते, हे सिद्ध करते. पतंजलींनी 'कायाकाशयोः संबंधसंयमाल्लघुतूलसमापत्तेश्चाकाशगमनम् ॥ (यो.सू. ३.४२) या योगसूत्रात आकाश व स्थूलशरीर यांच्या संबंधावर संयम केला असता 'आकाशगमन' ही सिध्दी प्राप्त होते, असे म्हटले आहे. ही सिध्दी ईश्वरभक्तीमुळेसुद्धा प्राप्त होऊ शकते असे 'ईश्वरप्रणिधानात् वा ।' हे पातंजल योगसूत्र सांगत असल्यामुळे तुकाराम सदेह वैकुंठाला गेले ('आम्ही वैकुंठवासी' असे एका अभंगात तुकारामानी म्हटले आहे.) हे खोटे नाही, असे विदर्भातील प्रसिद्ध प्रशाचक्षू संत गुलाबराव महाराज यांनी म्हटले आहे.<sup>१८५</sup> त्यासाठी त्यांनी काढलेल्या अनेक शास्त्रीय (Scriptural) आधारांपैकी ब्रह्मसूत्रातील 'स्मर्यतेच ।' (ब्र.सू. ४.१.१४) या सूत्रावरील शंकराचार्यांच्या भाष्याचा आधार हा प्रमुख असून त्यात शंकराचार्यांनी महाभारतातील 'देवा अपि मार्गे मुह्यन्ति अपदस्य पदैषिणः' (म्हणजे ब्रह्मवेत्त्यांच्या पदाची इच्छा करणाऱ्या देवांनाही कसल्याही पदाची इच्छा न करणाऱ्या ब्रह्मवेत्त्यांचा मार्ग समजत नाही) या वचनाचा आधार घेतला असल्यामुळे ब्रह्मवेत्ते सदेह स्वर्गाला जातात हे शंकराचार्यांना मान्य होते, असे म्हटले आहे. कारण शंकराचार्यांनी महाभारतात शुकाचार्य आदित्यमंडलाकडे जात असताना त्यांचे वडील व्यास त्यांच्या पाठीमागून जाऊन त्यांना हाक मारत होते, या घटनेचा उल्लेख केला आहे. हा उल्लेख शुकाचार्य सदेह आदित्य लोकाला जात असलेले दिसत होते (अन्यथा त्यांचे वडील त्यांना कसे हाक मारतील ?) हे सिद्ध करतो व शंकराचार्यांना ते मान्य होते, असे गुलाबराव महाराजांचे म्हणणे आहे. तुकाराम सदेह वैकुंठाला गेले ही गोष्ट त्यांच्या आधारे खरी म्हणून स्वीकारावी लागते, असा ते या संदर्भात युक्तिवाद करतात. या संदर्भात शंकराचार्यांनी 'सशरीरस्यैवायं योगबलेन विशिष्टदेशप्राप्तिपूर्वकः शरीरोत्सर्गः ।' असे जे म्हटले आहे, ते महत्वाचे आहे. शंकराचार्यांच्या या विधानाचा अर्थ असा: 'योगबलाने विशिष्ट स्थान प्राप्त करण्यापूर्वी शुकाचार्य सदेह गेले व नंतर त्यांनी देहत्याग केला.'

शंकराचार्यांनी हे विधान करताना महाभारतातील 'वायूपेक्षा जास्त वेगाने ते अंतरिक्षातून गेले' या वचनाचा उल्लेख केला आहे, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. याचा अर्थ असा की पृथ्वीवर असताना ते सदेह जात होते, पण नंतर अंतरिक्षातून ते जेव्हा जाऊ लागले तेव्हा ते वायूपेक्षा जास्त वेगाने योगबलाने जाऊ लागले; आणि त्यावेळी त्यांचा प्रवास लिंगदेहाने (योगबलाने म्हणजे लिंगदेहाने) झाला. आदित्यमंडलात जाताना तो लिंगदेहही त्यांनी सोडला, हा वरील शंकराचार्यांच्या शब्दयोजनेतील अभिप्राय आहे. तुकारामांचे वैकुण्ठगमनही याच अर्थाने घेतले पाहिजे. अन्यथा विरोधाभासाला तोंड द्यावे लागेल. वायूपेक्षा जास्त वेगाने-म्हणजे मनोवेगाने-जाणारे शरीर 'स्थूल' कसे राहील, हा प्रश्न आहे. ध्वनीपेक्षाही जास्त वेगाने जाणारी जेट विमाने असली तरी स्थूल पदार्थांचा वेग ती ओलांडू शकत नाहीत, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. (स्थूल प्रकाशकणांनाही आईन्स्टाइनच्या सापेक्षता सिध्दांतानुसार वेगमर्यादा आहे, हेही या संदर्भात लक्षात ठेवावे.) याच्या उलट लिंगदेहाला वेगमर्यादा नाही. असलाच तर मनोवेग आहे, हे मृत्यूच्या वेळीच नेमके मरणारी व्यक्ती तिच्या नातेवाईक, मित्र इत्यादींना नेहमी (ते जिथे असतील त्या अंतरावर म्हणजे मनोवेगाने) दिसते, या वस्तुस्थितीवरून अनेकदा सिध्द झाले आहे. [यांना भासमान दर्शने (apparitions) म्हणतात.पृ. २२४ पाहा.] शिवाय ब्रह्मविद्येत 'वायु' याचा अर्थ Astral किंवा 'लिंगदेह' असा आहे. (पाहा पृ. ३५९) म्हणूनच शंकराचार्यांनी महाभारतातील 'वायुवेगा'चा उल्लेख केला आहे. तात्पर्य, तुकारामांचे 'सदेह' वैकुण्ठगमन खरे असले तरी ते वैकुण्ठगमन 'स्थूलसदेह' नसून 'सूक्ष्मसदेह' (किंवा 'लिंगसदेह') आहे, असे समजले पाहिजे.

या गोष्टीला ज्ञानेश्वरांचीही पुष्टी मिळते. गीतेच्या ६ व्या अध्यायातील आत्मसंयम करणाऱ्या (किंवा कुंडलिनी जागृत झालेल्या) योग्याला ज्या सिध्दी प्राप्त होतात त्यात 'आकाशगमन' ही एक सिध्दी असल्याचे ज्ञानेश्वरांनी पुढील ओवीत सांगितले असून ते सूक्ष्मशरीरानेच शक्य आहे हे त्यांच्या 'तैसे होय शरीर' या शब्दयोजनेवरून स्पष्ट होते. ही ओवी अशी: **तैसे होय शरीर । ते ते म्हणिजे खेचर । ते पद होता चमत्कार । पिंडजनी ॥** (६.२९६) येथे 'खेचर' म्हणजे 'आकाशात चालणे.' 'तैसे होय शरीर' व 'चमत्कार' या शब्दांवरून 'सूक्ष्म शरीराने' आकाशात चालण्याचा 'चमत्कार' घडतो, असे स्पष्ट सूचित होते. **'ते पद होता चमत्कार । पिंडजनी ॥'** म्हणजे ते पद किंवा ठिकाण किंवा अवस्था (योग्याला) प्राप्त झाली असता 'पिंडजनी' म्हणजे 'स्थूलशरीर धारण करणाऱ्या सामान्य जनांच्या दृष्टीने' 'चमत्कार' होतो. म्हणजे 'सूक्ष्म शरीराने आकाशगमन (खेचर) किंवा आकाशात चालणे हा चमत्कार होतो' असा स्पष्ट अर्थ आहे. आकाशात चालणे हे सूक्ष्म शरीरानेच होते हे ज्ञानेश्वराना सांगावयाचे नसते तर 'तैसे होय शरीर' असे ते

म्हणालेच नसते हे उघड आहे.

## स्थूल देहानेही आकाशगमन होते ?

येथे एक असा प्रश्न निर्माण होतो की स्थूल शरीरानेसुद्धा आकाशगमन केल्याची जी उदाहरणे आहेत - जी levitation किंवा 'अंतराळी उचलले जाणे' या नावाने ओळखली जातात-त्यांचे काय ? उदा. मागे डी.डी. होम हा माध्यम घराच्या एका खिडकीतून बाहेर अंतराळातून गेल्याचे व दुसऱ्या खिडकीतून तसाच आल्याचे अनेकानी पाहिले असल्याचे सांगितले आहे. तसेच विशुद्धानंद असेच घरात अंतराळातून आल्याचे अनेकांनी पाहिल्याचे उदाहरण दिले आहे. (पृ. २५१) कोपर्तिनोचा संत उडणारा संन्याशी म्हणूनच प्रसिद्ध होता. ज्ञानेश्वरांनी भित्त चालवली ते एक आकाशगमनाचेच उदाहरण म्हटले पाहिजे. ही सर्व उदाहरणे एका अर्थाने आकाशगमनाची असली तरी ती स्थूल शरीराची वेगमर्यादा पाळणारी उदाहरणे आहेत हे लक्षात ठेवले पाहिजे. म्हणजे ती सर्व पृथ्वीवरची उदाहरणे आहेत. शुकाचार्याप्रमाणे किंवा तुकारामाप्रमाणे अंतरिक्षगमनाची (आदित्यमंडल किंवा वैकुंठ वा स्वर्गगमनाची) नाहीत. आदित्यमंडल किंवा स्वर्ग ही ठिकाणे भुवर्लोकाच्याही पलीकडील स्वर्लोकाची म्हणजे पृथ्वीचे त्रिमितीचे जग ओलांडणारी चार किंवा पाच मितींची ठिकाणे आहेत. म्हणजे ती सूक्ष्म देहाच्याही पलीकडील मनोदेहाच्या (Mental body) वासाची ठिकाणे आहेत. लिंग (सूक्ष्म) देह हा चतुर्मितीचा व मनोदेह हा पाच मितीचा देह आहे. म्हणून पृथ्वीवरील स्थूलदेहाप्रमाणे त्यांना वेगमर्यादा पाळण्याचे बंधन नाही. म्हणून ज्ञानेश्वर 'तैसे होय शरीर' असे म्हणतात. ते शरीर 'तैसे' होते म्हणजे 'चतुर्मितीचे' (four dimensional) होते. त्रिमितीचे (स्थूल) शरीर जेव्हा चतुर्मितीचे होते, तेव्हा 'पिंडजनी' म्हणजे स्थूल शरीराच्या (सामान्य लोकांच्या) दृष्टीने तो 'चमत्कार' होतो, असे ज्ञानेश्वर म्हणतात. शिवाय स्थूल शरीराची (पृथ्वीवरील) वेगमर्यादा ओलांडणे हाही 'चमत्कार'च आहे. कारण असे कधी घडत नाही. ही गोष्ट भौतिकशास्त्रज्ञ time travel is impossible म्हणजे काळाच्या उलट दिशेने जाणे अशक्य आहे या शब्दांनी व्यक्त करतात. (हीच गोष्ट सापेक्षता सिद्धांत 'प्रकाशाची वेगमर्यादा ओलांडता येत नाही.' या शब्दात सांगतो. कारण ही वेगमर्यादा ओलांडणे म्हणजे काळाच्या विरुद्ध दिशेने म्हणजे भविष्यातून भूतकालात (भुवर्लोकात व स्वर्लोकात मात्र काळच अस्तित्वात नसतो) जाणे होय ! यालाच time travel म्हणतात.

## 'चमत्कारां' चा (वेदांती) निषेध

मॅडम ब्लॅन्क्हेट्स्की यांचे 'चमत्कार' सांगताना हे मोठेच विषयांतर झाले, असे वाचकांना वाटेल. पण तसे मुळीच नाही. कारण ब्रह्मविद्येचा किंवा वेदांताचा



‘चमत्कारा’ शी वरवर काही संबंध नाही, असे एका दृष्टीने दिसत असले तरी दुसऱ्या दृष्टीने त्यांचा परस्पराशी धनिष्ठ संबंध आहे, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. हे तुकारामांचे वैकुंठगमन खरे मानणाऱ्या स्वतः गुलाबराव महाराजांचे उदाहरण घेऊनच स्पष्ट करता येईल. तुकारामांचे वैकुंठगमन खरे आहे, असे गुलाबराव मानतात हे वर सांगितलेच आहे. पण वर आपण पाहिलेच आहे की ज्ञानेश्वरांच्या दृष्टीने तो ‘चमत्कार’ आहे. पण तो ‘पिंडजना’ च्या दृष्टीने, म्हणजे सामान्य लोकांच्या दृष्टीने ‘चमत्कार’ आहे, असे ते म्हणतात. योगशास्त्राच्या दृष्टीने तो चमत्कार नाही, असे त्यांना सुचवायचे आहे. म्हणजे योगशास्त्राच्या दृष्टीने पाहता ती निसर्गनियमानुसार घडणारी घटनाच आहे, असे ते मानतात. पतंजलीही तसेच मानतात ही गोष्ट ‘ते समाधावुपसर्गाः व्युत्थाने सिध्यः ॥’ (३.३७) या त्यांच्या सूत्रावरून स्पष्ट होते. म्हणजे अशा घटना निसर्गनियमानुसारच घडत असल्या तरी योगसाधनेत त्या विघ्न आणतात व जागृत अवस्थेत (व्युत्थाने) म्हणजे सामान्य लोकांच्या अवस्थेत (दृष्टीने) त्या ‘सिद्धी’ (‘चमत्कार’) आहेत, असे पतंजलीही म्हणतात. (म्हणून संत ‘सिद्धी’ च्या वा ‘चमत्कारा’ च्या पाठीमागे लागत नाहीत. त्यांचा निषेध करतात.) म्हणून संत गुलाबराव महाराजांनी ‘चमत्कारांचा निषेध’ या मथळ्याचे एक छोटे उपप्रकरण लिहून त्यात “आम्ही वेदांती चमत्काराचा खेटर मारून निषेध करतो” असे म्हटले आहे.<sup>१८</sup> मात्र ‘चमत्कारांचा निषेध’ म्हणजे नेमके काय हे ते कुठेच सांगत नाहीत. “चमत्काराने धर्मनिश्चय करणे म्हणजे चार्वाक मताचा आश्रय करून प्रत्यक्ष प्रमाणाने धर्मनिश्चय करण्यासारखेच आहे.” असे ते म्हणतात. येथे ‘चमत्काराने धर्मनिश्चय’ कोण व कसे करतात हे ते सांगत नाहीत. ‘चमत्कार’ म्हणजे काय हेच ते कोठे सांगत नाहीत. पण ‘चमत्कार’ म्हणजे ‘मिथ्या ज्ञान’ होय असे ते समजत असावेत असे दिसते. कारण “मिथ्याज्ञानाने अज्ञाननिवृत्ती मानणे समीचीन नाही.” असे ते पुढे म्हणतात. आता ‘चमत्कार’ म्हणजे ‘मिथ्या ज्ञान’ व मिथ्या ज्ञानाने अज्ञाननिवृत्ती होते असे मानणे योग्य नाही, असे त्यांचे म्हणणे असेल तर ‘आधी मिथ्या उभारावे / मग ते वोळखोन सांडावे / पुढे सत्य ते स्वभावे / अंतरी बाणे ॥ (दासबोध ७.३.४.) या रामदास स्वामींच्या वचनाचे काय ? असा प्रश्न निर्माण होतो. या वचनाशी गुलाबरावांच्या या विधानाचा विरोध होतो; आणि रामदास स्वामींचे ‘मिथ्या अगोदर उभे केल्याशिवाय सत्य कळत नाही’ हे म्हणणे वेदांत (वा शांकराद्वैत) तत्त्वज्ञानाशी अगदी सुसंगतच आहे. (ज्ञानेश्वरांचीही याला पुष्टी मिळते. उदा. ज्ञाने. ६.८८) असे असताना गुलाबराव ‘चमत्कार’ हे मिथ्या ज्ञान मानून त्याचा निषेध कसा करतात, हा प्रश्न आहे. तसा निषेध केला तर त्यांनी स्वतःचाच निषेध केल्यासारखे होईल. कारण त्यांच्या चरित्रात त्यांनी स्वतःच अनेक ‘चमत्कार’ केल्याची नोंद आहे.<sup>१९</sup> ते त्यांचे सर्व ‘चमत्कार’ मिथ्याच समजायचे

काय ? उदा. एकदा त्यांना नागपूरातील वास्तव्यात 'नारदपंचरात्र' हा ग्रंथ हवा होता. त्या ग्रंथाच्या भारतात दोनच प्रती अस्तित्वात असल्याचे ते म्हणाले. एक, नागपूरातील भोसले सरकारच्या वाड्यात व दुसरी मथुरेतील चोब्यांच्याकडे. नागपूरातील भोसले सरकारच्या वाड्यात कोणत्या कपाटात, त्याच्या कोणत्या खणात तो ग्रंथ आहे हेही त्यांनी सांगितले; आणि नेमके त्याठिकाणी तो ग्रंथ नंतर सांपडला. तो ग्रंथ आणल्यानंतर त्यांना हवी असलेली श्रुती त्या ग्रंथाच्या कोणत्या पानावर आहे, हेही त्यांनी सांगितले. आणि ग्रंथ उघडून पाहिल्यानंतर नेमके त्या पानावर ती श्रुती आढळली.<sup>१५६</sup> स्वतः आंधळे असून त्यांनी हे सांगितले हा 'चमत्कार' नव्हे काय ? त्याला ते 'मिथ्या' म्हणणार काय ? यापेक्षाही मोठा 'चमत्कार' त्यांनी केला आहे. उदा. एकदा माधान या त्यांच्या गावाहून चार मैलावरील चांदूरबाजार येथील जीन फॅक्टरीला रात्री ११ वाजता एकसारखा पाऊस पडत असताना व मध्ये दोन नाले पाण्याने भरून वाहत असताना स्वतः आंधळे असूनही एकटेच आले ! इतकेच नव्हे तर त्यांच्या अंगावरील सर्व कपडे त्यावेळी अगदी कोरडे असल्याचे फॅक्टरीतील निळकंठ काठीकरांना आढळून आले !<sup>१५७</sup> हा 'चमत्कार' त्यांनी कसा केला हे त्यांनी सांगितले नसले तरी असले 'चमत्कार' सत्पुरुषांच्या हातून घडू शकतात व ज्यांच्या हातून ते घडतात त्यांना त्यांचा निषेध करता येत नाही. स्वतः मॅडम ब्लॅव्हेट्स्की एकदा बोस्टन शहरात भर पावसात चालत आल्या असताना त्यांचे कपडे कोरडे राहिले असल्याचे स्वतः कर्नल ऑलकॉट यांनी पाहिले आहे. (Vol I p.350)\* आणि असे 'चमत्कार' (ब्रह्मविद्येचे धडे देण्यासाठीच) ब्लॅव्हेट्स्कींनी केले होते. तात्पर्य, स्वतः 'चमत्कार' करणाऱ्यांना 'चमत्कारां'चा निषेध करता येत नाही. ब्रह्मविद्येच्या उपासकांना तर मुळीच नाही. कारण ब्रह्मविद्येनुसार 'चमत्कार' खोटे नसतात. ते अगदी खरे असतात. अर्थात् ज्ञानेश्वरांनी म्हटल्याप्रमाणे ते 'पिंडजना'च्या जगात (म्हणजे स्थूल जगात) खरे असतात. किंवा पतंजलींनी म्हटल्याप्रमाणे जागृतीत ते खरे असतात. (व्युत्थाने सिद्धयः १) पण वेदांत किंवा ब्रह्मविद्या 'जागृती'लाच स्वप्न म्हणते याचे काय ? असा प्रश्न निर्माण होतो. कारण ब्रह्मविद्येनुसार आपली इंद्रिये जागृतीत आपल्याला नेहमी फसवीत असतात. ती आपल्याला या जगाचे खरे ज्ञान करून देत नाहीत, खरे सुख देत नाहीत. तथापि ती ते देतात असे समजून आपण त्यांना भुलतो व त्यांच्या पाठीमागे लागतो. गळतग्याचा तरुण रात्री त्या स्त्रीच्या पाठीमागून जागृतीतच गेला नाही काय ? भोजेच्या अमृत मगदुमाने रात्री भेटलेल्या त्या स्त्रीला जागृतीतच

\* असाच 'चमत्कार' बाळूमामा या धनगर सतांच्या बाबतीतही घडला आहे. बाळूमामा यांचे स्त्रीलाचरित्र - बी. बी. ऐदमाळे (प्रकाशनाच्या वाटेवर)

आपल्या गाडीवर घेतले नाही काय ? खुद्द कृष्णानंद हे वनखात्यातील त्या कामगाराच्या म्हणण्याला 'भुलून' आडवाटेने 'शिवालय' ला जागृतीतच गेले नाहीत काय ? अर्थात् आपण फसलो हे त्या सर्वांना नंतर कळले. ही भानामती होती, (जिला ते चुकीने पिशाच समजले), निसर्गात्म्यांची 'जादू' होती, भुलवणूक होती, हे 'सत्य' त्यांना उशीराने उमगले. पण हे 'सत्य' अगोदरच उमगावे म्हणून भारतीय (हिमालयीन भ्रातृसंघाचे) महात्मे-ब्रह्मवेत्ते यांनी ब्लॅव्हेट्स्की यांच्या माध्यमातून मागे वर्णन केलेले, 'भानामती'चे, 'जादू'चे, 'चमत्कारां'चे प्रयोग सुखवादी व भौतिकवादी पाश्चात्यांना करून दाखवले. अशारीतीने ब्रह्मविद्येचे धडे देण्यासाठीच, या दृश्य जगाचे मिथ्यात्व कळण्यासाठीच, 'भानामती,' 'जादू' वा 'चमत्कार' यांची गरज आहे.

गुलाबरावांच्या 'चमत्कारां' कडेही याच दृष्टीने पाहिले पाहिजे. कारण ते स्वतः ब्रह्मवादी, वेदांती होते; आणि म्हणून त्यांनी जसे 'चमत्कार' केले, तसा त्यांचा निषेधही केला; आणि हे योग्यच केले. कारण ब्रह्मविद्येचे धडे मिळण्यासाठी जशी व जितकी 'चमत्कारां' ची गरज आहे, तशी व तितकीच त्यांच्या निषेधाचीही गरज आहे. किंबहुना ब्रह्मविद्येत 'चमत्कार' हे त्यांच्या निषेध करण्यासाठीच करावयाचे असतात ! (असे म्हणता येईल.) ही गोष्ट वरवर परस्पराविरोधी (Self-contradictory) वाटत असली तरी वस्तुतः ब्रह्मविद्येच्या शिकवणुकीचा तो मूलभूत पायाच आहे. (हे माहीत असल्यामुळेच गुलाबराव थिऑसॉफीचे अनुयायी बनले असावेत काय ?) उदा. 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' या ब्रह्मविद्येच्या (वेदांताच्या किंवा शांकर अद्वैताच्या) तत्त्वज्ञानाचे प्रतिपादन करताना ब्रह्माचे सत्यत्व जग हे खोटे (माया) असल्याचे सिद्ध केल्यानेच प्रस्थापित होणार आहे; आणि जग खोटे आहे हे, जग हाच एक 'चमत्कार' (जादूने निर्माण केलेला मायिक देखावा) आहे, हे दाखवून दिल्याने सिद्ध होणार असून ते सिद्ध करण्यासाठी स्वतः शंकराचार्यांनी एका प्रसिद्ध 'चमत्कारा'चे (जादूच्या प्रयोगाचे किंवा भानामतीचे) उदाहरण दिले आहे. हा 'चमत्कार' म्हणजे प्रसिद्ध भारतीय गारुड्यांची दोरीची जादू (Indian Rope Trick) होय. (पाहा: ब्रह्मसूत्र १.१.१७ 'भेदव्यपदेशाच्च' या सूत्रावरील शंकराचार्यांचे भाष्य) ही भारतीय गारुडी जादू अशी :- गारुडी आकाशात जोराने गुंडाळलेली दोरी फेकतो. ती दोरी खडी उभी राहते व तिचे शेवटचे टोक आकाशात दिसेनासे होते. नंतर त्याचा मुलगा त्या दोरीवर चढतो व तोही दिसेनासा होतो. गारुडी त्याला हाका मारतो व उत्तर न मिळाल्यामुळे तो त्या दोरीवर एक सुरी घेऊन चढतो व तोही दिसेनासा होतो. थोड्या वेळाने त्या मुलाचा एक हात, दुसरा हात, पाय असे एकेक अवयव जमिनीवर पडतात, मुंडके ही शेवटी पडते. नंतर गारुडी खाली उतरतो. त्या मुलाचे ते सर्व

अवयव गोळा करून एका टोपलीत तो भरतो व ती उपडी करतो. थोड्याच वेळात त्या टोपलीतून तो मुलगा पूर्वी होता तसाच बाहेर पडतो. ही जादू उत्तर हिंदूस्थानात प्रत्यक्ष पाहिलेल्या दोघा अमेरिकनांनी तिचे वर्णन Chicago Tribune मध्ये विस्ताराने प्रसिध्द केले आहे.<sup>१११</sup>

डिसेंबर १९३४ च्या Chambers Journal मध्ये ६-७ ब्रिटिश अधिकाऱ्यांनीही भारतातून इंग्लंडला परतल्यानंतर ही जादू भारतात आपण पाहिल्याची साक्ष दिली आहे.<sup>११२</sup> (ब्लॅन्केटस्की यांनीही आपल्या Isis Unvelled या ग्रंथाच्या खंड १ पृ. ४७३-४ वर ही जादू पाहिलेल्या अनेकांच्या साक्षी त्यांच्याच शब्दात वर्णन करून दिल्या आहेत. आपणही ही जादू अनेकदा पाहिल्याचे म्हटले आहे.)

ही जादू पाहणाऱ्या एका व्यक्तीने तिचे कॅमेऱ्याने फोटो घेतले, तेव्हा मात्र प्रत्यक्षात तो गारुडी काही न करता केवळ जमिनीवर उभा असलेला फोटोत दिसला आहे. शंकराचार्यांनीही ही जादू करणारा गारुडी प्रत्यक्षात काही न करता केवळ जमिनीवर उभा असतो असे म्हटले असून (परमार्थरूपो भूमिष्ठोऽन्यः ।) आत्मा परमार्थतः काही करीत नाही, जो काही (कर्म) करतो. तो पारमार्थिक (खरा) आत्मा नसून जन्म मरणाच्या फेऱ्या करणारा खोटा संसारी आत्मा (जीवात्मा) असतो, हे या दृष्टांताने त्यांना सांगावयाचे आहे. [‘भेदव्यपदेशाच्च’ म्हणजे खरा जो आत्मा व खोटा जो जीव यातील भेद (फरक) हे ब्रह्मसूत्र सांगते.] हाच ‘ब्रह्म’ व ‘माया’ यातील भेद असून उपनिषदांनी तो ‘इंद्रः मायाभिः पुरुरूप ईयते ।’ (बृ.उप. २.५.१९) [म्हणजे ‘ईश्वर स्वतःच्या मायेने अनेक रूपे (वा जगे वा लोक) धारण करतो)] व ‘य एको जालवान् ईशते ईशनिभिः लोकान् ।’ (श्वे.उप. ३.१) [म्हणजे जो एक गारुडी (ईश्वर) अनेक (लोक निर्माण करून त्या) लोकांवर (मायेने) स्वतःची सत्ता चालवतो.] या शब्दात व्यक्त केला आहे. येथे ‘एकटा ईश्वर अनेक रूपे (वा जगे) धारण करणे’ व ‘अनेक लोक निर्माण करून त्यावर एकट्या गारुड्याने (जालवान्) सत्ता चालवणे’ ही परमेश्वराची गारुडी (इंद्रजाल) विद्या असून तिलाच परब्रह्माची ‘माया’ म्हटले आहे. (गारुडी विद्येला-जादूला-संस्कृतात-व नंतर इतर भारतीय भाषात-‘इंद्रजाल’ हे नाव या उपनिषद् वचनावरूनच आले आहे.) यातूनच ‘माया’ म्हणजे ‘खोटे’ किंवा ‘भ्रम’ हा अर्थ रुढ झाला व सर्व ‘चमत्कार’ हे ‘खोटे’ असतात, ‘जादू’ म्हणजे भ्रम निर्माण करणे अशा कल्पनाही रुढ झाल्या. म्हणूनच ज्ञानेश्वरांनी गीतेच्या १३ व्या अध्यायातील २१ व्या श्लोकावर भाष्य करताना मायेचे (प्रकृतीचे) वर्णन पुढील शब्दात केले आहे : हे नादाची टाकसाळ । हे चमत्काराचे वेळाउळ । किंबहुना सकळ । खेळू इयेचा ॥ (१३.९९३) [म्हणजे ‘सर्व शब्द किंवा ध्वनी या मायेतून निर्माण झाले आहेत. ही चमत्कारांचे माहेर घरच

आहे. फाट काय सांगावे, सगळा (दृश्य जगाचा दिसणारा) खेळ हिचाच आहे.] आधुनिक (रुढ) भौतशास्त्रज्ञांना व जीवशास्त्रज्ञांना चक्रविणारा व चक्राविणारा या खेळातील सर्वात मोठा भाग म्हणजे 'जडात चैतन्य निर्माण करणे' हा ('चमत्कार') असून तो पुढील शब्दात ज्ञानेश्वरांनी वर्णन केला आहे; हे प्रतिक्षणी नित्य नवी। रुपाचीच आद्यवी। जडातेही माजवी। इयेचा माजू ॥ (१३.९८७) [म्हणजे 'ही प्रकृती किंवा माया क्षणाक्षणाला नवे रूप धारण करते. (म्हणून) सर्व रूपे हिचीच आहेत.'] जडात माज (चैतन्य) निर्माण करण्याइतका हिचा उन्मत्तपणा आहे.] हीच गोष्ट दुसऱ्या एका रीतीने ते अशी सांगतात: भलतैसाही खेळू। लेखा आणी ॥ (१३.९८५) [म्हणजे '(ती माया) भलता-सलता (भानामती-जादूसारखा) खेळ दाखविते'] जडापासून पृथ्वीवर पहिला जीव कसा निर्माण झाला या प्रश्नाबरोबरच (पृथ्वीवरील जीवाच्या उत्पत्तीच्या कोड्याबरोबरच) 'जड वस्तूत (भानामतीमध्ये) चैतन्य भरल्याप्रमाणे इकडून तिकडे उडून जाण्याचा 'उन्मत्तपणा' (जीवंतपणा) कोडून येतो.' (गुरुत्वाकर्षण शक्तीविषयीच्या भौतशास्त्राच्या नियमांचे उल्लंघन जड वस्तू कशी करते) ह्या कोड्याचा उलगडा करण्यासाठी भौतिक विज्ञानाचे नियम कसे निरूपयोगी ठरतात, हे भौतशास्त्रज्ञांना दाखवून देणारे हे मायेचे 'खेळ' आहेत. ज्या भौतिकशास्त्रज्ञांना हे 'खेळ' भौतिक नियमांचे उल्लंघन करीत असल्यामुळे अडचणीचे वाटतात त्यांना एक तर त्या 'खेळा'कडे दुर्लक्ष करणे किंवा त्यांना खोटे म्हणणे यावाचून गत्यंतर नाही; आणि प्रत्यक्षात ते असेच करताना आढळतात. पण असे करणे हे विज्ञानवृत्तीशी प्रतारणा ठरते. अर्थात त्यांना त्याची दिक्कत नसते. कारण मायेच्या अधीन झाल्यामुळे मायिक जगाच्या या (खोट्या) विज्ञानालाच ते खरे विज्ञान समजतात व खऱ्या (आध्यात्मिक) विज्ञानाला (विज्ञानवृत्तीला) ते पारखे होतात. त्यांची अवस्था प्लेटोच्या दृष्टांतातील गुहेत अडकून एकाच दिशेने पाहणाऱ्या व सावल्यांना 'सत्य' समजणाऱ्या माणसांसारखी किंवा 'पांच आंधळे व एक हत्ती' या कथेतील हत्तीच्या एकाच अवयवाला संपूर्ण हत्ती समजणाऱ्या आंधळ्यासारखी झालेली असते.

**एकाच वेळी 'चमत्कार' हे खरे आणि खोटे, हे कसे ?**

अशारीतीने परमेश्वर हा दृश्य विश्वाचा खोटा पसारा निर्माण करण्याचा खेळ करणारा गारुडी असल्यामुळे व मानवी जीवात्मा जन्ममरणाच्या फेऱ्यात सापडलेले परमेश्वराचेच (खोटे) रूप असल्यामुळे हे दृश्य जग आणि हे दृश्य शरीर धारण करणारा (स्वतःच्या मर्त्य देहाला 'मी' समजणारा) खोटा जीवात्मा हे दोन्ही खरे समजून त्या मायिक जगात, त्या जगाच्या 'माये'त, गुरफटणे, त्याविषयी आसक्ती बाळगणे म्हणजे या गारुडी विद्येच्या मोहाला बळी पडणे होय. त्या जगाचे

व स्वतःचे खरे स्वरूप (ब्रह्मस्वरूप) ओळखणे म्हणजे हा गारुडी खेळ असल्याचे ओळखणे होय, आणि ते ओळखणे हे त्या खेळाचा (वरील दोरीच्या गारुडी खेळाचा बनला तसा) तटस्थ फोटोग्राफर बनून त्याचा फोटो घेण्यानेच (त्याचे खरे स्वरूप उघड करण्यानेच) शक्य आहे. या फोटो घेण्याला भगवद्गीतेत 'पश्यन्ति ज्ञानचक्षुः' म्हणजे (हा गारुडी खेळ असल्याचे किंवा जीवात्म्याहून परमात्मा किंवा मायेहून ब्रह्म वेगळे असल्याचे-भेदव्यपदेशाच्च) 'ज्ञानचक्षु' असणारेच पाहू, -ओळखू शकतात, असे म्हटले असून ते वरील (दोरीच्या जादूच्या) उदाहरणातील कॅमेऱ्याने फोटो घेणारे (फोटोग्राफर) ठरतात, हे उघड आहे. ही भारतीय 'दोरीची जादू' म्हणजे खोटे दृश्य वा भ्रम निर्माण करणारा गारुडी खेळ असल्याचे जसे आधुनिक फोटोग्राफीच्या (वैज्ञानिक) तंत्रामुळे कळू शकते, तसे हा दृश्य विश्वाचा पसारा व जीवात्म्याचे संसारी (म्हणजे जन्ममरणाच्या फेऱ्याचे) जीवन हाही एक परमेश्वराचा गारुडी खेळ (इंद्रजाल) असल्याचे अध्यात्मविज्ञानाच्या साधनेने (योग-साधनेने वा ब्रह्मविज्ञानाच्या तंत्राने) कळू शकते. ज्या ज्ञानचक्षूनी ते माणसाला कळते-ओळखता येते-(असे गीता म्हणते) ते ज्ञानचक्षू मिळविण्याचे-वैज्ञानिक सत्य जाणण्याचे-तेच एकमेव साधन आहे. ब्रह्मविद्येच्या दृष्टीने 'चमत्कार खोटे' आहेत ते या गारुडी विद्येच्या दृष्टांताच्या दृष्टीने, म्हणजे ते 'चमत्कार' अध्यात्म दृष्टीला खोटे आहेत; व्यावहारिक दृष्टीने पाहणाऱ्याला मात्र ते 'खरे'च वाटतात व त्या दृष्टीने ते 'खरे'च आहेत. "आम्ही वेदांती चमत्कारांचा खेटर मारून निषेध करतो" असे गुलाबराव जेव्हा म्हणतात, तेव्हा ते या ब्रह्मविद्येच्या वा अध्यात्मशास्त्राच्या दृष्टीने म्हणतात, व्यावहारिक दृष्टीने म्हणत नाहीत. संत तुकाराम 'सदेह' (सूक्ष्मसदेह वा लिंगसदेह) वैकुंठाला गेले असे जेव्हा ते म्हणतात, तेव्हा ते व्यावहारिक दृष्टीने (पिंडजनी) म्हणतात. आदित्यमंडलाकडे जाणाऱ्या शुकाचार्यांना त्यांचे वडील व्यास 'हाक मारत होते' ते व्यावहारिक जगात हाक मारत होते. वेदांती जगात हाक मारत नव्हते. व्यवहारी जगात घडणारे 'चमत्कार' म्हणूनच खरे मानावे लागतात आणि त्यांची शास्त्रीय उपपत्ती देण्याचे उत्तरदायित्व वैज्ञानिकांवर येऊन पडते. सूक्ष्म देहाने होणारे ऑलकॉट यांच्या गुरुंचे आकाशगमन-ऑलकॉट यांच्या खोलीत प्रगट होणे/अदृश्य होणे किंवा ब्लॅन्हेटस्की यांचे अदृश्य होणे, परत प्रगट होणे, हेही व्यावहारिक जगातील 'चमत्कार' होते व त्यांची व्यावहारिक दृष्टीने शास्त्रीय उपपत्ती दिली पाहिजे. ती अर्तीन्द्रिय शास्त्राच्या आधारे देता येते. ती दोन तऱ्हेनी देता येते, हे वर (पृ. ३९०) सांगितले आहे. एक, लिंगदेहाच्या साहाय्याने व दोन, मोहिनी विद्येच्या (hypnotism) साहाय्याने. दुसऱ्या प्रकारात स्थलांतर होत नाही. पहिल्या प्रकारात मात्र ते होते. हे स्थलांतर अर्थात् सूक्ष्मदेहाने होते. पण स्थूल देहानेही स्थलांतर होऊ

शकते. पण हे थोड्याच अंतरावर होऊ शकते.\* अशा स्थलांतराचे एक प्रत्यक्ष घडलेले उदाहरण येथे देतो. त्यामुळे सिध्द पुरुष अदृश्य पातळीवरून अडचणीत सापडलेल्यांना कशी मदत करतात याची वाचकांना कल्पना येईल.

### अदृश्य पातळीवरून मदत

हा प्रयोग खुद्द अ‍ॅनी बेझंट यांच्याच बाबतीत झाला असून तो लोकांना अविश्वसनीय वाटेल म्हणून स्वतः अ‍ॅनी बेझंटनी त्याची वाच्यता कुठेही केलेली नाही. तथापि त्यांचे सहकारी लेडबीटर यांनी आपल्या **Invisible Helpers** या ग्रंथात अ‍ॅनी बेझंट यांचे नांव उघड न करता ही घटना सांगितली आहे. (त्यांच्या इच्छेला मान देण्यासाठी त्यांनी त्यांचे नांव प्रकट केले नाही.) पण इतकी महत्त्वाची घटना कुणा सामान्य व्यक्तीच्या बाबतीत घडलेली नसून खुद्द थिऑसॉफिकल सोसायटीच्या अध्यक्षांच्याच बाबतीत घडलेली आहे, हे सत्य थिऑसॉफीच्या अनुयायांपासून तरी फार दिवस लपवून ठेवणे योग्य नाही, असे वाटल्यामुळे लेडबीटरनी ३२ वर्षांनंतर आपल्या या ग्रंथाच्या सुधारित आणि विस्तारित आवृत्तीत १९२८ साली पहिल्यांदा ही घटना अ‍ॅनी बेझंट यांच्याच बाबतीत घडली असल्याचे सांगून टाकले.<sup>११४</sup> ही घटना अशी: एकदा रस्त्याने त्या चालत जात असताना त्या रस्त्यावर अचानक उसळलेल्या दंगलीत सापडल्या. त्यातून निसटणे त्यांना कठीण झाले. त्यावेळी त्यांच्या जीवावरच बेतले. त्यांच्या जीवाचे कोणत्या क्षणी काय होईल हे सांगता येत नव्हते. अशावेळी काय घडले हे कळण्यापूर्वीच त्यांना असे आढळून आले की आपण त्या रस्त्याच्या पलीकडील गर्दी नसलेल्या मोकळ्या रस्त्यात अचानक (उचलले जाऊन) आलो आहोत. तो दंगा पलीकडच्या रस्त्यात चाललेला त्यांना स्पष्ट ऐकायला येत होता. आपण असे येथे कसे आलो हे त्यांना कळले नाही. गोंधळलेल्या मानसिक अवस्थेतच त्या घरी पोहोचल्या. नंतर ही घटना त्यांनी ब्लॅन्हेट्स्कींना सांगितली, तेव्हा त्यांनी असा खुलासा केला की त्यांचे कर्म त्या दंगलीत सापडून प्राण जाण्याचे नसल्यामुळे व पुढील कामासाठी त्यांची आवश्यकता असल्यामुळे एका ब्रह्मवेत्याने आपल्या शिष्याकरवी त्यांचे असे संरक्षण केले होते. पण त्यांचे त्याने कसे संरक्षण केले होते ? त्यांना त्या गर्दीतून अक्षरशः अंतराळी उचलून पलीकडच्या समांतर, पण गर्दी नसलेल्या रस्त्यात अलगद नेऊन ठेवले होते ! पण हे उचलून ठेवणे अदृश्य पातळीवर झाले होते. कारण त्या अंतराळातून

\* वर तळटीपेत (पृ. ३८८) मध्ये सांगितल्याप्रमाणे भविष्यकाळी हे (अणू-परमाणूचे विघटन-संघटन करून प्रवास करण्याचे) सामर्थ्य शास्त्रज्ञांना प्राप्त होणार असले तरी ते ५ मिनिटापेक्षा जास्त काळ टिकणार नाही असे म्हटले आहे. सूर्य पृथ्वीपासून आठ प्रकाश मिनिटे अंतरावर असल्यामुळे हे सामर्थ्य अंतराळ प्रवासाच्या दृष्टीने किती मर्यादित आहे, हे लक्षात येईल.

जाताना कोणलाही दिसल्या नव्हत्या. आता हे कसे शक्य आहे? लेडबीटर यांनी किरणवक्त्रीभवनाने माणसाला असे अदृश्य करणे शक्य असून भविष्य काळात भौतिक शास्त्रज्ञही हे करू शकतील असे म्हटले आहे.<sup>११५</sup> हे त्यांचे ७५ वर्षांपूर्वीचे भाकीत आज खरे ठरण्याच्या मार्गावर आहे असे दिसते. उदा. अमेरिकेतील पेनसिल्व्हानिया विद्यापीठाचे इलेक्ट्रॉनिक इंजिनियर्स 'प्लॅझ्मॉनिक कव्हर' नावाच्या वस्तू अदृश्य करणाऱ्या प्रकाशकिरणांच्या तंत्राचे प्रयोग यशस्वी करण्याच्या मार्गावर आहेत अशी IANS ची बातमी नुकतीच प्रसिध्द झाली आहे. त्यात म्हटले आहे की "A cloaking device that makes objects invisible is being developed by researchers bringing the magic of Harry Potter into the world of scientific fact."<sup>११६</sup> हे 'प्लॅझ्मॉनिक कव्हर' म्हणजे इलेक्ट्रॉन्स व प्रकाशकिरण यांच्या संयोगाने प्रकाश जड वस्तूपासून अन्यत्र वळविणे होय. असे झाले की ती वस्तू दिसनाशी होते. पण ब्रह्मवेत्त्या सिध्दपुरुषांना अशा तंत्राची काही आवश्यकता नाही. भुवर्लोकाच्या पातळीवरील निसर्गात्म्यांना माणसात दृष्टिभ्रम निर्माण करून (भारतीय दोरीच्या जादूप्रमाणे) अस्तित्वात नसलेल्या गोष्टी अस्तित्वात असल्याप्रमाणे दृश्य स्वरूपात जशा दाखवता येतात तशाच पध्दतीने, म्हणजे दृष्टिभ्रमाने, दृश्य असलेल्या वस्तू अदृश्यही करता येतात; आणि हे सिध्द पुरुषही करू शकतात. हे अर्थात् अदृश्य-भुवर्लोकाच्या-पातळीवरच (astral plane) शक्य आहे. निसर्गात्म्याप्रमाणे सिध्द पुरुष अदृश्य पातळीवर लिंगदेहाने (astral body) वावरू शकतात व जड वस्तू अंतराळी उचलू शकतात. (मृतात्म्यांच्या बैठकीत टेबल 'आपोआप' उचलले जाणे इ. प्रकार अशाच रीतीने घडत असतात.) आता दोरीच्या जादूत गारुडी दोरीवर चढत असल्याचा प्रेक्षकांना दिसतो. पण हा दृष्टिभ्रम असून तो जमिनीवर काही न करता केवळ उभा असतो. म्हणजे तो 'अदृश्य' होतो. ज्या दोरीवर तो चढतो ती दोरीही खोटी असते. म्हणजे मूळ दोरीही 'अदृश्य' होते. या 'अदृश्य' करण्याला व खोटी दोरी व तिच्यावर चढणारा खोटा गारुडी 'दृश्य' करण्याला casting glamour म्हणजे दृष्टिभ्रम निर्माण करणे (शब्दशः 'भुरळ पाडणे') म्हणतात. ही भुरळ निसर्गात्मे पाडू शकतात पण सिध्द पुरुष पाडू शकत नाहीत, असे काही म्हणता येणार नाही. कुणालाही न दिसता अंती बेझंट उचलल्या गेल्या व पलीकडील रस्त्यावर ठेवल्या गेल्या ही वस्तुस्थिती सिध्द पुरुषांचे हेच सामर्थ्य सिध्द करते. ही घटना अपवादात्मक समजण्याचे कारण नाही. अशा घटनांची उदाहरणे अन्यत्रही सापडतात. अशी काही उदाहरणे वाचकांच्या माहितीसाठी येथे देतो. त्यामुळे सकृदर्शनी अविश्वसनीय वाटणाऱ्या या घटना वस्तुतः म्हणजे अध्यात्मशास्त्राच्या दृष्टीने तशा मुळीच नाहीत, याची वाचकांना कल्पना येईल.



वस्तू 'अदृश्य' कशी करता येते

कर्नल ऑलकॉट यांनी थिऑसॉफीकडे वळण्यापूर्वी आपले मृतात्मविद्येच्या बैठकातील (spiritualistic seances) अनुभव **Peoples From The Other World** या पुस्तकात दिले असून त्यामध्ये श्रीमती कॉम्पटन ही माध्यम बाई (medium) अदृश्य (dematerialise) झाल्याच्या घटनेचा उल्लेख केला आहे. हे dematerialise होणे म्हणजे प्रेक्षकांवर 'अदृश्य' झाल्याची भुरळ पाडणे असून शरीराचे (मागे सांगितलेले) विघटन (disassembling of molecules) नव्हे, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. हीच मोहिनी विद्या होय. दुसरे उदाहरण कार्लोस मिराबेली या ब्राझीलच्या माध्यमाचे आहे. हा डी.डी.होमप्रमाणे हवेत तरंगत तर असेच, पण अनेकदा एका खोलीतून अदृश्य होऊन दुसऱ्या खोलीत प्रकट होत असे.<sup>११७</sup> तिसरे उदाहरण ए.आर.वालेस या अतींद्रिय संशोधकाचे आहे. हा एक प्रसिद्ध जीवशास्त्रज्ञ आहे. (याचे डार्विनच्याही पूर्वी जीवसृष्टीचे निरीक्षण करून उत्क्रांतिवादी सिध्दांत मांडला होता. पुस्तकरूपाने लिहून त्याची एक प्रत डार्विनकडे पाठवली होती व आपणच उत्क्रांतिवादी सिध्दांताचे जनक आहोत, या त्याच्या कल्पनेला प्रचंड धक्का दिला होता, हा इतिहास या क्षेत्रातील जाणकारांना माहीत आहे.) हा वालेस प्रारंभी अतींद्रिय घटनांवर विश्वास न ठेवणारा संशयवादी शास्त्रज्ञ होता. पण त्यांचा प्रत्यक्ष अनुभव आल्यामुळे त्यांवर नंतर विश्वास ठेवू लागला. त्याने आपले याविषयीचे अनुभव **Miracles and Spiritualism** या ग्रंथात प्रसिद्ध केले असून त्यात अँग्रेस निकोलस (हिचे लग्नानंतरच नांव गुप्ती होते.) या अत्यंत जाडजूड माध्यम बाईची अदृश्य होऊन प्रकट झाल्याच्या 'चक्षुर्वै सत्यं' घटनेची माहिती दिली आहे. (ब्लॅन्हेट्स्कीनीही आपल्या **Isis** या ग्रंथात तिचा संदर्भ दिला आहे.) ती आपल्या घरात अदृश्य झाली तेव्हा तिच्या हातात हिशेबाची वही होती आणि चार मैलावरील घरात चाललेल्या मृतात्म-बैठकीच्या टेबलावर प्रकट होऊन ती इतक्या जोराने आदळली की तेथील लोक भीतीने ओरडले. त्यावेळी तिच्या हातात तिची हिशेबाची वही तशीच होती.<sup>११८</sup> काशीचे तैलंग स्वामी नम्र फिरत असल्यामुळे तेथील कलेक्टरने आपल्या पत्नीच्या सांगण्यावरून त्यांना एकदा खोलीत कोंडून घालून कुलूप घातले व त्याला सील केले. तथापि ते पूर्वीप्रमाणेच रस्त्यात फिरत असलेले लोकांना दिसले. खोलीचे सील केलेले कुलूप तसेच होते.<sup>११९</sup> गोंदवलेकर महाराजांनीही त्यांना एकदा तापलेल्या वाळूत पडलेले पाहून पाठीवरून आपल्या बिन्हाडावर आणून खोलीत घातले व त्याला कुलूप लावले. पण ते पुन्हा त्याच ठिकाणी दिसले. खोलीचे कुलूप तसेच होते.<sup>१२०</sup> (असे दोनदा घडले.) बुदबुदाचार्य नांवाचे एक हठयोगी होते. त्यांच्याविषयी पुण्याचे श्री. द.ल. उर्फ काकासाहेब

निरोखेकर (गजाननमहाराजांचे शिष्य) म्हणतात, “एकदा बुदबुदाचार्य आम्हास म्हणाले, ‘मला खोलीत कोंडा.’ त्याप्रमाणे आम्ही त्यांना खोलीत कोंडून बाहेर कडी लावली. ते एकदम बाहेर आले. कसे आले हे आम्हाला कळले नाही.”<sup>२०१</sup> आता हे कसे शक्य आहे ?

एका जड वस्तूमधून दुसरी जड वस्तू कशी जाऊ शकते (matter passing through matter) याची उदाहरणे मागे दिली आहेत. उदा. ऑलकॉट यांच्या सील केलेल्या लिफाफ्यातील पत्राला ते सील न फोडता एका ब्रह्मवेत्त्याचे उत्तर त्याच लिफाफ्यात हजारो मैलावरून त्यांच्या नजरेसमोरच एका तासात आले असल्याचे ते सील फोडून पाहिल्यानंतर स्वतः त्यांनाच आढळून आले होते. (पृ.३५२) बंद बॅगेत हार्मोनिकॉन हे लहान मुलांचे खेळणीतील वाद्य अचानक आले असल्याचा ‘चमत्कार’ याच सदरात मोडतो (पृ.३४०) भानामतीमध्ये अशा घटना नेहमीच घडत असतात. उदा. प्रकरण २,३,५ व १४ मधील बंद खोलीतील छतातून दगड पडण्याचे, बंद घरातून भांडी बाहेर येण्याचे प्रकार याच स्वरूपाचे आहेत. प्रकरण १४ मध्ये (‘कवठेगुलंदची भानामती’) आण्णासाहेब पाटील यांनी यासंबंधी प्रयोग करून खात्री केल्याचेही सांगितले आहे. (पृ.६२) पाश्चात्य देशात जर्मनीमधील निकेलहाइम येथील भानामतीत श्री. अँडम या वकीलाने असाच प्रयोग करून खात्री केली आहे. घरातील वस्तू अदृश्य होऊन घराबाहेर पडतात असे त्या घरच्या लोकांनी सांगितल्यावरून त्याने स्वयंपाकघरातील टेबलावर काही बाटल्या ठेवल्या व घरातील सर्व लोकांना बाहेर काढून स्वयंपाकघराच्या खिडक्या-दारे बंद केल्या. नंतर स्वतःही तो बाहेर आला. थोड्याच वेळात त्या बाटल्या घराबाहेर हवेतून छताच्या पातळीवरून खाली वक्रगतीने पडत असलेल्या सर्वांना दिसल्या.<sup>२०२</sup> जड वस्तूमधून जड वस्तू आरपार जाऊ शकते हे सिद्ध करणारे हे प्रयोग असून हे रुढ भौतिक विज्ञानाला भानामतीचे सर्वात मोठे आव्हान असल्याचे डब्ल्यू.जी.रोल या भानामती-संशोधकाने म्हटले आहे.<sup>२०३</sup> पण ब्रह्मवेते व त्यांचे शिष्य हे नेहमीच असले प्रयोग करीत असतात, हे यासंबंधीचे प्रस्तुत प्रकरणातील ब्लॅन्हेट्स्की यांचे प्रयोग दाखवून देतात. हे कसे करता येते हे ब्लॅन्हेट्स्की यांनी स्वतःच ऑस्ट्रेलियाचे एक प्रोफेसर जॉन स्मिथ यांना लिहिलेल्या एका पत्रात सविस्तर सांगितले असून<sup>२०४</sup> ऑलकॉट यांनी केलेल्या त्यांच्या सामर्थ्याच्या वर्गवारीतील पहिल्या आकाशतत्त्वाच्या ज्ञानात तो प्रकार मोडतो. (पृ.३५३) [ब्लॅन्हेट्स्की यांनी जडवस्तूला ‘घनीभूत आकाश’ (condensed Akash) असेच म्हटले आहे.] हे आकाश-तत्त्वाचे ज्ञान ‘करणी’च्या वस्तू काढणाऱ्यांनाही (सिध्दीच्या रूपात) असू शकते, ही गोष्ट ज्यांच्यावर ‘करणी’ करण्यात येते त्यांच्या घरात वा परिसरात ‘करणी’च्या वस्तू जमिनीत पुरलेल्या असतानाही त्या ‘करणी’ काढणाऱ्याच्या हातात, जिथे त्या वस्तू पुरलेल्या असतील

तेथून आपोआप येतात, असे प्रत्यक्ष याविषयी केलेल्या प्रयोगात आढळून आले आहे.<sup>२०५</sup> या सर्व प्रयोगात एक जड वस्तू दुसऱ्या जड वस्तूमधून आरपार जाऊ शकते, हे सिद्ध होते. ती जेव्हा अशी आरपार जाते तेव्हा ती विघटन पावते, म्हणजे dematerialise होते व परत घनीभूत होते, म्हणजे rematerialise होते. पण वर वर्णन केलेल्या माध्यमांच्या बाबतीत व तैलंग स्वामींच्या बाबतीत त्यांची शरीरे dematerialise होत नाहीत, फक्त ती 'अदृश्य' बनतात आणि तीही दृष्टिभ्रम निर्माण करून. ज्या खोलीत व घरात ती असतात त्यांच्या भिंती dematerialise होतात व त्यामुळे त्यांना त्यामधून सहज आरपार जाता येते. येथे प्रश्न एवढाच आहे की हा ('अदृश्य' होण्याचा) दृष्टिभ्रम ते कसा निर्माण करतात? वैयक्तिक संमोहनाच्या प्रयोगात संबंधित व्यक्तीला सूचना दिल्यानंतर हा दृष्टिभ्रम निर्माण होऊ शकतो. दोरीच्या जादूसारख्या (किंवा प्रस्तुत लेखकाने पाहिलेल्या मुलाचा गळा कापण्याच्या किंवा सापामुंगसाच्या लढाईच्या) प्रयोगात (सामूहिक हिप्नॉटिझममध्ये) सूचनाही दिल्या जात नसताना सर्वांना दृष्टिभ्रम कसा निर्माण होतो हा प्रश्न आहे. याचे उत्तर रुढ भौतिक शास्त्र (व रुढ मानसशास्त्रही) देऊ शकत नाही. मनाला उघड शब्दात सूचना दिल्याने डोळ्यांना अस्तित्वात असलेली भौतिक (जड) वस्तू कशी दिसेनाशी होते, याची उपपत्तीही (वैयक्तिक संमोहनाच्या बाबतीतही) रुढ मानसशास्त्र देऊ शकत नाही; आणि तरीही हिप्नॉटिझमच्या प्रयोगात जणू काहीच गूढ नसल्याप्रमाणे, जणू ती रुढ विज्ञानाची एक सर्वसामान्य घटना असल्याप्रमाणे 'चमत्कार' नाकारणारे जडवादी व अंधश्रध्दानिर्मूलनवादी लोक हे प्रयोग सर्रास स्टेजवर सार्वजनिकरीत्या करीत असतात; (आणि अशारीतीने इतरांनाच नव्हे तर स्वतःलाही फसवत असतात ! ) याबाबतीत फिनली हर्ली या लेखकाने [Sorcery (1985) (चेटूक) या ग्रंथात] म्हटले आहे की हिप्नॉटिझमच्या रुपाने जादू रुढ विज्ञानात मागच्या दाराने आली; त्यात वेषांतर करून शिरली. अशारीतीने बुद्धिवाद्यांनी जादूला विज्ञानातून हद्दपार केले तरी ती परत विज्ञानात शिरल्याचे त्यांना कळले नाही.<sup>२०६</sup> आणि जोपर्यंत दृश्य जगाच्या पलीकडे दृश्य भौतिक जगाइतकेच-नव्हे त्याच्यापेक्षाही जास्त 'सत्य' असे- 'अदृश्य' जग अस्तित्वात असल्याचे हे बुद्धिवादी व जडवादी मान्य करीत नाहीत, तोपर्यंत त्यांना ते कळणार नाही व इतरांना व स्वतःलाही ते असेच फसवत राहतील !

वस्तू अदृश्य कशी करता येते हे कळण्यासाठी प्रत्येक वस्तूला स्थूल देहाप्रमाणेच लिंगदेहही (astral body) असते हे लक्षात ठेवणे जरूर आहे. नेत्रातील दृक्पटलावर (retina) वस्तूचे प्रतिबिंब पडल्यानंतर त्याचा संदेश मेंदूला मज्जातंतूद्वारा पोचतो. मेंदूच्या पेशींच्या लिंगदेहाला हे संदेश पोचले तरच ती वस्तू त्या माणसाला दिसते; अन्यथा नाही. टेलिग्राफ वायरमधून जाणारे संदेश जसे अन्यत्र वळवता

येतात तसे हे मज्जातंतूतून जाणारे संदेश अन्यत्र वळवता येतात. याला tapping म्हणतात. अशापध्दतीने ते संदेश गाळले (tap केले) की ती वस्तू अदृश्य होते. हे संदेश मेंदूच्या लिंगदेहाला पोचण्यास प्रतिबंध (tapping) करण्याचे हे सामर्थ्य लिंगदेहाच्या पातळीवरूनच-म्हणजे भुवर्लोकातून (astral plane) -उपयोगात आणता येते. (भौतिक पातळीवर हेच काम भूल देणारी novocaine इ. रसासने वापरून रुग्णाला वेदनामुक्त वा बेशुध्द करण्यात येते.) आणि हीच (भुवर्लोकाची) पातळी निसर्गातले व सिध्द पुरुष यांच्या कार्याची पातळी असते. याच पातळीवर मनाला (व्यक्तीच्या मनोदेहाला) सुप्त सूचना देण्यात येतात. (संदेश टॅप केले जातात.) त्यासाठी स्पष्ट शब्दांची (articulated words) आवश्यकता नाही. हे कार्य सामूहिक पातळीवर जेव्हा करण्यात येते, तेव्हा त्याला mass hypnotism किंवा 'सार्वजनिक जादू' म्हणतात. दोरीच्या जादूत हे कार्य गारुडी आज्ञाधारक निसर्गात्म्यांच्या मदतीने करतो. [अशा कार्यासाठी त्यांना बोलावण्याच्या दोन पध्दती असून एकात विनंती किंवा प्रार्थना असते. (याला invocation म्हणतात.) दुसऱ्यात आज्ञा असते. (याला evocation म्हणतात.) मंत्रशास्त्र हे पहिल्या प्रकारात मोडते. 'करणी' किंवा तंत्रशास्त्र हे दुसऱ्या प्रकारात मोडते. दुसरा प्रकार धोकादायक असतो. कारण तंत्रात बिघाड झाला तर निसर्गातले ते करणाऱ्यावर उलटू शकतात.]

स्पष्ट शब्दांनी सूचना देऊन संमोहनावस्थेत वस्तू अदृश्य करता येते (व नसलेली वस्तू दृश्य करता येते) हे सर्वांना माहीत आहे. विचारसंक्रमण (telepathy) सत्य असेल (आणि ते सत्य असल्याबद्दलचे असंख्य प्रयोग आणि पुरावे आहेत) तर जे स्पष्ट शब्दांच्या साहाय्याने संमोहनावस्था निर्माण करून करता येते, ते विचारसंक्रमणाने, म्हणजे स्पष्ट शब्दांचा वापर न करता करता यावे यात कसलेच आश्चर्य नाही. येथे स्पष्ट शब्दांचा वापर करून वस्तू कशा अदृश्य करण्यात येतात यासंबंधीच्या प्रत्यक्ष केलेल्या दोन प्रयोगांची माहिती देतो. त्यामुळे विचार संक्रमणानेही म्हणजे स्पष्ट शब्द न वापरता ती गोष्ट कशी होते, हे वाचकांना पटेल. (विचारसंक्रमणाचीही उदाहरणे नंतर देऊ )

टॉम नांवाच्या व्यक्तीवर एका व्यावसायिक हिप्नॉटिस्टने संमोहनाचा प्रयोग करून शेवटी सूचनेने संमोहनातून बाहेर आणले (जागे केले). पण संमोहनातून बाहेर आणण्यापूर्वी त्याला अशी सूचना केली की संमोहनातून बाहेर आल्यानंतर त्याला त्याची लॉरा नावाची किशोरी वयाची मुलगी (जी तेथे उपस्थित होती) अदृश्य बनेल. नंतर तो बसलेल्या खुर्चीसमोर टॉमच्या त्या मुलीला उभी करून टॉमला संमोहन अवस्थेतून बाहेर आणले-जागे केले आणि त्याला विचारले की त्याला त्याची मुलगी लॉरा कुठे दिसते का ? टॉमने खोलीत सभोवार व सभोरच्या आपल्या मुलीच्या शरीरातून आरपार दृष्टी गेल्याप्रमाणे आपली नजर फिरवली व

तो म्हणाला, “नाही.” हिप्नॉटिस्टने पुन्हा खात्री करून घेण्यास सांगितले आणि टॉम आपल्या मुलीच्या जास्तच खिदळणाऱ्या हास्याचा आवाज जणू कानवर पडला नसल्याप्रमाणे पुन्हा म्हणाला, “नाही.” नंतर हिप्नॉटिस्टने आपल्या खिशातील घड्याळ गुपचुपपणे काढून लॉराच्या पाठीला ते कोणालाही दिसणार नाही अशारीतीने दाबून धरले व ती वस्तू कोणती हे ओळखण्यास सांगितले. टॉम पुढे वाचून व लॉराच्या जणू पोटात पाहिल्याप्रमाणे पाहून म्हणाला की ती वस्तू घड्याळ आहे. हिप्नॉटिस्टने ‘बरोबर’ म्हणून मान हालवली. व त्यावर काय लिहिले आहे हे वाचून सांगशील काय, असे विचारले. टॉमने नजर बारीक करून व प्रयत्नपूर्वक वाचून त्यावर लिहिलेला मजकूर व त्या घड्याळाच्या मालकाचे नांव सांगितले. नंतर हिप्नॉटिस्टने खोलीत जमलेल्या सर्व प्रेक्षकांना ती वस्तू घड्याळ असल्याचे हात उघडून दाखवले व त्यावरील मजकूर व त्याच्या मालकाचे नांव टॉमने बरोबर वाचले असल्याचे सर्वांनी खात्री करून घ्यावी म्हणून प्रेक्षकामधून ते घड्याळ फिरविले.<sup>२०७</sup>

वरील प्रयोगात टॉमला स्वतःचीच मुलगी अदृश्य झाल्याचे तिच्या पाठीला दाबून धरलेले घड्याळ व त्यावरील लेखन त्याने वाचून दाखवल्याने सिध्द झाले आहे.\* पण या प्रयोगाविषयी असा संशय घेतला जाऊ शकतो की टॉमने हिप्नॉटिस्टच्या मनातील विचार ओळखले नसतील कशावरून ? म्हणजे येथे विचारसंक्रमणाला (telepathy) थारा आहे. पुढील प्रयोग अशा संशयाला जागा उरू देत नाही. हा प्रयोग कार्ल हॅन्सेन या प्रसिध्द डॅनिश हिप्नॉटिस्टने खुद्द मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या समोर त्यांच्या खोलीत केला असून त्यात खुद्द अँनी बेझंट यांनाच त्याने प्रयुक्तासाठी (subject) अदृश्य केले होते. अँनी बेझंट ह्या स्वतः त्या प्रयुक्ताशी त्याच्या समोर उभ्या राहूनच बोलत होत्या. पण त्यांचा आवाज त्याला जणू ऐकायलाच येत नव्हता व त्या त्याला दिसतही नव्हत्या असे दिसून येत होते. उदा. बेझंटबाईंनी ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या टेबलावरील हातरूमाल उचलून प्रयुक्तासमोर त्याचे एक टोक दोन बोटात धरून लोंबकळत धरला व त्याच्याशी त्या बोलू लागल्या. पण त्याच्याकडे दुर्लक्ष करून तो ब्लॅन्हेट्स्की यांच्याकडे वळून म्हणाला, “हातरूमाल अधांतरी लोंबकळत ठेवण्याची ही तुम्ही जादू केलेली दिसते.” म्हणजे तो हातरूमाल त्याला लोंबकळत असलेला दिसत होता, पण तो धरलेला बेझंटबाईंचा हात व स्वतः बेझंटबाई त्याला दिसत नव्हते. त्याच्या दृष्टीला त्या खोलीतून पूर्ण अदृश्य

\* समोहित व्यक्तीच्या डोळ्यावर पट्टी बांधली तरी ती व्यक्ती समोरच्या कागदारवर लिहिलेले लिखाण स्पष्ट वाचू शकते, ते पाहून त्याची हुबेहून नकल (copy) करू शकते, याविषयीचा प्रयोग पॉल ब्रंटन बाने A Search in Secret Egypt या ग्रंथात केला आहे. (p-100) डोळ्यावर पट्टी बांधून गाडी चालविण्याच्या ‘जादू’चे हेच इंगित आहे.

झाल्या होत्या. नंतर बेझंटनी खेळाच्या पत्त्याच्या पाकीटातून हाताला येईल तो एक पत्ता घेऊन तो स्वतःच्या पाठीला लावला व तो त्याने पाहून बरोबर ओळखला. यातील सर्वात मोठे आश्चर्य म्हणजे त्याने तो ओळखेपर्यंत तो कोणता पत्ता आहे हे स्वतः बेझंटसकट तेथे उपस्थित असलेल्या कोणालाच माहीत नव्हते. त्याने ओळखल्यानंतरच ते माहीत झाले, व त्याने बरोबर ओळखल्याची स्वतःची प्रत्यक्ष पाहून सर्वांनी खात्री करून घेतली. (Vol IV p 205)

वरील प्रयोगात प्रयुक्ताने अॅनी बेझंट यांच्या शरीरातून आरपार पाहून खोलीतील कोणत्याही व्यक्तीने न पाहिलेला खेळातील पत्ता बरोबर ओळखला असल्याने त्या त्याच्या दृष्टीला पूर्ण अदृश्य झाल्या होत्या, हे तर सिध्द होतेच, पण कोणत्याही प्रकारच्या विचारसंक्रमणाने तो पत्ता त्याने ओळखला नसून प्रत्यक्ष आपल्या (अतींद्रिय दृष्टीच्या) नजरेने पाहूनच ओळखला, हेही सिध्द होते. ही त्याची 'नजर' भौतिक नसून अतींद्रिय असल्याचेही सिध्द होते. कारण बेझंटबाईंचे भौतिक (जड) शरीर त्या नजरेला अडथळा बनू शकले नाही.\*

### अस्तित्वात नसलेली वस्तू दृश्य कशी करता येते

हे झाले अस्तित्वात असलेली वस्तू अदृश्य करण्याबाबत. आता अस्तित्वात नसलेली वस्तू दृश्य कशी करता येते, हे पाहू. हे प्रेक्षकाच्या मनोदेहाला सूचना करूनच म्हणजे मानसिक पातळीवरूनच, पण स्पष्ट शब्दांचा उपयोग न करता -करण्यात येते. हे अतींद्रिय पातळीवर होत असून याला विचारसंक्रमण (टेलीपथी) म्हणतात. यामध्ये प्रेषक ज्या वस्तूचा विचार करील ती वस्तू ग्राहकाला (प्रेक्षकाला) दिसते. कारण मानसिक पातळीवर विचार म्हणजेच वस्तू असते. (Thought is thing) त्यामुळे प्रेषक (विचारसंक्रमक) ज्या वस्तूचा विचार करतो ती वस्तू भौतिक स्वरूपात अस्तित्वात नसली तरी ग्राहकाला (प्रेक्षकाला) प्रत्यक्ष समोर भौतिक स्वरूपात अस्तित्वात असल्याची दिसते. या संबंधीचे काही प्रत्यक्ष केलेले प्रयोग येथे देतो.

हा प्रयोग ऑलकॉट यांनी रंगून येथे डंकन या हिप्नॉटिस्टच्या साहाय्याने केला आहे. एका हिंदू मुलाला संमोहनावस्थेत नेऊन उघडा दरवाजा असलेल्या खोलीत भिंतीकडे पाठ करून उभे करण्यात आले होते. त्यामुळे व्हरांड्यात काय

\* रशियातील नटालिया डेमकिना नावाच्या एका १७ वर्षांच्या मुलीला कोणत्याही व्यक्तीच्या शरीरातील अवयवाचे दोष बाहेरून स्पष्ट दिसू शकतात, असे तिच्यावर मॉस्को, लंडन व न्यूयॉर्क येथील केलेल्या प्रयोगात आढळून आले असल्याची १७ एप्रिल २००५ च्या अनेक वृत्तपत्रातून बातमी प्रसिध्द झाली आहे. एखाद्या व्यक्तीचा केवळ फोटो पाहूनही ती त्या व्यक्तीच्या शरीरातील दोष पाहू शकत असल्यामुळे ही तिची दृष्टी अतींद्रिय असल्याचे सिध्द होते. वृत्तपत्रांनी मात्र 'क्ष-किरणांच्या दृष्टीची मुलगी' असे तिचे (अर्थात् चुकीचे) वर्णन केले आहे. भौतिकवाद लवकर मरत नाही, हेच खरे !

चालले आहे हे त्याला दिसत नव्हते. हिप्नॉटिस्ट (डंकन) त्याच्या समोर उभा राहून हातात एक हातरुमाल उधडा धरून दाखवत होता. ऑलकॉट व्हरांड्यात एका पेपरविक्रेत्याचे रंगाचे सॅपल पुस्तक घेऊन उभे होते. या प्रयोगाचा उद्देश असा होता की ऑलकॉट ज्या रंगाचा कागद प्रयोगकर्त्याला (डंकनला) दाखवतील त्याच रंगाचा हातरुमाल असल्याचा तो संमोहित मुलगा सांगू शकेल काय, हे पाहणे. प्रयोगकर्ता प्रश्न विचारण्यात कसलाही बदल करीत नव्हता किंवा कोणत्या रंगाचा कागद ऑलकॉट दाखवीत होते, यामध्ये कसलीही सूचना मिळू देत नव्हता; आणि तरीही तो मुलगा ऑलकॉट व्हरांड्यात उभा राहून हिप्नॉटिस्टला दाखवत असलेल्या रंगाचाच हातरुमाल आपल्याला दिसतो, असे सांगत असल्याचे आढळून आले. (Vol. IV p. 347-8) यावरून त्या मुलाला रंगाविषयी स्पष्ट शब्दात कसलीही सूचना दिलेली नसतानासुद्धा प्रयोगकर्त्याने आपल्या मनात धरलेला रंगच, त्या रंगाचे विचार चित्रच (thought image) त्या मुलाला प्रत्यक्ष दिसत होते. म्हणजे विचार संक्रमण होत होते, हे सिद्ध होते; आणि सामूहिक जादूत (mass hypnotism मध्ये) जादूगार (निसर्गात्म्यांच्या मदतीने) हेच करीत असतो. तो मनात जो विचार करतो तोच प्रेक्षकांना समोर दृश्याच्या स्वरूपात (विचारसंक्रमणाने) दिसतो. भौतिक स्वरूपात मात्र ती वस्तू मुळीच अस्तित्वात नसते.

दुसरे उदाहरण ऑलकॉट यांनी हॅरिसे नांवाच्या चित्रकाराने आपल्या गुरुंचे चित्र, त्यांना पूर्वी कधी पाहिलेले नसतानासुद्धा, कसे बरोबर काढले, याचे दिले आहे. स्वतः ऑलकॉटनीही आपल्या गुरुंना पूर्वी कधी पाहिले नव्हते. पण ब्लॅव्हेट्स्की यांनी विचारसंक्रमणाने चित्रकारापासून काही अंतरावर बसून व अधूनमधून त्याच्या पाठीमागे राहून व डोकावून त्याच्या मनावर ते बिंबविले आणि ते त्याने बरोबर काढले, असे आढळून येते. ऑलकॉट यांनी नंतर प्रत्यक्ष आपल्या गुरुंना भेटल्यानंतर ते चित्र आपल्या गुरुंचेच असल्याची खात्री करून घेतली आहे. (Vol I p.371-2)

वरील प्रयोगात अनुपस्थित, पण अस्तित्वात असलेले ऑलकॉट यांचे गुरु चित्रकाराला विचारसंक्रमणाने दिसले व त्याचे चित्र त्याने हुबेहुब काढले. पुढील प्रयोगात अस्तित्वात नसलेली (दिवंगत) व्यक्ती, चित्रकाराने तिला पूर्वी कधी पाहिलेली नसतानासुद्धा, विचार-संक्रमणाने दिसली असल्याचे, त्याने तिचे हुबेहुब चित्र काढून दाखवून दिल्यामुळे सिद्ध झाले आहे.

श्री. त्र्यंबक भास्कर खरे हे मुंबईत ऑडीटर होते. पुढे हे द्वारका पीठाचे (नंतर पुरीचे) शंकराचार्य झाले. त्यांना आपल्या गुरुंचा फोटो हवा होता. (वास्तविक हे गुरु त्यांच्या वडिलांचे गुरु होते. शिवगीतेवर 'वेदेश्वरी' नावाचा ओवीबद्ध टीका ग्रंथ लिहिणारे हंसराज स्वामी हे त्यांच्या वडिलांचे गुरु असून त्यांना स्वतः खऱ्यांनी कधीच पाहिले नव्हते. पण त्यांच्या वडिलांनी ते कसे होते हे वर्णन करून सांगितले

होते व त्यानुसार ते त्यांना स्वतःचे गुरु मानून त्यांचे ध्यान करीत असत.) त्यांना नाशिकच्या गजानन महाराज गुप्ते यांचे एक भक्त व शिष्य श्री. सायगांवकर हे उत्तम चित्रकार व फोटोग्राफर आहेत हे कळल्यावरून त्यांच्याकडे एकदा ते आले व आपल्या गुरुंचे चित्र काढण्याची त्यांनी त्यांना विनंती केली. ते म्हणाले, “मी आपल्यापुढे माझ्या गुरुंचे ध्यान करीत बसतो. तुम्ही माझ्या मनामध्ये शिरा आणि त्यांचे एक हुबेहूब चित्र तयार करा.”

(येथे हे सांगितले पाहिजे की सायगांवकर हे ‘परलोकविद्या’ या ग्रंथाचे लेखक व मृतात्मविद्येच्या अभ्यासात आपले सर्व आयुष्य व्यतीत केलेले श्री. न. खं. क्षीरसागर यांच्या सांगण्यावरून व सहकायिनी अनेक मृतात्म्यांचे कॅमेऱ्यांच्या साहाय्याने अंधारात काळा पडदा लावून फोटो काढण्याबद्दल प्रसिध्द होते. त्यामुळेच ते आपल्या गुरुंचे हुबेहूब चित्र काढतील अशी खरे यांची खात्री झाली होती. दुसरी गोष्ट अशी की खरे यांनी श्री. क्षीरसागर यांचेकडे प्लॅनेटच्या सहाय्याने आपण आपल्या गुरुंचे जे ध्यान करतो ते त्यांच्या आकृतीशी व स्वरूपाशी अगदी तंतोतंत जुळते याची प्रथम खात्री करून घेतली होती.)

नंतर खरे आणि सायगांवकर हे एकमेकांसमोर ध्यानाला बसले. ध्यान संपल्यानंतर सायगांवकर यांनी ध्यान करीत असता खरे यांच्या गुरुंचे जसे स्वरूप पाहिले तसे एक हुबेहूब चित्र तयार केले. आणि मोठ्या आश्चर्याची गोष्ट अशी की खरे हे जसे आपल्या गुरुंचे रोज ध्यान करीत असत, तसे हे चित्र अगदी हुबेहूब जुळले.<sup>२००</sup> नंतर खरे यांनी आपल्या आईचा फोटो उपलब्ध नसल्यामुळे तिचेही सायगांवकरांकडून याच पध्दतीने हुबेहूब चित्र तयार करून घेतले.<sup>२०१</sup> हे प्रयोग पूर्वी कधी न पाहिलेले विचारचित्र (image) विचारसंक्रमणाने एका माणसाच्या मनातून दुसऱ्या माणसाच्या मनात शिरून व तयार होऊन ते प्रत्यक्षात भौतिक स्वरूपात (भौतिक पातळीवर) चित्ररूपाने कसे उतरते हे सिध्द करतात. जादूगाराच्या मनातील विचार याच पध्दतीने-विचारसंक्रमणाने-प्रेक्षकांच्या मनात शिरून भौतिक पातळीवर प्रत्यक्ष समोर कसे दिसतात, ही गोष्ट, हे प्रयोग तत्त्वतः सिध्द करतात.<sup>२०२</sup> अशारीतीने अस्तित्वात नसलेली वस्तू दृश्य स्वरूपात दाखवता येते. विचार म्हणजेच वस्तू (Thought is thing) असल्यामुळे आपले विचार दुसऱ्यांच्या मनातून भौतिक पातळीवर (वस्तू बनून) उतरण्याऐवजी थेट भौतिक परिणाम कसे करतात, हे टेड सिरिओस यांच्या उदाहरणावरून दिसून येते. याने आपले विचार कॅमेरात पाहून फोटोच्या रूपाने उमटविले आहेत.<sup>२०३</sup> या अनोख्या पध्दतीला ‘फोटोग्राफी’ ऐवजी ‘थाॅटोग्राफी’ (thoughtography) म्हणजे ‘छायाचित्रग्रहण’ ऐवजी ‘विचारचित्रग्रहण’ असे संबोधण्यात आले आहे. (पृ.७४ पाहा) विचारातून वस्तू तयार करण्याच्या मानवी मनाच्या या सामर्थ्यामुळे मनुष्य



स्वयंसूचनेने (तीव्र भावना अगर विचार यामुळे) म्हणजे केवळ कल्पनेने स्वतःच्या शरीरात नसलेले रोग निर्माण करू शकतो किंवा पूर्वी झालेले रोग बरे करू शकतो (spontaneous remission). शस्त्राने जखमा न होणे-रक्त न येणे, शस्त्राविना जखमा होणे-रक्तस्राव होणे, यासारखे 'चमत्कार' याच स्वयंसूचनेमुळे घडू शकतात. [ 'शरीराद्वारा प्रकट होणारी अतींद्रिय शक्ती' हा पोटमथळा पाहा. (पृ. २३०) डॉक्टर लोक placebo (खोटे औषध) देऊन हेच करतात. विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथात साध्या पाण्याने कॅन्सर बरा झाल्याचे जे उदाहरण दिले आहे, ते याच प्रकारात मोडते.] प्लॅचेटवर जे 'मृतात्मे' येतात ते अनेकदा मनाने निर्माण केलेले, म्हणजे भ्रामक (खोटे) आत्मेच असतात. अशारीतीने प्लॅचेटवर कादंबरीतील एक काल्पनिक पात्र 'मृतात्मा' म्हणून आल्याची घटना S. P. R. (सोसायटी फॉर सायफिकल रिसर्च) या अतींद्रिय विज्ञान-संघाच्या एका सदस्याने १९०६ साली संशोधन करून पुराव्यानिशी सिध्द केल्याची माहिती आयन विल्सन या लेखकाने आपल्या **Mind Out of Time** या पुस्तकात दिली आहे.<sup>११</sup> कादंबरीतील एक काल्पनिक पात्र प्लॅचेटवर 'मृतात्मा' रुपाने येऊ शकते, इतकेच नव्हे तर ते 'दृश्य' रुपही धारण करू शकते असेही आढळून येते. उदा. ग्रीनविच या खेड्यात एक घर भुताटकीचे (haunted house) म्हणून प्रसिध्द होते. त्या घरात काळा झगा व रुंद हॅट घातलेली एक व्यक्ती फिरत असलेली अनेकांनी पाहिली होती. अशा तऱ्हेचा पोषाख केलेली व्यक्ती त्या घरात पूर्वी कधीच वास केलेली नव्हती. (मृत होण्याचा प्रश्नच नव्हता.) पण त्याच घरात पूर्वी वास केलेल्या व मृत झालेल्या वाल्टर गिब्सन नावाच्या लेखकाने वरील पोषाखाचे एक प्रसिध्द पात्र 'द शॅडो' या नावाने आपल्या एका कादंबरीत रंगविल्याचे आढळून येते. ते काल्पनिक पात्रच [म्हणजे त्या लेखकाचे विचाररूप (thought form)] भूत बनून (म्हणजे दृश्य बनून) त्या घरात फिरत असल्याचे लोकांना दिसत होते!<sup>१२</sup> **Can We Explain the Poltergeist ?** या ग्रंथाचा लेखक A.R G Owen यांची पत्नी आणि तिच्या सहकाऱ्यांनी 'फिलिप' नावाच्या एका काल्पनिक व्यक्तीचे 'भूत' निर्माण करण्याचा जो एक यशस्वी प्रयोग केला आहे, (ज्या 'भुता'चे प्रयोग टी.व्ही. वरही दाखवण्यात आले होते.) त्याचे वर्णन प्रस्तुत लेखकाने विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथात दिले आहे. (पृ. २०३) हे काल्पनिक 'भूत' अर्थात् प्रयोगकर्त्या लोकांच्या सामूहिक मनातून निर्माण झाले होते. **Magic and Mysfery in Tibet** या ग्रंथात अलेक्झांड्रा डेव्हिड-नील या लेखिकेने बऱ्याच दिवसांच्या दृढ संकल्पाने एक साधू निर्माण केला असल्याची व तो पाहून तिच्या बरोबर फिरत असणारा तो एक लामाच असावा असे इतरांना वाटल्याची माहिती दिली आहे. म्हणजे कल्पनेने निर्माण केलेल्या त्या साधूच्या विचाररूपाने (thought form) प्रत्यक्ष दृश्य रूप धारण केले होते. (अशा कल्पनेने-विचाराने-निर्माण केलेल्या दृश्य रूपांना

तिबेटी भाषेत 'तुल्पा' म्हणतात.) अलेक्झांड्रा बाईने मनाच्या संकल्पशक्तीने निर्माण केलेला हा साधू नंतर हळुहळू स्वतंत्र व्यक्ती म्हणून वागू लागला व तिच्याशी नंतर वैरत्वही दाखवू लागला. तेव्हा तिने परत संकल्पशक्तीने त्याचे दृश्य अस्तित्व नाहीसे करण्याचे ठरविले व त्यासाठी उलट संकल्प करण्यास प्रारंभ केला. तथापि त्यासाठी तिला सहा महिने सतत प्रयत्न करावे लागले, तेव्हा कुठे तो अदृश्य (नाहीसा) झाला.

### दृश्य रुप धारण करणारी 'कृत्रिम भानामती'

वरील उदाहरणे जाणीवपूर्वक निर्माण केलेली मानसिक 'विचार रूपे' (thought forms) यांची असून ती भानामतीतील निसर्गात्म्यांची जागा घेताना दिसतात. म्हणजे जे भानामतीचे प्रकार निसर्गात्मे मानवी मनातून निर्माण करतात तेच भानामतीचे प्रकार मनुष्याचे मन स्वतंत्रपणे सुद्धा निर्माण करू शकते, असे या उदाहरणावरून दिसून येते. म्हणून यांना 'कृत्रिम भानामती' (artificial elementals) म्हणता येईल. (लेडबीटर यांचे हे नामकरण आहे.) ही कृत्रिम भानामती जाणीवपूर्वक व अजाणतेपणे अशा दोन्ही पद्धतींनी निर्माण होऊ शकते. ओवेनची पत्नी आणि सहकाऱ्यांनी निर्माण केलेला 'फिलिप' व अलेक्झांड्रा बाईने निर्माण केलेला 'साधू' ही जाणीवपूर्वक निर्माण केलेली 'भूते' व 'भानामती' ची रूपे होती. कादंबरीतील पात्र 'भूत' बनले ते अर्थात् अजाणतेपणे. ('फिलिप' हे निव्वळ काल्पनिक-मनाने निर्माण केलेले- 'भूत' असले तरी त्यात एखाद्या निसर्गात्म्याने प्रवेश केला असणे-ensouled-शक्य आहे, असा काहीनी संशय व्यक्त केला आहे. कादंबरीतील पात्रही याच रीतीने 'भूत' बनले असणे शक्य आहे. अलेक्झांड्राबाईच्या साधूविषयी मात्र असे म्हणता येणार नाही. कारण बाईंनी नंतर त्याला मनानेच 'नाहीसे' केले आहे. खुद्द बाईंनीच पाँडीचेरीच्या माताजींना "आपण त्याला आपल्या मनातच शोषून घेतले" असे स्पष्ट म्हटले आहे.\* यावरून मनातून कृत्रिम भूत निर्माण होऊ शकते व मानतच ते नाहीसे होऊ शकते, हे निर्विवादपणे सिद्ध होते. ('फिलिप' लाही हे विधान लागू होऊ शकते.) अलेक्झांड्राबाईंनी आपल्या उपर्युक्त ग्रंथात अजाणतेपणे एक हॅटच 'भूत' कसे बनले. याचे एक मजेदार, पण प्रत्यक्ष घडलेले उदाहरण दिले आहे. एका प्रवाशाची हॅट वाऱ्याने उडाली व रस्त्याकडील दरीत जाऊन पडली. ती लांब अंतरावरून विचित्र आकाराच्या प्राण्यासारखी तेथील खेडूतांना दिसू लागली. त्यामुळे रस्त्याने जाणारे वाटसरू घाबरून त्याविषयी अधिक शोध न घेता तो एक प्रकारचा प्राणीच आहे, असे मानू लागले. याचा परिणाम असा झाला की त्यांच्या मनातील भीतीने त्या हॅटमध्ये प्राण भरला

\* Collected Works of Mother, Vol 6 questions & Answers 1955 p. 80-82  
quoted in The Hidden Forces of Life, by Dalal. p 67

व ती हॅट प्राण्याप्रमाणे चालू लागली । (Hat that walked.) हिंदूंच्या देवता प्राणप्रतिष्ठा केल्यानंतर अशाच 'जागृत' बनतात व नवसांना पावतात किंवा भक्तांच्या मनोकामना पूर्ण करतात, [हिंदूंचा प्राणप्रतिष्ठेचा विधी ही अंधश्रद्धा नसल्याचे ऑलकॉट यानी काही 'भारलेल्या' वस्तूंचे इतर देशातील उदाहरणे देऊन दाखवून दिले आहे. (vol IV pp. 199-200, Vol. III p. 262)] ही प्राणप्रतिष्ठा 'विधी' - (जाणीव) पूर्वक करण्याची हिंदूंची पध्दती आहे. पण ती अजाणतेपणाने सुध्दा होऊ शकते.<sup>२१४</sup> ग्रामदेवता, क्षेत्रदेवता, वास्तूदेवता या अजाणतेपणे सामूहिक पातळीवर सामूहिक मनातून प्रवर्तित झालेल्या देवता (elementals) असून त्यांना स्वतंत्र व्यक्तित्व (individuality) अशाच रीतीने प्राप्त झालेले दिसून येते. त्यामुळे त्या देवता स्वतंत्र व्यक्तीने खायला मागावे तसे नैवेद्य व बळी मागतात व तो न दिल्यास त्या देवता आपल्या भक्तावर संकटे आणतात-त्यांचे कधी कधी भयंकर नुकसानही करतात, असे आढळून येते. भानामती व 'करणी' मध्ये हेच घडून येते. लेडबीटर यांनी भारतातील एका गावात तेथील देवतेला असा बळी देण्यात कसूर केली असता त्या गावात आपोआप आगी लागण्याचे प्रकार घडल्याचे आढळून आले असे म्हटले आहे.<sup>२१५</sup> (भानामतीत अशा आगी लागतात हे प्रस्तुत ग्रंथाच्या वाचकाना माहीत झालेच आहे. अर्थात अशा आगी लावणारी भानामती अन्य कारणांनीही घडून येते.) कलकत्याच्या काली देवतेला दुर्गाष्टमीच्या दिवशी बळी देण्याची अशीच प्रथा चालू असून रामकृष्ण परमहंसांना ती प्रथा मान्य होती व तिचे त्यांनी शास्त्राच्या आधारे समर्थनही केल्याचे दिसून येते.<sup>२१६</sup> महाराष्ट्रातील सातारा जिल्हातील प्रसिध्द चाफळ येथील राममंदिराच्या परिसरात एक म्हसोबा असून त्याला एकदा नैवेद्य देण्यास विसरल्यामुळे रामाची पालखी फिरण्यात त्याने अडथळा निर्माण केला व त्याला नैवेद्य देताच तो अडथळा दूर झाला असे तेथील व्यवस्थापकांनी तेथील भेटीत (१९७० साली) प्रस्तुत लेखकाला सांगितले आहे. ही नैवेद्याची प्रथा स्वतः रामदासस्वामींनी त्यांना असा अनुभव आल्यामुळे - घालून दिल्याचेही त्यांनी सांगितले. [म्हणूनच दासबोधनात त्यांनी म्हटले असावे की देवदेवता देवते भुते । मिथ्या म्हणो नये त्याते । (१०.९.२०) किंवा जाखमाता मायराणी । बाळा बगुळा भानविणी । पूजा मांगिणी जोगिणी । कुळधर्म करावी ॥ (४.५.१६)] रामकृष्ण परमहंस, रामदास स्वामी यासारखे (अहिंसावादी) संत सत्पुरुषांनाही (अहिंसा) तत्त्वापेक्षा शास्त्र, प्रथा व कुळधर्म यांना जास्त प्राधान्य व मान देण्याची गरज वाटवी, इतके सामर्थ्य या (भानामतीरूपी) देवतांच्या ठिकाणी जे आले आहे, ते त्यांच्या भक्तांच्या सामूहिक पातळीवरील मनःसामर्थ्यामुळे होय. कार्ल युंग ज्याला 'सामूहिक अबोधमन' (Collective Unconscious) म्हणतो त्याचीच ही एक जाती (species) आहे. लेडबीटर यांनी म्हटले आहे की काली या देवतेचे प्रस्थ अकरा

हजार वर्षांपूर्वी अटलांटिक महासागरात बुडालेल्या अटलांटिस नांवाच्या बेटातील सस्कृतीपासून चालत आले असावे. याचा अर्थ असा की सामूहिक पातळीवर मुळात जाणीवपूर्वक ( ' करणी ' ने ) निर्माण केलेली ही रक्ताचा नैवेद्य भागणारी कृत्रिम ( भानामतीरूपी ) काली देवता अबोध मानसिक पातळीवर हजारो वर्षे टिकून आहे. \* संत-सत्पुरुषांनाही आपले महत्त्व पटवून देणारे हे अबोध मनाचे सामर्थ्य आहे, असे म्हटले पाहिजे. रामकृष्ण व रामदास हे संत-सत्पुरुष आहेत, म्हणून केवळ त्यांचे सर्व म्हणणे डोळे झाकून स्वीकारावे, हे योग्य नाही, असे काही वाचकांना येथे वाटण्याचा संभव आहे, व ते वाटणे योग्यही आहे. प्रस्तुत लेखकही अध्यात्मात शब्दप्रमाण मानणारा नाही. कोणीही चिकित्सक बुद्धीचा, विज्ञानवृत्ती बाळगणारा मनुष्य एखादी व्यक्ती केवळ संत आहे म्हणून ती म्हणेल त्या सर्वच गोष्टीवर डोळे झाकून विश्वास ठेवणार नाही. *वस्तुनिष्ठ पुरावे व अनुभव हेच अध्यात्म क्षेत्रात सुध्दा ( वैज्ञानिक ) सत्याचे अंतिम निकष आहेत.* असे पुरावे प्रस्तुत लेखकाला आढळून आल्यामुळेच या गोष्टींचा येथे त्याने समावेश केला आहे. असे पुरावे येथे आता सादर करतो. अशा गोष्टींचे पुरावे सादर करणे म्हणजे अशा प्रथेचे समर्थन करणे नव्हे हे सुज्ञ वाचकांना सांगणे नको. वैज्ञानिक सत्य अप्रिय असले तरी सांगावे लागते म्हणून सांगत आहे.

पहिले उदाहरण दत्तवाड ( ता. शिरोळ, जि. कोल्हापूर ) येथील आनंदा सखाराम उरुणकर, शिक्षण ७ वी, धंदा शिलाई, वय ६९ यांचे आहे. यांचा दोन नंबरचा मुलगा विजय ( हल्ली वय ३१ ) याचे लग्न १९९२ साली झाले. त्याची पत्नी अनिता ( हल्ली वय २६ ) ही १९९३ साली गरोदर झाली. तिसऱ्या महिन्यापासून तिची तपासणी शासकीय ग्रामीण आरोग्य केंद्रात नियमानुसार करण्यात येऊ लागली. त्या तपासणीचे शासकीय कार्डच प्रस्तुत लेखकाला माहितीसाठी देण्यात आले. त्यावर ८-२-९४, ८-३-९४, १२-४-९४ अशा सलग तीन महिन्यांच्या, म्हणजे गरोदरपणाच्या चौथ्या, पाचव्या व सहाव्या महिन्याच्या, नोंदी आढळून येतात. सातव्या महिन्यात ओटी भरण्याचा कार्यक्रम झाला. या कार्यक्रमानंतर दुसऱ्याच दिवशी परत ग्रामीण आरोग्य केंद्रात जाऊन तपासणी घेण्यात आली. तेव्हा ज्या डॉक्टरांनी पूर्वीच्या सर्व तपासणीत गर्भ असल्याचे म्हटले होते, त्याच डॉक्टरांनी गर्भ नसल्याचे सांगितले ! घरच्या बायकांनीही पोट दिसत नसल्यामुळे हाच निष्कर्ष काढला ! सरकारी डॉक्टरांनी इचलकरंजीच्या डॉ. अमर कुलकर्णी या स्त्रीरोगतज्ञांना दाखविण्याचा सल्ला दिला. त्याप्रमाणे त्यांना दाखविल्यानंतर सोनोग्राफीमध्ये पाहून

\* पांढीचेरीच्या माताजींनीही म्हटले आहे की "So many of these entities called Kali .... are given form by human thought." Collected Works. Vol. 6, 9 197 ( म्हणजे काली मानवी मनातून निर्माण झाली आहे )

त्यांनीही गर्भ नसल्याचे सांगितले ! फक्त थोडा मांसल गोळा दिसत होता. तो पडावा म्हणून त्यांनी चार गोळ्या दिल्या. पण त्यांचा काही परिणाम दिसून आला नाही.

नंतर श्री. आनंदा उरुणकर यांनी दत्तवाडच्या एका देवर्षीला या प्रकाराबद्दल विचारले असता त्यांनी घरच्या मरगूबाई देवीचा कोप झाला असल्याचे सांगितले. नंतर मुलीचे माहेर पेठ वडगाव येथील श्री. सदा भडजी या ज्योतिष्यांना यासंबंधी विचारण्यात आले. त्यांनीही घरच्या देवीचा कोप झाला असल्याचे सांगितले. नंतर पुन्हा हुपरी (ता. हातकणगला) येथील श्रीपाद जोशी या ज्योतिषशास्त्रतज्ञांना विचारण्यात आले. त्यांनीही घरच्या देवीचा कोप झाला असल्याचे सांगितले. हे तीघेही (एक देवर्षी व दोन ज्योतिषी) एकमेकांशी संबंध नसलेले व परस्परापासून दूर अंतरावरील गावी राहणारे - म्हणजे एकमेकांची ओळख व माहिती नसलेले असे असूनही त्यांच्यामध्ये या प्रकरणी एकमत झालेले पाहून व त्यांच्या सल्ल्यानुसार देवीची भाक बांधून मरगूबाईचा नैवेद्य करण्याचे आनंदा उरुणकर यांनी ठरविले. त्याप्रमाणे लगेच बकऱ्याचे एक पिल्लू आणून त्यांनी घरी बांधले.

या संदर्भात घरचे यजमान श्री. आनंदा उरुणकर यांनी थोडा आपला घरचा इतिहास प्रस्तुत लेखकाला सांगितला. तो असा. श्री. आनंदा उरुणकर यांनी १४ वर्षांपूर्वी पंढरीचे वारकरी बनून गळ्यात माळ घातली होती आणि घरच्या देवीला (मरगूबाईला) बळी देण्याची, पशुहत्या करण्याची प्रथा बंद केली होती. त्यामुळेच देवीचा कोप झाला आहे, असे ज्योतिष्यांनी सांगितले. गेल्या चौदा वर्षांत तीन वर्षांनी एकदा श्री. उरुणकर गोडा नैवेद्य करीत असत. पण ते देवीला मान्य नव्हते असा निष्कर्ष उरुणकरांनी काढला.

आश्चर्याची गोष्ट म्हणजे बकरीचे पिल्लू आणल्यानंतर परत सौ. अनिता हिचे पोट दिसू लागले ! म्हणून पुन्हा एकदा इचलकरंजीच्या डॉ. अमर कुलकर्णी यांना दाखवण्यात आले. त्यांनी तपासणी केल्यानंतर सोनोग्राफीमध्ये पुन्हा गर्भ दिसू लागला. (याविषयीचे केसपेपर पाहण्यासाठी प्रस्तुत लेखक डॉ. अमर कुलकर्णी यांचेकडे इचलकरंजीस दोन वेळा गेला. पण दुर्दैवाने केस पेपर सापडले नाहीत. पण उरुणकरांकडे त्यांनी दिलेले ४ गोळ्यांचे प्रिस्क्रिप्शन उरुणकरांनी प्रस्तुत लेखकाला दिले होते; ते दाखवल्यानंतर ते आपलेच आहे, हे त्यांनी मान्य केले, व या संदर्भात ते आपल्याकडे आल्याचेही मान्य केले.) तो गर्भ नंतर वाढत जाऊन दि. १२-११-९४ रोजी -म्हणजे पाहिल्यांदा गर्भ राहिल्यानंतर एक वर्षाने-सुखरूपपणे सौ. अनिता साधना या मुलीला बाळंत झाली. तेव्हापासून उरुणकर परत देवीला 'खारा' नैवेद्य करू लागले आहेत.

वरील प्रकरणात 'देवी' ने मधले तीन महिने गर्भ नाहीसा केला, फक्त

थोडा मांसल गोळा ठेवला व गर्भपाताच्या गोळ्यांचाही काही परिणाम होऊ न देता (उरुणकर आपणाला नैवेद्य देण्याची भाक बाधणार आहेत हे भविष्य त्या देवीला माहीत असल्यामुळे असेल कदाचित ! ) तो तसाच ठेवला व भाक बाधल्यानंतर पुन्हा त्या मांसल गोळ्याचे गर्भात रूपांतर करून पुन्हा ते वाढण्याची साय करून दिली. म्हणजे भौतिक (जीवशास्त्राचा) नियम धाव्यावर बसविण्याचा 'चमत्कार' त्या देवीने केला, असा निष्कर्ष प्रत्यक्ष आधुनिक वैद्यक शास्त्राच्या (भौतिक तंत्रविज्ञानाच्या) पुराव्यावरून (सोनोग्राफीच्या तंत्रावरून व तपासणीवरून) काढावा लागतो.

दुसरे उदाहरण त्याच (दत्तवाड) गावचे श्री. रामचंद्र बाबू रेळेकर, निवृत्त मुख्याध्यापक (वय ६८) यांचे आहे. त्यांच्या वयाच्या १९ व्या वर्षी केली (ता. पन्हाळा, जि. कोल्हापूर) या कोल्हापूर-रत्नागिरी रस्त्यावरील गावी प्राथमिक शाळेत शिक्षक म्हणून नेमणूक झाली असता घडलेली ही घटना आहे. त्यांच्या गुडघ्याला किंचित खरडल्याचे निमित्त होऊन जखम झाली व चार दिवसात ती चिघळली; त्यातून पाणी गळू लागले. हा काही सामान्य प्रकार नसून बाहेरची (पिशाच) बाधा असावी असा संशय आल्यामुळे त्याच गावच्या शिक्षकांच्या ओळखीने तेथील एका देवर्षीचा त्यांनी सल्ला घेतला. त्याने सांगितले की "तुमच्या घरच्या पाठीमागे 'ताईबाई' ही देवता असून तिला तुम्ही विसरला आहात." हे ऐकून रामचंद्र रेळेकर म्हणाले, "अहो, पण ती ताईबाई आमच्या हद्दीत नाही. तिची व्यवस्था आम्ही का करावी?" देवर्षी म्हणाला, "ते मला माहीत नाही. ती जागा ओसाड असल्यामुळे तुमच्यावरच तिची जबाबदारी येऊन पडते एवढे मला कळते. प्रथेनुसार तिची व्यवस्था तुम्हालाच करावी लागणार आहे."

त्याचे ते म्हणणे ऐकून रामचंद्र यांनी गावी आपल्या वडिलांना ताबडतोब निघून येण्यासाठी पत्र लिहिले. त्यांचे वडील आपल्या दुसऱ्या एका मुलगााला (रामचंद्रांचा थोरला भाऊ) घेऊन आले रामचंद्रांनी सर्व हकीगत वडिलांना सांगितली. ती ऐकून त्यांनी प्रथेनुसार बळी देण्याचे मान्य केले. त्याचदिवशी असा चमत्कार घडला की जखमेतून पाणी गळणे बंद होऊन दुसरे दिवशी जखम पूर्ण बरी झाली.

त्यांचा थोरला भाऊ घरी येऊन इतर भावांशी विचार विनिमय करून रामचंद्र यांना दवाखान्याला नेण्याचा त्यानंतर निर्णय घेतला व तसे पत्र केलीस वडिलांना लिहिले. वडिलांनी त्याप्रमाणे रामचंद्र यांना दवाखान्याला नेण्याचे ठरविले. पुन्हा लगेच असा चमत्कार घडला की जखम पुन्हा चिघळली व त्यातून पाणी गळू लागले ! त्याच रात्री रामचंद्र यांनी वडिलांना उठवून गळत असलेली जखम दाखवली. ते पाहून वडील म्हणाले, "मी शेण खाल्ले. मी तुला दवाखान्याला नेत

नाही. सूर्योदयापूर्वी पाणी गळणे थांबावे, जखम बरी व्हावी. म्हणजे मी गावी गेल्यानंतर ताईबाईला बळी देतो.” त्याप्रमाणे पुन्हा खरोखरच चमत्कार असा झाला की पाणी गळणे थांबून सूर्योदयापूर्वी जखम पूर्ण बरी झाली. इतकी जलद की दुसरे दिवशी त्या जखमेच्या जागी कातडे पापुद्रा बनून वाऱ्याने उडू लागले. (हे सर्व वर्णन खुद्द श्री. रामचंद्र रेळेकर यांच्या शब्दात जसेच्या तसे दिले आहे.)

ठरल्याप्रमाणे नंतर गावी येऊन ताईबाईला बकऱ्याचा बळी देऊन पन्नास लोकांना त्यांच्या वडिलांनी जेवण दिले.

वर दिलेल्या दोन्ही उदाहरणातील ‘मरगूबाई’, ‘ताईबाई’ या देवतांचे मूळ शोधणे कठीण असले तरी, त्या माणसांच्या मनातूनच निर्माण झाल्या असून या अर्थाने त्या ‘कृत्रिम देवता’ (artificial elementals) आहेत, याविषयी संशय बाळगण्याचे कारण नाही. त्या रक्ताचा नैवेद्यच का मागतात याचाही उलगडा यावरून होतो. त्या माणसांच्या वृत्तीच प्रतिबिंबित करीत असतात.<sup>१०</sup> शंकराने रागाने जटा आपटल्या आणि त्यातून दक्षप्रजापतीचा नाश करणारी वीरभद्र ही मूर्तिमंत क्रोधरूपी देवता प्रकटली अशी शिषलीलाघृतात कथा आहे. ती अशा देवतांचे मूळ उगम सांगणारीच कथा असून ती मानवी मनाचे हे सामर्थ्यच सिध्द करते. (‘क्रोध’ या भावनेतून देवता जन्मणे हा मानसिक किंवा कृत्रिम देवतेच्या जन्माचा उगम सांगणारीच कथा आहे.) काली ही देवता रामकृष्ण परमहंस यांची आराध्यदेवता असली तरी ती शंकराला पायदळी तुडवणारी व गळ्यात नरमुंडांची माळ घातलेली शस्त्रधारी देवता आहे, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. याच स्वरूपात कलकत्त्याच्या काली मंदिरात ती मूर्ती दाखवलेली आहे. शंकर हा ‘निष्क्रिय (निरुपाधिक) ब्रह्म’ व पार्वती ही (उत्पादक व) संहारक शक्ती असलेली ‘आदिमाया’ हे या कालीच्या प्रतिमेतून दाखवायचे आहे. ती आदि-‘माया’ असल्यामुळे विश्वनिर्मिती व विश्वाचा संहार या दोन्ही गोष्टीची, गारुडी विद्येची वा जादूची ती जननी आहे. (किंबहुना सकळ/खेळु इथेचा / ज्ञाने.) ती संहारक शक्ती असल्यामुळे रक्तपिपासू आहे. पूर्वीच्या काळी वाटसरुना ठार करून त्यांना लुटणाऱ्या ठगांची ती देवता होती. देवांच्या शत्रूंचा (राक्षसांचा) नाश करणे याच कामासाठी तिचा पौराणिक काळी जन्म झाला असल्यामुळे ती रक्तापिपासू असणे स्वाभाविकच आहे. मग ती मरगूबाई, ताईबाई किंवा कोकणातील विठलाई अशा कोणत्याही स्वरूपाने शत्रुनाशाचे ते काम करू शकते; आणि त्या कामासाठी तिला बळी देणे आवश्यकच आहे.

अगदी अलीकडे (२००२ साली) कोकणातील गावऱ्हाटी या नावाचे एक पुस्तक शाम धुरी या लेखकाने लिहिले असून त्यात कोकणातील देवदेवस्की व त्यांच्या प्रथा याविषयीची माहिती दिली आहे. त्यात या देवतांना कोंबडी-बकरे

यांचा बळी का द्यावा लागतो या प्रश्नाचे एक मजेशीर उत्तर लेखकाने दिले आहे. तो म्हणतो, “दारु सैनिकाच्या दृष्टीने अत्यावश्यक आहे. शासनाकडूनच आवश्यक तो कोटा सैनिकांना पुरवला जातो. गावऱ्हाटीत बळी देण्याची जी प्रथा आहे त्यामागचा कार्यकारणभावही असाच आहे. ज्याला ज्या स्वरूपाचे काम करावयाचे असते त्याला त्या स्वरूपाचा आहार देणे आवश्यक आहे. (पृ. ८७. ठळक अक्षरे मूळ लेखकाची.) शत्रूंचा नाश करणाऱ्यांना, त्यांची कत्तल करणाऱ्यांना, त्यांचे रक्त सांडणाऱ्यांना, दारु, मांस, रक्त दिलेच पाहिजे, असे हे तर्कशास्त्र आहे. ते दिले नाही, तर त्या देवता तुमचे नुकसान करणारच. ते नुकसानसुध्दा ‘चमत्कार’ करून दाखवूनच करणार-जसे उरुणकर, रेळेकर यांच्या बाबतीत त्यांनी केले. कारण असा ‘चमत्कार’ केल्याशिवाय त्या देवतांचा महिमा संबंधित लोकांना कळत वा पटत नाही ! (‘चमत्काराशिवाय नमस्कार नाही’ हा नियम अशारीतीने सिध्द होतो !) मागे टाकली येथील चौडेश्वरी या देवतेने शस्त्रानेसुध्दा बळीच्या बकरीला सीधी जखमसुध्दा होऊ न देण्याचा जो ‘चमत्कार’ केला (पृ. २७४) तो तिला ठराविक बकरी देण्याची प्रथा मोडल्यामुळेच होय. देवतांना आपली प्रथा मोडलेली चालत नाही ! काही लोकांना हॉटेलातील अन्न चालत नाही, परान्न चालत नाही. काही लोकांना काही वस्तूंची ‘ॲलर्जी’ होते, तसेच हे आहे ! या देवता ‘कृत्रिम’ आहेत, माणसाच्या मनातूनच निर्माण झाल्या आहेत, याला आणखी कोणता पुरावा पाहिजे ? एरवी ‘विठलाई’ नावाची नैसर्गिक देवता असू शकते काय ? कारण विठ्ठलाची पत्नी रुक्मिणी आहे, विठलाई नाही आणि समजा रुक्मिणीलाच विठलाई म्हणायचे ठरविले तरी ती विठ्ठलाची रुक्मिणी दुसऱ्यांचे नुकसान करणारी, घरे पेटवणारी कशी असू शकेल ? पण ही राधानगरी तालुक्यातील तारळे या कोकणातील गावची ‘विठलाई’ मात्र शत्रूंचे भानामतीच्या वा ‘करणी’च्या स्वरूपात नुकसान करण्यासाठीच प्रसिध्द आहे. प्रस्तुत लेखकाच्या विज्ञान आणि अंधश्रद्धा निर्मूलन या पुस्तकातील ४ थ्या प्रकरणातील हेरवाड या (कोल्हापूर जिल्ह्यातील) गावच्या नेर्ले कुटुंबात भांडण लावणारी, नको तेथे चटणी, विष्टा टाकणारी, कपडे जाळणारी, गर्भ नष्ट करणारी भानामती ही हीच देवता असल्याचे शेवटी निष्पन्न झाले होते. ही गोष्ट फार उशीराने म्हणजे तिचे नाश करण्याचे काम जवळजवळ संपल्यानंतर कळली. त्यामुळे या गोष्टीचा उल्लेख त्या पुस्तकात आलेला नाही. पण त्यानंतर कर्नाटकातील रायबाग (जि. बेळगांव) या तालुक्याच्या गावी राहणाऱ्या श्री. नेमिनाथ भीमाप्पा कोकणी (वय २६) या तलाठ्याच्या घरी दर पौर्णिमेच्या दिवशी कपडे जळण्याचा प्रकार सतत दहा महिने चालू झाला. दहाव्या पौर्णिमेच्या दिवशी कपड्यासह कपडे ठेवलेले कपाटही पेटले व ज्वाला छतापर्यंत पोचल्या. (तो प्रकार प्रस्तुत लेखकाने प्रत्यक्ष पाहिला आहे.) ही विठलाईचीच करणी असल्याचे वरील हेरवाडच्या त्या



तलाठ्याच्या खुद्द बहिणीनेच सांगितल्यावरून तो तिला घेऊनच तारळे येथील विठलाईला गेला. (जाताना त्याची नवी कोरी मोटरसायकल रस्ता चांगला असूनही दर चार-पाच किलोमीटरला पंक्चर होत होती. हे त्या भानामतीचेच काम होते हे उघड होते. भेंडवाडच्या भानामतीमध्ये ती भानामती केवळ पाहण्यासाठी आलेल्या परगावच्या लोकांच्या मोटरसायकली, कारगाड्या अशाच पंक्चर होत होत्या. प्रकरण ४ पाहा.) त्या देवीचे सांत्वन करण्यासाठी तेथील पूजाऱ्यांना ५००६ त्या तलाठ्याने दिले. (ही गोष्ट त्याने स्वतःच प्रस्तुत लेखकाला सांगितली आहे.) त्यानंतर भानामती बंद झाल्याचे प्रस्तुत लेखकाला फोनवरून-चौकशी केली असता कळविणेत आले.

ही भानामती माणसाला कोणत्या प्रकाराने त्रास देईल हे सांगता येत नाही. अगदी अलीकडे विजापूर जिल्ह्यातील सिंदगी या तालुक्याच्या गावाजवळ चिक्कसिंदगी हे खेडे असून तेथील कल्ल्या बस्सच्या मठपती या १८ वर्षांच्या तरुणाला विचित्र पीडा होत असल्याचे, वेड्यासारखा तो वागत असल्याचे आढळून आले आहे. त्याच्या अंगावरचे कपडे आपोआप तुकडे होऊन पडतात. दररोज सध्याकाळी ६ ते ७ च्या दरम्यान त्याच्या तोंडातून लिंबे बाहेर पडतात व जननेंद्रियातून सुया व दाभण बाहेर पडतात. ही घटना त्या गावी जाऊन संबंधित कुटुंबाला भेटलेल्या पत्रकारांना त्यांनी सांगितली असून यासंबंधीचा एक फोटोही वृत्तपत्रातून प्रसिध्द करण्यात आला आहे.<sup>११८</sup> नाशिकचे कै. न. खं. क्षीरसागर यांनी एका मुलीच्या अंगातून सुया निघत असल्याच्या घटनेचा आपल्या एका पुस्तकात उल्लेख केला असून त्याची माहिती यापूर्वी आली आहे. (पृ. ३७१, टीप १६९ पाहा.) मानवी मनातून निर्माण झालेली कृत्रिम भानामती देवीच्या रूपात प्रत्यक्ष डोळ्यांना दिसत नसली तरी परिणामाच्या रूपाने 'दृश्य' होते ती अशी. एखाद्या गोष्टीचे वस्तुनिष्ठ शास्त्रीय सत्यत्व त्या गोष्टीचा प्रत्यक्ष भौतिक स्वरूपात घडून येणाऱ्या 'दृश्य' परिणामावरूनच सिध्द होते. ('परिणामाद् वै सत्यं' हा १० व्या प्रकरणातील पोटमथळा पाहा. पृ. ११६) वरील शास्त्रीय कसोटीला ही मानसिक (कृत्रिम) भानामती अशारीतीने उतरते ती मनाच्या वरील प्रकारच्या अगाध (अर्तीद्रिय) सामर्थ्यामुळेच होय. वर वर्णन केलेले सर्व 'चमत्कार' भानामती करते ते मानवी मनातूनच, म्हणजे मानवाचे मनच ते करीत असते. जिवंत व्यक्तीसुद्धा 'पिशाच' बनून एखाद्या माणसाला 'धरु' शकते ते याच मनाच्या सामर्थ्यामुळे होय. अशा जिवंत माणसांच्या बासना कशा 'पिशाच' (कृत्रिम भानामती) बनून त्यांचे लक्ष्य बनलेल्या व्यक्तींना पिडतात याची माहिती, अशा गोष्टींच्या अभ्यासात व अशी पिशाचे काढण्यात आपले सर्व आयुष्य घालविलेल्या प्रसिध्द न. खं. क्षीरसागर या नाशिकच्या एंजिनियरनी आपल्या पुस्तकातून दिली असून ती वरील 'कृत्रिम भानामती दृश्य रूप

घेते' हे म्हणणे सिध्द करीत असल्यामुळे त्यातील दोन-तीन निवडक उदाहरणे वाचकाच्या माहितीसाठी येथे देतो.

### जिवंत माणसांच्या वासना 'पिशाच' बनतात

एक तरुण शाळामास्तर लग्न झालेले असूनही नाशिकच्या त्रिंबक रोड रस्त्यावरील एका गावात एकटाच राहत असे. पत्नी नाशिकमध्ये होती. एक दिवस एका बाईने त्या मास्तराजवळ पाच रुपये उसने मागितले. त्याचप्रमाणे त्या बाईची इच्छा होती की त्याने आपल्या मुलीशी लग्न करावे. पण त्याचे लग्न झालेले असल्यामुळे ते शक्य नव्हते. तसेच पगाराचे शेवटचे दिवस असल्यामुळे पैसेही देता येणे कठीण होते. थोड्या दिवसांनी ते मास्तर रात्री लघुशंकेकरिता बाहेर गेले असता एक तरुण बाई हुबेहूब त्यांच्या पत्नीसारखीच जवळ येऊन उभी राहिली. मास्तराना आश्चर्य वाटले. तेथून ती काहीच न बोलता नाशिकच्या रस्त्याने जाऊ लागली. ती पुढे मास्तर मागे असे दोघे दोन फर्लांग गेले व ती नाहीशी झाली. मास्तर घाबरले त्यांना त्या रात्री झोप लागली नाही. एक दिवस गेल्यानंतर तिसरे दिवशी रात्री पुन्हा ती बाई मास्तरास हाका मारायला आली व त्यांना भुरळ पाडून रस्त्याने घेऊन चालली व एका रमणीय जागेत घेऊन गेली. तेथे लोक जेवायला बसले होते, अनेक पक्वान्ने होती. अशा ठिकाणी नेऊन त्यास ती बाई दररोज जेवावयास घालीत असे, व जेवणानंतर त्यांना घरी पोहोचवीत असे. असा क्रम कित्येक दिवस चालला होता. हे जेवण खोटे होते. पोटभरल्यासारखे वाटल्यामुळे ते मास्तर घरी दररोजचे जेवण कमी घेत. त्यामुळे अशक्तपणा येऊन आजारी पडले. त्यांनी रजा घेतली. त्यांचे कुटुंब नाशिकचे असल्यामुळे औषधोपचारासाठी ते नाशिकला आले. तेथेही तोच प्रकार घडू लागला. शेवटी घरच्या मंडळींना संशय आला व त्यांच्या धाकट्या भावाने बाहेर ओटीवर निजावयाचे व बाहेरून दारास कुलूप लावायचे ठरविले आणि तसे केले. नेहमीप्रमाणे ती बाई आलीच; व मास्तरास हाका मारू लागली. पण बाहेरून कुलूप असल्याने मास्तरास जाता येईना. तितक्यात धाकटा भाऊ जागा झाला व त्या बाईस विचारू लागला की तू कोण आहेस ? पण ती नाव सांगेना. ती तशीच परतली व गाडगे महाराजांच्या मठाकडे जाऊ लागली. हाही तिच्या मागून गेला. पण ती मध्येच अदृश्य झाली या प्रकाराने दोघे भाऊ आजारी पडले. शेवटी ते मास्तर क्षीरसागराकडे आले. त्यांनी त्या बाईस मास्तरांच्या अंगात आणण्याचा प्रयत्न केला. पण ती त्यांच्या अंगात येईना. शेवटी त्यांच्या पत्नीला बोलावून घेतले. ती बाई यांच्या पत्नीच्या अंगात येऊन म्हणाली "मास्तराजवळ पाच रुपये मागितले व माझ्या मुलीशी लग्न करायला सांगितले, पण त्यांनी तसे केले नाही. म्हणून मी यांना पकडले." क्षीरसागरांनी त्यांच्यावर उपचार केल्यानंतर ते बरे झाले व कामावर रुजू झाले. ही घडलेली गोष्ट त्यांनी त्या मास्तरांकडून सहीनिशी लिहून

एखाद्या स्त्रीच्या इच्छेप्रमाणे तिला केवळ पाच रुपये दिले नाहीत व तिच्या मुलीशी लग्न केले नाही म्हणून तिच्या त्या वासनेने असे तरुण स्त्रीचे रूप घेऊन (पिशाच बनून) एखाद्या व्यक्तीला वरीलप्रमाणे पिडावे यावर विश्वास बसत नाही, म्हणून क्षीरसागरांनी ही घटना घडल्याबद्दल त्या मास्तराकडून सहीनिशी लिहून घेतले, हे उघड आहे. पण अशी अनेक प्रकरणे त्यांनी हाताळली असून ती आपल्या पुस्तकात त्यांनी दिली आहेत. दुसरे एक प्रकरण भिकारणीचे आहे. ती बोंबडी होती व घरच्या मालकाची १७-१८ वर्षांची एक सुंदर, गोरी मुलगी उत्तम पातळ नेसून त्या बाईस भिक्षा घालण्याकरिता दाराबाहेर आली असता त्या मुलीजवळ त्या बोंबड्याबाईने तिचे पातळ मागितले. ती ते कसे देणार ? ती मुलगी भिक्षा देऊन काही न बोलता घरात निघून गेली. थोड्या वेळाने जेवायला बसली असता तिला फिट आली. बेशुध्द झाल्यानंतर वेड्यासारखे करू लागली. आरडाओरडा करू लागली. स्वतःलाच बोंबकारू लागली. अनेक तज्ञ डॉक्टरांना दाखवून उपाय केले. मेंदूत पाणी झाले असून मुंबईला मेंदूच्या डॉक्टरला दाखविण्यास एका डॉक्टरानी सांगितले. ती मुलगी त्या भिकारणीप्रमाणे बोंबडे बोलत होती व लुगडे मागत होती. त्यामुळे ही पिशाच बाधा असावी असा संशय येऊन क्षीरसागरांना तिच्या वडिलांनी दाखवले. त्यांनी तिच्यावर बरेच दिवस उपचार करून तिला बरे केले. “

तिसरे उदाहरण एका प्रसिध्द डॉक्टराचेच आहे. हे जळगावचे प्रसिध्द डोळ्याचे डॉक्टर. त्यांचे हात डोळ्याचे ऑपरेशन करताना थरथर कापू लागले. प्रॅक्टीसवर परिणाम झाला. त्यावेळ सर्व खानदेशात एकच डॉक्टर होते. मुंबई शिवाय दुसरी कोठे सोय नव्हती. जळगावहून नाशिकला क्षीरसागराकडे ते आले. त्यांनी त्यांना स्पर्श करताच जोरात श्वास सुरू झाला. डोके हालू लागले. क्षीरसागर म्हणाले, “तुम्हाला पिशाच बाधा झाली आहे.” डॉक्टरांचा विश्वास बसेना. आपला धंदा परोपकराचा. कुणाचे वाईट करीत नाही, असे ते म्हणाले. क्षीरसागरांनी पुन्हा एक दिवस रात्री येण्यास सांगितले. ते सपत्नीक आले. त्यादिवशी क्षीरसागरांनी त्यांच्याकडून हस्तलेखन करून घेतले. त्यांचे डोळे झाकलेले होते. त्यांच्याकडून ‘लक्ष्मण’ अशी अक्षरे लिहिली गेली. त्यांस क्षीरसागरांनी प्रथम विचारले, “आपण काय लिहिले ?” डॉक्टर म्हणाले, “मला माहीत नाही.” मग डोळे उघडायला सांगून “हे कोणाचे नांव ?” असे त्यांना विचारले. “माझ्या बंधूचे” “हे का आले ?” क्षीरसागरांनी विचारले. ते म्हणाले की “माझा भाऊ असा नाही, की तो मला त्रास देईल.” लगेच त्यांच्या पत्नी उद्गारल्या, “बरोबर आहे. त्यांची बायको नेहमी आम्हास शिव्या देते. कारण आपणास एवढा पैसा मिळून आम्हास काही मदत करीत नाही.” त्यांची खात्री पटली. क्षीरसागरांच्या उपचाराने त्यांचा हात

कापण्याचा विकार गेला. १२

अशाप्रकारे मोलकरणीला काढून टाकल्यामुळे घरच्या मालकिणीस छडीने मारल्यासारखे अंगावर वळ उठणे व अंगाची आग-आग होणे, (हे पौर्णिमा-अमावास्येलाच होत असे), खानेसुमारीच्या कामाचे कमिशन दिले नाही म्हणून हेडमिस्ट्रेस असिस्टंट मास्तरणीला आजार आणून छळणे, शाळेत त्याच वर्गात शिकणारा मुलगा आपल्या वर्गातील मुलीवर फिदा झाल्याने तिला फिट्स येणे, अशाप्रकारची जिवंत व्यक्तीची 'पिशाचे' जिवंत व्यक्तींनाच आपल्या दुष्ट वासनांनी 'पकडल्या' ची अनेक उदाहरणे क्षीरसागरांनी दिली आहेत. वरील प्रत्येक उदाहरणात त्या 'पकडलेल्या' व्यक्तीच्या अंगात वासनेने शिरलेल्या त्या व्यक्तीचे 'पिशाच' अंगात भरवल्यानंतर वरील गोष्टी त्या 'पिशाचा' ने सांगितल्यामुळेच कळल्या हे तेथे लक्षात ठेवण्यासारखे आहे. उदा. पहिल्या उदाहरणातील मालकिणीच्या अंगात मोलकरीण येऊन "मी लुगडे मागत असे. ते न देता हिने मला कामावरून काढून टाकल्यामुळे मी हिला घेऊन जाणार" असे म्हणाली. दुसऱ्या उदाहरणातील हेडमिस्ट्रेस अंगात भरवल्यावर "माझे कमिशन हिने दिले नाही." असे म्हणाली. तिसऱ्या उदाहरणातील 'पिशाचा' ला 'तू कोण आहेस ?' असे विचारता "मी पवार आहे" असे म्हणाले व 'तू हिला का धरलेस ?' असे विचारता "आम्ही एका शाळेत आहोत. माझे हिच्यावर मन बसले," असे त्याने उत्तर दिले. आपण आपल्या वासनेने 'पिशाच' बनून इतरांना असे छळतो हे अर्थात् त्या जिवंत व्यक्तींना माहीत नसते. हे अजाणतेणाने झालेले असते. जिवंत व्यक्तींची पिशाचे लवकर निघून जात नाहीत असा आपला अनुभव असल्याचे क्षीरसागरांनी म्हटले आहे. यावरून माणसाच्या जिवंतपणीच्या वासना किती प्रबळ असतात हे दिसून येते. याविषयी लक्षात ठेवण्यासारखी एक गोष्ट अशी की ज्या व्यक्तींच्या वासना इतरांना अशाप्रकारे छळतात त्या वासना स्वतः त्या व्यक्तींना इतरापेक्षा जास्त छळत असतात. पण तत्काळ 'दृश्य' स्वरूपात त्यांना त्या छळत नसल्यामुळे त्यांना हे कळत नाही. उदा. मरणोत्तर अवस्थेत ज्याला आपण 'नरक' म्हणतो, ती हीच वसनांची यातना अवस्था असते. अशा वासनामुळेच माणसाला जन्ममरणाचे अनेक फेरे करावे लागतात, व त्यांचे परिणाम अनेक जन्मात निरनिराळ्या रीतीने त्यांना भोगावे लागतात. याचे ज्ञान नसल्यामुळे मनुष्य कसा बेफिकीर असतो याचे एक उदाहरण प्रस्तुत लेखकाच्या अवलोकनात नुकतेच आले आहे. श्री. प्रेमचंद कन्हैयालाल भनसाळी (परळी वैजनाथ, जि. बीड) यांच्यावर एका व्यक्तीने 'करणी' केली असून त्याने त्यांच्या 'सुनेला' धरले आहे. तो केव्हाही तिच्या अंगात विनंतीवरून येतो व बोलतो. प्रस्तुत लेखकाने विनंती केल्यावरून तो आला व त्याने आपले नांव 'भिसे' असे सांगितले, व पत्तासुध्दा लेखकाला दिला. आपला

व्यवसाय सायकल दुरुस्तीचे दुकान चालविणे, असे त्याने सांगितले व जोडधंदा म्हणून 'करणी' करत असतो असे म्हणाला ! "तू अशा 'करणी' ने दुसऱ्यांना त्रास देतोस, पण त्याचे परिणाम तुला पुढे भोगावे लागणार आहेत, हे तुला माहीत आहे काय ?" या लेखकाच्या प्रश्नाला त्याने जे उत्तर दिले ते नमूनेदार आहे. तो म्हणाला, "पुढचे कोण बघितले आहे ? हल्ली पैसा मिळतो ना. बस्स !" त्याने दिलेला पत्ता खोटा असल्याचे श्री. भनसाळी यांना आढळून आले आहे. (त्यामुळे त्याने आपले नांवही खोटेच सांगितले असावे असे वाटते. मात्र आपल्याला मुले आहेत, सुना आहेत इत्यादि कौटुंबिक तपशीलही तो सांगतो.) त्याने भनसाळींचे कित्येक वर्षांत ३० हजार रुपये 'करणी' ने उचलले असल्याचे भनसाळी म्हणाले. 'करणी' काढणाऱ्या अनुराधाताई देशमुख यांनी संचाराच्या वेळी अनेकांना त्यांच्या पैशावर 'करणी' केली असल्याचे त्या दिवशी लेखकासमोरच सांगितले आहे.<sup>१२१</sup>

### कर्मणो गहना गतिः

मी वर म्हटले आहे की आपण 'पिशाच' बनून इतरांना छळतो हे त्या व्यक्तीला माहीत नसते. भनसाळी यांच्या सुनेला 'धरलेल्या' व्यक्तीने तिच्या अंगात येऊन दिलेली माहिती ती व्यक्ती त्याची जाणीव नसताना खोटी कशी देणे शक्य आहे, अशा प्रश्न येथे वाचकांना पडेल. जिवंत व्यक्तीच्या वासना इतरांना जेव्हा पिशाच बनून धरतात तेव्हा त्या स्वतंत्र व्यक्तीप्रमाणेच धरतात; आणि स्वतंत्र व्यक्ती जसे खरे सांगू शकते, तसे खोटेही सांगू शकते ! थोडक्यात ती वासना स्वतंत्र व्यक्तीप्रमाणे स्वतःचे हितसंबंध जपू शकते. काही व्यक्ती झोपेत चालतात. पण जागेपणी आपण झोपेत काय केले, हे त्यांना माहीत नसते. कृष्णानंदांनी आसाममध्ये एका घरी मुक्कामाला असताना त्या घरातील शाकाहारी स्त्री रात्री झोपल्यानंतर उठून घरी समोरच्या तळ्यातील मासे धरून ते शिजवून खाल्याचे स्वतः पाहिले आहे. (True Experiences, p.559) हे सर्व करताना तिचे डोळे झाकलेले होते. (काही जण घोरतातही ! ) कृष्णानंदांनी हे सर्व बॅटरीच्या प्रकाशात पाहिले. त्यांनी तिला बोलावलेही. पण तिला कशाचीही जाणीव नव्हती झोपेत एखादी (शाकाहारी) व्यक्ती तळ्यातील मासे धरून शिजवून खाते, सगळे साहित्य स्वच्छ करून परत झोपते, पण सकाळी आपण रात्री काय केले हे तिला माहीत होत नाही, यावर कोणाचा विश्वास बसत नसला तरी हे खरे आहे. हा प्रकार अपवादात्मक नाही. अनेकांना झोपेत उठून अशा काही गोष्टी करण्याची सवय असते. जागृत मनाला झोपेतील अबोधमन (sub-conscious mind) काय करते हे माहीत नसते आणि जे करते ते अगदी जागेपणीच्या स्वतंत्र व्यक्तीप्रमाणेच करते, आणि तेही डोळे झाकून ! ही गोष्ट (अंधारात डोळे झाकून सर्वकाही प्रकाशातील व्यक्तीप्रमाणे ती करते, ही गोष्ट) तिला डोळे झाकूनही सर्व काही दिसत असते हे सिद्ध

करते. हीच अतींद्रिय दृष्टी होय; आणि जे काही ती करते ते सर्व अतींद्रिय पातळीवरचे असते. म्हणून जागृत मनाला ते माहीत होत नाही. अशाच रीतीने जागृत व्यक्तीला (तिच्या जागृत मनाला) आपले अबोध मन (अबोध पातळीवरील आपल्या वासना) दुसऱ्या एखाद्या व्यक्तीला 'पकडून' काय बोलते (किंवा बोलतात व करतात) हे माहीत नसते. कारण हे अतींद्रिय पातळीवर घडलेले असते. (अबोध मन हे नेहमी अतींद्रिय पातळीवरच कार्य करीत असते.)<sup>१२१</sup>

दुसरी याविषयी लक्षात ठेवावयाची गोष्ट अशी की जिवंत व्यक्तीच्या वासना ज्यांना छळतात त्यांना त्यांचा त्यामध्ये सहभाग असल्याशिवाय छळत नाहीत. अन्यथा वासनायुक्त जगात राहणाऱ्या सर्वांनाच असा अनुभव आला असता. तो येताना दिसत नाही. याचे कारण अशा वासनांना प्रतिसाद देणारे (sympathetic vibration) असे त्या व्यक्तीच्या ठिकाणी काहीच नसते, हे आहे. उदा. तो शाळामास्तर त्या तरुण स्त्रीच्या पाठीमागून का जात होता ? त्या बोंबड्या भिकारणीच्या पातळाच्या मागणीला त्या मुलीचे मन का वश झाले ? आपल्या भावाच्या बायकोच्या मत्सराला ते डोळ्यांचे डॉक्टर का वश झाले ? या प्रत्येक प्रश्नाचे उत्तर 'त्या व्यक्तीचे मन कमकुवत होते म्हणून होय' हेच आहे; आणि एखाद्या व्यक्तीचे मन असे परकीय भावनेला वश होण्याइतके कमकुवत का बनते ? कारण त्या व्यक्तीच्या ठिकाणी त्या भावनेला प्रतिसाद देणारी तसलीच भावना असते- म्हणजेच ती व्यक्ती त्या भावनेला संवेदनशील (sensitive) असते-म्हणून होय. यालाच आपण 'मनावरील पूर्वजन्मीचे संस्कार' म्हणतो. कृष्णानंदांना जवळच 'शिवालय' असल्याचे सांगणारा कामगार ('पिशाच') त्यांच्या मनाच्या विशिष्ट संस्कारामुळेच भेटला व तो त्याला भुलून तिकडे गेले. गळतग्याच्या व भोजेच्या तरुणांना त्यांच्या मनाच्या विशिष्ट संस्कारामुळेच रात्री 'तरुण स्त्री' भेटली व त्यांनी तिला भुलून आपल्या गाडीवर घेतले. हीच गोष्ट विश्वामित्र व शुकाचार्य यांच्या गोष्टीतून आपल्या पुराणात सांगितली आहे. दोघेही तपस्वी होते व मोठी तपश्चर्या करीत होते. पण विश्वामित्र मेनकेला भुलले शुकाचार्य भुलले नाहीत. याचे कारण काय ? याचे उत्तर त्यांच्या त्यांच्या मनातच सापडते. म्हणून म्हटले आहे, **मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः ।** म्हणजे प्रत्येक मनुष्य आपल्या मनानेच आपले भविष्य घडवीत असतो. कारण मनच माणसाला (कर्माने) बांधते व मनच त्याला (त्यापासून) सोडविते. **ब्रह्मबिंदूपनिषद्** म्हणते, **ॐ मनो हि द्विविधं प्रोक्तं शुद्धमशुद्धमेवच । अशुद्धं कामसंकल्पं शुद्धं कामविवर्जितम् ॥** म्हणजे मन हे दोन प्रकारचे आहे. एक शुद्ध व दुसरे अशुद्ध. कामनायुक्त मन हे अशुद्ध मन व कामनाविरहित मन हे शुद्ध मन होय. (धिऑसॉफीमध्ये पहिल्याला 'काममनस' किंवा 'लोअर मनस' व दुसऱ्याला 'हायर मनस' म्हटले आहे.) कामनाविरहित

मनुष्य आढळत नाही हे खरे आहे. तथापि चांगल्या कामना बाळगण्यास प्रत्येक व्यक्ती स्वतंत्र आहे; आणि त्या चांगल्या कामनाच त्या व्यक्तीला कर्मबंधनापासून मुक्त करण्यास-मन शुध्द करण्यास-मदत करतात. अशा व्यक्तीला कसल्याही प्रकारच्या वाईट वासनापासून (वा विचारापासून) त्रास होत नाही. मग त्या वासना (वा विचार) जिवंत व्यक्तीच्या असोत अगर मृत व्यक्तीच्या असोत. शुध्द मनाच्या लोकांच्या वाटेला भानामती कधी जात नाही याचे हेच कारण आहे.<sup>१४</sup>

या संदर्भात आणखी एक गोष्ट लक्षात ठेवणे आवश्यक आहे. ती म्हणजे अशाप्रकारची भानामतीची 'बाधा' ज्यांना होत नाही, त्यांनी आपले मन शुध्द असल्यामुळेच ती होत नाही, असे समजण्याची चूक करू नये. येथेच कर्माचा संबंध येतो. आपल्या कोणत्या कर्मांमुळे आपल्याला कोणते भोग-ज्यात भानामतीचे भोगही येतात-भोगावे लागतात, हे माहीत नसते. कारण हे ठरविणे आपल्या हातात नाही. मागे वसुंधरा पटवर्धन या मराठीतील प्रसिध्द लेखिकेचे उदाहरण दिले आहे. त्या नास्तिक नसल्या तरी ईश्वराकडे ओढा नसलेल्या व बुद्धिवादी वडिलांच्या संस्कारात वाढलेल्या बाई होत्या. पण त्यांच्या स्वप्नात, ज्यांना त्यांनी आपल्या जीवनात कधी मानले वा भजले नव्हते, ते अकलकोटचे स्वामी सारखे येत व नाना तऱ्हेच्या अर्थहीन आज्ञा करीत. आता त्या स्वामींची भक्ती करणाऱ्या भक्तांच्या स्वप्नात ते स्वामी असे नेहमी जातात असे आढळून येत नाही. मग त्यांचे भक्त नसलेल्या वसुंधराबाईंच्या स्वप्नात ते सारखे का जावेत, त्यांना अर्थहीन आज्ञा का कराव्यात व त्यांच्या त्या आज्ञा त्या बाईंनी इमानेइतबारे का पाळाव्यात, याचे उत्तर कोणालाही बुद्धिवादातून देता येणार नाही. त्या बाई स्वतःही देऊ शकलेल्या नाहीत. नर्मदा परिक्रमा करणाऱ्या सर्वच व्यक्तींना नर्मदा नदी 'स्त्री' च्या रूपात भेटत असल्याची दिसत नाही. एखाद्या टेंबेस्वामीना किंवा आबाजी गोखल्यांनाच ती का भेटावी ? याचेही उत्तर बुद्धिवादातून देता येणार नाही. अशा घटनांची उपपत्ती देण्यासाठी कर्मसिध्दांताचाच आधार द्यावा लागतो. आध्यात्मिक वृत्तीच्या कृष्णानंदांना शिवालय जवळ असल्याचे सांगणारा अरण्यखात्याचा कामगार का भेटावा? गळतग्याच्या तरुणाना अपरात्री (त्यांना तोंडघशी पाडणारी) तरुण स्त्रीच का भेटावी ? ज्यांच्या त्यांच्या स्वभावधर्मानुसार व कर्मानुसार त्या त्या व्यक्तींना त्या त्या व्यक्ती भेटल्या व विशिष्ट अनुभव देऊन गेल्या. असे अनुभव व्यक्तींनाच नव्हे तर समाजालाही सार्वजनिकरीत्या येतात. अशावेळी त्याला सामूहिक (group) कर्म म्हणावे लागते. हे कर्म भूकंपासारख्या (सामूहिक) नैसर्गिक आपत्तीतूनच भोगावे लागते असे नसून सामूहिक भानामतीच्या स्वरूपातही भोगावे लागते. उदा. १८९२ मध्ये 'ईल' प्राण्यांचा पाऊस अलाबामा प्रांतातील कोलंबंग येथे पडल्याची न्यूयॉर्क Sun ने बातमी दिली आहे. बॅटन रुज या शहरावर एकदा अनेक

प्रकारच्या मेलेल्या पक्ष्यांचा पाऊस पडला. Scientific American ने याच्या वीस वर्षे अगोदर मांसाच्या तुकड्यांचा पाऊस पडल्याची माहिती प्रसिध्द केली होती. रक्ताचा पाऊसही एकदा पडला, तर आणखी एकदा अत्तराचा वास येणाऱ्या पाण्याचा पाऊस पडला. चार्लस फोर्ट नावाच्या लेखकाने बुद्धिवाद्यांची केवळ दर उडविण्यासाठी अशा घटनांच्या नोंदी केल्या आहेत.<sup>२२५</sup> (त्याने आपल्या पुस्तकाला **The Book of the Damned** असे नांव दिले आहे. यातील 'Damned' धिक्कारलेले-लोक म्हणजे अर्थात् बुद्धिवादी होत !) अशाप्रकारच्या पावसाचे एक वैशिष्ट्य म्हणजे निरभ्र व स्वच्छ आकाशातून तो पडतो.<sup>२२६</sup> शिवाय ज्या प्राण्यांचा पाऊस पडतो ते प्राणी (उदा. पक्षी) जवळपास त्या भागात राहणारे प्राणी नसतात. यावरून हा भानामतीचाच प्रकार असल्याचे अनेकांनी म्हटले आहे.<sup>२२७</sup> १९३२ साली चार्लस फोर्ट वारला.<sup>२२८</sup> त्यानंतरही अशा घटना घडल्या आहेत. उदा. १९५७ साली फ्रान्समधील बोर्जीस गावावर प्रत्येकी एक हजार फ्रँकच्या हजारो नोटांचा पाऊस पडला. त्याच्या आदल्या वर्षी ब्रिस्टॉल मधील एका मुलांच्या घोळक्यावर पेनी व अर्धा पेनी नाण्यांचा पाऊस पडला.<sup>२२९</sup> (प्रकरण १४ मध्ये पवन या लहान मुलाला 'पैसे देणाऱ्या भागामती'चे वर्णन केले आहे. युरोपमधील मुलांवर 'पैशांचा पाऊस पाडणारी' ही 'सार्वजनिक पैसे देणारी भानामती' म्हणता येईल !) अशा घटनांची शास्त्रज्ञांनी बुद्धिवादातून वैज्ञानिक उपपत्ती देणे शक्य झालेले नाही. याशिवाय इतरही अशा अनेक घटना आहेत की ज्यांची वैज्ञानिक उपपत्ती शास्त्रज्ञांना देता आलेली नाही. उदा. ज्याला 'आपोआप मनुष्य जळून जाणे' (Spontaneous Human Combustion-संक्षिप्तात SHC) म्हणतात अशा घटना बऱ्याच वेळी घडल्या असून त्याची अनेकांनी नोंद केली आहे. उदा. १९५१ साली अमेरिकेच्या फ्लॉरिडा राज्यातील सेंटपीटर्सबर्ग शहरातील ६७ वर्षांची सौ. मेरी रीजर ही बाई आपल्या खोलीत बसलेल्या जागी आपोआप जळून भस्मसात झाली. तिच्या अगदी जवळ वर्तमानपत्रे होती. कपडे होते. पण ते जळाले नाही. पूर्ण सुरक्षित होते. या प्रकरणाची सर्व तज्ञांनी कसून तपासणी केली असून ती बाई स्वतःच्या शरीरातील उष्णतेमुळेच जळाल्याचा शेवटी निष्कर्ष काढण्यात आला आहे.<sup>२३०</sup> आता स्वतःच्या शरीरातील उष्णतेने मनुष्य कसा जळणे-जळून भस्म होणे-शक्य आहे ? (१७५ पौंड वजनाच्या त्या बाईचे शरीर भस्म होऊन फक्त १० पौंडाचे उरले होते.) हे भौतिक विज्ञानात बसत नाही. पण याशिवाय दुसरा कोणताच निष्कर्ष अशा घटनांच्या बाबतीत शास्त्रज्ञांना काढता आलेला नाही. अशा घटनांची कोणतीही (भौतवैज्ञानिक किंवा अतींद्रिय वैज्ञानिक) उपपत्ती दिली तरी शेवटी कर्मसिध्दाताची कास धरण्यावाचून गत्यंतर नाही. याला नियती (predestination) म्हणतात. वसुंधराबाईंच्या बाबतीत 'बुद्धी कर्मानुसारिणी' असे मी म्हटले आहे. सौ. मेरी रीजरच्या बाबतीत 'घटना कर्मानुसारिणी' म्हणण्यावाचून गत्यंतर नाही. मनुष्याला



कोणत्या कर्माचे कोणते फळ, कसे भोगावे लागते व केव्हा भोगावे लागते हे सांगता येत नाही. म्हणून गीतेत कृष्णाच्या तोंडी ‘कर्मणो गहना गतिः।’ (कर्माची गती गहन आहे.) हे वचन घातले आहे. मनुष्याची बुद्धी जशी कर्मानुसारिणी असते, तसेच मनुष्याच्या जीवनातील घटनाही कर्मानुसारच घडतात असा निष्कर्ष अशा उदाहरणावरून काढावा लागतो. प्रस्तुत लेखकाला याचे स्वतः प्रत्यक्ष घडलेल्या घटनांनी प्रत्यंतर आले असून त्याची माहिती उद्बोधक आहे.

### गणपतीचा ‘चमत्कार’

आमच्या घरी गणेशचतुर्थीला बसविलेल्या गणपतीचे विसर्जन गौरीबरोबर करण्याची प्रथा नाही. दुसऱ्या वर्षीच्या गणेशचतुर्थीला ते करण्याची प्रथा आहे. पण १९७४ साली ही प्रथा मोडून पत्नीने गणपतीचे विसर्जन गौरीबरोबर केले. त्याच वर्षी घरी नाना तऱ्हेची विघ्ने निर्माण झाली. पत्नीला शारीरिक त्रास सुरू झाला व घरी सतत भांडणे होऊ लागली. सासू-सुनेचे तर इतके बिनसले की पत्नीला व मुलांना घेऊन मला स्वतंत्र बिऱ्हाड करून राहावे लागले. तरीही पत्नीचा आजाराचा त्रास चालूच राहिला. शेवटी पत्नीने परगांवच्या एका रेणुकादेवीचा संचार होणाऱ्या बाईकडे जाऊन तिच्यापुढे (रेणुकेपुढे) आपले गाऱ्हाणे मांडले.<sup>१११</sup> तेव्हा तिने तत्काळ उलट प्रश्न केला, “तू घरची प्रथा मोडून गणपतीचे नदीत विसर्जन केलेस काय ?” पत्नी म्हणाली, “होय.” ती म्हणाली, “आता गणपती तुझ्या दोन मुलांपैकी एका मुलांचे तुला लवकरच विसर्जन करायला लावणार आहे,” हे ऐकून माझ्या पत्नीचे धाबेच दणाणले. तिने त्या रेणुका देवीची करुणा भाकली व “माझ्या मुलाला कसेही करून वाचव. तू संगशील ते मी करीन” असे ती म्हणाली. त्यावर ‘रेणुका’ म्हणाली, “मी कोण वाचवणार ? तो गणपतीच वाचवला तर वाचवील.” पत्नीने त्यासाठी काय करावे असे विचारले. तेव्हा तिने “गणपतीची झालेल्या चुकीबद्दल क्षमा माग व पुन्हा असे करणार नाही असे म्हणून त्याच्या जागी सुपारीची प्रतिष्ठापना करून त्याची नेमाने पूजा करायला सुरुवात कर. तथापि तीन महिने तुझ्या मुलांना गंडांतर आहे. विशेषतः धाकट्या मुलाला सांभाळ.” पत्नीने घरी येऊन घडलेला वृत्तांत मला सांगितला व गणपतीच्या जागी सुपारीची प्रतिष्ठापना करून त्याची पूजा करू लागली.

तीन महिन्यांपर्यंत मुलांना जपण्याचे आम्ही ठरविले. लहान मुलगा त्यावेळी सहा वर्षांचा होता. त्याला शाळेलाही पाठविणे बंद केले. बाहेर खेळायला ही सोडत नसू. रात्री आम्ही त्याला दोघांच्या मध्ये घेऊन झोपत असू. अशारीतीने एक महिना गेल्यानंतर एके दिवशी रात्री एकच्या सुमारास मुलगा एकदम किंचाळत उठला. आम्ही लगेच लाइट लावला. पाहतो तो मुलाचे तोंड रक्तबंबाळ झालेले. काय झाले ते कळेना. भयंकर धाबरलो. ताबडतोब त्याला डॉक्टराकडे घेऊन गेलो.

रात्री दवाखाना बंद असल्यामुळे घरी जाऊन डॉक्टरांना उठविले. त्यांनी त्याचे तोंड धुतले व बॅटरीने तपासले. तेव्हा मुलाच्या नाकाच्या मधल्या भितीला जखम झालेली दिसली. ते म्हणाले की उंदीर चावल्यामुळे ही जखम झाली आहे. त्यांनी उंदराच्या विषाविरुद्ध इंजेक्शन दिले. अशारीतीने मुलाच्या जिवावरचे संकट शेषाटीवर गेले व आम्ही सुटकेचा निःश्वास सोडला. नंतर घरी तो उंदीरही आम्हाला दिसला. व खात्री झाली. दुसरे दिवशी माझी मुलगी मला म्हणाली, “अप्पा, विवेकच्या नाकाला उंदीर चावला हे गणपतीचेच काम. नाक म्हणजे सोंडच नव्हे काय ? आणि उंदीर गणपतीचे वाहन नाही काय ?” खरोखर या गोष्टीचे आम्हाला भानच नव्हते. मुलीने ते आमच्या लक्षात आणून दिले. गणपतीने अशारीतीने लक्षणेने (symbolically) हे आपलेच काम असल्याचे दाखवून दिले होते. आमच्या जड बुद्धीला जे कळले नाही ते नऊ वर्षांच्या मुलीला बुद्धी देऊन गणपतीने आम्हाला सांगितले! गणपती हा जसा विघ्नकर्ता आहे, तसा विघ्नकर्ताही आहे, हे आम्हाला या घटनेमुळे कळाले. (किंबहुना तो विघ्नकर्ता असल्यामुळेच सर्व कामाच्या आरंभी ते निविघ्नपणे पार पडावे म्हणून त्याची पूजा करण्यात येते.) (वक्रतुंड महाकाय सूर्यकोटिसमप्रभ । निर्विघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥) कारण नंतर घरातील संकटे आजार, भांडणे सर्व नाहीसे होऊन आम्ही परत घरी राहण्यास गेलो. गणपतीचा हा दुसरा ‘चमत्कार’ होता.

वरील स्वतःच्या घरचे उदाहरण देण्यामध्ये माझे दोन हेतू आहेत. एक, गणपती हिंदूवरच संकटे आणतो व ती घालवतोही. इतर धर्मीयांना तो काही करीत नाही. म्हणजे हिंदूंच्या इतर देवताप्रमाणे गणपती ही देवताही मानवी मनातूनच निर्माण झालेली ‘कृत्रिम’ देवता (artificial elemental) आहे, हे यावरून सिद्ध होते. एरवी हत्तीची सोंड व मानवी शरीर अशी देवता कल्पनेशिवाय कशी निर्माण होईल ? तथापि काली देवतेप्रमाणेच ही देवताही फार प्राचीन काळापासून उपासनेत असावी याचे पुरावे सापडतात. कारण गणपतीच्या मूर्ती उत्खणनात व पूजेत/उपासनेत अमेरिकेपासून चीन-जपानपर्यंत अनेक देशात सापडल्या आहेत.<sup>११२</sup> यावरून असे दिसते की वैदिक संस्कृती भारताशिवाय अन्य देशात होती व ती नंतर लोप पावली. हे खरे असो वा नसो. कालीप्रमाणेच गणपती व इतर वैदिक देवता हल्ली फक्त हिंदूंच्या उपासनेतच आढळतात व परिणामी त्यांचे ‘चमत्कार’ ही हल्ली येथेच घडताना दिसतात, ही वस्तुस्थिती आहे. (तथापि काही वर्षांपूर्वी गणपती व इतर हिंदू देवता दूध पिण्याचा ‘चमत्कार’ सर्व जगभर घडला असल्याचे आढळून आले असून त्याविषयीची अधिक माहिती पुढे येईल.) हे उदाहरण देण्यात माझा दुसरा हेतू माणसाला बुद्धी कशी कर्मानुसारच होते व त्याच्या जीवनातील घटनाही कशा कर्मानुसारच घडतात, हे वाचकांना कळावे व पटावे हा आहे. एरवी

विसर्जनाची प्रथा मोडण्याची बुद्धी पत्नीला का व्हावी व त्या गोष्टीला प्रतिबंध करण्याची बुद्धी मला किंवा माझ्या आईला का होऊ नये, याचे उत्तर सापडत नाही. त्याचे उत्तर एकच, हे प्रारब्ध कर्म असून ते आम्हाला भोगून संपवायचे होते. म्हणूनच तशी सर्वांना बुद्धी झाली. कर्म फार वाईट नसल्यामुळे पत्नीला वेळीच 'रेणुके' कडे जाण्याची सुबुद्धी सुचली व आमच्या लहान मुलाच्या किरकोळ जखमावर निभावले. सौ. मेरी रीजरप्रमाणे त्याला प्राणास मुकावे लागले नाही. पण प्रथा मोडल्यामुळे घरच्या इतर लोकांप्रमाणे त्याला ही त्रास भोगावा लागला. सामूहिक कर्म (Group Karm) म्हणून एक प्रकार असल्याचे जे एडगर केयसी याने व इतर अनेकानी सोदाहरण दाखवून दिले आहे, त्याचेच हे आमच्या कुटुंबाच्या बाबतीत घडलेले उदाहरण आहे. (भूकंप, विमान वा अन्य मोठे अपघात यात अनेक लोकांना एकदमच मृत्यू येतो. ही सामूहिक कर्मांचीच उदाहरणे होत. अशा वेळी एखादे लहान मूल वाचते. ते त्याचे सत्कर्म बलवत्तर असल्यामुळेच होय. किल्लारी भूकंपात वाचलेली काही कुटुंबे ठाण्याकडे येऊन रस्त्याच्या कडेला आपली बिऱ्हाडे करून राहिली होती. पण तेथे तेलाच्या टँकरचा अपघात होऊन ते सर्व लोक आगीत होरपळून गेले. सामूहिक कर्म कुठे भेटेल हे सांगता येत नाही व ते चुकवताही येत नाही, याचे हे उदाहरण आहे.) परिक्षिती राजाने शापरुपी कर्म चुकविण्यासाठी मोठी युक्ती योजिली. पण 'बुद्धी कर्मानुसारिणी' या नियमानुसार व नियती चुकविता येत नसल्यामुळे त्याला अळीच्या रुपाने दडलेल्या तक्षकाचेच फळ खाण्याची बुद्धी झाली व त्याला मृत्यू आला, अशी महाभारतात कथा आहे.<sup>२३३</sup>

आमच्याप्रमाणेच कोल्हापूरच्या बाबूराव अथणे यांच्या कुटुंबालाही असाच गणपतीच्या 'चमत्कारा' चा अनुभव आला आहे. बाबूरावांनी तो 'परब्रह्मगुरु चिलेदेव' या ग्रंथात नमूद केला आहे. बाबूराव जैन असूनही चिलेदेवांच्या सांगण्यावरून त्यांनी घरी एका गणेशचतुर्थीला गणपती आणून बसवला. त्यांच्या सांगण्याप्रमाणे गणपतीमूर्ती वर्षभर घरी ठेवून त्याचे पूजन व्हायचे व दुसरा गणपती आणल्यावरच त्याचे विसर्जन व्हायचे. एकदा बाबूराव परगावी नोकरी करीत असता त्यांच्या पत्नीने वर्षभर न ठेवता गणपतीचे गौरीबरोबर विसर्जन केले. परिणाम असा झाला की दुसऱ्या गणेशचतुर्थीपूर्वी तिची प्रकृती बिघडली व तिला दवाखान्यात ठेवावे लागले. बाबूराव गणपती आणण्यासाठी कोल्हापूरला आले असता बायको दवाखान्यात असल्याचे त्यांना कळाले. परिस्थिती गंभीर होती व डॉक्टर काही सागेनात, इतक्यात चिलेदेव आले व त्यांनी काही धार्मिक विधी केला आणि तिची प्रकृती सुधारली. नंतर डॉक्टर अथणेना म्हणाले, "तुमच्या मंडळी वाचल्या हा एक मोठा चमत्कार आहे ! अहो, त्यांची लघवी तयार होण्याची क्रियाच थांबली होती. मोठेच आश्चर्य घडले बघा. हे आमच्या शास्त्रात बसत नाही." चिलेदेवांनीच तिचे

प्राण वाचविले हे उघडच आहे. अन्यथा डॉक्टरांनी 'हे आमच्या शास्त्रात बसत नाही' असे म्हणालेच नसते. तथापि गणपतीची प्रथा मोडल्यामुळे किती गंभीर परिणाम होतो, हे या उदाहरणावरून दिसून येते. नंतर चिलेदेवांनी गणपतीचा फोटो आणवून घेऊन पूजा केली व ती प्रथा आजताग्यत चालू आहे.<sup>१४</sup>

चालू केलेली प्रथा मोडणे, हे दिलेले वचन भंग करण्यासारखे अनैतिक कार्य (पाप) आहे, हे मनोनिर्मित देवताशास्त्र आहे. त्याचे प्रायश्चित्त वैश्विक पातळीवरील नैतिक नियमानुसार भोगलेच पाहिजे, हे अशा घटनावरून सिध्द होते. मानवी मनातून निर्माण झालेल्या इतर देवताप्रमाणेच मानवी मनातून निर्माण झालेल्या गणपती या देवतेलाही स्वतंत्र व्यक्तित्व प्राप्त झाले असल्याचेही अशा घटना सिध्द करतात. मोठ्या प्रथा मोडल्या तर मोठ्या प्रमाणात परिणाम भोगावे लागतात व लहान प्रथा मोडल्या तर लहान प्रमाणात ते भोगावे लागतात, असेही आढळून येते. पुढील उदाहरण याची साक्ष देते.

### गणपतीचा असाही एक अनुभव

कोल्हापूर येथील मंगळवार पेठेतील गवळी तालीम मंडळातर्फे प्रत्येक वर्षी सार्वजनिक गणेशोत्सवांतर्गत कोल्हापूरातील गोरखनाथ कुंभार यांनी तयार केलेली ५ ते ६ फूट उंचीची गणेशमूर्ती बनवण्यात येते. या कुंभाराकडून वेळेवर मूर्ती मिळत नाही म्हणून इचलकरंजीतील त्याच नांवाच्या कुंभाराकडे मूर्तीची ऑर्डर देण्यात आली. गणेशचतुर्थी रोजी मंडळाचे ३०-३५ कार्यकर्ते मूर्ती आणण्यासाठी इचलकरंजीस दुपारी दीडला पोचले. आरती झाल्यानंतर ३ वाजण्याच्या सुमारास सर्व कार्यकर्ते मूर्ती हलविण्याचा प्रयत्न करू लागले. पण मूर्ती जागची हलनाशी झाली. म्हणून कार्यकर्त्यांनी इचलकरंजीतीलच ८ ते १० हमालांना प्रत्येकी १०० रु. देऊन मूर्ती उचलून ठेवण्यास बोलाविले. पण त्यांनाही मूर्ती एक इंचही जागेवरून हलली नाही. शेवटी कार्यकर्त्यांनी कंटाळून ६ वाजण्याच्या सुमारास हा प्रकार आपल्या कोल्हापूरातील सहकारी कार्यकर्त्यांना कळविला. त्यांनी हा प्रकार जोशी नामक एका ज्योतिष्यांना सांगितला. जोशींनी वार्षिक प्रथा मोडून कोल्हापूरच्या वेशीबाहेर मूर्ती तयार करण्यास सांगितल्याने ही अडचण उद्भवल्याचे सांगितले.

यानंतर हे जोशी आणि मंडळाचे काही कार्यकर्ते कोल्हापूरहून इचलकरंजीस रवाना झाले. यावेळी जोशींनी मूर्तीसमोर काळी बाहुली ठेवली. सर्व कार्यकर्त्यांनी मूर्तीस नमस्कार करून आमच्याकडून काही चुकले असल्यास माफ करावे, असे श्रीपुढे विनम्र साकडे घातले. यानंतर आश्चर्याची गोष्ट म्हणजे केवळ ६ ते ७ कार्यकर्त्यांनीच ही मूर्ती अलगद उचलून वाहनात ठेवली !

यानंतर ९.३० वाजण्याच्या सुमारास कोल्हापूरात मूर्ती आणल्यानंतरही

मूर्ती हलविण्यात पुन्हा थोडीशी अडचण आली. मूर्ती आणताना किरकोळ रंग उडालेल्या ठिकाणी रंगकामास कोल्हापुरातील पूर्वीच्याच गोरखनाथ कुंभार यांना बोलाविण्यात आले. त्यांनी पाहटे ५ वाजेपर्यंत मूर्तीचे रंगकाम केले. यानंतर पुन्हा आश्चर्याची गोष्ट घडली. या कुंभाराचा हात लागताच की काय कोणास ठाऊक, पण केवळ चौघांनी मिळून ही मूर्ती मंडपात मूळ ठिकाणी ठेवली.<sup>२३५</sup> जी मूर्ती प्रत्येकी १०० रु. घेऊन उचलणाऱ्या ८-१० हमालांना एक इंचही हालली नाही ती मूर्ती चौघांनी सहज उचलून ठेवली, ती मूळ प्रथेप्रमाणे दरवर्षी गणपतीची मूर्ती करणाऱ्या त्या कुंभाराचा त्या मूर्तीला, किरकोळ रंग कामासाठी का असेना, हात लागल्यामुळे होय यात संशय नाही. हा 'चमत्कार' त्या गणपतीने केला नाही, तर ती प्रथा पाळण्यासाठी परत पावले उचलणाऱ्या पश्चात्तापदग्ध अशा त्या लोकांच्या सामूहिक मनामुळे (collective mind) त्या वैश्विक व नैतिक अर्तीद्रिय शक्तीने केला-ज्या वैश्विक व नैतिक अर्तीद्रिय शक्तीतून त्या मानवी मनातून निर्माण झालेल्या गणपतीला फार प्राचीन काळी स्वतंत्र व्यक्तित्व प्राप्त झाले होते. आमच्या घरी घडलेला चमत्कारही त्या रेणुकादेवीने किंवा गणपतीने केला नाही, तर प्रथा पाळण्याचे ठरविलेल्या पश्चात्तापदग्ध अशा आमच्या सामूहिक मनातून त्या वैश्विक अर्तीद्रिय शक्तीने केला. श्री. अथणे यांच्या पत्नीचा आजार बरा करण्याचा (वैद्यकशास्त्रात न बसणारा) 'चमत्कार'ही अथणे कुटुंबियांना प्रथेची आठवण करून देणाऱ्या चिलेदेवांच्या रुपाने त्या अर्तीद्रिय शक्तीनेच केला. अशारीतीने प्रथा पाडणे व मोडणे, हे मानवी मनाचेच कार्य असल्यामुळे 'मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः' म्हणजे माणसाला कर्माने बांधण्याचे व कर्मानेच त्याला सोडविण्याचे कार्य मानवी मनच (त्यातून कार्य करणारी विश्वमनाची नैतिक शक्तीच) करित असते हे उघड होते तथापि कर्म करण्याचे-प्रथा सुरु करण्याचे-स्वतंत्र्य माणसाला आहे. तो चांगल्या प्रथा सुरु करू शकतो व मानवाच्या आध्यात्मिक उत्क्रांतीला हातभार लावू शकतो. हे पुढील उदाहरण दाखवून देते.

### प्राणीहत्या निषिद्ध असलेल्या देवता

व्हॅन डर पोस्ट हे दक्षिण आफ्रिकेत काही बेपत्ता बुशमेनच्या शोधात होते. त्यांनी त्यासाठी एका आफ्रिकन वाटाड्याची मदत घेण्याचे ठरविले. तो वाटाड्या त्यांना ते बुशमेन 'स्लिपरी' डोंगरात असतील व ते ठिकाण आपण दाखवू असे म्हणाला. पण त्यासाठी त्याने एक अट घातली. ती अशी की शोधकाम करणाऱ्यामध्ये कोणीही प्राणीहत्या केलेली व्यक्ती नसावी. अन्यथा त्या डोंगराच्या देवतांचा कोप होईल. व्हॅन डर पोस्टची पंचाईत झाली. कारण त्यांच्या शोधपथकातील काहीनी यापूर्वी एक डुक्कर मारले होते, व त्यांना असे न करण्याबद्दल सांगावयास ते विसरले होते. आणि तेव्हापासून त्यांना संकटपरंपरेला सारखे तोंड द्यावे लागले

होते. हे आता म्हणजे फार उशीराने त्यांना कळले. उदा. एकदा त्यांच्यावर मधमाशांनी हल्ला केला होता. त्यांनी आणलेला नवा कॅमेरा सारखा अडखळत होता. मग तो वाटाड्या त्या देवतांची प्रार्थना करण्यासाठी बसला. पण एकदम कोणत्या तरी अदृश्य शक्तीने ढकलल्याप्रमाणे तो पाठीमागे पडला. वाटाड्या म्हणाला, “पाहिलेत? मला त्या देवता प्रार्थनाही करू देईनात.” (भेंडवाडच्या भानामतीच्या प्रकरणात देवर्षीला भानामतीने कोलांट्या उड्या मारायला लावल्या होत्या, याचे येथे स्मरण करावे. पृ.५८.) नंतर टेपेरेकॉर्डर अडकला व बंद पडला. पुन्हा एकदा मधमाशांनी त्यांच्यावर हल्ला केला. शेवटी त्या वाटाड्याने त्या देवतांशी संपर्क साधण्यासाठी एका सुईत दोरा ओवून ती आपल्या तळहाताच्या आयुष्य रेषेवर ठेवली आणि त्यात निखून पाहू लागला. दहा मिनिटांनंतर तो त्यांच्याशी बोलू लागला. त्याने त्यांचे म्हणणे ऐकून घेतले आणि व्हॅन डर पोस्टला म्हणाला, “रक्ताने माखलेल्या हातांनी तुम्ही लोक येथे आलेले आहात ही गोष्ट त्या देवतांच्या कोपाला कारणीभूत झालेली असून तुमचा येथे येण्याचा हेतू शुध्द नसता तर यापूर्वीच त्यांनी तुमचा निकाल लावला असता. मला सुध्दा त्यांनी सांगितले की तू पुन्हा प्रार्थना केली असतीस तर तुलाही प्राणास मुकावे लागले असते.”

शेवटी व्हॅन डर पोस्टला एक युक्ती सुचली. त्याने त्या देवतांची एक चिठ्ठी लिहून क्षमा याचना करण्याचे ठरविले. त्या वाटाड्यालाही ती कल्पना पसंत पडली. त्याने पुन्हा त्या देवतांशी संपर्क साधून त्यांचा सल्ला घेतला, तेव्हा त्यांनीही संमती दर्शविली. मग एका कागदावर त्या देवतांची क्षमा याचना करणारी वाक्ये लिहून तो कागद एका बाटलीत घालून ती बाटली तेथील जमिनीत पुरली आणि त्या क्षणापासून सर्व संकटे नाहीशी झाली व शोधमोहीम यशस्वी झाली.<sup>२१६</sup> पश्चात्तापदाध व प्रायश्चित्त घेणाऱ्या त्यांच्या सामूहिक मनानेच-त्या मनाच्या माध्यमातून त्या नैतिक विश्वशक्तीनेच हे संकट निवारण्याचे काम-दुसरा ‘चमत्कार’-केला, हे उघड आहे. देवतांच्या रुपाने संकटे आणणारे मनच व ते त्यांच्याच रुपाने नाहीसे करणारेही मनच. अशारीतीने ‘मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः।’ चांगल्या प्रथा कशा निर्माण कराव्यात, किंबहुना देवताही चांगल्या कशा निर्माण कराव्यात, हे अशा घटना दाखवून देतात. ज्या समाजात देवतांचे कसलेही ‘भंड’ नाही (‘देव झाले उदंड। देवांचे मांडले भंड।’ रामदास स्वामी. दा.बो.११.२.२०), व म्हणून त्या देवतांविषयी कसल्या प्रथाही नाहीत, त्या समाजात अशाप्रकारची संकटे निर्माण होण्याचा प्रश्नच/प्रसंगच उद्भवत नाही हे खरे आहे. देवतांचे असले प्रकार-‘भंड’- व ‘चमत्कार’ ही आफ्रिकेत व आशियातच विशेषतः भारतातच जास्त आढळतात हेही खरे आहे. तथापि युरोप-अमेरिका हे सुधारलेले व विज्ञानाचा व बुद्धिवादाचा टेंभा मिरविणारे देश ‘देवदेवता’च्यापासून मुक्त आहेत, असे समजण्याचे कारण

नाही ! त्यांनीही नव्या 'देवता' व त्यांच्या 'प्रथा' व 'संकटे' वा 'चमत्कार' निर्माण केलेले आढळून येतात ! अर्थात त्यांच्या यांत्रिक संस्कृतीच्या देवता व 'चमत्कार' ही (संकटेही) यांत्रिकच आहेत. पाश्चात्य जगाच्या या नव्या 'देवता' ना व त्यांच्या या नव्या 'चमत्कारा' ना पाश्चात्य जगाच्या नव्या 'पुराणकथा' म्हणता येईल ! आपल्या कडील पुराणांना व त्यातील देवदेवतांना हसणाऱ्या आमच्या 'डोळस' बुद्धिवाद्यांच्या डोळ्यात या पाश्चात्य पुराणकथांच्या सत्यतेचे वस्तुनिष्ठ पुरावे हे झणझणीत अंजन कसे ठरते हे पाहणे उद्बोधक असून ते स्वतः पाश्चात्यांनीच त्यांनाच शोभणाऱ्या वैज्ञानिक तटस्थवृत्तीने गोळा करून मांडलेले (पुरावे) असल्याने 'सोनारानेच कान टोचावे' ही म्हणणे ते सार्थ करतात. म्हणून शक्य तो ते त्यांच्याच भाषेत येथे देतो.

### पाश्चात्यांच्या आधुनिक पुराणकथा अर्थात् UFO (उडणाऱ्या बशा)

१ जुलै १९६५ रोजी मॉरीस मासे नावाचा फ्रान्समधील व्हलेन्सोल या खेड्यातील एक फ्रेंच शेतकरी पहाटे सहा वाजता शेतात ट्रॅक्टर मारण्यासाठी आला होता. तो ट्रॅक्टर सुरु करणार तोच एक विचित्र आवाज त्याच्या कानावर पडला. त्याने पाहिले की एक यंत्र आपल्या शेतात उतरले आहे. तो ट्रॅक्टरवरून खाली उतरून त्या यंत्राकडे गेला. बीस फूट अंतरावरून त्याने पाहिले की एक अंड्यासारखे दिसणारे मोटर कार इतके मोठे यंत्र आपल्या शेतात काढक्यासारख्या बारीक सहा पायावर उभे असून चार फूट उंचीची दोन यंत्रचालक माणसे त्या यंत्रासमोर त्याची तपासणी करीत आहेत. त्यांची डोकी वाजवीपेक्षा मोठी होती त्यांना तोंड नव्हते. त्या जागी फक्त ओठ नसलेली थोडी फट होती. डोके माणसासारखेच होते. डोक्यावर काही नव्हते. पोषाख एकाच कापडाचा होता. हात लहान होते. तो जवळ जाताच त्यांनी त्याला पाहिले व कसलेही आश्चर्य वा भीती न दाखवता त्यातील एकाने त्या यंत्रातून एक नळी काढली व त्या शेतकऱ्यावर रोखली. त्याबरोबर तो पक्षघात (पॅरॅलिसिस) झाल्याप्रमाणे जागच्या जागी खिळून राहिला. ते दोघे एकमेकाशी धोग्या आवाजात त्याला काही न कळणारे बोलले. पण तोंडाऐवजी घशातून त्यांचा आवाज येत होता व आपणाला त्यांची भीती वाटली नाही असे तो शेतकरी नंतर म्हणाला. त्या दोन माणसांची वृत्ती मित्रत्वाची वाटली, वैरत्वाची वाटली नाही, असेही तो म्हणाला. एका मिनिटानंतर ते दोन प्राणी त्या यंत्रात चढले व ते लगेच वर उडाले. जेटच्या वेगाने ते विरुद्ध दिशेला गेले. अंदाजे दीडशे फूट अंतरावर गेल्यानंतर ते एकदम अदृश्य झाले. जॅक व्हॅली या खभौतशास्त्रज्ञाने त्या शेतकऱ्याची नंतर मुलाखत घेतली असून त्याला या यंत्राच्या अदृश्य होण्यासंबंधी मुद्दाम खोदून प्रश्न विचारला असता तो म्हणाला की एखादी वस्तू दूर जाताना जशी हळूहळू दिसेनाशी होते, तशी ती दिसेनाशी झाली नाही, तर एका क्षणी ती दिसली व दुसऱ्याच क्षणी ती एकदम

दिसेनाशी झाली; (आणि हे अवघे दीडशे फूटावर घडले.) आपल्याला पक्षघात झाला म्हणजे नेमके काय झाले, हे सांगताना तो म्हणाला की आपली हालचाल करण्याची शक्ती गेली. पण घासोच्छ्वास (हृदयाचे ठोके) इ. शारीरिक क्रिया बंद पडल्या नाहीत. तथापि जागच्या जागी आपण खिळून राहिलो, मदतीसाठी ओरडू सुध्दा शकलो नाही व आपण मरणार असे आपल्याला वाटले. अंदाजे वीस मिनिटांनंतर स्वतःच्या शरीराची पूर्ववत् हालचाल आपण करू शकलो व नंतर घरी गेलो असे तो म्हणाला. यानंतर सतत दिवसभर काम करणाऱ्या त्या शेतकऱ्याला कित्येक आठवडे सारखी झोपेची गुंगी येऊ लागली. चार ताससुध्दा जागे राहणे अशक्य झाले. हे प्रकरण पोलीसांनीही तपासले असून त्यांना तो शेतकरी पूर्ण विश्वासू व प्रामाणिक असल्याचे आढळून आले आहे त्याला भेटलेल्या 'यूफो' लोकांविषयी काय वाटले हे सांगताना तो म्हणतो की त्यांची आपल्याविषयीची वृत्ती वैरत्वाची नव्हती अशी आपली भानवा झाली. ते लोक चांगले असल्याची आपली खात्री झाली असेही तो म्हणतो. मात्र याचे दुसऱ्यांच्या बुद्धीला पटेल असे पुरावे तो देऊ शकत नव्हता.<sup>११०</sup>

'यूफो' या नावाने प्रसिध्द असलेल्या 'उडत्या बशां'ची पाश्चात्य देशातील अशी असंख्य उदाहरणे असून त्यांच्याविषयी कमीजास्त प्रमाणात वरीलसारखे अनुभव असंख्य पाश्चात्य लोकांना आले आहेत. असा अनुभव घेणाऱ्या लोकांचा एक नमूना म्हणून वरील उदाहरण दिले आहे. आता पुढील उदाहरण 'यूफो' च्या दुसऱ्या एका प्रकारच्या अनुभवाचे असून त्या प्रकरणाची संपूर्ण तपासणी केलेली असल्यामुळे 'यूफो' वाङ्मयात ते बरेच गाजले आहे. हे प्रकरण बेटी व बार्नी हिल प्रकरण म्हणून 'यूफो' वाङ्मयात प्रसिध्द आहे.

२० सप्टेंबर १९६१ रोजी बेटी व बार्नी हिल हे दोघे नवराबायको अमेरिकेच्या न्यू हॅंपशायर राज्यातील लिंकन शहराच्या दिशेने आपल्या कारमधून रात्री प्रवास करीत होते. त्या दोघांना समोरच्या काचेतून काही अंतरावर आकाशात एक तेजस्वी वस्तू दिसली. थोड्याच वेळात ती वस्तू काही शंभर फूट अंतरावर आली. ती वस्तू एकदम दिशा बदलत हिसके घेत उडत होती. तिचे वर जाणे, खाली येणे असे प्रकार चालू होते. यानंतर त्यांना आढळून आले की आपण लिंकन शहराच्या दक्षिणेला ३० मल अंतरावरील ॲश्लॅंड शहराजवळ एकदम आलो आहोत. पण एकदम तेथे कस आलो हे त्यांना कळले नाही. मधला दोन तासांचा काळ 'चुकला' होता-ते दोन तास कुठे व कसे गेले याचा त्यांना पत्ता नव्हता. नंतर त्यांना सतत भयानक स्वप्ने पडू लागली. त्यामुळे त्यांना मानसरोगतज्ञाचा सल्ला घ्यावा लागला. त्या मानसरोगतज्ञाने त्यांच्यावर संमोहनाचा प्रयोग केला, तेव्हा असे आढळून आले की त्या 'चुकलेल्या' दोन तासात त्या दोघांना त्या 'यूफो' च्या लोकांनी पळवून



नेले होते व त्यांची त्या 'यूफो' मध्ये नेऊन 'वैद्यकीय तपासणी' केली होती. पण त्याची त्या दोघांना मुळीच जाणीव वा आठवण नव्हती. ज्या लोकांनी त्यांना पळवून नेऊन त्यांची 'वैद्यकीय तपासणी' केली होती, त्यांचे त्या दोघांनी त्यांच्यावर स्वतंत्रपणे केलेल्या संमोहनातून जे वर्णन केले आहे, ते सारखेच असल्याचे आढळून येते. त्यामुळे हा त्यांचा अनुभव खोटा नव्हता, हे सिद्ध होते. तसेच त्यांना दिसलेली 'यूफो' ही खोटी नव्हती. कारण अमेरिकेच्या लष्करी रडावर त्याची नोंद झालेली होती. या प्रकरणाची सर्व दृष्टींनी तपासणी करण्यात आली असून त्याची सविस्तर माहिती जॉन फुलर या संशोधक लेखकाने आपल्या **Interrupted Journey** या पुस्तकात दिली आहे. (अमेरिकेच्या लष्करी रडावर या 'यूफो'ची नोंद झाल्याचा या पुस्तकात उल्लेख नाही. ती गोष्ट नंतर उघड झाली आहे.) बड्ड हॉपकिन्स हा अशाप्रकारे 'यूफो' च्या लोकांनी पळवून नेलेल्या अनेक व्यक्तींची सत्य माहिती मिळवून प्रसिद्ध करणारा संशोधक म्हणून प्रसिद्ध असून त्याचे या विषयावरील **Intruders** हे पुस्तक प्रसिद्ध आहे. अशाप्रकारे 'यूफो'च्या लोकांनी पळवून नेलेल्या पाश्चात्य लोकांची संख्या ३७ लक्ष असल्याचे एका पाहणीत आढळून आले आहे. यापैकी काहीनी आपला अनुभव स्वतःची पुस्तके लिहून प्रसिद्ध केला आहे. यापैकी व्हिटली स्ट्रायबर हा प्रमुख असून त्याचे याविषयीचे **Communion** हे पुस्तक प्रसिद्ध आहे. एड वाल्टर नांवाच्या एका कंत्राटाचा धंदा करणाऱ्याने तर आपल्या आयुष्यात ११ व्या, १७ व्या, २५ व्या, ३३ व्या आणि ४१ व्या अशा वयाच्या वर्षी एकूण आपल्याला पाच वेळा 'यूफो'च्या लोकांनी पळवून नेल्याचा संमोहनाद्वारा मिळविलेला आपला अनुभव पुराव्यनिशी मांडला असून त्याबद्दलचे आपल्या शरीरावरील खुणांचे फोटोही त्याने आपल्या **UFO Abductions in Gulf Breeze: The Amazing True Story of UFOs** या पुस्तकात प्रसिद्ध केले आहेत. या पुस्तकाचे वैशिष्ट्य म्हणजे UFO खोटे म्हणणाऱ्या व त्याची 'भांडाफोड' करणाऱ्या लोकांचीच (debunkers) 'भांडाफोड' कशी झाली याची माहिती लेखकाने त्यात फोटोसह दिली आहे. शिवाय 'यूफो'तील लोक कसे दिसतात याची चित्रेही त्यात त्याने दिली आहेत.

UFO म्हणजे Unidentified Flying Object (उडणारी अज्ञात वस्तू) पण त्याचे हे वर्णन संशयास्पद आहे. कारण ही वस्तू 'अज्ञात' असली तरी 'उडणाऱ्या' वाहनांचे नियम पाळताना दिसत नाही, आणि 'वस्तू' प्रमाणे वागतानाही आढळत नाही. उदा. प्रचंड वेगाने उडताना एकदम ९० अंशाचा कोन करून ती फिरताना अनेकदा दिसली आहे. अशारीतीने फिरणाऱ्या वेगवान वाहनाचे शकले होतील. ती 'वस्तू' प्रमाणे वागतानाही दिसत नाही. उदा. अनेकदा एकदम 'अदृश्य' होताना ती आढळते. त्यातील माणसेही अशीच अनेकदा 'अदृश्य' झाली आहेत. म्हणजे

‘यूफो’ व त्यातील माणसे ही ज्ञात विज्ञानाच्या नियमानुसार वागताना दिसत नाहीत. म्हणून ते परकीय ग्रहावरून आलेले व प्रगत ‘उडणाऱ्या’ वाहनातून पृथ्वीला भेट देणारे लोक आहेत, हा सिध्दांत सोडून द्यावा लागतो. (हा सिध्दांत सोडून देण्याची इतर अनेक कारणे आहेत. त्या सर्वांची यादी येथे देण्याचे कारण नाही. अनेकदा ते इंग्रजीतून बोलताना आढळतात, ही वस्तुस्थिती ते परकीय ग्रहावरून आलेले नाहीत हे सिध्द कारणारे एक व्यावहारिक कारण आहे.) ‘यूफो’ व त्यातील लोक हे स्थळकाळाचे बंधनच पाळत नाहीत, असे सामान्यतः दिसून येते. अन्यथा ते एकदम प्रकट होणे व अदृश्य होणे हा प्रकार कसा करू शकतात याचा उलगाडा होत नाही. असे असूनही ते स्थळकाळात आपल्या अस्तित्वाचे भौतिक परिणाम दाखवून देतात. उदा. ते जेथे उतरतात तेथे उतरल्याच्या खुणा जमिनीवर स्पष्ट दिसतात. तेथील पीक नष्ट झालेले, जळलेले, सपाट झालेले आढळून येते. रडारवरही त्याची नोंद होते. माणसाना पळवून नेऊन त्यांच्या शरीराची त्यांनी ‘वैद्यकीय तपासणी’ केल्याच्या खुणा त्यांच्या शरीरावर उमटलेल्या दिसतात.

पण यापेक्षाही विलक्षण रीतीने ते स्थलकालात आपला (भौतिक) परिणाम घडवून आणताना दिसतात. उदा. ते आकाशात ज्यांना दिसतात त्यांच्या कारगाडीचे इंजिन आपोआप बंद पडते एका डॉक्टरच्या पोटावर ‘यूफो’ पाहिल्यानंतर त्रिकोणाचे चिन्ह उमटले. त्याच्या ‘यूफो’ पाहणाऱ्या लहान मुलाच्याही पोटावर तसलेच चिन्ह उमटले. ते चिन्ह नंतर आपोआप नाहीस झाले, पण पुन्हा उमटले. असे अनेकदा झाले. त्या डॉक्टरची एक जखम आपोआपच बरी झाली. एका व्यक्तीचे ‘यूफो’ पाहिल्यानंतर डोळेच गेले; तो (तात्पुरता) आंधळा झाला. एकाच्या चष्म्याची प्लॅस्टिकची फ्रेम वितळली. काहीना ‘यूफो’ चे स्वप्न पडते व दुसऱ्या दिवशी ‘यूफो’ दिसते. एका पोलीसाच्या दरवाजावर टक्क असा आवाज झाला. दरवाजा उघडून पाहतो तो कोणी नाही. पण त्याच दिवशी संध्याकाळी त्याला ‘यूफो’ दिसली. त्यात दोन माणसेही दिसली, आणि तो पक्षघात होऊन एकदम (तात्पुरता) लुळा झाला ! वर उल्लेख केलेला पोटावर त्रिकोणाचे चिन्ह उमटलेला डॉक्टर एकदा अचानक अंतराळी उचलला गेला व परत जमिनीवर येणे आपल्या इच्छेबाहेर असल्याचे त्याला आढळले ! हा विचित्र प्रकार एका शेतकऱ्याने शेतातून घरी परत येत असता ‘यूफो’ पाहिल्यानंतर त्याच्या घोड्याच्या बाबतीतही घडला. घोडे आपोआप अंतराळी उचलले गेल्यामुळे त्याला त्याचा लगाम हातातून सोडावा लागला ! ज्यांना ‘यूफो’ दिसतात त्यांना ते दिसण्यापूर्वी किंवा दिसल्यानंतर त्यांच्या घरी अनेकदा भानामतीचे प्रकार घडतात, असेही आढळून आले आहे. उदा. त्यांच्या घरातील वस्तू इकडून तिकडे आपोआप जातात किंवा अदृश्य होतात. स्नानगृहातील पाण्याची चावी आपोआप सुरू होणे, घरातील विजेचे दिवे आपोआप

लागणे, बंद होणे, घड्याळे बंद पडणे, असले प्रकार घडतात. घरात रात्री भुतासारख्या आकृती फिरताना घरातील लोकांना दिसतात. दरवाजा आपोआप उघडल्याचा व बंद झाल्याचा आवाज ऐकायला येतो. पाच वेळा 'यूफो' नी पळवून नेलेल्या एड वाल्टरच्या घरी अशा भानामतीच्या प्रकाराखेरीज वळचणीखाली हाडांचा पंजा लोबंकळत असलेला अनेकदा दिसला आहे. 'यूफो' पाहिलेल्या काही जणांना अतींद्रिय शक्तीही प्राप्त झाल्याची आढळून आली आहे. एका मुलीला 'यूफो' पाहिल्यानंतर शरीर सोडल्याचा अनुभव आला. (१० व्या प्रकरणात वर्णिलेल्या मरणानुभवातील अनुभवासारखा (OBE) हा अनुभव होता.) 'यूफो' पाहिल्यानंतर झोपेची गुंगी येणे, वेळ 'चुकणे', (काही तासांचा अनुभव नसणे) असले अनुभव बऱ्याच जणांना आले आहेत.

पुढील एक विलक्षण प्रकरण अनेक 'यूफो' संशोधकांनी पूर्णपणे तपासून पूर्ण प्रमाणभूत (fully documented) म्हणून जाहीर केले आहे डॉ. फॉटिस या संशोधकाने ते आपल्या Flying Saucer Occupants या पुस्तकात विस्ताराने दिले आहे. त्याची अगदी संक्षिप्त माहिती अशी : १५ ऑक्टोबर १९५७ रोजी रात्री एक वाजता ब्राझीलचा अँटोनिओ व्हिल्लास बोअस या नावाचा एक शेतकरी आपल्या शेतात ट्रॅक्टर मारत होता. अचानक त्याला आपल्या शेतात एक 'यूफो' उतरल्याची दिसली. त्याबरोबर त्याच्या ट्रॅक्टरचे एंजिन बंद पडले. 'यूफो' तील काही लोक खाली उतरून त्याच्याकडे आले. त्याबरोबर तो ट्रॅक्टरमधून खाली उतरला व पळू लागला. पण त्यानी त्याला पकडले व त्याला 'यूफो' त नेले. एका खोलीत नेऊन त्याचे सगळे कपडे काढून घेऊन त्याला त्यांनी पूर्ण नम्र केले व ते त्याचे कपडे घेऊन दुसऱ्या खोलीत गेले. काही वेळाने एक स्त्री त्याच्या खोलीत आली. ती संपूर्ण नम्र होती. तिने आपल्याशी संभोग करण्यास त्याला भाग पाडले. संभोगानंतर एक माणूस त्याच्या खोलीत आला. त्या स्त्रीने आपल्या हाताचे बोट प्रथम आपल्या पोटाकडे व नंतर आकाशाकडे केले व ती हसली व त्या माणसाबरोबर निघून गेली. नंतर त्या लोकांनी त्याचे कपडे परत केले व त्याला 'यूफो' फिरून दाखवली. काही वेळाने त्याला शिडीकडे बोट करून उतरण्यास सांगितले. तो उतरल्यानंतर काही सेकंदातच ती 'यूफो' उडून नाहीशी झाली. आपल्या 'यूफो' च्या या अनुभवाची खूण व पुरावा म्हणून त्याने 'यूफो' तील एक घड्याळासारखी दिसणारी वस्तू उचलून आणण्याचा प्रयत्न केला. पण एका माणसाने त्याला ढकलून तो यशस्वी होऊ दिला नाही, असे तो नंतर म्हणाला. त्याची (अँटोनिओची) डॉक्टर फॉटिसने नंतर शारीरिक तपासणी करून आपले याविषयीचे वैद्यकीय मतही दिले आहे. अँटोनिओने त्या स्त्रीचे जे वर्णन केले आहे त्यावरून असे दिसते की वाजवीपेक्षा जास्त पातळ ओठोखेरीज ती गोऱ्या अमेरिकन स्त्रीसारखीच होती. मात्र तिचे डोके आपल्या

खाद्याला पोचेल इतकीच तिची उंची होती असे तो म्हणतो. संभोग करताना मात्र एखाद्या प्राण्यासारखा ती आवाज काढीत होती असे तो म्हणतो.

### ‘यूफो’ कथा म्हणजे नव्या वाटलीतील जुनीच दारु

२४ जून १९४७ रोजी मार्शल केनेथ अर्नोल्ड या विमान चालकाला प्रथम आपल्या विमानातून आकाशात उडणाऱ्या बशासारख्या काही वस्तू दिसल्या आणि तेव्हापासून जगातील सर्वभागात इतरांना त्या बशा दिसू लागल्या असे मानण्यात येते. पण जेव्हा व्हॅली या खभौतशास्त्रज्ञाने आपल्या १९७० साली लिहिलेल्या **Passport to Magonia** या पुस्तकात दाखवून दिले आहे की सर्व समाजातील व संस्कृतीतील लोकांच्या पुराण-कथातून (myths) आणि लोककथातून (folklore) अशाप्रकारचा (‘यूफो’ सारख्या) परकीय (alien) लोकांशी माणसांचा संबंध आला असल्याच्या कथा आढळून येत असून त्या त्या समाजाला व संस्कृतीला अनुसरून त्याचे स्वरूप बदलत गेले असल्याचे दिसून येते. या पुराणकथा आहेत याचा अर्थ त्या काल्पनिक आहेत असा नसून त्या माणसांच्या इच्छाआकांक्षा वा स्वप्ने प्रतिबिंबित करणाऱ्या खऱ्या कथा आहेत असे व्हॅलीचे म्हणणे आहे. सी. जी. युंग याने **Flying Saucers** या पुस्तकात १९५९ सालीच म्हटले आहे की या उडत्या बशा म्हणजे मानवाच्या सामूहिक अबोध मनातून (collective unconscious) निर्माण झालेल्या वस्तू असून आधुनिक (यंत्रयुगाला अनुरूप अशा) त्या नव्या ‘निर्माण होऊ घातलेल्या पुराणकथा’ (myths in the making) आहेत. जेव्हा व्हॅली म्हणतो की या पुराणकथा नव्या असल्या तरी त्या मानवाच्या स्वप्नांना मूर्त रूप देणाऱ्या जुन्याच पण खऱ्या कथा असून अमेरिकेच्या मूळ इंडियन रहिवाशांच्या प्राथमिक समाजापासून तो तहत आधुनिक मानवाच्या विज्ञानयुगातील यांत्रिक समाजापर्यंत त्यांचे बाह्य स्वरूप कालानुसार बदलत गेले असले तरी मूळ अंतरंग अबाधितच आहे. उदा. केल्टिक (आयर्लंड, स्कॉटलंड) देशातील ‘पन्यांचे’ (ज्यांना Fairy, Good, People, Gentry असेही म्हणतात) माणसांशी असेच पूर्वी संबंध आले होते. ते लोक माणसांना असेच पळवून नेत असत. त्यांच्याशी अनेकदा लैंगिक संबंधही त्यांनी केलेला आढळून येतो. **The Fairy Faith in the Celtic Countries** या प्रसिद्ध ग्रंथात इव्हॅन्स-वेंट्रुज या संशोधक लेखकाने केल्टिक देशातील अनेक लोकांच्या मुलाखती घेऊन ‘पन्यां’ चे अशाप्रकारे लैंगिक (व अन्य) संबंध माणसांशी प्रत्यक्षात कसे घडत होते यावर वस्तुनिष्ठ प्रकाश टाकला आहे. धार्मिक क्षेत्रातील घटनाही या गोष्टीला पुष्टी देतात. उदा. मध्ययुगीन युरोपमध्ये अनेक पुरुषांना ‘देवदूता’ शी (angels) व चेटकिर्णीचा ‘राक्षसा’ शी (demons) लैंगिक संबंध घडत होता याबद्दलचे पुरावे कॅथॉलिक चर्चच्या कागदपत्रातून मिळतात.

अनाटोल फ्रान्स याने आपल्या **Revolt of the Gods** या कादंबरीत अशा संबंधाविषयीची माहिती देणाऱ्या ग्रंथांची एक मोठी यादीच दिली आहे. त्यामध्ये सेंट ऑगस्टीनच्या **The City of God** या पुस्तकाचाही समावेश होतो. सेंट ऑगस्टीनने चेटकिर्णीचा 'राक्षसा' शी लैंगिक संबंध होत होता हे नाकारणे उध्दटपणाचे होईल असे स्पष्ट म्हटले आहे. [अशारितीने 'पन्या' शी, 'देवदूता' शी व 'राक्षसां' शी माणसाचा लैंगिक संबंध घडत होता हे 'पुराव्या' निशी दाखवून देणारे पाश्चात्य लेखकांचे वरील ग्रंथ संदर्भ पाहता आपल्याकडील पुराणकथातील (उदा. महाभारतातील) विश्वामित्राचा मेनकेशी (अप्सरेशी) भीमाचा हिडिंबेशी (राक्षसाशी) लैंगिक संबंध झाल्याचा कथा खोऱ्या कोण म्हणेल ?] आता माणसाशी लैंगिक (व अन्य) संबंध ठेवणाऱ्या या 'पन्या' (fairies), 'देवदूत' (angels) व 'राक्षस' (demons) हे सर्व नेमके कोण होते, हा महत्त्वाचा प्रश्न असून त्याचे समाधानकारक उत्तर मिळाले तर असाच माणसाशी आधुनिक यंत्रयुगाच्या काळात 'यूफो' मधून येऊन लैंगिक (व अन्य) संबंध ठेवणारे 'यूफो लोक' कोण आहेत याचे उत्तर आपोआप मिळते. इव्हॅन्स वेंदझ याने केल्टिक देशातील लोकाकडून मिळविलेल्या माहितीवरून असे दिसून येते की 'पन्या' ('यूफो' मधील लोकाप्रमाणे) माणसासारखी निरनिराळी रूपे घेऊ शकतात, इच्छेनुसार लहानमोठे होऊ शकतात, केव्हाही गुप्त व प्रकट होऊ शकतात. थोडक्यात या 'पन्या' म्हणजे दुसरे तिसरे कोणी नसून मॅडम ब्लॅव्हेट्स्की व लेडबीटर यांनी ज्यांना निसर्गदेवता (nature spirits किंवा elementals) म्हटले आहे, तेच आहेत. म्हणजे पृथ्वी, आपू, तेज व वायू या निसर्गदेवता वा शक्तीच आहेत. पृथ्वी संपत्तीचा खजीना असल्यामुळे आपण पृथ्वीदेवतेला कुबेर म्हणतो. पाश्चात्यांच्या पुराणकथात त्यांना gnome म्हणतात. आपण ज्यांना जलदेवता (सप्तमातृका किंवा सातीआसरा) म्हणतो त्यांना ते undine म्हणतात. अग्नीदेवतेला salamander म्हणतात; वायूदेवतेला sylph म्हणतात.<sup>११८</sup> यापूर्वी सांगितल्याप्रमाणे या देवतांना मंत्राने, प्रार्थनेने अगर भक्तीयोगाने वश करून घेता येते. मग त्या आपल्या आज्ञेत राहू शकतात. त्या आपल्या इच्छा पूर्ण करू शकतात. उदा. अग्नी भाजू वा जाळू शकत नाही, इ. पण या देवता माणसाच्या विरोधात गेल्या तर घरेही जाळू शकतात. भानामतीमध्ये त्या हेच करतात. 'यूफो' हे याच निसर्गदेवतांचे खेळ असल्याचा एक बळकट पुरावा म्हणजे 'यूफो' पाहिलेल्या लोकांच्या घरी अनेकदा भानामतीचे प्रकार लगेच सुरू होताना दिसतात. कारमधून प्रवास करणाऱ्यांना 'यूफो' दिसली तर अनेकदा त्यांच्या कारचे इंजिन आपोआप बंद पडते. 'यूफो' पाहिलेल्या एका डॉक्टराला व एका शेतकऱ्यांच्या घोड्याला आपोआप अंतराळी उचलले गेल्याचा (levitation) अनुभव आला. ही सर्व भानामतीचीच लक्षणे आहेत. निसर्गातूनच अशा खोड्या करतात. भानामतीत

अनेकदा अंगावर फुल्या उमटतात. उपर्युक्त डॉक्टरांच्या व त्यांच्या मुलांच्या पोटावर त्रिकोणाचे चिन्ह उमटले आणि तेही 'यूफो' पाहिल्यानंतरच, (नंतर ते आपोआप नाहीसे झाले.) अनेकदा भानामतीत भूकंप झाल्याप्रमाणे दाणदाण आवाज येतो. (पाहा : रेठरे बु ॥ ची भानामती. पृ. ३४) (डी. डी. होम या माध्यमाच्या उपस्थितीतही भूकंप होत असे. पाहा : विज्ञान आणि बुद्धिवाद, पृ. २८) 'यूफो' दिसल्यानंतरही भूकंपाचा अनुभव आला आहे. (एड वाल्टरने याला 'आकाशकंप' sky quake-म्हटले आहे.)<sup>११</sup> निसर्गात्म्यांचा एक आवडता खेळ म्हणजे ओसाड प्रदेशात ते माणसांना, विशेषतः प्रवाशांना राजवाडे, किल्ले, घरे इ. दाखवतात. नंतर ते सर्व दृश्य एकदम अदृश्य होते. 'यूफो' हाही त्यातलाच प्रकार आहे. फरक इतकाच की हे अंतराळ युग (space age) असल्यामुळे ओसाड प्रदेशांनील राजवाड्यांच्या जागी ते आकाशात (परकीय ग्रहावरून आल्याचा भ्रम/भास निर्माण करणारे) 'यूफो' हे आकाशयान दाखवतात. याविषयीची काही उदाहरणे मागे दिली आहेत. उदा. अॅलन पतीपत्नींना सपाट प्रदेशात उंच टेकडी व त्यावर लाकडी बैठक दिसली. पण नंतर ('यूफो' प्रमाणेच) ती अदृश्य झाली. कृष्णानंदांना शिवालय दिसले. जवळच एक ओढा दिसला. पण नंतर ते सर्व अदृश्य झाले. (पृ. ३७५, ३७६) यातील बुचकळ्यात टाकणारा भाग म्हणजे या गोष्टी प्रथम दृश्य होतात व नंतर एकदम अदृश्य होता, यावरून कोणालाही हा दृष्टिभ्रम आहे, हे दृश्य खोटे आहे असे वाटण्याचा संभव आहे. पण ही दृश्ये भ्रामक नसतात, तर खरी असतात. 'यूफो' प्रमाणे त्या स्थलकालात भौतिक रुपाने अस्तित्वात असणाऱ्या व परिणाम करणाऱ्या गोष्टी असतात. उदा. अॅलन पतीपत्नी त्या टेकडीवर चढून त्यावरील लाकडी बैठकीवर प्रत्यक्ष बसले. कृष्णानंदांनी त्या ओढ्यात प्रत्यक्ष अंघोळ केली. त्या शिवालयात बसून जप ध्यान केले. जसे अँटोनियोने त्या 'यूफो'त चढून त्या स्त्रीशी संभोग केला. हाच या सर्व प्रकरणातील सर्वात मोठा 'चमत्कार' असून पाश्चात्य शास्त्रज्ञांना 'यूफो'चे कोडे उकलण्यातील हा सर्वात मोठा अडथळा ठरला आहे. 'यूफो' ही परकीय ग्रहावरून आलेली अवकाशयाने आहेत असे समजून त्यांच्या वर्तनाची रुढ वैज्ञानिक दृष्टिकोनातून उपपत्ती देण्याचा शास्त्रज्ञ नेहमी प्रयत्न करीत असतात. पण 'यूफो' ही परकीय ग्रहावरून आलेली अवकाशयाने नसल्यामुळे हा त्यांचा प्रयत्न निष्फळ ठरतो. त्यामुळे भानामतीप्रमाणेच 'यूफो' ही एक तर खोटी म्हणणे किंवा तिच्याकडे पूर्ण दुर्लक्ष करणे हे दोनच पर्याय या रुढ शास्त्रज्ञांपुढे उरतात. पण हे भानामतीच्या बाबतीत शक्य झाले म्हणून 'यूफो' च्या बाबतीत शक्य होत नाही. कारण 'यूफो' ही जागतिक पातळीवरील सार्वजनिक घटना असून तिच्याकडे अमेरिकन सरकारलाही दुर्लक्ष करता आलेले नाही. उदा. अमेरिकेच्या वायूसेनेने Project Blue Book नावाची 'यूफो' च्या संशोधनासाठी एक खास योजना आखून

राबवलेली आहे, पण शेवटी ती गुंडाळली गेली. ('यूफो' वरील 'काँडॉन रिपोर्ट' नष्ट करण्यात आला.) कारण 'यूफो'च्या वागणुकीची उपपत्ती रुढ विज्ञानाच्या चौकटीत राहून वायूसेनेला देणे शक्य न झाल्यामुळे व तिला आपल्या हवाईदलाच्या सामर्थ्याच्या पलीकडील ही अवकाशयाने आहेत, हे सत्य मान्य करणे नामुष्कीचे वाटल्यामुळे तिने व अमेरिकन शासनाने 'यूफो'चे हे सर्व प्रकरणच दडपून टाकले. त्यावर पांघरून घातले. (खुद्द आयसेनहावर या अमेरिकेच्या राष्ट्राध्यक्षांना १९५४ साली एका विमानतळाजवळ 'यूफो'शी प्रत्यक्ष संबध आला होता, ही वस्तुस्थितीही लपवून ठेवण्यात आली.)<sup>२४०</sup> पण अमेरिकन सरकारला हे प्रकरण दडपता आले म्हणून अमेरिकन शास्त्रज्ञांना ते दडपता येत नव्हते. कारण 'यूफो' ही या अंतराळ युगातील अवकाशयानासारखी जागतिक पातळीवरील सार्वजनिक घटना असल्यामुळे त्याची वैज्ञानिक दखल घेणे त्यांना भागच होते. पण ही दखल घेताना भानामतीसारख्या इतरही असल्याच 'चमत्कारां' चीही दखल त्यांना घेणे भाग पडले. कारण त्या सर्व 'चमत्कारां' मागील कार्यकारणभाव सारखाच आहे अतींद्रिय वैज्ञानिकांनी अशा 'चमत्कारां'ची उपपत्ती आधुनिक भौतिक शास्त्रातील शोधांच्या आधारे लावलेलीही आहे. त्याचाच अवलंब 'यूफो'च्या संशोधकांनाही करावा लागला आहे. उदा. अमेरिकेच्या वायूसेनेच्या Project Blue Book योजनेवर सल्लागार म्हणून नेमलेल्या डॉ. अँलन हायनेक या खगोलशास्त्रज्ञाने 'यूफो'ची उपपत्ती देण्यासाठी, म्हणजे 'यूफो' एकाच वेळी (भानामतीप्रमाणे) भौतिक व मानसिक अशा दोन्ही पातळीवर कशी कार्य करते याची उपपत्ती देण्यासाठी, भौतिक शास्त्रातील प्रकाशाच्या क्वांटम सिद्धांताचा आधार घेतला आहे. क्वांटम सिद्धांतानुसार प्रकाशही (भानामती व 'यूफो'प्रमाणे) असाच वागताना दिसतो. उदा. प्रकाश एकदा कण (particle) बनून स्थलकालात भौतिक स्वरूपात आपले अस्तित्व प्रकट करतो व त्याचवेळी तरंग (wave) बनून अदृश्य बनतो व आपले स्थलकालाच्या पलीकडील अस्तित्व प्रकट करतो. अशारीतीने प्रकाशाचे हे परस्परविरोधी वर्तन क्वांटम सिद्धांताच्या आधारे स्वीकारणाऱ्या शास्त्रज्ञांना 'यूफो'चेही ( व भानामतीचेही) असलेच परस्परविरोधी वर्तन (म्हणजे अदृश्यातून स्थलकाळात दृश्य बनणे व दृश्यातून परत अदृश्य-स्थलकालातीत-बनणे) स्वीकारण्यात त्या शास्त्रज्ञांना अडचण का वाटावी ? 'यूफो'चे एकाच वेळी भौतिक (दृश्य) व मानसिक (अदृश्य) पातळीवरील हे परस्परविरोधी वागणे (UFO-as-objects and UFO-as-psychic events) स्वीकारण्यास त्यांनी खळखळ का करावी ? असा प्रश्न डॉ. हायनेक याने विचारला आहे.<sup>२४१</sup> अशारीतीने 'यूफो' व भानामती (वास्तविक 'यूफो' ही जागतिक पातळीवरील भानामतीच आहे) हे दोन्ही खरे आहेत हे मान्य करून रुढ भौतिक विज्ञानात (क्वांटम सिद्धांताच्या आधारे) भौतशास्त्रज्ञांना ते स्वीकारावे लागले आहेत.

तात्पर्य, कृष्णानंदांनी अस्तित्वात नसलेल्या पण खऱ्या (म्हणजे अदृश्यातून दृश्य झालेल्या) ओढ्यात अंघोळ केली, तसल्याच शिवालयात बसून जप-ध्यान केले. अँटोनियो यानेही अस्तित्वात नसलेल्या पण खऱ्या (म्हणजे अदृश्यातून दृश्य झालेल्या) 'यूफो' तील स्त्रीशी संभोग केला; हे सर्व 'चमत्कार' असले, म्हणजे या सर्व गोष्टी असंभाव्य वाटत असल्या, तरी त्या खऱ्या आहेत, म्हणजे रुढ भौतिक शास्त्राच्या स्थलकालाच्या कल्पनेच्या चौकटीत ते 'चमत्कार' बसत नसले तरी अर्तींद्रिय विज्ञानाच्या व सैध्दांतिक भौतिक शास्त्राच्या (theoretical physics) (म्हणजे क्वांटम सिध्दांताच्या) चौकटीत ते बसतात, हे डॉ. हायनेक सारख्या क्षेत्रीय संशोधकांना (field workers) मान्य करावे लागले आहे.

### पुराणे ही माणसाची भावनिक गरज

पाश्चात्यांच्या पुराणकथातील 'पन्था', 'देवदूत' व 'राक्षस' यांचा जो मानवाशी लैंगिक व अन्य संबंध घडत होता तो व आपल्या पुराणकथामध्येही असाच (विश्वामित्र-मेनका, भीम-हिडिंबा, कुंती-सूर्य, वायू इ.) संबंध होत असल्याची जी वर्णने आढळतात ती बरील उपपत्तीच्या प्रकाशात आता खोटी आहेत असे कोणालाही म्हणता येणार नाही, हे उघड आहे. कारण निसर्गदेवता भौतिक जगात वाटेल ती रूपे घेऊन प्रकट होऊ शकत असल्यामुळे हे 'चमत्कार' शक्य (व सत्य) असल्याचे मान्य करावे लागते. या निसर्गदेवतांना अर्तींद्रिय दृष्टीने प्रत्यक्ष पाहू शकणाऱ्या लेडबीटर यांचे याविषयावरील पुढील विवेचन या दृष्टीने अत्यंत उद्बोधक असल्याने ते येथे संपूर्ण देतो. (ही अर्तींद्रिय दृष्टी इतरही अनेकांना प्राप्त झालेली असून त्यांचे याविषयावर भूतैक्य आहे, हे लक्षात ठेवावे.) लेडबीटर म्हणतात,

"In old Greek stories we read frequently of encounters between human beings and these minor powers of nature and these latter are sometimes represented as materialising temporary physical bodies, always in human form and assuming parental responsibilities. Modern scepticism scoffs at such legends, but there are many facts in Nature which lie outside our very limited experience. There were plenty of instances in classical days and it is unwise to decide that, because a thing does not happen in crassly materialistic civilization, it can never have occurred under more natural and picturesque conditions. It is unsafe as well as presumptuous to pronounce the bombastic formula : 'What I know not is not knowledge.'<sup>१४२</sup> याचा थोडक्यात भावार्थ असा की ग्रीक [व हिंदू] पुराणात पूर्वीच्या काळी निसर्गशक्ती अनेकदा मानवी रूपे घेऊन प्रत्यक्ष माणसाशी (लैंगिक इ.) संबंध ठेवत असत. या पुराणकथा (काल्पनिक) समजून



हसण्यावारी लावण्याची आधुनिक भौतिकवादी लोकांची जी प्रवृत्ती दिसून येते ती योग्य नाही. कारण भौतिकवादात न बसणाऱ्या घटना पूर्वी योग्य व अनुकूल वातावरण उपलब्ध होत असल्यामुळे घडत होत्या. सर्वच अनुभव काही मर्यादित जीवन जगणारे आपण घेऊ शकत नाही. म्हणून 'मला ज्याचे ज्ञान होत नाही, (अनुभव घेता येत नाही) त्याला ज्ञान म्हणतो येणार नाही. (ते कोणालाही अनुभवता येणार नाही)' असे म्हणण्याचे धाडस व मानभावीपणा कोणी करू नये.

असे म्हणण्याचे धाडस व मानभावीपणा 'यूफो'चा अनुभव घेणारा आधुनिक पाश्चात्य मनुष्य तरी निश्चितच करणार नाही ! कारण पुराणात वर्णन केलेल्या अनुभवापेक्षाही काही बाबतीत विलक्षण अनुभव तो या 'यूफो'च्या द्वारा घेत आहे. या 'यूफो' म्हणजे 'जन्माला येणाऱ्या नव्या पुराणकथा' (myths in the making) आहेत असे 'यूफो' चे संशोधक शास्त्रज्ञ का म्हणतात हे आता वाचकांच्या लक्षात येईल. प्राचीन काळातील पुराणकथा खोट्या म्हणून हसण्यावारी नेणाऱ्या आधुनिक भौतिकवादी मानवाला जणू धडा शिकविण्यासाठीच निसर्गातले 'यूफो'तून या नव्या (यंत्रयुगीन) 'चमत्कार' युक्त पुराणकथा निर्माण करीत असाव्यात. जागतिक पातळीवर गणपती दूध पिण्याचा जो 'चमत्कार' २० सप्टेंबर १९९५ रोजी घडला तोही याच सदरात मोडत असून तोही देवदेवता खोट्या म्हणणाऱ्या (जगभरातील) भारतीयांना धडा शिकविण्यासाठीच निसर्गात्म्यांनी घडवलेला चमत्कार असला पाहिजे किंवा मानला पाहिजे, हे उघड आहे.

खरी गोष्ट अशी आहे की जुन्या पुराणकथा खोट्या म्हणणाऱ्या भौतिकवादी माणसाला त्याच्या अवकाशयुगातील विज्ञानवृत्तीला अनुरूप अशा ('यूफो'सारख्या) नव्या पुराणकथांची मानसिकदृष्ट्याच गरज आहे. या आधुनिक वैज्ञानिक मानवाच्या मा मानसिक-भावनिक गरजेची पूर्तता करण्यासाठीच या 'यूफो' प्रकट होत आहेत. 'यूफो' ही जागतिक पातळीवरील भानामतीच असल्यामुळे (भानामती म्हणजे अर्थात् निसर्गात्म्यांचा खेळ) आणि भानामती मानवी मनातूनच निर्माण होत असल्यामुळे (ती मानवी मनातून कशी निर्माण होते, हे आपण यापूर्वी पाहिलेच आहे) मानवी मनाची/भावनेची ही गरज भागविण्यासाठी 'यूफो'च्या रूपाने निसर्गदेवता या नव्या पुराणकथा निर्माण करीत आहेत, हे स्पष्ट आहे, कारण पुराणाशिवाय माणूस जगूच शकत नाही ही वस्तुस्थिती आहे. पुराणकथांचा अधिकारी संशोधक जोसेफ कॅम्बेल याने *Masks of God* या ग्रंथातून दाखवून दिल्याप्रमाणे मानवाला भाषा व कला यांच्याइतकीच पुराणाचीही गरज आहे. म्हणजे मनुष्य भाषेशिवाय व कलेशिवाय जसे जगू शकत नाही, तसे पुराणाशिवायही तो जगू शकत नाही. म्हणून प्रज्ञाचक्षू संत श्री गुलाबराव महाराज यांनी म्हटले आहे की " एकवेळ ईश्वर नाही म्हटले असता चालेल. पण पुराणे नाही म्हटल्याने

जगच बुडेल.”<sup>२४३</sup> ‘पुराणे नाही म्हटल्याने जगच बुडेल’ असे गुलाबराव महाराजांनी म्हणण्याचा भावार्थ असा की माणूस प्राधान्याने भावनिक जगात जगत असल्यामुळे, म्हणजे आपले भावनाविश्व दर्शविणाऱ्या पुराणाशिवाय तो जगूच शकत नसल्यामुळे, पुराणे नाकारणे म्हणजे त्याचे भावनिक जगच त्याला नाकारणे-त्याच्यापासून हिरावून घेणे-होय, म्हणजेच त्याला जगणेच अशक्य करणे होय. त्याच्यापासून पुराणे हिरावून घेऊन कोणीही त्याला जगणे अशक्य करू शकत नसल्याचे दाखवून देणारी आधुनिक काळातील पुराणे म्हणजे ‘यूफो’ होत ! यूफो ह्या (प्राश्चात्य) मानवाच्या ‘सामूहिक अबोध मना’तून (collective unconscious) निर्माण झाल्या असल्याचे सी. जी. युंग या प्रसिध्द मानसशास्त्रज्ञाने का म्हटले आहे, हे आता वाचकांच्या लक्षात येईल.

अशारीतीने ‘यूफो’ ह्या (प्राश्चात्य) माणसाची भावनिक गरज भागवणाऱ्या आधुनिक पुराणकथा असल्या तरी त्या पूर्वीच्या पुराणकथाप्रमाणेच एकाच वेळी मानसिकही (भावनिकही) आहेत व भौतिकही आहेत; म्हणजे (भानामतीप्रमाणे) स्थलकालातीत राहून स्थलकालात प्रकट होणाऱ्या-स्थलकालात प्रत्यक्ष परिणाम घडवून आणणाऱ्या-त्या खऱ्या गोष्टी आहेत, काल्पनिक कथा नाहीत, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. (उदा. कृष्णानंदांनी अंधोळ केलेला ओढा व ध्यान केलेले शिवमंदिर खरे होते, अँलन पतीपत्नी ज्यावर चढून बसले ती टेकडी व ती लाकडी बैठक खरी होती, अँटोनियो ‘यूफो’तील ज्या स्त्रीशी संभोग केला ती स्त्री खरी होती व ती ‘यूफो’ ही खरी होती, इ.) आणि हाच आधुनिक (स्थलकालाच्या चौकटीत राहून) ‘यूफो’चा विचार करणाऱ्या व शोध घेणाऱ्या रुढ वैज्ञानिकांना बुचकळ्यात टाकणारे सर्वात मोठे कोडे-सर्वात मोठा ‘चमत्कार’ - ठरले आहे. ‘यूफो’चे (व भानामतीचेही) कोडे सोडविण्यातील तोच सर्वात मोठा अडथळा ठरला आहे. पण तो अडथळा रुढ विज्ञानाच्या (म्हणजे न्युटोनियन विज्ञानाच्या) चौकटीत राहून विचार करणाऱ्यांनाच अडथळा ठरला आहे. पण रुढ विज्ञानाची ही न्युटोनियम चौकटच आईन्स्टाइनच्या सापेक्षता सिध्दांताने व मॅक्स प्लँकच्या क्वांटम सिध्दांताने केव्हाच मोडून टाकली आहे. मानवी जीवनातील सर्वच घटनांचा विचार आता या नव्या भौतशास्त्रातील सिध्दांतांच्या आधारे करावा लागणार आहे याची जाणीव फारच थोड्या शास्त्रज्ञांना झालेली असून ‘यूफो’च्या घटनांनी त्यांना तसा विचार करण्याची आता सार्वत्रिक निकडच निर्माण केली आहे. आणि ही निकड खुद्द अमेरिकन सरकारच्या ‘यूफो’च्या Project Blue Book प्रकल्पावर सल्लागार म्हणून काम करणाऱ्या डॉ. अँलन हायनेक या शास्त्रज्ञाच्या बाबतीत कशी निर्माण झाली हे आपण यापूर्वी त्याने प्रकाशाच्या क्वांटम सिध्दांताच्या आधारे ‘यूफो’चे कोडे सोडविण्याचा जो प्रयत्न केला आहे, तो सांगताना पाहिले

आहे. [उदा. डॉ. हायनेकने 'यूफो' ही एकाच वेळी भौतिक वस्तू (UFO as object) आणि मानसिक-यूफो-घटना (UFO-as-psychic event) असल्याचे म्हटले असून प्रकाशाच्या एकाच वेळी कण (particle) व तरंग (wave) ह्या परस्पराविरोधी गुणधर्मांची उपपत्ती देणाऱ्या क्वांटम सिद्धांताचा त्यासाठी त्याने आधारे घेतला आहे.] जॅक व्हॅल्ली या 'यूफो' च्या संशोधक शास्त्रज्ञानेही म्हटले आहे की "UFOs are constructed both as physical objects and as psychic devices."<sup>२२५</sup> (ठळक शब्द मुळातले.) म्हणजे 'यूफो' ही एकाच वेळी भौतिक वाहने व मानसिक (भावनिक) साधने आहेत. म्हणजेच माणसाची भावनिक गरज भागविण्यासाठी (मनातून) निर्माण झालेली ती (खरी) भौतिक वाहने, (साधने) आहेत. अशा रीतीने 'यूफो' व भानामती यांच्या पाठीमागची यंत्रणा एकच आहे ही गोष्ट ह्या रुढ शास्त्रज्ञांना येन केन प्रकाराने मान्य करावे लागले आहे. कारण भानामतीही ('यूफो' प्रमाणेच) अदृश्यात राहून मानवाची भावनिक (मानसिक) गरज भागविण्यासाठी भौतिक जगात दृश्य परिणाम घडवून आणताना दिसते. [भौतिक जगात कालानुसार, प्रसंगानुसार व गरजेनुसार निरनिराळ्या रूपाने तीही प्रकट होताना- (चांगले-वाईट) परिणाम करताना-दिसते.] यूफो पाहिलेल्या लोकांच्या घरी भानामतीचे परिणाम अनेकदा घडतात, त्यांच्यावरही भानामतीसारखेच (चांगले वाईट) परिणाम घडून येतात, हा योगायोग नाही. पण या रुढ शास्त्रज्ञांना भानामतीचा अभ्यास नसल्यामुळे व ब्रह्मविज्ञानाचे (थिऑसॉफीचे) ही ज्ञान त्यांना नसल्यामुळे अशा घटनांच्या पाठीमागच्या शक्तीच्या स्वरूपाविषयी केवळ तर्क करण्यापलीकडे ते काही करू शकत नाहीत. तथापि काही शास्त्रज्ञ (विशेषतः 'यूफो' चा खोलवर अभ्यास व क्षेत्रीय संशोधन करणारे शास्त्रज्ञ) शास्त्रीय सत्याच्या जवळ अप्रत्यक्षपणे पोहोचलेले दिसतात. उदा. जॅक व्हॅल्ली याने आपल्या 'यूफो' वरील १९८८ सालच्या ग्रंथाला Dimensions (परिमाणे) असा मथळा दिला असून त्यामध्ये त्याने (अनेक शास्त्रीय कारणे देऊन) स्पष्ट म्हटले आहे की 'यूफो' ही परकीय ग्रहावरून आलेली वाहने नसून त्या आपल्या स्थलकालातील भौतिक जगात त्या जगाच्या बाहेरून हस्तक्षेप करणाऱ्या आंतरपरिमाणीय (interdimensional)-म्हणजे इतर परिमाणातून आलेल्या-वस्तू आहेत.<sup>२२६</sup> या वस्तू नेमक्या काय आहेत किंवा त्यातील लोक कोण आहेत हे तो सांगत नाही. [तथापि ते जाणीवयुक्त (intelligences) आहेत असे तो म्हणतो.] कारण अतींद्रिय (आध्यात्मिक) पातळीवरून पुराणकथा निर्माण करणाऱ्या 'यूफो' चा शोध भौतिक पातळीवरून रुढ पद्धतीने घेताच येणार नाही, हे सत्य त्याने अगोदरच मान्य केले आहे.<sup>२२७</sup> तथापि आपण त्रिमितीच्या जगात राहतो असे समजत असलो तरी आपल्या भोवती इतर अनेक (स्थलकालाच्या पलीकडील)

मिती (परिमाणे) (dimensions) असून त्यांच्या अस्तित्वाचा पुरावा आपल्याला अस्वस्थ करणारा असल्यामुळे आपण केवळ दुराग्रहातून त्याकडे आजपर्यंत दुर्लक्ष करीत आलो आहोत, हे त्याने मोकळेपणाने मान्य केले आहे.<sup>१००</sup> मनुष्य अनेक मितींच्या विश्वात राहतो हे ब्रह्मवैज्ञानिक सत्य असून 'यूफो'च्या प्रकरणामुळे व्हॅल्लीसारख्या शास्त्रज्ञांना त्याचा शोध लागला आहे आणि ते सत्य त्यांना आता अशारितीने मोकळेपणाने व उघडपणे सार्वजनिकरीत्या मान्य करावे लागले आहे.

आपण यापूर्वी पाहिलेच आहे की ब्रह्मविज्ञानानुसार भुवर्लोक (astral world) हे चतुर्मितीचे मरणोत्तर (मृतात्म्यांचे) जग असून ते निसर्गात्म्यांचेही वसतिस्थान आहे. (पृ. ३५९, ३७१) मनुष्य तेथे लिंगदेहाने (वासनादेहाने) राहतो/वावरतो. झोपेत मनुष्याचा आत्मा देह सोडतो हे लक्षात ठेवावे. अशावेळी तो याच चतुर्मितीच्या जगात वावरत असतो. त्यावेळी आपल्याला स्वप्न पडले असे तो म्हणतो. पण ते स्वप्न म्हणजे या चतुर्मितीच्या जगाचा त्याचा अनुभव असतो.<sup>१०१</sup> मृतात्मे (मेलेले नातेवाईक) व निसर्गात्मे त्याला या जगात भेटतात. निसर्गात्मे कधीकधी त्याला भयानक दृश्ये (रूपे) दाखवतात. त्यावेळी तो आपल्याला भयानक स्वप्न (night mare) पडले असे म्हणतो. 'यूफो' पाहिलेल्या अनेक लोकांना निसर्गात्मे या चतुर्मितीच्या जगात अशीच भयानक दृश्ये दाखवतात. (हिल पतीपत्नींना 'यूफो' पाहिल्यानंतर अशीच भयानक स्वप्ने पडू लागल्याचे आपण यापूर्वी पाहिले आहे. पृ. ४३२) काहीजण जाणीवपूर्वक देह सोडू शकतात. याला देहातीत अनुभव (out of body experience संक्षिप्ततः OBE) म्हणतात. १८ व्या शतकात स्विडेनबोर्ग या युरोपियन गृहस्थाला हे सामर्थ्य प्राप्त झाले होते. या देहातीत अवस्थेत मनुष्याचा आत्मा चतुर्मितीच्या (मृतात्म्यांच्या व निसर्गदेवतांच्या) उपरोक्त जगात जाऊन त्या जगातील अनुभव घेऊ शकतो. या अवस्थेत आपल्याला भेटलेल्या मृतात्म्यांचे व देवदूतांचे (angels) स्विडेनबोर्गने वर्णन केले आहे. १० व्या प्रकरणात आपण मरणानुभवांना (NDErs) देह सोडल्याचा हाच अनुभव येत असल्याचे व हा अनुभव भ्रामक नसून सत्यापनाच्या कसोटीला उतरत असल्याचे विस्ताराने पाहिले आहे. या अवस्थेत मरणानुभवांना पूर्वी मेलेले नातेवाईक भेटतात हेही सांगितले आहे. काही जणांना मरणानुभवात देवदूतही भेटल्याचे आढळून येते. अलीकडच्या काळात स्विडेनबोर्गप्रमाणे जाणीवपूर्वक देह सोडण्याचे सामर्थ्य अमेरिकेच्या रॉबर्ट मन्रो या गृहस्थाला प्राप्त झालेले असून त्याने आपल्या अशा अनुभवावर आधारित Journeys Out of Body आणि Far Journeys हे दोन ग्रंथ लिहिले आहेत. त्याने पहिल्या ग्रंथात नुकतेच मेलेल्या मित्रांना आपण मरणोत्तर चतुर्मितीच्या जगात मुदाम देह सोडून कसे भेटलो याचे वर्णन केले आहे. त्या जगात आपल्याला मदत करणारेही (देवदूत) भेटले असल्याचे त्याने म्हटले असून त्यांनी आपल्याला कशी मदत केली

याचे त्याने Angels and Archetypes या प्रकरणात वर्णन करून सांगितले आहे. ज्यांना demons किंवा दुष्ट शक्ती म्हणता येईल अशा प्राण्यांचाही या जगात आपल्याला अनुभव आल्याचे त्याने म्हटले असून त्यांच्याशी आपण कसे लढलो याचेही वर्णन त्याने केले आहे. अशारीतीने ब्रह्मविज्ञानातील परलोकवर्णनाला पुष्टी देणाऱ्या लाखो मरणानुभव्यांच्या व अतींद्रियदृष्टीच्या प्रभावळीमध्ये (स्वेच्छेने देह सोडणाऱ्या लेडबीटरांच्या पंक्तीत) जाऊन बसणारा रॉबर्ट मॅनरो हा अगदी अलीकडचा एक महत्वाचा (देह सोडणारा) साक्षीदार ठरतो व ब्रह्मवैज्ञानिक सत्ये अतींद्रिय पातळीवर-म्हणजे स्थलकालांच्या पलीकडे-गेल्याशिवाय शोधता येत नाहीत ही गोष्ट शाबित करतो.

### ‘यूफो’ व भानामती यामधील काही साम्ये

‘यूफो’ ही जागतिक पातळीवरील भानामती कशी आहे, हे त्या दोहोमधील साम्य दाखवून वर स्पष्ट केले आहे. याखेरीज दोहोमधील आणखी काही साम्ये मागे दिलेल्या उदाहरणावरून स्पष्ट दिसणारी असून त्यांचीही माहिती घेणे आवश्यक आहे. उदा. ‘यूफो’ पाहिलेल्या लोकांना ‘चुकलेल्या वेळे’चा (missing time) अनुभव येतो, हे आपण पाहिले आहे. काही तास कुठे गेले याचा त्यांना पत्ता नसतो-आठवण नसते. कृष्णानंदानाही नेमका हाच अनुभव आला होता. त्यांचा (त्या शिवालयात) संपूर्ण एक दिवसच चुकला होता. तो बुधवार आहे असे ते समजत होते. पण तो गुरुवार होता. भोजेच्या अमृत मगदुमला ही भानामतीने मध्यरात्रीच्या वेळी भर दुपार असल्याचे दाखवले होते. अँलन पतीपत्नींना लाकडी बेंचवरून उतरल्यानंतर आपण डॉकिंगला कसे पोहोचलो हे कळले नाही. (हिल पतीपत्नींना ‘यूफो’ पाहिल्यानंतर अँशलँडला आपण कसे पोहोचलो हे कळले नव्हते.) ‘यूफो’ पाहिल्यानंतर अनेकांना पक्षघात (पॅरालिसिस) झाल्याचा अनुभव आला आहे. सौ. अँलन यांनाही लाकडी बैठकीवर बसल्यानंतर काही लोकांची पाठीमागे चाहूल लागली असता क्षणभर पक्षघात होऊन त्या पाठीमागे वळून पाहू शकल्या नाहीत असे आढळून आले आहे. (पृ.३७६) भानामतीत (विशेषतः मृतात्म्याच्या संचाराच्या वेळी) अनेकदा शरीराचे तापमान एकदम उतरते. “हात बर्फासारखे गार पडतात.”<sup>२४९</sup> सौ. अँलन यांनाही काही लोकांची पाठीमागे चाहून लागल्यानंतर त्यांना एकदम इतका गारवा जाणवला की त्या आपल्या पतींना म्हणाल्या, “थंडी पडली का?” आणि श्री. अँलन यांनी आपल्या पत्नीचा हात धरून पाहिले तेव्हा तो प्रेतासारखा थंड लागला. ‘यूफो’च्या बाबतीतही असाच अनेकदा गारवा जाणवला आहे. (उदा. *Passport to Magonia* - case no. 605,615) मृतात्मविद्येच्या बैठकीच्या वेळी माध्यमाच्या उपस्थितीत जे ‘चमत्कार’ घडतात,

ते त्या माध्यमाची बनवेगिरी असते असे म्हणणाऱ्यांना कर्नल ऑलकॉट यांनी आव्हान दिले आहे की हे 'चमत्कार' घडताना माध्यमाचे हात एकदम बर्फासारखे गार होतात हे मी स्वतः तपासून खात्री केली असून हे 'चमत्कार' बनवेगिरी नसल्याचे सिध्द करणाऱ्या इतर अनेक वस्तुनिष्ठ पुराव्याबरोबर हा एक महत्त्वाचा शरीरशास्त्रीय (शारीरिक बदलाचा) पुरावा असून तसा आपल्या शरीराच्या तापमानात कोणीही बदल करून दाखवावा. (Vol. I Pp. 91-2) असा बदल कृत्रिमपणे आपल्या शरीरात कोणलाही करता येत नाही. हा तापमानातील फरक (गारवा) भानामती, मृतात्मा व 'यूफो' यांच्या अस्तित्वाचा सारखाच परिणाम आहे, असे दिसून येते. (मृतात्मविद्येचे संशोधक नाशिकचे क्षीरासागर यानीही या गोष्टीची आपल्या ग्रंथात नोंद केली आहे.)

### **‘यूफो’, मरणानुभव आणि भानवाचे आध्यात्मिक पुनरुत्थान**

‘यूफो’ पाहिलेल्या एका डॉक्टरला व एका घोड्याला आपोआप अंतराळी उचलले गेल्याचा अनुभव आल्याचे यापूर्वी सांगितले आहे. हा ‘यूफो’च्या भानामतीचा परिणाम (वा प्रकार) असल्याचे तेथे म्हटले आहे. अर्थात् स्थलकालाच्या पलीकडील चतुर्मितीच्या (अतींद्रिय) पातळीवरील निसर्गशक्तींचा हा त्रिमितीच्या (भौतिक) पातळीवरील परिणाम आहे. असाच परिणाम पाच, सहा व सात मितींच्या (मानसिक, बुद्धिक व आत्मिक) पातळीवरील (अतींद्रिय) शक्तींचाही त्रिमितीच्या (भौतिक) पातळीच्या जगावर होऊ शकतो. अशा परिणामाला-तोही अतींद्रिय पातळीवरील शक्तींचाच परिणाम असला तरी- भानामतीचा परिणाम (किंवा प्रकार) म्हणण्याऐवजी आध्यात्मिक परिणाम म्हणणे अधिक सयुक्तिक होईल. कारण असाच परिणाम साधू संतांना त्यांच्या आध्यात्मिक उत्थानाच्या वेळी अनुभवास येतो. उदा. काही साधू ध्यानाच्या वा समाधीच्या वेळी आपोआप अंतराळी उचलले जातात, तर काहीजण ध्यानासाठी मुद्दाम अंतराळी आसन घालतात, असे आढळून येते. (उदा. श्री. बुदबुदाचार्य हे १९०३ साली एक हात वर अंतराळी आसन घालीत असत व हे मी स्वतः पाहिले आहे, असे पुण्याचे श्री. द. ल. तथा काकासाहेब निरोखेकर या बिडकरमहाराजांच्या शिष्यांनी म्हटले आहे.<sup>१५०</sup> ‘यूफो’ पाहिलेल्या काही लोकांना अतींद्रिय शक्ती प्राप्त झाल्याचे आढळून आले असून त्याचा मागे उल्लेख केला आहे. काहीना देह सोडल्याचा अनुभवही (OBE) आला असून त्यांचाही उल्लेख तेथेच केला आहे. (पृ. ४३५) असे अनुभव मरणानुभव घेणाऱ्या लोकांना विशेष करून येतात असे आढळून येते व त्याविषयीची सविस्तर माहिती १० व्या प्रकरणात दिली आहे. ‘यूफो’ व मरणानुभव (NDE) यांच्यामधील हे अनुभवसाम्य व मरणानुभव घेणाऱ्यांना (त्यांच्या घरी किंवा त्यांच्या उपस्थितीत) भानामतीचेही अनुभव येतात (त्यांच्यात भानामतीची शक्ती प्रवर्तित

होते) ही वस्तुस्थिती पाहता 'यूफो', भानामती व मरणानुभव या सर्व घटनाप्रकाराच्या पाठीमागे अतींद्रिय पातळीवरील विविध शक्ती कार्यरत असल्याच्या दिसून येतात, व त्या सर्वांचा उद्देश कमी जास्त प्रमाणात मानवाचे अतींद्रिय पातळीवरून विविध अनुभवांच्याद्वारे आध्यात्मिक पुनरुत्थान घडविण्याचा असल्याचेही स्पष्ट होते. विशेषतः 'यूफो' व मरणानुभव हे प्रकार युरोप-अमेरिकेसारख्या पाश्चात्य भौतिकवादी देशातील लोकांनाच जास्त प्रमाणात अनुभवास येत असल्याचे आढळून येत असल्यामुळे ह्या तर्काला पुष्टी मिळते. कारण अण्वस्त्रांचा शोध लावणाऱ्या व दोन महायुद्धे जगावर लादणाऱ्या या पाश्चात्य भौतिकवादी व भौतिकसुखवादी देशांनाच आध्यात्मिक दृष्टीची व आध्यात्मिक पुनरुत्थानाची पौवात्य देशापेक्षा जास्त गरज आहे. मरणानुभव घेणाऱ्यांची पाश्चात्य देशातील दिवसेंदिवस वाढत जाणारी संख्या व त्या अनुभवातून त्यांच्या व्यक्तिमत्वात होणारे आमूलाग्र आध्यात्मिक परिवर्तन या गोष्टी याच वस्तुस्थितीच्या निदर्शक असून त्याची १० व्या प्रकरणात आपण विस्ताराने चर्चा केली आहे. 'यूफो' पाहिलेल्या काही लोकांतही असाच व्यक्तिमत्वात आध्यात्मिक बदल घडून येत असल्याचे आढळून आले असून त्याची काही उदाहरणे नमून्यादाखल येथे देतो.

'यूफो' पाहिल्यानंतर आपल्या व्यक्तिमत्वात झालेला बदल सांगताना एक ब्रिटिश स्त्री म्हणते, "जगातील बहुतेक धर्म जे करण्याचा प्रयत्न करतात पण जे प्रत्यक्षात करू शकलेले नाहीत, ते 'यूफो' च्या दर्शनाने माझ्या बाबतीत घडले आहे. मला त्याने सत्याचे दर्शन घडविले आहे. 'यूफो' ने माझे व्यक्तिमत्त्व पूर्ण बदलले आहे. ज्या दिवशी दुपारी मी 'यूफो' पाहिली त्या दिवशी अज्ञेयवादी (अज्ञानी) असलेली मी एकदम ज्ञेयवादी वा ज्ञानी (gnostic) झाले. मला झालेले ज्ञान म्हणजे आकाशातून एकाएकी माझ्या बुद्धीत पडलेला विजेचा जणू प्रचंड लोळच होता." <sup>११२१</sup> जॉइस नावाची अमेरिकन स्त्री आपल्यात १९६७ साली 'यूफो' पाहिल्यानंतर झालेला बदल पुढीलप्रमाणे वर्णन करून सांगते, " ('यूफो' पाहिल्यानंतर) माझ्या आवडीनिवडी बदलल्या. मला ऐतिहासिक कांदबऱ्या आवडायच्या. पण कांदबऱ्या वाचण्याचेच मी सोडून दिले आणि गूढ शास्त्रावरील ग्रंथ वाचू लागले. उदा. 'यूफो', अतींद्रिय विज्ञान, मानसिक विकास, पुनर्जन्म, प्राचीन गूढे, अटलांटिस, इजिप्टॉलॉजी, पिरॅमिड्स, प्राचीन धर्म इ." <sup>११२२</sup> ज्या फ्रेंच डॉक्टरांच्या पोटावर 'यूफो' पाहिल्यानंतर त्रिकोणाचे चिन्ह उमटले व जो अंतराळी उचलला गेला त्या डॉक्टरांच्या बाबतीतही असेच मानसिक/आध्यात्मिक परिवर्तन घडून आल्याचे दिसून आले आहे. तो व त्याची पत्नी हे दोघेही नंतर जीवनात घडणाऱ्या घटना व मृत्यू हे अपरिहार्य असल्याचे मानून त्यांचे आध्यात्मिक दृष्टीने स्वागत करू लागले, असे

आढळून येते. (त्याची पूर्वी अशी वृत्ती नव्हती.)

मरणानुभव घेणाऱ्या बहुसंख्य लोकांच्या बाबतीत जसे आध्यात्मिक परिवर्तन घडून येते, तसे 'यूफो' पाहिलेल्या किंवा त्याच्या संपर्कात आलेल्या बहुसंख्य लोकांच्या बाबतीत घडून येत असल्याचे दिसून येत नाही, हे खरे असले तरी निदान काही लोकांच्या व्यक्तिमत्त्वात 'यूफो' पाहिल्यानंतर आध्यात्मिक परिवर्तन घडून येते ही गोष्ट अर्थपूर्ण असून काही मरणानुभवाच्या संशोधकांचे या गोष्टीने लक्ष वेधले आहे; आणि हा काही योगायोग नाही ह्याची जाणीवही त्यांना झाली आहे. कारण मरणानुभव आणि 'यूफो'चा अनुभव या दोहोमध्ये 'प्रकाश'चा अनुभव हा सामान्य आहे. मरणानुभवात मरणानुभव्याला प्रकाशव्यक्ती (Being of Light) दिसते वा भेटते. तर 'यूफो' पाहणाऱ्याला प्रकाश स्वरूपातच ती दिसते. मरणानुभवात भेटणारी प्रकाशव्यक्ती कोण हे गूढ आजपर्यंत जसे कोणालाही उकलता आलेले नाही, तसे प्रकाशस्वरूपात दिसणारी व भेटणारी 'यूफो' ही वस्तू नेमकी काय आहे व त्यातून प्रकट होणाऱ्या व्यक्ती कोण आहेत, हे गूढही आजपर्यंत कोणालाही उकलता आलेले नाही; आणि यात आश्चर्य नाही. कारण जॅक व्हॅली याने खुलेपणाने मान्य केल्याप्रमाणे स्थलकालातील रुढ साधनांनी व पध्दतीने त्याचा शोध घेणेच-लावणेच शक्य नाही. याचा अर्थ असा की स्थल-कालांच्या पलीकडे ज्यांची दृष्टी जाऊ शकते अशा (लेडबीटर, अ‍ॅनी बेझंट यासारख्या) अतींद्रिय दृष्टीच्या ब्रह्मवैज्ञानिक व्यक्तींनाच त्याचा शोध लावता येतो; आणि तो शोध भारतीय ऋषी-मुनींनी फार पूर्वीच लावला आहे. उदा. बृहदारण्यक उपनिषदात जनकाने सूर्य, चंद्र, अग्नी हे भौतिक प्रकाश देणारे स्रोत जेव्हा अस्तित्वात नसतात, तेव्हा कोणत्या प्रकाशात माणसाला दिसू शकते-ज्ञान होऊ शकते, असा याज्ञवल्क्यांना प्रश्न विचारला असता याज्ञवल्क्यांनी 'आत्मा एव अस्य ज्योतिः भवति।' (बृ.उप.४.३.६) (म्हणजे आत्म्याच्या प्रकाशातच त्याला दिसते-आत्मा हाच त्याला अशावेळी ज्ञान देणारा प्रकाशस्रोत बनतो.) असे उत्तर दिले आहे. (याचा पूर्वी उल्लेख आला आहे. पृ.११६) मरणानुभवात दिसणारी प्रकाशव्यक्ती व अचानक प्रकट होणारी आणि अदृश्य होणारी 'यूफो' ही दोन्ही भौतविज्ञानाचे नियम भंग करणारी असल्यामुळे असे म्हणावे लागते की ते भौतिक प्रकाशस्रोत मुळीच नाहीत. ते इतर मितीतील वा परिमाणातील (dimensions) (अतींद्रिय) प्रकाशस्रोत आहेत; आणि ते पाहणाऱ्यावर भानामतीप्रमाणे अदृश्य (अतींद्रिय) पातळीवरून सारखेच 'चमत्कार' युक्त परिणाम करताना दिसतात. या परिणामापैकी माणसाच्या व्यक्तिमत्त्वातील आध्यात्मिक बदल हा एक महत्वाचा परिणाम असून तो याज्ञवल्क्यांनी उल्लेखिलेल्या आत्मिक (म्हणजे सातव्या मितीच्या) पातळीवरील परिणाम आहे. तो कुंडलिनी शक्तीच्या जागरणासारखाच परिणाम असल्याचे व



मानवी जाणिवेच्या उत्क्रांतीला तो हातभार लावत असल्याचे मरणानुभवाचा प्रसिध्द संशोधक केनेथ रिंग याने **Heading Toward Omega** या ग्रंथात दाखवून दिल्याचे १० व्या प्रकरणात सांगितलेच आहे. (पृ. १२५) 'यूफो'चाही काही व्यक्तीवर असाच परिणाम होत असल्यामुळे 'यूफो' व 'मरणानुभव' हे दोन्ही मानवी जाणिवेच्या उत्क्रांतीला हातभार लावत आहेत, त्याचे आध्यात्मिक पुनरुत्थान करीत आहेत, असे निश्चित म्हणता येते. केनेथ रिंग याने १९९२ साली लिहिलेल्या **Omega Project : Near Death Experiences, UFO Encounters and Mind at Large** या ग्रंथात पाश्चात्यांच्या जीवनातील (मरणानुभव व यूफो) या दोन्ही महत्वपूर्ण घटना-प्रकारांचा तुलनात्मक अभ्यास करून त्यांच्यातील संबंध मानवी उत्क्रांतीच्या दृष्टीने स्पष्ट करून दाखवला आहे. अशाच प्रकारचे मत मायकेल ग्रोसो, पी. एम्. एच्. अँटवाटर या इतर मरणानुभव व 'यूफो' संशोधकांनीही प्रकट केले आहे. 'यूफो'च्या लोकांनी पळवून नेलेल्या व्हिटली स्ट्रायबर या लेखकाचेही असेच मत असल्याचे दिसून येते. या संदर्भातील एक आश्चर्यकारक गोष्ट म्हणजे तीन वेळा मरणानुभव घेतलेल्या पी. एम्. एच्. अँटवाटर या विदुषी बाईने मरणानुभव घेतलेल्या हजारो लोकांच्या मुलाखती घेतल्यानंतर तिला असे आढळून आले की त्यापैकी एकतृतीयांश मरणानुभवांना मरणानुभवानंतर एक तर 'यूफो'चे स्वप्न पडले, किंवा प्रत्यक्ष 'यूफो' दिसली ! काही टक्के लोकाना 'यूफो'तील लोकांशी प्रत्यक्ष संबंधही आला असल्याचे व काहींना तर त्यांनी पळवूनही नेले असल्याचे आढळून आले आहे !<sup>२५१</sup> मरणानुभव व 'यूफो' अनुभव यांचा आध्यात्मिक पातळीवर घनिष्ठ संबंध असल्याचे यावरून स्पष्ट होते. अशारीतीने मानवाच्या अंधारी (अज्ञानरूपी) बोगद्याच्या शेवटी (भौतिकवाद हा मानवाचा अंधारी-अज्ञानरूपी-बोगदाच आहे) दिसणारा 'प्रकाश' म्हणजे त्याचा स्वतःचाच 'आत्मा' आहे हे याज्ञवल्क्याचे म्हणणे - तो 'प्रकाश'रूपी आत्मा त्याचे आध्यात्मिक उत्थान करीत असल्यामुळे-भौतिकवादी पाश्चात्यांना आध्यात्मिक ज्ञान देणारे (मरणानुभव व 'यूफो'-अनुभव) हे दोन्ही 'प्रकाश' घटना-प्रकार सिध्द करतात. या दोन घटना-प्रकारातील पहिला घटना-प्रकार (मरणानुभव) हा आतील 'प्रकाश' आहे, तर दुसरा घटना-प्रकार ('यूफो'-अनुभव) हा बाहेरील 'प्रकाश' आहे. ब्रह्मविज्ञानाच्या भाषेत बोलायचे तर मरणानुभव हा चिदाकाशातील 'प्रकाश' आहे, तर 'यूफो'-अनुभव हा महदाकाशातील 'प्रकाश' आहे. 'यूफो' हा महदाकाशातील 'प्रकाश' असल्याचे 'अंबरात् अवतरति देवः ।' म्हणजे आकाशातून ('यूफो' मधून) देव उतरतो हे गोविंदस्वामीचे मागे सांगितलेले वचन अक्षरशः सिध्द करते ! (पृ. २९१) अशारीतीने 'यूफो' हा महदाकाशातून उतरणारा 'देव' (प्रकाश) असला तरी ('देव' हा शब्द दिव् = प्रकाशणे या मूळ संस्कृत धातूपासून तयार झाला

असल्याने 'देव' म्हणजे 'प्रकाश'च होय.) चिदाकाशातील (आतील) देवा पासून (प्रकाशापासून) तो वेगळा नाही हे स्पष्ट आहे. तो वेगळा नसल्याचे 'अयमात्मा ब्रह्म' म्हणजे (आतील) आत्मा व (बाहेरील) ब्रह्म हे एकच आहेत असे सांगणारे बृहदारण्यक उपनिषदातील वचन सिध्द करतेच (पृ. २९१), पण 'यावन्वा अयमाकाशः तावान् एष अंतर्हृदय आकाशः ।' (म्हणजे हे आकाश महदाकाशरूपाने जेवढे बाहेर आहे, तेवढेच चिदाकाशरूपाने ते माणसाच्या आतही (हृदयातही) आहे असे सांगणारे छांदोग्य उपनिषदातील वचनही ते सिध्द करते. (पृ. २९२) वस्तुतः ही दोन्ही 'आकाशे' (वा 'प्रकाश') स्वरूपतः एकच असल्यामुळे बाहेरील 'आकाश' (त्या आकाशातील 'देव') आतील 'आकाश'वर (त्या आकाशातील 'देवा'वर) परिणाम करू शकतो. 'आत्मा' व 'ब्रह्म' हे दोन्ही एक असल्यामुळेच व दोन्ही ज्ञानस्वरूप असल्यामुळेच हा परिणाम घडून येतो, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. म्हणूनच गूढानुभूतीत अचानक होणाऱ्या ज्ञानाची (mystic experience) तुलना (बाहेरील) आकाशातून आतील (हृदयरूपी) आकाशात पडणाऱ्या विजेच्या प्रकाशाशी कित्येकदा करण्यात येते. उदा. 'यूफो' पाहिल्यानंतर आपल्या व्यक्तिमत्वात झालेला बदल सांगताना एका ब्रिटीश स्त्रीने वर म्हटले आहे की, "ज्या दिवशी दुपारी मी 'यूफो' पाहिली त्या दिवशी अज्ञेयवादी (अज्ञानी) असलेली मी एकदम ज्ञेयवादी वा ज्ञानी (gnostic) झाले. मला झालेले ज्ञान म्हणजे आकाशातून एकाएकी माझ्या बुद्धीत पडलेला विजेचा जणू प्रचंड लोळच होता." (पृ. ४४७) हे 'अंबरात् अवतरति देवः' या वचनाचेच [गूढानुभूतीरूपी ज्ञानाचेच (mystic experience)] रूपकात्मक वर्णन आहे. (Gnosis म्हणजे गूढानुभूतीत झालेले ज्ञान होय. असे ज्ञान मरणानुभवात अनेकांना होत असल्याचे १० व्या प्रकरणात आपण पाहिलेच आहे. टीप क्र. २५२ ही पाहा.)

### देवदूत : आणखी एक पाश्चात्यांचे पुराण

१९९३ सालच्या Time मासिकानुसार ६९ टक्के अमेरिकन लोक देवदूतांच्या अस्तित्वावर विश्वास ठेवतात. अलीकडील संशोधनातून हा आकडा ९० टक्क्यावर गेला आहे ! इतक्या प्रमाणात अमेरिकन लोक देवदूतांच्या अस्तित्वावर-त्यांच्या खरेपणावर-विश्वास ठेवत असतील तर देवदूतांचा त्यांना कोणत्या ना कोणत्या स्वरूपात प्रत्यक्ष अनुभव आला असला पाहिजे असा निष्कर्ष काढावा लागतो. अशारीतीने देवदूतांचे प्रकरण अमेरिकन जीवनाचे एक अपरिहार्य अंग ठरते व त्याकडे शास्त्रज्ञांना डोळेझाक करून चालणार नाही, हे उघड आहे. अनेकांना आयुष्यात बहुधा एकदाच देवदूतांचा अनुभव आलेला असतो; पण तो एकमेव अनुभव त्यांच्यावर कायमचा परिणाम करून जातो जसे दिसून येते. त्या एकमेव अनुभवामुळे तो अनुभव घेणाऱ्याच्या मनात देवदूतांच्या अस्तित्वाविषयी कोणत्याही प्रकारच्या

संशयाला जागा उरत नाही. कित्येकदा सामूहिक पातळीवरही देवदूत भेटल्याचे आढळून आले असून याबाबतीत त्यांचे 'यूफो' शी बरेच साम्य आढळून येते. या विषयावर अनेक ग्रंथ लिहिले गेले असून अमेरिकानांना देवदूतांचा अनुभव 'यूफो' सारखाच सर्वसामान्य वाटतो असे त्यावरून दिसून येते. विज्ञानयुगात देवदूतावर विश्वास ठेवणे ही शुध्द अंधश्रद्धा आहे, असे कोणालाही वाटे. पण त्यांचा प्रत्यक्ष अनुभव घेणाऱ्यांना इतर लोक काय म्हणतात याची पर्वा नसल्याचे आढळून येते. त्यांच्या दृष्टीने तो विश्वासाचा वा श्रद्धेचा प्रश्नच उरत नाही. पुढील उदाहरणावरून त्यांना तसे का वाटते याची वाचकांना कल्पना येईल.

व्हर्जीनिया राज्यातील रिचमंड येथील मारी अटरमन ही बाई आपल्या बाळंत होऊ घातलेल्या मुलीकडे आपल्या कारमधून चालली होती. पन्नास एक मैल गेल्यानंतर तिची कार एकाएकी बंद पडली व ती काही केल्या पुन्हा सुरु होईना. तिची अवस्था अगदी दयनीय झाली. तिने मनात गाडी सुरु व्हावी म्हणून प्रार्थना केली. इतक्यात एक पांढरी व्हॅन तेथे आली व थांबली. पांढरे शुभ्र कपडे घातलेले तीन सुंदर तरुण त्या व्हॅनमधून खाली उतरले व त्यातील एक गोरा तरुण तिला म्हणाला, "मॅडम, तुम्ही कारमधून खाली उतराल तर आम्ही तुमची बंद पडलेली कार सुरु करण्याचा प्रयत्न करू." "तुमचे कसे आभार मानू" असे म्हणत ती लगेच खाली उतरली व आपली मुलगी बाळंत होणार असून तिला भेटायला आपण जात असल्याचे तिने त्यांना सांगितले. त्यांनी आपल्या व्हॅनमधून हत्याराची पेटी काढली व पुढील इंजिनला जॅक लावून ते उचलले. इंजिनच्या खाली उताणे झोपून त्यांनी सराईतपणे काही दुरुस्त्या झटपट केल्या व पाच मिनिटात किल्ली फिरवून तिची गाडी सुरु करून दिली, तिने त्यांचे आभार मानले व एक पन्नास डॉलरची नोट काढून त्यांना ती देऊ लागली. पण त्यांनी ती घेतली नाही. "आम्ही अशी कामे करण्यासाठीच आहोत," असे ते म्हणाले. ते लगेच आपल्या व्हॅनमध्ये बसले व ती व्हॅन निघून गेली. पण आश्चर्य म्हणजे काही अंतर गेल्यानंतर ती व्हॅन एकदम अदृश्य झाली. आणि मग तिच्या लक्षात आले की इंजिनखाली जमिनीवर लोळूनसुध्दा त्याचे शुभ्र कपडे ग्रीस वगैरे काही घाण न लागता जसेच्या तसे (स्वच्छ) होते. अशारीतीने ते सामान्य लोक नव्हते, ही गोष्ट व्हॅन अदृश्य झाल्यानंतर तिच्या लक्षात आली. ती आपल्या मुलीच्या घरी पोहोचली तेव्हा ती रक्ताच्या थारोळ्यात बसलेली तिला आढळली. तिने तत्काळ वैद्यकीय मदत बोलावून तिचे बाळंतपण व्यवस्थित करविले. ते रक्षणकर्ते संतज्ञ देवदूत (guardian mechanic angels) वेळेवर भेटले नसते व आपल्याला त्यांनी मदत केली नसती तर बाळबाळंतीण सुखरूप राहिले नसते, दगावले असते असे ती नंतर म्हणाली.<sup>२५४</sup>

वरील उदाहरणावरून 'देवदूत' (angels) म्हणजे माणसांना अडचणीच्या

वेळी मदत करण्यासाठी मानवी रूपात भेटणाऱ्या अतींद्रिय पातळीवरील शक्ती होत असे ठरते-किंवा अशा स्वरूपात अडचणीत मदत करण्यासाठी जे भेटतात त्यांना 'देवदूत' म्हणता येईल. ही मदत ते कोणत्याही रूपात भेटून करतात असे आढळून येते. पुढील दोन उदाहरणावरून हे स्पष्ट होईल. वडील मेल्यामुळे अत्यंत खिन्न व विमनस्क अवस्थेत बसलेल्या एका स्त्रीला अचानक तिचे वडील तिच्या समोर मूर्त रूपाने प्रकटले व त्यांनी तिचे सांत्वन करून जसे प्रकटले तसे अदृश्य झाले. ती स्त्री आपल्या वडिलांचा मृतात्मा किंवा त्याचे भूत भेटले असे मात्र मानायला तयार नाही. एक देवदूतच आपल्या मृत वडिलांच्या रूपाने भेटला असे ती मानते. आणखी एका प्रकरणात एका मुलाने रस्त्याने जाणाऱ्या मोटारीला धोक्याचे निशान दाखवून थांबवले व जवळच अपघात झालेल्या शाळेच्या बसमधील जखमी मुलांना मदत करण्याचे आवाहन केले. त्या मोटारीचा चालक ताबडतोब खाली उतरून जखमी मुलांना जेव्हा बाहेर काढू लागला तेव्हा त्याला आश्चर्याचा धक्का बसला. कारण तो निशान दाखवून त्याची मोटार थांबवणारा मुलगाच त्या जखमी मुलात होता ! प्रसंगानुरूप देवदूत कशी वेगवेगळी रूपे धारण करतात हे या दोन उदाहरणावरून स्पष्ट होते.

ब्रह्मविज्ञानानुसार देवदूत हे उत्क्रांतीमधील निसर्गात्म्यांच्याही वरच्या पातळीवरील जीव आहेत. ते नेहमीच अडचणीच्या वेळी माणसांना मदत करताना आढळतात. निसर्गात्म्याप्रमाणे ते कधी खोड्या करीत असल्याचे दिसून येत नाहीत. भीमाला कौरवांनी अन्नातून विष घालून त्याला नदीत फेकून दिले असता नागांनी त्याचे विष काढून घेऊन त्याचा जीव वाचविल्याची कथा महाभारतात आहे. (नाग हेही यक्ष, गंधर्व, किन्नर यासारखे देवदूतच-निसर्गात्मेच-आहेत.) ही फार जुनी पौराणिक कथा असली तरी वरील देवदूतांच्या 'चमत्कारा'च्या सदरात ती मोडत असल्यामुळे त्या कथेचा दर्जा व वरील अमेरिकन उदाहरणातील कथेचा दर्जा अतींद्रिय विज्ञानाच्या दृष्टीने एकच आहे, हे लक्षात ठेवावे. असे जरी असले तरी महाभारतातील या कथेवर विश्वास ठेवणारे भारतीय लोक अमेरिकन लोकांप्रमाणे देवदूतांच्या अस्तित्वावर मात्र हल्ली मोठ्या प्रमाणात-नव्हे; कोणत्याच प्रमाणात विश्वास ठेवत असतील असे वाटत नाही; कारण वरील सारखा देवदूतांच्या (अडचणीतील) मदतीचा अनुभव भारतीयांच्या नित्याच्या जीवनात अमेरिकनांप्रमाणे त्यांना येत नाही, असे कोणी म्हणेल. पण हे खरे नाही. या ग्रंथातील १३ व्या प्रकरणातील सर्व घटना वाचकांनी पुन्हा एकदा नजरेखालून घालाव्यात. डॉ. निर्मळे यांना त्यांच्या दवाखान्यात भेटून त्यांच्या पत्नींना रुक्मिणीचा चुडा देणारा (व त्यांचा हृदयाघातातून जीव वाचविणारा) 'कृष्णा पाटील' कोण होता ? ऐदमाळे साहेबांच्या मुलाच्या लग्नात त्यांच्या खिशात आहेराचे पैशाचे पाकीट घालणारा

‘केरबा बैलकर’ कोण होता ? सौ. जानकीबाईंना बाळूमामांच्या मंदिरात त्यांनी पारायणासाठी आणण्यास विसरलेली ज्ञानेश्वरी देणारे ऐदमाळेसाहेब कोण होते ? बाळूमामांच्या समाधीवर पुण्यतिथीच्या दिवशी फुले वाहण्याची व्यवस्था करण्याचे विसरणाऱ्या तेथील लोकांना अगाऊ पैसे देऊन त्याची व्यवस्था करणारा तो ‘अज्ञात इसम’ कोण होता ? बेळगावच्या गोविंदराव कुलकर्णी वकिलांना त्यांचा हरवलेला ट्रॅन्झिस्टर आणून देणारे ‘र. के. तेंडुलकर’ कोण होते ? र. के. तेंडुलकरांचे मिरज हॉस्पिटलचे बिल चुकते करणारे ‘जी. व्ही. कुलकर्णी-वकील’ कोण होते ? गुजरातमधील नारेश्वर दत्तमंदिरात अवजड मूर्ती सहज पाठीवर घेऊन हवे त्या ठिकाणी ती मुर्ती नेऊन ठेवणारा तो ‘बलदंड अज्ञात इसम’ कोण होता ? विष्णुपंत टोळांच्या गैरहजरीत त्यांची सही हजेरीबुकात करणारा ‘विष्णुपंत’ कोण होता ? आणि शेवटी उपाशी लोकांना दामाजीपंताने वाटलेल्या धान्याचे पैसे राजाकडे नेऊन भरणारा ‘विठ्ठल महार’ कोण होता ? हे सर्व त्या विश्वमनाचे काम आहे असे तेथे म्हटले आहे. हे विश्वामन (universal mind) म्हणजे विश्वाची व्यवस्था पाहणारे मन असून तीच दृश्य विश्वातील सर्वश्रेष्ठ अतींद्रिय शक्ती (supreme power) आहे. ती शक्तीच आपल्या दूतांकरवी (messengers of God) अशी कामे करवून घेत असते. त्या श्रेष्ठ शक्तीचे हे दूत (देवदूत) केवळ माणसाच्या रुपातच भेटतात असे नाही, तर प्रसंगानुसार हवी ती रूपेही निर्माण करतात असे आढळून येते. हे पुढील उदाहरणावरून स्पष्ट होईल. हे उदाहरण नाशिकचे श्री गजाननमहाराज गुप्ते यांचे शिष्य श्री. रा. प. ताम्हणे यांना प्रत्यक्ष आलेल्या अनुभवाचे असून ते त्यांच्याच शब्दात येथे देतो.

“इ.स. १९२८ सालची गोष्ट. त्यावेळी माझे सर्वात वडील बंधू नाशिक जिल्ह्यातील चांदवड मुक्कामी फडणीस होते. आईने तत्पूर्वी अनेक वेळा श्री. (गजानन) महाराजांना माझ्या बंधूकडे येण्याविषयी विनंतीपूर्वक आग्रह धरला होता. एके दिवशी दुपारी १॥/२ च्या सुमारास आमच्या घरासमोर उतारुची बस उभी राहिली. त्यावेळी खाजगी बसगाड्या असत. श्री महाराज ड्रायव्हर जवळील सीटवर बसून मोठमोठ्याने आई, “ए आई, मी आलो.” असे हाका मारू लागले. मी त्या वेळेस तेथेच होतो. आम्ही माडीवर राहत असल्यामुळे मी खाली उतरून जाईपर्यंत महाराजांनी जिना चढावयास सुरुवात केली. आईस न कळवता अचानक आलात, ह्यात आम्हाला आनंद झाला वगैरे सांगितले. महाराज जिना चढून वरती आल्याबरोबर लगेच म्हणाले, “मी तुला शब्द दिल्याप्रमाणे आलेलो आहे. मी चाललो, बस उभी आहे.” मी व आईने बराच आग्रह करून निदान चहा तरी घेऊन जा अशी विनंती केली. त्यांनी तत्काल संमती दिली. त्यानंतर ते जवळजवळ तासभर बसले होते. तो पर्यंत बस दारात उभीच. आश्चर्य म्हणजे बसचा ड्रायव्हर अगर कुठलेही अन्य प्रवासी वेळ झाला म्हणून कुरकुरले नाहीत. या घटनेतील आश्चर्यकारक भाग पुढेच आहे.

या घटनेनंतर चार-सहा महिन्यांनी आई नाशिक मुक्कामी गेली असता श्री महाराजांकडे गेली होती, बोलण्याच्या ओघात श्रीमती कमळाबाई भिसे यांना सहज “श्री महाराज बोलल्याप्रमाणे चांदवड येथे येऊन गेले” असे ती म्हणाली. त्यांनी आश्चर्याने केव्हा, कुठल्या महिन्यात वगैरे चौकशी केली. आईच्या उत्तरावर त्या चपापल्या. कारण महाराजांनी तत्पूर्वी वर्षभर नाशिक सोडलेच नव्हते.”<sup>२५५</sup>

या उदाहरणात एका संताने आपल्या भक्ताला भेटण्याचे दिलेले वचन पाळण्याचे काम देवदूतांनी कुणालाही संशय येणार नाही अशा रीतीने कसे उत्तमरीतीने पार पाडले आहे हे दिसून येते. त्यासाठी लागणारा सर्व सरंजाम-उतारुंची बस, उतारु, ड्रायव्हर इ.-निर्माण केलेला दिसून येतो. (येथे यूफो ऐवजी देवदूतांनी बस उतरवली/निर्माण केली आहे, हा फरक आहे.) भक्ताला भेटण्याचे साधे वचनसुध्दा संतांच्या दृष्टीने किती महत्वाचे आहे, याचीही यावरून कल्पना येते. बोललेला शब्द पाळणे हे संताचे काम आहे. पण गजाननमहाराज शारीरिक व्याधीमुळे आपला शब्द पाळू शकले नाहीत. पण त्यांचे संतत्व ईश्वरनिष्ठ असल्यामुळे त्यांचा शब्द पाळण्याची जबाबदारी ईश्वरावर-त्याच्या दूतांवर-येऊन पडली. संतांच्या तोंडून निघालेला शब्द खरा होतो तो असा ! याचा अर्थ संत बोलून मोकळे होतात व ते पाळण्याचे काम ईश्वरावर-त्याच्या दूतांवर-ते सोपवतात असा मुळीच नाही. याचा अर्थ इतकाच की संत ईश्वराचेच अंश असल्यामुळे बोललेला शब्द ते ‘कसेही’ करून पाळतात ! रामकृष्ण परमहंस आपल्या तोंडून सहज बाहेर पडलेला शब्द-मग तो कितीही क्षुल्लक असेना का-कटाक्षाने पाळत असत. उदाहरणादाखल ‘M’ लिखित Gospel मधील त्यांचे स्वतःचेच पुढील शब्द पाहा. ते म्हणतात, “पाईनराईकडे मी जाणार आहे असे मी सहज बोलून गेलो तर मला तिकडे जाणे नंतर आवश्यक वाटले/ठरेले नाही तरी [बोललेला शब्द पाळण्यासाठी] मला तिकडे गेलेच पाहिजे. नाही तर मी सत्यवचनी नाही असे ठरेल.”<sup>२५६</sup> सत्यवचन म्हणजे ‘मोठ्या लोकांना मोठ्यांनी दिलेले (उदा. हरिश्चंद्र राजाने स्वप्नात विश्वामित्राला दिलेले) वचन’ असे नसून ‘बोललेला-मग ते बोलणे कितीही साधे असो-कोणताही शब्द’ असा आहे, हे रामकृष्णांच्या वरील उद्गारावरून स्पष्ट होते. पंडित ईश्वरचंद्र विद्यासागर भेटण्यास येतो असे रामकृष्णांना एकदा म्हणाले होते. पण ते गेले नाहीत. “ते आपला शब्द पाळत नाहीत” असे म्हणून “ते स्कॉलर (विद्वान) असले तरी सत्पुरुष नाहीत” असे रामकृष्णानी म्हटले आहे.<sup>२५७</sup> यावरून संत व सत्पुरुष हे सत्य व ईश्वर यापासून भिन्न नाहीत, म्हणजे संत, सत्पुरुष, सत्य व ईश्वर हे सर्व एकच आहेत, हे वरील दोन संतांच्या उदाहरणावरून स्पष्ट होते आणि या गोष्टीला खुद्द देवदूतच साक्षी आहेत !

प्रथा मोडणे हाही एक वचनभंगाचाच प्रकार आहे. हा वचनभंगही एकट्याचा नसतो, तर अनेकांनी अनेक वर्षे दिलेल्या व पाळलेल्या (प्रथारूपी)

वचनाचा भंग असतो. (मागे सांगितलेल्या गणपतीसंबंधीच्या मोडलेल्या प्रथेच्या भंगावरून हे स्पष्ट होईल.) त्यामुळे त्या प्रथा मोडल्या तर त्या मोडणाऱ्यांना त्याचे परिणाम भोगावे लागतात. कधी ते परिणाम (आमच्या व अधणे यांच्या बाबतीत किंवा कोल्हापूरच्या गवळी तालीममंडळाच्या बाबतीत गणपतीच्या संदर्भात भोगावे लागले तसे) ताबडतोब भोगावे लागतात, तर काही बाबतीत ते उशीराने भोगावे लागतात. हा वचनभंगाचा परिणामच असून प्रथाभंगाप्रमाणे नवस बोलून तो न फेडणाऱ्यांनाही लागू होतो, व तो संबंधितांच्या लक्षात न येताना (कधी लवकर तर कधी उशीराने पण हटकून) त्यांना भोगावाच लागतो. तो संबंध स्पष्ट असतोच असेही नाही. उदा. धंद्यात बरकत न येणे, सतत आरोग्य बिघडणे वा आजारी पडणे, लोकाकडून फसविले जाणे, बेसुमार खर्च वाढून पैसा न पुरणे इ. अशा लोकांनी आपली तक्रार घेऊन एखाद्या देवर्षीकडे गेल्यानंतर त्याने अमका नवस तुम्ही बोलला होता व तो फेडला नाही, हे खरे काय, असे विचारल्यानंतरच त्यांच्या लक्षात ती गोष्ट आल्याची अनेक उदाहरणे प्रस्तुत लेखकाला (त्याचा मामेभाऊच देवर्षी असल्यामुळे) माहीत आहेत. नवस बोलल्याप्रमाणे कधीकधी वाईट कर्मांमुळे फळ मिळत नाही, तरी तो नवस फेडावाच लागतो. (कोणत्या वाईट कारणांमुळे व फळ कसे मिळत नाही, याचे एक उदाहरण पुढे देत आहे.) अन्यथा त्याचेही परिणाम भोगावेच लागतात, हे पुढील उदाहरणावरून दिसून येईल, व नवसे कन्या पुत्र होती । तरी का करणे लागे पती ॥ ह्यावर कितपत विश्वास ठेवावा हे कळेल.<sup>२५८</sup>

### नवस न फेडल्याचे परिणाम

श्री. बाबू बाळू मुकरे (वय ४५) रा. यकसंबा (ता. चिक्कोडी, जि. बेळगांव) याला पाहिली मुलगी झाल्यानंतर ६ वर्षे मूल झाले नाही. त्यांना मुलगा हवा होता. त्याने अंगात रेणुका सचारणाऱ्या बाईपुढे (रेणुकेपुढे) आपली ही व्यथा मांडली. (याच बाईकडे प्रस्तुत लेखकाची पत्नी जात असे याचा मागे गणपतीच्या संदर्भात उल्लेख आला आहे. (पृ. ४२५) तिने 'माझी [रेणुकेची] ओटी भरलीस तर मी तुला मुलगा देईन', असे सांगितले. त्याप्रमाणे त्यांनी ओटी भरण्याचे वचन दिले-म्हणजे मुलगा होण्यासाठी रेणुकादेवीची ओटी भरण्याचा नवस त्या कुटुंबाने बोलला. (ओटी भरण्याच्या कार्यक्रमास दोन हजार रुपये खर्च येतो. लोकांना जेवण घालावे लागते.) पुढे त्याची पत्नी नवसाप्रमाणे गरोदर राहिली. सातव्या महिन्यात अमावास्येच्या दिवशी ती नदीवर गेली असता तेथे आगंतुकपणे आलेल्या एका बाईच्या अंगात (जल) देवता आलेली पाहून तिने तिला मुलगा होईल की मुलगी असे सहज विचारले. 'तिने मुलगा होईल. पण आठ दिवसात माझी ओटी भरली पाहिजे' असे सांगितले. तेव्हा तिने व तिच्या नवऱ्याने प्रलोभनाला बळी पडून तिची ओटी भरण्याचा कार्यक्रम आठ दिवसात केला. (लोकांना जेवण देण्यासाठी

खर्चही केला.) पुढे तिला मुलगा न होता मुलगी झाली. तिच्या नवऱ्याने परत 'रेणुके'कडे जाऊन विचारले की "तू मुलगा होईल असे म्हणाली होतीस. मग मुलगी का झाली?" तेव्हा 'रेणुका' म्हणाली, "तुला मी मुलगाच दिला होता. पण तू कुणाची ओटी भरलीस? त्या चुकीबद्दल मी त्या मुलगाची मुलगी केली." त्यांनी मुलगा झाला नाही, मुलगी झाली म्हणून रेणुकेची नंतर ओटी भरण्याचा बोललेला नवस फेडला नाही. आश्चर्य असे की मुलगी जन्मल्यानंतर काही दिवसातच त्या मुलीच्या जननेंद्रियातून अचानक रक्तस्राव सुरू झाला. अनेक डॉक्टरांना त्या मुलीला दाखवण्यात आले. पण वैद्यकशास्त्रात न बसणारा हा प्रकार असल्यामुळे कोणत्याही डॉक्टराचा कसलाही इलाज त्या विचित्र प्रकारावर चालू शकला नाही. शेवटी त्यांना आपली चूक उमगली व रेणुकेची ओटी भरतो असे ते म्हणाले आणि तिचा भंडारा लावला; आणि आश्चर्य असे की ओटी भरतो असे म्हणून भंडारा लावताच एका तासातच रक्तस्राव बंद झाला ! त्यांनी लगेच रेणुकेची ओटी भरली व लोकांना जेवण घातले. त्यानंतर आजतागायत त्या मुलीला कसलाही त्रास झालेला नाही.<sup>२५९</sup>

वरील उदाहरण 'रेणुके' ने ज्या चुकीबद्दल आपण मुलगाची मुलगी केली असे म्हटले आहे, ती चूक म्हणजे दिलेल्या शब्दाप्रमाणे रेणुकेची ओटी भरण्याऐवजी दुसऱ्याच एका (जल) देवतेची त्या कुटुंबाने ओटी भरली. येथे वचन भंगाबरोबरच निष्ठाभंगही झालेला आहे. त्या कुटुंबाची निष्ठा, त्याने आपल्या इष्टदेवतेने जे सांगितले ते करण्याऐवजी एका आगंतुक देवतेने जे सांगितले (तेही आगंतुकपणे) ते केल्यामुळे भंग पावली. 'यदा वै करोति अथ निस्तिष्ठति । यदा वै निस्तिष्ठति अथ श्रद्धधाति।' (छां. उप. ७.१९.२१, २०) (म्हणजे 'कृतीने निष्ठा व्यक्त होते व निष्ठेने श्रद्धा व्यक्त होते') या उपनिषद वचनानुसार त्या कुटुंबाने कृतीने आपली निष्ठा व श्रद्धा व्यक्त केली असून त्यातून त्याच्या निष्ठेचा व श्रद्धेचा भंग झाला असल्याचे दिसून येते. येथे वचनभंगाबरोबरच निष्ठा व श्रद्धाभंगही झालेले आहेत व स्वाभाविकच त्याचे परिणाम त्या कुटुंबाला तत्काळ भोगावे लागले आहेत. अशारीतीने (वचनभंगाच्या) वाईट कर्मांमुळे त्या कुटुंबाला त्याने बोललेल्या नवसाचे फळ मिळाले नाही. हा दोष त्या देवतेचा नाही, तर त्या कुटुंबाच्या कर्मांचा आहे, हे स्पष्ट आहे. (वास्तविक आगंतुकपणे नदीवर भेटलेल्या त्या स्त्रीच्या अंगात जलदेवता मुळीच संचारलेली नव्हती, हे तिने सांगितल्याप्रमाणे घडले नाही, या वस्तुस्थितीवरून आपोआपच सिद्ध होते.)

रेणुकेने आपण मुलगाची मुलगी केली असे जे म्हटले आहे, त्याची आधुनिक तंत्रविज्ञानाच्या साहाय्याने शहानिशा करता आलेली नसली तरी, मागे उरून कुटुंबाच्या प्रकरणात भगूबाई या देवतेने जो संबंधित स्त्रीच्या गर्भामध्ये



फरक केला, त्याची आधुनिक तंत्रविज्ञानाच्या (उदा. सोनोग्राफीच्या) साहाय्याने शहानिशा केलेली असल्यामुळे व असा गर्भातील फरक त्या तंत्राने (भौतिक पातळीवर) शाबित झालेला असल्यामुळे, येथेही तसा फरक (मुलगाची मुलगी) झालेला असण्याची शक्यता नाकारता येत नाही. (पृ.४१३) [भुवर्लोकाच्या (astral) पातळीवर असा फरक करणे त्या पातळीवरील देवतांना अशक्य नाही, हे यापूर्वीच्या संकेश्वराच्या टिनाच्या कपाळावर स्वप्नातील (भुवर्लोकातील) कुंकू प्रत्यक्षात (भूलोकात) उमटविणे, माई सामंताच्या न वाढलेल्या (infantile) गर्भाशयाची प्रत्यक्षात वाढ करून तिची गर्भाधारणा करविणे (जी गोष्ट वैद्यकशास्त्राला अशक्य आहे), स्वप्नात नारायण पंडितांना गुलाबरावांनी दिलेली भस्माची पुडी प्रत्यक्षात त्यांच्या उशीजवळ सापडणे, चिलेदेवांनी तानाजी जाधवांना स्वप्नात ड्रायव्हिंग शिकवणे व ते नंतर प्रत्यक्षात एस्. टी. बस चालवू शकणे यासारख्या घटनांवरून सिध्द होते.] तात्पर्य, वचनभंग हे एक फार मोठे अनैतिक कृत्य (पाप) आहे, हे वरील उदाहरणे दाखवून देतात. प्रथाभंग हाही वचनभंगाचाच प्रकार आहे, हे गणपतीविषयीची उदाहरणे दाखवून देतात. हे सर्व वचनभंगाचे प्रकार एका दृष्टीने असत्य वचनाचेच-खोटे बोलण्याचेच-प्रकार असल्यामुळे संत-सत्पुरुष बोलल्याप्रमाणे का वागतात, हे लक्षात येईल. शारीरिक व्याधीमुळे अगर दोषामुळे बोललेला शब्द कदाचित त्यांना पाळता आला नाही तर स्वतः निसर्ग देवता त्यांच्या रुपाने तो पाळतात, हे गजाननमहाराजांच्या बाबतीत घडलेली 'चमत्कारा'ची घटना दाखवून देते. सत्यवचनाला किती महत्व आहे, हे यावरून लक्षात येईल. हरिश्चंद्र राजा डोंबाच्या घरी पाणी का भरला हेही त्यावरून कळेल.

अशारीतीने वचनभंग व प्रथाभंग यामुळे तो भंग करणाऱ्यांना होणारा त्रास, तसेच अडचणीच्या वेळी अतींद्रिय पातळीवरून (भुवर्लोकातून) माणसांना केली जाणारी मदत, या सर्व गोष्टी लक्षात घेता, देव-देवता व देवदूत हे खोटे (काल्पनिक) नाहीत, हे कोणालाही मान्य करावे लागेल. जसे भानामतीमुळे निसर्गात्म्यांचे अस्तित्व सिध्द होते, तसे वरील घटनांमुळे देव-देवता व देवदूत यांचे अस्तित्व सिध्द होते. (अर्थात् देवदूत हे वरच्या पातळीवरचे निसर्गात्मेच आहेत.) अमेरिकन लोकांप्रमाणे देवदूत भारतीयांच्याही अनुभवास येत असल्यामुळे देवदूत ('यूफो' प्रमाणे) केवळ पाश्चात्यांचे पुराण आहे, असे म्हणता येणार नाही, हे उघड आहे. 'यूफो' हे संस्कृती-भिन्नतेमुळे (पाश्चात्यांच्या भौतिक-यांत्रिक संस्कृतीमुळे) पाश्चात्यांचे 'पुराण' (बनले वा ठरले) असले तरी 'देवदूत' हे भारतीयांच्याही अनुभवाला येत असल्यामुळे भारतीयांचेही किंबहुना सर्व मानवजातीचेच ते पुराण ठरते. पुराणाशिवाय मनुष्य जगूच शकत नसल्यामुळे पुराणातील देवदेवता व देवदूत हे मानवी जीवनाचे एक महत्वाचे-नव्हे अविभाज्य अंग ठरते. त्यांचे अस्तित्व

नाकारुन त्यांच्या कथा अधश्रद्धा म्हणून हसण्यावारी नेणे, हे अज्ञानाचे, अतींद्रिय विज्ञानाची ओळख नसल्याचे, लक्षण आहे.

### कर्मदेवता, लोकपाल आणि विश्वव्यवस्था

हे देव-देवता व देवदूत नेमके कोण आहेत ? हा प्रश्न कुणाच्याही मनात निर्माण होईल. काही विचार-रूपे (thought forms) मनोनिर्मितीच्या पध्दतीने तयार होत असली तरी प्राधान्यतः देवदेवता ह्या दृश्य विश्वाची व्यवस्था पाहणारे, त्या विश्वाची देखरेख करणारे, त्या विश्वाचे कार्य सुरळीत चालवणारे लोकपाल, रक्षक व कार्यकर्ते आहेत असे ब्रह्मविज्ञान सांगते. ब्रह्मविज्ञानानुसार या विश्वाचे कार्य आंधळेपणाने चालत नाही, जाणीवयुक्त शक्तींनी (intelligent forces) चालते, ह्या जाणीवयुक्त शक्ती म्हणजेच देवदेवता व देवदूत होत. याविषयी ब्रह्मविज्ञान म्हणते, "The whole kosmos is guided, controlled and animated by almost endless series of Hierarchies of sentient beings, each having a mission to perform and who - whether we give to them one name or another, and call them Dhyanī Chohans or Angels - are "messengers" in the sense only that they are the agents of Karmic and Cosmic Laws" <sup>२६०</sup> या उताऱ्याचा अर्थ वर सांगितला आहेच. यातील शेवटच्या उपवाक्याचा अर्थ असा, "ह्या जाणीवयुक्त शक्ती-त्यांना नांव काही द्या-ह्या विश्वातील 'देवदूत' आहेत. म्हणजेच वैश्विक नियम अंमलात आणणाऱ्या व (मानवाला त्याच्या) कर्माचे फळ देणाऱ्या शक्ती आहेत. म्हणून त्यांना कर्मदेवता म्हणता येईल." "They are the protectors of mankind and also the agents of Karma on earth.. All these Gandharvas, the Asuras, Kinnaras and Nagas are allegorical descriptions of the 'four maharajas' .. Indra (East), Yama (South), Varun (West) and Kubera (North)," <sup>२६१</sup> म्हणजे "गंधर्व, असुर, किन्नर व नाग हे इंद्र, यम, वरुण आणि कुबेर या चार लोक (दिक्) पालांच्या नांवाखाली पृथ्वीवरील मानवाचे रक्षण करणाऱ्या व त्याच्या कर्माचे फळ देणाऱ्या (निसर्ग देवता) आहेत." (इंद्र-वरुणादि) निसर्गदेवता मानवाच्या रक्षणकर्त्या असल्या तरी त्याच्या कर्मफलदात्याही असल्यामुळे 'यूफो' च्या संपर्कात येणाऱ्या सर्वांना सारखेच अनुभव का येत नाहीत किंवा सर्वांवर त्यांचे सारखेच परिणाम का होत नाहीत-काही जणांवर त्यांचे चांगले तर इतर काही जणांवर त्यांचे वाईट परिणाम का होतात-याचा उलगडा होतो. (हा त्या त्या व्यक्तीच्या कर्माचे फळ वा परिणाम असतो.) तसेच अडचणीच्या वेळी सर्वांनाच (अतींद्रिय पातळीवरून) देवदूतांची मदत का मिळत नाही, या गोष्टीचाही उलगडा होतो. सर्वच नैसर्गिक घटना मानवाच्या कर्मानुसारच घडतात, आणि 'यूफो' व 'देवदूतांची मदत' या नैसर्गिक घटना या नियमाला अपवाद नाहीत. कारण ब्रह्मविज्ञानानुसार "निसर्गातमे किंवा निसर्ग शक्ती ह्या दृश्य जगात अदृश्य राहून कार्य करणाऱ्या

दुव्यम शक्ती असून त्या स्वतः मूळ (प्राथमिक) कारणाचे परिणामरूप आहेत; म्हणजे मूळ कर्माचे केवळ फळ देण्याच्या किंवा मूळ किंवा प्राथमिक नियमांची केवळ अंमलबजावणी करणाऱ्या त्या शक्ती आहेत.” (“The ‘Elementals’, the Nature Forces, are the acting, though invisible .. secondary Causes and in themselves the effects of primary Causes behind the veil of all terrestrial phenomena.”<sup>२५१</sup>) हे प्राथमिक वा मूळ कारण म्हणजे अर्थात् ईश्वरशक्ती वा ईश्वरी संकल्प होय.

## कर्म, कर्मफल आणि विधिलिखित

अशारीतीने हे दृश्य विश्व नियमबद्ध असले तरी ते आंधळ्या वा यांत्रिक नियमांनी चालत नसून जाणीवयुक्त शक्तींच्या (intelligent forces) साहाय्याने चालते हे वरील विवेचनावरून स्पष्ट होईल. म्हणून विश्वाच्या नियमांच्या अमलबजावणीमध्ये कधीकधी चुकाही होताना दिसतात. अशा चुका विचित्र आकाराची अर्भके जेव्हा जन्माला येतात तेव्हा दिसून येतात. (अशा अर्भकांना भ्रूणशास्त्रात monsters- राक्षस म्हणतात.) या चुका असल्यामुळे ती विचित्र अर्भके फार काळ जिवंत राहू शकत नाहीत. यावरून ती निसर्गदेवतांची चूक असल्याचे सहज लक्षात येते. (या चुकानाही काही कारणे असू शकतात.) जी अर्भके शारीरिक दोषासह (उदा. हात, पाय नसणे इ.) जन्मतात पण जगतात ती कर्मदोषामुळे असाही साहजिकच निष्कर्ष निघतो. (उदा. युरोपातील थालिडोमायिडचे प्रसिद्ध परिणाम किंवा सयामी जुळे.) काही चुका चमत्कारयुक्तही असतात. उदा. मेलेला माणूस कधीकधी चितेवर उठून बसतो. (‘मेलेला’, ‘मेला म्हणून समजलेला’ नव्हे हे येथे लक्षात ठेवावे ! ) म्हणजे अक्षरशः प्रेत परत जिवंत होते. यमदूतांनी नावात केलेली-किंवा अन्य तऱ्हेची-गल्लत याला कारणीभूत असून अशा चुकांची दोन उदाहरणे यापूर्वी दिली आहेत. (पृ. २२९-३०) अशा चुका होत असल्या तरी त्यांचे दीर्घगामी परिणाम होत नसल्यामुळे त्या कर्मफळांमध्ये मोडत नाहीत; किंवा कर्माच्या गंभीर परिणामांचे ते निदर्शक नसतात, हे लक्षात ठेवावे. कारण कर्माचे फळ देण्यामध्ये चूक होत नसते, हे कधीच विसरू नये. कर्मफल देण्यात कधीच चूक न होण्याचे कारण उपनिषत्कारांनी म्हटल्याप्रमाणे स्वतः ईश्वर हा ‘कर्माध्यक्ष’ असून प्रत्येक कर्माचा तो ‘साक्षी’ असतो. (श्वे. उप. ६.११) भगवद्गीताही म्हणते, ‘भूतभावोद्भवकरः विसर्गः कर्मसंज्ञितः ॥ (८.३) म्हणजे “विश्वाची, त्यातील भूतमात्राची, निर्मिती हे स्वतः ईश्वराचेच ‘कर्म’ आहे.” त्यामुळे त्याचे फळ काटेकोरपणे देणे हे त्या ईश्वराचेच उत्तरदायित्व आहे. त्यामुळे त्यात चूक झाली तर ती ईश्वराचीच चूक ठरेल; आणि ती चूक त्याने केली तर त्याला ‘ईश्वर’च म्हणता येणार नाही ! कारण ईश्वर याचा अर्थच सर्वशक्तीमान -म्हणजे कोणत्याही शक्तीची त्याच्यात उणीव नाही, असा

आहे. तात्पर्य तो ईश्वर असल्यामुळे अशी चूक कधीच करीत नाही. ही गोष्ट मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांनी पुढीलप्रमाणे सांगितली आहे. "KARM is an Absolute and Eternal law in the world of manifestation.. Karma is one with the Unknowable, of which it is an aspect in its effects in the phenomenal world."<sup>२६३</sup> म्हणजे "कर्माचा नियम दृश्य विश्वाचा सर्वसमावेशक व सार्वकालिक नियम आहे. (विश्वातील) अज्ञेय (वा अज्ञात) शक्ती (ईश्वर) आणि त्याचे कर्म हे वेगळे नसून एकच आहेत. दृश्य विश्व हे त्या शक्तीचेच एक (अविभाज्य) अंग आहे." अशरीतीने हे दृश्य विश्व त्या ईश्वराचे 'कर्म' (वा अविभाज्य अंग) असल्यामुळे त्याचे कार्य सुरळीतपणे चालण्यासाठी अगदी काटेकोर यंत्रणा निर्माण करण्यात आली असून ती यंत्रणा मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की यांनी पुढीलप्रमाणे वर्णन करून सांगितली आहे. "The Lipikas, from the word lipi 'writing', means literally the 'scribes' (mentioned in the Atharva-Veda, I, 31, 1-4). Mystically, these Divine Beings are connected with Karma, the Law of Retribution, for they are the Recorders Annalists who impress on the (to us) invisible tablets of the Astral Light - 'the great picture gallery of eternity' - **a faithful record of every act, and even thought, of man, of all that was, is, or ever will be, in the phenomenal Universe.** The divine and unseen canvass is the Book of Life... The Hindu Chitragupta who reads out the account of every soul's life from his register, the so-called Agra-Sandhani; the 'Assessors' who read theirs from the heart of the defunct, which becomes an open book before either Yama, Minos, Osiris or Karma - are all so many copies of, and variants from the Lipikas, and their Astral Records. Never the less, the Lipikas are not deities connected with Death, but with Life Eternal

"Connected as the Lipikas are with the destiny of every man and the birth of every child, whose life is already traced in the Astral Light not fatalistically, but only because the future like the PAST, is ever alive in the PRESENT, they may also be said to exercise an influence on the Horoscopy"<sup>२६४</sup>

वरील उतारा मुळातून आणि विस्ताराने देण्याचे कारण त्यातील मुद्दे सुबोधरीतीने मराठीत भाषांतर करून मांडल्यानंतर वाचकांच्या लक्षात येईल. हे मुद्दे पुढीलप्रमाणे

- १) या विश्वात प्रत्येक अपराधाला शिक्षा आहे. म्हणजेच प्रत्येक कृतीला (विचार ही सुध्दा कृतीच आहे) अपरिहार्यपणे फळ मिळते. या फळ देणाऱ्या निमयालाच संक्षेपाने 'कर्म' म्हणतात.
- २) या शिक्षेची-कृतीच्या फळाची-म्हणजेच 'कर्मा' ची-काटकोर नोंद ठेवली जाते.

ती नोंद ठेवणाऱ्यांना 'लिपिक' (लिपी=लेखन) म्हणतात. (यांचा अथर्ववेदात उल्लेख आहे. (I. 31. 1-4)

- ३) हे 'लिपिक' मानवाला अदृश्य अशा 'कॅनव्हास' वर ह्या कर्माच्या नोंदी ठेवतात. या कॅनव्हासवरील नोंदींना 'सार्वकालिक चित्रसज्जा' म्हणतात.
- ४) त्यांना 'सार्वकालिक चित्रसज्जा' म्हणण्याचे कारण असे की त्यामध्ये सर्व कालातील माणसांच्या प्रत्येक कृतीची, त्याच्या प्रत्येक विचाराची सुध्दा (म्हणजेच त्याच्या प्रत्येक कर्माची \*) चित्ररूपाने नोंद ठेवलेली असते म्हणून त्याला 'चित्रगुप्ता'ची नोंद म्हणतात. म्हणून त्या नोंदीला 'जीवन-पुस्तक' हे दुसरे नांव आहे.
- ५) प्रत्येक जीवात्म्याच्या (जीवन-पुस्तकातील) ह्या नोंदी 'न्यायाधीश' (हिंदू 'चित्रगुप्त') 'यमा' पुढे (कर्मदेवतेपुढे) वाचतो. (या 'यमा'ला ग्रीक लोक 'मिनोस' व इजिप्शन लोक 'ऑसिरिस' म्हणतात.) या कर्माच्या नोंद-पुस्तकाला 'अग्रसंधानी' म्हणतात. प्रत्येक जीवाची व त्यांच्या कर्माचीही ही (अग्रसंधानीमधील) नोंद उपर्युक्त लिपिकांनी केलेली नोंदच असते हे लक्षात ठेवावे. हे लिपिक (यमापुढे ते पुस्तक वाचतात म्हणून) त्या मृत्यूशी संबंधित देवता आहेत असे मात्र समजू नये, ते विश्वाच्या चिरंतन जीवनाशी संबंधित देवता आहेत, हे लक्षात ठेवावे.
- ६) प्रत्येक मुलाचा जन्म व त्याचा सर्व आयुष्यक्रम, तसेच प्रत्येक माणसाचा जीवनक्रम अशारीतीने अगोदरच लिपिकांनी लिहून ठेवलेला असल्यामुळे- म्हणजेच ते 'विधिलिखित' असल्यामुळे, जन्मकुंडली-शास्त्र (ज्योतिष-शास्त्र) हे या लिपिकांच्याच अखत्यारातील शास्त्र ठरते. [कारण ग्रहांच्या गतीची नोंदही या लिपिकांनी (माणसाच्या जन्मनोंदीप्रमाणे) अगोदरच करून ठेवलेली आहे.] तथापि त्यावरून दैववाद सिध्द होत नाही. कारण भविष्य हे भूतकाळाप्रमाणे वर्तमानकाळात जगत असते, हे लक्षात ठेवावे.
- ७) या लिपिकांच्या नोंदीला Astral Light (नक्षत्र-शास्त्र किंवा आकाशलेखन) म्हणतात. हेच 'विधिलिखित' किंवा पूर्वी सांगितलेले 'आकाशिक रेकॉर्ड' होय. (पृ. ३२७)

हा उतारा ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या Secret Doctrine या ग्रंथातून घेतलेला आहे, म्हणून ते सर्व त्यांचे स्वतःचे म्हणणे आहे, असे समजू नये; तर ब्रह्मवैज्ञानिकांनी लिहून ठेवलेल्या गुप्त (secret) लिखाणाचा त्यांनी केलेला तो सुबोध अनुवाद (टीका)

\* योगी अरविंद म्हणतात, 'केवळ माणसाच्या मनातील विचारसुध्दा परिणाम करणारी शक्ती आहे.' (Thoughts unexpressed can also go out as forces and can produce their effects, (They) are also active energies and can produce their own vibrations, effects or reactions " Letters on Yoga part one p.477)

आहे. हे ब्रह्मविज्ञान शब्दात सुबोधरीतीने मांडण्यासाठी रुपकांचा अपरिहार्यपणे अवलंब करावा लागतो आणि ब्रह्मविज्ञानात तो सढळ हाताने केलेला आढळून येतो. म्हणून 'लिपिक', 'अग्रसंधानी', 'जीवन-पुस्तक', 'यम', 'चित्रसज्जा' इ. नामे व 'लिहिणे', 'नोंद करणे', 'वाचणे' इ. क्रियादर्शक पदे वरील वर्णनांत आली आहेत. ती सर्व रुपकात्मक आहेत. त्या रुपकात्मक शब्दांना महत्त्व नसून त्यांच्या पाठीमागील कल्पनांना (Ideas) महत्त्व आहे. (तथापि त्या रुपकात्मक कल्पना 'यूफो' प्रमाणे प्रसंगोपात्त प्रत्यक्ष 'रुपे' घेऊ शकतात हे विसरू नये.) कारण ब्रह्मविज्ञानात 'कल्पना' हीच वास्तवे (facts) असतात.\* म्हणून वर एके ठिकाणी दिलेल्या अवतरणात 'त्या देवदूतांना-देवतांना-नांवे काही द्या' असे म्हटले आहे. यमाला 'ऑसिरिस' म्हटले काय, किंवा 'मिनोस' म्हटले काय, ती कर्मदेवता आहे या कल्पनेत-वास्तवात-फरक पडत नाही. तसेच लिहिणे, वाचणे इ. क्रिया हीसुद्धा कल्पनांना मूर्त रुप देण्यासाठी वापरलेली साधने (रुपके) आहेत. कारण माणूस स्वतः मूर्त रुपात असल्यामुळे मूर्त रुपातच कोणतीही कल्पना तो चांगल्या रीतीने ग्रहण करू शकतो. पुराणे ही त्यासाठीच असतात. कारण ती कल्पनांना मूर्त रुपे देतात. पुराणांना कपोलकल्पित म्हणणाऱ्यांना त्यांच्या पाठीमागचे हे अतींद्रिय (ब्रह्म) विज्ञान माहीत नसते. म्हणून ते पुराणे खोटी म्हणतात. ('यूफो' सारख्या घटनांमुळे मात्र अशा लोकांना पुराणे काल्पानिक नसल्याचे हल्ली मान्य करावे लागत आहे ! कारण 'यूफो' ह्या, 'कल्पना मूर्त रुप धारण करू शकतात' -Thought is thing- या मुख्य अतींद्रिय तत्त्वाचे व्यावहारिक पातळीवरील सार्वजनिक प्रात्यक्षिकच public demonstration आहेत !)

वरील अवतरणातील प्रस्तुत लेखकाने ठळक केलेला भाग काही वाचकांना न पटणारा किंबहुना धक्का देणाराही ठरू शकतो. कारण मानवी जीवन व विश्वातील सर्व घटना लिपिकांनी अगोदरच लिहून ठेवलेल्या असतील, त्याप्रमाणे सर्व घडणार असेल, तर माणसाला इच्छा स्वातंत्र्य कुठे उरले ? माणसाला इच्छास्वातंत्र्य नसेल तर नीतिशास्त्र अर्थहीन ठरते. कारण इच्छा स्वातंत्र्य (free-will) हे नीतिशास्त्राचे अधिष्ठान आहे. माणसाला इच्छेप्रमाणे वागण्याचे स्वातंत्र्य नसेल तर तो एक यंत्र ठरतो व यंत्राच्या वागण्याला चांगले-वाईट ही नैतिक विशेषणे लावता येत नाहीत.

\* 'कल्पना' हेच ब्रह्मवैज्ञानिक 'वास्तव' कसे असते हे ज्ञानेश्वरांनी पुढील ओवीत सांगितले आहे. म्हणऊनि नाही आणि असे । हे कल्पनेचेनि सौरसे । जे कल्पनालोपे भ्रंशे । आणि कल्पनेसबे होय ॥ (९९१) म्हणजे 'नाही आणि आहे' हे सर्व कल्पनेच्या संबंधाने असते. कल्पना गेली की कल्पनेतील वस्तू जाते. कल्पना केली की ती निर्माण होते (भासते.) योगवासिष्ठात वसिष्ठांनी रामाला कल्पनेने सांगितलेली जीवट ब्राह्मणाची गोष्ट प्रत्यक्षात कशी घडली हे दाखवून दिले, अशी कथा आहे. (योगवासिष्ठ, निर्वाणप्रकरण, पूर्वार्ध, सर्ग ६२) तात्पर्य ब्रह्मविज्ञानाच्या दृष्टीने कल्पना केलेल्या गोष्टी सकल्पशक्तीने खऱ्या ठरू शकतात.

नीतिशास्त्र गेले की धर्मशास्त्रही जाते. कारण चांगले-वाईट या कल्पनेबरोबरच पाप-पुण्याची कल्पनाही अर्थहीन ठरते. ब्रह्मविज्ञानाला नीतिशास्त्र व धर्मशास्त्र ही दोन्ही शास्त्रे अर्थहीन ठरावीत हे अर्थातच मान्य होणार नाही. म्हणून ब्लॅन्केटस्की यांनी म्हटले आहे की हा दैववाद नाही, (not fatalistically). कारण त्या म्हणतात की भूतकाळाप्रमाणे भविष्यकाळाही वर्तमानकाळात जगत असतो. म्हणजे मनुष्य वर्तमानकाळात भविष्यकाळाचे भान ठेवून जगतो. दुसऱ्या शब्दात आपले भविष्य वर्तमानकाळातील वर्तमाने तो घडवतो. पण मनुष्य वर्तमानकालातील वर्तमाने आपले भविष्य घडवत असेल, म्हणजे त्याला इच्छा व वर्तन स्वातंत्र्य असेल, तर त्याचे विधिलिखित अगोदरच ठरले आहे, असे कसे म्हणता येईल ? कारण जे अगोदरच ठरले आहे त्यात बदल कोणालाही करता येणार नाही. ब्रह्मविज्ञानाचे हे सर्व विवेचन परस्पर-विरोधी नाही काय ? हे विवेचन परस्पर-विरोधी नाही. ते कसे हे दाखवून देण्यासाठी लेखकाला फार मोठा प्रपंच करावा लागेल. तो तेथे शक्य नाही. तथापि विषयाचे महत्त्व लक्षात घेऊन थोडक्यात याची चर्चा करू.

### विधिलिखित आणि मानवाचे इच्छा स्वातंत्र्य

‘इच्छास्वातंत्र्य’ याचा अर्थ इच्छेला येईल तसे वागण्याचे स्वातंत्र्य असा अनेकजण करतात. पण हा अर्थ पूर्ण चुकीचा आहे. कारण असे वागण्याचे स्वातंत्र्य कोणालाही नाही. साधे रस्त्यावर वाहने हाकण्याचे उदाहरण घेतले तरी ही गोष्ट आपल्या लक्षात येईल. रस्त्यावर कोणालाही कशीही आपली वाहने हाकण्याचे स्वातंत्र्य नाही. हीच गोष्ट माणसाच्या समाजातील वागण्यालाही लागू आहे. समाजात कोणालाही कसेही वागण्याचे स्वातंत्र्य नाही. या दृष्टीने पाहता निरपेक्ष स्वातंत्र्य (absolute freedom) हे शब्द अर्थहीन ठरतात. याचा अर्थ बंधनामुळेच स्वातंत्र्याला अर्थ प्राप्त झाला आहे, असा होतो. बंधन नसेल तर स्वातंत्र्याला अर्थ नाही. हेच दुसऱ्या शब्दात असे सांगता येईल की स्वातंत्र्य हवे असेल तर बंधन स्वीकारले पाहिजे. म्हणजेच पूर्ण बंधन हे पूर्ण स्वातंत्र्यासाठी आवश्यक आहे. ब्रह्मविज्ञानानुसार पूर्ण स्वातंत्र्यासाठी आवश्यक असलेले हे पूर्ण बंधन म्हणजे जन्ममरणाच्या चक्राचे (फेऱ्याचे) ‘बंधन’ होय; आणि पूर्ण स्वातंत्र्य म्हणजे या चक्रातून ‘सुटका’ होय. या सुटकेलाच ‘मुक्ती’ वा ‘मोक्ष’ (Liberation) म्हणतात. हेच खरे वा पूर्ण स्वातंत्र्य असून ते जन्म-मरणाच्या चक्रात - शारीरिक ‘बंधना’त- राहूनच मनुष्याला मिळवायचे आहे. स्वातंत्र्यासाठी बंधनाची आवश्यकता आहे ती या अर्थाने. पूर्ण बंधन व पूर्ण स्वातंत्र्य या दोन्हीच्या मधल्या अवस्थेत मनुष्य फिरत असून त्याला थोडे बंधन व थोडे स्वातंत्र्य देण्यात आले आहे. ईश्वराची ही माणसासाठी केलेली योजना आहे. ईश्वराची ही योजना लेडबीटरनी पुढीलप्रमाणे

सांगितली आहे, "The plan of the Deity is to give man a limited amount of free-will; if he uses that small amount well, he earns the right to a little more next time; if he uses it badly, suffering comes upon him as the result of such evil use, and he finds himself restrained by the result of his previous actions." याचा अर्थ असा : "ईश्वराची योजना माणसाला मर्यादित स्वातंत्र्य देण्याची आहे. त्याला दिलेल्या या मर्यादित-स्वातंत्र्याचा त्याने चांगल्या रीतीने उपयोग केला तर पुढील जन्मी त्याला अधिक स्वातंत्र्य मिळते-त्याचा त्याला हक्क प्राप्त होतो; आणि त्याचा त्याने वाईट रीतीने उपयोग केला तर त्याचे वाईट परिणाम (पुढील जन्मी) त्याला भोगावे लागतात, व परिणामी त्याच्या स्वातंत्र्याचा संकोच होतो." (आजार, रोग, शारीरिक व्यंगे इ. ही माणसाच्या स्वातंत्र्याचा संकोच करणारी पूर्वजन्मातील वाईट कर्माची, त्याला मिळालेल्या स्वातंत्र्याचा त्याने वाईट रीतीने केलेल्या उपयोगाची, दुरुपयोगीची, फळे होत.) पुढे लेडबीटर म्हणतात, "As the man learns how to use his free-will, more and more of it is entrusted to him, so that he can acquire for himself practically unbounded freedom in the direction of good, but his power to do wrong is strictly restricted" <sup>२६</sup> म्हणजे "मनुष्य आपल्या स्वातंत्र्याचा (चांगला) उपयोग करायला जसजसा शिकेल, तसतसे अधिकाधिक स्वातंत्र्य त्याच्या हवाली करण्यात येते व ते चांगल्या कर्माच्या दिशेने अमर्याद होत जाते. पण त्याचवेळी वाईट कर्म करण्याचे त्याचे स्वातंत्र्य कठोरपणे कमी कमी वा संकुचित होत जाते." हाच कर्मसिद्धांत असून तो मानवाच्या (आध्यात्मिक) उत्क्रांतीला-म्हणजे त्याच्या चांगले कर्म करण्याच्या स्वातंत्र्याच्या वाढीला - मदत करतो. अशारीतीने मानवाचे खऱ्या अर्थाने स्वातंत्र्य वृद्धिंगत होत होत तो कर्ममुक्तीच्या - बंधनमुक्तीच्या - म्हणजे पूर्ण स्वातंत्र्याच्या जवळ जातो व शेवटी जन्ममरणाच्या चक्रातून पूर्ण मुक्त होतो. म्हणजेच पूर्ण स्वतंत्र होतो. दुसऱ्या शब्दात तो ईश्वररूप होतो. कारण केवळ ईश्वरच पूर्ण स्वतंत्र आहे. योगी अरविंदांच्या शब्दात, "One can be free only by living in the Divine" <sup>२७</sup> म्हणजे "मनुष्य दिव्य (ईश्वर) रूप बनूनच केवळ (खऱ्या अर्थाने) स्वतंत्र होतो." याचा अर्थ ईश्वराच्या बाहेर राहणे म्हणजे बंधनात राहणे होय.

वरील विवेचनावरून हे लक्षात येईल की वाईट कर्म करण्याचे स्वातंत्र्य हे खरे स्वातंत्र्य नसून उलट ते जन्ममरणाच्या चक्रात माणसाला जास्तच अडकवणारे 'बंधन' आहे. याच्या उलट चांगले कर्म करण्याचे बंधन हे 'बंधन' नसून उलट तेच खरे 'स्वातंत्र्य' आहे, कारण ते जन्म-मरणाच्या फेऱ्यातून, जोखडातून माणसाला सोडविते. याला अध्यात्मशास्त्राचा विरोधाभासात्मक (paradoxical) नियम म्हणता येईल. या नियमानुसार पूर्ण स्वातंत्र्यासाठी मनुष्य चांगले कर्म करण्यास कठोरपणे



बांधला गेला आहे व पूर्ण बंधनासाठी वाईट कर्म करण्यास तो पूर्ण 'स्वतंत्र' आहे. म्हणजे सामान्य माणसाचे 'स्वातंत्र्य' हे अध्यात्मशास्त्राच्या दृष्टीने 'बंधन' आहे, व सामान्य माणसाच्या दृष्टीने जे 'बंधन' आहे ते अध्यात्मशास्त्राच्या दृष्टीने 'स्वातंत्र्य' आहे. ही गोष्ट *Paradise Lost* (हरवलेला स्वर्ग) या मिल्टनच्या काव्यातील सैतानाच्या पुढील उद्गारावरून जास्त स्पष्ट होईल. मिल्टनचा सैतान म्हणतो, "Better to reign in Hell than to serve in Heaven." म्हणजे "स्वर्गात (देवांची) सेवा करण्यापेक्षा नरकात (पाप्यांवर) राज्य करणे (केव्हाही) जास्त चांगले आहे." सैतानाच्या या म्हणण्यातून हे स्पष्ट होते की पाप्यावर राज्य करण्याचे (वाईट कर्म करण्याचे) (सैतानाचे) स्वातंत्र्य हवे असेल तर नरकात गेले पाहिजे ! व देवांची सेवा करण्याचे (चांगले कर्म करण्याचे) आध्यात्मिक व्रत (बंधन) स्वीकारायचे असेल तर स्वर्गात प्रवेश मिळणार आहे. अशारीतीने ज्यांना स्वर्गात जावयाचे आहे, त्यांना चांगले कर्म करण्याचे कडक 'बंधन' आहे व ज्यांना नरकात जावयाचे आहे, त्यांना वाईट कर्म (पाप) करण्याचे पूर्ण 'स्वातंत्र्य' आहे. हाच कर्माचा व पर्यायाने आध्यात्मिक उत्क्रांतीचा विरोधाभासात्मक सिध्दांत असून या सिध्दांतानुसार माणसाला स्वतःचा उध्दार (आत्मकल्याण) करून घ्यावयाचा असेल तर चांगले कर्म करण्यास तो कठोरपणे 'बांधला' गेला आहे, व आत्मनाश करून घ्यावयाचा असेल तर वाईट कर्म करण्यास तो पूर्ण 'स्वतंत्र' आहे.

येथे विधिलिखिताचा कुठे संबंध येतो, असा वाचकांना प्रश्न पडेल. पण विधिलिखित म्हणजे दुसरे तिसरे काही नसून ईश्वराने मानवासाठी घालून दिलेला हा कर्मसिध्दांताचा-व पर्यायाने उत्क्रांतीचा-नियमच असून, त्यातून त्याची हटकून होणारी आध्यात्मिक उत्क्रांती हेच त्याचे 'विधिलिखित' आहे. ईश्वराने मानवासाठी निर्माण केलेली ही योजना (Divine Plan) म्हणजेच त्याचे 'विधिलिखित' होय. या योजनेनुसार मानवाने वागायचे ठरविले तर त्याचा उध्दार ठरलेला आहे; व त्याच्या विरुद्ध वागायचे त्याने ठरविले तर त्याचा आत्मनाशही तितकाच ठरलेला आहे. यालाच मानवाचे 'विधिलिखित' म्हणतात. हे भगवद्गीतेत पुढील प्रमाणे सांगितले आहे :

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाच प्रजापतिः ।

अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥

देवान् भावयतानेन ते देवा भावयन्तु यः ।

परस्परं भावयन्तः श्रेयः परं अवाप्स्यथ ॥ (भ.गी. ३.१०, ११)

अर्थ:- (सृष्टी निर्माण करताना) प्रजापती (ब्रह्मा) यज्ञासह प्रजा निर्माण करून म्हणाला, 'या यज्ञाने तुम्ही प्रजोत्पत्ती करा. या (यज्ञा) मुळे तुम्हाला हवे ते

मिळेल.<sup>१५०</sup> या यज्ञातून (त्यागातून) तुम्ही देवांची (पोषणरूपी) सेवा करा, म्हणजे देव तुमची (पोषणरूपी) सेवा करतील. अशारीतीने एकमेकांची सेवा करून तुम्ही स्वतःचे (पोषण व) श्रेष्ठ कल्याण-म्हणजे जन्ममरणाच्या फेऱ्यातून सुटका-करून घ्या. ('परं श्रेयः' म्हणजे श्रेष्ठ कल्याण, जन्ममरणाच्या फेऱ्यातून सुटका)

'यज्ञ' (sacrifice) याचा अर्थ 'त्याग' असा आहे. यज्ञाने प्रजोत्पत्ती करण्यास प्रजापतीने सांगण्याचे कारण प्रजोत्पत्ती त्यागाशिवाय होऊ शकत नाही. (प्रजापतीने त्यागरूपी यज्ञ करूनच प्रजोत्पत्ती केली आहे.)<sup>१५१</sup> शिवाय पितृऋण (प्रजापतीचे ऋण) प्रजोत्पत्ती करूनच फोडता येणार आहे. म्हणून प्रजोत्पत्तीरूपी यज्ञ (त्याग) हे गृहस्थाचे पहिले (आद्य) कर्तव्य मानले गेले आहे. यज्ञाने (त्यागाने) देवांची (पोषणरूपी) सेवा करण्यास प्रजापतीने सांगण्याचे कारणही त्यागाशिवाय ही सेवा होऊ शकत नाही, हेच आहे. किंबहुना देवांची (पोषणरूपी) सेवा हाच एक 'यज्ञ' (त्याग) आहे. हा त्याग केला नाही तर मनुष्याला कर्मबंधनात (जन्ममरणाच्या फेऱ्यात) (कायमचे) अडकावे लागते, असे यापूर्वीच्या श्लोकात गीतेने सांगितले आहे. [यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबंधनः ॥ (३.९)] याचा अर्थ त्यागाशिवाय 'मुक्ती' (पूर्ण स्वातंत्र्य) मिळणार नाही, असा होतो.

मनुष्याचा स्वाभाविक कल आपल्या स्वातंत्र्याचा उपयोग स्वार्थासाठी करण्याकडे म्हणजे 'पाप' करण्याकडे नेहमी असतो. यालाच वर सैतानाचे 'स्वातंत्र्य' म्हटले आहे. (पाप्यावर राज्य करणारा सैतान सर्वात मोठा पापी असावा लागतो ! म्हणजे त्याला सर्वात मोठा स्वातंत्र्याचा वाईट उपयोग-दुरुपयोग-करावा लागतो !) या सैतानी (वाईट कर्म करण्याच्या) स्वातंत्र्याचा त्याग करून चांगले कर्म करण्याचे म्हणजे 'देवांची सेवा' करण्याचे व्रत (बंधन) स्वीकारणे यातच मानवाचे 'श्रेष्ठ कल्याण' (म्हणजे जन्म मरणाच्या फेऱ्यातून सुटका) आहे असे येथे प्रजापती म्हणतो. येथे स्वार्थत्याग ही देवाचीच सेवा आहे, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. अशा स्वार्थत्यागी माणसाची देव (सतत) पोषणरूपी सेवा करतात, त्याचे कल्याण करतात, असे प्रजापतीने येथे म्हटले आहे.

मागे सांगितलेच आहे की पृथ्वीवरील (भूलोकातील) माणसांच्या विचारांचा व प्रवृत्तीचा परिणाम भुवर्लोकंतील देवांवर होत असतो. (पृ. ३६८) त्याचे प्रतिबिंब त्यांच्यात पडत असते. माणूस स्वार्थी व क्षुद्र बनला तर देवही क्षुद्र बनतात व त्याच्यावर ते आधिदैविक संकटे आणतात. [माणसाच्या अशाच स्वार्थी वृत्तीतून दहा हजार वर्षांपूर्वी अटलांटिस देश समुद्रात बुडाला. (पृ. ३२९) देव पूर्वी माणसांना मदत करीत असत (दोघात संबंध घडत असत) असे लेड बीटरनी म्हटल्याचे मागे सांगितले आहे. (पृ. ४४०-१) याचे कारण पूर्वी माणसात 'धर्म' होता. म्हणजे त्याची देवावर-अतींद्रिय लोकावर-श्रद्धा होती. हल्ली माणूस भौतिकवादी (mate-

rialist) व निधर्मी (secular) बनला आहे. (युरोपियन सस्कृतीचे हे लोण आहे.) त्याचे परिणाम त्याला स्वाभाविकच भोगावे लागणार आहेत, लागत आहेत. (यापूर्वी दोन महायुद्धातून पाश्चात्य भौतिकवादी देशांनी ते भोगलेच आहेत. सुनामी, भूकंप, अतीवृष्टी-अनावृष्टी, तापमानातील अति-फरक यासारखी किरकोळ अस्मानांनी (आधिदैविक) संकटे, घातपाती कृत्ये यातूनही सर्व देश ती भोगत आहेत. हा कर्मसिध्दांताच आहे.)

‘देवांची सेवा’ म्हणजे ‘यज्ञ’, म्हणजेच (स्वार्थ) त्याग असे वर म्हटले आहे. हा त्याग करायचा म्हणजे नेमके काय करायचे, असा साहजिकच प्रश्न निर्माण होतो. याचे ब्रह्मविज्ञानाचे उत्तर ‘ईश्वराच्या दैवी योजनेत सहभागी व्हायचे’ असे आहे. दैवी योजनेत सहभागी व्हायचे म्हणजे ईश्वराने रचलेल्या या वैश्विक नाटकात-ज्याला योगी अरविदांनी ‘सावित्री’ काव्यात cosmic play म्हटले आहे-त्याने नेमून दिलेल्या पात्राचे इमाने-इतबारे काम करायचे-ते पात्र (role) जाणीवपूर्वक व काटेकोरपणे वठवायचे. (नियतं कुरु कर्म त्वम् । म्हणजे ‘नेमून दिलेले (नियतीचे) काम कर’ अशी गीतेची आज्ञाच आहे. २.८) मागे सांगितल्याप्रमाणे हे विश्व म्हणजे ईश्वराने रचलेले एक नाटक आहे व आपण त्यातील पात्रे आहोत. (पृ. ३८२) प्रत्येकाचे पात्र ईश्वराने ठरवून दिले आहे व ते त्याने ठरवून दिल्याप्रमाणे प्रत्येकाने काटेकोरपणे वठवायचे आहे. पण मायेमुळे-अज्ञानामुळे-माणसाला हे [ईश्वराने रचलेले हे विश्व म्हणजे एक नाटक आहे व आपण त्यातील भूमिका वठविणारे नट (पात्रे) आहोत हे] माहीत नाही. (मायया अपहृतज्ञानाः । भ.गी.७.१५) खऱ्या ‘मी’ ला विसरून खोट्या ‘मी’ लाच खरा मी समजल्यामुळे-मायेच्या अधीन झाल्यामुळे-हे घडले आहे. (मम माया दुरत्यया - ‘माझ्या मायेचा तडाखा जबरदस्त आहे’ - असे गीतेत कृष्ण म्हणतो.) या मायारूपी अज्ञानालाच ‘अहंकार’ म्हणतात. या अहंकारामुळेच माणूस स्वतःला (स्वतंत्र इच्छेने वागणारा) ‘कर्ता’ समजतो. म्हणजे हे सर्व ‘मी करतो’ असे मानतो. (अहंकारविमूढात्मा कर्ता अहं इति मन्यते ॥ भ.गी. ३.२७) पण खरी गोष्ट अशी आहे की हे सर्व स्वतः ईश्वरच (निसर्गच) करित असतो. ‘मी करतो’ असे मानणे हे सर्वात मोठे अज्ञान आहे. योगी अरविदांच्या शब्दात “Man imagines himself to be the doer of the work by his free-will, but in really Nature determines all his work.”<sup>२९९</sup> म्हणजे “मनुष्य हे सर्व मी करतो असे समजतो, पण वस्तुतः निसर्गच त्याचे सर्व काम ठरवत असतो.” प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः । (भ.गी. १३.३०) या शब्दात गीतेने हे सांगितले आहे. त्याची अधिक फोड पुढील श्लोकात गीतेने केली आहे -

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति ।

धामयन् सर्वभूतानि यंत्रारुढानि मायया ॥ (भ.गी. १८.६१)

अर्थ :- ईश्वर सर्व भूतांच्या हृदयात वास करून त्यांना शरीररूपी यंत्रावर बसवून (आपल्या योजनेप्रमाणे) मायेने (मायेत ठेवून) फिरवत (राबवत) असतो. [ही गोष्ट श्वेताश्वतर उपनिषदात 'देवस्यैव महिमा तु लोके येनेदं धाम्यते ब्रह्मचक्रम् ॥ (६.१) या शब्दात सांगितली आहे.]

विश्वाच्या नाटकातील 'पात्र' वठवणारे आपण नट आहोत, हे ज्ञान ज्यांना आहे ते संसारातील सुख-दुःखांनी स्वतः सुखी अगर दुःखी होत नाहीत. नाटकातील पात्र वठवणारा नट नाटकातील पात्रांचे सुख व दुःख हे आपले सुख व दुःख मानत नाही. नाटकात सुख व दुःख झाल्याचे प्रसंग तो जिवंतपणे बाहेर (नाटकात) वठवत असला तरी स्वतः आत अगदी तटस्थ असतो. हाच गीतेचा अनासक्तयोग (निष्काम कर्मयोग) आहे. विश्व हे ईश्वराने रचलेले नाटक आहे, हे ज्याने मनोमन ओळखले आहे, तोच या नाटकातील आपले पात्र योग्यरीतीने वठवू शकतो व हा अनासक्तयोग आचरणात आणू शकतो. विश्वाच्या नाटकातील माणसाने वठवायच्या या पात्राविषयीचे विवेचन पाँडिचेरीच्या माताजींनी पुढीलप्रमाणे केले आहे. In the universal play there are some, the majority, who are ignorant instruments; they are actors who are moved about like puppets, knowing nothing. There are others who are conscious and these act their part knowing that it is a play."<sup>१३०</sup> म्हणजे "बहुसंख्य लोक असे आहेत की ज्यांना हे विश्वरूपी नाटक आहे व आपण त्यातील पात्र आहोत हेच माहीत नाही. अशा लोकांच्या नशीबी कळसूत्री बाहुल्याप्रमाणे जीवन जगणे वाट्याला येते. पण काही लोक असे आहेत की ज्यांना हे ज्ञान आहे व त्यामुळे ते आपली भूमिका (योग्यरीतीने) वठवत असतात. (म्हणजे नाटकातील नटाप्रमाणे त्या पात्रांच्या सुख दुःखांनी स्वतः सुखी वा दुःखी होत नाहीत. कारण) हे नाटक आहे हे ते जाणतात." अशारीतीने विश्वाच्या या नाटकातील आपल्या वाट्याला आलेली भूमिका योग्यरीतीने-अनासक्त बनून-वठविणे हीच ईश्वराची (वरील श्लोकात प्रजापतीने सांगितलेली देवांची पोषणरूपी) सेवा आहे. अर्थात् 'यज्ञ' (त्याग) आहे. तथापि "मी स्वतःच्या स्वतंत्र इच्छेने कर्ता म्हणून कर्म करीत आहे, ही 'अहंकारा' ची भावना आध्यात्मिक विकासासाठी प्रारंभीच्या काळात माणसाला आवश्यक आहे व ती आवश्यक असेपर्यंत अहंकाराची भावनाही टिकते." असे माताजींनी पुढे म्हटले आहे.<sup>१३१</sup> याचा अर्थ अर्जुनाची युद्धाच्या आरंभी 'मी युद्ध करणार नाही' ही अहंकारातून निर्माण झालेली भावना चुकीची नव्हती-योग्यच होती-असा होतो. कारण त्याच्या भावनेमुळेच कृष्णाला अर्जुनाला गीतेचा उपदेश करून त्याद्वारा जगाला निष्काम कर्मयोगाचा संदेश देण्याची संधी मिळाली. तथापि अर्जुनाला निमित्त करून कृष्णाने गीता सांगितली, हे खरे

असले तरी गीतेचा कृष्णाने उपदेश केला नसता तर माणसाला तो संदेश मिळाला नसता असे मात्र समजण्याचे कारण नाही. गीतेचा संदेश माणसाला व्यवहारात त्याच्या अहंकारामुळे अनिवार्यपणे मिळतच असतो, हे लक्षात ठेवावे. कर्माचा सिध्दांतच आहे की माणसाला आपल्या कर्मातून हा आध्यात्मिक धडा मिळावा.<sup>१५</sup> तो धडा मिळण्यासाठीच प्रारंभीच्या काळात 'अहंकारा'ची - 'मी कर्म करतो' या भावनेची - आवश्यकता आहे, असे माताजीनी म्हटले आहे. ही गोष्ट खुद्द गीतेतच कृष्णाने पुढीलप्रमाणे सांगितली आहे :

**यदहंकारमाश्रित्य न योत्स्ये इति मन्यसे ।**

**मिथ्या एष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति ॥ (भ.गी. १८.५९)**

**अर्थ :-** अहंकारातून 'मी युद्ध करणार नाही' असे जे (अर्जुना) तू म्हणतोस ते व्यर्थ आहे. हा तुझा निश्चयच खोटा आहे. कारण निसर्गच (तुझा स्वभावच) तुला युद्ध करायला (तुझे ठरलेले पात्र वठवायला) लावील.

अर्जुनाला कृष्णाने गीतेचा उपदेश केला नसता तरी त्याच्या स्वभावामुळे (निसर्गामुळे-म्हणजे निसर्गाने, ईश्वराने, रचलेल्या नाटकातील अर्जुनाच्या वाट्याला आलेल्या भूमिकेमुळे) त्याला त्यात ठरवून दिलेले पात्र अर्जुनाला वठवावेच लागले असते-म्हणजे त्याला युद्ध करावेच लागले असते, असे येथे खुद्द कृष्णानेच म्हटले आहे. असे जर असेल तर मग कृष्णाने अर्जुनाला गीतेचा उपदेश करण्याची काय आवश्यकता होती, असा प्रश्न कोणीही विचारील. याचे उत्तर 'अर्जुनाला युद्धाची उपरती झाल्यामुळे' हे लौकिक अर्थाने बरोबर असले तरी अर्जुनाला युद्धाची उपरती होणे आणि कृष्णाने त्याला गीतेचा उपदेश करणे हा वैश्विक नाटकातील एक प्रसंग असून तो अगोदरच ठरलेला होता, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. नाटक रंगण्यासाठी असे प्रसंग (ईश्वराला) विश्वरूपी नाटकात घालावेच लागतात. याचे एक समांतर उदाहरण द्यावयाचे झाल्यास पांडवांच्या बाजूने कृष्णाने केलेल्या शिष्टाईचे देता येईल. कृष्णाने पांडवांसाठी कौरवाकडे जाऊन शिष्टाई का केली ? आपली शिष्टाई सफल होणार नाही, व्यर्थ होणार आहे, हे काय कृष्णाला माहीत नव्हते ? माहीत असूनही ती शिष्टाई त्याने केली ती वैश्विक नाटकातील आपली ठरलेली भूमिका वठविण्यासाठीच होय. येथे आणखी एक समांतर घटना सांगितली पाहिजे. ती म्हणजे जसे कृष्णाने अर्जुनाला गीतेचा उपदेश करताना आपले विश्वरूप दाखवले, तसेच शिष्टाई करताना कौरवांनाही ते दाखवले. कारण अर्जुन हा जसे कृष्ण एक सामान्य मनुष्य आहे असे समजत होता, तसेच दुर्योधनही कृष्णाला सामान्य मनुष्यच समजत होता; व या समजुतीमधूनच त्याने त्याला कैद करण्याचे मनात योजिले होते. कृष्णाचे विश्व रूप पाहिल्यानंतर दुर्योधनाची ही योजना जशी त्याच्या मनातच विरघळली, तसे कौरवांचा नाश कृष्णाच्या विश्वरूपदर्शनात दिसल्यामुळे अर्जुनाचा

युद्ध न करण्याचा निश्चयही त्याच्या मनातच विरघळला, व कौरवांचा नाश ठरलेलाच आहे, आपण केवळ निमित्तमात्र आहोत, हे सत्य त्याला कळून तो युद्धास तयार झाला. अशारीतीने कृष्णाने अर्जुनाला गीतोपदेश करणे व कौरवांकडे जाऊन शिष्टाई करणे हे आपल्या अवतार कार्यातील (वैश्विक नाटकातील) आपली ठरलेली भूमिका वठविण्यासाठी आवश्यकच होते.

अवतारी गणले गेलेल्या पुरुषांनाही आपली विश्वाच्या नाटकातील ठरलेली भूमिका प्रामाणिकपणे (निःस्वार्थ बुद्धीने) वठवावीच लागते, ही गोष्ट येशूच्या चरित्रावरूनही दिसून येते. येशूची गोष्ट अशी सांगतात की त्याच्या शिष्यांना रोमन शिपाई त्याला पकडण्यासाठी येणार आहेत हे माहीत झाले होते. ते येशूला म्हणाले, “तुम्हाला पकडण्यासाठी शिपाई येत आहेत. आपण पळून जाऊ या.” येशू हसले, ते गेले नाहीत. जे होणार आहे, ते होणारच. मग का पळा ?” असे म्हणून ते स्वस्त राहिले. येशूंना आपले विश्वाच्या नाटकात ठरलेले पात्र, आपली (क्रूसावर मरण्याची) ठरलेली भूमिका, निःस्वार्थीपणे व प्रामाणिकपणे वठवायची होती, हे यावरून स्पष्ट होते. [कृष्णानेही आपला मृत्यू सामान्य व्याधाच्या हातून झाल्याची दाखवणारी भूमिका (गांधारीची शापवाणी खरी ठरविण्यासाठी) प्रामाणिकपणे वठवल्याची दिसून येते. (महाभारत, स्त्रीपर्व, अ. २५.४५)]

अशारीतीने ईश्वराने विश्वरूपी नाटकाची रचना करून त्यातील पात्रे (व घटनाही) ठरवून दिली आहेत, हे ज्ञान झाल्यावर-ते अंगी मुरल्यावर ईश्वरच सर्व गोष्टींचा कर्ता आहे, मी काही करत नाही, ही जाणीव पक्की होऊन अनासक्तयोग (निष्काम-कर्मयोग) माणसाच्या अंगी बाणतो व असा मनुष्य कर्म करूनही त्याने बाधला जात नाही (कृत्वापि न निबध्यते । भ.गी. ४.२२) म्हणजे कर्म करूनही जन्म-मरणाच्या फेऱ्यात तो सापडत नाही; कारण यज्ञासाठी (म्हणजे त्याग बुद्धीने, निःस्वार्थीपणे) कर्म करणाऱ्याचे (आपली ठरलेली भूमिका वठवणाऱ्याचे) सर्व कर्म नष्ट होते. यज्ञाय आचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥ (भ.गी. ४.२३) असे कृष्णाने गीतेत म्हटले आहे. कृष्णाचा हा उपदेश ऐकून शेवटी अर्जुन म्हणतो, “माझा मोह नष्ट झाला. माझी स्मृती जागी झाली. (नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा ॥ १८.७३) अर्जुनाचा मोह नष्ट झाला, म्हणजे त्याचे ‘अज्ञान’-‘मी करतो’ ही अहंकाराची भावना नष्ट झाली; व त्याची स्मृती जागी झाली, म्हणजे ‘मी कोण आहे, माझे खरे स्वरूप काय,’ हे त्याला आता कळाले. तो स्वतःला स्वेच्छेने, स्वतंत्र इच्छेने, वागणारी व्यक्ती समजत होता. (प्रत्येक माणूस असेच समजतो.) पण वस्तुतः आपण ईश्वराने नेमून दिलेले वैश्विक नाटकातील पात्र वठवीत आहोत, हे आता त्याला कळाले. ‘ईश्वराची इच्छा हीच आपली इच्छा’-कारण नाटकातील पात्रांना स्वतःची इच्छा नसते, नाटककाराची इच्छा हीच त्यांची इच्छा असते- हे सत्य त्याला आता

समजले. हे ज्याला समजते तो ईश्वररूपच होतो. त्याची इच्छा ही ईश्वराची इच्छा होते-ईश्वराच्या इच्छेहून ती वेगळी राहत नाही. अशावेळी इच्छास्वातंत्र्य व वर्तनस्वातंत्र्य हे शब्द अर्थहीन ठरतात. नीतिशास्त्र व धर्मशास्त्र ही अध्यात्मशास्त्रात विलीन होतात. ईश्वराच्या ठिकाणी नीतिशास्त्र व धर्मशास्त्र यांना थारा नाही.\* चांगले -वाईट, पाप-पुण्य या कल्पना ईश्वराच्या ठिकाणी नाहीत. बृहदारण्यक उपनिषदाच्या शब्दात स न साधुना कर्मणा भूयान् नो एव असाधुना कर्मणा कनीयान् ॥ (४.४.२२) म्हणजे 'आत्म्याच्या-ईश्वराच्या-ठिकाणी चांगल्या (पुण्य) कर्मणि वाढणे (बढती मिळणे) व वाईट (पाप) कर्मणि कमी होणे (अवनती होणे) असा प्रकार नाही. कारण ज्यातून या कल्पना निर्माण होतात ती (नैतिक व धार्मिक) 'कर्तव्या'ची भावनाच तेथे नाही. ही गोष्ट ज्ञानेश्वरीतील अर्जुनाच्या पुढील उद्धाराकरून स्पष्ट होते. गीतेचा उपदेश ऐकून शेवटी (ज्ञानेश्वरांचा) अर्जुन म्हणतो, तुझे नि मज मी पावोनी । कर्तव्य गेले निपटोनी । परी आज्ञा तुझीवांचोनी । आन नाही प्रभो ॥ (ज्ञाने. १८.१५६७) म्हणजे "तुझ्या कृपेने (उपदेशाने) तुझे आणि माझे रूप एकच आहे, हे ज्ञान मला झाल्यामुळे (मी आत्मरूप-ईश्वररूप झाल्यामुळे) माझे कर्तव्य समूळ नष्ट झाले. तुझी आज्ञा पाळणे (तू ठरवून दिलेली भूमिका वठविणे) याखेरीज दुसरे कर्तव्य आता मला उरले नाही." नाटकातील पाप-पुण्याच्या कल्पना त्या नाटकातील पात्रांना लागू होतात. नाटककाराला व नटांना लागू होत नाहीत. विश्वरूपी नाटकाचेही असेच आहे. हे कळणे मात्र महत्वाचे आहे. वैश्विक नाटकात सर्वच जण पात्रे आहेत व सर्वच जण आपापली भूमिका वठवत असतात, याविषयी वाद नाही. पण माताजीनी म्हटल्याप्रमाणे याचे ज्ञान वा जाणीव फारच थोड्यांना असते. आपले पात्र जाणीवपूर्वक वठवणे म्हणूनच महत्वाचे असून ती जाणीव होणे व मनात मुरणे हे आध्यात्मिक जागृतीचे लक्षण आहे व आध्यात्मिक प्रगतीसाठी आवश्यकही आहे. 'विधिलिखित चुकत नाही' असे सर्वच जण म्हणतात, पण ते का चुकत नाही हे किती जणांना माहीत आहे ? बहुसंख्य लोकांना हे माहीत नाही. ज्या थोड्यांना ते माहीत आहे ते 'दुःखेषु अनुद्विगमनाः सुखेषु विगर्हास्पृहाः।' (भ.गी. २.५६) असतात. म्हणजे दुःखाने उद्विग्न होत नाहीत व सुखाने हुरळून जात नाहीत. नाटकातील पात्रांच्या सुख-दुःखांनी त्या पात्रांची भूमिका वठविणारे नट कधी सुखी व दुःखी होतात काय ? सामान्य माणसे-बहुसंख्य लोक-मात्र आपण ईश्वराच्या वैश्विक नाटकातील भूमिका वठविणारे नट आहोत हेच माहीत नसल्यामुळे जीवनरूपी नाटकातील प्रसंगांनी सुखी व दुःखी होताना

\* 'धर्म अपि इह मुमुक्षोः पापमुच्यते।' म्हणजे 'धर्मसुद्धा जन्ममरणाच्या फेऱ्यातून सुटू इच्छिणाऱ्या माणसाला पाप ठरते' असे शंकराचार्यांनी म्हटले आहे (गीता-शांकर-भाष्य, ४.३६) 'तैसे स्वर्गनरकसूचक । अज्ञान व्याले धर्मादिक ।' म्हणजे 'स्वर्ग-नरकांना (पाप-पुण्याच्या कल्पनांना) जन्म देणारा 'धर्म' हे सुद्धा 'अज्ञान' च आहे, असे ज्ञानेश्वरांनी म्हटले आहे. (ज्ञाने. १८ १३९१)

दिसतात. आपण नाटकातील भूमिका वठविणारे नट आहोत हेच ते विसरले आहेत. खरे तर हे त्यांना मुळातच माहीत नाही. अर्जुनाप्रमाणे त्यांना आपल्या खऱ्या स्वरूपाची-खऱ्या 'मी' ची (आत्मस्वरूपाची) आठवण व ओळख नसल्यामुळे हे घडले आहे. ती आठवण करून देणे, म्हणूनच महत्वाचे व आवश्यक आहे. त्यासाठीच गीतेच्या (अध्यात्मशास्त्राच्या) शिकवणुकीची गरज आहे. ती शिकवण माणसाच्या अंगी बाणली तर तो ईश्वरेच्छेनेच सर्व काही घडत आहे, आपण काही करत नाही-म्हणजे स्वतःच्या स्वतंत्र इच्छेने काही करत नाही, हे ओळखेल व ईश्वराशी तद्रूप होईल. योगी अरविंदांच्या शब्दात-

All that transpires on earth and beyond  
Are parts of an illimitable plan

The One Keeps in heart and knows alone - Savitri (Bk. one Conto 4)

अशावेळी ईश्वरी योजना-म्हणजे 'विधिलिखित' - the illimitable plan of the One-हे बंधन तर ठरत नाहीच, उलट तेच खऱ्या स्वातंत्र्याकडे- 'मुक्ती' कडे- नेणारे (ईश्वरी) साधन ठरते. ते साधन अगोदरपासून आहेच. फक्त ते माणसाला माहीत होऊन त्याने खऱ्या (ईश्वरी) स्वातंत्र्याचा अनुभव घेतला पाहिजे. हा ईश्वरी स्वातंत्र्याचा अनुभव दिव्य आनंदाचा - Divine Bliss चाच - अनुभव आहे.

**‘ईश्वरेच्छे’ विरुद्ध एक संभाव्य आक्षेप**

येथे एका संभाव्य आक्षेपाचा निकाल लावणे आवश्यक आहे. हा आक्षेप असा : 'सर्व काही ईश्वरेच्छेने घडत असेल, मी काही करत नाही, सर्व ईश्वरच करत असेल तर माझ्या हातून-किंवा जगातील कोणत्याही व्यक्तीच्या हातून-जे पाप घडते, त्याला ईश्वरच जबाबदार आहे, मी नाही असे ठरते. म्हणजे त्या पापाला पाप करणारा जबाबदार ठरत नाही. सर्वच ईश्वरेच्छेने घडत असेल तर ते पापकृत्यही त्याच्याच इच्छेने घडत असल्यामुळे त्याबद्दल ते पाप करणाऱ्याला कसे जबाबदार धरता येईल ? त्याबद्दल त्याला दोषी कसे ठरवता येईल ? शिक्षाही कशी देता येईल ? जगात पाप व्हावे, गुन्हे व्हावेत, अशीच ईश्वरेच्छा असणार, आणि म्हणून त्या इच्छेपुढे ती ईश्वरेच्छा म्हणून मान तुकवली पाहिजे. हेच (पाप घडणेच) विधिलिखित होय, असे मग ठरते.'

हा युक्तिवाद कर्मसिद्धांताविषयीच्या अज्ञानातून निर्माण झाला आहे, हे आतापर्यंतचे त्याविषयीचे विवेचन वाचलेल्या वाचकांच्या सहज लक्षात येईल. वर सांगितलेच आहे की (विरोधाभासात्मक) आध्यात्मिक नियमानुसार मनुष्य वाईट कर्म (पाप) करण्यास 'स्वतंत्र' आहे, पण चांगले कर्म (पुण्य) करण्यास तो 'बांधला' गेला आहे हीच ईश्वराची योजना आहे, व हाच कर्मसिद्धांत आहे. या



कर्मसिद्धांतानुसार माणूस स्वतःची उन्नती अगर अवनती स्वतःच करून घेऊ शकतो. ईश्वर त्याला जबाबदार नाही. 'पाप' ईश्वरावर ढकलणे व 'पुण्य' स्वतःकडे घेणे किंवा दोन्हीबद्दल ईश्वराला जबाबदार धरणे हे कर्मसिद्धांतात बसत नाही. पाप-पुण्याला स्वतः मनुष्यच जबाबदार आहे. ईश्वराने माणसाला थोडे स्वातंत्र्य दिले आहे व थोडे बंधन घातले आहे, ते त्याने दोन्हीच्या साह्याने स्वतःचा उद्धार स्वतःच करून घ्यावा म्हणून होय. [उद्धरेत् आत्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत् । आत्मैव ह्यात्मनो बंधुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥ म्हणजे 'माणूस स्वतःच स्वतःचा मित्र आहे व स्वतःच स्वतःचा शत्रू आहे. म्हणून माणसाने स्वतःच स्वतःचा उद्धार करून घ्यावा,' असे गीता सांगते (भ.गी. ६.५)] पाश्चात्य विचारसरणीमध्ये 'पापाची समस्या' (Problem of Evil) निर्माण झाली आहे याचे कारण तेथे सर्व गोष्टींना ईश्वराला जबाबदार धरण्यात येते. म्हणूनच ते लोक 'ईश्वराने या जगात पाप का निर्माण केले?' असा प्रश्न (धार्मिक तत्वज्ञानात) नेहमी उपस्थित करताना दिसतात. कर्मसिद्धांताचा त्यांना परिचय नसल्यामुळे (कारण पुनर्जन्माची कल्पनाच त्यांना मान्य नसल्यामुळे) ही (पापाची) समस्या त्यांच्या विचारसरणीत निर्माण झाली आहे. मनुष्य पापात जन्मला आहे (कारण लैंगिक संबंध हे पाप आहे) असे रुढ ख्रिश्चन धर्मात मानले गेले आहे. [याला ते original sin (मूळ पाप) म्हणतात.] ब्रह्मविज्ञानानुसार मात्र कोणतेही कृत्य (यात लैंगिक संबंधही आला) हे स्वतःचांगले किंवा वाईट नसते, तर ते कृत्य करणारा कोणत्या उद्देशाने ते करतो, हे ते कृत्य चांगले की वाईट हे ठरविते. म्हणून 'विचार ही वस्तू आहे' (Thought is thing) असे म्हटले आहे. (चित्तिर्मूर्तिमती - योगसारोपनिषद) कारण जसा तुम्ही विचार कराल तसेच तुम्हाला त्याचे 'वस्तू' रुपी फल मिळते. \* म्हणून 'मनसैव इदमाप्तव्यम् ।' (म्हणजे 'हे सर्व मनानेच मिळवायचे आहे') असे कठोपनिषद म्हणते; व 'मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः ।' (म्हणजे 'मनच मनुष्याच्या बंधनाला व मुक्तीला कारण आहे') असे ब्रह्मबिंदूपनिषद म्हणते. मनच माणसाचा शत्रू आहे व मित्रही आहे असे गीता म्हणते. असे म्हणण्याचे कारण मन दोन प्रकारचे असून एक शुध्द आहे व दुसरे अशुध्द आहे. [असे तेच (ब्रह्मबिंदूपनिषद) म्हणते. कामनाविरहित मन हे शुध्द व कामनायुक्त मन हे अशुध्द आहे असे ते उपनिषद सांगते. (१.१)] याचा अर्थ सैतान (नरक) व ईश्वर (स्वर्ग) माणसाच्या मनातच

\* 'पाप' पुढात मानवी मनात असते, बाह्य जगात वा वस्तूत नसते, असे गीता (ब्रह्मविज्ञान) सांगते. ही गोष्ट भीमासुराच्या कैदेतील सोळा सहस्र कन्यांशी विवाह करूनही योगेश्वर श्रीकृष्ण ब्रह्मचारीच राहिला. या विधानातून व्यक्त केली जाते 'हत्वापि स इमान् लोकान् न हन्ति न निबध्यते' ॥ (भ.गी. १८.१७) म्हणजे 'कौरवाना मारूनही अर्जुन-भीमांनी त्यांना मारलेच नाही' असे त्याच्या अंगी अनासक्तयोग जर बाणला तर म्हणता येते अशी गीतेची (कर्मयोगाची) शिकवण आहे.

असून कोणत्या मनाच्या मागे (मार्गाने) जायचे, हे मनुष्य स्वतःच ठरवू शकतो. त्याबद्दल ईश्वराला जबाबदार धरता येत नाही. तात्पर्य, कर्मसिध्दांतानुसार पाप-पुण्याला स्वतः मनुष्यच जबाबदार आहे. ईश्वर नांवाची कोणती बाह्य शक्ती वा वस्तू नाही. विधिलिखित कोणत्या मार्गाने गेले तर निश्चित काय घडेल, हे फक्त सांगते.

विश्व हे ईश्वराने रचलेले नाटक आहे व त्या नाटकातील पात्रे व घटना अगोदरच ठरलेल्या असून त्यानुसारच सर्व घडते असे वर म्हटले आहे व यालाही विधिलिखित म्हणतात हे खरे आहे. पण या अर्थाचे 'विधिलिखित' हा एक वेगळा विषय असून त्याचा खरेखोटेपणा प्रत्यक्ष पुराव्यांनी ठरवावा लागतो. ब्रह्मविज्ञानाने अशा वस्तुस्थितिनिदर्शक विधिलिखितासाठी 'आकाशलेखन' ही खास शब्दयोजना केलेली आहे. हे 'आकाशलेखन' (चित्रगुप्ताचे लेखन) कितपत खरे आहे, त्याचे वस्तुनिष्ठ पुरावे मिळतात काय, हा एक महत्वाचा प्रश्न असून तो मानवाच्या इच्छास्वातंत्र्याशी निगडित आहे, असे बरेच जण समजत असल्यामुळे त्याची येथे थोड्या विस्ताराने चर्चा करणे आवश्यक आहे. ती करताना 'आकाशलेखना'ला अप्रत्यक्षपणे आधार देणाऱ्या 'अर्थपूर्ण घटना' हा एक महत्वाचा भौतिक पुरावा असून तो प्रथम सादर करतो.

### **'अर्थपूर्ण घटना' (Synchronicity) : 'आकाशलेखन' चा पहिला पुरावा**

कार्ल युंग या प्रसिद्ध मानसशास्त्रज्ञाने आपला एक अनुभव पुढीलप्रमाणे नोंदवला आहे. १ एप्रिल या दिवशी त्याला जेवणात मासा वाढण्याला आला. त्याच दिवशी एखाद्याला 'एप्रिल फिश' करणे या रुढीचा कुणीतरी उल्लेख केलेला त्याला आढळला. (फिश म्हणजे मासा) पुन्हा त्याच दिवशी एका शिलालेखात माशाचा उल्लेख असणाऱ्या एका वाक्याची त्याने नोंद केली. दोन प्रहरी त्याला बरेच दिवस न भेटलेल्या एका त्याच्या स्त्री-पेशंटने त्याला भेटून आपले एक माशाचे रंगीत चित्र दाखवले. संध्याकाळी माशासारख्या एका सागरी प्राण्याचा कशिदा काढलेला त्याला पाहावयास मिळाला. दुसऱ्या दिवशी त्याच्या एका पेशंटने आपल्या स्वप्नात आदल्या रात्री एक मासा आल्याचे त्याला सांगितले. त्यावेळी तो माशाच्या प्रतीकाचा अभ्यास करीत होता. अशारीतीने युंग माशाच्या प्रतीकावर सशोधन करीत असताना दोन दिवसात किमान सहा संदर्भ माशाचे आले. हे सर्व योगायोगाने घडले असावे, असे एक वाक्य त्यावेळी लिहीत असलेल्या पुस्तकात त्याने लिहिले आणि तो फिरावयास गेला. तेथे समुद्राच्या काठी त्याला एक मोठा मासा मेलेला आढळला. तो आदल्या दिवशी तेथे नव्हता. या अनुभवाचे वर्णन युंगने 'numinous' या शब्दाने केले आहे.<sup>२७</sup> या शब्दाचा अर्थ 'ईश्वराविषयी

वाटते तशी आदरयुक्त भीती निर्माण करणारा अनुभव' असा आहे. या अनुभवात ईश्वराचा संबंध येण्याचे कारण अशा घटना योगायोगाने घडत नसतील-आणि योगायोगाने अशा घटना वरचेवर घडणे कसे शक्य आहे ?- तर त्यांच्या पाठीमागे काही योजना अगर अर्थ असला पाहिजे, असे म्हणावे लागते. अशी योजना अगर अर्थ-नैसर्गिक घटनात ईश्वराशिवाय-म्हणजे श्रेष्ठ अतींद्रिय शक्तीशिवाय-कोण निर्माण करणे शक्य आहे ? म्हणजे या घटना कालातीत अशा अतींद्रिय शक्तीकडून कालात घडवल्या जाणाऱ्या योजनाबद्ध घटना असून एखाद्या मानवी मनाच्या संबंधाने (युगच्या मनाच्या संबंधाने घडल्या तशा) म्हणजे अर्थपूर्ण रीतीने-आणि एककालिक रीतीने घडतात. म्हणून युगाने अशा घटनांना 'एककालिक घटनात्मकता' (synchronicity) असे नांव दिले आहे व त्या 'अर्थपूर्ण संबंध' दाखवणाऱ्या असतात असे म्हटले आहे. (अशा एककालिक घटना मानवी मनाच्या संबंधानेच नेहमी घडत असल्यामुळे त्या सर्व 'अर्थपूर्ण' च असतात. म्हणून त्यांना एककालिक म्हणण्याऐवजी फक्त 'अर्थपूर्ण' म्हणणे प्रस्तुत लेखकाने जास्त पसंत केले आहे. \*) अशा घटनांचा अनुभव व्यवहारात अनेकदा येतो. एखादे पुस्तक वाचताना एखादा नवीन शब्द येतो आणि नंतर वाचनात तो शब्द वरचेवर येताना दिसतो. हा लेखकाचा नेहमीचा अनुभव आहे. अरविदांच्या 'सावित्री' या काव्यातील काही पंक्ती वर उद्धृत केल्या आहेत. त्या पंक्ती लिहिल्यानंतर एका नातेवाईकाच्या और्ध्वदैहिकाला लेखकाला उपस्थित राहण्याचा प्रसंग आला. तेथे तीस एक वर्षानंतर त्याच्या नात्यातील एक स्त्री त्याला भेटली. इतक्या वर्षांनी ती भेटली असल्यामुळे लेखक तिला ओळखू शकला नाही. तिने मात्र लेखकाला ओळखले व लेखकाशी ती बोलली. मी तिला तिचे नांव विचारले. तेव्हां ती म्हणाली, "सावित्री !" सावित्री नांवाची लेखकाच्या नातेवाईकातील ती एकमेव स्त्री आहे; आणि ती अरविदांच्या 'सावित्री' काव्यातील संदर्भ प्रथमच लेखकाने आपल्या लेखनात दिल्यानंतर त्याला भेटली होती. \*\*

\* याचे मुख्य कारण असे की सर्वच अर्थपूर्ण घटना एककालिक (synchronistic) नसतात. पुढे १०० ते ८०० वर्षांनी घडलेल्या अर्थपूर्ण घटनांची प्रस्तुत लेखकाने उदाहरणे दिली आहेत. पुनर्जन्माच्या घटना अर्थपूर्णच असतात. पण त्या एककालिक नसतात.

\*\* 'सावित्री' काव्यातील पंक्ती उद्धृत केल्यानंतर लेखकाच्या हाताखाली पूर्वी काम केलेला एक लॅंबोरेटरी अटेंडर लेखकाला भेटण्यासाठी मोटारसायकलवरून बीस एक वर्षानंतर आला. त्याच्या हीरो होंडावर 'सावित्री' असे लिहिले होते. ते आपल्या आईचे नाव असल्याचे त्याने सांगितले. लेखकाला त्याच्या आईचे नाव 'सावित्री' आहे हे माहीत नव्हते. नंतर त्याच दिवशी 'वासुदेव निवास' नावाचे एक त्रैमासिक पोस्टाने आले. त्यात 'सावित्री' नावाच्या एका लेखिकाचा एक लेख आढळून आला.

असा अनुभव लेखकाला नेहमीच येतो. बरीच वर्षे न भेटलेल्या एखाद्या ओळखीच्या व्यक्तीची लेखकाला काही कारण नसताना आठवण होते आणि थोड्याच दिवसात त्या व्यक्तीचे पत्र येते किंवा ती स्वतःच घरी येते. एकदा लेखक डॉ. सी. बी. देसाई या आपल्या स्नेह्यास काही कामानिमित्त भेटण्यासाठी त्यांच्या यादगुड या गावी जात होता. रस्त्यात चिक्कोडी येथे बस बदलावी लागते. ती बदलून त्यांच्या गावच्या बसमध्ये बसल्यानंतर लेखकाने पूर्वी एका मासिकात लिहिलेल्या एका लेखाचा विषय त्याच्या मनात सारखा घोळू लागला. काही कारण नसताना त्या जुन्या लेखाची एकदम आठवण होऊन त्याचा विषय मनात सारखा का घोळावा, याचा उलगडा डॉक्टरांच्या घरी पोहोचल्यानंतर लेखकाला झाला. सोप्यात एका खुर्चीत बसून डॉक्टर काही वाचत होते. लेखकाने घरात प्रवेश करताच बसलेल्या ठिकाणाहूनच लेखकाचे स्वागत करत डॉक्टर म्हणाले, “या सर, मी तुमचाच लेख वाचत आहे.” बसमध्ये बसल्यानंतर ज्या लेखाचा विषय लेखकाच्या मनात सारखा घोळत होता, तोच लेख ते वाचत होते असे आढळून आले !

वरील लेखकाच्या अनुभव कथनात ‘काही कारण नसताना’ असा शब्द प्रयोग वरचेवर केलला आहे. ‘काहीही कारण नसणे’ हे अशारीतीने अर्थपूर्ण घटनांचे व्यवच्छेदक लक्षण आहे. सर्व अर्थपूर्ण घटना मनाशी संबंधित राहून घडत असतात. कुठल्याही भौतिक कारणाशी त्यांचा संबंध नसतो. अशा प्रकारच्या भौतिक कार्यकारणाबाहेर घडणाऱ्या व मनाशी संबंधित असलेल्या घटना स्थलकालातीत घटना असतात. सर्व अतींद्रिय घटना मनाशी संबंधित स्थलकालातीत व कार्यकारणाबाहेरच्याच घटनाच असतात. म्हणून बऱ्याच वेळा ‘अर्थपूर्ण’ घटना या अतींद्रिय घटनाच असतात\* आणि सर्व अतींद्रिय घटना या ‘अर्थपूर्ण’च असतात. युंग आणि वुल्फगॅंग पॉली (नोबेल पारितोषिक विजेता भौतशास्त्रज्ञ) या दोघांनी संयुक्तपणे लिहिलेल्या या विषयावरील पुस्तकाला म्हणूनच **Synchronicity : An Acausal Connecting Principle** (एककालिक घटनात्मकता: कार्यकारणाबाहेरचा संबंध जोडणारे तत्त्व) असा मथळा दिला आहे. कार्यकारणाबाहेरचा संबंध म्हणजे अर्थपूर्ण संबंध होय. आता तर आधुनिक भौतविज्ञानातील क्वांटम सिध्दांताने भौतविज्ञानातूनच कार्यकारणभावाचे उच्चाटन केले आहे आणि अशारीतीने सर्व भौतिक विश्वच अर्थपूर्ण ठरवले आहे. म्हणून जे. ए. व्हीलर या भौतशास्त्रज्ञाने या विश्वाला ‘अर्थपूर्ण विश्व’ (Meaning Universe) म्हटले आहे.<sup>२७४</sup>

\* म्हणून जे. बी. म्हाइन यांनी प्रयोगशाळेत वैज्ञानिक निकषाखाली अतींद्रिय घटनांचे सत्यत्व प्रस्थापित करण्यासाठी केलेल्या प्रयोगाचा आधार युंगने अर्थपूर्ण घटनांच्या समर्थनार्थ आपल्या ग्रंथात घेतला आहे.

अर्थपूर्ण घटनांची उदाहरणे देताना युंगने मृत्यूचा संदेश देणाऱ्या पक्ष्यांचे एक उदाहरण दिले आहे. (हे पक्षी सामान्यतः कावळेच असतात.) एकदा एका स्त्रीच्या घरावर अनेक पक्षी एकदम येऊन बसले. अशी घटना तिच्या आजीच्या व आईच्या मृत्यूच्या वेळी यापूर्वी घडलेली असल्यामुळे तिला घरावर कावळे येऊन बसण्याची घटना मृत्यूसूचक असावी अशी भिती वाटली; आणि तिची ती भीती खरी ठरली. तिचा नवरा-जो युंगचा पूर्वीचा पेशंट होता-रस्त्यात हृदयाघाताने एकाएकी मृत्यू पावल्याची बातमी थोड्याच वेळात तिला कळाली. अशारीतीने मृतात्म्याचा संदेश देण्यासाठी कावळे घरावर येऊन बसल्याची घटना एका कुटुंबात घडल्याची लेखकाला माहीत आहे. या घटना योगायोगाने घडत नसून त्यांचा संबंध मानवाच्या सामूहिक अबोध मनातील (Collective Unconscious) पुराणजातीशी (archetypes) असतो, असे युंगने म्हटले आहे. इजिप्त, बाबीलोन, ग्रीस इ. देशांच्या पुराण कथातून मानवी आत्मा पक्षी असल्याचे म्हटले असून त्यावरून पक्षी हे आत्म्याचे प्रतीक आहे, असे ठरते, असे युंगने म्हटले आहे. (आत्मा हा शरीररूपी पिंजऱ्यात अडकलेला पक्षी आहे अशी सर्वच देशातील समाजात कल्पना असल्याची आढळून येते.) पक्षी हे आत्म्याचे केवळ प्रतीकच नाही, तर वस्तुस्थितीनिदर्शक घटनांचे 'संदेशवाहक' आहेत, असे वरीलसारख्या घटनांवरून म्हणावे लागते. ही गोष्ट आपल्याकडील मृताच्या पिंडाला कावळा शिवण्याच्या प्रकारावरून स्पष्ट होते. मृताच्या पिंडाला कावळा शिवण्यावरून मृताची-त्याच्या आत्म्याची-इच्छा त्याचे नातेवाईक ओळखतात, हे सुप्रसिद्ध आहे; आणि ही गोष्ट काल्पनिक नसून वस्तुस्थितीदर्शक असल्याची असंख्य उदाहरणे देता येतील. पूर्वी महाराष्ट्राचे मुख्यमंत्री असलेले वसंतदादा पाटील यांच्या मृत्यूनंतर त्यांच्या पिंडाला सांगली येथे कावळा शिवला नसल्याची बातमी वृत्तपत्रातून प्रसिद्ध झाली व त्याची चर्चाही झालेली होती. येथे तसलेच एक उदाहरण देतो.

पुलाची शिरोली (कोल्हापूरचे) येथील भगवानराव पाटील हे चिले महाराजांचे एकनिष्ठ भक्त होते. महाराज गांधीनगरला आले की त्यांना त्यांची भेट घडवून आणण्यासाठी त्यांच्या नातवाला स्कूटरवरून तेथे नेहमी आणून सोडावे लागे. पण तो तेथे त्यांना सोडून लगेच परतत असे; आणि याचे श्री. पाटिलांना फार वैषम्य वाटे. आपल्या नातवाने तेथे बसावे, महाराजांची भक्ती करावी असे त्यांना नेहमी वाटे. असे देवावतारी महाराज पुण्याईनेच लाभतात, म्हणून त्यांची भक्ती त्याने आपल्याप्रमाणे करावी असे त्यांना वाटे. अनेकदा ते तसे त्याला बोलून दाखवत. पण त्याचा त्याच्यावर काही परिणाम होत नसे. ते बाबूराव अथणेना नेहमी म्हणत, "मी त्याला दररोज सांगतोय. यापेक्षा मी जास्त काय करणार?" चिलेदेवांनी एकदा त्यांना हे 'धोतर बदलायचे नाही' असे सांगितले. ती मृत्यूची

सूचना आहे हे ओळखून पाटील म्हणाले, “आपली इच्छा देवा.” आणि त्यांना थोड्याच दिवसात मृत्यू आला. बाबूराव अथणे म्हणतात, “रक्षाविसर्जनाच्या दिवशी मी शिरोलीला गेलो. खूप मंडळी होती. बराच वेळ झाला तरी कावळा स्पर्श करेना. नातेवाईकांची मने शंकेने व्यग्र झाली. इतक्यात श्री. पाटिलांच्या मुडशिंंगीच्या भाच्याने त्या नातवाला सांगितले, “गुरुदेवांच्या दर्शनाला सतत जाईन, तेथे बसेन, भक्ती करेन असे म्हण.” त्याप्रमाणे नातू बोलला आणि त्याच क्षणी कावळा शिवला.<sup>१५</sup> येथे असा प्रश्न निर्माण होतो की त्या कावळ्याला पाटिलांची (मृताची) इच्छा कशी कळाली ? ती कळाली ही वस्तुस्थिती असून ही घटना त्यामुळेच अर्थपूर्ण ठरते.

प्रस्तुत लेखकाला अशा असंख्य घटनांची माहिती आहे व स्वतःलाही अनेक अनुभव आले आहेत. नमून्यादाखल फक्त एकच अनुभव येथे देतो. स्वतःला मुले नसल्यामुळे लेखकाच्या पत्नीचा लहानपणापासून सांभाळ केलेल्या तिच्या काकांचे प्रस्तुत लेखकावर फार प्रेम होते. (ते लेखकाला उद्देशून नेहमी ‘नम्म अळियदेवरु’-आमचे देवरूपी जावईबापू-म्हणत असत.) त्यांच्या मृत्यूपूर्वी त्यांनी कित्येक दिवस अन्न घेतले नव्हते. कारण त्यांच्या घशात अन्नच जात नव्हते. ही बातमी कळताच लेखक थर्मासमधून दूध घेऊन त्यांच्याकडे गेला व ते कपात घालून स्वतःच्या हाताने त्यांना प्यावयास दिले. आश्चर्य असे की कित्येक दिवस चहासुध्दा न घेतलेल्या त्यांनी ते सगळे दूध प्याले. नंतर थोड्याच दिवसात ते वारले. त्यांच्या पिंड ठेवण्याच्या कार्यक्रमाच्या दिवशी लेखक पूर्वीप्रमाणेच थर्मासमधून दूध घेऊन गेला. एका बाईकडे ते देऊन कपात घालून ते तेथे ठेवण्यास सांगितले. त्याप्रमाणे तिने ते ठेवले. तेथे असंख्य लोकांचे अन्नपदार्थ ठेवले होते. पण आश्चर्य असे की प्रथम एक कावळा त्या कपाजवळ आला आणि त्यातील दूध चोचीने प्यायला. सामान्यतः कावळ्यांची प्रवृत्ती घन अन्नपदार्थ खाण्याकडे असते. पातळ पदार्थाकडे नसते. येथे त्याच्या विरुद्ध घडले होते. तेथे दूध, चहा यासारखे पातळ पदार्थही कपात घालून अनेकांनी ठेवले होते. पण त्या सर्वांकडे दुर्लक्ष करून त्याने लेखकाचे दूध असलेल्या कपाकडेच नेमके येऊन ते तो प्याला होता. ते त्या कावळ्याने लेखकाचे दूध असल्याचे कसे ओळखले व तेच तो का प्याला ? मानवी मन आणि पशुपक्ष्यादि बाह्य सृष्टी यांच्यात भेद नसल्याचे दाखवून देणारी ही घटना आहे-मग ते मन मृताचे असो अगर जिवंत व्यक्तीचे असो. *तुझा माझा एक / आत्मा सर्वगत / ते साक्षी निश्चित आली मज ॥* असे गायीला उद्देशून तुकारामांनी-मंबाजीने त्या गायीला मारलेले वळ आपल्या अंगावर उठल्यानंतर-जे उद्गार काढले होते ते येथे आठवावेत. (पृ. ३०१)

गाय, कावळा यासारखे पशुपक्षीच नव्हे तर अगदी क्षुद्र किडासुध्दा मानवी

आत्माशी कसा 'अर्थपूर्ण' रीतीने जोडला जातो, याचे उदाहरण स्वतः युंगने आपल्या अनुभवातून दिले आहे. ते अभ्यसनीय आहे. एकदा युंग एका मनोरुग्ण स्त्रीवर उपचार करीत होता. (या स्त्रीच्या मनोव्याधीवर दोन मानसशास्त्रज्ञांनी यापूर्वी उपचार करूनही त्यांना यश आले नव्हते. युंग हा तिच्यावर उपचार करणारा तिसरा मानसशास्त्रज्ञ होता. पण त्यालाही कित्येक दिवस यश येत नव्हते.) एकदा तिने आदल्या रात्री आपल्या स्वप्नात एक सोनेरी किडा (scarab) आल्याचे युंगला सांगितले. हे आपले स्वप्न ती युंगला सांगत असताना युंग बसलेल्या खोलीच्या पाटीमागच्या खिडकीवर टकटक् असा सारखा आवाज होऊ लागला. युंगने उठून खिडकीचा पडदा बाजूला सारला व खिडकी उघडली, त्याबरोबर तो टकटक् आवाज करणारा किडा खिडकीतून आत आला. युंगने त्याला पकडले व त्या स्त्रीला तो दाखवला. तो त्या स्त्रीच्या स्वप्नातील सोनेरी किडा होता ! त्या भागात सहसा न आढळणारा तो किडा असल्याचे युंगने म्हटले आहे. पण नेमके ती स्त्री आपले त्या किड्याचे स्वप्न सांगताना कोठून तरी तेथे आला होता ! या घटनेतील अर्थ एवढ्यावरच संपत नाही. इतके दिवस बरी न होणारी त्या स्त्रीची मानसिक व्याधी या घटनेनंतर झपाट्याने बरी झाली ! युंग म्हणतो की मानसिक उपचाराला विरोध करणाऱ्या तिच्या बुद्धिनिष्ठेच्या (rationality) चिलखतीतून या बुद्धिविरोधी (irrational) अर्तींद्रिय घटनेने यशस्वीरीतीने प्रवेश मिळविला होता. किंवा असे म्हणता येईल की त्या स्त्रीने कृत्रिमपणे धारण केलेल्या बुद्धिनिष्ठेची ही (कृत्रिम) चिलखत तिच्या आत्म्याने या असंभाव्य अर्तींद्रिय घटनेच्या साह्याने तोडली होती.<sup>२७६</sup>

आता येथे असा प्रश्न निर्माण होती की तो सोनेरी किडा त्या स्त्रीच्या स्वप्नात प्रथम कसा व का गेला व ती आपले त्याचे स्वप्न सांगत असतानाच नेमके तेथे कसा आला ? मानवी मन व बाह्य जीवसृष्टी अशारीतीने एकमेकांशी 'अर्थपूर्ण' रीतीने जोडले गेले असल्याचे अशा घटना सिध्द करतात.

जीवसृष्टीच नव्हे तर निर्जीव (जड) सृष्टीसुद्धा मानवी मनाशी अर्थपूर्ण रीतीने जोडली गेली असल्याचे दिसून येते. याचेही एक उदाहरण युंगने दिले आहे. हे उदाहरण प्रसिध्द फ्रेंच खगोलशास्त्रज्ञ फ्लॅमेरियन याचे आहे. फ्लॅमेरियन Atmosphere (हवामान) या विषयावर पुस्तक लिहीत होता. त्यातील Wind (वारा) हे प्रकरण तो लिहीत असताना नेमके एक जोराचा वाऱ्याचा झोत आला आणि त्याने त्या विषयावरील सर्व पाने उडवून नेली व ती जवळच्या खिडकीतून रस्त्यावर जाऊन पडली. आता त्या वाऱ्याला फ्लॅमेरियन आपल्यावर प्रकरण लिहीत आहे हे कसे कळाले ? व त्याने हे कळाल्याचे अशारीतीने का दाखवून दिले ? हे प्रश्न आहेत. हा योगायोग म्हणावा तर 'वारा' या विषयावरील पानेच वाऱ्याने उडून

नेली होती. त्या पुस्तकातील इतर पाने यापूर्वी किंवा नंतर कधी उडून गेली नाहीत !

प्रस्तुत ग्रंथाच्या १० व्या प्रकरणात अशाच जड सृष्टीच्या एका अर्थपूर्ण घटनेचे उदाहरण दिले आहे. मरणानुभव घेतलेल्या स्टीव प्राइस याला मरणानुभवावरील मूडीचे Life After Life हे प्रसिद्ध पुस्तक हवे होते. ते त्याला एका पुस्तकाच्या दुकानात कितीही शोधून सापडले नाही. शेवटी तो निराश होऊन परतला आणि त्याचवेळी ते पुस्तक वरच्या फळीवरून नेमके त्याच्या डोक्यावरच पडले ! (पृ. १२७) आता प्रश्न असा की त्या निर्जीव पुस्तकाला स्टीवच्या मनातील हेतू कसा कळला ? आणि स्टीवला ते कळावे म्हणून त्याच्या डोक्यावरच नेमके पडण्याचे काम (‘चमत्कार’) त्याने कसे केले ? जड सृष्टीसुद्धा मानवी मनाला अर्थपूर्ण रीतीने प्रतिसाद देते हे यावरून सिद्ध होते. पण त्यासाठी मानवी मनात त्या प्रतिसादाला अनुकूल अशी सहानुभूतियुक्त अनुकंपने (sympathetic vibrations) निर्माण झालेली असली पाहिजेत. स्टीव प्राइसच्या मनात मरणानुभवामुळे ती निर्माण झाली होती. भानामतीत संबंधित व्यक्तीच्या विशिष्ट मानसिक अवस्थेमुळे ती नेहमी निर्माण होत असतात. म्हणून भानामतीत जड वस्तूसुद्धा ‘अर्थपूर्ण’ रीतीने वागताना दिसतात. ही गोष्ट स्वतः युंगनेच आणि तेही स्वतःच्याच एका प्रयोगाने दाखवून दिली आहे.

### फ्रॉइडला हादरून सोडणारी युंगची अर्थपूर्ण भानामती

फ्रॉइड आणि युंग हे दोघे मानसशास्त्रज्ञ प्रारंभी एकमेकांचे सहकारी होते. पण नंतर सैध्दांतिक कारणावरून त्यांच्यात मतभेद निर्माण झाले. फ्रॉइडचा दृष्टिकोन बुद्धिवादी व भौतिकवादी होता, तर युंग हा सर्व मानसिक घटनांकडे आध्यात्मिक दृष्टिकोनातून पाहत असे. फ्रॉइडला एकदा युंगने परामानसशास्त्राविषयीचे त्याचे मत विचारले. त्याने त्या शास्त्राची इतक्या उथळ भाषेत खिल्ली उडवली की युंगला त्याचा खरपूस समाचार घ्यावास वाटला. पण ती भावना त्याने मनातच दाबून ठेवली. त्याचा परिणाम असा झाला की युंगला आपल्या पोटातील पडदा तापून लाल झाल्याची तीव्र भावना झाली; आणि त्याबरोबर जवळच्या फ्रॉइडच्या पुस्तकाच्या पेटीतून स्फोट झाल्याचा आवाज आला. युंग म्हणाला की आपल्या मनातील भावनाच पुस्तकाच्या पेटीतील या स्फोटाच्या (भानामतीच्या) रुपाने बाहेर प्रगट झाली आहे. पण फ्रॉइड हे खरे मानायला तयार नव्हता. तो म्हणाला की हा आवाज स्वाभाविकपणे झाला असून त्याचा आपल्या भावनेशी संबंध जोडणारी युंगची भाषा ही ‘मूर्ख बडबड’ आहे. युंगने त्याचे हे म्हणणे फेटाळून लावले आणि आपल्या म्हणण्याच्या समर्थनार्थ पुन्हा तसलाच आवाज होईल असे त्याला सांगितले; आणि खरोखरच पुन्हा त्या पेटीतून तसलाच स्फोटाचा आवाज झाला !



आणि फ्रॉइड पुरता हादरून गेला.<sup>२७७</sup>

भानामती मानवी मनातूनच प्रगटते (व म्हणून भानामतीच्या सर्व घटना 'अर्थपूर्ण' च असतात) हे अशारीतीने एका जागतिक कीर्तीच्या मानसशास्त्रज्ञाने व तेही स्वतःच्याच उदाहरणाने दुसऱ्या तितक्याच जागतिक कीर्तीच्या मानसशास्त्रज्ञासमोर येथे सप्रयोग दाखवून दिले आहे !

अशारीतीने जड सृष्टी मानवी मनाशी अर्थपूर्ण रीतीने जोडली गेली असल्याचे भानामतीच्या सर्व घटना सिध्द करतात. आणि भानामतीच्या घटना दुर्मीळ नाहीत, हे प्रस्तुत ग्रंथाच्या वाचकांना मुद्दाम सांगण्याची आवश्यकता नाही. त्या पहिल्या व दुसऱ्या प्रकरणातील शांताद्वय किंवा १४ व्या प्रकरणातील पवन या सारख्या लहान मुलामुलींच्या किंवा ४ थ्या प्रकरणातील सावकसारख्या अशिक्षित स्त्रीच्या सान्निध्यात सुध्दा घडतात असे नसून नोबेल पारितोषिक विजेत्या शास्त्रज्ञांच्या सान्निध्यात सुध्दा घडतात ! आणि युंगबरोबर Synchronicity विषयावर संयुक्तपणे ग्रंथ लिहिणाऱ्या खुद्द वुल्फगांग पॉली या भौतशास्त्रातील नोबेल पारितोषिक विजेत्या शास्त्रज्ञाचे उदाहरणच सिध्द करते. पॉली प्रयोगशाळेत प्रवेश करताच प्रयोगाची उपकरणे, मापन यंत्रे इ. मोडून पडत असत अगर फुटत असत; निर्वात पात्रे स्फोट पावत असत. (भौतशास्त्रज्ञानी याला 'पॉली इफेक्ट' असे नांव दिले होते ! ) पॉली एक श्रेष्ठ सैध्दांतिक भौतशास्त्रज्ञ (theoretical physicist) होता. सैध्दांतिक भौतशास्त्रज्ञांना भौतिक प्रयोगांचा नेहमीच तिटकारा असतो. तो तिटकारा (पॉलीप्रमाणे) कधी कधी टोकाला जातो. पॉलीच्या भौतिक प्रयोगाविषयीच्या या आत्यंतिक तिटकान्यातूनच भौतिक प्रयोगाची उपकरणे तो प्रयोगशाळेत प्रवेश करताच मोडून पडण्याची भानामती घडत असल्याचे एका शास्त्रज्ञाने म्हटले आहे.<sup>२७८</sup> या दृष्टीने पॉलीची भानामती पूर्णपणे 'अर्थपूर्ण' ठरते !

(पॉलीच्या ज्या Exclusion तत्त्वाच्या शोधाबद्दल त्याला भौतशास्त्रातील नोबेल पारितोषिक मिळाले आहे, ते तत्त्वही भौतिक पदार्थ-अणुरेणु-भौतिक जगात 'अर्थपूर्ण' रीतीने वागतात हे दाखवून देणारेच तत्त्व आहे; ही गोष्टही 'अर्थपूर्ण' च आहे !)

जड सृष्टीच नव्हे तर विश्वातील सर्वच घटना एखाद्या नाटककाराने रचना केल्याप्रमाणे अर्थपूर्ण रीतीनेच घडतात हे सूचित करणारी काही प्रकरणे आढळून येतात. स्वतः फ्लॅमेरियन याने असे एक प्रकरण सांगितले आहे. डिसचॅप नावाच्या व्यक्तीला लहानपणी फोर्टगिबू नांवाच्या त्याच्या एका ओळखीच्या माणसाने एकदा 'प्लम पुडिंग' (एक खाण्याचा दुर्मीळ पदार्थ) खायला दिले. पुढे दहा वर्षांनंतर पॅरिसच्या एका हॉटेलात डिसचॅप गेला असता येथे त्याला 'प्लम पुडिंग' दिसले. ते त्याने मागवले. पण त्याला सांगण्यात आले की त्याची ऑर्डर फोर्टगिबूने अगोदरच

दिलेली आहे. नंतर बऱ्याच वर्षांनी 'प्लम पुडिंग' हा एक दुर्मीळ खाद्य पदार्थ म्हणून त्याच्या मेजवानीचे एक आमंत्रण डिसचैपला आले. तेथे तो ते खात असताना म्हणाला की "येथे फोर्टिगिबूची फक्त उणीव भासते." तो हे म्हणाला नाही तोच दरवाजा उघडून एक अत्यंत वृद्ध गृहस्थ तेथे आला. तो दुसरा तिसरा कोणी नसून त्याला 'प्लम पुडिंग' पूर्वी खायला दिलेला फोर्टिगिबू होता! पता चुकीचा मिळाल्यामुळे तो येथे वाट चुकून आला होता.

एखाद्या नाटककाराने योजनापूर्वक आपल्या नाटकात प्रसंग घालावेत तसे हे फोर्टिगिबू आणि 'प्लम पुडिंग'चे प्रसंग आहेत. यापेक्षाही विलक्षण नाट्यमय प्रसंग घडत असतात. पुढील घटनाक्रमावरून वाचकांना याची कल्पना येईल व मानवी जीवन हे नाटक आहे हे पटेल. अब्राहम लिंकन आणि जॉन केनेडी यांचा खून ते अमेरिकेचे राष्ट्राध्यक्ष असतानाच झाला, हे सर्वांना माहीत आहे. त्यांच्यातील विलक्षण साम्य पुढीलप्रमाणे :

१. लिंकनची राष्ट्राध्यक्ष म्हणून १८६० साली निवड झाली. केनेडीची निवड राष्ट्राध्यक्ष म्हणून बरोबर शंभर वर्षांनंतर म्हणजे १९६० साली झाली.
२. दोघांचाही खून शुक्रवारीच झाला. त्यांचा खून झाला तेव्हा दोघांच्याही बायका त्यांच्या बरोबर होत्या.
३. व्हाइट हाऊसमध्ये असताना दोघांच्याही बायकांना आपला एक मुलगा मृत्यूने गमवावा लागला.
४. दोन्ही राष्ट्राध्यक्षांचा खून पाठीमागून डोक्यात गोळी घुसूनच झाला.
५. लिंकनचा खून फोर्डच्या थेटरमध्ये झाला. केनेडीचा खून फोर्डच्या लिंकन गाडीत झाला.
६. दोघांच्या मृत्यूनंतर राष्ट्राध्यक्ष झालेल्याचे आडनांव जॉन्सनच होते. दोघेही राष्ट्राध्यक्ष होण्यापूर्वी उपराष्ट्राध्यक्ष होते. दोघेही दक्षिण प्रांतातील होते व दोघेही डेमोक्रॅटिक पक्षाचे होते.
७. लिंडन जॉन्सनचा जन्म १९०८ साली झाला. अँड्र्यू जॉन्सनचा जन्म बरोबर त्याच्या शंभर वर्षांपूर्वी १८०८ साली झाला.
८. लिंकन व केनेडी हे दोघेही काळ्या लोकांच्या नागरी हक्कासाठी झगडणारे होते.
९. लिंकनच्या खासगी सचिवाचे नांव जॉन होते. जॉन केनेडीच्या खासगी सचिवाचे नांव लिंकन होते.
१०. लिंकनचा खुनी विल्किस बूथ १८३९ साली जन्मला. केनेडीचा खुनी ली हार्वे ओसवालड बरोबर त्याच्या शंभर वर्षांनंतर १९३९ साली जन्मला.

११. दोघेही खुनी दक्षिण प्रांतातील होते. दोघेही कट्टरपंथी होते.

१२. लिंकनचा खुनी थिएटरमध्ये गोळी झाडून वखारीत लपून बसला. केनेडीचा खुनी वखारीतून गोळी झाडून थिएटरमध्ये लपून बसला.

१३. दोघाही खुन्यांचा त्यांच्यावर खटला भरण्यापूर्वीच खून झाला.<sup>२०९</sup>

एखाद्या नाटककाराने योजनाबद्ध रचना करून लिहिलेल्या नाटकातील घटनाप्रमाणे या सर्व घटना घडलेल्या दिसतात. या घटना शंभर वर्षांच्या कालावधीनंतर घडलेल्या आहेत. ब्रूस गोल्डबर्ग या वैद्यकीय व्यवसाय करणाऱ्या डॉक्टरने ८०० वर्षांनंतर घडलेली एक अर्धपूर्ण घटना आपल्या अनुभवातून सांगितली आहे. ती पुढीलप्रमाणे :

### ८०० वर्षांनंतर घडलेली अर्धपूर्ण घटना

गोल्डबर्ग हा मानसोपचारतज्ञ आपल्या पेशांदसना संमोहनाने त्यांच्या पूर्वजन्मांच्या स्मृती जाग्या करून-त्यांना प्रत्यक्ष पूर्वजन्मात नेऊन-त्यांचे दोष, व्याधी इ. बऱ्या करण्याबद्दल प्रसिध्द आहे. एकदा त्याने या जन्मात एकमेकांची ओळख वा माहितीसुध्दा नसलेल्या दोन व्यक्तींना वेगवेगळ्या काळी मागच्या एका जन्मात संमोहनाने नेले असता त्या दोघांनीही त्या जन्मातील जो आपला अनुभव व माहिती सांगितली ती तंतोतंत जुळणारी होती. ते दोघेही ८०० वर्षांपूर्वी जर्मनीमधील बव्हेरियाच्या एका गावात जन्मले होते. त्या दोघांचा संबंध नोकर आणि मालक असा होता. त्यांनी आपली त्या जन्मातील जी नावे सांगितली तीही एकमेकाशी जुळली. इतकेच नव्हे तर इतर अनेक बारीकसारिख तपशीलही जुळला. ते वर्ष इ.स. ११३२ सालचे होते व त्या वर्षी काय घडले हे दोघांनीही जे सांगितले तेही सर्व तंतोतंत जुळले. मालक चांदीच्या वस्तूंचा व्यापारी होता व अविवाहित होता. नोकराशी त्याचे अनैसर्गिक लैंगिक संबंध होते. पण नोकराच्या इच्छेविरुद्ध ते होते. परिस्थितिबश तो नोकर ते सहन करीत होता. शेवटी अशी एक घटना घडली (जी दोघांच्याही कथनात तंतोतंत जुळते) की त्यावरून त्या दोघात भांडण झाले त्याचे पर्यवसान मारामारीत व शेवटी मालकाने नोकराचा खून करण्यात झाले. मारामारीचा तपशीलही दोघांनी सारखाच सांगितला. खून करताना मालकाने वापरलेले हत्यार, तो कसा केला इ. तपशीलही दोघांच्या जबाबीत सारखाच होता. सर्वात महत्वाचे म्हणजे या जन्मात त्यांचा परस्परराशी काहीही संबंध नव्हता. ते एकमेकांना ओळखतही नव्हते.<sup>२१०</sup>

संमोहनातून डॉ. गोल्डबर्गला त्यांच्या पूर्वजन्माची ही माहिती योगायोगानेच मिळाली होती. पण ती 'अर्धपूर्ण' होती 'योगायोगाने' माहिती मिळाली याचा अर्थ तिच्या पाठीमागे काही कारण नव्हते. आणि अर्धपूर्ण घटना

कार्यकारणाच्या बाहेरच घडत असतात हे वर सांगितलेच आहे. म्हणून सर्व योगायोगाच्या वा आगंतुक घटना (contingent) अर्थपूर्णच मानल्या पाहिजेत हे अशा घटनेवरून स्पष्ट होते. मग तो अर्थ आपल्याला कळो अगर न कळो. येथे गोल्डबर्गला या योगायोगाने घडलेल्या घटनेतील (मिळालेल्या माहितीतील) अर्थ त्या व्यक्तीच्या पूर्वजन्मामुळे कळला. सर्वांचाच पुनर्जन्म होत असल्यामुळे - सर्वांचाच पूर्वजन्म असल्यामुळे - सर्वांच्या जीवनातील घटना अशा अर्थपूर्णच असतात असे म्हणूनच म्हणावे लागते. तो अर्थ, आपल्याला आपल्या पूर्वजन्माची आठवण होत नसल्यामुळे, कळत नाही. आठवण झाली की आपले जीवन अर्थहीन नाही-अपघाती नाही-याची कल्पना येते. It is not a tale told by an idiot, आपले जीवन म्हणजे वेड्याने सांगितलेली एक गोष्ट नाही याची खात्री पटते. पुनर्जन्माच्या सिध्दांताची - नव्हे वस्तुस्थितीची - ओळख नसणाऱ्या लोकांना मात्र तसे वाटते ! म्हणून ब्रह्मवैज्ञानिक म्हणतात की 'योगायोग नांवाची गोष्ट या विश्वात नाही.' (There is nothing like chance in the universe) कारण (कर्माध्यक्ष) ईश्वराने हे विश्व निर्माण करतानाच-हे विश्वाचे नाटक रचतानाच-त्याला 'कर्मा'ने बांधले आहे. म्हणून त्याची गती (कर्मगती) सुरवातीपासूनच ठरून गेली आहे. त्यातील सर्वच गोष्टी ठरून गेल्या आहेत. उदा. अंक ब्रह्मविज्ञानानुसार अंकांनाही वैश्विक घटनांच्या संदर्भात अर्थ आहे. (म्हणून त्यांचेही एक शास्त्र-अंकशास्त्र-बनले आहे.) काही अंकांचे अर्थ येथे सांगता येतील.

### काही अर्थपूर्ण अंक

ब्रह्मविद्येत ७ ह्या अंकाला विशेष महत्त्व असल्याचे आढळून येते. उदा. भूः, भुवः, स्वः इ. सात वरचे लोक आहेत; व अतल, वितल, सुतल इ. खालचे सात (पाताळ) लोक आहेत. वार सातच आहेत व परंपरागत ज्योतिष शास्त्रात महत्त्वाचे सातच ग्रह मानले गेले आहेत; (राहू, केतू हे ग्रह नाहीत. सूर्य खगोलशास्त्रात नक्षत्र असला तरी ज्योतिषशास्त्रात तो 'ग्रह' आहे.) सूर्यकिरणात रंगही सातच आहेत; सूर्याच्या रथाला सात घोडे आहेत असे ऋग्वेदात म्हटले आहे; (त्याचा हा अर्थ आहे;) सा, रे, ग, म इ. स्वरही सातच आहेत; माणसाच्या स्थूल, सूक्ष्म, लिंग इ. अवस्था (शरीरे) ही सातच आहेत; विश्वात सात तत्त्वे आहेत. (जी माणसातील सात तत्त्वांची प्रतिरूपे आहेत.) ब्रह्मविद्येत माणसाचे मूळ सात स्वभाव सांगितले आहेत; [जे सूर्याच्या, वेदात सांगितलेल्या, सात (रंगाच्या) किरणांचे प्रातिनिधिक आहेत.] माणसाच्या शरीरात अस्थि-मज्जादि सात धातू आहेत; तसेच शरीरात मूलाधार, स्वाधिष्ठान इ. चक्रेही सातच आहेत; मुंडक उपनिषदात (वेदाला अनुसरून) इंद्रियरूपी प्राण सात, अग्नी सात (सप्तजिह्व), समिधा सात, होम सात

सांगितले आहेत, ऋग्वेदातातील 'सप्तसिंधू' (सात समुद्र वा नद्या) माणसाच्या सात वंशाचे प्रतीक मानण्यात येतात; 'सप्तमर्यादा,' सात खंड वा सात स्वभाव मानण्यात येतात; अथर्ववेदात 'सात' अंकाला सर्वात जास्त महत्त्व देण्यात आले आहे; पायथॅगोरस 'सात' हा परिपूर्ण अंक मानत असे; सप्तर्षी प्रसिध्द आहेत; सप्तमातृका (जलदेवता) ही प्रसिध्द आहेत. (यांना मराठी बोली भाषेत 'साती आसरा' म्हणतात.) सात अंकाचे जगातही सर्वत्र प्राबल्य दिसून येते. (विशेषतः इजिप्शियन, खाल्डियन, ग्रीक, रोमन आणि ख्रिश्चन प्रदेशात व धर्मात) ते भारतीय ब्रह्मविद्येतूनच तिकडे पसरले असल्याचे ब्लॅन्हेट्स्की यांनी म्हटले आहे.<sup>२८१</sup>

आधुनिक ब्रह्मविद्येच्या (थिऑसॉफीच्या) संस्थापकांच्या जीवनातही सात या आकड्याने महत्त्वपूर्ण पात्र बजावलेले दिसते. ते पुढीलप्रमाणे -

मॅडम ब्लॅन्हेट्स्की न्यूयॉर्कमध्ये ७ जुलै १८७३ रोजी, म्हणजे सातव्या महिन्याच्या सातव्या दिवशी आल्या; आणि त्यावेळी त्यांचे वय ४२ (६ x ७) होते; आणि ऑलकॉट यांच्याशी त्यांची प्रथम भेट झाली तेव्हा ऑलकॉट यांचे वयही ४२ च (६ x ७) होते. त्यांचा ऑलकॉटशी ब्रह्मविद्येसाठी संबंध आल्यानंतर ब्लॅन्हेट्स्की बरोबर १७ वर्षांनंतर सातव्या महिन्यातच वारल्या. अॅनी बेझंट जेव्हा ब्लॅन्हेट्स्की यांच्याकडे आपल्याला ब्रह्मविद्येची सभासद करून घ्यावयास सांगण्यासाठी प्रथम आल्या तेव्हा त्यांचेही वय ४२ च (६ x ७) होते; आणि त्यांनी ख्रिश्चन धर्माशी संबंध तोडल्याला १७ वर्षे होऊन सातवा महिना सुरू झाला होता. खुद्द ऑलकॉट यांनीही आपण मरु तेव्हा १७ व ७ या अंकाच्या दिवशीच मरु असे भविष्य वर्तविले होते आणि ते खरे ठरले ! ते १७ फेब्रुवारी १९०७ रोजी ७ वाजून १७ मिनिटांनी वारले !<sup>२८२</sup>

ऑलकॉट यांच्या जीवनात ७ ह्या ब्रह्मविद्येच्या अंकाला असेच महत्त्व प्राप्त झाले होते. उदा. ते जेव्हा रेल्वे इ. चे तिकीट काढीत तेव्हा त्यात सात हा आकडा हटकून आढळत असे. एकदा मद्रासहून ब्रह्मदेशाला ते व लेडबीटर बोटीने जाणार होते. त्यांनी बोटीवरील खोलीचे रिझर्वेशन केले. त्या खोलीचा नंबर ११ होता. ते त्या खोलीत प्रवेश करणार तोच बोटीचा अधिकारी त्यांच्याकडे आला आणि म्हणाला, "माफ करा. तुम्हाला चुकून ११ नंबरची खोली दिली गेली. ती खोली अगोदरच रिझर्व झाली आहे. ही दुसरी खोली घ्या." असे म्हणून त्याने दुसऱ्या खोलीचे रिझर्वेशन तिकीट त्यांना दिले. त्या दुसऱ्या खोलीचा नंबर कोणता असावा ? वाचकांनी ओळखलेच असेल. तो सात हाच होता ! रंगूनमध्ये एकदा लेडबीटर व ऑलकॉट यांचा रस्ता चुकला व मुक्कामाला पोहोचणे अशक्य झाले. तेव्हा त्यांनी पोलीसाची मदत घेतली. ऑलकॉट यांनी पोलीसाच्या बकलकडे

पाहण्यास लेडबीटरना (फ्रेंचमध्ये) सुचविले. लेडबीटरनी त्याचा बक्ल नंबर पाहिला. तो होता डबल सात !<sup>२८३</sup>

ब्रह्मविद्येनुसार विश्वव्यवस्थेत अंकाना विशेष अर्थ आहे. ज्योतिषशास्त्र व अंकशास्त्र यांचा परस्परसंबंध असून त्यांना शास्त्रीय स्थान त्यामुळेच प्राप्त झाले आहे. फ्रेंच संख्याशास्त्रज्ञ मायकेल ग्वॉकलौ याने माणसाचे स्वभाव त्याच्या जन्माच्या वेळी उदय होणाऱ्या ग्रहावरून ठरतात हे संख्याशास्त्राचा (statistics) उपयोग करून दाखवून दिले आहे. (उदा. डॉक्टरांचा मंगळ, नटांचा गुरु, शास्त्रज्ञांचा शनी इ.) डॉ. आयर्सेक या मानसशास्त्रज्ञाने त्याचे शोध बरोबर असल्याचे मेयो आणि व्हाइट या दोघा सहकार्यांच्या साहाय्याने तपासून नंतर दाखवून दिले. (उदा. जल राशीखाली- म्हणजे कर्क, वृश्चिक, मीन - जन्मलेले लोक भावनाप्रधान असतात, विषम संख्येच्या राशीखाली - म्हणजे मेष, मिथुन, सिंह इ.-जन्मलेले बहिर्मुख असतात व सम संख्येच्या राशीखाली-म्हणजे वृषभ, कर्क इ.-जन्मलेले अंतर्मुख असतात.)<sup>२८४</sup> खगोलशास्त्रात बोड-टायटसचा नियम प्रसिध्द आहे. या नियमानुसार सूर्यापासूनचे प्रत्येक ग्रहाचे अंतर विशिष्ट संख्येवर अवलंबून आहे. उदा. ०, ३, ६ असे प्रत्येक संख्येला दुप्पट करून त्यात अधिक ४ मिसळत गेल्यास प्रत्येक ग्रहाचे सूर्यापासूनचे अंतर मिळते. या नियमानुसार मंगळ व गुरु या ग्रहांच्या मधल्या कक्षेत ग्रह असल्याचे भाकीत करण्यात आले आणि ते खरे ठरले. त्यानुसार लघुग्रह सापडले. प्ल्यूटोच्या पलीकडे याच नियमानुसार ग्रह असल्याचे भाकीत करण्यात आले व तेही खरे ठरले.<sup>२८५</sup>

नुकतेच २६ डिसेंबर २००४ रोजी इंडोनेशियाच्या सागरात सुनामीचा भयंकर भूकंप होऊन त्यात तीन लाख मेले. यातील २६ आकड्याला अंक व ज्योतिषशास्त्राच्या दृष्टीने महत्त्व आहे. या २६ अंकाची बेरीज ८ होते. २६-१२-२००४ या भूकंप झालेल्या दिवसाच्या सर्व अंकांची बेरीजही १७ म्हणजे ८ च होते. ८ हा अंक शनीचा मानला जातो. यापूर्वी झालेल्या अनेक भूकंपाचा दिनांकही २६ च आहे, हे लक्षात ठेवण्यासारखे आहे. १९३३ मध्ये बिहारमध्ये झालेल्या भूकंपाचा दिनांक २६ ऑगस्ट होता. अंदमान बेटावर १९४१ मध्ये २६ जून रोजीच भूकंपाचा जोरदार धक्का बसला होता. गुजरातमध्ये २००१ साली २६ जानेवारी रोजी भूकंप झाला. २००१ मध्ये २६ सप्टेंबरला चेन्नई येथे भूकंप झाला. २००४ मध्ये जगात इतर नैसर्गिक आपत्तीही २६ दिनांकालाच झाल्या आहेत. २६ फेब्रुवारी रोजी अमेरिकेत हिमवादळ झाले. २६ एप्रिल २००४ रोजी अमेरिकेत व युरोपात प्रचंड तापमान वाढले. तापमानाचा उच्चांक नोंदला गेला. शेकडो-हजारो लोक उष्माघाताने मृत्यूमुखी पडले. तिकडे दक्षिण कोरियात सलग ३६ तास पाऊस झाला. तो तेथील

सरासरीच्या दुप्पट होता. कोरियात पाऊस पडत असताना स्पेनमध्ये तापमानाने उच्चांक गाठला. २६ फेब्रुवारी २००३ मध्ये लेबनॉन, इस्रायल, जॉर्डन येथे हिमवादळ झाले. बर्फवृष्टीने सर्व उच्चांक मोडले. २६ जानेवारी २००५ रोजी पश्चिम-मध्य भागातील देशामध्ये एक अभूतपूर्व घटना घडली. कित्येक दशकानंतर प्रथमच बर्फवृष्टी झाली. त्यानंतर ३ महिन्यांनी म्हणजे २६ एप्रिल रोजी रुमानियामध्ये अचानक महापूर आला. हजारो घरे, शेती उध्वस्त झाली. देशात आणीबाणी जाहीर करावी लागली. नुकतेच २६ जुलै २००५ रोजी मुंबईत सर्व वर्षाचा पाऊस एकाच दिवसात पडला व चेरापुंजीचाही उच्चांक मोडला. महाराष्ट्रात शेकडो लोक मेले. शेतीचे व इतर मालमत्तेचे अपरिमित नुकसान झाले. २६ या अंकाची बेरीज ८ होते व तो शनीचा अंक मानण्यात येतो. शनी हा मानवाला संकटातून आध्यात्मिक धडे शिकवणारा ग्रह आहे असे ज्योतिष्यांचे मत आहे.

### ज्योतिष व कर्म : विश्वव्यवस्थेचा भाग

प्रस्तुत लेखकाने ग्रह व नक्षत्रे हे मानवाच्या भवितव्याचे केवळ दर्शक आहेत, निर्णायक नाहीत, असा विचार मांडला असून तो ब्लॅन्हेट्स्की यांनी ब्रह्मविद्येच्या संदर्भात ज्योतिष विषयावर जे लिहिले आहे, त्याला धरूनच आहे. (असे म्हणण्याचे कारण ज्यावेळी लेखकाने हा विचार मांडला त्यावेळी म्हणजे ४० वर्षांपूर्वी लेखकाने ब्लॅन्हेट्स्की यांचे ब्रह्मविद्येवरील ग्रंथ वाचले नव्हते.) 'मानवावर ग्रहांचा प्रभाव पडतो काय ?' या लेखात त्याने दाखवून दिले आहे की मानवी स्वभाव व त्यांच्या जीवनातील घटना व जन्म कुंडलीतील ग्रहस्थिती यांचा संबंध प्रभावाचा (शक्तीचा) नसून व्यवस्थेचा आहे.<sup>१८६</sup> ज्योतिषशास्त्राविषयी योगी अरविंदांनी जे म्हटले आहे तेही प्रस्तुत लेखकाच्या याच (म्हणजे व्यवस्थेच्या) प्रतिपादनाला पुष्टी देत असल्यामुळे त्यांचे हे म्हणणे येथे संक्षेपाने उद्धृत करतो. (योगी अरविंदांचेही ग्रंथ वरील प्रतिपादन करतेवेळी लेखकाने वाचले नव्हते.) योगी अरविंद म्हणतात, "Many astrological predictions come true quite a mass of them, if one takes all together. But it does not follow that the stars rule our destiny; the stars merely record a destiny that has been already formed, they are hieroglyph, not a force ... Some one is there who has determined or something is there which is Fate, let us say; the stars are only indicators"<sup>१८७</sup> (Italics added)

अर्थ : "ज्योतिषशास्त्राची भाकिते एकंदरीत खरी ठरतात. पण त्यावरून ग्रह-तारे आपले नशीब ठरवतात असे ठरत नाही. ते फक्त आपल्या कर्माची, नशीबाची नोंद करतात. ते कर्म वा नशीब अगोदरच निर्माण झालेले असते. ग्रहतारे कर्माची चिन्हे वा संकेत आहेत; शक्ती वा बल नाहीत. आपले कर्म ठरविणारे

कोणीतरी आहे. 'नशीब' नांवाचे काहीतरी आहे. ग्रह-तारे त्याचे फक्त निर्देशक आहेत."

अशारीतीने आपले कर्म वा नशीब अगोदरच निर्माण झालेले असेल वा ठरले असेल आणि ग्रह तारे ते फक्त निर्देशित करीत असतील तर विश्व हे एक नाटक असून त्याचे कथानक (script) अगोदरच लिहून ठेवले गेले आहे असे ठरते. या अगोदरच लिहून ठेवलेल्या कथानकालाच 'आकाशलेखन' (Akashic Record) म्हणतात. त्यातील घटना ईश्वरी नियोजनानुसार, ईश्वररूपी नाटककाराने ठरवून व लिहून ठेवल्याप्रमाणेच, त्याच्या संकेतानुसारच घडतात असे म्हणावे लागते. योगी अरविंद हेच सांगतात :

Nothing we think or do is void or vain .....  
We reap the fruit of our forgotten deeds ...  
They seem but parts of a mechanic Force .....  
Yet are they instruments of Will supreme ...  
A pre-scient architect of Fate and Chance  
Who builds or lives on a foreseen design

Savitri, Book four, Canto Three)

अर्थ : "आम्ही केलेला कोणताही विचार किंवा कृती परिणामशून्य नसते. जी फळे आपण भोगतो ती पूर्वजन्मातील (जो जन्म आपल्याला आठवत नाही त्यातील कर्माची) फळेच असतात. ती यांत्रिक शक्तीची परिणामस्वरूप असल्याची बरबर दिसत असली तरी त्या श्रेष्ठ परमात्म्याच्या संकल्पानुसारच ती सर्व घडत असतात. ज्याला आपण 'नशीब' किंवा 'योगायोगा'च्या घटना म्हणतो, त्या वास्तविक पुढे काय घडवायचे हे ठरवूनच तो विश्वरचनाकार (नाटककार) (त्या विश्वात) घडवून आणत असतो. तोच आपले जीवन पूर्वनियोजित सूत्रानुसार (ठरवलेल्या योजनेप्रमाणे) घडवत असतो."

विश्व हे ईश्वररचित सूत्रबद्ध नाटक असल्यामुळेच ते (कोणत्याही नाटकाप्रमाणे) 'अर्थपूर्ण' बनले आहे. आपल्या विचारांचा व कृतींचा परिणामच विश्वातील हा 'अर्थ' निर्माण करीत असतो. कारण कोणताही विचार किंवा कोणतीही कृती परिणामशून्य नसते. ते परिणाम केव्हा घडून येतील हे आपल्याला सांगता येत नाही. (कारण संचित कर्माचे प्रारब्ध कर्मात केव्हा रूपांतर होते. हे आपल्याला माहीत नसते.) (म्हणून अरविंदांनी fruit of forgotten deeds म्हणजे 'आपल्याला न आठवण्याऱ्या पूर्वजन्मातील कर्माची फळे' असा शब्दप्रयोग केला आहे.) अशारीतीने आपल्याच विचारांचा व कृतींचा (कर्माचा) परिणाम विश्वात 'अर्थ' निर्माण करीत असला तरी तो 'अर्थ' आपल्याला (आपल्या पूर्वजन्माच्या



विस्मृतीमुळे) कळत नसल्यामुळे आपल्याला भोगाव्या लागणाऱ्या (वाईट) कर्माच्या फळाबद्दल आपण नेहमी 'नशीबा' ला दोष देतो-विशेषतः अपघातामुळे झालेल्या वित्त व जीवितहानीबद्दल. आपण आपल्या अज्ञानामुळे त्या घटनेला 'अपघात' म्हणत असतो. पण 'अपघात' कधीच घडत नसतो (there is nothing like chance) हा ब्रह्मविद्यानाचा मूळ सिध्दांत आहे. ही गोष्ट योगी अरविंद पुढीलप्रमाणे सांगतात-

And even this random Fate that imitates Chance

This mass of unintelligible results,

Are the dumb graphs of truths that work unseen:

The laws of the Unknown create the known.

**Savitri, Book One, Canto Four**

अर्थ : या अपघातरूपी अकस्मात् घडणाऱ्या 'नशीबा'च्या घटनासुद्धा, जरी त्यांचा अर्थ आपल्याला किंचितही कळत नसला तरी, पडद्यामागे राहून कार्य करणाऱ्या सत्यांचेच मौन आलेख असतात. (ते हे सांगतात की) अज्ञात जगातील नियम ज्ञात जगात परिणाम घडवून आणत असतात. (म्हणजेच सर्वशक्तिमान ईश्वर पडद्यामागे राहून कर्माच्या नियमांचे सूत्रचालन करीत असतो व हे विश्वरूपी नाटक 'अर्थपूर्ण' बनवत असतो.)

अर्थपूर्ण घटना कार्यकारणभावाच्या बाहेर घडणाऱ्या घटना असतात, असे (युंगने synchronicity चे तत्त्व विशद करताना म्हटल्याचे) वर सांगितले आहे. 'अपघात' हे त्याचे उत्कृष्ट उदाहरण आहे. 'अपघात'ला भौतिक कारण असल्याचे वरवर दिसत असले तरी ते माणसाचे समाधान करू शकत नाही. कारण ते खरे कारण नसते. त्याच्या दृष्टीने 'अपघात' अर्थहीन असतात. (आकाशातील कुन्हाड, 'freak of nature' हे अपघातासाठी वापरले जाणारे शब्दप्रयोग हेच सुचवितात.) कोणतीही घटना माणसाच्या मनाच्या संबंधाने घडली तरच ती 'अर्थपूर्ण' ठरते, अशी 'अर्थपूर्ण' घटनांची व्याख्या मागे केली आहे. अपघात माणसाच्या मनाच्या संबंधाने घडत नसल्यामुळे ते (या दृष्टीने) अर्थहीनच असतात. ते का घडावेत हे माणसाला कळत नाही. पण म्हणून ते खरोखरच 'अर्थहीन' असतात काय ? ते अर्थहीन नसतात हेच सांगण्यासाठी योगी अरविंदांनी "even this random Fate that imitates Chance-This mass of unintelligible results-are dumb graphs of truths that work unseen" म्हणजे "ह्या अपघातरूपी अकस्मात् घडणाऱ्या 'नशीबा'च्या घटना, जरी त्यांचा अर्थ आपल्याला किंचितही कळत नसला तरी, पडद्यामागे राहून कार्य करणाऱ्या सत्यांचेच मूक आलेख असतात." असे म्हटले आहे. याचा अर्थ अपघात अतींद्रिय पातळीवरून (कर्माचे परिणाम म्हणून) घडवले जात असून ते कर्मरूपी सत्यांचे आलेख असतात, असा

होतो. ते कर्माचे नियम आपल्याला कळत नसल्यामुळे आपण आपल्या नशीबाला दोष देऊन मोकळे होतो. पण 'नशीब' हेही अतींद्रिय जगातील नियमानुसारच घडवले जात असते, यद्यपि ते अतींद्रिय नियम आपल्याला किंचितही कळत नाहीत. (म्हणून 'कर्मणो गहना गतिः।' 'कर्माची गती-नियम-गहन-न कळणारे-आहेत' असे गीता म्हणते.) म्हणून "The laws of the Unknown create the known" म्हणजे "अज्ञात-अतींद्रिय-जगाचे (कर्माचे) नियम ज्ञात-इंद्रियगोचर (दृश्य) जगात परिणाम घडवून आणतात." असे अरविंद म्हणतात. ह्या (अतींद्रिय जगातील) नियमांचे सूत्रचालन (श्वेताश्वतर उपनिषत्कारांनी म्हटल्याप्रमाणे) 'कर्माध्यक्ष' ईश्वरच (आपल्या हाताखालच्या कर्मदेवतांमार्फत) करीत असतो. त्यामुळेच संपूर्ण विश्व 'अर्थपूर्ण' बनले आहे. त्यामुळे जरी हे विश्व वरवर भौतिक नियमानुसार चालत असल्यासारखे माणसाच्या मायिक दृष्टीला (ईश्वरी मायेमुळे) दिसत असले तरी ते अंतर्दामी ईश्वराच्या नियोजित नाटकातील कर्माच्या अतींद्रिय नियमानुसारच चालले आहे. म्हणून योगी अरविंद "they seem but parts of mechanic Force, yet are they instruments of Will supreme" म्हणजे "ती (भौतिक कर्मे) वरवर यांत्रिक शक्तीची परिणामस्वरूप असल्याची दिसत असली तरी त्या श्रेष्ठ परमात्म्याच्या संकल्पानुसारच ती घडत असतात." असे म्हणतात. कारण "A prescient architect of Fate and Chance.. builds our lives on a foreseen design" म्हणजे "पुढे काय घडवायचे हे ठरवणारा (आपल्या जीवनाचा शिल्पकार) व जाणणारा तो परमात्मा आपले नशीब व 'योगायोगा'च्या घटना अगोदरच निश्चित करतो व त्या योजनेनुसारच आमचे जीवन घडवतो," असे अरविंद म्हणतात. (अर्थात् तो सर्व आपल्याच पूर्वकर्माचा परिणाम असतो.)

विश्व हे ईश्वराने रचलेले नाटक आहे आणि ते कर्मांमुळे 'अर्थपूर्ण' बनले आहे, याचे ज्ञान नसल्यामुळे आणि विशेषतः कर्माची गती माणसाला कळत नसल्यामुळे बुद्धीला सर्व काही कळते असे समजून तिच्यावर भिस्त ठेवणाऱ्या पंडित लोकांची नेहमीच दिशाभूल होत असते. उदा. पंडित ईश्वरचंद्र विद्यासागर एकदा म्हणाले होते, "चेंगीजखानने हजारो निरपराध लोकांची कत्तल केली. ती ईश्वराला माहीत होती. पण ती तो टाळू शकला नाही. जो ईश्वर अशी कत्तल टाळू शकत नाही, ती मान्य करतो, अशा ईश्वराला मानून काय उपयोग? अशा ईश्वराची माणसाला गरज नाही. असा ईश्वर मी मानत नाही." याला रामकृष्ण परमहंसांनी आपल्या खास शैलीत पण वरील अरविंदांचेच उत्तर दिले आहे. ते म्हणाले, "ईश्वर हे जग निर्माण करतो, त्याचे संरक्षण करतो आणि त्याचा नाशही करतो. तो (आपणच निर्माण केलेले) जग नाश का करतो, हे माणसाला कळणे शक्य नाही." "१८८" हेच ते

दुसऱ्या शब्दात “ही ईश्वराची लीला आहे” असे सांगत असत. ‘लीला’ म्हणजे ‘खेळ’ किंवा ‘नाटक’. (इंग्रजीत play हा शब्द ‘खेळ’ व ‘नाटक’ या दोन्हीबद्दल वापरतात आणि ते अगदी बरोबर आहे.) नाटकात कोणती पात्रे घालावयाची, कोणते प्रसंग निर्माण करावयाचे हा त्या नाटककाराचा प्रश्न असतो; आणि तो ती पात्रे कोणाच्या बुद्धीला पटावे म्हणून घालत नसतो व ते प्रसंग निर्माण करीत नसतो. (ईश्वर हा विश्वाचा नाटककार आहे, विश्व हे त्याचे नाटक वा खेळ आहे हे लोकवचन लीलाकैवल्यम् । या ब्रह्मसूत्रात बादरायण व्यासांनी म्हटल्याचे यापूर्वी सांगितलेच आहे. पृ. ३८३) ईश्वराने विश्वाचा हा खेळ का खेळला ? हे विश्वाची नाटक त्याने का रचले ? कोणताही खेळ बुद्धीला पटण्यासाठी कोणी खेळत नाही. कोणतेही नाटक एखाद्याच्या बुद्धीला पटावे म्हणून कोणी लिहीत नाही. खेळ खेळणाऱ्याच्या किंवा नाटक लिहिणाऱ्याच्या पाठीमागे तो खेळ खेळणाऱ्याची किंवा त्या नाटककाराची उत्सर्जन शक्ती (creative urge) कार्य करीत असते. त्यातूनच तो खेळ खेळण्यास किंवा ते नाटक लिहिण्यास प्रवृत्त होतो. ईश्वराच्या विश्वनिर्मितीच्या पाठीमागे त्याची ही उत्सर्जन शक्तीच कार्यरत आहे. ही गोष्ट उपनिषत्कारांनी स एकाकी न रमते। (बृ.उप.१.४.३) ‘त्या ईश्वराला एकट्याला करमत नाही, या शब्दात सांगितली आहे. (यातील रम् = खेळ, करमणूक करणे हा शब्द अर्थपूर्ण आहे.) पण कोणताही खेळ खेळण्यासाठी प्रतिस्पर्धी असावा लागतो. नाटक रंगण्यासाठी एखादा खलपुरुष असावा लागतो. अशारीतीने ईश्वराने सत्-असत्, चांगले (good)-वाईट (evil), पुण्य-पाप या जोड्या नाटक रंगण्यासाठी निर्माण केल्या. रामायणात जसा राम झाला, हनुमत झाला, तशी कैकेयी झाली, रावण झाला. ती वाईट पात्रे का निर्माण व्हावीत ? पण ती निर्माण झाली नसती तर रामायण रंगले नसते-नव्हे घडलेच नसते. तसेच कौरव निर्माण झाले नसते तर महाभारतही घडलेच नसते. म्हणून या जगात जसे कृष्ण, बुद्ध, ख्रिस्त झाले, तसे कंस, अलेक्झांडर, चेंगिजखान, हिटलर झाले. ते का झाले ? रामकृष्णांनी म्हटल्याप्रमाणे ती ईश्वराची ‘लीला’ आहे, ‘नाटक’ आहे, खेळ आहे, म्हणून झाले. आणि तो खेळ, ते नाटक अरविंदानी म्हटल्याप्रमाणे, अदृश्य (अतींद्रिय) पातळीवरील कर्माच्या नियमांनी ईश्वराने बांधले आहे. अज्ञात अतींद्रिय (आध्यात्मिक) नियमांचे ते ज्ञात, दृश्य जगातील परिणाम आहेत. (ते नियम माहित झाले तर हे नाटक अर्थपूर्ण आहे हे कळून ते बुद्धीला सुध्दा मग पटेल.)

या संदर्भात synchronicity या विषयावर संयुक्तपणे ग्रंथ लिहिणारे व ‘अर्थपूर्ण घटनात्मकते’चे कार्यकारणाबाहेरचे, पण कार्यकारणभावाइतकेच विश्वात महत्वाचे कार्य करणारे स्वतंत्र तत्त्व प्रतिपादणारे युंग आणि पॉली यांनी ते तत्त्व

विशद करताना ज्या युरोपियन विचारवंतांच्या साक्षी काढल्या आहेत त्या पाहण्यासारख्या आहेत. उदा. पॉली याने केप्लर या आधुनिक विज्ञान आणि मध्ययुगीन जादूटोणा यांना जोडणाऱ्या, त्या दोहोत दुवा सांधणाऱ्या, शास्त्रज्ञाचे पुढील अवतरण (अर्धपूर्ण घटनात्मकतेचे तत्त्व विशद करण्यासाठी) दिले आहे. \* केप्लर म्हणतो, "Now as the Creator played, so he taught Nature to play; and to play the very same game that He played for her first." (p. 172) याचा अर्थ असा, "ईश्वराने खेळ खेळला (नाटक रंगविले) आणि आपलीच प्रतिमा असलेल्या निसर्गाला तो खेळ खेळण्यास (ते नाटक रंगविण्यास) त्याने शिकविले; आणि तो खेळ (ते नाटक) निसर्गासाठी प्रथम (सृष्टिनिर्मितीच्या वेळी) त्याने खेळलेलाच खेळ होता. (रंगविलेलेच ते नाटक होते.)" या अवतरणावर टिप्पणी करताना पॉली म्हणतो, "केप्लरची ईश्वराच्या खेळाची (नाटकाची) ही कल्पना त्याच्या 'पिंडी ते ब्रह्मांडी' (microcosm reflects macrocosm) या [गूढवादी] तत्त्वाशी सुसंगतच आहे." केप्लरची सृष्टीच्या निर्मितीपासून चालू असलेल्या ह्या ईश्वराच्या खेळाची किंवा नाटकाची कल्पना त्याच्या 'पिंडी ते ब्रह्मांडी' या कल्पनेशी सुसंगतच आहे, असे पॉलीने येथे म्हणण्याचे कारण केप्लरने 'पिंडी ते ब्रह्मांडी' हे मध्ययुगातील जादूटोणा व गूढवादाच्या (magic, alchemy and occultism) तत्त्वेवेल्यांनी मांडलेले 'तत्त्व' स्वीकारले होते. \*\* हे तत्त्व असे सांगते की जे पिंडात (मानवाच्या जीवात) आहे, ते ब्रह्मांडात (निसर्गात, बाह्य जगात) आहे; आणि दोहोत सृष्टिनिर्मितीच्या वेळी ईश्वराने सारखाच अर्थ भरला आहे. तसा तो भरला नसता तर तो खेळ किंवा ते नाटक मुळावरहुकूम झाले नसते, असे केप्लर

\* केप्लर हा समुद्राच्या भरती ओहटी सूर्यचंद्राच्या गुरुत्वाकर्षणामुळे होतात हे शास्त्रीय मत (ज्ञानेश्वरादि भारतीयांना सोडले तर) पाश्चात्य जगात प्रथम मांडणारा शास्त्रज्ञ होता (केप्लरच्या या मताची गॅलीलियोने 'गूढ कल्पनाविलास' (Occult fancy) म्हणून हेटाळणी केली होती !) सूर्यमालेतील ग्रहगतींचे केप्लरचे तीन नियम प्रसिद्ध असून त्याच्या तिसऱ्या नियमावरच न्यूटनचा गुरुत्वाकर्षणाचा सिध्दांत आधारला आहे. यावरून केप्लरची विचारसरणी कशी शास्त्रशुध्द होती हे दिसून येते असे असूनही गूढ शास्त्रावर त्याचा न्यूटनप्रमाणे विश्वास होता. (न्यूटनही गूढ शास्त्रज्ञ होता. पण ही गोष्ट प्राश्नात्य बुद्धीवादी शास्त्रज्ञांनी जगापासून लपवून ठेवली आहे.)

\*\* हे ब्रह्मविज्ञानाचे विश्वाविषयीचे मूलभूत तत्त्व असून ते कठोपनिषदात पुढीलप्रमाणे सांगितले आहे. यदेवेह तदमुत्र यदमुत्र तदन्विह । (कठ उप. २.१.१०) म्हणजे "जो परमेश्वर (अतींद्रिय तत्त्व) या जगात (खाली) आहे, तोच परलोकात (वर) आहे; जो परलोकात (वर) आहे, तोच परमेश्वर (अतींद्रिय तत्त्व) या जगातही (खाली) आहे." म्हणून सर्वत्र एकात्मता आहे, नानात्व कुठेच नाही, असे पुढे म्हटले आहे. हेच तत्त्व पाश्चात्य मध्ययुगीन गूढवाद्यांनी (occultists) 'As above, so below' (जसे वर तसे खाली) या शब्दात सांगितले आहे.

म्हणतो. म्हणून पॉली म्हणतो की, “(God’s) playful activity (is) established ever since the creation of the world and replayed by nature in imitation of the original,” (p 172) म्हणजे “सृष्टिनिर्मितीच्या काळापासून हा (ईश्वराचा) खेळ (किंवा नाटक) प्रस्थापित झाला असून तेव्हापासून तो निसर्गात मुळाबरहुकूम सतत खेळला जात आहे. (नाटक रंगवले जात आहे.)” अशारीतीने मानवी आत्मा व निसर्ग (जड जगत्) यांच्यात ईश्वराने सृष्टिनिर्मितीच्या वेळीच सारखाच अर्थ भरलेला असल्यामुळेच त्या दोघोत अर्थपूर्ण संबंध निर्माण झाला आहे; आणि हा खेळ किंवा हे (विश्वरूपी) नाटक व्यवस्थित चालले आहे. मानवी आत्मा व जड जगत् यांच्यातील सारख्याच रीतीने भरलेल्या या अर्थालाच ‘सहानुभूतियुक्त अनुकंपन’ (resonance or sympathetic vibrations) किंवा सर्व वस्तूंची परस्पर सहवेदना (sympathy of all things or signature of God) म्हणतात. पण मानवी आत्मा व निसर्ग या दोघोत हा सारखाच अर्थ ईश्वराने का भरला आहे हे मात्र केप्लरला माहीत नाही, आणि पॉलीलाही माहीत नाही ! कारण त्यांना कर्मसिद्धांताची ओळख नाही !

युंगच्या बाबतीतही असेच घडले आहे. युंगने १६ व्या शतकातील पिको डेला मिरेडोला या युरोपियन विचारवंताचे विचार आपल्या अर्थपूर्ण घटनात्मकतेचे तत्त्व विशद करण्यासाठी अधिकृत म्हणून निवडून मांडले आहेत. सजीव प्राण्याच्या शरीराच्या सर्व भागांची (अवयवांची) जशी योजनाबद्ध मांडणी केलेली असते, तशीच विश्वाच्या सर्व भागांची मांडणी केलेली असून हे विश्व म्हणजे ईश्वराचे दृश्य (सजीव) शरीरच आहे, असे पिको म्हणतो. त्याचे हे विचार मांडून युंग पुढे म्हणतो, “The view that all things are arranged according to God’s will is one that leaves little room for causality. Just as in a living body the different parts work in harmony and are meaningfully adjusted to one another, so events in the world stand in a meaningful relationship which cannot be derived from any immanent causality. The reason for this is that in either case the behaviour of the parts depends on a central control which is superordinate to them.” (p 103-4) याचा अर्थ असा, “ईश्वराने या जगात सर्व गोष्टींची मांडणी आपल्या संकल्पानुसार केली आहे या दृष्टिकोनामध्ये कार्यकारणभावाला काही स्थानच असू शकत नाही. जिवंत शरीराचे निरनिराळे भाग जसे परस्पराशी जुळवून घेऊन सुसंगतपणे व अर्थपूर्णरीतीने कार्य करतात, तसे जगातील सर्व घटना परस्पराशी अर्थपूर्णरीतीने बांधल्या गेल्या असल्यामुळे त्यांच्यात अंगभूत कार्यकारणभाव असूच शकत नाही. याचे कारण असे की शरीरातील निरनिराळ्या भागाप्रमाणे जगातील निरनिराळ्या भागांचे कार्य त्या भागापेक्षा श्रेष्ठ अशा केंद्रवर्ती नियंत्रणावर (ईश्वरावर) अवलंबून असते. त्याच्या सत्तेखाली ते चालते.”

शरीरातील निरनिराळ्या अवयवाप्रमाणे जगातील निरनिराळ्या भागांचे व घटनांचे सूत्रचालन ईश्वर केंद्रवर्ती बनून करतो, म्हणून त्यांचे कार्य सुसूत्रपणे व अर्थपूर्णरीतीने चालले आहे, हे खरे आहे. पण तो ते सूत्रचालन कोणत्या तत्त्वानुसार करतो, हे युंग सांगू शकत नाही, आणि पिकोही सांगू शकत नाही; कारण ते त्या दोघांनाही (केप्लर व पॉलीप्रमाणेच) माहीत नाही ! याचे कारण ख्रिश्चन धर्म पुनर्जन्म मानत नसल्यामुळे त्या धर्माच्या प्रभावाखाली वाढलेल्या त्या सर्वांना कर्मसिध्दांताची ओळख नाही ! तथापि ईश्वर हा विश्वरूपी नाटकाचा कर्ता असल्यामुळे म्हणजेच ते नाटक ईश्वराच्या संकल्पामुळे 'अर्थपूर्ण' बनलेले असल्यामुळे त्यात कार्यकारणभावाला स्थानच असू शकत नाही, हा महत्वाचा मुद्दा त्या सर्वांनी मांडला असून तोच त्यांच्या अर्थपूर्ण 'घटनात्मकते' च्या नव्याने मांडलेल्या तत्त्वाच्या बुडाशी आहे. अर्थपूर्ण विश्व ही ईश्वराची 'निर्मिती' असल्यामुळे कोणतीही 'निर्मिती' ही अर्थपूर्णच असते. असे युंगने मानले असून 'अर्थपूर्ण घटनात्मकते' ला तो म्हणूनच *act of creation* ('निर्मितीकृती') म्हणतो; आणि हे अगदी बरोबर आहे. उदा. नाटक ही नाटककाराची 'निर्मितीकृती' (*act of creation*) असते. म्हणून त्यातील सर्व घटना अर्थपूर्ण असतात. म्हणजे त्या परस्पराशी अर्थपूर्णरीतीने बांधल्या गेलेल्या असतात; कार्यकारणभावाने नाही. त्या घटनातील अर्थ त्या नाटककाराने आपल्या संकल्पशक्तीने निर्माण केलेला असतो. *भौतिक कारणांनी तो निर्माण झालेला नसतो.* नाटकातील भौतिक घटना भौतिक कारणांनी घडल्याच्या दाखवलेल्या असल्या तरी त्या घटना वास्तविक त्या नाटककाराच्या मनातूनच (संकल्पशक्तीने) निर्माण झालेल्या असल्यामुळे अर्थपूर्ण बनलेल्या असतात, भौतिक कारणांनी (म्हणजे कार्यकारणभावाने) त्या अर्थपूर्ण बनलेल्या नसतात. They seem but parts of mechanic Force, yet are they instruments of Will supreme [ती (कर्म) यांत्रिक शक्तीची परिणामस्वरूप दिसत असली तरी त्या श्रेष्ठ परमात्म्याच्या संकल्पानुसारच ती सर्व घडत असतात.] हे विश्वरूपी ईश्वराच्या नाटकाबाबत योगी अरविदांनी जे म्हटले आहे, ते येथे लक्षात घेतले तर मानवनिर्मित नाटकाप्रमाणेच हे विश्व परमेश्वराचे *act of creation* (निर्मितिकृत्य) आहे व म्हणून अर्थपूर्ण बनले आहे, कोणत्याही भौतिक कारणामुळे (कार्यकारणभावाने) नाही, हे लक्षात येईल, यद्यपि त्यातील घटना भौतिक (यांत्रिक) कारणांनी घडत असल्याप्रमाणे आपल्याला दिसतात. 'यंत्रारुढानि मायया' हे गीतेचे वचन लक्षात घेतले तर या विश्वात 'यांत्रिक (भौतिक) कारणे' जी आपल्याला दिसतात, ती ईश्वराच्या अदृश्य-पडद्यामागील सूत्रचालन या दृश्य जगाच्या रंगमंचावरील नाटकात चालले आहे हे विसरल्यामुळे आपल्याला दिसतात, हे लक्षात येईल.\* 'मम माया दुरत्यया' (माझ्या मायेचा

\* युंग म्हणतो "It (synchronicity) is an initial state which is "not governed by mechanistic law" but is the precondition of law," (p 138) म्हणजे (तळटीप ४९५ वर बघू)

तडाखा जबरदस्त आहे) हे गीतेतील कृष्णवचन लक्षात घेतले तर ही भौतिक (यांत्रिक) कारणे खरी समजून माणूस भौतिकवादी व यंत्रवादी बनावे यात आश्चर्य नाही. पाश्चात्य वैज्ञानिक व आपल्याकडील चार्वाकवादी हे जडवादी का बनले आहेत याचा यावरून उलगडा होतो. माया ही खरोखरच 'दुरत्यया' म्हणजे ओलांडण्यास अत्यंत कठीण आहे, हे त्यावरून दिसून येते.

अशारीतीने हे भौतिक विश्व (निसर्ग) त्यातील मानवासह एखाद्या नाटकाप्रमाणे अर्थपूर्ण बनले आहे, ते त्या ईश्वररूपी 'नाटककाराची निर्मितकृती' (act of creation) असल्यामुळे, कोणत्याही भौतिक कार्यकारणभावाने नाही, हे सत्य युंगने पिको या १६ व्या शतकातील विचारवंताच्या मताच्या आधारे वाचकांना सांगितले आहे व आपले अर्थपूर्ण घटनात्मकतेच्या तत्त्वाचे समर्थन केले आहे. पण कर्मसिद्धांताचा परिचय नसल्यामुळे ते अधूरे राहिले आहे. युंगने एककालिकतेचा (simultaneity) घटक महत्त्वाचा मानून, त्यावर भर देऊन अर्थपूर्ण घटनांना 'एककालिक घटनात्मकता' (synchronicity) हे नांव दिले आहे. बऱ्याच अतींद्रिय घटना (जे.बी. ज्हाईन याने दाखवून दिल्याप्रमाणे) एककालिक असतात हे खरे आहे. (म्हणून युंगने त्यांचा उपयोग आपल्या तत्त्वाच्या समर्थनार्थ करून घेतला आहे.) तथापि मागे दाखवून दिल्याप्रमाणे पुनर्जन्माच्या घटना एककालिक नसतात- असूच शकत नाहीत. तथापि त्या अर्थपूर्णच असतात. जी भाकिते (वा स्वप्ने) बऱ्याच कालावधीनंतर खरी ठरतात, तीही एककालिक नसतात. तथापि त्या भाकिताच्या घटनाही (भाकिते खरी ठरल्यामुळे) अर्थपूर्णच ठरतात व असतात. पुनर्जन्माच्या घटना कर्मसिद्धांतामुळे अर्थपूर्ण बनतात; आणि पुनर्जन्म मानवी जीवनाचा अविभाज्य घटक असल्यामुळे - सर्वांचाच पुनर्जन्म होत असल्यामुळे - सर्व मानवी जीवनच अर्थपूर्ण बनते. अशारीतीने पुनर्जन्म व कर्मसिद्धांत यांचा विचार अर्थपूर्ण घटनात्मकतेच्या तत्त्वाच्या चर्चेमध्ये न आल्यामुळे युंग व पॉली यांचे त्या तत्त्वाचे विवेचन अधूरे बनले आहे. त्या दोघांनी फक्त अतींद्रिय घटना ह्या 'अर्थपूर्ण' (म्हणजे कार्यकारण-भावाच्या बाहेरच्या) व म्हणून 'अपवादात्मक' घटना मानल्या आहेत व बाकीच्या सर्व घटना कार्यकारणभावाने जखडलेल्या घटना मानल्या आहेत.\* पण विश्व हे ईश्वराचे 'निर्मितकृत्य' (act of creation) आहे हे खरे असेल तर त्यातील काही घटना 'अर्थपूर्ण' व इतर घटना

(तळदीप ४९४ वरून चालू) "(अर्थपूर्ण घटनात्मकता) ही प्रारंभिक अवस्था आहे, ती यांत्रिक नियमाच्या अमलाखाली चालत नाही, उलट ती (यांत्रिक) नियमावर (स्वतःच आपला) अंमल चालविते."

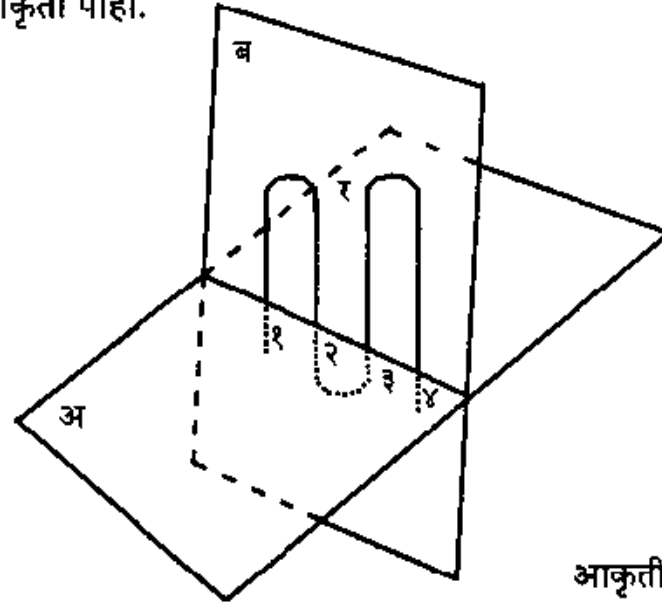
\* आपण 'अर्थपूर्ण' (अतींद्रिय) घटना 'अपवादात्मक' का मानतो, हे युंग पुढीलप्रमाणे सांगतो, "Since causality is a statistical truth, it holds good only on average and thus leaves room for exceptions which must somehow be experienceable, that is to say, real. I try to regard synchronistic events as (तळदीप पुढील पानावर)

‘अर्थहीन’ कशा असू शकतील ? तशा त्या आहेत असे मानले तर अर्थपूर्ण घटना अर्थहीन जगात का व कशा निर्माण झाल्या हे सांगावे लागेल व अर्थपूर्ण घटनांचा बाकीच्या अर्थपूर्ण घटनांशी मेळ घालवा लागेल ! हा मेळ घालणे युंगलाही जमलेले नाही व पॉलीलाही जमलेले नाही. युंगने ‘अर्थपूर्ण’ घटना मानवी मनाच्या संबंधाने घडणाऱ्या ‘अपवादात्मक’ घटना मानल्या असल्यामुळे त्याच नियमबाह्य (म्हणजे कार्यकारणभावाच्या बाहेर घडणाऱ्या, आगंतुक) घटना मानल्या आहेत व ‘अर्थहीन’ घटना (म्हणजे मानवी मनाशी संबंधित नसलेल्या भौतिक घटना) ह्या नियमानुसार (म्हणजे कार्यकारणभावानुसार) घडणाऱ्या नियमित (regular) घटना मानल्या आहेत. मानवी मनाच्या संबंधाने (म्हणजे कार्यकारणभावाच्या बाहेर) घडणाऱ्या ‘अर्थपूर्ण’ घटना अशारीतीने आगंतुक आणि नियमबाह्य (अपवादात्मक) असल्या तरी त्या ईश्वराच्या मनात नियमानुसार घडणाऱ्या नियमित घटनाच आहेत असे म्हणून त्या दोहोत मेळ घालण्याची समस्या युंगने (खुबीने) टाळली आहे ! “What happens successively in time is simultaneous in the mind of God” (म्हणजे “कालात एकामागून दुसरी असे तुटकपणे, आगंतुकपणे घडणाऱ्या घटना ईश्वराच्या मनात एककालिकच असतात”) हे त्याचे या संदर्भातील वाक्य असून ते त्याने तळटीपेत दिले आहे ! (p.142) म्हणजे जो केंद्रवर्ती मुद्दा आहे त्याला त्याने तळात ढकलून गौण मानला आहे ! याच्याउलट पॉलीने हा प्रश्न एका दृष्टांताने सोडवल्याचा आभास निर्माण केला आहे. पण वस्तुतः त्याला बगल देण्याचाच तो प्रकार आहे ! (कारण दृष्टांत ही उपपत्ती होऊ शकत नाही.) उदा. भौतिक विज्ञानातील Complementarity ची संकल्पना हा ‘संबंधा’चा प्रश्न समाधानकारकपणे सोडवतो असे म्हणून पुढे त्याने विधान केले आहे की “It would be most satisfactory of all if physis and psyche could be seen as complementary aspects of the same reality.” (p. 210) म्हणजे “भौतिक आणि मानसिक घटना ह्या एकाच सत्याच्या दोन परस्परपूरक बाजू मानणे सर्वात जास्त समाधानकारक आहे.” यातील परस्परपूरकता (complementarity) हे भौतिक शास्त्रातील बोहरने मांडलेले तत्त्व असून त्याचा पॉलीने येथे दृष्टांत म्हणून उपयोग केला आहे. या बोहरच्या तत्त्वानुसार प्रकाश किंवा भौतिक वस्तू एकाच वेळी ‘कण’ (particle) आणि ‘तरंग’ (wave) अशा परस्परविरुद्ध स्वरूपात वागतांना दिसते, याचे कारण त्या दोहोहून वेगळ्या सत्याच्या (मागील पानावरून) acausal events of this kind.” (p. 144) (Italics original) याचा अर्थ असा : “(आधुनिक विज्ञानात) कार्यकारणभावाचा नियम ‘सांख्यिकीय’ म्हणजे ‘सरासरी’ च्या स्वरूपाचा असल्यामुळे तो ‘अपवादात्मक’ घटनांना जगा सोडतो. ह्या अपवादात्मक घटना अनुभवाला उतरणाऱ्या, म्हणजे ‘सत्य’ असल्या पाहिजेत. अशा कारणाबाहेर घडणाऱ्या (सत्य) घटनांना मी एककालिक घटना मानतो.” कार्यकारणभावाच्या नियमाला काही घटना ‘अपवाद’ मानण्याचे समर्थन युंगने त्या नियमाच्या ‘सांख्यिकीय’ मुद्यावर केलेले असून तो मुद्दा वैज्ञानिकदृष्ट्या महत्वाचा असल्याने त्याचा पुढे चर्चा करू.



त्या 'दृश्य' बाजू आहेत असे मानण्यात येते. तसेच मानवी मन (जीव-आत्मा) आणि जड विश्व (physis) एकाच वस्तुनिष्ठ सत्याच्या (objective reality) किंवा तत्त्वाच्या दोन परस्परविरुद्ध बाजू किंवा रूपे आहेत असे समजावे, असे पॉली येथे सुचवितो. मागे हायनेक या शास्त्रज्ञाने प्रकाशाच्या याच complementary च्या (परस्परविरुद्ध गुणधर्माच्या) आधारे 'यूफो' एकाच वेळी 'भौतिक घटना' (UFO-as-object) आणि 'मानसिक घटना' (UFO-as-psychic-event) असे परस्परविरुद्ध गुणांनी युक्त मानावेत, असे सुचविले असल्याचा उल्लेख केला आहे. (पृ. ४४३) (व्हॅलीनेही असेच सुचविले आहे.) त्याची येथे आठवण करून देतो. 'यूफो' काय आहेत हे समजण्यासाठी हा प्रकाशाच्या परस्परविरुद्ध गुणधर्माचा (complementarity चा) दृष्टांत आहे. अर्थपूर्ण घटनांचे स्वरूप समजण्यासाठीही तो दृष्टांत स्वीकारता येईल. पण दृष्टांत हा एखादी गोष्ट समजण्यासाठी देतात. तो रूपक अलंकार आहे. ती उपपत्ती नाही. उपपत्ती पुराव्यावर व त्या पुराव्याच्या पाठीमागील हेतूवर (कारणावर) अवलंबून असते. 'यूफो'चा प्रत्यक्ष भौतिक परिणाम दिसून येणे हा 'यूफो'च्या भौतिक सत्यत्वाचा पुरावा असून त्यांच्या प्रकटीकरणाला माणसाची पुराणकथांची (myth) मानसिक गरज हा त्यांच्या पाठीमागील हेतू आहे. तसे येथे अर्थपूर्ण घटना प्रत्यक्ष जीवनात घडणे हा त्या घटनांच्या सत्यतेचा पुरावा असून त्यांच्या पाठीमागील हेतू कोणता-म्हणजे त्या घटना का घडतात, कोणत्या तत्त्वानुसार घडतात-हे सांगितले पाहिजे. हे सांगितले तरच त्यांची उपपत्ती देता आली, असे म्हणता येईल. हे युग व पॉली यांना सांगता आलेले नाही. ब्रह्मविज्ञान या घटना कर्मानुसार घडतात, असे सांगते. [ईश्वर संपूर्ण विश्वाचा 'कर्माध्यक्ष' असल्यामुळे त्याच्या अधीन असलेल्या या विश्वातील कोणतीही घटना 'कर्मा' शिवाय घडू शकत नाही, असे ब्रह्मविज्ञान सांगते. 'लोकोऽयं कर्म बंधनः।' (संपूर्ण लोक कर्माने बांधले गेले आहे) या शब्दात गीता ही गोष्ट सांगते. (३.९) 'कर्म ब्रह्मोद्भवं विधिः।' 'कर्म ब्रह्मापासून निर्माण झाले आहे, असे समज,' असे पुढे कृष्ण म्हणतो, (३.१५)] याचे स्पष्ट व सहज कळणारे उदाहरण म्हणजे अर्तींद्रिय घटना होत. सर्व अर्तींद्रिय घटना, त्यातही विशेषतः भानामतीच्या, हे दाखवून देतात की मानवी मन (जीव-आत्मा) व बाह्य जड जग हे (कर्मांमुळे) अर्थपूर्णरीतीने जोडले गेले आहेत. वास्तविक सर्वच घटना परस्परांशी अर्थपूर्णरीतीने (म्हणजे कर्माने) जोडल्या गेलेल्या आहेत. भानामतीसारख्या अर्तींद्रिय घटनांमुळे तो अर्थ माणसाला व्यवहारात स्पष्ट दिसतो इतकेच. (म्हणजे त्यांच्या पाठीमागील मानवी मनाचे कार्य-कर्म-कळते.) हा (विश्वातील सर्व घटनात) जो 'अर्थ' भरला आहे, तो विश्व हे ईश्वराचे नाटक (निर्मितिकृत्य) असल्यामुळे भरला आहे-निर्माण झाला आहे-जसे एखाद्या नाटकात, ते नाटक एखाद्या नाटककाराचे 'निर्मितिकृत्य' असल्यामुळे अर्थ

निर्माण होतो. नाटकातील तो अर्थ कोणत्याही भौतिक कारणामुळे निर्माण झालेला नसतो; नाटककाराच्या मनातूनच तो निर्माण झालेला असतो. नाटककाराचे ते 'निर्मितिकृत्य' (कर्म) असल्यामुळेच तो निर्माण झालेला असतो. नाटकातील सर्व पात्रे व प्रसंग परस्परांशी अर्थपूर्णरीतीने नाटककाराच्या निर्मितिरूपी कर्माने व इच्छेनेच जोडले गेलेले असतात. तसेच ईश्वर आणि त्याचे निर्मितिकृत्य असलेले हे विश्व यांच्या बाबतीत समजावे. म्हणजे ईश्वराच्या कर्माने व इच्छेने हे विश्व यांच्या बाबतीत समजावे. म्हणजे ईश्वराच्या कर्माने व इच्छेने हे विश्व व त्यातील सर्व घटना व पात्रे परस्परांशी अर्थपूर्णरीतीने जोडले गेलेले आहेत, असे समजावे. मग त्या घटना (भानामतीसारख्या) अतींद्रिय घटना असोत वा नित्याच्या व्यवहारातील सामान्य घटना असोत. म्हणजेच त्यांचा अर्थ माणसाला कळो वा न कळो. ज्या घटनांच्या पाठीमागील अर्थ माणसाला कळत नाही त्या घटना तो योगायोगाच्या मानतो. पण ब्रह्मविज्ञानानुसार या विश्वात योगायोग नावाची गोष्ट नाही, हे यापूर्वी अनेकदा सांगितले आहे. हे कसे-म्हणजे सर्वच घटना अर्थपूर्ण कशा असतात, हे कळण्यासाठी सोबतची आकृती पाहा.



आकृती नं. १

'अ' व 'ब' ह्या दोन पातळ्या किंवा मिती आहेत. 'अ' ही त्रिमितीची दृश्य पातळी आहे. 'ब' ही चार (किंवा अधिक) मितींची अदृश्य किंवा अतींद्रिय पातळी आहे. 'र' ही अनेक क्रमबद्धपणे घडणाऱ्या घटनांचे प्रतिनिधित्व करणारी 'ब' या अतींद्रिय पातळीवरील रेषा आहे. अतींद्रिय दृष्टीच्या व्यक्तीला ती रेषा सलग दिसते. पण त्रिमितीच्या जगात राहणाऱ्या (अतींद्रिय दृष्टी नसलेल्या) व्यक्तीला १, २, ३ व ४ ह्या घटनाच फक्त दिसतात व त्या तुटकपणे, एकाचा दुसऱ्याशी संबंध नसलेल्या अशा दिसतात. त्यांना जोडणारी 'र' ही अतींद्रिय पातळीवरील रेषा त्या व्यक्तीला दिसत नसल्यामुळे १, २, ३ व ४ ह्या घटनांचा परस्परांशी काही

संबंधनसून त्या योगायोगाने घडणाऱ्या आगंतुक (contingent) घटना आहेत, असे ती व्यक्ती मानते. उदा. युंगला माशावर संशोधन करीत असताना आलेला अनेक माशांचा अनुभव, प्रस्तुत लेखकाला अरविदांच्या 'सावित्री' काव्यातील पंक्ती उद्धृत करताना आलेला अनेक 'सावित्री' चा अनुभव, डिसचॅपला 'प्लम पुडिंग' च्या संबंधाने आलेला फोर्टिगबूचा अनुभव, फ्लॅमेरियनला 'वाऱ्या'वर प्रकरण लिहिताना त्या प्रकरणाची सर्व पाने वाऱ्याने उडून गेल्याचा आलेला अनुभव; या सर्व घटनांचा परस्पराशी काही संबंध नाही, त्या योगायोगाने घडल्या आहेत असे ती व्यक्ती म्हणू शकते. ती व्यक्ती जर बुद्धिवादी असेल तर उघड उघड अर्थपूर्ण दिसणाऱ्या अतींद्रिय घटनासुद्धा योगायोगाने घडल्या असे ती म्हणू शकते. उदा. लेखकाला त्याने लिहिलेल्या एका जुन्या लेखाची आठवण बसमध्ये होणे व तोच लेख त्याचे स्नेही डॉ. देसाई प्रत्यक्ष वाचत असल्याचे त्यांच्या घरी पोहोचल्यानंतर त्याला आढळणे; सोनेरी किड्याचे स्वप्न युंगच्या स्त्री-पेशंटला आदल्या रात्री पडणे व ते स्वप्न ती दुसरे दिवशी युंगला सांगत असताना तसलाच सोनेरी किडा प्रत्यक्ष त्या ठिकाणी येणे; फ्रॉइडने युंगचा परामानसशास्त्रावरील विश्वास धुडकावून लावतेवेळी युंगला आपल्या पोटातील पडदा तापून लाल झाल्याची तीव्र भावना होणे व त्याचवेळी जवळच्या पुस्तकपेटीतून स्फोटाचा आवाज होणे व त्याविषयी फ्रॉइडने संशय व्यक्त करताच तो आवाज पुन्हा होणे; मृताच्या पिंडाला कावळा शिवण्यातून त्या मृताची इच्छा व्यक्त होण्याची घटना प्रत्येक प्रसंगात घडल्याचा अनुभव येणे; अब्राहम लिंकन व केनेडी यांच्या खुनाच्या संदर्भात घडलेल्या १३ प्रसंगात विलक्षण साम्य आढळून येणे; ब्रह्मविद्येतील ७ या अंकाला असलेले महत्त्व त्या विद्येच्या प्रसाराला वाहून घेतलेल्या व्यक्तींच्या जीवनातही तितकेच महत्त्व असल्याचे दाखवून देणाऱ्या अनेक घटना घडणे इ. इ. या उघड उघड अर्थपूर्ण घटनासुद्धा योगायोगाच्या मानणाऱ्या बुद्धिवाद्यांच्या बुद्धीची कीव करावी तितकी थोडीच आहे. (अशा बुद्धिवाद्यांचे वर्णन आयर्सेक या मानसशास्त्रज्ञाने pigheaded म्हणजे 'मट्ट डोक्याचा' असे केले आहे.) असल्या (मट्ट डोक्याच्या) लोकांचा येथे विचार करण्याचे कारण नाही. येथे आपल्याला फक्त दोन प्रश्नांचा विचार करावयाचा आहे. पहिला प्रश्न असा की हे दृश्य जग एवढेच खरे आहे काय ? हे दृश्य जगच फक्त खरे मानणाऱ्या, त्याच्या पलीकडे अतींद्रिय जग अस्तित्वातच नाही असे म्हणणाऱ्या, भौतिक शास्त्रज्ञांना भानामतीच्या घटना-उदा. जड वस्तू एका ठिकाणाहून दुसऱ्या ठिकाणी आपोआप जाणे, अदृश्य होणे, अदृश्यातून प्रकट होणे इ.-कोणत्या भौतिक शक्तीमुळे घडतात हे आजपर्यंत सांगता आलेले नाही. (म्हणूनच ते अशा घटनाच घडत नाहीत अशी वाळून डोके खुपसणाऱ्या शहामृगाची भूमिका स्वीकारतात. अशा लोकांचाही आपल्याला येथे विचार करण्याचे कारण नाही व त्यांच्यासाठी हा ग्रंथ लिहिलेलाही

नाही.) अशा भानामतीच्या घटनांची उपपत्ती, अतींद्रिय जग-अतींद्रिय पातळी (वरील आकृतीतील 'ब' ही पातळी)-अस्तित्वात आहे, हे मान्य केल्यावाचून कोणालाही देताच येणार नाही. आता दुसरा प्रश्न असा की भानामतीसारख्या अतींद्रिय घटनांचाच फक्त अतींद्रिय जगाशी संबंध आहे, मानवी जीवनातील इतर घटनांचा त्या जगाशी काही संबंध नाही, असे म्हणता येईल काय ? कशाच्या आधारे म्हणता येईल ? पुनर्जन्माच्या घटना सर्व मानवी जीवनच अतींद्रिय जगाशी जोडले गेले असल्याचे सिद्ध करतात; आणि मानवी जीवनातील सर्वच घटना काही (भूत) भानामतीसारख्या अतींद्रिय घटना नसतात. म्हणून त्या अर्थपूर्ण नाहीत असे म्हणता येणार नाही. तसे म्हटले तर पुनर्जन्म व तो ज्यावर आधारलेला आहे, तो कर्मसिद्धांत हे दोन्ही अर्थहीन ठरतील. पण पुनर्जन्म शास्त्रीय निकषावर सत्य सिद्ध झाला आहे. (संदर्भ क्र. १२५ व १२६ मधील ग्रंथ व **Reincarnation and Biology** हा १९९७ साली प्रसिद्ध झालेला स्टिव्हेंसनचा द्विखंडात्मक ग्रंथ त्यासाठी पाहा) म्हणून एखाद्या घटनेचा (उदा. अपघाताचा) अर्थ आपल्याला कळत नसला तरी तो (आपणाला न आठवणाऱ्या) पूर्वजन्मातील कर्माचा परिणाम आहे (कारण कोणतीही गोष्ट अर्थहीन नसते -Nothing. . is void or vain) असे योगी अरविंद म्हणतात. या दृष्टीने वरील आकृतीचा विचार केला आणि १, २, ३, ४ इ. घटना एका व्यक्तीच्या जीवनात घडलेल्या घटना आहेत असे समजले तर त्या घटना परस्परांशी काही संबंध नसल्याप्रमाणे तुटक दिसतात; म्हणजे 'अर्थहीन' वाटतात. पण एडगर केयसीसारख्या अतींद्रिय दृष्टीच्या माणसाला '१' या अतींद्रिय पातळीवरील रेषेने (म्हणजे पूर्व जन्मातील कर्मांने) त्या सर्व घटना जोडल्या गेलेल्या स्पष्ट दिसतात व कळतात. कारण तो मागच्या जन्मातील घटना, म्हणजे त्या व्यक्तीने पूर्वजन्मात केलेले कर्म, पाहू शकतो. उदा. एका आंधळ्या प्राध्यापकाला त्याने १००० वर्षांपूर्वी पर्शियामध्ये युद्धातील कैद्यांना तापलेल्या लोखंडाने डागणी देऊन आंधळे करीत असल्यामुळे तो या जन्मात आंधळा झाला असल्याचे सांगितले. (पृ. ३२८) आता जर १, २, ३, ४ इ. घटना विश्वातील घटना आहेत असे समजले तर त्यांचा परस्परांशी काही संबंध नसल्यासारखा दिसतो. म्हणजे त्या तुटक व अर्थहीन वाटतात. (उदा. पं. ईश्वरचंद्र विद्यासागरांनी चेंगीजखानाने हजारो निरपराध व्यक्तींची केलेली हत्या अर्थहीन-अन्यायकारक-मानून ईश्वरच नाकारला होता. पृ. ४९०) पण अतींद्रिय दृष्टीच्या व्यक्तींना (उदा. लेडबीटर, ऑनी बेझंट) त्यातील वैश्विक संबंध '१' ह्या रेषेने त्या घटना परस्परांशी जोडल्या गेलेल्या स्पष्ट दिसत असल्यामुळे कळतो. (काही व्यक्तींच्या अनेक जन्मातील अशा वैश्विक घटनातील संबंधांच्या माहितीसाठी संदर्भ क्र. १२७ मधील ग्रंथ पाहावेत.) म्हणून योगी अरविंद "they are the dumb graphs of truths that work unseen." म्हणजे "पडद्यामागे राहून कार्य करणाऱ्या

(कर्मरूपी) सत्यांचे ते मौन आलेख आहेत” असे म्हणतात. या मौन आलेखांचा अर्थ फक्त अतींद्रिय दृष्टीचे लोकच जाणू शकतात. बहुसंख्य लोकांना ती दृष्टी नसल्यामुळे अशा घटना त्यांना (पं. विद्यासागराप्रमाणे) अर्थहीन व अन्यायकारक वाटतात; व म्हणून रामकृष्ण अशा घटनांचा अर्थ त्यांना कळणार नाही, असे म्हणतात; आणि श्रीकृष्ण गीतेत ‘कर्माची गती गहन आहे’ असे म्हणतो. कारण तो ‘मौन आलेख’ (dumb graph) कर्माचा (कर्मरूपी सत्यांचा) आलेखच असतो आणि तो वरील आकृतीत ‘र’ या रेषेने दाखवलेला आहे. तथापि तो आलेख हे विश्व ईश्वराचे नाटक असल्याचे सिद्ध करतो. कारण, जसे नाटककार आपले नाटक आपल्या कर्माने (आपल्या उत्सर्जन शक्तीने) व संकल्पशक्तीने-अर्थपूर्ण करतो, तसे ईश्वराने आपले हे विश्वरूपी नाटक आपल्या कर्माने (आपल्या उत्सर्जन शक्तीने) व संकल्पशक्तीने अर्थपूर्ण केले आहे. (म्हणूनच विश्वाच्या संपूर्ण नाटकाचे कथानक माहीत झाल्याशिवाय संपूर्ण विश्वाचे नाटक वाचल्याशिवाय चेंगीजखानासारख्याच्या कत्तली किंवा कोणत्याही एखाद्या तुटक घटनेचा अर्थ कळणे शक्य नाही.) म्हणून ‘र’ ही रेषा विश्वरूपी नाटकाच्या ‘पडद्यामागील’ ईश्वररूपी ‘सूत्र’ चालकाचे ‘सूत्र’ आहे, असेही म्हणता येईल.

अशारीतीने ‘अर्थपूर्ण घटनात्मकता’ (synchronicity) हा ईश्वरनिर्मित संपूर्ण विश्वाचा अंगभूत गुणधर्म (वा व्यवच्छेदक लक्षण) असल्यामुळे युंग व पॉली यांनी त्याला ‘अपवाद’ (exception) मानण्यात मोठीच चूक केली आहे, हे वाचकांच्या लक्षात येईल. अर्थात् वर म्हटल्याप्रमाणे (ख्रिश्चन धर्माच्या प्रभावाखाली वाढलेल्या) त्यांना पुनर्जन्म व कर्म या सिद्धांतांचा-वास्तवाचा-परिचय नसल्यामुळे ती चूक त्यांनी केली आहे. पण ज्या पिकोच्या विचारांचा आधार आपल्या अर्थपूर्ण घटनात्मकतेच्या तत्त्वाच्या समर्थनार्थ युंगने घेतला आहे, त्या पिकोच्या विचारांचा तरी त्याने पूर्णपणे विचार करावयास नको होता काय? कारण पिकोने विश्व हे ईश्वराचे शरीर आहे व त्यातील सर्व घटना एखाद्या जिवंत शरीरातील अवयवाप्रमाणे परस्पराशी सुसंगतपणे व अर्थपूर्ण रीतीने जोडले जाऊन कार्य करतात, असे म्हटले आहे. हे जर खरे असेल, म्हणजेच ईश्वरामुळे (केंद्रवर्ती सत्तेमुळे) त्यांच्यातील परस्परसंबंध अर्थपूर्ण बनला आहे, कोणत्याही भौतिक (जड) कार्यकारणभावाने नाही, हे खरे असेल तर ‘अर्थपूर्ण’ घटना ह्या अपवादात्मक कशा असू शकतील वा मानता येतील ? संपूर्ण शरीरच (विश्वच) अर्थपूर्ण ठरलेले असताना त्यातील फक्त वरवरच्या ‘अर्थपूर्ण घटना’ (अतींद्रिय घटना-भानामतीसारख्या) अपवादात्मक मानणे हा आत्मविरोध (self-contradiction) नाही काय ? अतींद्रिय घटना मानवी जीवनात मानवी मनाच्या संबंधाने घडतात व म्हणून अपवादात्मक वाटतात, हे खरे आहे. पण त्याचे कारण संबंधित व्यक्तीच्या मनाची विशिष्ट (कार्मिक) अवस्था, हे आहे. (उदा. फ्रॉइडने

परामानसशास्त्राला धुडकावल्यामुळे झालेली युंगच्या मनाची अवस्था किंवा डॉ. देसाई व प्रस्तुत लेखक यांच्यातील दृढ स्नेहसंबंधामुळे झालेली लेखकाच्या मनाची अवस्था. यालाच 'सहानुभूतियुक्त अनुकंपने' - 'sympathetic vibrations' - म्हणतात) अशा अवस्थामुळे अतींद्रिय घटना घडतात व त्या घटनातील अर्थ त्या प्रसंगाने ठळकपणे नजरेत भरतो व तो सर्वानाच कळतो. पण मानवी मन हे विश्वातील 'अपवाद' वा 'अपघात' नाही, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. त्यामुळे मानवी मन हे सर्व घटनांचे केंद्र ठरते, केवळ अतींद्रिय घटनांचेच नाही. मानवी मन हे विश्वात अपघात वा आगंतुक नाही हे, मानव हा विश्वाचा अंगभूत (अर्थपूर्ण) भाग आहे-म्हणजे मानवामुळेच विश्वाला 'अर्थ' प्राप्त झाला आहे, या वस्तुस्थितीवरून स्पष्ट होईल. 'पिंडी ते ब्रह्मांडी' हे आध्यात्मिक तत्त्व हीच वस्तुस्थिती सांगते व विश्वातील 'मानवीयतेचे तत्त्व' (Anthropic Principle) मांडून आधुनिक विश्वशास्त्रही (cosmology) तेच सांगत आहे. (पाहा : विज्ञान आणि बुद्धिवाद या लेखकाच्या ग्रंथातील 'विश्व व मानव' हे प्रकरण.) युंग व पॉली यांच्याही पूर्वी कॅमरर या जीवशास्त्रज्ञाने seriality (क्रमबद्ध घटनात्मकता) नांवाचे एक तत्त्व मांडूनही तेच सांगितले आहे. त्याचे हे क्रमबद्ध घटनात्मकतेचे तत्त्व मानव व त्याच्या सर्व क्रिया विश्वाचे अविभाज्य अंग कसे आहेत हे सांगते. उदा. कॅमरर म्हणतो, "(seriality is) ubiquitous and continuous in life, nature and cosmos. It is the umbilical cord that connects thought, feeling, science and art with the womb of the universe that gave birth to them."<sup>२८९</sup>

याचा अर्थ असा: "(क्रमबद्ध घटनात्मकतेचे तत्त्व) जीव, जगत, निसर्ग आणि विश्व या सर्वांमध्ये सगळीकडे सारखेच व अखंडपणे वास करणारे तत्त्व आहे. ज्या जगाच्या (जगरूपी जगदंबेच्या) कुशीने मानवाचे विचार, भावना, विज्ञान-शास्त्र आणि कला यांना जन्म दिला आहे, त्या जगाच्या (जगदंबेच्या) कुशीशी त्या सर्वांना जोडणारी ती नाळ आहे."

विचार, भावना, विज्ञान आणि कला या सर्वांचे प्रतिनिधित्व करणारा मानव क्रमबद्ध घटनात्मकतेच्या नाळेने विश्वरूपी मातेच्या (जगदंबेच्या) कुशीशी (गर्भाशयाशी) जोडला गेला आहे, असे कॅमररचे 'क्रमबद्ध घटनात्मकते'चे हे तत्त्व सांगते. वरील आकृतीतील १, २, ३, ४ या मानवी जीवनातील व विश्वातील (त्रिमिती जगातील) क्रमबद्ध घटना आहेत असे समजले किंवा 'विचार, भावना, विज्ञान व कला' आहेत असे समजले तर 'र' ही रेषा त्या जगदंबेच्या कुशीशी त्यांना जोडणारी (अतींद्रिय चतुर्मितीच्या पातळीची) 'नाळ' ठरते, हे लक्षात येईल. मानवाला आपल्या विश्वरूपी शरीराच्या उदरात पोसणारी 'ईश्वर' ही मग 'माता' आहे असे ठरते. मानवाच्या सर्व इच्छा-आकांक्षाची पूर्ती तो ईश्वर (जगदंबारूपी)

माता बनून करतो, असे मग म्हणता येईल. (जगदंबा हे ईश्वराचेच 'प्रकृति'रूप-स्त्रीरूप-आहे.) गर्भ जसा मातेच्या गर्भाशयाशी नाळेने जोडला गेलेला असल्यामुळे त्या गर्भाची व तो धारण-पोषण करणाऱ्या मातेची इच्छा एकच बनते (याला 'डोहाळे' म्हणतात हे सर्वश्रुत आहे. उदा. *गर्भाचे आवडी मातेचा डोहाळा । तेथीचा जिक्हाळा तेथ बिंबे* // तुकाराम.) त्याचप्रमाणे मानव या ईश्वररूपी मातेच्या विश्वरूपी शरीरातील गर्भाशयाशी 'श्रद्धेच्या नाळेने' जोडला गेला तर त्याची इच्छा व ईश्वराची इच्छा ('सहानुभूतियुक्त अनुकंपनां' च्या नियमानुसार) एकच बनते व तो ईश्वर त्या श्रद्धायुक्त मानवाची इच्छा पूर्ण करतो. तो ती कशी पूर्ण करतो हे 'श्रद्धा जेव्हा मूर्त रूप धारण करते' या १३ व्या प्रकरणात आपण पुराव्यानिशी पाहिले आहे. प्रार्थनेला का फळ मिळते, नवसाला देव का पावतो-थोडक्यात खऱ्या श्रद्धेने केलेली कोणतीही कृती फलद्रूप का होते, याची शास्त्रीय उपपत्ती हे (कॅमररचे व युंग व पॉली यांचे) अनुक्रमे क्रमबद्धतेचे व अर्थपूर्ण घटनात्मकेचे तत्त्व देते.<sup>२१०</sup>

अशारीतीने 'अर्थपूर्ण घटना' हा, विश्व हे ईश्वराचे नाटक असल्याचे सिध्द करणारा, पहिला सज्जड वस्तुनिष्ठ पुरावा आहे; केवळ तो एक रूपक अलंकार नाही-यद्यपि 'विश्वरूपी नाटक' हा लेखकाचा शब्दप्रयोग तसे सुचवितो. ईश्वराच्या या विश्वरूपी नाटकाचे वैशिष्ट्य असे की त्याचे कथानक (script) 'आकाशलेखना'च्या रूपाने अगोदरच लिहून ठेवण्यात आले आहे. किंबहुना त्या कथानकाची दृश्ये अगोदरच आकाशरूपी फिल्मवर चित्रित केली गेली आहेत. याला पुरावा काय ? तेच आता आपल्याला पाहावयाचे आहे.

## खरी ठरलेली भविष्यसूचक स्वप्ने व भाकिते : 'आकाशलेखना'चा दुसरा पुरावा

बुद्धिवादी आणि भौतिकवादी म्हणतात की एखादी घटना प्रत्यक्ष घडल्याशिवाय, म्हणजे तिचा मेंदूवर (इंद्रियामार्फत) प्रत्यक्ष (भौतिकरूपाने) परिणाम झाल्याखेरीज ती मानवी मेंदूला (म्हणजे मानवी मनाला) कळणे शक्य नाही (कारण मानवी मेंदू व मन हे एकच आहेत.) या विचारसरणीनुसार मानवाला भविष्यातील घटनांचे ज्ञान होणे शक्य नाही, हे स्पष्ट आहे. कारण त्या घटना घडलेल्याच नसतात. पण मानवाला भविष्य कालातील घटनांचे-म्हणजेच न घडलेल्या घटनांचे-ज्ञान होते, ही वस्तुस्थिती आहे. (त्यामुळे मानवाचा मेंदू व त्याचे मन हे एकच नाहीत, हे सिध्द होते.) अशा भविष्यकाळातील घटनांच्या ज्ञानाची (precognition) उदाहरणे 'संकटकाळी प्रकट होणारी अतींद्रिय शक्ती' या पोटमथळ्याखाली यापूर्वी दिली आहेत. (पृ.२२१) उदा. शिकॅगो विमानतळावर विमानाचा स्फोट होऊन २७३ लोक मेल्याचे, अमेरिकेच्या इतिहासातील सर्वात मोठ्या विमान अपघाताचे, दृश्य

डेव्हिड बूथ या व्यक्तीला सलग दहा दिवस त्या अपघाताच्या कित्येक दिवस अगोदर स्वप्नात दिसले. अँबरफॅन येथील डॉंगर कड्यावरील कोळशाच्या कचऱ्याचा ढीग एका शाळेच्या इमारतीवर पडून त्यात शंभराहून अधिक शाळकरी मुले मृत्युमुखी पडल्याचे दृश्य त्या दुर्घटनेच्या कित्येक दिवस अगोदर अनेकांना-ज्यामध्ये स्वतः त्यात मेलेली मुले होती-स्वप्नात व जागेपणी दिसले. जगातील सर्वात मोठे जहाज टिटॅनिक हे पहिल्याच सागरी प्रवासात बुडाल्याचे व त्यात हजारो लोक मृत्यू पावल्याचे दृश्य अनेकाना जागेपणी तेंद्रीत व स्वप्नात त्या दुर्घटनेच्या कित्येक दिवस अगोदर दिसले.<sup>११</sup> अमेरिकेतील न्यूयॉर्क येथील वर्ल्ड ट्रेड सेंटरच्या टोलेजंग जोड इमारतीत आत्मघातकी अतिरेक्यांनी ११ सप्टेंबर २००१ रोजी विमान घुसवून ती इमारत नष्ट केल्याचे व त्यात हजारो लोक मृत्युमुखी पडल्याचे हुबेहूब दृश्य महाराष्ट्रातील सांगली येथील सौ. विद्या जाखोटिया यांना १० सप्टेंबर रोजी दुपारी दोन वाजता आपल्या घरी त्या झोपल्या असत्या स्वप्नात दिसले. व त्या घामेघूम होऊन जाग्या झाल्या. दुसरे दिवशी टी.व्ही. वर त्याचे जे दृश्य दाखवण्यात आले तसेच हुबेहूब ते स्वप्नातील दृश्य होते, असे त्यांनी प्रस्तुत लेखकाला स्वाक्षरीने पाठविलेल्या निवेदनात म्हटले आहे. त्या स्वप्नाची माहिती ती घटना घडण्यापूर्वी त्यांनी इतरांना सांगितल्याची लेखी निवेदनेही (संबंधित व्यक्तींची) प्रस्तुत लेखकाकडे आहेत.<sup>१२</sup> या घटना आकाशरूपी फिल्मवर अगोदरच चित्रित केल्या गेल्या असल्याखेरीज, म्हणजे त्या घटना अगोदरच घडल्या असल्याशिवाय, त्यांची दृश्ये, त्या घटना प्रत्यक्ष पृथ्वीवर घडण्यापूर्वी, कोणालाही (स्वप्नात अगर जागेपणी-तंत्रित) दिसणार नाहीत, हे उघड आहे. या अगोदरच घडलेल्या व चित्रित केलेल्या दृश्यांनाच 'आकाशलेखन' (eternal picture gallery) हे नांव ब्रह्मविद्येत देण्यात आले आहे.

ही स्वप्नदृश्ये कधी कधी कशी तपशीलवार असतात व तशाच तपशीलाने नंतर प्रत्यक्षात कशी घडलेली पाहावयास मिळतात, याची अनेक उदाहरणे आहेत. नमून्यासाठी येथे फक्त एकच उदाहरण देतो. हे उदाहरण इंग्लंडच्या अतींद्रिय शास्त्रीय संशोधनसंघाच्या लेखी नोंदीतून (Proc. SPR. Vol. XI, p.577) घेतले असून ते संक्षेपाने येथे देतो.

'क्यू' या बाईला १८८२ साली स्वप्न पडले की, ती ज्यांच्या घरी लहानाची मोठी झाली, ते तिचे काका घरापासून तीन मैल अंतरावरील शेताला जाण्याच्या एका अरुंद रस्त्यात मरून पडले आहेत व जवळच त्यांचा घोडा उभा आहे. (हा रस्ता तिच्या पूर्ण परिचयाचा होता. कारण ती लहानपणी त्यांच्या बरोबर घोड्यावरून त्या रस्त्याने अनेकदा गेली होती.) त्यांच्या अंगावर घरीच तयार केलेले कपडे होते.



त्यांचे प्रेत नंतर एका वॅगनमधून घरी आणण्यात आले. तिच्या ओळखीची दोन माणसे त्यांचे प्रेत वॅगनमधून उचलून घराच्या वरच्या मजल्यावर आणू लागली. तिचे काका उंच शरीरयष्टीचे होते. त्यामुळे ते प्रेत वर नेत असताना त्यांचा एक हात लोंबकळत होता व तो जिऱ्याच्या कठड्याला थडकत होता, हे तिने पाहिले. त्यांचा हात कठड्याला थडकू न देता त्यांना वर नेता येत नसल्याबद्दल तिला वाईट वाटले. हे स्वप्न इतके स्पष्ट होते की ती एकदम घाबरून जागी झाली. सकाळी उठल्यानंतर काकांना ते स्वप्न सांगण्याचे तिने मुद्दाम टाळले. ती त्यांना एवढेच म्हणाली, “सोबतीला कोणाला तरी घेतल्याशिवाय त्या रस्त्याने घोडा घेऊन कधीच जाऊ नका.” तसे तिने त्यांच्याकडून वचनच घेतले. पुढे दोन वर्षे काहीही घडले नाही. पुन्हा १८८४ साली तेच स्वप्न तिला पूर्वीच्याच तपशीलासह पडले व पुन्हा पूर्वीप्रमाणेच ती घाबरून जागी झाली. यानंतर चार वर्षे काही घडले नाही. चार वर्षांनी, म्हणजेच १८८८ साली ती बाळंतपणासाठी लंडनला गेली असता पुन्हा तिला तेच स्वप्न पूर्वीच्या सर्व तपशीलासह पडले. पण त्यात जास्तीचा एक तपशील होता. तो असा की तिच्या खाटेजवळ एक काळ्या पोषाखातील व्यक्ती येऊन उभी राहिली आणि म्हणाली, ‘तुझे काका वारले’.

काही दिवसांनी तिचे सावत्र वडील काळ्या पोषाखात तिच्या खाटेजवळ प्रत्यक्षात येऊन उभे राहिले आणि ते तिला काही सांगणार तोच ती म्हणाली, “माझे काका वारले. मला माहीत आहे. अनेकदा मी ते स्वप्न पाहिले आहे.”

नंतर प्रत्यक्ष घडलेल्या सर्व घटना तिच्या स्वप्नावरहुकूम होत्या असे तिला आढळून आले. तिचे काका तिने स्वप्नात पाहिलेल्या ठिकाणीच हृदयाघाताने मेले होते व घोड्यावरून पडले होते. तिने स्वप्नात पाहिल्याप्रमाणेच त्यांच्या अंगावर त्या अपघाती मृत्यूच्या वेळी घरीच तयार केलेले कपडे होते. तसेच त्यांचे प्रेत वॅगनमधूनच घरी आणण्यात आले होते. तिने स्वप्नात पाहिलेल्या तिच्या ओळखीच्या माणसांनीच त्यांचे प्रेत जिऱ्यावरून वरच्या मजल्यावर नेले होते. ते नेताना त्यांचा एक हात लोंबकळत होता व तो जिऱ्याच्या कठड्याला थडकत होता, हेही खरे असल्याचे संबंधित व्यक्तींनी स्वतःच्या सहीने SRP ला एक निवेदन दिले आहे. ‘क्यू’ च्या सावत्र वडिलांनीही आपण काळ्या पोषाखात तिला तिच्या काकांच्या मृत्यूची बातमी सांगण्यास गेलो होतो व आपण तिला ती बातमी सांगण्यापूर्वीच काका वापरल्याचे आपल्याला माहीत आहे व ते अनेकदा आपण स्वप्नात पाहिल्याचे तिने म्हटले होते, या बद्दलचे निवेदनही स्वाक्षरीने दिले आहे.<sup>२१</sup>

वरील प्रकरणात एका व्यक्तीचे स्वप्न सर्व तपशीलासह सहा वर्षांनंतर तंतोतंत खरे ठरल्याचे दिसून येते. या प्रकरणामुळे मानवाच्या इच्छा स्वातंत्र्याचा प्रश्न

अत्यंत तीव्रतेने उभा राहतो, असे जी.एन्.एम्. टिरेल या परामानसशास्त्रज्ञाने म्हटले आहे. त्यांचे म्हणणे असे की इच्छास्वातंत्र्य याचा अर्थ भविष्यातील घटनाक्रम बदलण्याचे मानवाचे कृतिस्वातंत्र्य (वा सामर्थ्य) असा केला तर येथे असा प्रश्न निर्माण होतो की या सहा वर्षांत 'क्यू' च्या काकांना आपल्या कृतिस्वातंत्र्याने 'क्यू' चे ते स्वप्न खोटे ठरविता आले नसते काय ? निदान त्याच्या तपशीलात स्वेच्छेने बदल करता आला नसता काय ? टिरेलचा हा प्रश्न त्याच्या कर्मसिध्दांताविषयीच्या अज्ञानातून निर्माण झाला आहे, हे उघड आहे. इच्छास्वातंत्र्य याचा अर्थ आपले पूर्वजन्मातील कर्म (कर्मांचे परिणाम) बदलण्याचे स्वातंत्र्य असा होत नाही. पूर्वकर्मांचे फळ प्रत्येकाला भोगलेच पाहिजे. 'इच्छास्वातंत्र्य' याचा आध्यात्मिकदृष्ट्या (कर्मसिध्दांताच्या दृष्टीने) 'चांगले कर्म करण्याचे बंधन' असा अर्थ होतो, हे मागे सांगितलेच आहे. (उदा. रहदारीचे नियम पाळण्याचे 'बंधन' हे कोणी बंधन मानतो काय ? ते बंधन आपल्या भल्यासाठीच असल्याने खऱ्या अर्थाने ते 'स्वातंत्र्य'च आहे. अर्थात् ज्याला मरायचेच आहे-आत्मनाशच करून घ्यायचा आहे-त्यांच्या दृष्टीने ते 'बंधन' आहे हे खरे आहे ! आत्मकल्याण करून घेणाऱ्यासाठी ते खरे तर 'स्वातंत्र्य'च आहे.) इच्छास्वातंत्र्य याचा अर्थ वैश्विक कर्मानुसार घडणाऱ्या घटनांचा क्रम बदलण्याचे स्वातंत्र्य (किंवा सामर्थ्य) असा होत नाही. असे स्वातंत्र्य कोणाही एका व्यक्तीला असू शकत नाही. 'क्यू'च्या स्वप्नातील घटना केवळ तिच्या काकांच्या मृत्यूच्या कालापुरत्याच मर्यादित नाहीत. (तो मृत्यूचा काल तर कोणालाही बदलता येत नाही.) त्या घटनात अनेक वैश्विक घटनांचा समावेश होतो; आणि त्या घटना (वा घटक) बदलण्याचे सामर्थ्य कोणाही एका व्यक्तीमध्ये असू शकत नाही. त्या वैश्विक घटनातील घटक सामूहिक पातळीवरील आहेत ही वस्तुस्थिती असून ती वस्तुस्थितीच सांगते की 'क्यू'च्या एकट्या काकांच्या कृतीवर ते घटक अवलंबून नाहीत. काही स्वप्ने-विशेषतः अपघातांची-स्वतंत्र कृतीने नंतर खोटी ठरवता आली आहेत, हे खरे आहे. पण काही स्वप्ने खोटी ठरवता येतात, ही वस्तुस्थितीच सांगते की ती खोटी ठरविण्यासाठीच-म्हणजे येऊ घातलेले संकट टाळण्यासाठीच होती. (अशा स्वप्नांना संकटसूचक स्वप्ने-warning dreams-म्हणतात.) स्वप्ने अनेक तऱ्हेची असतात व सर्वच स्वप्ने खरी ठरत नसतात, एवढेच यावरून सिध्द होते. संकटसूचक स्वप्न कसे असते याचे एक उदाहरण येथे देतो.

सौ. हन्ना ग्रीन नावाच्या, ऑक्सफर्डशायरमधील एका खेड्यातील घरात घर काम करणाऱ्या बाईला एके दिवशी स्वप्न पडले की एका रविवारी संध्याकाळी घरातील सर्व लोक तिच्यावर घराच्या राखणीचे काम सोपवून बाहेर गेले आहेत व आपण घरी एकटेच आहोत. अशावेळी घराच्या मुख्य दरवाजावर कोणी तरी जोरजोराने

ठोठावू लागले. तिने दार उघडून पाहिले तेव्हा तिला एक हिडीस चेहऱ्याचा भटका माणूस हातात एक मोठा दंडुका घेऊन उभा असलेला दिसला. तिने दार उघडल्यानंतर तो आत येऊ लागला, तेव्हा तिने त्याला प्रतिकार केला. त्याबरोबर त्याने तिच्या डोक्यात हातातील दंडुका मारला व तो आत घुसला. त्याबरोबर ती जागी झाली. नंतर बरेच दिवस काहीच न घडल्यामुळे ते स्वप्न ती विसरूनही गेली. सात वर्षांनंतर ती केसिंग्टन येथील एका गावात एका घरात घरकामासाठी तिला नेमलेले असताना तिच्यावर घराच्या राखणीचे काम सोपवून घरातील सर्व लोक एका रविवारी संध्याकाळी बाहेर निघून गेले. थोड्याच वेळात त्या घराच्या मुख्य दरवाजावर कुणीतरी जोरजोराने ठोठावू लागले, तिला सात वर्षांपूर्वीचे ते स्वप्न एकदम आठवले व तिने दार न उघडता वरच्या मजल्यावर जाऊन पाहिले तेव्हा एक हिडीस चेहऱ्याचा भटका मनुष्य हातात दंडुका घेऊन उभा असलेला तिला दिसला. तिने मग आतून सर्व दारे-खिडक्या चांगल्या रीतीने बंद करून घेतल्या व ती जोरजोराने घंटा बाजवू लागली. त्याबरोबर तो माणूस पळून गेला.<sup>२१४</sup>

येथे सात वर्षांनंतर एका व्यक्तीचे स्वप्न खरे ठरले असले, तरी त्या स्वप्नाचा शेवट तिने स्वप्नयत्नाने बदलला असल्यामुळे ते स्वप्न केवळ संकटसूचक होते, हे स्पष्ट होते. आता असे कोणी म्हणू शकणार नाही की हे हॅन्नाचे स्वप्न मानवाचे इच्छास्वातंत्र्य सिद्ध करते व वरील 'क्यू' चे स्वप्न ते खोटे ठरविते. कारण कुठल्याही स्वप्नावर मनुष्याला इच्छास्वातंत्र्य आहे की नाही हा प्रश्न अवलंबून नाही.\* मानवाच्या इच्छास्वातंत्र्याचे गमक (किंवा कसोटी) स्वप्न होऊ शकत नाही. मानवी आत्मा हा मुळातच स्वतंत्र आहे. तो स्वतःच त्याचा गमक आहे. कारण माणूस जितक्या प्रमाणात भौतिक शरीराच्या बंधनात पडतो, तितक्या प्रमाणात तो आपले आत्म्याचे स्वातंत्र्य गमावतो, असा आध्यात्मिक सिद्धांत आहे. जितक्या प्रमाणात मनुष्य शरीरात राहूनही त्याच्या बंधनापासून मुक्त होतो, तितक्या प्रमाणात तो ते आत्म्याचे स्वातंत्र्य मिळवू शकतो. शरीरात राहून शरीरावर पूर्ण ताबा असणारे पुरुष म्हणूनच खऱ्या अर्थाने स्वतंत्रच असतात. अशा पुरुषांना जीवन्मुक्त पुरुष म्हणतात. (गीतेच्या ५ व्या अध्यायाच्या २८ व्या श्लोकात ही गोष्ट सांगितली

\* संकटसूचक स्वप्ने ज्या व्यक्तीवर संकट येणार आहे, त्या एका व्यक्तीपुरतेच मर्यादित असतात. त्यामुळे ती बदलण्यासाठी (खोटी ठरविण्यासाठी) म्हणजे संकट टाळण्यासाठी आहेत असा निष्कर्ष काढता येतो. याच्या उलट ज्यात, अनेक व्यक्तींवर मृत्यूसाखे भयानक संकट आहे अशी, सामूहिक संकटाची स्वप्ने एखाद्या व्यक्तीला पडली, तरी ती खोटी ठरविता येत नाहीत, असे अशा स्वप्नांचा अनुभव सांगतो. 'क्यू'ला आपल्या काकांच्या मृत्यूच्या संकटाचे स्वप्न पडले, स्वतःच्या मृत्यूच्या संकटाचे नाही, ही गोष्ट 'संकटसूचक स्वप्ने' स्वतः वरील संकटाचीच असतात व तीच फक्त खोटी ठरवता येतात - म्हणजे ते संकट टाळता येते - हे अशी स्वप्ने सिद्ध करतात.

आहे.) तथापि तेसुद्धा विश्वनाटकाच्या कथानकात कसलाही बदल करू शकत नाहीत, हे लक्षात ठेवावे. अवतारी पुरुषांनाही हे वैश्विक नाटक बदलता तर येत नाहीच, उलट ते चांगल्या रीतीने वठवावे लागते. ही गोष्ट कृष्णासारख्या अवतारी पुरुषालाही महाभारत युद्ध टाळता आले नाही, किंवा रामाला स्वतः आपल्या पत्नीचे रावणाकडून होणारे अपहरण टाळता आले नाही, या गोष्टीतून व्यास वाल्मिकींनी सांगितली आहे. किंबहुना अशा घटना घडून याव्यात हाच त्यांनी अवतार घेण्याचा उद्देश असल्याचे सांगण्यात येते. भगवद्गीतेतील यदायदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत । या श्लोकात हेच सांगितले आहे. आता मुळात धर्माला ईश्वराने ग्लानी का येऊ दिली, हा प्रश्न आहे. ती ग्लानी त्या ईश्वराला टाळता आली नसती काय ? ईश्वराने मुळात दुष्टांचा जन्मच होऊ दिला नसता तर त्यांचा संहार करण्याचे कष्टच त्याला द्यावे लागले नसते, असे म्हणता येते. पण मग वैश्विक नाटक रंगले नसते ! ईश्वराने सुष्टाबरोबर दुष्ट निर्माण केले आहेत, सज्जनाबरोबर दुर्जन निर्माण केले आहेत, चांगल्याबरोबर (Good) वाईट (Evil) निर्माण केले आहे, ते वैश्विक नाटक रंगण्यासाठीच ! अशारीतीने चांगले व वाईट हे या विश्वाचे अपरिहार्य घटक आहेत-नव्हे ते एक जुळे (twins) आहे, जे एकत्रच जगू शकते; विभक्त केले की मरते ! उदा. वाईट नसते तर चांगलेही नसते-म्हणजे त्याला 'चांगले' कोणी म्हटले नसते ! म्हणजे वाईटामुळेच चांगल्याला चांगुलपणा प्राप्त झाला आहे ! चांगलेवाईट नसलेले जग वा जीवन हे बेचव, नीरस, अळणी व अर्थहीन जीवन बनले असते. त्याला जीवनच म्हणता आले नसते. अशारीतीने अर्थपूर्ण जीवनासाठी चांगल्या-वाईटांचे द्वंद्व अपरिहार्य आहे-म्हणजेच ते जीवन 'नाटक' बनणे अपरिहार्य आहे. (कारण द्वंद्वशिवाय-झगड्याशिवाय-नाटक घडू वा असू शकत नाही.) आणि नाटक म्हटले की त्याचे कथानक अगोदरच लिहिलेले असावे लागते; आणि अगोदरच लिहिलेले व ठरलेले कथानक अवतारी पुरुष तरी कसे बदलू शकतील ? जे अवतारी, पुरुष बदलू शकत नाहीत, ते सामान्य माणसे कसे बदलू शकतील ? केनेडी यांना त्यांचा खून होणार आहे व म्हणून त्यांनी डह्यासला जाऊ नये असा सल्ला देण्यात आला होता. पण ते म्हणाले, "मला त्यांना गाठायचे असेल तर, चर्चमध्येही ते गाठतील."<sup>२९</sup> आणि ते गेले ! कारण विश्व-नाटकातील घटनाक्रम ठरलेला असून तो कोणालाही बदलता येत नाही. केनेडीच्या उदाहरणावरून असे म्हणावे लागते की जो नाटकाचा भाग आहे, तो बदलण्याची इच्छा वा बुद्धी संबंधित व्यक्तीला होत नाही; (हीच गोष्ट 'बुद्धी कर्मानुसारिणी' या शब्दात कर्मसिद्धांत सांगतो.) आणि जेथे नाटकाचा भाग नाही, तेथे एखाद्या व्यक्तीला वेगळी इच्छा वा बुद्धी होते. कारण तेथे वेगळी घटना घडणार असते. (अशावेळी त्या व्यक्तीची 'बुद्धी फिरली' असे आपण म्हणतो !) प्रयत्न करूनही जे घडवून आणता येत नाही

(ज्यात यश येत नाही) तो नाटकाचा भाग नाही असे समजावे व जे प्रयत्न करून घडवून आणता येते, तो नाटकाचा भाग आहे, असे समजावे. अशारीतीने 'प्रयत्नवाद' (वा इच्छास्वातंत्र्य) व 'नियतीवाद' (वा दैववाद) यांच्यात विरोध निर्माण होण्याचे वा मानण्याचे कारण उरत नाही. शेवटी हा सर्व 'मानण्या'चाच भाग आहे, वस्तुस्थितीचा नाही, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. कारण काय घडणार आहे, हे आपल्याला माहीत नसते. कारण ते भविष्याच्या पोटात असते. ते माहीत झाले तर इच्छास्वातंत्र्याचा आपण इतका बाऊ निर्माणच केला नसता. इच्छास्वातंत्र्य हा खरोखरच बाऊ आहे, हे लक्षात ठेवले पाहिले. निखळ सत्य 'नियती' ('नाटक') हेच आहे, हे पुढील प्रत्यक्ष घडलेल्या उदाहरणावरून स्पष्ट होईल.

स्कॉटलंडच्या एका द्रष्ट्या पुरुषाने एकदा एका अतींद्रिय दृष्टीवर विश्वास नसलेल्या संशयवादी (sceptic) माणसाला त्याच्या शेजाऱ्याच्या मृत्यूचे भाकीत केले. त्याने तो शेजारी केव्हा मरणार आहे, तो दिवस तर सांगितलाच, पण वेळही सांगितली. पुढे जाऊन त्याच्या प्रेत-संस्काराचा तपशीलही सांगितला. उदा. त्याच्या प्रेतसंस्काराला किती लोक उपस्थित राहतील व त्याची शवपेटी कोणकोण वाहून नेतील, हेही त्याने सांगितले. त्या संशयवाद्याचा त्याच्या या भाकितावर अर्थातच विश्वास बसला नाही आणि तो ते भाकीत विसरूनही गेला. पण नंतर खरोखरच त्याचा शेजारी त्या द्रष्ट्याने भाकीत केलेल्या दिवशी व वेळीच मेला आणि मग त्या संशयवाद्याने त्याचे बाकीचे भाकीत खोटे ठरविण्याचे ठरविले. त्याने शवपेटी वाहून नेणाऱ्यांमध्ये स्वतःला सामील करून घेण्याचे ठरविले व त्यामध्ये तो यशस्वीही झाला. नंतर प्रेतयात्रा निघण्यापूर्वी काही कामानिमित्त त्याला एकदोन मिनिटासाठी दुसरीकडे जावे लागले. ते काम आटोपून तो आला तेव्हा त्या शेजाऱ्याची प्रेतयात्रा निघाली होती व त्या द्रष्ट्याने सांगितलेले लोकच ती शवपेटी वाहून नेत होते, असे त्याला आढळून आले !<sup>१९६</sup>

येथे एक किरकोळ घटनेतील तपशीलही बदलता येत नसल्याचे, सर्व काही अगोदरच ठरून गेले असल्याचे दिसून येते. यालाच नियती (predestination) म्हणतात. 'विधिलिखित' ही म्हणतात. 'आकाशलेखन' हे त्याचे ब्रह्मवैज्ञानिक नांव आहे. अतींद्रिय दृष्टीच्या लेडबीटरनी म्हटल्याप्रमाणे हे 'आकाशलेखन' बुद्धिक पातळीवरचे असून तेथे 'भूत-वर्तमान-भविष्य' एकाच वेळी अस्तित्वात असतात. म्हणजेच तेथे कालभेदच अस्तित्वात नसल्यामुळे सर्व घटना एकाच वेळी पाहता येतात. त्याच्या खाली मनोलोक आहे. त्याच्याही खाली कामलोक (भुवर्लोक) आहे. या दोन्ही लोकांत बुद्धिक पातळीवरील घटनांचे प्रतिबिंब पडलेले असते. त्यामुळे ते स्पष्ट दिसत नाही. पाण्यात तरंग उठल्यामुळे जसे प्रतिबिंब हालते व स्पष्ट दिसत नाही, तसे या दोन्ही लोकातील प्रतिबिंबांची अवस्था असते. (ती अवस्था

मानसिक व कामिक तरंगामुळे निर्माण होते.) बरेच द्रष्टे कामलोकात जातात. त्याहूनही कमी द्रष्टे मनोलोकात जातात. बुद्धिक पातळीवर जाणारे फारच थोडे द्रष्टे आढळून येतात. त्यांचे भाकीत स्पष्ट दर्शनामुळे कधीच चुकत नाही; रांतोरांत खरे ठरते. त्याच्याही पलीकडे ब्रह्मलोक असून त्या लोकात जाणाऱ्यांना 'ब्रह्मज्ञानी' म्हणतात. कठोपनिषदात ही गोष्ट पुढीलप्रमाणे सांगितली आहे :

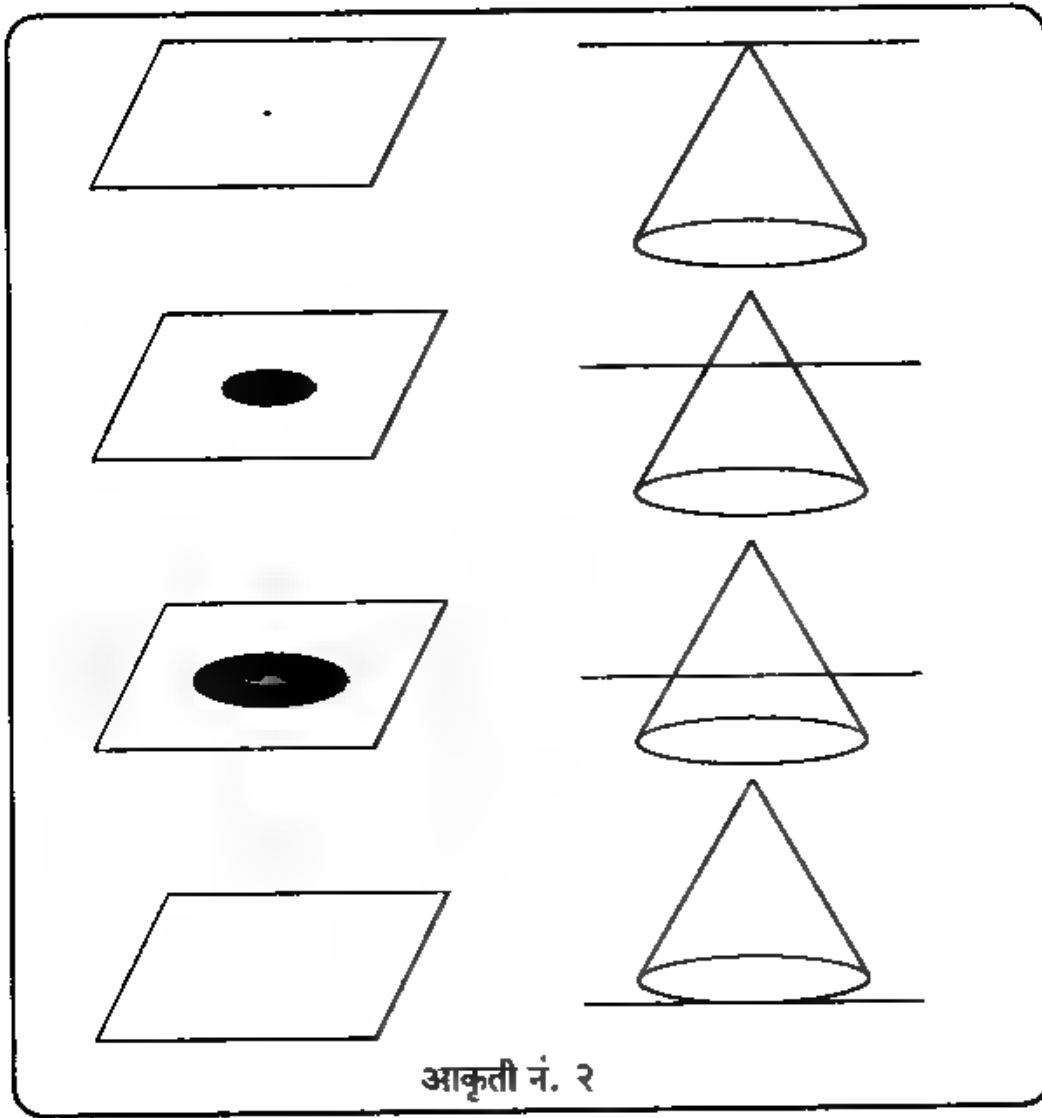
यथादर्शो तथात्मनि यथा स्वप्ने तथा पितृलोके ।

यथाप्सु परीव ददृशे तथा गंधर्वलोके छायातपयोरिव ब्रह्मलोके ॥

(कठ.उप. २.३.५)

या श्लोकात कोणकोणत्या लोकात काय काय व कसे दिसते हे सांगितले आहे. स्वप्नात मनुष्य पितृलोकात जातो. (हाच कामलोक-भुवर्लोक-astral plane-होय.) येथे वासनातरंगामुळे घटनांचे प्रतिबिंब अस्पष्ट दिसते. (चुकून 'क्यू' किंवा सौ. हत्तासारख्या एखाद्या व्यक्तीला स्पष्ट दिसते.) त्याच्या वरच्या पातळीवर गंधर्व लोक असून (हाच मनोलोक-mental plane-होय) तेथे संध पाण्यातील प्रतिबिंबाप्रमाणे अधिक स्पष्ट दिसते. त्याच्या वरच्या पातळीवर बुद्धिक लोक असून त्याला येथे 'आत्मलोक' म्हटले आहे. (शुध्द अंतःकरणाचे लोकच येथे जाऊ शकतात.) या लोकात आरशाप्रमाणे (यथा आदर्शो) स्पष्ट दिसते. याच्याही वर ब्रह्मलोक असून तेथे सूर्यप्रकाशात वस्तू दिसावी तसे 'सत्या'चे दर्शन होते. 'छायातप' म्हणजे 'ऊनसावली'. सावलीचा उल्लेख येण्याचे कारण मनुष्य अजूनही ब्रह्माशी ऐक्य पावलेला नसतो. तो 'सावली'त-मायेतच-अजूनही असतो, म्हणजे परततो (पुनर्जन्म घेतो).

बुद्धिक पातळीवर सर्व घटना स्थिरस्वरूपात एकसमयावच्छेदेकरून पाहता येतात. कालाचा अनुभव तेथे येत नाही. तो अनुभव फक्त स्थूल (भौतिक) पातळीवरच येतो. हे समजण्यासाठी ऑलिव्हर लॉज या भौतशास्त्रज्ञाने आगगाडीचा दृष्टांत दिला आहे. आगगाडीतून प्रवास करताना आपल्याला बाहेरचे जग (झाडे इ.) धावत असल्याचे दिसते व आपण स्थिर आहोत असे वाटते. वास्तविक आपणच धावत असतो व बाहेरचे जग स्थिर असते. तसे बुद्धिक पातळीवरील जग (घटना) स्थिर असताना स्थूल पातळीवरील आपल्याला ते जग धावत असलेले दिसते. घटना घडत असलेल्या दिसतात. म्हणजेच कालाचा अनुभव येतो. वस्तुतः घटना घडत नसतात. आपणच घटनांना जाऊन भेटत असतो. हालचाल आपली असते. घटनांची नसते. आगगाडीत बसल्यानंतर काही वेळाने स्टेशन 'येते' आणि आपण 'स्टेशन आले' असे म्हणतो. पण वस्तुतः स्टेशन कधीच 'येत' नाही. ते आहे तेथेच असते. आपणच स्टेशनला जाऊन भेटतो. 'स्टेशन' ही भविष्यातील (किंवा



कालातीत) घटना समजली तर विश्व हे अगोदरच घडलेले नाटक कसे आहे, म्हणजे ते अगोदरच कसे घडलेले आहे व आपणच आपल्यावरील 'माये'मुळे (दृष्टिभ्रमामुळे) ते घडत असल्याचा (म्हणजे कालाचा) अनुभव घेतो, हे लक्षात येईल. स्थूल जगातील कालानुभव हा आपल्यावरील 'माये'चा प्रभाव असून तो प्रभाव गीतेत कृष्णाने म्हटल्याप्रमाणे माणसावर जबरदस्त असल्यामुळे ('मम माया दुरत्यया') विश्व हे अगोदरच घडलेले नाटक आहे व ते आपण स्थूल जगात राहून घडत असल्याचा (कालाचा) अनुभव (आपल्याच भ्रमाने) घेत असतो, हे सत्य स्वीकारायला माणसाला जड जाते.

लेडबीटर यांनी हे समजण्यासाठी एक वेगळा दृष्टांत दिला आहे. सोबतच्या आकृतीत दाखवल्याप्रमाणे लांबी व रुंदी या दोन मितींची एक पातळी (plane) असून लांबी, रुंदी व उंची असलेल्या तीन मितींच्या शंकूवरून (cone) ती खाली सरकत आहे, अशी कल्पना करा. ती पातळी जेव्हा शंकूच्या टोकाला स्पर्श करील,

तेव्हा त्या पातळीवर एक बिंदू प्रगट होईल. त्या दोन मितींच्या प्राण्यांच्या जगातील ही एक घटना असेल. ती पातळी जसजशी खाली सरकेल, तसतसा तो बिंदू विस्तार पावत जाईल. ती पातळी जेव्हा शंकूच्या खाली पूर्ण सरकेल, तेव्हा तो बिंदू जास्तीत जास्त विस्तार पावून एकदम अदृश्य होईल. म्हणजे ती घटना घडून संपलेली असेल. येथे दोन मितींच्या पातळीचे खाली सरकणे म्हणजे कालानुसार एखादी घटना घडण्याचा त्या पातळीवरील प्राण्यांना अनुभव येणे होय. पण हा घटना घडण्याच्या अनुभव पातळी खाली सरकण्यामुळे (किंवा शंकू वर सरकण्यामुळे) व ती दोन मितींची असल्यामुळे निर्माण झालेला भ्रम आहे. सत्य तीन मितींचा 'शंकू' आहे आणि तो कालातीत व अखंड (whole) आहे. आम्ही तीन मितींच्या जगातील लोक तो शंकू संपूर्ण व एकदम पाहू शकतो आणि म्हणू शकतो की दोन मितींच्या प्राण्यांचा घटना घडण्याचा (कालाचा) अनुभव त्यांच्या दोन मितीमुळे व गतीमुळे त्यांना येतो. वास्तविक काल अस्तित्वात नाही आणि घटना 'घडत' नाहीत. तीन मितींच्या जगात शंकूच्या रुपाने दोन मितींच्या जगातील कालानुसार घडणाऱ्या 'घटना' एकदमच अस्तित्वात आहेत, हे सत्य तीन मितीमुळे आपल्याला कळते. चार मितींच्या अर्तीन्द्रिय दृष्टीच्या लोकांना विश्वरूपी नाटक अगोदरच 'आकाशलेखना'च्या रुपाने संपूर्ण अस्तित्वात आहे, ते 'घडत' नाही हे असेच कळते-जे तीन मितींचे आम्ही ते कालानुसार 'घडत' असल्याचा अनुभव घेतो.

वर म्हटल्याप्रमाणे भुवर्लोकापासून वरच्या सर्व लोकात कालाचा अनुभव येत नसल्यामुळे 'भविष्य'तील घटना त्या सर्व लोकात दिसत असल्या तरी फक्त बुद्धिक लोकातच (कठोपनिषदाच्या शब्दात 'आत्मलोका'तच) सर्व दृश्ये स्पष्ट दिसतात. या लोकात जाऊ शकणारे भावी घटनांचे अचूक भाकीत करू शकतात. आपल्या प्राचीन ऋषी-मुनींना ही आत्मलोकाची अर्तीन्द्रिय दृष्टी प्राप्त झाली होती याची साक्ष भृगुसंहिता व नाडीग्रंथ आजही देतात. ही केवळ कल्पना नाही. प्रस्तुत लेखक स्वतः त्यांचा प्रत्यक्ष अनुभव घेऊन व त्यातील विधाने पडताळून पाहून हे म्हणत आहे. भृगुसंहितेचा अनुभव लेखकाने काशीत (वाराणसीत) जाऊन व अगस्त्य नाडीग्रंथाचा पडताळा मद्रास (चेन्नई) येथे जाऊन प्रत्यक्ष पाहिला आहे. वाराणसीत दुसऱ्या एका व्यक्तीच्या बहिणीची कुंडली पं. भगवानदास चुन्नीलाल (दशरथमेध) यांना दाखवून हा पडताळा पाहिला आहे व चेन्नई येथे स्वतःच्या आंगठ्याचा ठसा देऊन तो पाहिला आहे. येथे चेन्नई येथील नाडीग्रंथाचा अनुभव थोडक्यात कथन करतो.

**नाडी भविष्य : 'आकाशलेखना'चा तिसरा व निर्णायक पुरावा**

प्रस्तुत लेखकाने १६ डिसेंबर १९९८ रोजी दुपारी १२ ॥ वाजता मद्रासच्या तांबरम् येथील नाडीकेंद्रात आपल्या आंगठ्याचा ठसा दिला. तो घेऊन नाडीवाचक



निघून गेला व सुमारे एक तासाने लेखकाच्या आंगठ्याच्या ठशाशी जुळणारे व भूर्जपत्रावर अक्षरे कोरलेले अनेक ग्रंथ घेऊन आला. त्याने लेखकापुढे एकएक ग्रंथ घेऊन वाचण्यास सुरुवात केली. त्यापैकी लेखकाच्या जीवनातील घटनाशी न जुळणारे काही ग्रंथ होते. ते बाजूला ठेवण्यात आले. शेवटी एका ग्रंथातील घटना लेखकाच्या जीवनातील घटनांशी बऱ्याच जुळून आल्यामुळे (उदा. लेखकाला एकच बहीण आहे, तिच्या सासरच्या लोकांशी लेखकाचे पटत नाही इ.) तो लेखकाचा ग्रंथ आहे, असे वाढून शेवटी नावावरून पूर्ण खात्री होत असल्यामुळे (ग्रंथाची खात्री पटेपर्यंत नांव सांगितले जात नाही; आपण तर काहीच बोलायचे नसते. नुसते विचारलेल्या प्रश्नाला 'हो' किंवा 'नाही' एवढेच उत्तर द्यायचे असते) नाडीवाचकाने लेखकाला "तुमच्या नांवाचे पहिले अक्षर 'अ' व तिसरे अक्षर 'या' आहे काय?" असे विचारले. लेखकाने 'हो' म्हणताच "तुमचे नांव 'अद्वयानंद' आहे काय?" असे विचारले. पुन्हा लेखकाने 'हो' म्हणताच तो ग्रंथ लेखकाचा असल्याचे सिध्द झाले व त्याने तो ग्रंथ संपूर्ण वाचून दाखवला; आणि आश्चर्य असे की तो संपूर्ण ग्रंथ लेखकाच्या जीवनाशी तंतोतंत जुळणारा होता. त्यामध्ये लेखकाच्या नावाबरोबरच त्याच्या आईचे, वडीलांचे व पत्नीचेही नांव होते. इतकेच नव्हे तर लेखकाची जन्मवेळ व त्या वेळची आकाशातील ग्रहस्थितीही बरोबर सांगितलेली होती. थोडक्यात लेखकाची जन्मकुंडली अगोदरच (लेखक जन्मण्यापूर्वीच) मांडलेली होती ! दुसऱ्या शब्दात लेखक केव्हा जन्मणार आहे, कोणत्या कुटुंबात म्हणजे कोणत्या आईबापांच्या पोटी जन्मणार आहे, त्याचे नाव काय ठेवण्यात येणार आहे, त्याचे शिक्षण किती होणार आहे, त्याचा व्यवसाय काय असणार आहे इ. सर्व गोष्टी तो जन्मण्यापूर्वीच अगस्त्य ऋषींनी (किंवा त्यांच्या शिष्य-प्रशिष्यांनी) हजारो-निदान शेकडो-वर्षापूर्वी-भूर्जपत्रावर लेखनबद्ध करून ठेवल्या होत्या. हा एकट्या लेखकाचा अनुभव नाही भारतातील व परदेशातील असंख्य लोकांचा अनुभव आहे. तेथे मलेशिया व जपान येथूनही बरेच लोक आले होते. लेखक काही मलेशियनांना भेटला. व माहिती घेतली. काही जपानी स्त्रियांची मुलाखतही घेतली. त्यांनी आपले नांव व इतर खासगी माहिती नाडीत बरोबर आल्याचे सांगितले. योशिको ओटा या ७० वर्षांच्या जपानी स्त्रीचा मागचा जन्म तंजावरमध्ये झाल्याचा व पुढील जन्म पुट्टपतीमध्ये होणार असल्याचा तिच्या नाडीत उल्लेख होता.

जीवनातील प्रमुख घटनाच नव्हे, तर इतरही अनेक किरकोळ गोष्टीही अगस्त्य ऋषींना अगोदरच घडणार असल्याचे माहीत झाले होते, असे किंवा आले. उदा. लेखकाला त्याच्या नाडीग्रंथात वाचून सांगण्यात आले की तो त्याच्या ६७ व्या वर्षी हे नाडीभविष्य पाहात आहे. (हे बरोबर होते.) त्यांच्या जवळ शशिकांत नावाची व्यक्ती हे भविष्य पाहताना उपस्थित आहे. (पुण्याचे विंगकमांडर शशिकांत

ओक हे त्यावेळी लेखकाबरोबर होते.) तसेच लेखकाचा नाडीग्रंथ पाहण्याचा हेतू आपले भविष्य जाणून घेणे हा नसून शास्त्रीय संशोधन करणे हा आहे, असे सांगण्यात आले. (हेही बरोबर होते. म्हणजे व्यक्तीच्या मनातील हेतूही वा विचारही ते ओळखत होते.)

विंगकमांडर शशिकांत ओक याना (व इतरांनाही) असाच अनुभव आला आहे. उदा. तामिळनाडूतील वडपळणी येथील डॉ. ओम उलगनाथन यांच्याकडे ते गेले असता नाडीलेखक विश्वामित्र म्हणाले की जिची आम्ही वाट पाहत होतो ती वायूवाहनाशी संबंधित अधिकारी व्यक्ती येथे आली आहे. काही वेळापूर्वी त्यांना जेवणामध्ये जे हवे होते ते मिळाले नाही, याचाही उल्लेख करण्यात आला. (हे खरे होते. काही वेळापूर्वी त्यांना 'सरवना' या नावाजलेल्या हॉटेलात भाताऐवजी पोळ्या मिळतील का असे विचारले असता 'नाही' असे उत्तर मिळाले होते.) त्यांच्या बरोबर जयश्री रानडे या त्यांच्या भगिनी होत्या. त्यांचाही त्यात उल्लेख होता व त्यांच्या पतीच्या अपघाती निधनाचा, त्या अपघाताच्या दिनांकाचाही बरोबर उल्लेख होता.<sup>२१</sup>

ह्या गोष्टी 'कर्णपिशाच' साधनेने नाडीवाचक सांगतात, नाडीवाचन हे केवळ सोंग असते, असा युक्तिवाद काहीजण करतात. याला परिणामकारक उत्तर लेखकाने आपल्या विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन या पुस्तकाच्या १०व्या प्रकरणात दिले आहे. श्री. ओक व प्रस्तुत लेखक यांनी आपले नांव तामिळ लिपीत नाडीपट्टीत कोरले गेले असल्याची खात्री करून घेतली आहे. श्री. ओक ओन्हरहेड प्रोजेक्टरच्या साह्याने तामिळ लिपीत नाडीपट्टीत आपले 'शशिकांत' हे नांव कसे वाचता येते याचे जाहीर प्रात्यक्षिकही करून दाखवतात. ('शशिकांत' हे नांव तामिळ लिपीत कसे वाचता येते याच्या माहितीसाठी पाहा, नास्ट्रॅडेमसपेक्षा अद्भुत नाडीभविष्य या ओकांच्या पुस्तकातील 'हा घ्या चमत्काराचा पुरावा' हा पृष्ठ १९ वरील तक्ता व नाडीपट्टीचा 'शशिकांत' नांव असलेला मलपृष्ठावरील फोटो.)

नाडीभविष्य पाहण्यासाठी स्वतःच गेले पाहिजे असे नाही. माहिती असलेल्या एखाद्या व्यक्तीच्या आंगठ्याचा ठसा नेला तरी चालते. प्रस्तुत लेखकाने आपल्या थोरल्या चिरंजीवाच्या आंगठ्याचा ठसा सोबत नेला होता. सुदैवाने त्याचे बंडल सापडले. त्यात त्याचे नांव, त्याच्या पत्नीचे नांव तर होतेच; पण वडील या नात्याने प्रस्तुत लेखकाचे व आई या नात्याने लेखकाच्या पत्नीचेही नाव होते. त्याचबरोबर त्याचे शिक्षण, भावंडे, व्यवसाय, सतती (नाही) ह्याविषयीची सर्व माहिती बरोबर दिली होती. त्याच्या मागच्या जन्मातील माहितीही दिली होती. त्या जन्मात तो स्त्री होता व स्त्रीरूपाने त्याने केलेल्या कर्माची ती माहिती होती-

ज्याचे परिणाम त्याला या जन्मात भोगावे लागत होते. त्यासाठी शांती दीक्षाही सांगितली होती. (कर्माचा परिणाम सौम्य करण्यासाठी शांती दीक्षा सांगण्यात येते.) [वाराणसीमध्ये ज्या (व्यक्तीच्या) बहिणीच्या जन्मकुंडलीच्या साह्याने लेखकाने भृगुसंहिता पाहिली होती त्या बहिणीच्या मागच्या जन्माची माहितीही भृगुऋषींनी दिली होती व त्या जन्मात तिने कोणते (वाईट) कर्म केल्यामुळे या जन्मी तिचे लग्न होऊ शकत नव्हते, हे सांगितले होते. यावरून कोणतीही गोष्ट (वा घटना) अर्थहीन नसते, सर्व काही अर्थपूर्ण रीतीनेच घडत असते, हे लक्षात येईल.]

**Theosophist** मासिकाच्या डिसेंबर १८८७ च्या अंकात बाबू केदारनाथ चटर्जी यांचा मीरत येथील भृगुसंहितेचा आपल्याला आलेला अनुभव कथन करणारा लेख प्रसिध्द झालेला असून त्याची माहिती कर्नल ऑलकॉट यांनी आपल्या **Old Diary Leaves** या ग्रंथाच्या चौथ्या खंडात पृष्ठ ४४ ते ४८ पर्यंत त्यांच्याच शब्दात दिली आहे. भृगुसंहिता पाहण्यासाठी आपली जन्मकुंडली बरोबर असावी लागते. पण बाबू केदारनाथ चटर्जीकडे जन्मकुंडली नव्हती ती हरवली होती. पण मीरतच्या भृगुशास्त्रींनी केवळ प्रश्नकुंडलीच्या साह्याने त्यांचा ग्रंथ बरोबर हुडकून काढला व त्यांना वाचावयास दिला. त्यामध्ये पहिल्या भागात त्यांची स्वतःची या जन्मातील माहिती (प्रत्येक वर्षाची क्रमशः) बरोबर दिली होतीच-विशेषतः त्यांच्या उजव्या तळहाताच्या हस्तरेषांची सुध्दा माहिती होती, -पण आई-वडीलांची व कुटुंबातील इतर व्यक्तींचीही बरीच माहिती बरोबर दिली होती. दुसऱ्या भागात त्यांच्या मागच्या जन्माची माहिती-त्यांनी त्या जन्मात केलेल्या कर्मांची व या जन्मात त्याचे काय परिणाम त्यांना भोगावे लागत आहेत याची माहिती-होती. तिसऱ्या भागात त्यांच्या मृत्यूपर्यंतची माहिती-विशेषतः त्यांना भोगाव्या लागणाऱ्या आपत्ती, संकटे यांची, व त्यासाठी कोणते 'प्रायश्चित्त' त्यांनी घेतले पाहिजे (शांतीदीक्षा) याची व पुढील जन्म कसा होणार याविषयीची माहिती होती. चटर्जींनी म्हटले आहे की तो त्यांचा ग्रंथ वाचून पूर्ण करण्यास भृगुशास्त्रींना तीन तास लागले.

भौतिक विज्ञानाच्या गृहीतकृत्यानुसार (tenets of physical science) न घडलेल्या घटनांचे मानवी मेंदूला ज्ञान होणेच शक्य नसल्यामुळे भृगुसंहिता व नाडीग्रंथ हे 'अद्भुत चमत्कार' ठरतात यात संशय नाही. हे ग्रंथ अशारीतीने भौतविज्ञानाची सर्व गृहीतकृत्ये चुकीची किंवा खोटी ठरवतात. याचा अर्थ भौतवैज्ञानिकांनी शोधलेले भौतिक नियम व इतर शोध खोटे आहेत असा मुळीच नाही. भौतिक विज्ञानाला कडक मर्यादा आहेत एवढाच याचा अर्थ आहे. त्या विशिष्ट मर्यादितच त्या विज्ञानाचे कार्य चालते. त्याच्या पलीकडे जाऊन (अभौतिक वा अतींद्रिय-क्षेत्रात) भौतशास्त्रज्ञांनी आपली गृहीतकृत्ये लागू करून निष्कर्ष काढले तर त्यांना नामुष्की

पत्करावी लागते, हे या (त्यांच्या गृहीतकृत्यात न बसणाऱ्या) घटना दाखवून देतात. भौतशास्त्राच्या मर्यादेच्या बाहेर अध्यात्मशास्त्राचा अमल सुरू होतो. या अध्यात्मशास्त्राच्या कक्षेतील घटना ह्या 'चमत्कार' नसून नियमानुसार घडणाऱ्या घटनाच असतात. हे नियम म्हणजे कर्माचे नियम आहेत आणि ते सर्वश्रेष्ठ अतींद्रिय शक्तीच्या- 'ईश्वर' नामक 'कर्माध्यक्षा'च्या-अधिपत्याखालच्या कर्मदेवताकडून अमलात आणले जातात. ते नियम लिखित आणि चित्रित घटनांच्या रूपाने 'आकाश' रुपी कॅनव्हासवर अगोदरच त्यांनी नोंदविले असल्याचे मागे ब्लॅन्व्हेट्स्की याच्या ग्रंथातील उतारे देऊन सांगितलेच आहे. त्याचाच भृगुसंहिता व नाडीग्रंथ हा साक्षात पुरावा आहे.

आपल्या आपल्यांची नावे ठेवण्यास आपण स्वतंत्र्य आहोत असे आपण समजतो. उदा. प्रस्तुत लेखकाचे वडील संतसाहित्याचे अभ्यासक होते. त्यातही ज्ञानेश्वरी त्यांना जास्त आवडे. म्हणून त्यांनी आपल्या मुलाचे (प्रस्तुत लेखकाचे) नांव 'अद्वयानंद' असे ठेवले.\* विंग कमाडर ओक हे क्रिकेटचे चाहते आहेत. 'चिन्मय' हे एका क्रिकेटपटूचे नांव आहे. ते त्यांना आवडल्याने त्यांनी आपल्या मुलाचे नांव 'चिन्मय' असे ठेवले. प्रस्तुत लेखक 'वेदांत' तत्त्वज्ञानाचा चाहता आहे. म्हणून त्याने आपल्या थोरल्या मुलाचे नांव 'वेदांत' असे ठेवले. ही सर्व नावे नाडीपट्टीत बरोबर आली आहेत. याचा अर्थ असा की लेखकाचे वडील, ओक व स्वतः लेखक हे आपल्या मुलांची नावे काय ठेवणार आहेत हे त्यांनी ती नावे ठेवण्यापूर्वीच ठरून गेले आहे ! अन्यथा अगस्त्य ऋषींना हजारो वर्षांपूर्वी (निदान नाडी लेखकाला शेकडो वर्षांपूर्वी) ते कसे माहीत झाले या प्रश्नाचे उत्तर दिले पाहिजे. ती नावे 'आकाश' रुपी कॅनव्हासवर अगोदरच लिहिली गेलेली असून तीच त्यांनी वाचून सांगितली, म्हणजेच अगोदरच ठरवून लिहिलेल्या नाटकाच्या कथानकाचा तो भाग आहे, असे म्हणावे लागते. याचा अर्थ त्या आवडीनिवडी त्या व्यक्तींच्या नाहीत असा नसून त्यांच्या त्या आवडीनिवडीसुद्धा अगोदरच ठरून गेल्या आहेत असा आहे. नाटककार आपल्या नाटकातील पात्रांची नावे, त्यांचा स्वभाव, त्यांच्या आवडीनिवडी, त्यांच्या जीवनातील घटना इ. सर्व अगोदरच ठरवून नाटक लिहितो, तसे हे विश्वरूपी नाटक ईश्वराने (अर्थात् त्याच्या हाताखालच्या कर्मदेवांनी) अगोदरच ठरवून लिहून ठेवले आहे, असा याचा अर्थ आहे.

\* बरेच जण हे प्रस्तुत लेखकाने नंतर धारण केलेले नांव आहे, असे समजतात. ज्ञानेश्वरीत शंकरापासून परंपरेने चालत असलेल्या नाथपंथी तत्त्वज्ञानाचे ते नाव म्हणून उल्लेखिले आहे, हे बऱ्याच जणांना माहीत नाही. (पाहा, ज्ञाने. १७.१७५६) शंकराचार्यांच्या 'अद्वैत' तत्त्वज्ञानाशी गळत करून बरेच जण लेखकाचा 'अद्वैतानंद' असा चुकीच्या नांवानेही उल्लेख करतात. (ज्ञानेश्वरीत शंकराचार्यांचे अद्वैत तत्त्वज्ञानच असले तरी ज्ञानेश्वर स्वतः, गुरुपरंपरेने नाथपंथी होते.)

या सर्व गोष्टी 'अर्थपूर्ण' ही आहेत. 'अर्थपूर्ण' घटना मानवी मनाच्या संबंधाने घडतात, अशी अर्थपूर्ण घटनांची युंगने व्याख्या केल्याचे मागे सांगितले आहे. नाटकातील गोष्टी नाटककाराच्या संकल्पशक्तीने व इच्छाशक्तीने-म्हणजे नाटककाराच्या मनाच्या संकल्पशक्तीने व इच्छाशक्तीने 'अर्थपूर्ण' बनल्या आहेत आणि म्हणून आपल्या इच्छा व आवडी-निवडी ह्या आपल्या नसून ईश्वराच्या आहेत, असे यावरून ठरते !

प्रत्येक व्यक्तीच्या नांवाबरोबर त्या व्यक्तीची जन्मवेळ, त्या वेळची आकाशातील ग्रहस्थिती (म्हणजे जन्मकुंडलीही) ती व्यक्ती जन्मण्यापूर्वीच बरोबर सांगण्यात येते. व्यक्तीचा भूलोकातील जन्म व त्या वेळची आकाशातील ग्रहांची स्थिती ह्या भौतिक घटना आहेत आणि त्या नाडीग्रंथात बरोबर सांगितलेल्या आढळतात. यावरून या वैश्विक (भौतिक) घटनाही अगोदरच ठरून गेल्या आहेत, असे म्हणावे लागते. विश्व हे एक नाटक असल्याचा हा सार्वजनिक भौतिक पुरावा आहे. मानवी मनाच्या संबंधाने घडणाऱ्या घटना 'अर्थपूर्ण' असल्या तरी त्या संबंधित व्यक्तीपुरत्याच मर्यादित असल्याने त्या पुराव्याचे मूल्य फक्त त्या व्यक्तीपुरते मर्यादित असते. म्हणजे फक्त त्या व्यक्तीची खात्री पटवणारा तो पुरावा ठरतो. भौतिक घटना हा सार्वजनिक पुरावा असल्यामुळे म्हणजे त्याचा सार्वजनिकरीत्या कुणालाही पडताळा पाहता येत असल्यामुळे, तो सर्वात जास्त महत्वाचा वैज्ञानिक पुरावा आहे; आणि तो पुरावा विश्वातील या घटना अगोदरच ठरून गेल्या आहेत, म्हणजे विश्व हे एक नाटक आहे, हे सिध्द करतो. 'आकाशलेखना'च्या सत्यतेचा हा निर्णायक वैज्ञानिक पुरावा होय. यावरून हेही सिध्द होते की आकाशस्थ ग्रहांचा मानवी स्वभाव, त्याच्या जीवनातील प्रसंग इ. वर जो प्रभाव दिसून येतो (असे आपण समजतो) तो केवळ भास असून मुळात हा सर्व ईश्वरी नियोजनचा-म्हणजे अतींद्रिय जगातील एका सर्वश्रेष्ठ व्यवस्थेचा (supreme spiritual order) भाग आहे.\*

वर वडपळणीच्या डॉ. ओम् उलगनाथन यांचा उल्लेख आला आहे. ते पुण्याच्या ज्योतिषशास्त्राच्या एका परिषदेला खास आमंत्रणावरून एकदा आले असता प्रस्तुत लेखकाला त्यांच्याही नाडीवाचनाचा अनुभव घेण्याची संधी मिळाली. शिवसेनेचे आमदार मा. प्रकाशराव देवळे यांच्या शिरगाव (जि. पुणे) येथील श्री साईबाबा चॅरिटेबल पब्लिक ट्रस्टच्या कोट्यवधी रुपये खर्च करून बांधलेल्या साई

\* काही पृथ्वीवरील घटना (उदा. अपघात, मनोरोग, वेड, भानामती यासारख्या भौतिक, मानसिक व अतींद्रिय घटना) पौर्णिमा - अमावस्येच्या दरम्यानच का घडतात ह्याचे 'गूढ' अशारीतीने उकलते. आकाशस्थ ग्रहस्थितीशी (planetary conjunction) मानवी जीवन पूर्णपणे संबध्द आहे, तो विश्वव्यवस्थेचाच एक भाग आहे, याचा हा पुरावा आहे. यालाच ज्योतिषशास्त्र म्हणतात.

मंदिरात १९ जून २००५ रोजी अकरा व्यक्तींच्या उपस्थितीत डॉ. ओम् उलगनाथन यांचे नाडीवाचन झाले. त्यावेळी उपस्थित असलेल्या त्या अकरापैकी काही व्यक्तींच्या जीवनातील घटनांचा नाडीत उल्लेख आला व तो सर्व बरोबर असल्याचे संबंधित व्यक्तींनी मान्य केले. उदा. एका वार्ताहर बाईने आपला नवरा मृत्यू पावल्यानंतर त्याचा श्राध्दविधी केला नव्हता, असे विश्वामित्रांनी सांगितले. हे खरे होते हे तिने मान्य केले. पण नवऱ्यापासून विभक्त असल्यामुळे आपण तो केला नाही, असे त्याचे तिने समर्थन केले. पण तरीही तो तिचा नवरा असल्यामुळे हिंदू धर्माच्या चालीरीतीप्रमाणे तो विधी तिने करावयास पाहिजे, असा नाडीत आदेश आला. तेथे उपस्थित असलेल्या एका व्यक्तीच्या मनाला आपला नाडीत उल्लेख का येईना अशी सारखी चुटपूट लागून राहिली होती. त्याच्या त्या चुटपुटीचीही माहिती नाडीवाचनात आली ! आणि त्याने ते खरे असल्याचे मान्य केले ! नाडीवाचनातील बहुतेक भाग त्या ठिकाणचे महत्त्व सांगणारा होता. उदा. त्या ठिकाणी शिरडीच्या साईबाबांचे कित्येक दिवस वास्तव्य होते, असा नाडीत उल्लेख आला. तसेच शिवाजी महाराजांना याच ठिकाणी भवानीचे प्रत्यक्ष दर्शन झाले होते असेही एक वाक्य होते. हे वाक्य डॉ. उलगनाथन यांनी नाडीत तामिळमध्ये वाचल्यानंतर त्याचे हिंदीत भाषांतर करणाऱ्याने भाषांतर करून सागताच खोलीच्या भिंतीवरील *भवानीच्या फोटोच्या हारातून एक फूल तत्काळ खाली पडले*, ते सर्वांनी पाहिले. ही गोष्ट सत्य असल्याचा हा पुरावाच असल्याचा हा संकेत असल्याचे भाषांतरकाराने म्हटले आणि ही गोष्ट सर्वांना पटल्याची दिसली.

नाडीत आदेश आला की दुसरे दिवशी तेथे उपस्थित असलेल्या सर्वांनी शिरडीला साईबाबांच्या दर्शनाला जावे. त्याप्रमाणे आमदार प्रकाशराव देवळे यांनी स्वखर्चाने सर्वांना शिरडीला नेले. (त्यामध्ये विंग कमांडर ओक व प्रस्तुत लेखक हेही होते.) दर्शन झाल्यानंतर आमदार देवळे यांचे गुरु श्री. धोंडीराम चव्हाण यांच्या कोपरगाव रस्त्यावरील साईधाम ट्रस्टच्या साईमंदिरालाही सर्वांनी भेट दिली. तेथे डॉ. उलगनाथनना नाडीवाचन केले. त्या वाचनाच्या वेळी अनाहूतपणे काही मंडळी तेथे आली होती. त्यांचा 'परदेशस्थ' असा उल्लेख नाडीत आला; तो बरोबर होता. (त्यामध्ये एक मराठी चित्रपट सृष्टीतील नटी होती. ती आपल्या नवऱ्याबरोबर अमेरिकेत जाऊन स्थायिक झालेली आहे.) तिच्या एका नातेवाईक स्त्रीचा गर्भपात झाल्याचा नाडीत उल्लेख आला. हे खरे असल्याचे तेथे उपस्थित असलेल्या त्या स्त्रीने मान्य केले. पण आपण तो मुद्दाम केला नाही, पाय घसरून पडल्यामुळे झाला, असे ती म्हणाली.

वरील डॉ. उलगनाथन यांच्या नाडीवाचनावरून हे सिध्द होते की त्यांच्या नाडीग्रंथाचे वाचन केव्हा व कोठे होणार आहे, त्याला कोणकोण उपस्थित राहणार

आहेत, त्यांच्या जीवनात कोण कोणत्या घटना घडणार आहेत, किंबहुना त्यांच्या मनात वाचनाच्या वेळी कोणते विचार येणार आहेत (उदा. चुटपूट) येथपर्यंत सर्व काही अगोदरच ठरून गेलेले आहे. अन्यथा कित्येक वर्षांपूर्वी लिहिलेल्या भूर्जपत्रावरील त्या नाडीग्रंथात ती सर्व माहिती कशी लिहून ठेवली गेली, याची उपपत्ती देता येत नाही. हा सर्व डॉ. उलगनाथन यांच्याच फक्त नाडीग्रंथाचा अनुभव आहे असे नाही; तर अगस्त्य नाडीसारख्या इतर अनेक नाडीग्रंथांचा व उत्तरेकडील भृगुसंहिता, यांचाही असाच अनुभव आहे व तो इतर असंख्य लोकांना आला आहे; सतत येत आहे. विश्व हे नाटक (वा चित्रपट) असून ते अगोदर 'आकाशलेखना'च्या रूपाने तयार (चित्रित) करण्यात आले असल्याचे हा अनुभवाचा व भौतिक घटनांचा पुरावा सिध्द करतो.

**मानवाचे 'इच्छास्वातंत्र्य' हे ईश्वराचेच 'इच्छास्वातंत्र्य'**

नाटक म्हटले की ते अगोदरच लिहून ठेवलेले असावे लागते. विश्व हे नाटक असेल व मानवी जीवन त्या विश्वाचाच भाग असल्यामुळे तेही नाटक असेल तर नाटकातील पात्रांना नाटककाराने त्यांच्या तोंडी घातलेली वाक्येच बोलावी लागतात; स्वतःची वाक्ये बोलण्याचे त्यांना स्वातंत्र्य नसते. या वैश्विक नाटकातील मानवरूपी पात्रांच्या बाबतीतही ते खरे आहे, असे कोणी म्हणेल. विश्व हे नाटक असल्याबद्दलच्या आतापर्यंत दिलेल्या सर्व पुराव्याचा विचार केला तर त्याचे हे म्हणणे नाकारता येणार नाही, हे उघड आहे. मानवाला बोलण्याचेही स्वातंत्र्य नाही, कृतिस्वातंत्र्यही नाही हा विचार काही जणाना अत्यंत अस्वस्थ करणारा आहे, यात संशय नाही. इतका की याविषयी काही तरी कोठे तरी पुराव्याची गफलत झाली आहे, असेसुद्धा काही जणांना वाटण्याची शक्यता आहे. पण यात कसलीही गफलत नाही. ज्यांना तसे वाटते, त्यांना यात कोठे व काय गफलत झाली आहे, हे दाखवून द्यावे लागेल. आपले नाडोभविष्य खरे ठरले नाही, असे सांगणारे काहीजण लेखकाला माहीत आहेत. (अलीकडे महाराष्ट्रात अनेक शहरात नाडीकेंद्रे उघडली गेली असल्यामुळे सर्वांनाचा नाडीचा अनुभव घेता येतो.) उदा. एका वाचकाने लेखकाचे 'विज्ञान व अधश्रद्धा निर्मूलन' हे पुस्तक वाचून नाडी भविष्याचा अनुभव घेतला व लेखकाला पत्र लिहिले की आपल्याला मुलगा होईल असे भविष्य सांगण्यात आले, पण मुलगी झाली. तरी नाडीकेंद्रावर कायदेशीर उपाय काय करावेत, याचा कृपया सल्ला द्यावा. या गृहस्थाला आपले नाव नाडीपट्टीत आले याचे काहीच मोल वाटत नाही, मुलगी झाली याचेच सर्वात मोठे दुःख होते ! (भूतकाळ बरोबर येतो, पण भविष्य चुकत असेल तर का चुकते याची सविस्तर चर्चा विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन या पुस्तकात केली आहे. हल्ली नाडीवाचक फार झाले असल्यामुळे

ते वाचनातही चुका करू शकतात.) 'आत्मानंद' हे टोपण नांव धारण करणारे एक लेखक असून त्यांनी 'अमृततुषार' नांवाच्या आपल्या पुस्तकात संपूर्ण भृगुसंहिता हे थोतांड आहे, असे म्हटले आहे ! (पृ. ८९) कारण काय, तर म्हणे त्यांना अस्सल भृगुसंहिता एकटाही कोणी दाखवू शकला नाही ! भृगुसंहितेचा त्यांनी काय अनुभव घेतला आहे, हे मात्र त्यांनी कुठेच सांगितलेले नाही ! अनुभव घेतला असता व *भृगुसंहिता अनुभवाला उतरली नसती* तर तो अनुभव त्यांनी निश्चितच सांगितला असता ! म्हणून असे म्हणावे लागते की अनुभव न घेताच तिला त्यांनी थोतांड ठरविले आहे. *मात्र नाडीग्रंथात भूतकाळ बरोबर येतो, हे त्यांनी मान्य केले आहे.* पण त्याचे कारण 'कर्णपिशाच' विद्या नाडी वाचकांनी प्राप्त करून घेतलेली असते. हे आहे, असे ते म्हणतात. *याला पुरावा मात्र काडीचाही दिलेला नाही.* नाडीचा प्रत्यक्ष अनुभव काय घेतला हेही त्यांनी कोठे सांगितलेले नाही. थोडक्यात भृगुसंहिता व नाडी ग्रंथांचा संशोधक कसा नसावा याचे 'आत्मानंद' हे एक उत्कृष्ट उदाहरण आहेत. असे म्हणण्याचे कारण आपण नाडीचा अगर भृगुसंहितेचा कोणता अनुभव घेतला हे कोठेही न सांगता आपण संशोधक असल्याचा त्यांनी आपल्या संपूर्ण पुस्तकात फार मोठा आव आणला आहे. संशोधकाने आपला अनुभव गुप्त ठेवावा असा एखादा नियम आहे की काय असा प्रश्न त्यांना साहजिकच कोणीही विचारील.

या गोष्टींचा येथे उल्लेख करण्याचे कारण भृगुसंहिता व नाडी ग्रंथ खोटे ठरविण्याचा काही लोकांचा जाणीवपूर्वक प्रयत्न असूनही त्यामध्ये कोणालाही अद्यापि यश आलेले नाही, हे वाचकाना कळावे हे आहे. समजा एखाद्याला या ग्रंथांचा अनुभव आला नाही, तरी संपूर्ण नाडी ग्रंथ व भृगुसंहिता खोटे ठरत नाहीत. एखाद्या डॉक्टराला आपल्या धद्यात अपयश आले म्हणून संपूर्ण वैद्यकशास्त्र खोटे आहे, असे आपण कधी म्हणतो काय ? तसेच काही ठिकाणी अनुभव आला नाही म्हणून इतरांना आलेला त्या ग्रंथांचा अनुभव खोटा आहे, असे ठरत नाही व झाडून सर्वच ग्रंथ काही आपण खोटे म्हणत नाही.

अशारीतीने विश्व हे ईश्वराचे नाटक असल्याबद्दलच्या आतापर्यंत दिलेल्या अनेक पुराव्यांचा साकल्याने विचार करता 'आकाशलेखन' हे ब्रह्मवैज्ञानिक सत्य आहे, याविषयी कोणीही संशय बाळगण्याचे कारण नाही; आणि आकाशलेखन हे ब्रह्मविज्ञानासिद्ध सत्य असेल तर *मानवाला इच्छा स्वातंत्र्य नाही हे खरे नसून मानवाचे इच्छा स्वातंत्र्य हे मानवाचे नसून त्याला निर्माण करणाऱ्या ईश्वराचे-* विश्वाच्या त्या नाटककाराचे-आहे, असे ठरते आणि हे सत्य शोकळेपणाने मान्य केले पाहिजे. अशारीतीने आपल्याला इच्छा स्वातंत्र्य नाही, ही गोष्ट आपण जितक्या जोराने नाकारतो, तितक्या जोराने आपण हेच सिद्ध करतो की आपल्यातील ईश्वर तितक्या प्रमाणात जागा आहे ! कारण *आपल्यातला ईश्वर जागा नसता तर आपण*



त्याचे हे स्वातंत्र्य इतक्या जोराने प्रतिपादलेच नसते !

मानवाचे इच्छास्वातंत्र्य व कृतिस्वातंत्र्य हे ईश्वराचेच इच्छास्वातंत्र्य व कृतिस्वातंत्र्य आहे; आणि तेवढ्या पुरता तरी आपल्यातील ईश्वर जागृत आहे ह्या वस्तुस्थितीमुळे अनेक तथाकथित समस्यांचा उलगडा होतो. उदा. ज्या लोकांचा पुण्यकृत्य करण्याकडे ओढा आहे, ते लोक, ज्याला सामान्य लोक 'बंधन' समजतात, ते 'ईश्वराचे इच्छास्वातंत्र्य' च सिध्द करतात; व ज्या लोकांचा पापकृत्य करण्याकडे ओढा आहे, ते लोक ईश्वराचे इच्छास्वातंत्र्य नाकारून त्या इच्छास्वातंत्र्याचा संकोच करतात; म्हणजे ज्याला सामान्य लोक 'स्वातंत्र्य' समजतात त्या ईश्वरी 'माये' च्या बंधनातच पडतात-म्हणजेच आपले ईश्वरीय स्वातंत्र्य गमावून बसतात. अशारीतीने पुण्य करण्याचे तथाकथित 'बंधन' हे खरे (आध्यात्मिक) स्वातंत्र्य आहे व पाप करण्याचे तथाकथित (सैतानाचे) 'स्वातंत्र्य' हे खरे (मायेचे) बंधन आहे, ह्या मागे सांगितलेल्या वरवर विरोधाभासात्मक वाटणाऱ्या आध्यात्मिक (ब्रह्मवैज्ञानिक) नियमावर ब्रह्मवैज्ञानिक प्रकाश पडतो.

प्रयत्नवाद व नियतीवाद हा वादही असाच अज्ञानजन्य आहे, हेही यावरून स्पष्ट होते. उदा. रामदास स्वामी म्हणतात,

केल्याने होत आहे रे, आधी केलेचि पाहिजे ॥

यत्न तो देव जाणावा, अंतरी धरिता बरे ॥

याच्या उलट तुकाराम महाराज म्हणतात,

जे जे लिहिले संचिती । ते न चुके कल्पांती ॥ १ ॥

होणार ते होउनी जाय । व्यर्थ बोलोनिया काय ॥ २ ॥

लाभ अथवा हानी । घरा येताती चालोनि ॥ ३ ॥

तुका म्हणे स्वस्थ मन । करा विठ्ठल चिंतन ॥ ४ ॥

येथे दोन संत दोन परस्पर-विरुध्द दृष्टिकोनाचे आहेत, असे वरवर दिसत असले तरी दोघानीही त्यासाठी 'ईश्वरा'ची साक्ष काढलेली असल्याने तो विरोध वरवरचा आहे, हे स्पष्ट होते. कारण ईश्वराच्या ठिकाणी सर्व विरोध मावळतो, असे भगवद् गीतेतील श्रीकृष्णाच्या पुढील वचनावरून सिध्द होते. कृष्ण अर्जुनाला म्हणतो.

स्वभावजेन कौन्तेय निबध्द : स्नेन कर्मणा ॥

कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपि तत्॥(भ.गी.१८.६०)

अर्थ :- हे अर्जुना स्वभावातून जन्मलेल्या कर्मांमुळे तू बांधला गेलेला असल्यामुळे मोहामुळे तू जे (युध्द) करू इच्छित नाहीस ते विवश होऊन (शेवटी) करशीलच.

गीतेत 'स्वभावा'ला 'अध्यात्म = ईश्वर' म्हटले आहे. (स्वभावोऽध्या-

त्ममुच्यते ॥ ८.३) 'स्वभावज' कर्मनि, म्हणजे ' (हृदयस्थ) ईश्वरापासून जन्मलेल्या' कर्मनि, प्रत्येक मनुष्य बांधला गेला आहे. अर्जुनाचा स्वभाव (म्हणजे हृदयस्थ ईश्वर) युध्द करण्याच्या प्रवृत्तीचा (क्षत्रिय) असल्यामुळे मोहामुळे थोडा वेळ त्याला युध्दाची उपरती झाली असल्याची दिसत असली, तरी तो शेवटी युध्द करणारच आहे, असा वरील कृष्णाच्या म्हणण्याचा आशय आहे. म्हणजे अर्जुनाचे युध्द त्याच्या नशीबात लिहिलेले काही चुकत नाही, असे कृष्ण म्हणतो. याचा अर्थ अर्जुन युध्द करणार आहे की नाही, हे अगोदरच नशिबाने (म्हणजे हृदयस्थ ईश्वराने- त्याच्या स्वभावजात कर्मनि-तो बांधला गेला असल्यामुळे) ठरून गेले आहे. येथे प्रयत्नवाद व नियतीवाद यांची 'स्वभावा'त (स्वभावजात कर्मात), म्हणजे अध्यात्मात, (ईश्वरात), सांगड घातलेली आहे. अशारीतीने प्रत्येकाने काय करायचे आहे, हे हृदयस्थ ईश्वराने निर्माण केलेले त्याचे 'कर्म'च ठरवत असते. याचे ज्ञान नसलेले लोक प्रयत्नवाद व नियतीवाद (दैववाद) असा खोटा वाद निर्माण करतात. हे पुढील सुभाषितात मार्मिकपणे सांगितले आहे :

पूर्वजन्मकृतं कर्म तदैवमिति कथ्यते ।

तस्मात् पुरुषकारेण विना दैवं न सिध्यति ॥

अर्थ : मागच्या जन्मात केलेल्या कर्माला (प्रयत्नाला) (या जन्मात) दैव म्हणतात. म्हणून प्रयत्न केल्याशिवाय दैव (कधीच) सिध्द होत नाही.

'कर्म' एकच. पण एका बाजूने त्याला 'प्रयत्न' म्हणतात व दुसऱ्या बाजूने त्याला 'दैव' म्हणतात, हे तेथे मार्मिकपणे सांगितले असून प्रयत्नवाद व दैववाद ह्यातील विरोध खोटा असल्याचे (पुनर्जन्म सिध्दांताने) सुचविले आहे.\* हा खोटा विरोध कोण निर्माण करतो ? अर्थात् अहंकारविमूढात्मा, म्हणजे हे सर्व 'मी' करतो असे समजणारा अज्ञानी (अहंकारी) मनुष्य. खरे तर (अहंकारी) 'मी' काहीच करीत नसतो. सर्व काही ईश्वरच करीत असतो. ही गोष्ट 'ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति । भ्रामयन् सर्वभूतानि यंत्रारूढाणि मायया ॥' (भ.गी. १८.६१) म्हणजे 'ईश्वर सर्व प्राण्यांच्या हृदयात वास करून व मायेने यंत्रावर बसवून सर्वांना फिरवत असतो' या पुढच्याच गीतेतील श्लोकात सांगितली आहे. म्हणून ज्ञानेश्वर म्हणतात,

परि मने वाचा देहे । जैसा जो व्यापारु होये । तो मी करितु आहे ।

ऐसे न म्हणे ॥ करणे का न करणे । हे अवघे तोचि जाणे । विश्व

\* प्रयत्नवाद शिकवणारे रामदास स्वामीही 'मनाच्या श्लोका'त हेच सांगतात. उदा.

मना त्वाचि रे पूर्व सचित केले ॥ तथा सारिखे भोगणे प्राप्त झाले ॥ ११ ॥

घडे भोगणे सर्वही कर्मयोगे ॥ मतिमंद ते खेद मानी वियोगे ॥ १७ ॥

चळतसे जेणे / परमात्मेनि ॥ (ज्ञाने. १२.११७, ११८)

अर्थ : परंतु मनाने, वाचने व देहाने असे जे कर्म होईल, ते मी करीत आहे, असे म्हणू नकोस. (कारण) ज्या परमेश्वराच्या सत्तेने हे विश्व चालले आहे, तोच कोणतीही गोष्ट करणे अथवा न करणे, हे सर्व जाणत असतो.

[नैव किंचित् करोमीति युक्तः मन्येत तत्त्ववित् ॥ (भ.गी. ५.८) म्हणजे 'मी काहीच करत नाही, असे तत्त्ववेत्त्या योम्याने समजावे,' असे याच कारणासाठी गीतेत म्हटले आहे.]

हे अधिक चांगले कळावे म्हणून ज्ञानेश्वरांनी माळ्याचे उदाहरण दिले आहे. माळी बागेत पाण्याला वाट करून देईल तसे ते जाते, तसे ईश्वराने ठरवून दिलेल्या मार्गाने, त्याने ठरवून दिलेले (नियत) कर्म माणसाने या जगात करावे. अर्थात् तो (म्हणजे त्याच्यातील ईश्वर) तेच करतो. पण माणूस अज्ञानाने 'मी' करतो असे समजतो. हा 'मी' पणा (अहंकार) नाहीसा करणे आवश्यक असून ब्रह्मविज्ञानामुळेच ते शक्य आहे, हे आतापर्यंत केलेल्या विवेचनावरून स्पष्ट होईल.

अशारीतीने माणसाला सत्याचे ज्ञान झाले की सर्व प्रश्न सुटतात-मग ते सत्य प्रथम दर्शनी (नवीन व अपरिचित असल्यामुळे) कितीही विलक्षण वाटो. मागे सांगितल्याप्रमाणे हे विश्व म्हणजे गारुड्याचा खेळ आहे, हे सत्य माहीत झाले की 'चमत्कार' खोटे आहेत हे कळते. विश्व हा गारुड्याचा खेळ नसून ते खरे आहे, असे समजले की 'चमत्कार' ही खरे ठरतात ! (पाहा : 'चमत्कार हे एकाच वेळी खरे आणि खोटे हे कसे ?' हा पोटमथळा. पृ. ३१४) तसेच विश्व हे नाटक आहे हे कळाले की मानवाला ईश्वराहून वेगळे इच्छास्वातंत्र्य आहे, हे खोटे, हे कळते; आणि विश्व हे नाटक आहे, हे ज्याला माहीत नाही, त्याच्या दृष्टीला स्वतःला वेगळे इच्छास्वातंत्र्य आहे हे खरे वाटते. मग 'चमत्कार' खरे मानणान्याला जसे 'चमत्कारा'च्या नियमभंगाच्या उपपत्तीची समस्या सोडवता येत नसल्यामुळे 'चमत्कार'च नाकारण्याचा, म्हणजे ते खोटे म्हणण्याचा, आडमुठेपणा करावा लागतो, तसे स्वतःला (ईश्वराहून) वेगळे इच्छास्वातंत्र्य आहे, हे खरे मानणान्याला त्या इच्छास्वातंत्र्याच्या विरुद्ध घडणाऱ्या घटनांची उपपत्ती देता येत नसल्यामुळे त्या घटनांना 'अर्थहीन' म्हणण्याचा आडमुठेपणा करावा लागतो ! पण अशा अर्थहीन घटनाच या जगात जास्त घडत असल्यामुळे त्यांना 'अर्थहीन' म्हणणे हाच आडमुठेपणा ठरतो, हे ओळखून त्या घटनांना भौतिक कार्यकारणभावाच्या नियमानुसार घडणाऱ्या घटना मानून त्या 'नियमित' (regular) घटना मानणे व मानवी मनाच्या संबंधाने (म्हणजे भौतिक कार्यकारणाच्या बाहेर) घडणाऱ्या घटना ह्या 'अर्थपूर्ण', पण 'अपवादात्मक' घटना मानणे तो (युंगप्रमाणे) पसंत करतो. पण मग या 'अर्थपूर्ण' घटनांचा 'अर्थहीन' घटनांशी मेळ घालण्याची नवी समस्या

त्याच्यापुढे दत्त म्हणून उभी राहते ! ती समस्या तर्कशुध्दरीतीने त्याला सोडवता येत नसल्यामुळे युंगला जशी ईश्वराचीच शेवटी कास धरावी लागली, तसे ईश्वराचे मूळ (अस्तित्व व) कर्तृत्व टाळण्याचा प्रयत्न करून शेवटी त्याचीच पुन्हा त्याला कास धरावी लागते. पण अशी ईश्वराचीच पुन्हा आडवळणाने कास धरण्याने व मुळात त्याचे कर्तृत्व नाकारण्याने काय साधले, हा प्रश्न साहजिकच निर्माण होतो. या प्रश्नाचे उत्तर त्याला देता येत नसल्यामुळे तो मुद्दा युंगप्रमाणे शेवटी तळटीपेत ढकलून गौण मानण्याचा नवा आडमुठेपणा त्याला करावा लागतो ! टोलनाक्याचा कर चुकविण्यासाठी रात्रभर दुसरा मार्ग हुडकत फिरून पाहते परत टोलनाक्यावरच येणाऱ्या गाडीवानासारखी शेवटी त्याची अवस्था होते ! सर्व प्रश्नांची तर्कशुध्द सोडवणुक करणाऱ्या ब्रह्मविज्ञानाच्या कर्मसिध्दांताची ओळख नसल्यामुळे पाश्चिमात्य शास्त्रज्ञांची अशी (वरील गाडीवानासारखी) ससेहोलपट झाली असल्याची आढळून येते. ज्या भौतविज्ञानावरील (भौतिक नियमांवरील) श्रध्देमुळे त्यांची ही ससेहोलपट झाली आहे, ते विज्ञानच ब्रह्मविज्ञानाला कसे शेवटी बळकटी आणणारे ठरले आहे हे पाश्चात्य भौतविज्ञानिकांना त्यांच्याच शोधानी आता दाखवून दिले असून त्यांच्या सर्व प्रश्नांची सोडवणुक त्यामुळे होण्याच्या मार्गावर असल्याची दिसते. अशारीतीने त्यांची अवस्था त्या करचुकव्या व रात्रभर फिरणाऱ्या गाडीवानासारखी झाली असली तरी ती शेवटी अंतिम हिताचीच ठरली आहे, असे म्हणता येईल. कारण त्यांना सतावणाऱ्या अनेक जटिल समस्यांवर त्यांच्या (भौतवैज्ञानिकांच्या) अनेक वर्षांच्या प्रयत्नाचे फलस्वरूप अशा या (ब्रह्मविज्ञानाचा पाठपुरावा करणाऱ्या) शोधामुळे प्रकाश पडला आहे; आणि ही ससेहोलपट सत्कारणी लागल्याचे समाधान शेवटी त्यांना मिळाले आहे. \* त्यांना हे समाधान कसे मिळाले आहे, हे पाहणे

\* तथापि हे काही मोजक्या शास्त्रज्ञांच्या बाबतीतच खरे आहे. कारण विज्ञानाच्या तथाकथित मुख्य प्रवाहातील (so-called main-stream science) अनेक शास्त्रज्ञ अजूनही त्या वाडीवानासारखे अंधारात रस्ता हुडकत फिरत असल्याचे आढळून येतात ! अशा आडरानात फिरणाऱ्या भौतशास्त्रज्ञांपैकी (त्यांचा प्रतिनिधी म्हणून) लेडरमन या भौतशास्त्रज्ञाकडे बोट दाखवता येईल; [त्याचे **The God Particle** (1993) हा ग्रंथ पाहा. तो 'अंतिम' भौतिक कणालाच ईश्वर मानतो !] रेण्विक जीवशास्त्रज्ञांपैकी जॅक मोनोकडे बोट दाखवता येईल. [त्याचा **Chance and Necessity** (1971) हा ग्रंथ पाहा.] जीवशास्त्रज्ञांपैकी डॉकिन्सकडे बोट दाखविता येईल. [त्याचे **The Blind Watch Maker** (1986) व **The Selfish Gene** (1976) हे ग्रंथ पाहा.] मानसशास्त्रज्ञांपैकी डॅनियल डेनेटकडे बोट दाखवता येईल [त्याचा **Consciousness Explained** (1991) हा ग्रंथ पाहा.] हे सर्व अत्यंत बुद्धिमान पण वाट चुकलेले (पण आपलाच मार्ग बरोबर मानणारे) बुद्धिवादी व भौतिकवादी शास्त्रज्ञ आहेत. याना (त्यांच्याच भाषेत) **Blind Science - Makers** (आंधळे शास्त्रज्ञ) म्हणता येईल ! [ब्रह्मविज्ञानाविषयी (occult science) बोलायलाच नको.] तथापि त्यांच्याच भाषेत त्यांची मते खोडून काढणारे काही शास्त्रज्ञ असून त्यापैकी काही शास्त्रज्ञांचे पुढील ग्रंथ त्यासाठी पाहावेत. **Beyond Science** (1996) John Polkinghorne. **Emperor's New Mind** (1987) R. Penrose. **Rediscovery of Mind** (1992) J.R. Searle. **Shadows of Mind** (1994) R. Penrose. **Understanding the Present** (1992) Bryan Appleyard.

उद्बोधक आहे. कारण भौतविज्ञानाला कडक मर्यादा आहेत, त्या मर्यादेतच फक्त त्याचे कार्य चालते व त्याच्या पलीकडे अध्यात्मशास्त्राचा अमल सुरू होतो, असे वर म्हटले असले तरी ते औपचारिक दृष्ट्याच फक्त खरे असून वास्तविक भौतिक जगातील (भौतविज्ञानाच्या कक्षेतील) घटना व नियमसुद्धा अध्यात्मविज्ञानाच्या अमलाखालीच चालतात, हे सत्य भौतविज्ञानिकांना आता त्यांनीच लावलेल्या भौतवैज्ञानिक शोधांनी दाखवून दिले आहे. त्यामुळे भौतविज्ञानाला त्याच्या प्रारंभिक अवस्थेत जी मर्यादा पडल्यासारखी दिसत होती, ती भौतिक शास्त्रातील अप्रगत अवस्थेमुळे तशी दिसत होती, हे आता स्पष्ट झाले आहे. याचा अर्थ असा की भौतिक विज्ञान जसे जास्त प्रगती करेल तसे त्याला ब्रह्मविज्ञानालाच - वेदांतालाच - येऊन मिळावे लागते - जसे टोलनाक्याचा कर चुकवू इच्छिणाऱ्या गाडीवानाला दुसरा मार्ग नसल्यामुळे टोलनाक्यावरच शेवटी यावे लागले! उपनिषत्कारांनी 'नान्यः पन्था विद्यते अयनाय।' [(सत्याकडे जाण्यास) दुसरा मार्गच नाही] असे का म्हटले आहे हे यावरून स्पष्ट होते. (श्वेता.उप.३.८) अशरीतीने भौतविज्ञानिकांना शेवटी अध्यात्मविज्ञानाकडेच कसे यावे लागले आहे, हे आता थोडक्यात दाखवून देणे भाग आहे. त्यासाठी कार्यकारणभाव आणि 'अर्थपूर्ण' घटना यांचा भौतिक शास्त्राच्या दृष्टीने काय संबंध आहे, याची भौतशास्त्रीय चिकित्सा करणे आवश्यक आहे.

### कार्यकारणभाव आणि 'अर्थपूर्ण' घटना : भौतशास्त्रीय चिकित्सा

अर्थपूर्ण घटना मानवी मनाच्या संबंधाने म्हणजे भौतिक कार्यकारणाच्या बाहेर घडतात, हे वर अनेकदा स्पष्ट केले आहे. तसेच क्वांटम सिद्धांताने भौतविज्ञानातून कार्यकारण भावाचे उच्चाटन केले आहे, या गोष्टीचाही मागे उल्लेख केला आहे. (पृ. ४७६) [म्हणूनच व्हीलर या भौतशास्त्रज्ञाने या विश्वाला 'अर्थपूर्ण विश्व' (meaning universe) म्हटले आहे.] आता या दोन्ही गोष्टींचा भौतिक शास्त्राच्या दृष्टीने कसा मेळ घालायचा? 'अर्थपूर्ण' घटना भौतिक कार्यकारणभावाच्या बाहेर घडत असतील व कार्यकारणभावाचे भौतविज्ञानातून क्वांटम सिद्धांताने उच्चाटन केले असेल तर एका मोठ्या विरोधाभासाला सामोरे जावे लागते. हा विरोधाभास असा -

भौतिक विश्व हे नियमबद्ध असल्याचे आढळून येते. भौतिक विश्वातील ही नियमबद्धता कार्यकारणभावावर आधारलेली आहे. (निदान तशी ती आधारली असल्याचे भौतशास्त्रज्ञ मानतात.) आता क्वांटम सिद्धांताने भौतविज्ञानातून कार्यकारण भावाचे उच्चाटन केलेले असेल व भौतिक विश्वातील नियमबद्धता कार्यकारणभावावर आधारलेली असेल तर भौतिक विश्वातील कार्यकारणभावाच्या उच्चाटनाबरोबर त्या विश्वाच्या नियमबद्धतेचेही उच्चाटन भौतविज्ञानातून न्हावयास नको काय?

पण ते झालेले नाही, ही वस्तुस्थिती आहे. याचा अर्थ भौतिक विश्वाची नियमबद्धता कार्यकारणभावावर आधारलेली नाही, कार्यकारणाबाहेरच्या कोणत्या तरी तत्त्वावर ती आधारलेली आहे, असा होतो. हे कार्यकारणभावाबाहेरचे, पण भौतिक विश्व 'अर्थपूर्ण' ठरवणारे व 'नियमबद्ध' करणारे तत्त्व मानवी मनाशिवाय दुसरे कोणते असू शकेल ? पण पाश्चात्य जडवादी (materialist) भौतशास्त्रज्ञ मानवी मनाची ही भौतिक जगातील 'लुडबूड' भौतशास्त्रीयदृष्ट्या मान्य करायला तयार नाहीत. कारण मग भौतिक विश्व 'भौतिक' न राहता मानवी मनामुळे 'मानसिक' [किंवा मानवी मनावर अवलंबून राहणारे, 'कर्तृतंत्र' (subjective)] ठरते. पाश्चात्य भौतविज्ञान हे भौतिक विश्व जड, वस्तुनिष्ठ (वस्तुतंत्र) (objective) स्वतंत्रपणे अस्तित्वात असणारे (स्वयंभू) व म्हणूनच 'खरे' (real) आहे, या गृहीतकृत्यावर कित्येक शतके कार्य करीत आलेले आहे. [पाश्चात्य विज्ञान 'जड' वस्तू (matter) हीच फक्त 'खरी' मानते यालाच भौतिकवाद वा जडवाद (materialism) म्हणतात.] अशारीतीने कार्यकारणभावाच्या भौतिक विज्ञानातील उच्चाटनामुळे भौतिक विश्व जड (भौतिक) नाही, ['मानसिक' (वा अभौतिक) आहे] हे तरी मान्य करावे लागते, किंवा ते 'जड' मानले तरी ते (मानवी मनापासून) स्वतंत्र, वस्तुतंत्र (objective), म्हणजेच 'खरे' नाही, हे तरी मान्य करावे लागते; असा हा जड (भौतिक) पदार्थाविषयीचा (पर्यायाने भौतिक विश्वाविषयीचा) विरोधाभास क्वांटम सिध्दांताने कार्यकारणभावाचे भौतिकशास्त्रातून उच्चाटन करून पाश्चात्य भौतशास्त्रज्ञांपुढे निर्माण केला आहे. हा विरोधाभास क्वांटम सिध्दांताचा मुख्य प्रवर्तक नील्स बोहर या भौतशास्त्रज्ञाने पुढील शब्दात व्यक्त केला आहे :

"The apparent contradiction (of quantum theory) in fact discloses an essential inadequacy of the customary viewpoint of [Western Science] ..... Indeed the very existence of quantum of action entails the necessity of final renunciation of the classical ideal of causality and a radical revision of our attitude towards the problem of physical reality"<sup>२९८</sup> याचा अर्थ असा - "हा (क्वांटम सिध्दांताने निर्माण केलेला) विरोधाभास (पाश्चात्य विज्ञानाचा) [भौतिक विश्वाविषयीचा] रुढ दृष्टिकोन मुळातच अपुरा असल्याचा दाखवून देतो... खरे तर क्वांटम प्रक्रियेचे अस्तित्व रुढ (पाश्चात्य) विज्ञानातून कार्यकारणभावाची कायमची हकालपट्टी करण्याची गरज सिध्द करतो. त्याचप्रमाणे भौतिक विश्वाच्या खरेपणाच्या प्रश्नाचाही फेरविचार करण्याची गरज त्यामुळे निर्माण होते." अशारीतीने क्वांटम सिध्दांताने कार्यकारणभावाचे भौतशास्त्रातून कायमचे उच्चाटन करून एक तर भौतिक विश्व 'खरे' नाही (म्हणजे 'जड' किंवा 'भौतिक' नाही), आणि ते 'जड' किंवा 'भौतिक' मानले तरी (म्हणजे

‘खरे’ मानले तरी) ते मानवी ‘मना’वर अवलंबून आहे, कार्यकारणभावावर अवलंबून नाही (कारण मानवी ‘मन’च भौतिक विश्वातील कार्यकारणभावाची जागा घेते) असे मानण्यास भौतशास्त्रज्ञांना आता क्वांटम सिद्धांताने भाग पाडले आहे. मानवी ‘मना’वर (consciousness) भौतिक विश्वातील घटना अवलंबून असल्याचे क्वांटम सिद्धांताने कसे दाखवून दिले आहे, हे भौतशास्त्रातील स्वतः कार्यकारणभावाचा कदा पुरस्कर्ता डेव्हिड बोहम या भौतशास्त्रज्ञाने पुढीलप्रमाणे सांगितले आहे, “In the usual interpretation of the quantum theory an atom has no properties at all when it is not observed. Indeed, one may say that its only mode of being is to be observed.”<sup>२१</sup> (Italics in the original) याचा अर्थ असा : “क्वांटम सिद्धांताच्या रुढ अर्थविवरणानुसार एखाद्या अणूचे जेव्हा (कोणीही) निरीक्षण करित नाही (तो कोणीही पाहत नाही), तेव्हा त्याला कोणतेही गुणधर्म नसतात. खरे तर, एखादा अणू अस्तित्वात असणे म्हणजेच तो कोणी तरी पाहणे होय.” (तिरपी अक्षरे मूळ ग्रंथातील) याचा अर्थ असा की एखाद्या अणूला कोणीतरी पाहण्यामुळेच (भौतिक) गुणधर्म प्राप्त होतात, किंवा तो (भौतिक रीतीने) अस्तित्वात येतो. (कारण अणूचे अस्तित्व त्याच्या (भौतिक) गुणधर्मावरच अवलंबून आहे.) दुसऱ्या शब्दात, कोणाचे तरी पाहणे, म्हणजेच पाहणारा, किंवा त्याचे मन (consciousness) प्रत्यक्षात अणू भौतिक रुपाने अस्तित्वात आणते. तात्पर्य, अणूला वस्तुनिष्ठ अस्तित्व (objective existence) नसून व्यक्तिनिष्ठ (subjective) अस्तित्व आहे, असे यावरून ठरते. अणू जड (भौतिक) नाही, किंवा ‘खरा’ नाही, असा याचा अर्थ नसून अणूचा ‘जड’पणा (अणूचे गुणधर्म) किंवा अणूचा ‘खरे’पणा (अणूचे अस्तित्व) हे मानवाच्या (त्या अणूला पाहणाऱ्याच्या) मनामुळे त्याला प्राप्त होतात, असे क्वांटम सिद्धांतावरून ठरते. भानामती खरी नाही. किंवा ‘यूफो’ ‘खरी’ नाही असे नसून भानामतीला (तिच्या गुणधर्माला) किंवा ‘युफो’ला (तिच्या गुणधर्माला) मानवी मनामुळे ‘खरेपणा’ प्राप्त होतो-ती अस्तित्वात येते-अशी जी (ब्रह्मविद्येची) भानामती व ‘युफो’विषयीची उपपत्ती मागे सांगितली आहे, ती अशारीतीने भौतविज्ञानातील (मूलभूत मानला गेलेला) क्वांटम सिद्धांत भौतशास्त्रीयदृष्ट्या उचलून धरतो ! म्हणजे वरील ‘चमत्कारा’ची जी मानसिक (मानसशास्त्रीय) उपपत्ती दिली आहे, ती भौतिकही (भौतशास्त्रीयही) आहे, असे (क्वांटम सिद्धांतावरून) ठरते. शेवटी भौतिक घटनांना व पदार्थांना मानवी मनामुळेच ‘अर्थ’ प्राप्त होतो, हा ब्रह्मविज्ञानाचा मुख्य सिद्धांत आहे, हे विसरता कामा नये. [याला वेदांतामध्ये ‘दृष्टिसृष्टिवाद’ म्हणतात. म्हणजे ‘द्रष्टा’ (observer) सृष्टी निर्माण करतो.] ‘यूफो’च्या लोकांनी पळवून नेलेला व Communion या पुस्तकाचा लेखक, व्हिटली स्ट्रायबर याने ‘यूफो’च्या लोकांचा

प्रत्यक्ष अनुभव घेऊनसुद्धा स्पष्ट म्हणतो की, “ ‘यूफो’चे लोक त्यांना पाहणाऱ्यांच्या मनावर अवलंबून नाहीत (म्हणजे स्वतंत्र व्यक्ती आहेत) असे खरे तर मला खात्रीपूर्वक म्हणणेच शक्य नाही.” (I cannot say in all truth, that I am certain the visitors [from UFO] are entirely independent of their observers.) अशारीतीने ज्यांना ‘यूफो’ व भानामती खोटे म्हणावयाचे आहेत, त्यांना क्वांटम सिध्दांत सांगतो की त्यांना भौतिक जगही मग खरे म्हणता येणार नाही-तेही खोटे म्हणावे लागेल ! तात्पर्य, भौतिक जगाचा खरेपणा (किंवा खोटेपणा) भानामती- ‘यूफो’ इतकाच (खरा किंवा खोटा) आहे, असे क्वांटम भौतिक सिध्दांत सांगतो ! भौतिक जगाच्या खरेपणाचा (physical reality) फेरविचार करण्याची क्वांटम सिध्दांतामुळे गरज निर्माण झालेली आहे, असे बोहरने जे म्हटले आहे, त्याचा हा मथितार्थ आहे. [याचा अर्थ असा की भानामती व ‘यूफो’ हे ‘चमत्कार’ असतील तर ‘भौतिक जग’ हाही एक ‘चमत्कार’च ठरतो ! ईश्वर गारुड्याची विश्वनिर्मितीची जादू (पृ. ३८१) व ‘भानामती, जादू व विश्वनिर्मिती यातील साम्य’ (पृ. ३८४) हे पोटमथळे पाहा.]

पण यामुळे दुसरा एक प्रश्न असा निर्माण होतो की भौतिक अणू जोपर्यंत कोणीतरी पाहत आहे, तोपर्यंतच तो अस्तित्वात असतो, तो जेव्हा कोणीही पाहत नाही तेव्हा तो अस्तित्वात नसतो, हे क्वांटम सिध्दांताचे (भौतवैज्ञानिक) म्हणणे खरे म्हणून स्वीकारायचे झाले तर भौतिक अणूपासून बनलेल्या या दृश्य विश्वातील एखादी वस्तू कोणीही पाहत नसताना ती अस्तित्वात नसते, असे मानायचे काय ? उदा. आकाशातील चंद्र कोणीही पाहत नसताना तो आकाशातून नाहीसा (गायब) होतो, असे समजायचे काय ? या प्रश्नाचे उत्तर भौतशास्त्रज्ञांना कोणत्याही भौतिक तत्त्वाच्या वा सिध्दांताच्या आधारे आजपर्यंत देता आलेले नाही व देता येतही नाही, ही वस्तुस्थिती आहे. हा प्रश्न भौतशास्त्रज्ञांनी भौतिक जगाची सूक्ष्म (micro) आणि स्थूल (macro) अशी विभागणी करून व स्थूल जगाला संभवनीयतेचा नियम (law of probability) लागू करून टाळला आहे. तो टाळण्याचे कारण क्वांटम सिध्दांत प्रत्यक्ष व्यवहारात उपयोगात आणताना त्यांना कसल्याही तांत्रिक वा तात्त्विक अडचणीला तोंड द्यावे लागत नाही, हे आहे. तथापि सूक्ष्म जग स्थूल जगाला कसे जोडले जाते-म्हणजेच-सूक्ष्म जगाचे स्थूल जगात कोठे व कसे रूपांतर होते, या प्रश्नाचे उत्तर सैध्दांतिक भौतविज्ञानाला (theoretical physics) टाळता येत नाही. पण ते देता येत नसल्यामुळे भौतशास्त्रज्ञांनी क्वांटम सिध्दांताशी व्यावहारिक पातळीवर तडजोड केली आहे, असेच म्हणावे लागते. जे. एस्. बेल या शास्त्रज्ञाने तसे स्पष्टच म्हटले आहे. त्याचे याविषयीचे शब्द ‘for all practical purposes’ (संक्षिप्तात FAPP) असेच आहेत. पण ही व्यावहारिक तडजोड मूळ भौतिक जगाच्या खरेपणाचा प्रश्न तसाच लोंबकळत ठेवते. रॉजर पेनरोज या शास्त्रज्ञाच्या शब्दात “बेलची ही



व्यावहारिक तडजोड भौतिक जगाच्या खरेपणाचे प्रत्यक्षात कसलेच चित्र निर्माण करीत नाही. ("(Bell's) FAPP (for all practical purposes) viewpoint gives us no picture of an actual physical reality."<sup>१००</sup> भौतिक जग 'खरे' मानून त्याचे वैज्ञानिक संशोधन (सत्यशोधन ! ) करणाऱ्या जडवादी शास्त्रज्ञांची ही शोकांतिका म्हटली पाहिजे !

भौतशास्त्रज्ञांना भौतिक जगाचा 'खरे' पणा टिकवायचा असेल-ते खोटे नाही असे म्हणावयाचे असेल-तर, एक तर त्यांनी मानवी मनाचा खरेपणाही स्वीकारला पाहिजे किंवा मानवी मनाव्यतिरिक्त अशा एखाद्या अभौतिक (अतींद्रिय) तत्त्वाचा तरी स्वीकार केला पाहिजे, की ज्याच्यामुळे भौतिक जगाला अस्तित्व (खरेपणा) प्राप्त झाले आहे, असे म्हणता येईल. (बिशप बर्कले या तत्त्ववेत्त्याने, एखादी वस्तू-उदा. चंद्र-जेव्हा कोणीही पाहात नाही, तेव्हा ती ईश्वर पाहात असल्यामुळे अस्तित्वात असते-तिला खरेपणा येतो, असे म्हटले आहे.) मानवी मन व ईश्वर या व्यतिरिक्त भौतिक जगाला खरेपणा (भौतिक अस्तित्व) प्राप्त करून देणारे कोणतेही भौतशास्त्रीय तत्त्व (वा सिध्दात) भौतशास्त्रज्ञांना उपलब्ध नसल्यामुळे ज्या काँटम सिध्दांताने ही समस्या भौतविज्ञानात निर्माण केली आहे, तो काँटम सिध्दांतच अपुरा (incomplete) आहे, असा युक्तिवाद अनेक भौतशास्त्रज्ञ सतत करीत आले आहेत. पण तो त्यांना पूर्ण (complete) करता आलेला नाही ही वस्तुस्थिती आहे. कसा पूर्ण करावा हेही त्यांना माहीत नाही ! तथापि काही शास्त्रज्ञांनी त्या दिशेने काही प्रयत्न केले आहेत. नाही असे नाही. पण त्या प्रयत्नात त्यांना (रात्रभर फिरून पहाटे टोलनाक्यावरच येणाऱ्या त्या गाडीवानाप्रमाणे) शेवटी ब्रह्मविज्ञानाकडेच यावे लागले असल्याचे आढळून येते ! ते कसे हे पाहणे उद्बोधक आहे. पण त्यासाठी काँटम सिध्दांताने भौतविज्ञानातून कार्यकारणभावाचे उच्चाटन कसे केले आहे, हे पाहणे अगत्याचे आहे.

भाकीत करणे (prediction) हे विज्ञानाचे व्यवच्छेदक लक्षण मानले गेले आहे. भाकीत करण्याचे सामर्थ्य वैज्ञानिकांना कार्यकारणभावाच्या संबंधामुळे प्राप्त होते. कार्यकारणभाव दोन घटनांमधील आवश्यक संबंधावर अवलंबून आहे. म्हणजे असे की भविष्यकालीन घटना भूतकालीन कारणामधून आवश्यक रीतीने निष्पन्न होतात-परिणाम पावतात-या कल्पनेवर तो आधारलेला आहे.<sup>१०१</sup> उदा. सूर्य व चंद्र यांची ग्रहणे पृथ्वी, चंद्र व सूर्य यांच्या परस्पर स्थानावर व गतीवर (वेगावर) आवश्यकरीतीने अवलंबून आहेत. त्यांची स्थाने व गती खगोलशास्त्रज्ञांना एकाच वेळी निश्चितपणे माहीत होतात. त्यामुळेच त्यांच्या ग्रहणांचे अचूक भाकीत ते करू शकतात. पण स्थूल जगातील हा नियम सूक्ष्म जगाला लागू होत नाही ! उदा. फोटॉन (प्रकाशकण) किंवा इलेक्ट्रॉन (वस्तुकण) यांची स्थाने व गती (वेग)

एकाच वेळी शास्त्रज्ञांना निश्चितपणे माहीत होत नाहीत. त्यांचे स्थान निश्चितपणे माहीत झाले तर त्यांच्या गतीची (वेगाची) माहिती अनिश्चित बनते व गती (वेग) निश्चितपणे माहीत झाली तर त्यांच्या स्थानांची माहिती अनिश्चित बनते. दोन्ही एकाच वेळी निश्चितपणे कधीच माहीत होत नाहीत. त्यामुळे शास्त्रज्ञांना त्यांचे भाकीत करता येत नाही. या संबंधाला हायजेनबर्गचा अनिश्चितता संबंध (Heisenberg's uncertainty relations) म्हणतात. (कारण हायजेनबर्ग या जर्मन शास्त्रज्ञाने प्रथम त्याचा शोध लावला.) ही परिस्थिती उपकरणांच्या अक्षमतेमुळे (मर्यादित शक्तीमुळे) निर्माण होत नसून सूक्ष्म पातळीवरील मूलभूत भौतिक परिस्थितीतून ती निष्पन्न होते, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. सूक्ष्म कणाचे स्थान व वेग एकाच वेळी माहीत न होण्याचे कारण तो कण एका ठिकाणाहून दुसऱ्या ठिकाणी कसा जातो हेच भौत शास्त्रज्ञांना माहीत होत नाही.\* त्यामुळे तो कण सलग प्रवास करीत नसून 'क्वांटम उडी घेतो' (quantum jump) असे समजण्यात येते. येथे एका स्थानातून दुसऱ्या स्थानावर जाताना तो कण मधल्या अंतरातून जातच नाही. असा करावयाचा आहे, हे लक्षात ठेवावे ! मधल्या अंतरातून तो न जाता कसा जातो हे क्वांटम भौतिकीचे सर्वात मोठे 'गूढ' किंवा 'विरोधाभास' आहे. येथेच भौतशास्त्रातील सूक्ष्म पातळीवरील कार्यकारणभावा कोलमडतो ! दोन ठिकाणामध्ये (वा घटनांमध्ये) आवश्यक संबंधच नव्हे, तर कसलाच संबंध नाही, असे क्वांटम सिध्दांत सांगतो.\*\* ज्या दोन घटनांमध्ये (किंवा स्थानांमध्ये) कसलाच संबंध नाही त्या घटनांना (किंवा स्थानांना) 'आगंतुक' (chance events किंवा contingent events) म्हणतात, हे पूर्वी सांगितले आहे. उदा. आकृती १ मधील (पृ. ४९८) १, २, ३ व ४ हे बिंदू आगंतुक घटना दर्शवितात. (या दृष्टीने त्या घटना 'क्वांटम उड्या' मारतात असे म्हणता येईल!) त्यांना 'आगंतुक' म्हणण्याचे कारण त्या घटनांमध्ये कसलाच संबंध आपल्याला दिसत नाही. पण अदृश्य (अतींद्रिय) जगात ते बिंदू (घटना) एकमेकाशी प्रत्यक्ष जोडले गेले आहेत. हे 'र' ही रेषा दाखवते. (ज्यांच्या जीवनात त्या घटना घडतात त्यांच्या पूर्वकर्मांमुळे त्या घडतात. म्हणजे हा अतींद्रिय जगातील कार्मिक

\* स्थूल (जगातील) वस्तू एका ठिकाणाहून दुसऱ्या ठिकाणी जत असल्याची दिसत असली तरी ती सुध्दा तत्त्वतः जाऊ शकत नाही असे झेनो या प्राचीन ग्रीक तत्त्ववेत्त्याने पुढील युक्तिवादाने दाखवून दिले आहे. कोणतीही वस्तू (उदा. बाण) एका ठिकाणाहून दुसऱ्या ठिकाणी जाण्यासाठी प्रथम त्या दोन ठिकाणांतील अर्धे अंतर तिला कापले पाहिजे. ते अंतर कापण्यासाठी त्या अंतराचेही अर्धे अंतर तिला कापले पाहिजे पुन्हा त्याचेही अर्धे अंतर कापले पाहिजे प्रत्येक अंतराला अर्धे अंतर असल्यामुळे ती वस्तू ते अंतर निरंतरपणे कापत राहील व इष्ट स्थळी कधीच पोचणार नाही ! नव्हे ती जागची हालणारच नाही ! याला झेनोचा विरोधाभास (किंवा कोडे) (zeno's paradox) म्हणतात.

\*\* अशारीतीने क्वांटम सिध्दांत झेनोचे कोडे सोडवतो !

संबंध आहे. कर्म अदृश्य अतींद्रिय-असते.) तसेच सूक्ष्म पातळीवर फोटॉन व इलेक्ट्रॉन हे काँटम उड्या मारत असल्याचे दिसत असले तरी कदाचित सूक्ष्म (अतींद्रिय) पातळीवर ते सलग प्रवास करीत असणे शक्य आहे असे म्हणता येते. ही कल्पना द ब्रोग्ली या फ्रेंच शास्त्रज्ञाने प्रथम मांडली आणि ती खरी असल्याचे डेव्हिसन या अमेरिकन शास्त्रज्ञाला इलेक्ट्रॉन्सवरील प्रयोगात प्रत्यक्ष आढळून आले. इलेक्ट्रॉन्स हे कण (particles) स्फटिकावर आदळल्यानंतर तरंगाप्रमाणे (waves) वागतात, असे डेव्हिसन व जर्मेर यांना आढळून आले ! म्हणजे इलेक्ट्रॉन्स (वस्तुकण) हे एकाच वेळी कणही आहेत व तरंगही आहेत असे दिसून येते.\* अशारीतीने 'काँटम उड्या' च्या गूढातून दुसरे गूढ वा विरोधाभास जन्माला येतो ! हा विरोधाभास आहे, कारण कण हे एकाच ठिकाणी असतात, तर तरंग हे सगळीकडे पसरतात. आता प्रकाश-कण (फोटॉन) व विद्युत-कण (इलेक्ट्रॉन) हे एकाच वेळी कणही असतील आणि तरंगही असतील तर ते एकाच वेळी एका ठिकाणी असतात आणि त्याचवेळी ते अनेक ठिकाणी (तत्त्वतः असंख्य ठिकाणी) असतात (सर्वत्र पसरतात) असे म्हणावे लागते ! (काँटम सिद्धांताचा जनक-शास्त्रज्ञ मॅक्स प्लँक याने असे स्पष्ट शब्दात म्हटले आहे.<sup>१०१</sup>) आता हे कसे शक्य आहे ? पण प्रत्यक्ष प्रयोगात ते असे खरोखरच वागतात असे आढळून आले आहे ! उदा. एक प्रकाशकण दोन वेगवेगळ्या फटीतून एकाच वेळी जातो असे आढळून येते !<sup>१०२</sup>

### ‘स्थूल-सूक्ष्म’ हा भेद अशास्त्रीय

अशारीतीने सूक्ष्म वस्तू ‘कण’ (particle) आणि ‘तरंग’ (wave) अशा परस्पर-विरुद्ध गुणधर्मांनी युक्त असणे वा वागणे किंवा एक कण दोन फटीतून एकाच वेळी जाणे हे दोन्ही सारखेच ‘चमत्कार’ आहेत. कारण स्थूल जगात असे घडताना कधी दिसत नाही. म्हणून भौतशास्त्रज्ञांना भौतिक जगात सूक्ष्म (micro) आणि स्थूल (macro) असा फरक करावा लागला आहे.

पण समजा स्थूल जगातही असलेच ‘चमत्कार’ घडत असल्याचे आढळून आले तर ? मग असा फरक करणे अशास्त्रीय ठरणार नाही काय ? किंबहुना अशा घटनांना ‘चमत्कार’ म्हणणेही अशास्त्रीय ठरेल ! आणि १३ व्या प्रकरणात असलेच ‘चमत्कार’ स्थूल जगातही घडत असल्याची अनेक उदाहरणे आपण पाहिली आहेत. उदा. केरबा बैलकर, ऐदमाळेसाहेब, र. के. तेंडुलकर इ. व्यक्ती (प्रकाशकणाप्रमाणे) एकाच वेळी दोन ठिकाणी आढळली आहेत ! (याला परामानसशास्त्रात bilocation म्हणतात.) (नृसिंहसरस्वती दिवाळीच्या दिवशी एकाच वेळी सात भक्तांच्या घरी जेवले आहेत.<sup>१०४</sup>) स्थूल जगातील हे ‘चमत्कार’ आध्यात्मिक (अतींद्रिय) शक्तीमुळे

\* याला नील्स बोहरने complementarity चे (परस्परपूरकतेचे) तत्त्व म्हटले आहे.

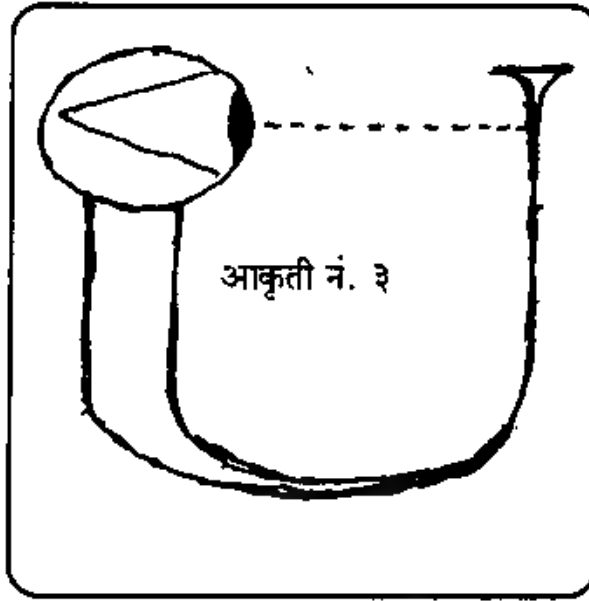
(किंवा नियमामुळे) घडतात व सूक्ष्म जगातील असलेच 'चमत्कार' भौतिक शक्तीमुळे (किंवा नियमामुळे) घडतात; आणि म्हणून ते भिन्न आहेत, असे कोणी म्हणेल. पण स्थूल व सूक्ष्म (किंवा दृश्य व अदृश्य) जगातील हे 'चमत्कार' तत्त्वतः एकाच स्वरूपाचे असल्यामुळे अशा 'चमत्कारां'च्या बाबतीत स्थूल व सूक्ष्म असा भेद विज्ञानाच्या दृष्टीने करता येत नाही. कारण सूक्ष्म जगातील नियम स्थूल जगातील नियमाहून वेगळे असू शकत नाहीत. नियम हे सर्वत्र सारखेच असतात. 'जड' व 'चेतन' (जीव) यांचे नियम त्या त्या पातळीवर भौतिक व जैविक स्वरूपाचे (भिन्न) असू शकतील. पण त्या दोन्ही पातळ्यांना सामावून घेणारे (उदा. जडातून जीव निर्माण करणारे) सार्वत्रिक (universal) स्वरूपाचे काही वैश्विक नियम अस्तित्वात असणे आवश्यक आहे. असे वैश्विक (cosmic) नियम प्रत्यक्षात अस्तित्वात असल्याचे **Cosmic Blue Print** (वैश्विक आराखडा) या ग्रंथात पॉल डेव्हिस या भौतशास्त्रज्ञाने व **Order Out of Chaos** (असंबद्धतेतून संबद्धता) या ग्रंथात प्रिगॉजिनने व स्टेंजर्स या रसायनशास्त्रज्ञांनी दाखवून दिले आहे. हे वैश्विक नियम 'वैश्विक' असल्यामुळे, म्हणजे ते सार्वत्रिक (universal) स्वरूपाचे असल्यामुळे त्यांना विशिष्ट (मर्यादित) पातळीची विशेषणे लावता येत नाहीत. उदा. त्यांना भौतिक, जैविक इ. नियम म्हणता येत नाही. त्यांना अभौतिक किंवा आध्यात्मिक नियम म्हणणेच श्रेयस्कर होय. ते नियम अशाच स्वरूपाचे असल्याचे बरील ग्रंथाच्या लेखकांनी दाखवून दिले आहे.<sup>३०५</sup> ते नियम अभौतिक किंवा आध्यात्मिक म्हणजे भौतशास्त्राचे नियम ओलांडणारे, असल्यामुळेच 'स्थूल' व 'सूक्ष्म' अशा दोन्ही जगात वरील-सारखे तथाकथित 'चमत्कार' सारख्याच रीतीने घडताना दिसतात.<sup>३०६</sup> [त्यांना 'तथाकथित चमत्कार' म्हणण्याचे कारण ज्या घटना नियमानुसार घडतात त्यांना वास्तविक 'चमत्कार' म्हणताच येत नाही. सूक्ष्म जगात त्या 'सामान्य' घटना असल्या तरी स्थूल जगात पातळी बदलल्यामुळे त्या 'असामान्य' ('चमत्कार'युक्त) वाटतात इतकेच, कारण त्या विशिष्ट पातळीवरील नियमांचे (laws of physics) ते उल्लंघन करताना दिसतात.<sup>३०७</sup>]

हे 'वैश्विक' नियम अभौतिक वा आध्यात्मिक असल्याचा भौतशास्त्रीय पुरावाही आहे. उदा. सूक्ष्म पातळीवर प्रकाश कण वा वस्तुकण अभौतिक (सजीव) असल्याप्रमाणे वागतात ! उदा. दोन फटीतून प्रकाश सोडला तर पलीकडच्या पडद्यावर एखादा प्रकाशकण ज्या ठिकाणी आदळतो, तो त्या दोन्ही फटीपैकी एक फट बंद केली तर, त्या ठिकाणी न आदळता दुसऱ्या ठिकाणी आदळतो, असे आढळून येते ! आता प्रश्न असा की एक फट बंद केली आहे, हे त्याला कसे कळते ? तो कण निर्जीव (जड) असेल तर दोन्ही फटी उघड्या असोत अगर एक फट उघडी असो, तो पहिल्या प्रयोगात ज्या फटीतून जातो, त्याच फटीतून दुसऱ्या

प्रयोगाच्या वेळीही जावयास पाहिजे पण तो तसा जात नाही असे प्रत्यक्ष प्रयोगात आढळून येते ! याचा अर्थ, एक फट बंद आहे हे दुसऱ्या प्रयोगाच्या वेळी त्याला 'माहीत' होते व त्याप्रमाणे तो निर्णय घेऊन वागतो असा होतो. 'माहिती' मिळविणे व त्यानुसार निर्णय घेऊन वागणे हे सजीवाचे लक्षण मानले जाते. 'जड' मानल्या गेलेल्या वस्तूकणात वा प्रकाशकणात हे सजीवाचे लक्षण कुठून येते ? हे अध्यात्म क्षेत्रातून (ईश्वरापासून) येते, असे गीता सांगते. उदा. प्रकृतिं विधि मे पराम् । जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥ (भ.गी. ७.५) "जगाला धारण करणारी (जग अस्तित्वात आणणारी, त्याला 'खरे' बनवणारी) ही माझी (ईश्वराची) जीवभूता (त्याला सजीव करणारी) परा प्रकृति (श्रेष्ठ माया) आहे असे, हे अर्जुना, समज." ज्ञानेश्वरांच्या शब्दात, जे जडाते जीववी । चेतनेते चेतवी । मनाकरवी मानवी । शोक मोहो ॥ (ज्ञाने. ७.२०) "ही (ईश्वरीशक्ती) 'जडा'ला सजीव करते, जीवाला सज्जान करते व मनाकडून शोक मोह मानावयास लावते." जडाचे, जीवाचे व मनाचेच नव्हे, तर बुद्धीचे व जगाच्या अहंकाराचे सुध्दा गुण (लक्षणे) याच 'शक्ती' मुळे निर्माण होतात, असे ज्ञानेश्वर पुढे जाऊन सांगतात. अशारीतीने 'जडा'ला सजीव करण्यापासून तो जगाला अहंकारी बनविण्यापर्यंतचे सर्व नियम (सामर्थ्य) या ईश्वरी 'शक्ती'त आहेत, असे ब्रह्मविद्या (गीता व ज्ञानेश्वरी यांच्या मुखाने) सांगते.

आता समजा आम्ही त्या कणाला फसविण्याचे ठरविले. उदा. तो कण दोन्ही फटीतून बाहेर पडल्यानंतर एक फट बंद करण्याचा आपण निर्णय घेतला. त्यासाठी त्या कणाला दोन्ही फटीतून बाहेर पडल्यानंतर दोन भिन्न मार्ग आखून द्यावे लागतील. हे दोन भिन्न मार्ग अर्धपारदर्शक आरशांची व्यवस्था करून आखून देता येतात. त्यामुळे तो कण दोन्ही फटीतून बाहेर पडल्यानंतर त्याच्या दोन्हीपैकी कोणताही एक मार्ग बंद करणे म्हणजे त्या कणासाठी एक फट बंद करण्यासारखे होते. तो कण दोन्ही फटीतून बाहेर पडल्यानंतर कोणता मार्ग बंद करायचा (कोणती फट बंद करायची) हे आम्ही ठरवत असल्यामुळे त्या कणाला फसविल्यासारखे (किंवा पकडल्यासारखे) होते. कारण तो कण अगोदरच एका फटीतून बाहेर पडलेला असतो. पण तो पकडला (किंवा फसवला) जात नाही असे आढळून येते ! कारण कोणता मार्ग (फट) आम्ही भविष्यात बंद करणार आहोत, हे तो अगोदरच (फटीतून बाहेर पडण्यापूर्वीचे) ओळखतो व आपला मार्ग (फट) त्यानुसार बदलतो ! (हा प्रयोग प्रत्यक्ष करण्यात आला असून याला delayed choice experiment-विलंबाने निर्णय घेण्याचा प्रयोग म्हणतात.<sup>१०८</sup>) याचा अर्थ सूक्ष्म पातळीवरील कणांना आम्ही भविष्यात कोणता निर्णय घेणार आहोत हे अगोदरच माहीत होते, असा होतो ! म्हणजेच सूक्ष्म पातळीवरील भौतिक जग आमच्या

(मानवाच्या) मनाशी (consciousness) निगडीत आहे, असे ठरते ! दुसऱ्या शब्दात, भौतिक जगाला मानवी मनाहून वेगळे अस्तित्व नाही, मानवी मनामुळेच त्याला अस्तित्व प्राप्त झाले आहे (खरेपणा आला आहे) व ते 'अर्थपूर्ण'ही बनले आहे, असे म्हणावे लागते. म्हणून वरील प्रयोग प्रथम सुचविणाऱ्या जे.ए. व्हीलर या भौतशास्त्रज्ञाने या भौतिक जगाला 'अर्थपूर्ण विश्व' (meaning universe) व participatory universe (सहयोगी विश्व) म्हटले आहे. मानवी मनाशी भौतिक जगाचा असलेला हा सहयोग (participation) व 'अर्थ' (meaning) व्हीलरने आपल्या Quantum Theory and Measurement या ग्रंथात मानवी डोळा (म्हणजे मानवी मन) भूतकाळातील विश्वसुद्धा कसे अस्तित्वात आणते हे दाखविणाऱ्या चित्राच्या द्वारा स्पष्ट केला आहे. (सोबतचे चित्र पाहा.) याला त्याने (स्वयंप्रवर्तित मंडल)



म्हटले आहे.<sup>१०९</sup> मानव व विश्व यांच्यात कसलाच वेगळेपणा नाही, दोन्ही एकसंध आहेत, त्यांना एकमेकापासून वेगळे अस्तित्व (खरेपणा) नाही असा निष्कर्ष डेव्हिड बोहम या भौतशास्त्रज्ञानेही आपल्या 'अविभाज्य विश्व' (Undivided Universe) या ग्रंथात क्वांटम सिद्धांतातून काढला असून त्याने म्हटले आहे की, "Indeed the notion of separateness is an abstraction and an approximation valid for only certain limited purposes. More broadly one could say that through the human being, the universe is making a mirror to observe itself. Or vice versa the universe could be regarded as continuous with the body of the human being. After all, this latter like the plant, gets all its substance and energy from the universe and falls back into it. Evidently the human being could not exist without this context (which has very misleadingly been called environment)"<sup>११०</sup> (Italics added) या उताऱ्याचा अर्थ असा : "(भौतिक) विश्व व मानव हे वेगळे मानणे हे काही मर्यादित उद्दिष्टापुरतेच समर्थनीय आहे. विस्तृत दृष्टीने असे म्हणता येईल की मानवाला आरसा बनवून विश्व स्वतःला त्यात पाहता आहे. किंवा उलट मानव देहाशी ते अखंडपणे (सलग) जोडले गेले आहे, असे मानता येईल. शेवटी, वनस्पतीप्रमाणे

मानव विश्वातूनच शक्ती (ऊर्जा) व द्रव्य मिळवितो आणि त्यातच (शेवटी) विलीन पावतो. (ज्याला चुकीने परिसर म्हणण्यात येते) तो (वैश्विक) संदर्भ नसता तर मानव वस्तुतः अस्तित्वातच राहू शकला नसता” (ठळक अक्षरे नंतरची) [या उतान्यात विश्व मानवाला आरसा करून त्यात स्वतःला पाहते, असे बोहमने म्हटले आहे. ज्ञानेश्वरांनी ज्ञानेश्वरीत हाच दृष्टांत दिला असून द्रष्टा व दृश्य यातील भेद आरशामुळे निर्माण होत असला तरी तो खोटा आहे-दोहोत अद्वैत आहे, असे म्हटले आहे. (ज्ञाने. १८.११२२) येथे ‘विश्व’ हा द्रष्टा (ईश्वर) असून ‘मानव’ हा दृश्य आहे, किंवा उलट ‘मानव’ हा द्रष्टा (ईश्वर) असून ‘विश्व’ हे दृश्य आहे, असे म्हणता येईल. विश्व व मानव या दोहोमध्ये अद्वैत असल्याचे बोहम व ज्ञानेश्वर या दोघांनाही येथे सांगायचे आहे.]

### जड-चेतनामधील क्वांटम अभेदत्व

सूक्ष्म पातळीवरील भौतिक कणाला मानवी मन कोणता निर्णय भविष्यात घेणार आहे, हे अगोदरच कळते हे म्हणणे एका दृष्टीने औपचारिकच असून भौतिक घटना मानवी मनाहून वेगळ्या नाहीत असा त्याचा वास्तविक अर्थ आहे. (विश्व मानवी मनामुळे ‘अर्थपूर्ण’ झाले आहे याचा हा अर्थ आहे.) ही गोष्ट बोहमने पुढीलप्रमाणे स्पष्ट केली आहे : “One may then ask what is the relationship between the physical and the mental processes ? The answer that we propose here is that there are not two processes. Rather, it is being suggested that both are essentially the same processes.”<sup>३१</sup> याचा अर्थ, मानवी मनातील व भौतिक विश्वातील प्रक्रिया वेगळ्या नसून अर्थतः (सारांशाने) एकच आहेत, असा होतो. मानव व विश्व यांच्या (मानसिक व भौतिक) प्रक्रियांमधील हे अर्थपूर्ण (सारांशभूत) तादात्म्य, दोन्ही ईश्वराचेच अंश असल्यामुळे निर्माण झाले आहे, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. हा ईश्वरी अंश भगवद्गीतेत ‘एकांशेन स्थितो जगत्’ (हे जग ईश्वराच्या एका अंशाने व्याप्त आहे) या शब्दात सांगितला आहे. वरील प्रयोगातील सजीवाप्रमाणे वागणारा प्रकाशकण वा वस्तुकण सांगतो की ‘कण-कण में भगवान’ (कणाकणात ईश्वर भरला आहे) हे म्हणणे अक्षरशः खरे आहे. ईश्वरामुळे वस्तुकण सजीवच नव्हे तर मनानेही युक्त आहे, असे (वरील प्रयोगावरून) म्हणावे लागते. ही गोष्ट बोहम पुढील शब्दात सांगतो, “It is thus implied that in some sense a rudimentary mindlike quality is present even at the level of particle physics, and that as we go to subtler levels, this mindlike quality becomes stronger and more devel-

oped<sup>३३३</sup> याचा अर्थ असा: “भौतिक कण मनाने युक्त आहे, इतकेच नव्हे तर जसे अधिक सूक्ष्म पातळीला जावे, तसे तो गुणधर्म अधिक बलवान व अधिक विकसित होत जातो.” [वेदांतात या ‘भौतिक सूक्ष्म’ पातळीला ‘प्राणमय कोष’ (etheric body), त्यापेक्षा अधिक सूक्ष्म पातळीला ‘मनोमय कोष’ (astral & mental body) व त्याहूनही सूक्ष्म पातळीला ‘विज्ञानमय कोष’ (causal body) म्हटले आहे.] बोहमने या सूक्ष्म, सूक्ष्मतर व सूक्ष्मतम पातळ्यांना Implicate Order (अर्थपूर्ण व्यवस्था) हे नाव दिले आहे. (Implicate हा शब्द imply या क्रियापदापासून बनला असून त्याचा अर्थ ‘अर्थ असणे’ असा आहे.) ही ‘अर्थपूर्ण व्यवस्था’ भौतिक विश्वाच्या बुडाशी-म्हणजे खाली आहे, अशी बोहमची कल्पना असून ती चुकीची आहे, ब्रह्मविद्येनुसार ती वरची पातळी मानली पाहिजे, अशी टीका पाश्चात्य ब्रह्मविद्यावंत केन विल्बर याने केली आहे.<sup>३३४</sup> पण ती टीका अस्थानी असल्याचे बोहमने रेनी वेबर या विदुषीशी या विषयावर केलेल्या एका चर्चेवरून स्पष्ट होते. उदा. विश्व कसे ‘अर्थपूर्ण’ बनले आहे हे स्पष्ट करताना वेबरशी झालेल्या चर्चेत बोहम म्हणतो, “Mind and matter are inseparable, in the sense that everything is permeated with meaning .. Even the electron is informed with a certain level of mind .. [ This means ] *Atman* is from the side of meaning; then what is meant is *Brahman*; [this means] the identity of consciousness and cosmos . Meaning in the sense that the soma-significant and signa-somatic unite the two sides. This claims that the meaning and what is meant are ultimately one, which is the phrase ‘*Atman equals Brahman*’ of classical Hindu philosophy”<sup>३३५</sup> याचा अर्थ असा : “मन आणि जड पदार्थ यांना वेगळे करता येत नाही, ते अविच्छिन्न आहेत, ते या अर्थाने की प्रत्येक पदार्थ अर्थगर्भ आहे. (याचा अर्थ असा की) विद्युत कणालाही (इलेक्ट्रॉनलाही) एका विशिष्ट अर्थाने मन (अर्थ) आहे. हे मन किंवा हा अर्थ आत्म्यामुळे त्याला प्राप्त झाला आहे. एका बाजूने तो ‘अर्थ’ *आत्मा* आहे, आणि ज्याला ‘अर्थ’ प्राप्त झाला आहे, ते दुसऱ्या बाजूने *ब्रह्म* आहे. अशारीतीने विश्व (जड) आणि मन (चैतन्य) यांच्यात (अर्थाच्या दृष्टीने) अभेद आहे, तादात्म्य आहे. या अर्थाने ‘देह’ आणि ‘देही’ हे दोन्ही बाजूने एकत्र येऊन ‘अर्थ’ निर्माण करतात-अर्थपूर्ण बनतात (असे म्हणता येईल). अर्थ निर्माण करणारा व ज्यामध्ये अर्थ निर्माण होतो ते अंतिमतः एकच आहेत, असा येथे दावा करण्यात आला असून ही गोष्ट ‘*आत्मा व ब्रह्म एकच आहेत*’ या शब्दात परंपरागत हिंदू तत्त्वज्ञानात व्यक्त केलेली आहे.”

आता येथे (बोहमची) Implicate Order (अर्थपूर्ण व्यवस्था) खाली



आहे की वर आहे, हा प्रश्न कोठे निर्माण होतो ? याच्या अगोदरच्या उताऱ्यात बोहमने subtle level असे शब्द वापरले आहेत. याचा अर्थ 'सूक्ष्म पातळी' असा आहे. 'सूक्ष्म' याचा अर्थ 'अतींद्रिय' असाही होतो. (कारण ती पातळी इंद्रियगम्य नसते. स्थूल दृष्टीला दिसत नाही.) अतींद्रिय पातळी खाली असो अगर वर असो, त्यामुळे काही फरक पडत नाही. कारण ती 'आत्मिक' (आध्यात्मिक) पातळी आहे.\*

### सूक्ष्म-स्थूल (कृत्रिम). भेद कसा निर्माण होतो ?

सूक्ष्म पातळीवरील कणाला भविष्यात आम्ही कोणता मार्ग (फट) बंद करणार आहोत हे अगोदरच कळते व त्याप्रमाणे तो कोणत्या मार्गाने जावयाचे हे अगोदरच ठरवतो, हे सप्रयोग सिध्द झाल्याचे वर सांगितले आहे. याचा अर्थ सूक्ष्म (अतींद्रिय) पातळीवर (भूत-वर्तमान-भविष्य हा) कालभेद नाही, असा होतो. तसेच सूक्ष्म पातळीवरील वस्तुकण एकाच वेळी दोन फटीतून जातो (किंवा एकाच वेळी दोन किंवा असंख्य ठिकाणी असतो,) ही वस्तुस्थितीही वर सांगितलेली असून सूक्ष्म (अतींद्रिय) पातळीवर स्थलभेद नाही, हे ती सिध्द करते. अशारीतीने सूक्ष्म पातळीवर स्थूल जगातील स्थल आणि काल (space and time) अस्तित्वात नाहीत असे ठरते. स्थूल जगातील कार्यकारण भाव स्थल-कालावर अवलंबून असल्याने व सूक्ष्म जगात स्थल-काल अस्तित्वात नसल्यामुळे सूक्ष्म जगातून कार्यकारणभावाचे उच्चाटन झाले आहे. म्हणून सूक्ष्म जगातील कार्यकारणभावाचे उच्चाटन करणाऱ्या क्वांटम सिध्दांताच्या 'अनिश्चितता तत्त्वा' चा (uncertainty principle) शोध लावणाऱ्या हायजेनबर्गने म्हटले आहे की "When we get down to the atomic level, the objective world of space and time does not exist." म्हणजे "अणूच्या सूक्ष्म पातळीवर स्थल-कालाचे वस्तुनिष्ठ जग अस्तित्वात नाही." आता प्रश्न असा की सूक्ष्म पातळीवर अस्तित्वात नसलेले हे स्थलकालाचे वस्तुनिष्ठ जग स्थूल पातळीवर कसे अस्तित्वात येते ? कोणत्या भौतिक यंत्रणेने सूक्ष्मात अस्तित्वात नसलेले स्थल आणि काल (space and time) स्थूलात अस्तित्वात येतात ? सूक्ष्माचे स्थूलात कोठे व कसे रूपांतर होते ? हे भौतशास्त्रज्ञांना तात्त्विक

\* केन विल्बर या ब्रह्मविद्यावंताने अध्यात्मात 'शिडी'ची- 'पायऱ्या'ची-(Hierarchy) कल्पना महत्वाची मानली असल्यामुळे व पायऱ्या वर चढण्यासाठी असल्यामुळे त्याने अशी टीका केली आहे. ती स्थूल जगात खरी मानता येईल. म्हणजे स्थूल जगातील एक दृष्टात म्हणून ती स्वीकारता येईल. हा स्थूल जगातील दृष्टांत भगवद्गीतेनेही 'ऊर्ध्वमूलमधःशाखम्-' (१५.१) या श्लोकात दिला आहे. ब्रह्मविद्येत वास्तविक ऊर्ध्वविकास (Evolution) आणि अधोविकास (Involution) असे दोन्ही विकास आहेत. पहिल्यात जड्यातून आत्मा (मानव) विकसित होतो. दुसऱ्यात आत्म्यातून (Spirit) जड (Matter) विकसित होते.

दृष्ट्या सांगता येत नसल्यामुळे सूक्ष्मातील स्थलकाल व कार्यकारणभाव यांचे उच्चाटन करणाऱ्या क्वांटम सिध्दांताशी त्यांनी 'व्यावहारिक' तडजोड केली आहे, असे मागे सांगितले आहे. ही व्यावहारिक तडजोड तत्त्वशून्य तर आहेच, पण अव्यवहार्यही असून ती कशी अव्यवहार्य आहे, हे श्रोडिंजर या क्वांटम भौतशास्त्रज्ञाने एका मांजरावरील प्रयोगाने दाखवून दिले आहे. हा प्रयोग क्वांटम सिध्दांतातील, 'मापनाची समस्या' (measurement problem) या नावाने प्रसिध्द आहे. हा प्रयोग असा -

एका मांजराला एका बंद पेटीत ठेवण्यात आले आहे. मांजराबरोबर त्या पेटीत एक विषारी वायू असलेला फुगा व किरणोत्सारी (radioactive) पदार्थाचा एक तुकडा ठेवण्यात आलेले आहेत. त्या तुकड्यातील कण उत्सर्जित होताच तो त्या फुग्यावर आदळून तो फुटण्याची व्यवस्था (यंत्रणा) करण्यात आलेली आहे. त्या तुकड्यातून कण बाहेर पडताच त्या फुग्यावर तो आदळून तो फुगा फुटेल व त्यातील विषारी वायू पेटीत पसरून ते मांजर मरेल. त्या तुकड्यातून कण केव्हा बाहेर पडेल याचे क्वांटम सिध्दांतानुसार भाकीत करता येत नाही. (कार्यकारण भावाचा अभाव) त्यामुळे त्या मांजराची अवस्था एका तासानंतर कोणती असेल याचे भाकीत करता येत नाही. क्वांटम सिध्दांतानुसार ते मांजर एका तासानंतर एकाच वेळी मरेल आहे व जिवंतही आहे, असे त्याचे वर्णन करावे लागते ! (याला क्वांटम सिध्दांतात superposition 'संमिश्र अवस्था' म्हणतात.) आता व्यवहारात मांजराचे आपण असे वर्णन कधी करीत नाही. पण क्वांटम सिध्दांत सूक्ष्म जगाचे असेच वर्णन करतो ! (येथे 'सूक्ष्म जग' म्हणजे 'बंद पेटीतील मांजर.') उदा. फोटॉन एकाच वेळी दोन ठिकाणी आहे किंवा एकाच वेळी तो कणही आहे आणि तरंगही आहे, असे क्वांटम सिध्दांत म्हणतो ! हा क्वांटम विरोधाभास (paradox) असून सूक्ष्म (अतींद्रिय) जगाला तो लागू होतो. म्हणजे व्यावहारिक (स्थूल) जगात तो दिसत नसला (खोटा वाटत असला) तरी अतींद्रिय (सूक्ष्म) जगात तो खरा आहे, हे भौतशास्त्रज्ञांना क्वांटम सिध्दांतामुळे मान्य करावे लागते ! हेच (क्वांटम भौतिकीचे) वैज्ञानिक सत्य वेदांत (ब्रह्मविद्या) उपनिषद् काळापासून सांगत आला आहे. अतींद्रिय जगातील या ब्रह्मवैज्ञानिक सत्याचे वर्णन वेदांतही असेच विरोधाभासात्मक (paradoxical) शब्दात करीत असतो. उदा. ईशोपनिषद् म्हणते, तदेजति तन्नैजति तदूरे तद्वन्तिके ॥ तदन्तरस्यास्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥ (ईश. उप. ५) म्हणजे "तो (आत्मा) जातो, तो जात नाही; तो दूर आहे, तो जवळ आहे; तो सर्वांच्या आत आहे, तो या सर्वांच्या बाहेर आहे." कठोपनिषद् म्हणते, आसीनो दूरं व्रजति शयानो याति सर्वतः ॥ (कठ. उप. १.२.२१) म्हणजे तो (एकाच ठिकाणी) बसलेला आहे, (त्याचवेळी) तो दूर गेला आहे. तो (एका ठिकाणी) झोपला आहे,

(त्याचवेळी) तो सगळीकडे गेला (पसरला) आहे.” म्हणून ज्ञानेश्वर म्हणतात, एकेचि ठायी बैसला । परि सर्वत्र तोचि गेला । हे असो विश्व जाहला । आंगेचि तो ॥ (ज्ञाने. ४.१०२) (हे वर्णन सूक्ष्म कणालाही लागू होते. कारण कण-particle-एकाच ठिकाणी असतो, त्याचवेळी तो तरंगही-wave-असतो, म्हणजे सर्वत्र पसरतो-जातो.) कणाचे व आत्म्याचे (ब्रह्माचे-ईश्वराचे) हे सारखेच वर्णन ‘कणाकणात ईश्वर (आत्मा) भरला आहे,’ हे वैज्ञानिक सत्य सांगते. अशारीतीने ते एकाच वेळी भौतवैज्ञानिक सत्य आहे, व ब्रह्मवैज्ञानिक सत्यही आहे, असे म्हणावे लागते. अशारीतीने कणाकणात ईश्वर भरला असल्यामुळे ज्ञानेश्वर म्हणतात, म्हणोनि अर्जुना मी नसे । असा कवणु ठाव असे । परि प्राण्यांचे दैव कैसे । जे न दैखती भाते ॥ (ज्ञाने. ९.३००) “म्हणून अर्जुना मी जेथे नाही असे ठिकाण कोठे आहे ? पण प्राण्यांचे दुदैव असे की मी अशारीतीने सर्वव्यापी असूनही त्यांना मला ओळखता येत नाही.” [Mind and Matter म्हणजे मन (आत्मा) आणि भौतिक (जड) वस्तू अविभाज्य (inseparable) आहेत, हे बोहमचे म्हणणे अशारीतीने एक ब्रह्मवैज्ञानिक सत्य आहे.]

‘बंद पेटीतील मांजर’ म्हणजे ‘अर्तींद्रिय (अदृश्य) जगातील आध्यात्मिक सत्य’ असल्यामुळे त्याला स्थूल (दृश्य) जगाची विशेषणे लावता येत नाहीत. ती लावली तर (मांजर ‘मेलेही’ आहे व ‘जिवंतही’ आहे, असे म्हणण्याचा) विरोधाभास (paradox) निर्माण होतो. म्हणून वेदांत त्याचे वर्णन ‘सदसद् विलक्षण’ या शब्दाने करतो. याचा अर्थ ते ‘आहे’ (सत्) व ‘नाही’ (असत्) यांच्या पलीकडचे (दोहोहून वेगळे) असे ‘सत्य’ आहे. म्हणून त्याला ‘निरुपाधिक ब्रह्म’ म्हटले आहे. (‘शाखा-चंद्र न्याय’ या संबंधीची टीप क्र. १५३ पाहा.) म्हणून ज्ञानेश्वर म्हणतात, म्हणोनि आथी नाथी हे बोली । जे देखोनि मुकी जाहली । विचारासी मोडली । वाट जेथे ॥ (ज्ञाने. १३.८७१) म्हणजे “म्हणून जे (ब्रह्म) पाहून ‘आहे नाही’ ही भाषा मुकी झाली (जे आहे म्हणता येत नाही व नाही म्हणता येत नाही) व ज्या ब्रह्माच्या ठिकाणी विचाराची वाट मोडते (विचार खुंटतो) (असे ते ब्रह्मवैज्ञानिक सत्य-निरुपाधिक ब्रह्म-आहे.)” \*

आता या ‘निरुपाधिक’ (स्थलकालातीत, कार्यकारणाबाहेरील) निर्गुण ब्रह्मापासून सोपाधिक (उपाधियुक्त, स्थलकालयुक्त, कार्यकारणयुक्त) सगुण जग कसे निर्माण झाले ? म्हणजेच मांजराच्या मृत व जिवंत अशा एकाचवेळच्या (विरोधाभासात्मक) ‘संमिश्र’ अवस्थेतून त्याची विरोधाभास नसलेली (एकच) मृत अगर जिवंत (अमिश्र) अवस्था कशी निर्माण होते ? अर्थात बंद पेटी उघडून

\* न तद् सत् न असद् उच्यते । (ते सत् नाही व असत् ही नाही) असे त्याचे गीता वर्णन करते. (भ.गी १३.१२)

पाहून आम्ही ती अवस्था निर्माण करू शकतो. सूक्ष्म जगाचे स्थूल जगात मानवी मनामुळे रूपांतर होते. सूक्ष्म जगाचे स्थूल जगात आम्ही स्वतः (आत्मा) डोळ्याने पाहून (मनाने) रूपांतर करू शकतो. म्हणजे मांजर पाहणारे मानवी मन (consciousness) त्याची 'खरी' अवस्था अस्तित्वात आणते. अशारीतीने आकृती ३ मध्ये दाखविल्याप्रमाणे मानवी डोळा-मानवी मन-भौतिक जग अस्तित्वात आणते. पण काही भौतिकवादी शास्त्रज्ञांना मानवी मनाचे हे कर्तृत्व मान्य नाही. (म्हणून क्वांटम भौतशास्त्रात ही 'मापनाची समस्या' निर्माण झाली आहे.) पण मग *पेटी उघडून न पाहता* मांजर मेले आहे की जिवंत आहे हे ते कसे ठरवणार आहेत ? हे ठरविण्याचे कोणतेही भौतिक साधन वा यंत्रणा त्यांना उपलब्ध नसल्यामुळे ही समस्या निर्माण करणारा क्वांटम सिध्दांतच भ्रम (illusion) आहे, असे म्हणण्याच्या थराला काही जण गेले आहेत !<sup>१५</sup> क्वांटम सिध्दांत हा 'बंद पेटीतील मांजरा'चा (अर्तीद्रिय जगाचा) सिध्दांत असल्यामुळे भौतिक जगच फक्त खरे मानणारे जडवादी (materialists) (क्वांटम सिध्दांत सिध्द करीत असलेले) अर्तीद्रिय (आध्यात्मिक) जग खोटे (भ्रम) म्हणावेत यात आश्चर्य नाही ! पण क्वांटम सिध्दांत हा वैज्ञानिक पुराव्यानिशी व संप्रयोग सिध्द झालेला असल्यामुळे (आध्यात्मिक जग खोटे ठरविण्यासाठी) तो सिध्दांत खोटा (भ्रम) म्हणणे हे *भौतिक विज्ञानाच खोटे* म्हणण्यासारखे असल्यामुळे या थराला सहसा कोणी गेलेले नाहीत. (त्याला भ्रम ठरविणाऱ्या उपर्युक्त लेखकानेही शेवटी त्याच्याशी अस्वस्थ मनाने का होईना समझोता केला आहे !)\*

अशारीतीने सूक्ष्म (अदृश्य) जगाचे स्थूल (दृश्य) जगात मानवी मनामुळे परिवर्तन होत असले तरी ते मन (consciousness) व ते जड जग ही दोन्ही त्या निरुपाधिक ब्रह्माचीच सोपाधिक रूपे असून ती दोन्ही ज्यापासून निर्माण झाली आहेत, त्याला वेदांताच्या परिभोषत 'हिरण्यगर्भ' किंवा 'महत्' म्हटले आहे.<sup>१६</sup> [हे महत् तत्त्वच जेव्हा आकाशातील चंद्र कोणीही पाहत नाही; तेव्हा त्याला अस्तित्व (खरेपणा) देते. म्हणजे तो चंद्र आकाशातून गायब होत नाही.] १३ व्या प्रकरणात या 'महत्' तत्त्वालाच 'विश्वमन' (universal mind) म्हटले असून हे 'महत्' तत्त्वच 'भानामती', 'यूफो', 'देवदूत' अशा विविध रूपांनी पृथ्वीवर अवतरते. अर्थात मानवी मनाशी (सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांच्या-sympathetic vibrations च्या-

\* तथापि त्याने सूक्ष्म जगाला स्थूल रूप देणारे मानवी मन हे स्वतंत्र तत्त्व नसून ते भौतिकच आहे हे दाखविण्यासाठी त्याचे मेंदूशी तादात्म्य कल्पून मेंदू हे गणकयंत्र (computer) आहे, असा युक्तीवाद केला आहे. पण हे अर्तीद्रिय विज्ञानाच्या सर्व पुराव्याकडे दुर्लक्ष करणे असून त्याचा विचार करण्याची आवश्यकता नाही. (पृ. ५२४ वरील तळटीप पाहा पृ. ५०४ ही पाहा विज्ञान आणि बुद्धिवाद, प्रकरण ४ ही पाहावे )

नियमानुसार) संलग्न होऊनच ते अशा रूपात अवतरत असते. या अतींद्रिय वैश्विक तत्वालाच 'स्थूल व सूक्ष्म लोकांना जोडणारा व त्या लोकांचे रक्षण करणारा सेतू' (एष सेतुर्विधरण एषां लोकानामसंभेदाय ।) असे छांदोग्य व बृहदारण्यक उपनिषदात म्हटले आहे. (संदर्भ क्र. ४९ पाहा.) ते तत्त्व दृश्य (स्थूल) जगात दिसत नसल्यामुळे (अतींद्रिय असल्यामुळे) पृथ्वीवरील घटना (आकृती १ मध्ये १, २, ३ व ४ या अंकांनी दाखविल्याप्रमाणे) 'आगंतुक', म्हणजे तुटक-परस्परांशी संबंध नसल्याप्रमाणे, 'क्वांटम उड्या' (quantum jumps) घेत असल्याच्या-दिसतात. पण वस्तुतः त्या परस्परांशी अतींद्रिय जगातून ('र' या रेषेने दाखविल्याप्रमाणे) 'कर्मा'ने जोडल्या गेलेल्या असतात. त्या 'अपघाती' (अर्थहीन) नसतात. अज्ञानामुळे त्यांना आपण 'आगंतुक' (contingent) किंवा अर्थहीन म्हणतो. डेव्हिड बोहम या भौतशास्त्रज्ञाने म्हटल्याप्रमाणे त्या घटना Implicate Orders शी ('अर्थपूर्ण व्यवस्थे' शी) जोडल्या गेल्यामुळेच 'अर्थपूर्ण' बनतात. (क्वांटम भौतिकीत भौतिक घटना क्वांटम potential मुळे 'अर्थपूर्ण व्यवस्थे' शी जोडल्या जातात, असे बोहमने म्हटले आहे.<sup>११</sup> अशारीतीने भौतशास्त्रातील बोहमचे 'क्वांटम पोटेंशल' अतींद्रिय विज्ञानातील 'कर्मा'ची जागा घेते.)

अशारीतीने स्थूल व सूक्ष्म जगे (पातळ्या) कर्माने (क्वांटम पोटेंशलने) जोडली गेली असल्यामुळे त्यांच्यात तात्त्विकदृष्ट्या फरक करता येत नाही.

स्थूल व सूक्ष्म जगांना जोडणारे (त्यांना अस्तित्वात आणणारे) हे 'महत्' तत्त्व एकाच वेळी ('कण' -particle-व 'तरंग' -wave-म्हणजे) 'स्थूल' व 'सूक्ष्म' किंवा 'इंद्रियगम्य' व 'अतींद्रिय' (दृश्य व अदृश्य) अशा परस्पर विरुद्ध गुणधर्मांच्या रूपाने पृथ्वीवर अवतरत असल्यामुळे ज्ञानेश्वर त्याला उद्देशून तुला स्थूल म्हणू की सूक्ष्म रे । स्थूल सूक्ष्म एकु गोविंदु रे । तुला दृश्य म्हणू की अदृश्य रे । दृश्य अदृश्य एकु गोविंदु रे ॥ असे म्हणतात. ज्ञानेश्वरांचा हा 'गोविंद'च स्थूल जगात मानवाच्या रूपाने अवतरला-नटला-असून त्याच्यामुळेच हे दृश्य जगाच्या रंगमंचावरचे नाटक चालू आहे. \* या नाटकाचे (क्वांटम भौतिकी) वैशिष्ट्य म्हणजे ते सहयोगी (participatory) आहे. अधिक अचूक म्हणजे 'निरीक्षक सहयोगी' (observer participatory) आहे. मानवी मन 'पाहात' असल्यामुळे (वेदांताच्या परिभाषेत दृष्टिसृष्टिवादामुळे) ते निर्माण (दृश्य) झाले आहे. म्हणजे जगाच्या रंगमंचावर दृश्य रूपाने ते नाटक खेळले जात आहे. ही गोष्ट क्वांटम सिध्दांताचा

\* 'महत्' तत्वाला उपनिषदे 'जीवात्मा' म्हणतात. (कठ.उप. १.३.१०) म्हणजे ब्रह्मापासून (परमेश्वरापासून) 'जीवात्मा' मानवाच्या रूपाने अवतरला आहे.

प्रवर्तक नील्स बोहर याने पुढील शब्दात सांगितली आहे. "The development of atomic physics forces us to an attitude towards the problem of explanation recalling the ancient wisdom that when searching for the harmony in life, we must never forget that in the drama of existence we are both actors and spectators."<sup>१८</sup> याचा अर्थ असा: "अणुविज्ञानातील प्रगतीने या जगाचे मूळ शोधताना आम्हाला प्राचीन (ऋषी-मुनींच्या) ज्ञानाची आठवण करून दिली आहे. हे (प्राचीन ऋषी-मुनींचे) ज्ञान सांगते की (वैश्विक) जीवनाची संगती (अर्थ) शोधताना एक गोष्ट आपल्याला कधीही दृष्टिआड करून चालणार नाही. ती म्हणजे या विश्वरूपी नाटकातील पात्रे आम्हीच आहोत व त्या नाटकाचे प्रेक्षकही आम्हीच आहोत." विश्व observer participatory (निरीक्षक सहयोगी) आहे याचा हा अर्थ आहे. बोहरने उल्लेखिलेले प्राचीन (ऋषी-मुनींचे) ज्ञान म्हणजे वेदांताचा (ब्रह्मविद्येचा) उपर्युक्त 'दृष्टिसृष्टिवाद'च होय. या वादानुसार ईश्वरच 'नट' (actors) आणि 'प्रेक्षक' (spectators) या दोन्ही रूपाने हे नाटक विश्वाच्या रंगमंचावर खेळत आहे. त्यानेच (कार्यकारणाबाहेरच्या त्या अतींद्रिय शक्तीनेच) या नाटकात 'अर्थ' (harmony) भरला आहे. याविषयीचे अनेक वस्तुनिष्ठ पुरावे आतापर्यंत दिले असून क्वांटम सिध्दांत (भौतविज्ञान) त्याचाच पाठपुरावा करतो.

### क्वांटम सिध्दांत आणि विश्वाचे अखंडत्व

अशारीतीने क्वांटम सिध्दांतामुळे कार्यकारणभावाचे भौतविज्ञानातून उच्चाटन झालेले असल्यामुळे कार्यकारणभावावर अढळ श्रद्धा असणाऱ्या अनेक शास्त्रज्ञांना हा सिध्दांत आवडत नाही. कारण त्यामुळे हे भौतिक विश्व 'खरे' नाही, त्याला वस्तुनिष्ठ अस्तित्व (objective reality) नाही, हे सिध्द होते. भौतिक विश्व खरे असल्याच्या गृहीतकृत्यावर पाश्चात्य विज्ञान त्याच्या जन्मापासून कार्य करीत असल्यामुळे (आधारले असल्यामुळे) भौतिक जग 'माया' ठरवून पाश्चात्य विज्ञानाचा पायाच क्वांटम सिध्दांताने उखडून काढला आहे ! (या विषयावर *Maya in Physics* नावाचा ४५० पृष्ठांचा एक खास ग्रंथ एन्. सी. पांडा या लेखकाने लिहिला आहे.<sup>१९</sup>) कार्यकारणभावाच्या मुद्यावर क्वांटम सिध्दांताला विरोध करणाऱ्या शास्त्रज्ञांमध्ये आईन्स्टाइन हा प्रमुख आहे. तो सिध्दांत भौतिक जगाचे पूर्ण वर्णन करीत नाही, तो अपुरा (incomplete) सिध्दांत आहे, हे त्याने एका प्रयोगाने दाखवून देण्याचा प्रयत्न केला आहे. पण गंमत अशी की हे दाखवून देण्याचा त्याचा प्रयत्न त्याच्यावरच उलटून (त्या टोलनाका चुकवू पाहणाऱ्या गाडीवानाप्रमाणे) त्याला शेवटी त्याने त्या (आध्यात्मिक) टोलनाक्यावरच परत आणून सोडले आहे ! अध्यात्माशिवाय गती नाही-दुसरा मार्गच नाही-हे उपनिषत्कारांचे म्हणणे, अशारीतीने, पुन्हा सिध्द झाले आहे ! ते कसे पुन्हा सिध्द

झाले आहे, हे आता पाहू.

श्रोडिंजरच्या मांजराच्या प्रयोगात मांजर 'एकाच वेळी मेले आहे व जिवंत आहे,' असा विरोधास क्वांटम सिध्दांत निर्माण करतो व तो मानवी मनाचे कर्तृत्व मान्य केल्याशिवाय नाहीसा होत नाही, हे आपण वर पाहिले आहे. पण मानवी मनाचे हे कर्तृत्व मान्य करण्यास अनेक शास्त्रज्ञ अनुत्सुक आहेत. आईन्स्टाइनला दाखवून द्यावयाचे आहे की मानवी मनाचे हे कर्तृत्व मान्य करून देखील क्वांटम सिध्दांत विरोधाभास निर्माण करतो.\* तो कसा हे दाखवून देण्यासाठी त्याने पॉडोल्स्की आणि रोजेन या सहकाऱ्यांच्या मदतीने एक प्रयोग सुचविला असून तो भौतशास्त्रात 'ईपीआर यांचा विरोधाभास' (EPR Paradox) या नावाने प्रसिध्द आहे. हा प्रयोग कळण्यासाठी फोटॉन किंवा इलेक्ट्रॉन या कणाविषयी खालील गोष्टी प्रथम लक्षात ठेवणे आवश्यक आहे.

इलेक्ट्रॉन्सना स्वतःभोवती फिरण्याची गती असते. याला spin (परिवलन) म्हणतात. ती गती कोणत्या दिशेची आहे, हे (क्वांटम सिध्दांतानुसार) अनिश्चित असते. ती प्रयोगकर्ता (मानवी मन) ठरवू शकतो. म्हणजे तिचे तो 'मापन' (measurement) करतो. मापनापूर्वी ती 'ऋण' व 'धन' अशी संयुक्त असते. मापन करताच ती निश्चित होते. म्हणजे ती धन तरी बनते किंवा ऋण तरी बनते. आता आईन्स्टाइन (E) पॉडोल्स्की (P) आणि रोजेन (R) यांनी सुचविलेला प्रयोग असा: एका रेणूतून दोन इलेक्ट्रॉन्सना परस्पर विरुद्ध दिशांना पाठविले तर त्या दोन्हींचे परिवलन शून्य असते. म्हणजे एका इलेक्ट्रॉनचे परिवलन 'ऋण' निश्चित झाले तर दुसऱ्याचे आपोआपच 'धन' निश्चित होते. (धन आणि ऋण यांचा गुणाकार शून्य.) आता या प्रयोगाचे वैशिष्ट्य असे की परस्परविरुद्ध दिशांना जाणारे हे इलेक्ट्रॉन्स एकदा रेणूमधून बाहेर पडले की स्वतंत्र बनतात. म्हणजे त्यांचा परस्परांशी काही संबंध नसतो. (याला स्थानिकता-locality-म्हणतात.) तसेच ते एकमेकापासून कितीही दूर जाऊ शकतात. उदा. एक इलेक्ट्रॉन पृथ्वीवर असेल, तर दुसरा लाखो प्रकाशवर्षे (प्रकाश पोहोचण्यास लाखो वर्षे लागणारे जे अंतर अशा) अंतरावरील तारकापुंजात असेल. मापन करण्यापूर्वी दोन्ही इलेक्ट्रॉन्सचे परिवलन शून्य असले तरी 'मापन' करताच ते निश्चित बनते. समजा, पृथ्वीवरील इलेक्ट्रॉनचे आपण ऋण

\* मांजराचा क्वांटम विरोधाभासाचा प्रयोग मानवी मनामुळे 'सूक्ष्म' जगाचे 'स्थूल' जगात रुपांतर होते हे सिध्द करतो. आईन्स्टाइनला दाखवून द्यावयाचे आहे की 'स्थूल' जगातही क्वांटम सिध्दांत विरोधाभास निर्माण करतो. अशारीतीने क्वांटम सिध्दात स्थूल-सूक्ष्म भेद जाणत नाही, हे आईन्स्टाइनने गृहीत धरले आहे. कार्यकारणभाव स्थूल जगातच अनुभवाला येतो, तो खोटा म्हणता येत नाही, हे आईन्स्टाइनला दाखवून द्यावयाचे आहे. हीच भौतिक वास्तवता (physical reality) होय. यालाच स्थानिकताही (locality) म्हणतात. (कार्यकारणभाव स्थानिक भेदावर आधारलेला आहे.)

मापन केले, तर लाखो प्रकाशवर्षांच्या अंतरावरील त्या दुसऱ्या इलेक्ट्रॉनचे परिवर्तन तत्काळ 'धन' बनते ! आता येथे प्रश्न असा निर्माण होतो की आम्ही पृथ्वीवरील इलेक्ट्रॉनचे मापन 'ऋण' केले आहे, हे त्या लोखो प्रकाशवर्षे अंतरावरील इलेक्ट्रॉनला कसे कळते ? माहितीच्या देवाणघेवाणीला वेळ लागतो. ही देवाणघेवाण जास्तीत जास्त वेगाने झाली तरी ती प्रकाशाची वेगमर्यादा ओलांडू शकत नाही. कारण (आईन्स्टाइनच्या सापेक्षता सिद्धांतानुसार) प्रकाशाचा वेग (सेकंदाला १८६००० मैल) हा भौतिक विश्वातील सर्वात जास्त वेग असून त्याच्यापेक्षा जास्त वेग विश्वात अस्तित्वात नाही. त्या वेगाच्या मर्यादेमुळे विश्वात कार्यकारणभेद निर्माण झाला आहे व काळाला अर्थ प्राप्त झाला आहे.\* अशारीतीने क्वांटम सिद्धांत भौतिक विश्वात (स्थूल जगात) सुद्धा विरोधास (paradox) निर्माण करतो. म्हणून तो भौतिक विश्वाचा पूर्ण सिद्धांत होऊ शकत नाही; तो अपुरा सिद्धांत आहे, असे आईन्स्टाइनने या प्रयोगाने 'दाखवून' दिले आहे.<sup>११</sup> (हा प्रयोग अर्थात काल्पनिक आहे.)

याला बोहरने पुढीलप्रमाणे उत्तर दिले आहे. या प्रयोगातील दोन कणांची व्यवस्था (two particles system) ही अविभाज्य (indivisible) आणि अखंड (whole) आहे. त्यांच्यातील संबंध अंतरावर अवलंबून नाही. त्यामुळे व्यवहारातील माहितीच्या देवाणघेवाणीचा तेथे संबंध पोहोचत नाही. क्वांटम सिद्धांताने स्थानभेदावर आधारलेला कार्यकारणभाव नष्ट केला आहे. क्वांटम सिद्धांतानुसार संपूर्ण विश्व अखंड व एकसंध आहे. याचा अर्थ असा की जे 'येथे' घडते ते 'तेथे' घडण्यावर अवलंबून आहे व जे 'तेथे' घडते ते 'येथे' घडण्यावर अवलंबून आहे. पण हे तात्त्विकदृष्ट्या घडत असल्यामुळे व्यावहारिक जगात (व्यावहारिकदृष्ट्या) त्याचा परिणाम दिसून येत नाही.<sup>१२</sup>

डेव्हिड बोहम हीच गोष्ट पुढीलप्रमाणे सांगतो, "Ultimately the entire universe has to be understood as a single undivided whole, in which analysis into separately and independently existent parts has no fundamental status"<sup>१३</sup> याचा अर्थ असा: "अंतिमतः संपूर्ण विश्व एकसंध व अविभाज्य आहे, असे मानले पाहिजे. त्यामध्ये स्वतंत्रपणे व वेगळेपणाने अस्तित्वात असलेले मूलभूत भाग आहेत, या समजुतीला काही अर्थ नाही. कारण विश्वाचे तुकडे करता

\* याला 'कालाचा बाण' (arrow of time) म्हणतात. प्रकाशाचा वेग ओलांडला तर काल उलटा फिरेल ! 'कार्य' हे 'कारण' बनेल ! उदा. नातू आजीच्या अगोदर जन्मेल ! (तो कदाचित आजीला ठारही मारील !) याला Time travel म्हणतात. हे अर्थात् अशक्य आहे. कारण आजीशिवाय नातू जन्माला येऊ शकत नाही. तो तिला ठार कसा मारील ? तात्पर्य Time Travel (कालाची उलट गती) अशक्य आहे. ती विरोधाभास निर्माण करते.



येत नाहीत.”

आईन्स्टाइन आपल्या भूमिकेला शेवटपर्यंत चिकटून राहिला असला तरी वरील निबंध (१९३५ साली) लिहिल्यानंतर बऱ्याच वर्षांनी आपल्या आत्मचरित्रपर लिखाणात त्याने पुढील एक महत्त्वपूर्ण विधान केलेले आढळून येते. क्वांटम सिध्दांताने निर्माण केलेला विरोधाभास कसा नाहीसा करता येईल, हे सांगताना तो म्हणतो, “One can escape from this conclusion by assuming that measuring  $S_1$  (that is one particle stream) *telepathically* changes the real situation of  $S_2$  (the other particle stream) or by denying independently real situation as such to things which are spatially separated from each other.”<sup>१२३</sup> याचा अर्थ असा : “हा निष्कर्ष (विरोधाभास) टाळण्याचे दोनच मार्ग आहेत. एक म्हणजे, एका इलेक्ट्रॉनचे मापन केले की मानसिक पातळीवर (विचार संक्रमणाने) (दुसऱ्या इलेक्ट्रॉनची खरी अवस्था (मापन) बदलते, किंवा स्थानिकदृष्ट्या वेगळे असलेल्या त्या दोन इलेक्ट्रॉन्सना वस्तुतः स्वतंत्र व वेगळे अस्तित्व (खरेपणा) नाही असे मानणे.” पहिला पर्याय (मानणे) इलेक्ट्रॉन्सना (जड समजल्या गेलेल्या वस्तूंना) ‘मन’ असल्याचे मान्य करतो, तर दुसरा पर्याय विश्व एकात्म (अविभाज्य) असल्याचे-त्यात स्थानिक भेद नसल्याचे-मान्य करतो. दोन्ही पर्याय ब्रह्मविद्येचे आध्यात्मिक (अतींद्रिय) सत्यच प्रतिपादतात. कारण दोन्हींचा अर्थ आध्यात्मिकदृष्ट्या एकच आहे. (एकात्म विश्वातच विचारसंक्रमण शक्य आहे.)

पुढे १९६४ साली जे. एस्. बेल या भौतशास्त्रज्ञाने एक प्रमेय मांडले. हे ‘बेलचे प्रमेय’ म्हणून भौतविज्ञानात प्रसिध्द आहे. त्यात त्याने हे दाखवून दिले की क्वांटम सिध्दांत करीत असलेली भाकिते (statistical predictions) खरी असतील तर आईन्स्टाइनची स्थानिक भेदावर (locality वर) आधारलेली कार्यकारणभाव (causality) व भौतिक वास्तवता (physical reality) या दोन्हीविषयीची कल्पना खोटी ठरते. हेन्री स्टॅप या भौतशास्त्रज्ञाने या बेलच्या प्रमेयाविषयी म्हटले आहे की “बेलचे प्रमेय हा विज्ञानातील सर्वात मोठा अगाध शोध आहे.” (“Bell’s theorem is the most profound discovery of science.”<sup>१२४</sup>) असे त्याने म्हणण्याचे कारण ते प्रमेय पाश्चात्य विज्ञानाचा पाया समूळ उखडून टाकते ! आणि क्वांटम सिध्दांताची भाकिते कधीही खोटी ठरलेली नाहीत, हे लक्षात ठेवले पाहिजे !

पुढे १९८२ साली अँस्पेक्ट आणि त्याच्या सहकाऱ्यांनी पॅरिस येथे आईन्स्टाइनने सुचविलेला वरील ‘ईपीआर पॅरॅडॉक्स’चा प्रयोग प्रत्यक्षात केला. या प्रयोगाने बेलच्या प्रमेयाला पुष्टी मिळाली ! म्हणजे क्वांटम सिध्दांत करीत असलेली भाकिते खरी आहेत, हे पुन्हाच निर्णायकपणे सिध्द झाले.<sup>१२५</sup> विश्व हे सूक्ष्म जगातच

नव्हे तर स्थूल जगातही कार्यकारणभावावर आधारलेले नाही; भौतिक वास्तवता (physical reality) ही पाश्चात्य विज्ञान समजते (किंवा आईन्स्टाइन समजतो) तशी स्थानिक भेदावर आधारलेली नाही, म्हणजे विश्वाचे स्थानिक पातळीवर तुकडे करता येत नाहीत; विश्व हे अखंड व अविभाज्य आहे, विश्वाचा प्रत्येक भाग त्याच्या इतर सर्व भागाशी अतूटपणे व अर्थपूर्णरीतीने जोडला गेला आहे, हे क्वांटम सिध्दांताचे प्रतिपादन ॲस्पेक्टच्या प्रयोगाने निर्णायकपणे सिध्द झाले.\*

विश्व अखंड वा अविभाज्य आहे किंवा विश्वाचे तुकडे करता येत नाहीत, याचा अर्थ असा की विश्वाच्या प्रत्येक भागाला संपूर्ण विश्वाइतकेच महत्त्व आहे व अस्तित्वही आहे. 'अस्तित्वही आहे', याचा अर्थ असा की विश्वाचा प्रत्येक भाग, त्यातील एक सूक्ष्म अणुसुध्दा संपूर्ण विश्व प्रतिबिंबित करतो. एका अणूत सर्व विश्व सामावलेले आहे, असा याचा अर्थ होतो. [ 'कणाकणात भगवान भरला आहे' याचा हाच अर्थ आहे. अणोरणीयान् महतो महीमान् । म्हणजे आत्मा (ब्रह्म) अणूपेक्षाही लहान आहे व महत् (विश्व) पेक्षाही मोठा आहे, या कठोपनिषद् वचनाचा हाच अर्थ असून तुकारामांनी अणूरेणूया थोकडा । तुका आकाशाएवढा ॥ या अभंगात हेच सांगितले आहे. बुइल्यम ब्लेक या कवीने 'To See a world in a grain of sand and Heaven in a wild flower' या पंक्तीत हेच सांगितले आहे.] एका अणूत विश्व सामावलेले असल्याने कोणतीही एखादी व्यक्ती विश्वाशी तादात्म्य पावून वैश्विक अनुभूती (Cosmic Consciousness) घेऊ शकते असा याचा अर्थ होतो. हीच 'गूढानुभूती' (Mystic experience) अथवा 'ब्रह्मानुभूती' आहे. याच्या उलट विश्वापासून, त्यातील प्रत्येक व्यक्तीपासून, आपण कोणी वेगळे आहोत, अशी कल्पना करणे (द्वैत भावना) हा भ्रम ठरतो. ही अतींद्रिय (आध्यात्मिक) सत्याशी (ब्रह्माशी) प्रतारणा किंवा फारकत (separation) असून ते 'वैज्ञानिक पाखंड' ठरते. म्हणजे ते वैज्ञानिकदृष्ट्या-अतींद्रिय वैज्ञानिकदृष्ट्याच नव्हे तर, आता भौतिक वैज्ञानिकदृष्ट्यासुध्दा ! -खोटे (भ्रम) ठरते ! ही दंतकथा नसून रोकडे, (भौतिक) सत्य आहे; आणि एका नव्या छायाचित्र-ग्रहणाच्या

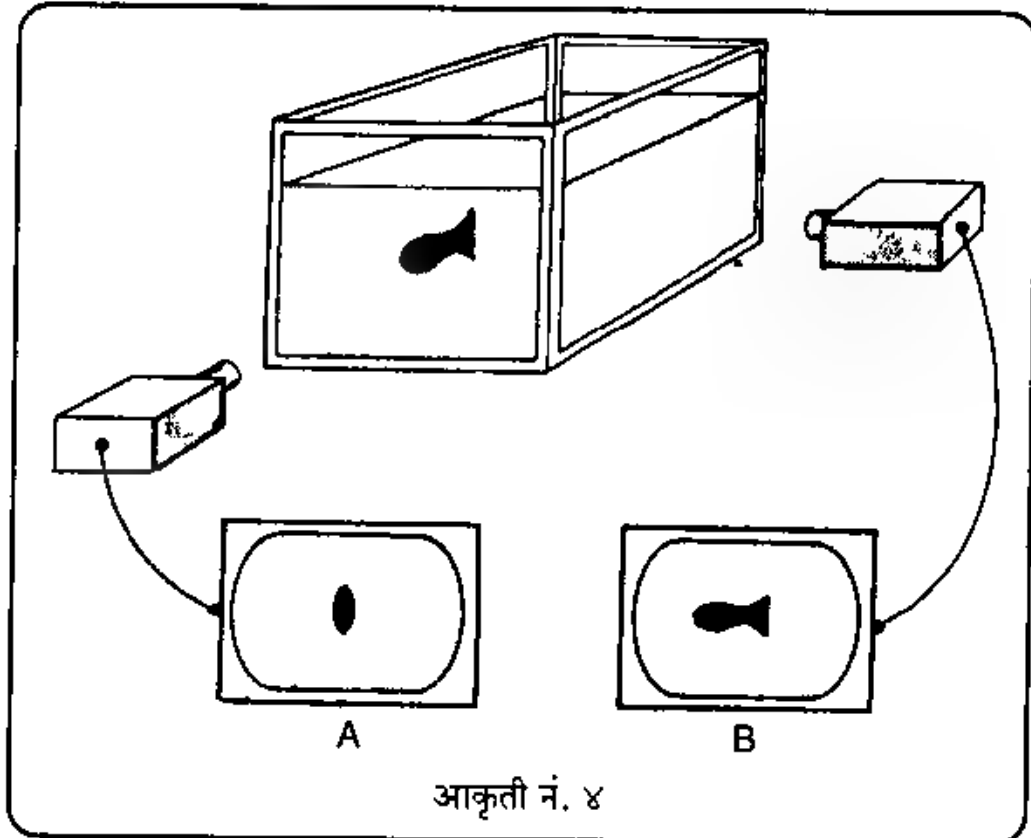
\* याचा अर्थ प्रकाशापेक्षा जास्त वेगाने वैश्विक पातळीवर माहितीची देवाणघेवाण होते, असा होतो. पण मग पृ. ५४४ म्हटल्याप्रमाणे प्रकाशाच्या वेगमर्यादामुळे स्थूल जगात कार्यकारणभाव अस्तित्वात आलेला असल्यामुळे ती मर्यादा ओलांडली जाते हे ॲस्पेक्टच्या प्रयोगाने सिध्द झालेले असेल तर 'कालाचा बाण' उलटा होऊन कारणाच्या अगोदर परिणाम-म्हणजे आजीच्या अगोदर नातवाचा जन्म-घडणार नाही काय ? असा प्रश्न निर्माण होतो. याचे समाधान असे की ही माहितीची देवाण-घेवाण व्यावहारिक पातळीवर-म्हणजे सदेशावहनाच्या रुपाने (signalling) होत नाही. म्हणजे त्या 'माहिती'ला 'व्यावहारिक अर्थ' नाही 'अतींद्रिय (आध्यात्मिक) अर्थ' आहे. युगाच्या synchronicity च्या दृष्टीने त्याला 'अर्थ' आहे. आईन्स्टाइनच्या विशेष सापेक्षता सिध्दांताच्या दृष्टीने त्याला 'अर्थ' नाही पाहू. The Dancing Wu Li Masters (1979) Gary Zukav, p 313, (Foot Note)

(फोटोग्राफीच्या) तंत्राने ते सिध्द झाले आहे. याला 'वैश्विक चित्रग्रहण' (Holography) म्हणतात व या तंत्राने घेतलेल्या छायाचित्राला 'वैश्विक चित्र' (Hologram) म्हणतात. डेनिस गॅबोर याने या नव्या तंत्राचा १९४७ साली प्रथम शोध लावला. त्याबद्दल त्याला नोबेल पारितोषिकही मिळाले आहे. पण लेझर किरणांच्या शोधाच्या अभावी ते तंत्र प्रत्यक्ष अंमलात येण्यास वेळ लागला. या तंत्राने घेतलेल्या एखाद्या वस्तूचे -उदा. सफरचंदाचे-छायाचित्र नुसत्या डोळ्यांनी पाहिले तर काहीच दिसत नाही. पण लेझर किरण फिल्मवर पाडून पाहिले तर त्रिमितीचे सफरचंद वास्तवरूपाने प्रत्यक्ष समोर प्रकट होते. या चित्राचे वैशिष्ट्य असे की ज्या फिल्मवर ते चित्र घेतले आहे, त्याचा निम्मा भाग कापून त्यात पाहिले तरी संपूर्ण सफरचंद दिसते ! इतकेच नव्हे तर त्याचे पुन्हा तुकडे करून त्यात पाहिले तरी प्रत्येक तुकड्यात संपूर्ण सफरचंद दिसते ! (मात्र तुकडे लहान होतील तसे ते अंधुक बनत जाते.) 'कणाकणात भगवान आहे' या अतींद्रिय तत्त्वाचा हा साक्षात भौतिक पुरावा होय !

कार्ल प्रिब्रॅम या शास्त्रज्ञाने हेच वैश्विक तत्त्व (होलोग्राफीचे तंत्र) मानवी मेंदूलाही लागू केले असून मानवी मेंदूत स्मृतीचे केंद्र (memory centre) मेंदूशास्त्रज्ञांना न सापडण्याचे कारण स्मृती ही मानवी मेंदूत 'स्थानिक' (local) नाही, वैश्विक (global) आहे, हे आहे, हे त्याने दाखवून दिले आहे. मानवी मेंदूचा बराच भाग अपघातात नष्ट झाला तरी स्मृती नष्ट होत नाही, याचे हेच कारण आहे. (ही गोष्ट कार्ल लॅशली या मेंदूशास्त्रज्ञाने प्रत्यक्ष उंदरावरील प्रयोगाने दाखवून दिली आहे.) जॉन लॉर्बर या ब्रिटिश मज्जाशास्त्रज्ञाला कवटीत मेंदूऐवजी ९५% पाणी (cerebrospinal fluid) भरलेल्या अनेक व्यक्ती आढळल्या असून त्या सर्वसामान्य माणसाची बौद्धिक कामे करीत असल्याचे आढळून आले आहे ! अशा एका व्यक्तीचे बुध्दयंक (आयू.क्यू.) १२६ असल्याचे त्याला आढळून आले आहे !<sup>१२९</sup> सर्वसामान्य माणसाचे बुध्दयंक १०० असते, हे येथे लक्षात ठेवावे. (माणसाच्या डोक्याचे कॅट्रस्कॅन करून-शस्त्रक्रिया न करता-हे तपासून कवटीत पाणी किती व मेंदू किती हे ठरविता येते. संबंधित एक व्यक्ती मेल्यानंतरही शवचिकित्सेत याची खात्री झालेली आहे.) मानवी मनाला आपले (बौद्धिक) कार्य करण्यासाठी संपूर्ण मेंदूची आवश्यकता नाही. त्याच्या थोड्या भागावरही त्याचे काम चालते, (कारण 'कणकण में भगवान' आहे.) याचा हा मेंदूशास्त्रीय व मानसशास्त्रीय पुरावा होय !

चिपॅंझी माकड व मानव यांच्या जनुकामध्ये (genes) ९९% जनुके सारखीच आढळून येतात. फक्त १% जनुकात फरक दिसून येतो. (म्हणून ९९% जनुकात मानवी गुणधर्म सामावलेला नाहीत; तो 'कचरा' जनुके-Junk DNA म्हटली जातात.) मग ती का निर्माण झाली आहेत ? त्यांचे काय काम ? ९५% मेंदू कवटीत नसला तरी चालते. मग त्या ९५% चे काय काम ? तेच या 'जंक'

(कचरा) समजल्या गेलेल्या जनुकांचे काय ! कोट्यवधि पुंबीज निर्माण होतात. त्यापैकी एकच पुंबीज स्त्रीबीज सुफलित करतो. मग त्या निरुपयोगी कोट्यवधि पुंबीजांचे काय काम ? ब्रह्मांडात अब्जावधि सूर्य व तारकाविश्वे आहेत. त्या सर्वात पृथ्वीसारखे ग्रह व मानवासारखे बुद्धिमान प्राणी असतीलच असे नाही. मग ते का निर्माण झाले आहेत ? मागे सांगितले आहे की कपातील चहाला विश्वात अब्जावधि तारकाविश्वे आहेत हे 'कळते'. ते कसे वा का 'कळते' ? कारण ती तारकाविश्वे अस्तित्वात आहेत. म्हणून कपातील चहाही 'अस्तित्वात' आहे ! (त्याला 'जडत्व' आहे.) ती तारकाविश्वे अस्तित्वात नसती तर तोही अस्तित्वात नसता ! व्यक्ती ब्रह्मांडावर अवलंबून आहे, व ब्रह्मांड व्यक्तीवर अवलंबून आहे. एका व्यक्तीसाठी ब्रह्मांड आहे, व ब्रह्मांडासाठीही एक व्यक्ती आहे. एकाला दुसऱ्याच्या अस्तित्वाखेरीज 'अर्थ' नाही. विश्व आविभाज्य आहे, याचा हा अर्थ आहे. एकात 'अर्थ' निर्माण करण्यासाठी अनेकाची आवश्यकता आहे. एक स्त्रीबीज सुफलित करण्यासाठी कोट्यवधि 'निरुपयोगी' पुंबीजांची आवश्यकता आहे ! एक नर व राणीमुंगी यांच्यासाठी असंख्य कामगार मुंग्या राबत असतात. त्यांची आवश्यकता आहे. त्या सर्व मुंग्या वांझ ('निरुपयोगी'च) असतात. पण त्यांच्याशिवाय मुंग्याचे वारुळ (वा मधमाशांचे पोळे) अस्तित्वात येत नाही. या वैश्विक नाटकाचेही तसेच आहे. म्हणून उपनिषद्कारांनी 'ब्रह्मा'च्या तोंडी 'एकोऽहं बहु स्याम्' (एकटा मी अनेक रुपांनी नटू इच्छितो) असे शब्द घातले आहेत. म्हणून 'एका'त जे ब्रह्म



आहे, ते 'बहु' तही आहे. त्या 'एका' ला 'बहु' मुळे आणि त्या 'बहु' ला एकामुळे 'अर्थ' व 'अस्तित्व' प्राप्त झाले आहे-आणि महत्त्वही ! दोन्हीशिवाय नाटक रंगणारच नाही ! विश्व अविभाज्य आहे ते या अर्थाने. वैश्विक छायाचित्राचे (holography चे) तंत्र हेच सत्य प्रतिबिंबित करते. डेव्हिड बोहमने या वैश्विक छायाचित्राचेही उदाहरण दिले असून ते स्थिरचित्र असल्यामुळे ते व्यावहारिक चित्रण नव्हे. क्वांटम सिध्दांताच्या दृष्टीने विश्व अविभाज्य आहे ते स्थिरचित्राच्या दृष्टीने. पण व्यवहारात ते चलचित्र आहे. हे कळण्यासाठी बोहमने व्यवहारातील एक उदाहरण दिले आहे. (सोबतचे चित्र पाहा.) (हा दृष्टांत बोहमच्या Wholeness and Implicate Order या ग्रंथातून घेतला आहे.)

एका काचेच्या पाण्याच्या टाकीत एक मासा फिरत आहे. त्याचे दोन टी.व्ही. (दूरदर्शन) पडद्यावर दोन वेगवेगळ्या दिशेतून चित्रीकरण करणाऱ्या कॅमेऱ्यांनी प्रक्षेपण करण्यात येत आहे. मासा एकच असला तरी दोन टी.व्ही. पडद्यावर त्याची दोन भिन्न चित्रे दिसतात. एकात तो मासा बाजूने दाखवला आहे. दुसऱ्यात तो समोरून दाखवला आहे. पाहणाऱ्याला दोन भिन्न मासे आहेत असे त्यांच्या भिन्न कोनातून घेतलेल्या चित्रामुळे वाटते. पण दोन्ही चित्रातील माशांची हालचाल सारखीच होत असते. म्हणजे ती एकसमयावच्छेदेकरून होते. कारण मासा एकच आहे. दोन भिन्न कॅमेऱ्यामुळे एका माशाचे दोन भिन्न मासे झाले आहेत इतकेच. हाच 'दृष्टिसृष्टिवाद' (observer participation) होय. येथे दोन टी.व्ही. संच दाखवले आहेत. पण त्यांची संख्या कितीही वाढवता येते; आणि ते संच एकमेकापासून कितीही दूर ठेवले जाऊ शकतात. त्यामुळे काही फरक पडत नाही. आईन्स्टाइनच्या प्रयोगातील दोन इलेक्ट्रॉन्स एकमेकापासून कितीही दूर अंतरावर असले तरी त्यांचे परिवलन (spin) एकसमयावच्छेदे करून कसे बदलते हे या दृष्टांतावरून वाचकांच्या लक्षात येईल. क्वांटम सिध्दांतामुळे स्थानिकता (locality)-स्थानिक भेद कसा नाहीसा होतो, स्थानिकतेवर आधारलेला कार्यकारणभाव [म्हणजे येथे घडणाऱ्या घटनेवरच येथील घटनेचे घडणे अवलंबून असते, ही कल्पना] कसा भ्रामक आहे, विश्व अविभाज्य कसे आहे. [म्हणजे जे 'येथे' घडते ते 'तेथे' घडणाऱ्या घटनेवर कसे अवलंबून आहे] हे या चित्रात दाखविलेल्या माशाच्या उदाहरणावरून वाचकांना स्पष्ट होईल. एकच मासा असंख्य टी.व्ही. संचातून दाखवता येत असल्यामुळे त्या एका माशाच्या ठिकाणी 'ब्रह्मा'ची (ईश्वराची) कल्पना केली तर ते 'ब्रह्म' कसे अनेक रुपांनी नदू शकते, हेही कळेल. दृश्य विश्वात 'अनेकत्व' दिसत असले तरी त्या अनेकत्वाच्या पाठीमागे एकच 'ब्रह्म' तत्त्व कसे दडले आहे, हे यावरून वाचकांच्या लक्षात येईल. हाच 'अद्वैत वेदांत' असून अनेकत्वाच्या पाठीमागे दडलेल्या ह्या एकमेवाद्वितीय (अद्वैत) ब्रह्म-तत्त्वाचे वर्णन ऋग्वेद 'एकं सद् विप्रा

बहुधा वदन्ति' (म्हणजे 'एक सत्य अनेक रुपांनी सत्पुरुष वर्णन करतात' या शब्दात करतो. हेच वैदिक सत्य उपनिषदे 'एकस्तथा सर्वभूतान्तरात्मा रूपं रूपं प्रतिरूपो बहिश्च' (कठ. उप. २.२.९) या शब्दात करतात. याचा अर्थ 'सर्व भूतमात्रांच्या अंतरातून एकच आत्मा-एकच तत्त्व-निरनिराळ्या रुपांनी प्रकट होत असते, हे खरे असले तरी ते त्या सर्वांच्या बाहेरही आहे' असा आहे. (बहिश्च = बाहेर) वरील दृष्टांतात दाखवलेला मासा सर्व टी. व्ही. संचात वास करीत असूनही (त्या सर्वांतून प्रकट होत असूनही) तो सर्वांच्या बाहेर कसा अस्तित्वात आहे, हे दिसून येते. टी.व्ही. मधील मासा हा खरा नसून खऱ्या माशाची ती केवळ प्रतिमा आहे. खरा मासा त्या सर्वांच्या बाहेर-वेगळा-आहे. ते 'ब्रह्म'च फक्त खरे आहे. 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या' हे अद्वैत वेदांताचे (ब्रह्मविद्येचे) ब्रह्मवैज्ञानिक सत्यच काँटम सिध्दांत भौतिकशास्त्रातून सप्रयोग कसे दाखवून देतो, हे डेव्हिड बोहमने दिलेल्या या दृष्टान्तावरून वाचकांना कळेल.\*

काँटम सिध्दांताने भौतिक जगातून कार्यकारणभावाचे उच्चाटन केले आहे याचा अर्थ भौतिक जगातील घटना काँटम सिध्दांतानुसार अपघाताने, यदुच्छेने (chance) म्हणजे अनियमितरीतीने घडतात असा होतो. म्हणून आईन्स्टाइनने त्याला विरोध केला होता. तो विरोध करताना त्याने म्हटले होते की "ईश्वर जुगार खेळत नसतो." (God does not play dice.) याला बोहरने प्रत्युत्तर दिले होते की "तुम्ही ईश्वराला त्याने काय करावे हे सांगू नये." अँस्पेक्टच्या प्रयोगाने आईन्स्टाइनचे म्हणणे खोटे ठरले व बोहरच्या भूमिकेला पुष्टी मिळाली. याचा अर्थ ईश्वर खरोखरच जुगार खेळतो, हे सिध्द झाले, असा होतो असे समजायचे काय ? असे समजण्याचे कारण नाही. कारण विश्व नियमबध्द असल्याचे आढळून येते. (विज्ञानाची भाकिते खरी ठरतात ही वस्तुस्थिती विश्वाची ही नियमबध्दताच सिध्द करते.) आता प्रश्न असा की कार्यकारणाच्या अभावातून-काँटम chance मधून-(किंवा अनिश्चिततेतून)

\* फ्लेटोने Republic या ग्रंथात गुहेच्या दृष्टांताने हे जग सावल्याचे कसे आहे, हे दाखवून दिले आहे. एडिंग्टनने आपल्या The Nature of the Physical World या ग्रंथात म्हटले आहे की, "भौतिक विज्ञानाचा संबंध फक्त सावल्याच्या जगाशी आहे, याची स्पष्ट जाणीव आधुनिक भौतवैज्ञानिक प्रगतीने भौतशास्त्रज्ञांना करून दिली आहे." (p XVII) ग्रीडिंजर या भौतशास्त्रज्ञाने म्हटले आहे की, "The world of physics is a world of shadows, but we were not aware of it, we thought that we were dealing with the world itself." (What Is Life? and Mind and Matter, p 121) म्हणजे "भौतिक विज्ञानाचे जग सावल्याचे आहे, याची आम्हाला कल्पना नव्हती. आम्ही खऱ्या जगाशीच व्यवहार करीत आहोत असे समजत होतो " या व इतर अनेक भौतशास्त्रज्ञांनी स्पष्टपणे मान्य केले आहे की या सावल्या कशाच्या आहेत, हे सत्य ('ब्रह्म') भौतविज्ञानाच्या साधनांनी शोधणे अशक्य आहे. उदा. जेम्स जोन्स (Mysterious Universe, p. 111) एडिंग्टन (Science and the Unseen world : "Physics most strongly insists that its methods do not penetrate behind the symbolism (shadows) "

नियमबध्दता (निश्चितता) कशी निर्माण होते ? अनियमितपणातून नियमितपणा कसा निर्माण होतो ? सूक्ष्म जगात अनियमितपणा (chance or lawlessness) आहे व स्थूल जगात नियमितपणा (regularity or lawfulness) आहे, असे आढळून येते. हे कसे ? सूक्ष्मातील अनियमितपणा स्थूलात नियमितपणा कसा बनतो, हा प्रश्न सूक्ष्म जगाचे स्थूल जगात कसे परिवर्तन होते या प्रश्नाशी निगडीत आहे.

श्रॉडिंजरच्या मांजराच्या प्रयोगात मानवी मनामुळे सूक्ष्म जगाचे स्थूल जगात रूपांतर होते, हे आपण पाहिले आहे. (भौतशास्त्रज्ञांना ही साधी गोष्ट त्यांच्या भौतिक वादामुळे दिसत नसल्यामुळे त्यांच्यापुढे ही 'मापनाची समस्या' - measurement problem - निर्माण झाली आहे.) मांजर मेले आहे की जिवंत आहे याविषयीची अनिश्चितता प्रयोगकर्ता (मानवी मन) पेटी उघडून पाहून नाहीशी करू शकतो (व ही समस्या सोडवू शकतो.) म्हणून सूक्ष्म जगातील अनिश्चिततेचे स्थूल जगातील निश्चिततेमध्ये मानवी मनामुळे परिवर्तन होते. अँस्पेक्टच्या प्रयोगानेही दाखवून दिले आहे की लाखो प्रकाशवर्षे अंतरावरील इलेक्ट्रॉनचे अनिश्चित परिवर्तन (spin) आम्ही (मानवी मन) पृथ्वीवरील इलेक्ट्रॉनचे मापन करून निश्चित करू शकतो. याचा अर्थ असा की विश्वाच्या अविभाज्यतेमध्ये मानवी मनाचा सहभाग (participation) आहे. पण बोहमच्या दृष्टांतातील माशाची हालचाल ही काही मानवी मनावर अवलंबून नाही, हे स्पष्ट आहे. या उदाहरणात मानवी मनाचा सहभाग शून्य आहे, असे दिसते. पण वस्तुतः तसे समजण्याचे कारण नाही. त्या माशाचे कोणत्या कोनातून चित्रीकरण करावयाचे व त्याची टी.व्ही पडद्यावर प्रतिमा पाहायची, हे आपण (मानवी मन) ठरवू शकतो. (म्हणूनच या माशाच्या उदाहरणाला 'दृष्टिसृष्टिवाद' म्हटले आहे. कारण आपण ठरवू त्या कोनाची 'दृष्टी' माशाची 'सृष्टी' निर्माण करते.) तथापि माशाच्या हालचालीवर आपले नियंत्रण नाही ही वस्तुस्थिती आहे. ती हालचाल तो मासा स्वतः ठरवतो. तो मासा ब्रह्माच्या जागी असल्याची कल्पना वर मांडली आहे. या कल्पनेनुसार 'ब्रह्म' स्वतःची हालचाल ('सृष्टी') स्वतःच (निर्माण) करू शकते; मानवाला ती हालचाल ('सृष्टी') कोणत्या कोनातून पाहायची ('मापायची') हे ठरविण्याचे फक्त स्वातंत्र्य आहे. आपल्या (मानवाच्या) पाहण्याच्या स्वातंत्र्याला माशाच्या ('ब्रह्मा'च्या) हालचालीमुळे विशिष्ट मर्यादा पडते, असा याचा अर्थ होतो. येथे कार्यकारणभावाचा सूत्रधार स्वतः तो मासा ('ब्रह्म') आहे; मानवी मन फक्त त्या कार्यकारणभावाचा भागीदार (participator) आहे, असे म्हणता येईल. उपनिषदांच्या भाषेत ब्रह्म ('ईश्वर') 'कर्माध्यक्ष' आहे. मनुष्य त्या कर्मनि बांधला गेला आहे. ज्ञानेश्वरांच्या भाषेत *करणे का न करणे । हे अवघे तोचि जाणे । विश्व चलतसे जेणे । पारमात्मेनि ॥* (ज्ञाने. १२.११८) हा केवळ दृष्टांत वा उदाहरण नाही, तर प्रत्यक्ष ब्रह्मवैज्ञानिक

सत्य आहे, हे पुढील प्रत्यक्ष घडणाऱ्या भौतिक घटनांच्या विवेचनावरून स्पष्ट होईल.

## विश्वाचे नियम कोणाकडून वा कसे निर्माण होतात ?

युरेनियम, थोरियम, रेडियम इ. किरणोत्सारी (radioactive) पदार्थातून सतत किरणे वा कण बाहेर पडत असतात. ते त्यातील अणूंच्या स्फोटातून बाहेर पडत असतात. त्यातील एखाद्या अणूचा स्फोट केव्हा होईल याचे कसलेही भाकीत भौतशास्त्रज्ञांना करता येत नाही. कारण तो स्फोट पूर्णपणे अनिश्चित स्वरूपाचा असतो. तो त्या किरणोत्सारी पदार्थाच्या रासायनिक वा भौतिक (तापमान, दाब इ.) घटकांवर अवलंबून नसतो. त्याच्या भूतकालीन इतिहासावर किंवा वर्तमानकालीन परिस्थितीवरही तो अवलंबून नसतो. डेव्हिड बोहम याच्या शब्दात सांगायचे तर "त्या स्फोटाला काहीही कारण नसते... तो कशाशीही संबंध नसलेला असा पूर्ण मनमानी (लहरी) स्वरूपाचा असतो." (तिरपे शब्द मुळातून.) ("It does not have any causes .. (It is) *completely arbitrary* in the sense that it has no relationship to anything else."<sup>३२३</sup> (Italics in the original.) असे असूनही त्याचे एक गुप्त (दडलेले) वेळापत्रक असल्याचे दिसून येते. त्या वेळापत्रकानुसारच प्रत्येक अणू स्फोट पावतो. त्याला 'वेळापत्रक' म्हणण्याचे कारण त्या 'अकारण' (acausal) घडणाऱ्या अणुस्फोटातूनच तो अणू ज्या पदार्थाचा घटक आहे, त्या पदार्थाचे आयुष्य ठरते ! (याला त्याचे अर्ध-आयुष्य-half-life-म्हणतात. अर्ध-आयुष्य म्हणजे एखाद्या किरणोत्सारी तुकड्यातील निम्मे अणू स्फोट पावण्यास लागणारा काळ) उदा. युरेनियमचे अर्ध-आयुष्य ४५ लक्ष वर्षे, रेडियम A चे अर्ध-आयुष्य ३.८२५ दिवस, थोरियम C चे अर्ध-आयुष्य ६०.५ मिनिटे इ. इ. आता प्रश्न असा की त्या त्या किरणोत्सारी पदार्थातील प्रत्येक अणूला त्या त्या पदार्थाचे आयुष्य किती आहे हे कसे कळते ? 'कसे कळते' असे म्हणण्याचे कारण त्याचे आयुष्य प्रत्येक अणूचा स्फोटच ठरवतो ! आईन्स्टाइनच्या (ईपीआर) प्रयोगातील लाखो प्रकाशवर्षे अंतरावरील इलेक्ट्रॉनला पृथ्वीवरील इलेक्ट्रॉनच्या परिवलनाचे मापन आपण 'ऋण' केले आहे, हे कसे कळते, असा जो प्रश्न वर विचारला होता, तशाच स्वरूपाचा हा प्रश्न आहे; किंवा प्रकाश दोन फटीतून पाठविण्याच्या प्रयोगातील एखाद्या प्रकाशकणाला दुसरी फट बंद आहेत हे कसे कळते, असा जो प्रश्न वर विचारला होता, तशाच स्वरूपाचा हाही प्रश्न आहे; किंवा पृथ्वीवरील कपातील चहाला आकाशगंगेच्या पलीकडे अनेक तारकाविश्वे आहे, हे कसे कळते, असा जो प्रश्न पृ. १४० वर विचारला होता तशाच प्रकारचा हाही प्रश्न आहे; आणि या सर्व प्रश्नांचे उत्तर देण्यासाठी भौतशास्त्रज्ञांना कोणतेही भौतिक तत्त्व वा साधन उपलब्ध नाही. किरणोत्सारी पदार्थातील अणूंच्या मनमानी (arbitrary), अनिश्चित



वा अकारण (acausal) स्फोटातून त्या पदार्थाचे निश्चित आयुष्य ठरविणारा नियम कोण व कसा निर्माण करतो ? या नियमाचे कर्तृत्व (agency) कोणाला द्यावयाचे ? याचे उत्तर भौतशास्त्रात न सापडण्याचे कारण वर उपनिषदांनी म्हटल्याप्रमाणे ते कर्तृत्व 'बहिश्च', म्हणजे या भौतिक विश्वाच्या बाहेर (transcendent) आहे. भौतिक विश्व त्या कर्त्याची केवळ प्रतिमा (सावली) आहे.

येथे मानवी मनाला काही कर्तृत्व असल्याचे दिसत नाही. तथापि त्याला काहीच स्थान नाही, असेही म्हणता येत नाही. उदा. मांजराच्या प्रयोगात बंद पेटीतील मांजर केव्हा मरायचे हे त्या पेटीतील किरणोत्सारी पदार्थातील अणू (त्याचा स्फोट) ठरवितो. हे स्वातंत्र्य त्याला आहे, हे खरे असले तरी एक तासानंतर ते मांजर मेले आहे की जिवंत आहे हे मानवी मन ठरविते. येथे मांजराचे आयुष्य त्या किरणोत्सारी अणूच्या हातात आहे; ते मांजर मेले आहे की जिवंत हे पाहण्याचे स्वातंत्र्य फक्त मानवाला आहे. येथे ईश्वराच्या स्वातंत्र्याचा मानव फक्त भागीदार (participator) बनतो. थोरियम, रेडियम इ. किरणोत्सारी पदार्थांचे आयुष्य त्या ब्रह्माच्या हातात आहे. त्यामुळे एखाद्या अणूच्या स्फोटावर (सूक्ष्म जगातील घटनेवर) त्याचे नियंत्रण नाही. (ते त्या ब्रह्माचे स्वातंत्र्य आहे.) तथापि त्या किरणोत्सारी पदार्थाचे आयुष्य किती आहे (त्याचे अर्ध-आयुष्य-half-life) याचे मात्र १००% भाकीत तो (मानव) करू शकतो. (याला सांख्यिकीय भाकीत-statistical prediction म्हणतात.) म्हणजे सूक्ष्म जगातील घटनांचे भाकीत तो करू शकत नसला तरी स्थूल जगातील घटनांचे भाकीत तो निश्चितपणे करू शकतो. अशारीतीने सूक्ष्म जगातील घटना (ज्या मानवाच्या दृष्टीने 'अनिश्चित' आहेत त्या) ब्रह्म (ईश्वर) ठरवतो. (त्याच्या दृष्टीला त्या 'निश्चित' आहेत. त्यांचे भाकीत त्याच्या हातात आहे.) स्थूल जगातील घटना मानवी मन ठरविते. त्यांचे भाकीत फक्त तो करू शकतो. अशारीतीने सूक्ष्मातील (अतींद्रिय जगातील) 'अकारणता' (acausal relations) -अनिश्चितता-स्थूलात मानवी मनातून 'सकारणते'मध्ये (कार्यकारणभावामध्ये)-निश्चिततेमध्ये-परिवर्तित होते. तात्पर्य, स्थूल जगातील कार्यकारणभाव (निश्चितता) किंवा नियमबद्धता (lawfulness) मानवी मनाच्या माध्यमातून अस्तित्वात आली आहे, तिला 'अर्थ' प्राप्त झाला आहे. याचेही कारण मानवी मन स्थूल देहाशी (व जगाशीही) तादात्म्य पावले आहे, हे आहे. सूक्ष्म (अतींद्रिय) जगाशी-आत्म्याशी-ते तादात्म्य पावले तर कदाचित सूक्ष्मातील घटनांचे ज्ञान त्याला होऊ शकेल व त्यांचेही भाकीत कदाचित ते करू शकेल. ही गोष्ट अनिश्चितता तत्त्वाचा (uncertainty principle) शोधक बर्नर हायजेनबर्ग याने पुढीलप्रमाणे सांगितली आहे. "But this knowledge [of microscopic world] contains the uncertainty which is brought about by the interaction between the nucleus (of the radioactive atom) and the rest of the world. If we wanted to know why the alpha particle [for

example in the box of the Schrodinger's cat] was emitted at that particular time we would have to know the microscopic structure of the whole world **including ourselves**, and that is impossible"<sup>32</sup> याचा अर्थ असा :

“पण हे (सूक्ष्म जगातील अणूतून कणाचे बाहेर पडण्याविषयीचे) ज्ञान अनिश्चित बनते. कारण ते, ज्या अणुकेंद्रातून तो कण बाहेर पडतो, त्या अणुकेंद्राचा उर्वरित विश्वाशी होणाऱ्या आंतरव्यवहारावर अवलंबून आहे, म्हणून अनिश्चित बनते. समजा आम्हाला [उदा. त्या थ्रोडिंजरचे मांजर असलेल्या पेटीतील किरणोत्सारी तुकड्यातील अणूतून] अल्फा कण विशिष्ट वेळीच का बाहेर पडला हे जाणून घ्यावयाचे आहे. त्यासाठी मग आम्हाला स्वतःसह संपूर्ण जगाच्या सूक्ष्म (अतींद्रिय) रचनेचे ज्ञान करून घ्यावे लागेल. हे अर्थात् अशक्य आहे.” (ठळक अक्षरे नंतरची)

स्वतःसकट सर्व विश्वाच्या सूक्ष्म रचनेचे ज्ञान अशक्य आहे, असे येथे हायजेनबर्गने का म्हटले आहे ? त्याने विश्वाच्या सूक्ष्म रचनेत स्वतःचा का समावेश केला आहे ? कारण मानव हा विश्वाचा अविभाज्य भाग आहे. त्याला विश्वापासून अलग करता येत नाही. डेव्हिड बोहमने म्हटल्याप्रमाणे “Mind and matter are inseparable.” म्हणजे मानवी मन व भौतिक विश्व अविभाज्य आहेत. त्यांना एकमेकापासून वेगळे करता येत नाही. “Both (mental and physical) processes are essentially the same processes.” (म्हणजे ‘मानसिक आणि भौतिक प्रक्रिया अर्थतः-सारांशाने-एकच आहेत’) असे त्याने म्हटले आहे. कारण मानवी मनामुळेच भौतिक विश्वाला (भौतिक प्रक्रियांना) अर्थ (meaning) प्राप्त झाला आहे. म्हणून भौतिक विश्व समजण्यासाठी मनुष्याला प्रथम स्वतःला (स्वतःचा आत्मा) समजून घेतला पाहिजे. कारण (बोहमने म्हटल्याप्रमाणे) मानव हा स्वतःच या विश्वाच्या रंगमंचावरील नटही (actor) आहे आणि प्रेक्षकही (spectator) आहे. ‘नट’ म्हणजे ‘भौतिक विश्व’ आणि ‘प्रेक्षक’ म्हणजे ‘मानवी मन’ (आत्मा). (आकृती क्र. ३ पाहा.) या आकृतीत मानव विश्व पाहात आहे, म्हणजे खरे तर तो स्वतःलाच पाहात आहे. म्हणून विश्व समजून घ्यावयाचे तर प्रथम स्वतःलाच समजून घेतले पाहिजे; आणि हे अशक्य आहे. कारण स्वतःचे ज्ञान, म्हणजे आत्मज्ञान, भौतिक विश्व समजल्याने होणार नाही. भौतवैज्ञानिकांना भौतिक विश्वाचे खरे ज्ञान न होण्याचे कारण ते ज्ञान ते विश्वात (आपल्या बाहेर) शोधत आहेत. पण भौतिक विश्वात ते ज्ञान नाही. भौतिक विश्वाच्या ‘बाहेर’ (‘बहिः’) ते ज्ञान आहे-म्हणजे ते ‘आत’-‘आत्म्या’त-आहे. \* म्हणून रामदास स्वामी म्हणतात,

\* ही गोष्ट लिनक बार्नेट या लेखकाने पुढीलप्रमाणे सांगितली आहे: “Man does not understand the veiled vast universe into which he has been cast for the reason that he does not understand himself. He is thus his own greatest mystery.” *The Universe* adn Dr. Einstein (1956) Lincoln Barnett, with Foreword by Einstein, p 122.

एक ज्ञानाचे लक्षण । ज्ञान म्हणजे आत्मज्ञान ।

पाहावे आपणासि आपण । या नांव ज्ञान ॥ (दा. बो. ५.६.१)

हे ज्ञान 'आपणासि आपण पाहून' होते, हे खरे असले तरी 'आपणास-आत्म्यास'-आपणाला 'विश्वा'त पाहूनही ते होऊ शकते. कारण 'कणाकणा'त भगवान आहे आणि 'मनामना'तही भगवान आहे. पण 'कण' आणि 'मन' अविभाज्य आहेत, एकामुळे दुसऱ्याला अर्थ प्राप्त झाला आहे, हे विसरता येत नाही. पण या दोहोत अर्थ भरणारा वेगळाच-बहिश्च-आहे, हेही विसरून चालणार नाही. हे ओळखणारे फार थोडे शास्त्रज्ञ आहेत. वुल्फगॅंग पॉली हा त्यापैकी एक असून त्याची ओळख वाचकांना यापूर्वी झालेली आहे. अर्थपूर्ण घटना (synchronicity) कोणत्याही भौतिक कारणाशिवाय (अकारण, acausal) का व कशा घडतात हे सांगण्यासाठी कार्ल युंगने जो एक खास ग्रंथ लिहिला आहे, त्या ग्रंथाचा पॉली हा सहलेखक आहे. (संदर्भ क्र. २७३ पाहा.) पण अर्थपूर्ण घटना का वा कशा घडतात हे तो (पॉली) केवळ सांगत नाही, ते तत्त्व, प्रत्यक्षात तो आचरणात आणतो. आणि ते कसे आचरणात आणतो हेही आपण यापूर्वी पाहिले आहे. उदा. भौतशास्त्रज्ञांच्या प्रयोगशाळेतील उपकरणे केवळ मनाने (म्हणजे भौतिक कारणाशिवाय) मोडून पाडण्याची 'भानामती' करणारा (व अशारीतीने भौतिक जगात 'अर्थपूर्ण' घटना घडवून आणारा) तो एकमेव भौतशास्त्रज्ञ आहे. पण एवढीच त्याची ओळख नाही. तो अत्यंत तल्लख बुद्धीचा, भौतविज्ञानाचे अगाध ज्ञान असणारा शास्त्रज्ञ, असा त्याचा लौकिक होता. भौतविज्ञानाच्या त्याच्या या अगाध ज्ञानामुळे तो इतरांच्या चुका सहज दाखवून देत असे. आईन्स्टाइन व बोहरसुद्धा त्याच्या टीकेतून सुटू शकत नसत ! भौतविज्ञानाची सदसद्विवेकबुद्धी (conscience of physics) असे त्याला सार्थ (टोपण) नांव यामुळे मिळाले होते. शास्त्रज्ञांना लिहिलेल्या पत्रांच्या शेवटी तो Wrath of God (ईश्वरी क्रोध) अशी आपली सही करीत असे !<sup>१२९</sup> आईन्स्टाइनने त्याचे एके ठिकाणी इतके कौतुक केले आहे की असे कौतुक कोणत्याही शास्त्रज्ञाच्या वाट्याला आलेले नाही.<sup>१३०</sup>

विशेष म्हणजे पॉलीने भौतविज्ञानात जो शोध लावला आहे (व ज्याबद्दल त्याला नोबेल पारितोषिक मिळाले आहे) तो शोधही भौतविज्ञानात 'अर्थपूर्ण' घटना कशा घडतात हे सांगणाराच आहे ! हा शोध म्हणजे 'पॉलीचे 'exclusion' तत्त्व' होय. या तत्त्वामुळे भौतिक पदार्थांना 'टणकपणा' (भौतिकत्व) आला आहे. अणूतील इलेक्ट्रॉनच्या कक्षेत दुसरा इलेक्ट्रॉन पॉलीच्या या तत्त्वामुळेच प्रवेश करू शकत नाही. या तत्त्वाविषयी जेम्स जीन्स हा प्रसिध्द भौतशास्त्रज्ञ म्हणतो, "या (पॉलीच्या) exclusion तत्त्वामुळे स्थळात व काळात एक प्रकारची दुरून क्रिया

घडताना दिसते, जणू काही विश्वाच्या प्रत्येक भागाला त्याचे दुसरे दूरचे भाग काय करीत आहेत हे कळले आहे व त्यानुसार तो भाग आपले वर्तन ठरवतो आहे” (“The exclusion principle seems to imply a sort of action-at-a-distance in both space and time, as though every bit of the universe knew what other distant bits were doing and acted accordingly.”<sup>11</sup> विश्वाच्या प्रत्येक भागाला त्याचे दुसरे दूरस्थ भाग काय करीत आहेत हे कळते असे पॉलीचे तत्त्व सुचवत असेल तर पुन्हा प्रश्न निर्माण होतो की विश्वाच्या दूरस्थ भागाचे ज्ञान त्याच्या प्रत्येक भागाला कसे होते ? विश्व एकसंध, अविभाज्य असल्याचाच हाही पुरावा असून तो सादर करणारे पॉलीचे तत्त्व तोच पुरावा सादर करणाऱ्या इतर अनेक भौतिक तत्त्वांशी सुसंगतच ठरते. [उदा. माखचे तत्त्व (कपातील चहा), हायजेनबर्गचे अनिश्चिततेचे तत्त्व (किरणोत्सारी तुकड्यातून विशिष्ट वेळीच कण बाहेर पडणे), बोहरचे complementarity चे तत्त्व (‘कण’ व ‘तरंग’ अशा दोन्ही स्वरूपामुळे फोटॉनला दुसरी फट बंद असल्याचे कळणे), ईपीआरचे ‘विरोधाभासी’ तत्त्व (दूरस्थ इलेक्ट्रॉनचे परिवर्तन बदलणे.)] ही सर्व तत्त्वे भौतिक घटनांचे स्वरूप वैश्विक (global) असल्याचे सिद्ध करतात. म्हणजे सर्व भौतिक घटना एकसंध व अविभाज्यरीतीने घडतात, परस्परावलंबी आहेत, व म्हणून नियमबद्ध आहेत हे ती सिद्ध करतात. पण ह्या नियमबद्धतेचे कर्तृत्व (agency) भौतिक विश्वात सापडत नाही. म्हणजे ह्या घटना अशारीतीने घडण्याचे भौतिक कारण काय, हे भौतशास्त्रज्ञांना सांगता येत नाही. मानवी मनातही ते सापडत नाही. उदा. वर दिलेल्या उताऱ्यात हायजेनबर्गने म्हटले आहे की किरणोत्सारी तुकड्यातून (त्यातील एखाद्या अणूतून) एखादा अल्फा कण केव्हा उत्सर्जित होतो हे त्याच्या विश्वाच्या इतर भागाशी होणाऱ्या व्यवहारावर (विश्वात घडणाऱ्या इतर सर्व घटनांवर) अवलंबून आहे. त्या सर्व घटनांशी ती घटना संलग्न आहे. म्हणून त्याचे भाकीत मानवाला करता येत नाही. ते करावयाचे झाल्यास संपूर्ण विश्वाच्या व स्वतःच्याही सूक्ष्म (अर्तीद्रिय) अंतररचनेचे ज्ञान त्याला करून घ्यावे लागेल. हे अर्थात् अशक्य आहे, असे हायजेनबर्ग म्हणतो.

अशारीतीने किरणोत्सारी अणूतून एखादा कण बाहेर पडण्याची घटना वैश्विक (global) असली तरी ती भौतिकच आहे; आणि त्याच वेळी मानसिकही, (आध्यात्मिकही). कारण विश्व व मानव (mind and matter) अविभाज्य आहेत, त्या दोन्हीचे ज्ञान मानवाला होत नाही, याचे कारण त्याची या दोन्ही (भौतिक व आध्यात्मिक) जगावर सत्ता चालत नाही. ती सत्ता या दोन्ही जगांच्या बाहेर असलेल्या शक्तीमध्ये गृहीत धरावी लागते; आणि हे ब्रह्मवैज्ञानिक सत्य ओळखणारा वुल्फगाँग पॉली हा प्रमुख भौतशास्त्रज्ञ आहे. उदा. त्याने म्हटले आहे, “It seems to

me... that we must postulate a cosmic order of nature beyond our contro. to which both the outward material objects *and* the inward images are subject... *The ordering and regulating must be placed beyond the difference between 'physical' and 'psychical'* "132 (Italics in the original.) याचा अर्थ असा: "माझ्या दृष्टीने आपण अशी एक वैश्विक निसर्ग-व्यवस्था गृहीत धरली पाहिजे की जी आपल्या बाहेरील भौतिक जगावर आणि आपल्या आतील वैचारिक जगावर आपली अधिसत्ता सारखीच चालवते व जिच्यावर आपली कसलीही सत्ता चालत नाही... ही व्यवस्था व नियमबद्धता आपण समजतो त्या अर्थाने 'भौतिक' ही नाही व 'मानसिक' ही नाही. ती दोन्हींच्याही पलीकडची आहे." (तिरपी अक्षरे मुळातली.)

भौतिक व्यवस्था व मानसिक व्यवस्था (म्हणजे जीव व जगत्) यांच्यामध्ये नियमबद्धता निर्माण करणारी, त्या दोहोवर सारखीच सत्ता चालवणारी, त्या दोन्हींच्या पलीकडे व त्या दोहोहून भिन्न स्वरूप असलेली ही पॉलीने गृहीत धरलेली वैश्विक व्यवस्था (cosmic order) म्हणजे 'ईश्वर' च असून तीच भौतिक व जैविक (मानसिक) जगांना भौतिक कार्यकारणाच्या बाहेर, म्हणजे 'अर्थपूर्ण' संबंधाने, जोडते व तेच युंगच्या 'अर्थपूर्ण घटनात्मकते'चे (synchronicity चे) 'अकारण तत्त्व' (acausal connecting principle) आहे, असा पॉलीचा विश्वास आहे, असे हेन्री स्टॅप या भौतशास्त्रज्ञाने म्हटले आहे.<sup>133</sup> (अर्थात् 'ईश्वर' हा शब्द पॉलीने वापरलेला नाही. cosmic order हे त्याचे शब्द आहेत.)

येथे युंगचे 'अकारण तत्त्व' (acausal principle) क्वांटम भौतिकीतील chance ची (कार्यकारणभावाच्या अभावाची) जागा घेते. ती ते कसे घेते हे कळण्यासाठी एक उदाहरण घेऊ. मी माझा हात केवळ माझ्या इच्छेने वर करतो. या माझ्या शारीरिक घटनेला भौतिक कारण नाही, केवळ मानसिक कारण आहे. म्हणजे युंगच्या म्हणण्यानुसार ही एक 'अर्थपूर्ण' घटना आहे, कारण ती acausal (भौतिकदृष्ट्या) 'अकारण' आहे. (त्यात भौतिक कारणाचा अभाव आहे.) येथे भौतिक जगातील सूक्ष्म घटनेचे (मॅदूतील क्वांटम chance रुपी अनिश्चित भौतिक घटनेचे) स्थूल जगातील निश्चित घटनेत ('हाताचे वर करणे' यात) मनामुळे रूपांतर झाले आहे. ही घटना मन व शरीर यांची अविभाज्यता (indivisibility) सिध्द करते. म्हणजे मन व शरीर यांच्यामधील संबंध स्थानभेदविरहित (non-local) असल्याचे दाखवून देते. कारण जे 'येथे' (शरीरात) घडते ते 'तेथे' (मनात) घडण्यावर अवलंबून आहे. तसेच दोन्ही (भौतिक व मानसिक) घटना एकसमयाच्छेदेकरून घडतात. येथे 'बंद पेटीतील मांजर' म्हणजे 'अदृश्य मन' (अतींद्रिय सत्य) होय. ते सूक्ष्म (अतींद्रिय) जगातील 'अकारणता' (क्वांटम

chance) प्रतिबिंबित करते; व बंद पेटी उघडून मांजर पाहणे हे 'दृश्य जगातील हात वर करणे' आहे. ते स्थूल जगातील कार्यकारणभावावर आधारलेले भौतिक सत्य आहे. येथे 'क्वांटम chance' दुहेरी कार्य करताना दिसते. ते सूक्ष्म जगातील 'मन' - 'अतींद्रिय सत्य' - लपविते व स्थूल जगातील 'हात वर करणे' - 'भौतिक सत्य' - उघडे करते. हेनरी स्टॅप या भौतशास्त्रज्ञाच्या शब्दात "The play of quantum chance acts both to veil the form of fundamental reality and to unveil the form of empirical reality."<sup>13</sup> (येथे स्टॅपची fundamental reality म्हणजे मूलभूत सत्य 'मन' आहे व त्याची empirical reality म्हणजे व्यावहारिक सत्य 'हात वर करणे' आहे.)

आता 'भौतिक शरीरा' च्या जागी 'भौतिक विश्वा'ची कल्पना करा व 'मानवी मना' च्या जागी 'विश्वमना'ची ('ईश्वर' वा 'महत्' याची) कल्पना करा. म्हणजे भौतिक विश्वात 'अर्थपूर्ण घटना' कशा घडतात हे कळेल. उदा. शरीरात जशी मनामुळे 'हात वर करण्या'ची 'अर्थपूर्ण घटना' घडते. तशी (भौतिक) विश्वात विश्वमनामुळे ('महत्' वा ईश्वरामुळे) एक एप्रिल (एप्रिल फिश) या दिवशी फिशवर (मासा या विषयावर) संशोधन करणाऱ्या युंगला 'मासा दिसण्या'ची 'अर्थपूर्ण घटना' घडते. ती का वा कशी घडते, हे आता कळेल. 'हात वर करणे' ही 'अर्थपूर्ण घटना' माझ्या मनामुळे मज्जातंतूद्वारा, म्हणजे भौतिक (कार्यकारणाच्या) माध्यमातून, घडते. युंगला 'एप्रिल फिश'च्या दिवशी 'मासा दिसणे' ही 'अर्थपूर्ण घटना' विश्वमनामुळे 'सहानुभूतियुक्त अनुकंपना'च्या (sympathetic vibrations) द्वारा (म्हणजे अभौतिक-मानसिक-कार्यकारणाच्या) माध्यमातून घडते, हा फरक आहे. येथे (मानवी शरीराप्रमाणे) भौतिक संबंध (connection) दिसून येत नाही (वास्तविक मानवी शरीरातही मन व मेंदू यामध्ये भौतिक संबंध-connection-दिसून येत नाही). तथापि मानसिक वा अतींद्रिय संबंधरूपी कार्यकारणभाव दोन्ही उदाहरणात दिसून येतो. अशारीतीने मानवी शरीरात मानवी मनामुळे 'अर्थपूर्ण घटना' घडतात व भौतिक विश्वात (ईश्वराच्या शरीरात) विश्वमनामुळे-म्हणजे ईश्वरामुळे-(पण युंग सारख्याच्या मानवी मनातूनच) 'अर्थपूर्ण घटना' घडतात. दोन्ही उदाहरणात मानसिक कार्यकारणभाव असल्यामुळेच 'अर्थपूर्ण घटना' घडलेल्या आहेत, हे स्पष्ट आहे.

याचा अर्थ भौतिक कार्यकारणातून घडणाऱ्या घटना 'अर्थपूर्ण' नसतात असा होत नाही. उदा. किरणोत्सारी पदार्थातून एखादा कण केव्हा बाहेर पडतो हे भौतशास्त्रज्ञांना सांगता येत नाही; कारण ही सूक्ष्म जगातील क्वांटम chance- अकारण-घटना आहे, हे खरे असले तरी, ती घटना त्या पदार्थाचे आयुष्य (half-life) ठरवत असल्यामुळे, स्थूल जगात शास्त्रज्ञांना त्या पदार्थाचे आयुष्य किती आहे, याचे

१००% टक्के (निश्चित) भाकीत करता येते (याला Statistical prediction म्हणतात.) हे मागे सांगितले आहे. सूक्ष्म जगातील एखादा कण केव्हा बाहेर पडेल हे भौतशास्त्रज्ञांना सांगता न येण्याचे कारण ती वैश्विक घटना आहे, म्हणजे विश्वातील (मानवासह) इतर सर्व घटनांवर ती अवलंबून आहे; म्हणजेच तीसुद्धा (मानवी 'मना'सह असल्यामुळे) 'अर्थपूर्ण घटना'च आहे, हे स्पष्ट आहे; आणि हेही हायजेनबर्गचा उतारा देऊन वर सांगितले आहे. (पृ.५५३) हायजेनबर्गने मानवासह (including ourselves) असे जे शब्द वापरले आहेत ते महत्त्वाचे आहेत. ते हे सूचित करतात की किरणोत्सारी पदार्थातून एखादा कण बाहेर पडण्याची घटना ही भौतिक असली तरी ती मानवी 'मन' निरपेक्ष (independent of human consciousness) नाही. तिचा त्या घटनेतील मनाचा (कार्यकारण) संबंध माझे 'हात वर करणे' किंवा युंगला 'एप्रिल फिश' च्या दिवशी 'मासा दिसणे' या घटनाप्रमाणे स्पष्ट दिसून येत नाही, इतकेच. कारण ती घटना कोणाही एका विशिष्ट व्यक्तीच्या मनातून घडत नाही. म्हणजे त्यामध्ये 'सहानुभूतियुक्त अनुकंपना'चा (sympathetic vibrations चा) अभाव आहे. कारण ती 'वैश्विक' (cosmic) आहे. तथापि ती निष्कारण (अकारण) नाही. ती माझे 'हात वर करणे' किंवा युंगला 'एप्रिल फिश'च्या दिवशी 'मासा दिसणे' या घटनांइतकीच 'अर्थपूर्ण' आहे, सकारण आहे आणि मानसिकही आहे. कारण ती **विश्वमनामुळे** (अर्थात् मानवी मनासह) घडते; म्हणजे तीही 'मानसिक' घटनाच आहे-एवढेच की ती 'विश्वमानसिक' आहे-म्हणजे ईश्वराच्या मनातून व तद्द्वारा **सर्वांच्या** मनातून घडणारी ती घटना आहे. ('विश्व' या संस्कृत शब्दाचा अर्थ 'सर्व' असा आहे. पाहा, आपट्यांची The Student's Sanskrit English Dictionary.)

वरील विवेचनावरून हे लक्षात येईल की विश्वातील कोणतीही घटना (जरी ती सूक्ष्म क्वांटम जगातील एखादी chance घटना-म्हणजे तथाकथित 'अकारण' घटना असली तरी) वास्तविक निष्कारण-अकारण-नसते. प्रत्येक घटनेला वैश्विक संदर्भ आहे. वैश्विक अर्थ आहे. अशारीतीने क्वांटम सिद्धांत या विश्वात 'योगायोग' नावाची गोष्टच नाही, हे ब्रह्मवैज्ञानिक सत्य chance मधूनच, कार्यकारणभावाच्या अभावातूनच, म्हणजे एका विरोधाभासातूनच उचलून धरतो-सिद्ध करतो ! \*

पॉली व स्टॅप हे भौतशास्त्रज्ञ असल्यामुळे ब्रह्मविज्ञानातील 'ईश्वर' किंवा 'विश्वमन' (महत्) हे शब्द ते वापरत नाहीत. त्याऐवजी 'वैश्विक नियमबद्धता

\* ल्युसिप्पस या प्राचीन ग्रीक तत्त्ववेत्त्याने म्हटले आहे की "या जगात काहीही निष्कारण घडत नाही, आवश्यकतेमुळेच घडते." ("Naught happens for nothing but everything from a ground and of necessity." Leucippus, A History of Western Philosophy (1945) B Russell, p. 66.

निर्माण करणारी व्यवस्था किंवा तत्त्व' (cosmic organising and regulating principle or order) असे शब्द ते वापरतात. पण त्यामुळे काही फरक पडत नाही. ब्रह्मवैज्ञानिक सत्य ते भौतवैज्ञानिक भाषेत मांडतात इतकेच.

ज्या (किरणोत्सारासारख्या) घटना युंगच्या अर्थाने, म्हणजे मानसिक कारणामुळे, 'अर्थपूर्ण घटना' नसतात, भौतिक कारणामुळे, म्हणजे विश्वमनामुळे घडतात, त्या घटनासुद्धा 'अर्थपूर्ण'च असतात, हे वरील विवेचनावरून वाचकांच्या लक्षात येईल. युंगने 'अर्थपूर्ण घटनात्मकता' हे ईश्वराचे निर्मितीकृत्य (act of creation) मानले आहे. (पाहा. पृ. ४९४) (स्टॅपने सर्वच मानसिक घटना निर्मितीकृत्य मानल्या आहेत.) तरीही अर्थपूर्ण घटना युंगने (आणि स्टॅपनेही) अपवादात्मक मानल्या आहेत. आणि त्याचे कारण त्या भौतिक कार्यकारणाच्या 'बाहेर' घडतात व क्वांटम सिद्धांतातील chance [किंवा statistical (सांख्यिकीय) कार्यकारण] अशा घटनाना जागा करून देते, हे आहे, असे त्याने म्हटले आहे. (पाहा, पृ. ४९५ तळटीप) पण संपूर्ण विश्वच ईश्वराचे 'निर्मितीकृत्य' असल्यामुळे, व क्वांटम सिद्धांताने सर्व विश्व हे अविभाज्य असल्याचे दाखवून दिलेले असल्यामुळे त्यातील सर्वच घटना (तथाकथित कार्यकारणभावाने युक्त असलेल्या नियमित-regular-भौतिक घटनासुद्धा) अर्थपूर्णच मानल्या पाहिजेत, हे उघड आहे. वरील विवेचनावरून ही गोष्ट आता वाचकांना अधिक स्पष्ट झालेली असेल. तथापि ज्या ('माशा' सारख्या) घटना विशिष्ट व्यक्तींच्या मानसिक अवस्थेमुळे 'सहानुभूतियुक्त अनुकंपना'तून (sympathetic vibrations मधून) घडतात व 'अर्थपूर्ण' असतात, त्या युंगच्या अर्थाने 'अपवादात्मक' मानता येतील. (यद्यपि त्या वरील विवेचनाच्या प्रकाशात, म्हणजे 'वैश्विक' दृष्टीने अपवादात्मक नाहीत.) पाश्चात्य शास्त्रज्ञांना कर्मसिद्धांताचा (ब्रह्म) वैज्ञानिक परिचय नसल्यामुळे-म्हणजे भौतिक विश्वातसुद्धा कर्माचे कार्य (मानवी जीवनाप्रमाणे) चालते हे माहीत नसल्यामुळे-त्यांनी भौतिक व मानसिक जगांची फारकत केली आहे व 'मानसिक' घटना ह्या भौतिक जगाच्या कार्यकारणभावातील 'अपवाद' मानला आहे. म्हणजे त्या घटना भौतिक जगात 'अनियमित'पणे घडणाऱ्या (anomalous) घटना मानल्या आहेत; आणि त्या मानवी 'मना'च्या संदर्भात म्हणजे भौतिक कार्यकारणाच्या 'बाहेर' घडतात म्हणून 'अर्थपूर्ण' मानल्या आहेत. अशा घटनातून भौतिक विश्वातील 'अर्थपूर्णता' मानवाच्या खास नजरेला येते, ही गोष्ट निःसंशय खरी आहे. म्हणून हेन्री स्टॅप म्हणतो की "अर्थपूर्ण घटना घडताना मूलभूत (अतींद्रिय) सत्य पडद्यामागे लपवणाऱ्या क्वांटम 'अकारणते'चा-chance चा-पडदा थोडा बाजूला सारला जातो व मूलभूत अतींद्रिय सत्याचे ओझरते दर्शन माणसाला घडते." \* (पृष्ठ ५६१ वर तळटीप पाहा.) पण याचा अर्थ भौतिक घटना 'अर्थपूर्ण' नाहीत असा होत नाही. (मागे दिलेल्या हायजेनबर्गच्या



उत्तान्यात हायजेनबर्गने 'मानवाचा समावेश' करून हे स्वतःच मान्य केले असल्याचे आपण पाहिले आहे.) विश्व अविभाज्य आहे, ही क्वांटम भौतिकीची वस्तुस्थितीच सांगते की संपूर्ण विश्व अर्थपूर्ण आहे. मानवी शरीरातील सर्व घटना जशा शरीर अविभाज्य असल्यामुळे (त्यातील सर्व घटना परस्परावलंबी असल्यामुळे) अर्थपूर्ण असतात, तशा विश्वातील सर्व घटना विश्व अविभाज्य असल्यामुळे (म्हणजे त्यातील सर्व घटना परस्परावलंबी असल्यामुळे) अर्थपूर्णच असतात. (विश्व हे ईश्वराचे शरीरच आहे. पाहा, पृ. ४९३ व ४९५).

आईन्स्टाइनने क्वांटम सिध्दांत अपुरा मानल्यामुळे विश्व हे नाटक आहे हे त्याला कळले नाही. बोहरने तो सिध्दांत विश्वाचा पूर्ण सिध्दांत मानल्यामुळे त्याने ही गोष्ट ओळखली. पण त्याच्या पलीकडे तो जाऊ शकला नाही. पॉलीने मात्र या नाटकाच्या पलीकडे जाऊन मानवाला ज्ञात असलेल्या भौतिक व मानसिक या दोन्ही जगाच्या पलीकडील-म्हणजे मानवाला अज्ञात असलेल्या-तत्त्वाच्या वा व्यवस्थेच्या हातात या नाटकाची सूत्रे असल्याचे ओळखले व भौतविज्ञानाची सदसद्विवेकबुद्धी (conscience of physics) हे आपले बिरुद त्याने सार्थ केले. पॉलीकडे भौतशास्त्राचे केवळ अगाध ज्ञानच नव्हते, तर अंतःप्रज्ञाही (intuition) होती, हे त्याने या कृतीने दाखवून दिले आहे.\*\*

## क्वांटम सिध्दांत आणि नियतीवाद

अॅस्पेक्टच्या प्रयोगात लाखो प्रकाशवर्षे अंतरावरील इलेक्ट्रॉनचे परिवलन आम्ही पृथ्वीवरील इलेक्ट्रॉनचे मापन करून ठरवतो (किंवा बदलू शकतो) असे मागे सांगितले आहे. याचा अर्थ जे 'तेथे' घडते ते 'येथे' (पृथ्वीवर) घडण्यावर अवलंबून आहे, असा होतो. (कारण विश्व अविभाज्य आहे.) पण याचा अर्थ असा होतो की जे 'येथे' (पृथ्वीवर) घडते, ते तेथे (लाखो प्रकाशवर्षे अंतरावर) जे घडते त्यावरही अवलंबून आहे. म्हणजे तेथील 'धन' परिवलन येथील 'ऋण' परिवलनावर जसे

\* (तळटीप ५६० वरून) "The play of quantum chance acts to veil the form of fundamental reality and to unveil the form of empirical reality. However if causal anomalies actually appear then the veil has been pushed aside, we have been offered a glimpse of the deeper reality." Mind, Matter and Quantum Mechanics, p 181

\*\* डेव्हिड बोहमनेही आईन्स्टाइनप्रमाणेच क्वांटम सिध्दांत अपुरा आहे, असे मानले होते, तथापि त्याच्या पलीकडे जाऊन त्यामध्ये दडलेला कार्यकारणभाव शोधण्याच्या प्रयत्नात (त्या टोलनाका चुकवू पाहणाऱ्या गाडीवानाप्रमाणे) त्यालाही अध्यात्मविज्ञानाकडेच शेवटी यावे लागले, हे यापूर्वी दिलेले त्याचे उतारे दाखवून देतात. त्याला कसे यावे लागले, हे स्थळाभावी येथे दाखवून देत आलेले नाही, याची वाचकांनी कृपया नोंद घ्यावी.

अवलंबून आहे, तसे येथील 'ऋण' परिवलन तेथील 'धन' परिवलनावर अवलंबून आहे, असाही याचा अर्थ होतो. विश्व अविभाज्य आहे याचा अर्थ विश्वातील सर्व घटना एकमेकावर अवलंबून आहेत असा आहे. याचा अर्थ असा की मानव विश्वाचा अविभाज्य घटक असल्यामुळे त्याच्या हातून घडणारी कोणतीही एखादी घटना (कृती) विश्वात घडणाऱ्या इतर सर्व घटनांवर अवलंबून आहे. त्यांच्यामध्ये परस्परसंबंध आहे. दुसऱ्या शब्दात, मानवाचे इच्छास्वातंत्र्य व कृतिस्वातंत्र्य हे विश्वातील इतर सर्व घटकांच्या इच्छा व कृतिस्वातंत्र्याशी निगडीत आहे; ते सापेक्ष आहे, निरपेक्ष (absolute) नाही. याचा अर्थ आम्ही 'येथील' इलेक्ट्रॉनचे परिवलन 'धन' केले असते तर तेथील इलेक्ट्रॉनचे परिवलन 'ऋण' झाले असते, हे खरे असले तरी तसे करणे इतर वैश्विक घटनांमुळे शक्य नाही, असे क्वांटम (अविभाज्य विश्वाचा) सिध्दांत सांगतो. ज्या शोधाचे वर्णन हेन्री स्टॅप या भौतशास्त्रज्ञाने 'भौतशास्त्रातील सर्वात अगाध (most profound) शोध' असे केले आहे, त्या शोधाचा जनक स्वतः जे.एस्.बेल याच्याच शब्दात हे सांगायचे तर, "One of the ways of understanding [quantum theory] is to say that the world is **superdeterministic**. That not only is inanimate nature deterministic, but we, the experimenters who imagine we can choose to do one experiment rather than another, are also determined."<sup>11</sup> (Bold type added) याचा अर्थ असा : "विश्वातील सर्व घटना अगोदरच ठरून गेल्या आहेत असे क्वांटम सिध्दांत सांगतो, असे एका दृष्टीने म्हणता येईल. याचा अर्थ असा की जड (निर्जीव) वस्तूनाच नव्हे, तर कोणताही प्रयोग करण्यास आम्ही पूर्ण स्वतंत्र आहोत असे समजणाऱ्या आम्हा (मानवी) प्रयोगकर्त्यांनासुद्धा (वास्तविक) कसलेही स्वातंत्र्य नाही. आम्ही काय करावे हे अगोदरच ठरून गेले आहे. (असे क्वांटम सिध्दांत सांगतो.)" (ठळक अक्षरे नंतरची.) याचा अर्थ असा की वरील प्रयोगात "आम्ही येथील इलेक्ट्रॉनचे परिवलन 'धन' केले असते तर...." असे आम्हाला म्हणता येणार नाही ! कारण आम्ही ते 'ऋण' करणे अगोदरच ठरून गेले आहे ! ते 'धन' करण्यास आम्हाला स्वातंत्र्य नाही. सर्व गोष्टी अगोदरच ठरून गेल्या आहेत याचा हा अर्थ आहे. यालाच नियतीवादही (predestination) म्हणतात; सर्व काही अगोदरच ठरवून दिल्याप्रमाणे ज्यामध्ये घडते त्यालाच नाटकही म्हणतात, हे यापूर्वी सांगितले आहे. कारण नाटकाचे कथानक सर्व तपशीलासह अगोदरच लिहून ठेवलेले असते व त्याप्रमाणे रंगभूमीवर ते नाटक रंगविण्यात येते. विश्व हे एक नाटक आहे असे ब्रह्मविज्ञान सांगते. क्वांटम सिध्दांत त्याचाच पुरस्कार कसा करतो, हे आता वाचकांच्या लक्षात येईल ! वर दिलेल्या बेलच्या उद्धरणात superdeterministic हा शब्द त्याने वापरलेला आहे या वस्तुस्थितीकडे वाचकांचे मुद्दाम लक्ष वेधू इच्छितो. याचा अर्थ 'सर्व काही अगोदरच ठरवून दिल्याप्रमाणे घडते' असा आहे, हे तर झालेच. पण हा

अर्थ deterministic या शब्दाच्या अर्थाहून वेगळा आहे, हे लक्षात ठेवावे. deterministic या शब्दाचा अर्थ 'अगोदर ठरल्याप्रमाणेच घडते' असाच असला तरी त्यामध्ये 'वेगळे ठरविले असते तर वेगळे घडले असते' हा अर्थ अध्याहृत आहे. याच्या उलट superdeterministic या शब्दात 'वेगळे ठरवताच येत नाही, प्रत्यक्ष जसे घडताना दिसते तसेच घडणे ठरून गेले आहे' हा अर्थ दडलेला आहे, हे वाचकांनी लक्षात घ्यावे.<sup>११</sup> ही गोष्ट क्वांटम सिध्दांत ब्रह्मविज्ञानाच्या आणखी एका सिध्दांताला पुष्टी देतो, हे दाखवून देते. ऋग्वेदात धाता यथापूर्वमकल्पयत् । (ऋ. १०.१९०.३) म्हणजे ब्रह्माने पूर्वी (ठरल्या)प्रमाणे (नवी) सृष्टी निर्माण केली, म्हणजे त्यात बदल केला नाही, असे म्हटले आहे. याचा अर्थ वर सांगितल्याप्रमाणे विश्व superdeterministic आहे, असा होतो ! येथे क्वांटम सिध्दांत (भौतिक विज्ञान) आणि ब्रह्मविज्ञान पुन्हा एकत्र येताना दिसतात !

क्वांटम सिध्दांतानुसार विश्वाचे स्वरूप अगोदरच कसे ठरून गेले आहे हे कळण्यासाठी 'ईपीआर' यांच्या प्रयोगाचे स्वरूप पुन्हा एकदा पाहणे जरूर आहे. या प्रयोगातील अणूतून बाहेर पडलेल्या व परस्पर विरुद्ध दिशांना जाणाऱ्या दोन्ही इलेक्ट्रॉन्सचे परिवलन (spin) परस्परावलंबी (अविभाज्य) असल्याचे व अगोदरच ठरून गेले असल्याचे आढळून येते. विश्व हे महास्फोटातून (Big Bang) निर्माण झाले असल्याचा आधुनिक विश्वोत्पत्तिशास्त्राचा (cosmogony) सिध्दांत आहे. त्यामुळे त्या स्फोटातून बाहेर पडलेल्या सर्व कणांचेही स्वरूप असेच परस्परावलंबी व अविभाज्य असल्यामुळे ते अगोदरच ठरून गेले आहे, त्यात बदल करणे/होणे शक्य नाही, असा याचा अर्थ होतो. अशारीतीने क्वांटम सिध्दांतानुसार विश्व superdeterministic आहे.

क्वांटम सिध्दांताच्या या निष्कर्षाला आईन्स्टाइनचा सापेक्षता सिध्दांतही बळकटी देतो. सापेक्षता सिध्दांतानुसार स्थलकालाचा आकृतिबंध अगोदरच ठरून गेला आहे. म्हणजे कालाचा प्रवाह भूतकालाकडून भविष्यकालाकडे 'वाहत' नाही. म्हणजेच घटना 'घडत' नाहीत. त्या अगोदरच घडलेल्या असतात. त्यांना आपण फक्त 'भेटत' असतो. मागे ऑलिव्हर लॉज या भौतशास्त्रज्ञाने हे कळण्यासाठी दिलेल्या आगगाडीच्या उदाहरणाचा उल्लेख आला आहे. (पृ. ५१०) आगगाडीतून प्रवास करणारे आम्ही स्टेशन 'आले' असे म्हणतो. पण वस्तुतः आम्हीच स्टेशनात येतो. स्टेशन आहे तेथेच असते. स्टेशन कधीच 'येत' नाही. त्याचप्रमाणे घटना कधीच 'घडत' नाहीत, त्या अगोदरच घडलेल्या असतात. आम्ही त्यांना भेटत असतो, इतकेच. अशारीतीने सापेक्षता सिध्दांत सांगतो की स्थलकालातील घटना अगोदरच घडलेल्या असून-गुंडाळलेल्या फिल्मच्या रिळातील चित्राप्रमाणे त्या स्थिर असून-आमची संसारी 'जाणीव' (consciousness) त्यांना गती देणाऱ्या 'प्रोजेक्टर'चे (प्रक्षेपणाचे) काम करते !\* (तळटीप पृ. ५६४ वर)

अशारीतीने क्वांटम सिध्दांताचे (व ब्रह्मविज्ञानाचे) या विश्वाचा इतिहास अगोदरच ठरलेला आहे, हे म्हणणे, आधुनिक भौतशास्त्राचा दुसरा आधारस्तंभ असलेला सापेक्षता सिध्दांतही उचलून धरतो !<sup>११७</sup>

### क्वांटम सिध्दांत आणि परामानसशास्त्र

परामानसशास्त्र हे बाल्यावस्थेतील अतींद्रियविज्ञान आहे. परामानसशास्त्राचे काही टीकाकार परामानसशास्त्राला सैध्दांतिक आधार नाही, अशी टीका करतात, आणि ती बरोबर आहे. कारण परामानसशास्त्रातील प्रयोग भौतिक शास्त्राप्रमाणे कुठल्याही सिध्दांतावर अधिष्ठित नाहीत. तथापि त्या शास्त्रातील प्रयोगाधिष्ठित वास्तवे कोणीही नाकारू शकत नाही. कोणतेही शास्त्र हे प्रयोगाधिष्ठित वास्तवावर आधारलेले असल्यामुळे परामानसशास्त्रातील प्रयोगाधिष्ठित वास्तवे (experimental facts) त्या शास्त्राचा पायाच ठरतात, आणि त्यावर त्या शास्त्राचा सिध्दांत रचता येतो. पण या सिध्दांतासाठी लागणारी वैचारिक चौकट-तत्त्वज्ञान-(योगशास्त्राप्रमाणे) पाश्चात्य परामानसशास्त्राकडे नसल्यामुळे ते शास्त्र बिनबुडाचे (अर्थात् सैध्दांतिकदृष्ट्या) आहे असेच म्हणावे लागत होते. 'होते' म्हणण्याचे कारण आता मात्र क्वांटम सिध्दांताने ही सैध्दांतिक चौकट परामानसशास्त्राला पुरवलेली दिसून येते.

भौतशास्त्रातील क्वांटम सिध्दांत ब्रह्मविज्ञानाला भौतशास्त्रीय पुष्टी देतो हे आपण वर पाहिले आहे. याचा अर्थ तो परामानसशास्त्राला-अतींद्रिय विज्ञानालाही पुष्टी देतो, असा होतो. कारण अतींद्रिय विज्ञान ही ब्रह्मविज्ञानाचीच शाखा आहे, हे योगसिध्दी व इतर तथाकथित 'चमत्कारां' ची जी सोदाहरण चर्चा या ग्रंथात यापूर्वी केली आहे, त्यावरून वाचकांच्या लक्षात आलेच असेल. क्वांटम सिध्दांतानुसार विश्व अविभाज्य किंवा एकात्म आहे, हे आपण वर पाहिले आहे. *एकात्म विश्वात सर्व घटना परस्परावलंबी असतात-प्रत्येक वस्तू इतर प्रत्येक वस्तूशी (अंतर्गत संबंधाने, आत्मस्वरूपाने) जोडलेली असते.* त्यामुळे अशा विश्वात विचारसंक्रमण (telepathy), दूरदर्शन (clairvoyance), दूरवस्तुसंचलन (psychokinesis) म्हणजे मन:सामर्थ्याने दूरच्या भौतिक वस्तूवर परिणाम होणे (उदा. भामानती, इतरांचे

\* (तळटीप पृ. ५६३ वरून) "(According to relativity) the entire space-time must indeed be definite 'There can be no 'uncertain' future. The whole of space-time must be fixed, without any scope for uncertainty... There is no flow of time at all " "It is not just a matter of the future being determined by the past; the entire history of the universe is fixed for all time " The Emperor's New Mind (1987) Roger Penrose, pp. 304, 432 (Italics in the original) याचा भावार्थ असा की 'कालप्रवाह' खोटा आहे व स्थलकाल निश्चित आहे व त्यात घडणारा इतिहास अगोदरच ठरलेला आहे.

किंवा स्वतःचे रोग बरे करणे इ.) यासारख्या घटना स्वाभाविक ठरतात. त्यांना 'चमत्कार' म्हणता येत नाही. त्या नेहमी न घडण्याचे कारण त्यासाठी आवश्यक असलेल्या सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांचा अभाव, हे असते. रेडियो, दूरदर्शन या यंत्रात जसे विद्युत्चुंबकीय तरंग निर्माण करून त्याद्वारा संदेश, चित्रे इ. पाठवली जातात तसे मानसिक (अर्तीद्रिय) तरंगांच्याद्वारा हेच काम होऊ शकते. मात्र त्यासाठी योग्य मनोभूमिका निर्माण करणे आवश्यक असते. ती कशी निर्माण होऊ शकते, हे पातजल योगसूत्रात सांगितले आहे. पाश्चात्यांना त्याची ओळख नसल्यामुळे ते उपजत अर्तीद्रिय सामर्थ्य असलेल्या व्यक्ती निवडून व त्यांच्यावर प्रयोग करून किंवा कृत्रिम भौतिक साधने वापरून ह्या गोष्टी सिध्द करण्याचा प्रयत्न करतात. अशा काही प्रयोगांची माहिती विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथात दिली आहे. त्यावरून मानवी मन भौतिक जगातील स्थलकालाची मर्यादा ओलांडू शकते, हे सिध्द होते. *विश्व एकात्म असल्यामुळे हे शक्य होते, असे ब्रह्मविज्ञान सांगते.* आता भौतवैज्ञानिक प्रयोगांनीही तीच गोष्ट सिध्द झालेली असल्यामुळे, भौतवैज्ञानिकांना अशा घटनांना आता अविश्वसनीय (किंवा 'चमत्कार') म्हणून डावलता येणार नाही-त्या खोट्या म्हणता येणार नाहीत, हे उघड आहे. अलीकडे स्वतः काही भौतशास्त्रज्ञ व मज्जाशास्त्रज्ञ यांनीच सामान्य लोकांवर म्हणजे 'उपजत अर्तीद्रिय सामर्थ्य नसलेल्या' लोकांवर-प्रयोग करून भौतिक विश्व अविभाज्य किंवा एकात्म कसे आहे, हे दाखवून दिले आहे.

रसेल टार्ग व हॅरोल्ड पुथॉफ या भौतशास्त्रज्ञांनी एका खोलीतील व्यक्तीच्या डोळ्यात विजेचा प्रकाश पाडला (चमकवला) असता दुसऱ्या खोलीतील व्यक्तीच्या मेंदूतील विद्युत्क्रिया नोंदविणाऱ्या यंत्रावर-EEG वर-त्याची नोंद झाल्याची आढळून आली.<sup>३३८</sup> डगलस डीन या शास्त्रज्ञाला एक व्यक्ती एका खोलीत बसून अज्ञात लोकांची नावे असलेल्या यादीतील नावे वाचत असतांना दुसऱ्या खोलीतील व्यक्तीच्या बोट्यातील रक्तप्रवाह मोजणाऱ्या यंत्रावर (plethysmograph) त्या दोघांच्याही परिचयाच्या व्यक्तीचे नाव वाचनात येताच रक्तप्रवाहात बदल झाल्याचे आढळून आले.<sup>३३९</sup> हे दोन्ही प्रयोग हे दाखवून देतात की एका व्यक्तीच्या शरीरातील बदल दुसऱ्या दूरस्थ व्यक्तीच्या शरीरात तसलाच बदल घडवून आणतो, आणि एका व्यक्तीच्या मनाचा व शरीराचा दुसऱ्या दूरस्थ व्यक्तीच्या शरीराशी व मनाशी साक्षात् संबंध जोडला जातो. (हे 'ईपीआर' यांच्या प्रयोगातील 'येथील' इलेक्ट्रॉनचे परिवलन बदलताच 'तेथील' इलेक्ट्रॉनचे परिवलन तत्काळ बदलण्यासारखे आहे.) दूरस्थ व्यक्तीमध्ये सहानुभूतियुक्त अनुकंपने (sympathetic vibrations) कशा घडतात, याचाही या शुध्द भौतिक शारीरिक परिणामाच्या प्रयोगावरून उलगडा

होतो.

**जन्मोषधिमंत्रतपःसमाधिजाः सिध्यः ।** असे एक पांतजल योगसूत्र आहे. (यो.सू. ४.१) याचा अर्थ जन्म, औषधी (वनस्पती), मंत्र, तप व समाधी अशा पाच प्रकारांनी सिध्दी ('चमत्कार' सामर्थ्य) प्राप्त होतात असा आहे. यापैकी जन्मजात (उपजत) अतींद्रिय सामर्थ्य असलेल्या व्यक्तीवर पाश्चात्यांचा भर आहे. याच्या उलट त्या प्रकारांबरोबरच इतर प्रकारांचाही आपल्याकडे प्राचीन काळापासून वापर केला जातो. प्राचीन वा प्राथमिक अवस्थेतील रानटी टोळ्यामध्ये 'शमन' नांवाचे वैद्य असून त्यांना निरनिराळ्या वनस्पतींच्या औषधी गुणांचे ज्ञान असल्याचे आढळून येते. हे (आयुर्वेदिक) ज्ञान त्यांना कसे प्राप्त झाले, हा आधुनिक मानवशास्त्रज्ञांच्या (anthropologists) संशोधनाचा विषय बनला असून त्यावर अनेक ग्रंथ लिहिले गेले आहेत. त्यापैकी मायकेल हार्नर याचे *The Way of the Shaman* (1980) हा ग्रंथ महत्त्वाचा आहे. त्याने पेरू देशातील अमेझोन खोऱ्यातील कोनिबो लोकामध्ये प्रत्यक्ष राहून अनुभव घेतला. ते लोक 'आयाहुआस्का' नावाचा विशिष्ट वनस्पतींच्या मिश्रणातून तयार केलेला रस पितात व अतींद्रिय ज्ञान मिळवतात असे त्याला आढळून आल्यामुळे त्याने स्वतः त्या रसाचे पान करून जो अनुभव घेतला तो विलक्षण आहे. त्यालाही त्या रसपानानंतर *कोनिबो लोकांच्या देवांचे व राक्षसांचे प्रत्यक्ष दर्शन झाले* व त्यांनी त्याला या पृथ्वीच्या 'खऱ्या' इतिहासाची-पृथ्वीवर जीवन कसे उत्क्रांत झाले-याची प्रत्यक्ष दर्शनातून व विचाररूपी भाषेतून माहिती दिली. हार्नेल म्हणतो की ते देव व राक्षस (dragons) सापासारखे व DNA या पृथ्वीवरील सर्व जीवनाचे अधिष्ठान असलेल्या रासायनिक घटकांच्या (सूत्राच्या) आकाराचे त्यावेळी-म्हणजे १९६१ साली-त्याला प्रत्यक्ष 'दिसले'. पण त्यावेळी त्याला DNA ची अजीबात माहिती नव्हती; ती नंतर खरी आहे, हे त्याला कळले.

अमेझोन खोऱ्यातील आशार्निका नावाच्या दुसऱ्या एका जमातीत बरेच दिवस राहून असाच अनुभव घेणारा दुसरा मानवशास्त्रज्ञ म्हणजे जेरेमी नाबी हा होय. त्याने आपल्या अनुभवावर *The Cosmic Serpent - DNA-And the Origins of Knowledge* (1998) हा ग्रंथ लिहिला असून तो अद्वितीय आहे. बोहम व पॉली यांनी भौतशास्त्रात जे काम केले आहे, ते नाबी याने रेणविक जीवशास्त्रात केले आहे, असे या ग्रंथाच्या बाबतीत म्हणता येईल. त्यानेही 'आयाहुआस्का' ह्या रसायनाचे पान केले आणि *त्यालाही हार्नरप्रमाणे साप दिसू लागले*. ते त्याच्याशी (ज्ञानेश्वरांच्या भाषेत) 'शब्देविन संवाद' करू लागले.\* (तळटीप पृ. ५६७ वर) त्याने

म्हटले आहे की जडवादी असलेलो आपण हे रसायन प्याल्यानंतर पूर्ण बदलून गेलो. आपला नवा जन्म झाला. (p.112) त्याने आपल्या या अनुभवाच्या व त्यानंतर मिळविलेल्या ज्ञानाच्या आधारे विश्व जाणीवयुक्त आहे, त्याला 'मन' आहे, असा निष्कर्ष काढला आहे. (p. 145) आशार्निका जमातीतील लोकांना वनस्पतींचे औषधी गुणधर्म व इतर ज्ञान कसे मिळते हे एका व्यक्तीने पुढीलप्रमाणे नाबीला सांगितले, "तुम्हाला हवेतून रेडियो तरंगातून जसे ज्ञान मिळते, तसे आम्हाला मृतात्मे व देव यांच्याकडून 'आयाहुआस्का' मधून ज्ञान मिळते." नाबीला साध्या वनस्पतीतून रुग्ण बरे करण्याचे त्यांचे अलौकिक सामर्थ्य व स्वतःचा 'आयाहुआस्का' रसायनपानाचा अनुभव त्याचे म्हणणे सहज पटवून देऊ शकत होता. सापांच्या प्रतिमेतून व 'आयाहुआस्का' मधून त्या लोकांना वैश्विक जीवनाचे-जीवशास्त्राचे-ज्ञान मिळते, असा त्याने स्वानुभवातून सिध्दांत मांडला आहे.\*\* याला त्याने defocalised consciousness म्हटले असून त्याला आशार्निका लोकांची 'औषधी समाधी' म्हणता येईल !

वनस्पतीपासून अंजन तयार करण्याची व त्यामधून अर्तीद्रिय ज्ञान मिळविण्याची आपल्याकडे पूर्वापार पद्धत आहे. सांगली जिल्ह्यातील उदगाव या खेड्यातील बापू पंडितांनी एक अंजन यंत्र तयार केले असून त्या यंत्रात त्यांच्या मुलीला दूरच्या व भूतकाळातील घटना दिसतात. इतरांनाही त्या दिसू शकतात. (हे अंजन यंत्र तयार करण्याचा एक खास विधी असल्याचे बापू पंडितांनी प्रस्तुत लेखकाला सांगितले आहे.) या यंत्राची परीक्षा प्रस्तुत लेखकाने दोनदा घेऊन स्वतःची त्याच्या खरेपणाविषयीची खात्री करून घेतली आहे. एका प्रयोगात संध्याकाळी पावणे आठ

\* (तळटीप पृ. ५६६ वरून) याचे प्रत्यक्ष पाहिलेले उदाहरण बाबूराव अथणे यांनी परब्रह्मगुरु चिलेदेव या ग्रथात दिले आहे. यापूर्वी चिलेदेवांना कधीही न भेटलेले दोन साधू त्यांना भेटायला आले ते अथणेच्याही ओळखीचे नव्हते. ते चिलेदेवाशी काही बोलत नव्हते. तथापि चिलेदेव 'हं', 'अहः' असे अधूनमधून म्हणत होते. त्यावरून त्याच्यामध्ये 'शब्देविन संवाद' चालला होता, हे अथणेनी ओळखले. पाच मिनिटांनंतर चिलेदेवांनी त्यांना खुणेने जायला सांगितले. ते चिलेदेवाकडे पाठ न करता निघून गेले. हा 'शब्देविन संवाद' पाहून मी धन्य झालो असे अथणेनी म्हटले आहे. (पृ २९९)

\*\* DNA हे (जीवपेशीतील जैविक गुणधर्म ठरविणारे) रेणू दोन साप एकमेकाभोवती लपटेल्याप्रमाणे दिसतात या जीवशास्त्रीय वस्तुस्थितीमधून व 'आयाहुआस्का' पानानंतर दिसणाऱ्या सापामधून या लोकांना औषधी व जैविक ज्ञान सापांच्या प्रतिमेतून ते वैश्विक रेणू (global network of DNA-life) देतात असा सिध्दांत नाबीने मांडला असून त्याला स्वानुभवातून मिळालेल्या या ज्ञानाच्या खरेपणाबद्दल इतका आत्मविश्वास वाटतो की DNA रेणूंना निजीव (किंवा त्यांना 'मन' नाही असे) समजणारे आधुनिक जीवशास्त्रज्ञ हे आंधळ्यानी सिनेमाचे ज्ञान सांगावे यासारखे पोरकट आहे असे तो म्हणतो ! या पोरकट जीवशास्त्राला त्याने cowboy science म्हटले आहे ! (बोहम व डायसन हे इलेक्ट्रॉन्सना 'मन' आहे म्हणतात. नाबी रेणूंना 'मन' आहे म्हणतो. भौतशास्त्र व जीवशास्त्र येथे एकत्र येतात.)

वाजता आपल्या घरात कोण कोण काय काय करीत आहेत हे त्या यंत्रात पाहून सांगण्यास लेखकाने बापूंच्या मुलीला विनंती केली. तिने अंजनात पाहून जे सांगितले ते सर्व घरी आल्यानंतर घरातील लोकांना विचारल्यानंतर बरोबर असल्याचे आढळून आले. विशेष म्हणजे त्यावेळी घरात पूर्ण प्रकाश नसल्याचे त्या मुलीने सांगितले होते. ते खरे असल्याचे आढळून आले. कारण नेमके त्यावेळी त्या भागातील वीज गेली होती, व घरात मेणबत्या लावलेल्या होत्या. या बापू पंडितावर अंधश्रद्धानिर्मूलनवाल्यांनी फसवणुकीचा कोर्टात खटला भरला होता, व ते अंजन-यंत्र कोर्टातर्फे जप्त करून नेले होते. पण दाव्याचा निकाल बापू पंडितांच्या बाजूने लागून त्यांचे ते यंत्र परत करण्यात आले होते व कोर्टाने यात फसवणूक (वा लुबाडणूक) नसल्याचे मान्य केले होते. (अंजनात पाहण्यासाठी पैसे घेतले जात नाहीत व सर्वांना त्याचा अनुभव येतो.) हल्ली बापू पंडित वारले असून त्यांची मुलगी व जावई त्या यंत्राचा समाजहितासाठी उपयोग करीत असतात. (या बापू पंडितांची माहिती यापूर्वी पृ. ३६८-३६९ वर आली आहे.)

प्रस्तुत लेखकाला एकदा स्वतंत्रपणेही अंजनाची परीक्षा पाहण्याची संधी मिळाली. त्याचे असे झाले. एकदा प्रस्तुत लेखकाला हुन्नरगी (ता. चिक्कोडी, जि. बेळगाव) या गावी एका व्यक्तीकडे अंजन लावलेला आरसा असल्याची माहिती मिळाली. (बापू पंडित मूळ हुन्नरगीचे होते, हा योगायोग म्हटला पाहिजे.) त्या व्यक्तीला स्वतःला त्यात दिसत नव्हते, पण ज्यांना दिसते, त्यांना त्यात पाहण्यास ती व्यक्ती परवानगी देते, असे कळाले होते. लेखकाने त्या व्यक्तीचा पत्ता काढून त्याला तो आरसा (आकार ४" x ६") एक आठवड्यासाठी घरी नेण्यास देण्याची विनंती केली. त्याने ती मान्य केली व लेखकाला तो आरसा दिला. लेखकाने अनेकांना तो आरसा दाखवला. एका व्यक्तीला त्यात दिसू लागल्याचे तिने सांगितले. पण तिचे सर्व वर्णन खोटे निघाले. काही मुलींना व मुलांनाही तो आरसा दाखवला. एका रंजना संकपाळ नावाच्या १२ वर्षांच्या मुलीला त्यात दिसू लागल्याचे तिने सांगितले. हा प्रयोग रात्री ९ ॥ च्या सुमारास करण्यात येत होता. त्यावेळी ३ कि.मी. अंतरावरील लेखकाच्या मळ्यातील घरात काय दिसते, हे पाहून सांगण्यास तिला सांगितले. तिने काहीजण T V. पाहात असल्याचे व टी.व्ही च्या कोपऱ्यात 'सोनी' लिहिलेले दिसत असल्याचे सांगितले. तसेच घरासमोर काही लोक असून तेथे सोन्यासारख्या रंगाच्या वस्तूचा ढीग दिसत असल्याचे सांगितले. हे वर्णन अविश्वसनीय होते. सोन्यासारख्या वस्तूचा ढीग असणेच शक्य नव्हते व रात्री लोक जमणेही शक्य नव्हते. तथापि ते लोक काय करीत आहेत असे तिला विचारले तिने एक माणूस काहीतरी काळे दिसणारे डब्यात भरत असल्याचे दिसते असे सांगितले. हे वर्णनही विचित्र होते. या दृश्याचा काहीच उलगाडा होण्यासारखा नसल्यामुळे



त्या मुलीला काही दिसत नसावे, काहीतरी अंदाजाने ती सांगत असावी, असा तर्क करून लेखक आपल्या मळ्यातील घरी थोड्या निराशेनेच परतला. आणि .... घरी येताच त्याला आश्चर्याचा गोड धक्का बसला. कारण घरासमोर खरोखर लोक जमलेले दिसले. त्या सोन्यासारख्या वस्तूच्या ढिगाचाही उलगडा झाला. तो ढीग म्हणजे तंबाखू होता व रात्री बल्ब लावून लेखकाचा चिरंजीव लोकाना जमवून तंबाखूची 'चाकी' (मिश्रण) करीत होता. तो ढीग त्या बल्बच्या प्रकाशात सोन्याच्या रंगाचाच दिसत होता, याची लेखकाची खात्री पटली. लेखकाने आपल्या चिरंजीवाला डब्यात 'काळे' काय भरत होता असे विचारले, तेव्हा त्याने सांगितले की तंबाखूचे बोंद वजन करण्यासाठी उभ्या केलेल्या काट्याच्या पारड्याखाली ठेवण्यासाठी डब्यात दगड भरून तो डबा पारड्याखाली ठेवला आहे. लेखकाने तो दगड भरलेला डबा स्वतः पाहून ते दगड 'काळे' असल्याची खात्री केली. अशारीतीने रंजना मुलीला आरशात जे दिसले ते सर्व तंतोतंत खरे होते, पण रात्रीच्या वेळी प्रकाशात तिला वस्तु स्पष्ट ओळखता आल्या नाहीत. लेखकालाही चिरंजीव तंबाखूची 'चाकी' करणार आहे याची पूर्व कल्पना नसल्यामुळे, त्याला तिच्या वर्णनाचे गूढ वाटले. नंतर घरात प्रवेश करून एका तासापूर्वी टी.व्ही. वर कोणती चॅनेल पाहाता होता असे घरातील लोकांना विचारले असता त्यांनी 'सोनी' हे उत्तर दिले. अशारीतीने रंजना या मुलीचे सर्व वर्णन तंतोतंत बरोबर ठरले. अंजनविद्या भौतिक विश्व आणि मानवी मन एकात्म (वा अविभाज्य) असल्याचे सिद्ध करणारा परमानसशास्त्रीय पुरावा आहे.

रंजना या मुलीला अंजनात दिसते, हा शोध लागल्यामुळे दुसरे दिवशी लेखकाने पुन्हा तिच्यावर प्रयोग केला. पण दुर्दैवाने या प्रयोगाच्या वेळी तिला काहीही दिसले नाही. नंतर तिला कधीच दिसले नाही. कदाचित् तिला उदगावच्या सिद्ध अंजनयंत्रात दिसू शकेल असे वाटून लेखक रंजनाला घेऊन उदगावलाही गेला. पण त्या यंत्रातही तिला काहीही दिसले नाही. असे का व्हावे याचा लेखकाला किंवा इतर कोणालाही उलगडा झालेला नाही. (फोंडा नावाच्या स्त्रीच्या मालकीच्या 'लेडी वंडर' या घोडीचे लोकांनी विचारलेल्या प्रश्नाचे अचूक उत्तर देण्याचे अतींद्रिय सामर्थ्य असेच अचानक नाहीसे झाले होते. टेड सिरिओसचे विचारशक्तीने फोटोफिल्मवर चित्रे उमटविण्याचे अतींद्रिय सामर्थ्यही असेच एकदम नाहीसे झाले होते. पाहा, विज्ञान आणि बुद्धिवाद पृ. १३२-३)

काही व्यक्तीमध्ये एखादी वस्तू हाताळून त्या वस्तूच्या संपर्कात पूर्वी आलेल्या व्यक्तीचे अचूक वर्णन करण्याचे सामर्थ्य आढळून येते. (याला इंग्रजीत psychometry म्हणजे 'मनोमापन' म्हणतात.) डेंटन या भूगर्भशास्त्रज्ञाला आपल्या पत्नीमध्येच हे सामर्थ्य असल्याचा प्रथम शोध लागला व त्याने या विषयावर

संशोधन करून The Soul of Things (निर्जीव वस्तूचा आत्मा) या नावाचा एक ग्रंथ १८७३ साली लिहिला.<sup>१४०</sup> असे सामर्थ्य नंतर अनेक लोकात आढळून आले आहे. हे सामर्थ्य असलेल्या व्यक्ती एखादी उत्खननात आढळलेली वस्तू हाताळून अगर कपाळाला लावून त्या (प्राचीन) कालातील परिस्थितीचे इत्थंभूत वर्णन करतात व ते सर्व बरोबर असल्याचे त्याविषयीच्या प्राचीन पुराव्यावरून सिध्द झाले आहे.

आयलिन गॅरेट नावाची अतींद्रिय शक्तीबद्दल प्रसिध्द असलेली एक अमेरिकन स्त्री आहे. तिच्यावर लॉरेन्स लिशान या शास्त्रज्ञाने मनोमापनाचे (psychometry चे) अनेक प्रयोग केले आहेत. एका प्रयोगात त्याने प्राचीन बाबीलोनियन संस्कृतीची ३५०० वर्षांपूर्वीची एक वस्तू एका डबीत घालून व ती डबी लिफाफ्यात गुंडाळून तिला हाताळण्यास दिली. तिने तो लिफाफा हाताळून बाबीलोनियन संस्कृतीचे वर्णन करण्याऐवजी ती वस्तू कुतूहलाने सहज हातात घेऊन काही दिवसांपूर्वी पाहिलेल्या एका स्त्रीचे वर्णन केले उदा. त्या स्त्रीची केशरचना, शरीरावरील दोन जखमांच्या खुणा इ. गोष्टी गॅरेटने बरोबर सांगितल्याच, पण त्या जखमा कुठे व कशा झाल्या याचीही माहिती दिली. त्या स्त्रीचे आपल्या मुलीशी कसे संबंध होते, तिचे वैवाहिक जीवन इ. विषयीची बरीच खाजगी माहितीही दिली. लिशानला याविषयी काही माहीत नव्हते. पण नंतर ती सर्व माहिती बरोबर असल्याचे त्याला आढळून आले. तो म्हणतो की गॅरेटने त्या स्त्रीचे इतके हुबेहूब वर्णन केले होते की ते वर्णन ऐकणारा त्या स्त्रीला एका ओळीत उभे केलेल्या दहा हजार स्त्रियांमध्ये सहज ओळखू शकला असता. ती स्त्री गॅरेट राहात असलेल्या शहरापासून दीड हजार मैलावरील एका शहरात राहत होती व तिची गॅरेटला कसलीही पूर्व माहिती नव्हती.<sup>१४१</sup>

येथे गॅरेटला त्या बाबीलोनियन वस्तूच्या प्राचीन इतिहासाऐवजी ती वस्तू काही दिवसांपूर्वी सहज हाताळलेल्या एका स्त्रीची माहिती का व्हावी ? येथे गॅरेटची सहानुभूती त्या प्राचीन वस्तूशी नसून ती वस्तू आगंतुकपणे हाताळलेल्या स्त्रीशी होती, हे सिध्द होते. एखाद्या अतींद्रिय शक्ती असलेल्या व्यक्तीची सहानुभूतियुक्त अनुकंपने कशाशी वा कुणाशी जुळावीत, हे त्या व्यक्तीवरच केवळ अवलंबून आहे, हे या प्रयोगावरून सिध्द होतेच; पण सहानुभूतियुक्त अनुकंपनामुळेच हा संबंध जोडला जातो, हेही सिध्द होते. घरातून अचानक बेपत्ता झालेल्या एखाद्या व्यक्तीच्या वापरातील वस्तू- उदा. तिच्या कपड्यांचा एखादा तुकडा-गॅरेटला हाताळण्यास दिला तर ती व्यक्ती हल्ली कोठे आहे व कोणत्या स्थितीत आहे, हेही ती अचूक सांगू शकत असे; व त्याप्रमाणे ती व्यक्ती त्या ठिकाणी व त्या स्थितीत आढळून येत असे. असे सामर्थ्य असलेल्या अनेक व्यक्ती असून पीटर हर्कोस हा त्यापैकी एक होय.<sup>१४२</sup> अतींद्रिय शक्तीला स्थळाचे वा अंतराचे बंधन नाही-कारण विश्व (व मानवी मन) अविभाज्य आहे-हे अशा प्रयोगातून सिध्द होते.

‘करणी’चे प्रयोग अशाच सहानुभूतियुक्त अनुकंपनातून दूर अंतरावर परिणाम घडवून आणत असतात. एका कामगाराच्या पत्नीने आपल्या नवऱ्याला त्रास देणाऱ्या मालकाच्या पत्नीला केवळ मनाने टाचण्या शरीरात टोचून कसा त्रास दिला, याची कॉलिन विल्सनने दिलेली माहिती याच ग्रंथात पृ. ३०८ वर दिली आहे. (संदर्भ क्रमांक २२२ ही पाहा. तसेच प्रकरण ३ ही पाहा.) याला Black Magic (काळी जादू) म्हणतात. त्याच्या उलट चांगला परिणाम घडवून आणणाऱ्या सहानुभूतियुक्त अनुकंपनांना White Magic (पांढरी जादू) म्हणतात. चिलेमहाराजांनी दुरुन कागद कातरून (ऑपरेशन करून) सौ. जांभळीकरांची पोटदुखी कशी बरी केली याची माहिती पृ. ३०५-६ वर दिली आहे. एकदा त्यांनी याचे एक वेगळेच प्रात्यक्षिक करून दाखवले. कोल्हापूरहून केली व तेथून जोतिबा रस्त्याने चिलेदेव व तानाजी जाधव हे त्यांचे भक्त पायी चालत जात होते. पाठीमागून एक मोटारसायकल आली व त्यांच्यापुढे गेली. त्याबरोबर चिलेदेवांनी आपल्या एका हाताचे बोट एकदा डावीकडे व नंतर उजवीकडे त्या वाहनाच्या दिशेने केले त्याबरोबर ती मोटारसायकल एकदा डावीकडे व नंतर उजवीकडे अशी झोकांड्या खात जाऊ लागली ! थोड्या वेळाने ‘आता सरळ जाऊ दे’ असे ते म्हणाले. त्याबरोबर ती पुन्हा पूर्वीप्रमाणे सरळ जाऊ लागली.<sup>१४१</sup> याच ग्रंथात पृ. २०० वर वर्णन केल्याप्रमाणे एक मोटारसायकल अशीच झोकांड्या खात श्री. गजबरे या सायकलावरील व्यक्तीवर येऊन आदळली व मुद्दाम अपघात करून गेली, असे त्याने म्हटले असल्याचे व आपल्या एका शत्रूने संकेतचर येथील एका पिशाचविद्येच्या व्यक्तीकडून आपल्याला ठार मारण्यासाठी हे पिशाचामार्फत केलेले कारस्थान असल्याचे जे सांगितले आहे, ते खोटे म्हणता येणार नाही, हे यावरून दिसून येईल. ही अर्थात् काळी जादू आहे.

सामान्य व्यक्तीमध्ये जड वस्तूवर दुरुन परिणाम करण्याचे सुप्त सामर्थ्य असल्याचे हेल्मट स्मिट, ज्हाईन, कॉक्स, फोरवॉल्ड इ. अनेक शास्त्रज्ञांनी प्रयोगशाळेत सांख्यिकीय (statistical) पद्धतीने दाखवून दिले आहे.<sup>१४२</sup>

काही व्यक्ती जमिनीतील पाणी, तेल, खनिज पदार्थ इ. ओळखू शकतात. (याला इंग्रजीत dowsing म्हणतात.) त्यासाठी झाडाची एखादी फांदी अगर लंबक वापरतात. जेथे पाणी, तेल इ. असेल तेथे फांदी दोन्ही हातात धरलेली असतानाही गिरकी घेते किंवा लंबक आपोआप फिरू लागतो. लंबकाच्या साहाय्याने जमिनीतील वस्तू ओळखण्याचे एक तंत्र लेथब्रिज या संशोधकाने विकसित केले आहे.<sup>१४३</sup> विशेष म्हणजे ज्या भागात पाणी, तेल इ. शोधावयाचे आहे, त्या भागाचा नकाशा दिला व त्या व्यक्तीने नकाशावर लंबक धरला तरी ज्या ठिकाणी पाणी, तेल इ. असेल त्या ठिकाणी नकाशावर लंबक फिरू लागतो ! नंतर प्रत्यक्ष त्या ठिकाणी पाणी, तेल इ. हमखास सापडते !<sup>१४४</sup> यावरून भौतिक विश्व व मानवी मन यांच्या स्वरूपाविषयी व संबंधाविषयी वाचक कल्पना करू शकतात !

बाबारा (व्हॅरव्हरा) इव्हॅनोव्हा या रशियन स्त्रीमध्ये हजारो मैल अंतरावरील व्यक्तीचे दुरुन अचूक रोगनिदान करण्याचे अतींद्रिय सामर्थ्य असल्याचे आढळून आले आहे.<sup>३४७</sup>

आण्णामहाराज लाटकर यांचे भक्त त्यांना आपल्या जमिनीत पाणी कोठे सापडेल हे तेथे येऊन सांगण्यासाठी नेहमी आग्रह धरतात, पण ते कोठेही जात नाहीत. भक्तांना 'तुझ्या इच्छेला येईल तेथे बोअर मार, पाणी लागेल,' असे ते सांगतात. किती खोलीवर पाणी लागेल हेही सांगतात; आणि त्याप्रमाणे त्यांना त्या खोलीवर व इच्छेला येईल त्या ठिकाणी मारलेल्या बोअरला हमखास पाणी लागते, असा त्यांच्या प्रत्येक भक्ताचा अनुभव आहे.<sup>३४८</sup> विश्वातील घटना पूर्वनिर्णयित आहेत ही गोष्ट अशारीतीने आण्णामहाराजांची सिध्द वाणी सिध्द करते !

विश्व स्थळाच्या दृष्टीनेच नव्हे, तर काळाच्या दृष्टीनेही अविभाज्य किंवा एकात्म आहे. त्यामुळे भविष्य काळातील घटना माणसाला अगोदरच कळू शकतात.\* याची अनेक उदाहरणे यापूर्वी दिली आहेत. सामान्य व्यक्तींना हे स्वप्नात कळत असले तरी जागेपणीही हे कळू शकते, हे रसेल टार्ग व हॅरोल्ड पुथॉफ या भौतशास्त्रज्ञांनी शास्त्रीय निकषाखाली सप्रयोग दाखवून दिले आहे.<sup>३४९</sup> अशा एका प्रयोगात हेल्डा हॅमिड या बाईला पुथॉफ ज्या ठिकाणाला भविष्यात भेट देणार आहे, त्या ठिकाणाचे अगोदर वर्णन करून सांगण्यास सांगितले. या प्रयोगाचे वैशिष्ट्य म्हणजे पुथॉफ कोणत्या ठिकाणाला भेट देण्यास जाणार आहे, हे अगोदर ठरविलेले नव्हते. मात्र प्रयोगाच्या दहा मिनिटे अगोदरच कारमधून तो निघून गेला होता व मनाला येईल त्या ठिकाणी जाण्याऐवजी त्याला दिलेल्या व सील केलेल्या दहा लिफाफ्यांपैकी एक लिफाफा निवडून त्यात नोंद केलेल्या ठिकाणालाच तो भेट देणार होता. लिफाफा निवडण्याचे काम हेला हॅमिडने आपले भाकीत लेखी नोंद केल्यानंतर तो ठरलेल्या वेळेनुसार करणार होता. अशारीतीने भेटीचे ठिकाण पुथॉफलाही माहीत नव्हते व हॅमिडलाही माहीत नव्हते. ते कोणालाच माहीत नव्हते. ते यांत्रिक पद्धतीने निवडलेल्या दहा लिफाफ्यात दडले होते. हॅमिडने आपले भाकीत

---

\* भौतशास्त्रानुसार सुध्दा हे शक्य असून त्याला भौतशास्त्रातील विद्युच्चुंबकीय क्षेत्राच्या सिध्दांतात (Electromagnetic field theory) भावी स्थिर शक्ती (advanced potential) म्हणतात पण याचा अनुभव येत नाही असे वाटल्यामुळे त्याकडे भौतशास्त्रज्ञ दुर्लक्ष करीत होते. पण नंतर 'इलेक्ट्रॉन अबसॉर्बर सिध्दांत' मांडून केनमन व व्हीलर यांनी भौतशास्त्रात त्याला प्रतिष्ठा मिळवून दिली. [याला क्वांटम इलेक्ट्रोडायनेमिक्स (संक्षिप्तात QED) म्हणतात ] पूढे चू व फ्रेमर यांनी क्वांटम सिध्दांतालाही ते गृहीतकृत्य लागू केले. याला Transactional interpretation of Quantum Theory म्हणतात. तात्पर्य भविष्यज्ञानाला क्वांटम सिध्दांताचाही पाठिंबा मिळतो. [पाहा. QED : The Strange Theory of light and matter (1990) R. Feynmann आणि Schrodinger's Kittens (1995) J. Gribbin.]

नोंद केल्यानंतर ते दहा लिफाक्यापैकी पुथॉफ़ने यांत्रिकपध्दतीने लिफाफा निवडल्यानंतर एकातील असणार वा ठरणार होते. तेथे गेल्यानंतर काय करावयाचे हे मात्र त्या ठिकाणी पोहोचल्यानंतर पुथॉफ़ स्वतःच ठरवणार होता. अशा पध्दतीने निवडलेले ठिकाण 'मेनलो पार्क' निघाले. इकडे हॅमिडने जे वर्णन नोंद केले होते, ते 'मेनलो पार्क' मधील ज्या भागाला पुथॉफ़ने भेट दिली त्या भागाशी बरेच जुळणारे होते व तिने 'कर्रकर्र' असा आवाज ऐकायला येतो अशीही नोंद केली होती. पुथॉफ़ने परत आल्यानंतर सांगितले की त्या पार्कमधील लहान मुलांच्या झोपाळ्यावर बसून आपण झोके घेतले व ते घेताना 'कर्रकर्र' असा झोपाळ्याचा आवाज होत होता. अशारीतीने हॅमिडला पुथॉफ़चे भविष्यकाळातील भेटीचे ठिकाण 'दिसले', इतकेच नव्हे तर भविष्यकाळात तो झोके घेणार असल्याच्या झोपाळ्याचा आवाजही (तो आवाज होण्यापूर्वीच) तिला 'ऐकायला' ही आला! हे सर्व विश्वरूपी नाटकात अगोदरच ठरले गेले असल्याशिवाय कसे कळणे व घडणे शक्य आहे ?

असे प्रयोग जगातील अनेक शास्त्रज्ञांनीही यशस्वीरीत्या केले असून हे प्रयोग Remote Viewing (दूरदर्शन) या नांवाने प्रसिध्द आहेत. उदा. जान व डन यांनी प्रिन्स्टन येथे असे ३३४ प्रयोग केले व त्या प्रयोगात त्यांना ६२ टक्के यश आले आहे.<sup>१५०</sup>

युट्रेक्ट (हॉलंड) येथील जिरॉर्ड क्रॉयसेट या व्यक्तीमध्ये एखाद्या थिएटरमधील किंवा हॉलमधील एखाद्या कार्यक्रमाच्या वेळी भविष्य काळात कोणत्या खुर्चीवर कोणती व्यक्ती बसणार आहे, याचे १०० टक्के अचूक भाकीत करण्याचे सामर्थ्य असल्याचे आढळून आले आहे. टेनहेफ व इतर अनेक शास्त्रज्ञांनी २५ वर्षे त्याची परीक्षा घेऊन त्याचे हे सामर्थ्य खरे असल्याचे मनमोकळेपणाने मान्य केले आहे. त्याच्यावरील हा प्रयोग 'खुर्ची चाचणी' (chair test) या नावाने प्रसिध्द आहे. या प्रयोगात (चाचणीत) क्रॉयसेटला थिएटरचे नाव किंवा त्यामध्ये होणारा कार्यक्रम याची कसलीही माहिती देण्यात येत नसे. प्रयोगकर्ता फक्त कार्यक्रमाची वेळ क्रॉयसेटला सांगत असे व अक्रम (यांत्रिक) पध्दतीने (randomly) खुर्ची निवडून त्या खुर्चीचा क्रमांक सांगत असे. एवढ्या माहितीवर क्रॉयसेट त्या क्रमांकाच्या खुर्चीवर बसणाऱ्या व्यक्तीचे शारीरिक वर्णन, पोषाख, त्याचा धंदा, लिंग व त्याच्या जीवनातील घटनासुध्दा कित्येक दिवस अगोदर अचूक सांगत असे. ज्या कार्यक्रमात रिझर्व्हेशनची (जागा अगोदर राखून ठेवण्याची) व्यवस्था नसे, असेच कार्यक्रम त्याच्या परीक्षेसाठी निवडले जात. जगातील कोणत्याही ठिकाणच्या खुर्चीचा क्रमांक व वेळ सांगितली तर तो त्या खुर्चीवर बसणाऱ्या व्यक्तीचे कित्येक दिवस अगोदर अचूक वर्णन करीत असे. उदा. अमेरिकेतील ज्यूल आयसेनबड या शास्त्रज्ञाला जानेवारी ६, १९६९ रोजी युरोपमधील युट्रेक्ट शहरात असलेल्या क्रॉयसेटने सांगितले

की २३ जानेवारी १९६९ रोजी (१७ दिवसानंतर) होणाऱ्या कार्यक्रमाच्या वेळी त्याने दिलेल्या क्रमांकाच्या खुर्चीवर बसणाऱ्या व्यक्तीची उंची ५ फूट ९ इंच असेल. त्याच्या तोंडातील खालचा एक दात सोन्याचा असेल. त्याच्या डोक्याचे काळे कसे तो पाठीमागे विंचरतो. त्याच्या पायाच्या आंगठ्याला जखमेची एक खूण आहे, इ. वर्णन करून त्याचा धंदा व इतरही बरीच माहिती क्रॉयसेटने दिली. ती सर्व नंतर १०० टक्के खरी ठरली. फक्त उंचीमध्ये पाऊण इंचाचा फरक पडला.<sup>३५१</sup>

एखाद्या सार्वजनिक कार्यक्रमात एखाद्या खुर्चीवर कोण बसणार आहे, यासारख्या क्षुल्लक गोष्टींचे ज्ञान ती घटना घडण्यापूर्वी क्रॉयसेटला अचूकपणे होत असेल तर विश्वरूपी नाटक अशा क्षुल्लक घटनांच्या सर्व तपशीलासह अगोदरच 'आकाश' तत्वावर लिहून ठेवण्यात आले आहे, व त्यानुसारच ते काटेकोरपणे घडत असते, असे ठरते. एखाद्या कार्यक्रमाच्या वेळी एखाद्या खुर्चीवर कोणत्या प्रकारची व्यक्ती बसणार आहे, हे सुध्दा अगोदर ठरले असेल तर विशिष्ट आकाशस्थ ग्रहांच्या स्थान व्यवस्थेच्या वेळी कोणत्या प्रकारची व्यक्ती जन्माला यावी, हे का अगोदर ठरू नये ? तोही विश्वरूपी नाटकाचा भाग का असू नये ? अशारीतीने अगस्त्य नाडीग्रंथात व्यक्तीचे नांव, त्याची जन्मकुंडली व इतर सर्व माहिती अगोदरच अचूकपणे लिहून ठेवली गेलेली आढळून यावी, ती सर्व खरी ठरावी यात आश्चर्य नाही. (पृ. ५१२ वरील पोटमथळा पाहा.) कोणत्या ग्रहाचे कोणत्या अंशावर, कोनावर इ. कोणते 'परिणाम' व्हावेत हे वैश्विक स्थान व्यवस्थेमुळे ठरते, कार्यकारणभावामुळे नाही-म्हणजे तो कारण-परिणामाचा प्रश्न नाही, व्यवस्थेचा प्रश्न आहे; ग्रह हे केवळ घटना, दर्शक (indicators) आहेत, (निर्धारक नाहीत) असे योगी अरविंद, लेडबीटर इ. नी का म्हटले आहे, हे आता वाचकांना स्पष्ट होईल. या विश्वव्यवस्थेमुळेच भानामतीच्या व तत्सम घटना (अपघात, वेडाचे झटके इ.) अमावास्या-पौर्णिमेलाच का घडतात यावरही प्रकाश पडतो.

भूतकालातील सर्व घटना बरोबर सांगणारे नाडीग्रंथ एखादी व्यक्ती आपल्या नाडीपट्टीतील भविष्य कालातील घटनांचे जेव्हा वाचन करवून घेते, तेव्हा त्या घटना चुकीच्या का सांगतात, त्यांचे भविष्य खरे का ठरत नाही. असा एक प्रश्न नेहमी विचारण्यात येतो. नाडीग्रंथाचा भूतकाळ बरोबर येतो, भविष्य मात्र चुकते, असा अनेकांचा अनुभव असल्यामुळे नाडीग्रंथ ही एक कर्णपिशाचविद्या आहे, असा अनेकजण आरोप करतात. या आरोपात कसे तथ्य नाही याची व भविष्य का चुकते याचीही लेखकाने अन्यत्र विस्ताराने चर्चा केलेली आहे.<sup>३५२</sup> तेथे भविष्य चुकत नाही, मुद्दाम चुकविले जाते, हा महत्वाचा मुद्दा मांडला आहे. त्याची विस्ताराने चर्चा अन्य अशाच एका प्रश्नाच्या संदर्भात पुढपुढीच्या सत्यसाईबाबांनी मुंबईच्या ब्लिट्झच्या आर. के. करंजिया यांच्या एका प्रश्नाला उत्तर देताना केली आहे. ती

या संदर्भात जशीच्या तशी, मूळ इंग्रजी पुस्तकातील मजकूराचे मराठीत भाषांतर करून, येथे देतो.

**प्रश्न :** स्वामीजींचे टीकाकार विचारतात की साईबाबा आपल्या संकल्पशक्तीच्या जोरावर अवर्षण काळात पाऊस पाडून किंवा जेथे दुष्काळ असेल तेथे अन्नधान्य निर्माण करून लोकांना मदत का करत नाहीत ? निसर्गशक्तीवर ताबा मिळवून आणि भूकंप, अवर्षण, रोगराई यासारख्या नैसर्गिक आपत्ती टाळून ईश्वरावतार मनुष्यजातीला मदत नाही का करू शकणार ?

**बाबा :** अशी संकटे टाळण्यासाठी माणसाच्या आत वसणारा परमेश्वर जागवून मी नेमकं हेच काम करतो आहे. 'अवतार' हा लोकांना दोन प्रकारे मदत करू शकतो. एक, तत्काळ एखादा मार्ग काढून किंवा त्याउलट दूरगामी पध्दतीने.

तत्काळचा जो मार्ग असतो, तो प्रत्यक्ष निसर्गाच्या मूलभूत नियमांच्या, तसंच कर्मसिध्दांतातील कार्यकारणभावातील नियमांच्या विरुद्ध जाणारा असतो. बहुतांश माणसं त्यांच्या इच्छा, वासनांच्या व अहंकाराच्या ज्या भौतिक जगात जगत असतात, ते जग ह्या (वरील कर्मसिध्दांताच्या) नियमानुसार चालत असतं. माणसं त्यांच्या कर्मांची फळं भोगत असतात. त्यानुसार त्यांची उत्क्रांती किंवा अधोगती होत असते. अवताराने जर मध्ये पडून त्यांच्या संकटातून तात्पुरता मार्ग काढून दिला, तर ही कर्मगतीच थांबेल, (आणि त्याबरोबर माणसांची) प्रगती व उत्क्रांतीही थांबेल. ह्या मार्गाने जायचं नाही. कारण तो संपूर्णपणे निसर्ग-नियमांविरुद्ध जाणारा आहे.

दुसरा आणि अधिक परिणामकारक पर्याय जो आहे, त्याने समस्यांची दूरगामी उत्तरं मिळतात. ह्या पध्दतीने 'अवतार' हा लोकांना त्याच्या स्वतःच्या जाणिवेच्या वरच्या पातळीवर नेत असतो. त्यामुळे माणसांना आध्यात्मिक नियमांमागच सत्य समजायला मदत होते. ज्यायोगे ती सन्मार्गाकडे वळून आपल्या अधिक भल्यासाठी नेटाने काम करत राहतात. ह्यामुळे पुन्हा एकदा त्यांचं निसर्गाशी, कर्मसिध्दांतातील कार्यकारणभावाशी नातं जोडलं जातं. हे घडलं म्हणजे मग लोक आज ज्या कार्यकारणाच्या चक्रात अडकलेले आहेत, त्यातून सुटतील आणि त्यामुळे निसर्गशक्तीवर ताबा मिळवून, तुम्ही उल्लेखिलेल्या आपत्ती दूर करू शकतील.

**प्रश्न :** म्हणजे, मानवजातीने स्वतःच्या दैवगतीवर पकड मिळवावी ह्यासाठी तुम्ही तिला ईश्वराच्या समपातळीवर उचलता आहात, असा तुमच्या म्हणण्याचा अर्थ ?

बाबा : अगदी बरोबर ! लोक (जणू) माझ्या संकल्पशक्तीचे भागधारक होतील. मला त्याच्याच माध्यमातून हे काम करून त्याच्या आतला परमेश्वर जागा करायचा आहे. त्यांना उच्च पातळीवरील वास्तवापर्यंत उत्क्रांत करायचं आहे; म्हणजे तेच निसर्ग-नियम व निसर्ग-शक्तीवर ताबा मिळवू शकतील. मी जर त्यांची जाणीव आहे त्याच पातळीवर राहू देऊन, त्यांना तात्पुरती मलमपट्टी ताबडतोब केली तर ते लौकरच सगळा गोंधळ माजवून एकमेकांचे गळे कापायला सिध्द होतील. ह्याचा परिणाम म्हणजे जगात आहे तीच अराजकाची स्थिती तयार होईल.

वेदना आणि दुःख या वैश्विक नाटकातल्या अटळ घटना आहेत. ह्या आपत्ती ईश्वरी आज्ञेने आलेल्या नसतात, तर माणूसच आपल्या स्वतःच्या दुष्कर्माच्या बदल्यात त्यांना आमंत्रण देत असतो. मानवजातीने चुकीच्या मार्गाचा त्याग करून सन्मार्गाला लागावं, आणि सत्-चित्-आनंदाची-म्हणजेच ज्ञानाची व नित्यानंदाची दैवी अवस्था अनुभवावी ह्यासाठी चूक सुधारण्याच्या हेतूने त्याला मिळणारी ती शिक्षा असते. नकारात्मक गोष्टीतूनही सकारात्मकतेचा गौरव व्हावा ह्यासाठीच्या महासंयोगाचा हा सगळा एक भाग आहे. जसं मृत्यूमुळे अमरत्वाचं मोठेपण सिध्द होते; अज्ञानामुळे ज्ञानाचं, दुःखामुळे आनंदाचे आणि रात्रीमुळे दिवसाचं मोठेपण कळतं.

तेव्हा अखरे काय, की तुम्ही उल्लेखिलेल्या संकटांचं निवारण अवताराने जर तातडीने केलं तर कर्मनियमांसह (जी अटळ अशी वैश्विक कर्तव्य आहेत त्यासह) निर्माण झालेलं हे सगळं नाटकच कोसळून पडेल. हे लक्षात ठेवा की, ह्या आपत्ती म्हणजे देवाने माणसाला जसं बनवलं, त्यामुळे नसून स्वतः माणसानेच माणसाचं जे करून ठेवलं आहे, त्यामुळे येत असतात.\*

तेव्हा माणसाने आपला अहंकार नष्ट करून स्वतःचे जे रूप आहे, ते रूप मोडून स्वतःला पुन्हा घडवलं पाहिजे. त्या अहंकाराच्या जागी ईश्वरी

\* 'विश्वरूपी नाटक अगोदरच लिहून ठेवल्याप्रमाणे घडत असेल तर माणसावरील आपत्ती स्वतः माणसामुळे नव्हे, तर ते नाटक लिहिणाऱ्या ईश्वरामुळे त्याच्यावर येतात,' असे कोणी येथे म्हणेल. ईश्वरेच्छा हीच आपली इच्छा हे ओळखणाऱ्याला ही समस्या निर्माण होत नाही, हे मापूर्वी स्पष्ट केलेच आहे. जे हे ओळखू शकत नाहीत त्यांच्यासाठी या समस्येचे समाधान असे की नाटकातील पात्रांना इच्छास्वातंत्र्य आहे, असे गृहीत धरल्याखेरीज त्या नाटकाला 'अर्थ'च प्राप्त होणार नाही ! आणि इच्छा स्वातंत्र्य याचा अर्थच ईश्वरेच्छेहून स्वतःची इच्छा वेगळी आहे, असे मानण्याचे (सैतानाचे) स्वातंत्र्य ! आणि असे मानणारी पात्रे नाटकात असणारच आणि त्याच्या अहंकारामुळे त्याच्यावर आपत्ती येणारच !



जाणिवेची (transcendental consciousness) पातळी गाठली पाहिजे म्हणजे तो कर्मातून वर उठेल आणि स्वतःवर हुकुमत मिळवेल. ३५३

वरील साईबाबांच्या विवेचनावरून वाचकांच्या लक्षात येईल की शून्यातून वस्तू निर्माण करण्याचा अद्भुत चमत्कार करणारे सत्यसाईबाबा दुष्काळग्रस्तांसाठी अन्न का निर्माण करीत नाहीत, असे म्हणणारे त्यांचे टीकाकार व नाडीग्रंथात मागचा अचूक भूतकाळ सांगणारे अगस्त्य ऋषी आपले पुढचे भविष्य बरोबर का सांगत नाहीत, असे म्हणणारे नाडीग्रंथाचे टीकाकार हे दोघेही तत्त्वतः एकाच भूमिकेवर आहेत. साईबाबांनी म्हटल्याप्रमाणे त्यांना जवळचा, तत्काळाचा मार्ग पाहिजे आहे. त्यांना संकटे व दुःख नको आहेत. अज्ञात कर्मांच्या खडतर मार्गातून त्यांना जावयाचे नाही. त्या मार्गाने जाऊन कर्मांच्या वर उठून स्वतःवर हुकुमत मिळविण्याचा प्रयत्न करणे, म्हणजे कष्ट घेणे, हालअपेष्टा सोसणे त्यांना नको आहे. याच्या उलट ज्यांना तत्काळाचा पण फसवा मार्ग स्वीकारायचा नाही, खडतर, लांब पण अंतिम फलदायी मार्ग स्वीकारायचा आहे, येईल ते-वाटेल ते-कष्ट सोसायचे आहेत, ते नाडीग्रंथात आपले भविष्य पाहण्यासाठी जातीलच कशाला ? ईश्वरेच्छा हीच आपली इच्छा मानून ते तुकारामाप्रमाणे ईश्वरभक्ती करतील व म्हणतील.

हेचि थोर भक्ती आवडते देवा । संकल्पावी माया संसाराची ॥ १ ॥

ठेविले अनंते तैसेचि राहावे । चिती असो द्यावे समाधान ॥ २ ॥

वाहिल्या उद्वेग दुःखाचि केवळ । भोगणे ते फळ संचिताचे ॥ ३ ॥

तुका म्हणे घालू त्यावरी भार । वाहू हा संसार देवापायी ॥ ४ ॥

नाटककाराशी तद्रूप झालेला नट नाटकातील आपल्या पात्राच्या बाट्याला दुःख आले म्हणून कधी कुरकुरतो काय ? लोकांच्या (अपरिहार्य) संचित कर्मात हस्तक्षेप टाळण्यासाठी नाडीग्रंथकार त्यांना चुकीचे भविष्य मुद्दाम सांगतात, हे यावरून स्पष्ट होईल. माणसाला स्वतःचे भविष्य कळू नये अशीच ईश्वरी योजना आहे.

## विज्ञान आणि अध्यात्म

क्वांटम सिद्धांताने विज्ञानाला काय योगदान केले आहे, हे मनोमन ओळखणारा हेन्री स्टॅप् हा एक प्रमुख शास्त्रज्ञ आहे. त्याने एक महत्वाचे विधान केले आहे. ते असे- "The play of quantum chance acts both to veil the form of fundamental reality and to unveil the form of empirical reality." म्हणजे "क्वांटम सिद्धांताने कार्यकारणभावाचा अभाव (chance) हा (या विश्वरूपी नाटकात) दुहेरी पात्र बजावतो. एकीकडे तो मूलभूत (अतींद्रिय) सत्याचे स्वरूप लपवितो व दुसरीकडे तो व्यावहारिक सत्याचे स्वरूप उघडे करतो."

याचा अर्थ असा की भौतविज्ञानातून कार्यकारणभावाचे उच्चाटन करून भौतशास्त्रज्ञांना क्वांटम सिध्दांताने अशी स्पष्ट जाणीव करून दिली आहे की “या विश्वाचे रहस्य भौतिक कार्यकारणभावाच्या अभ्यासातून सापडेल-समजेल-या भ्रमात तुम्ही राहू नका. या भौतिक विश्वाचे रहस्य भौतिक कार्यकारणभावात नाही. ते अभौतिक (अतींद्रिय) स्वरूपाचे आहे. तथापि ते ‘निष्कारण’, ‘अकारण’ नाही. ते कारण तुमच्या जवळच आहे-नव्हे तुमच्या ‘आत’च आहे. त्या आतल्या ‘कारणा’मुळे तुम्हाला ते ‘बाहेर’ दिसत आहे. ती ‘कारण’रूपी तुमची ‘दृष्टी’च- तुमचे ‘मन’च- ‘कार्य’रूपी ‘सृष्टी’ बाहेर निर्माण करीत आहे (act of creation) पण याची तुम्हाला जाणीव नाही.” अशारीतीने अतींद्रिय सत्याचे स्वरूप (विश्वाचे रहस्य) एकीकडे लपवणारा क्वांटम सिध्दांत दुसरीकडे कार्यकारणरूपी नियमबध्द ‘व्यावहारिक’ सत्याचे-व्यावहारिक जगाचे-स्वरूप उघडे करताना दिसतो. सूक्ष्म जगातील भौतिक कार्यकारणभावाच्या अभावातून (chance मधून) स्थूल जगातील कार्यकारणभाव-नियमबध्दता-कशी निर्माण होते, हे गूढ भौतिक शास्त्रज्ञांना न उकलण्याचे कारण (तुकारामांच्या शब्दात) ‘तुझ आहे तुझपाशी, परी तू जागा चुकालासी!’ ती जागा (रहस्य) ‘आत’ आहे, हे ते विसरले आहेत. क्वांटम सिध्दांत chance वर ‘अकारणते’वर, योगायोगावर आधारलेला असूनही या जगात योगायोग नावाची गोष्टच नाही, सर्व काही सकारण आहे, नियमबध्द आहे, सर्व गोष्टी काटेकोरपणे ठरलेल्या आहेत, हे तो कसे सिध्द करतो; या विरोधाभासाची (paradox) उपपत्ती काय, याचे कोडे भौतशास्त्रज्ञांची जागा चुकलेली असल्यामुळे त्यांना उकलेनासे झाले आहे. डेव्हिड बोहरसारखा एखादा बुद्धिवादी शास्त्रज्ञ ते रहस्य ‘बाहेर’ शोधण्याच्या प्रयत्नात शेवटी ‘आत’ येतो, पण पॉलीसारखा एखादा अंतःप्रज्ञ शास्त्रज्ञ सुरुवातीपासूनच ते रहस्य ‘आत’ व ‘बाहेर’ असूनही त्या दोन्हीच्या ‘पलीकडे’ आहे हे ओळखतो. पण कर्मसिध्दांताची ओळख नसल्यामुळे सर्व विश्व ‘अर्थपूर्ण’ कसे असू शकते, म्हणजे ‘अर्थपूर्ण’ तेला ‘अपवाद’ कसा असू शकत नाही, या सत्याला तो पारखा होतो. नील्स बोहरदेखील ‘शास्त्रज्ञ’ या नात्याने फक्त विश्वरूपी नाटकातच रमतो, त्या नाटकाच्या पाठीमागचे रहस्य जाणून घेण्याची त्याला आवश्यकता वाटत नाही. ‘वस्तुकण’ (particles) ‘क्वांटम उड्या’ कशा मारतात हे कोडे ‘कण’ व ‘तरंग’ यांच्यामध्ये ‘परस्परपूरकते’चे (complementarity चे) तत्त्व आहे, असे सुचवून ‘सोडवतो’-म्हणजे सोडविल्याचा भास निर्माण करतो. पण त्याच्या पलीकडे तो जात नाही. तथापि क्वांटम सिध्दांत हा भौतिक विश्वाचा पूर्ण सिध्दांत आहे असे तो मानत असल्यामुळे तो सिध्दांत अतींद्रिय सत्य लपवतो, म्हणजेच भौतशास्त्रज्ञांना अतींद्रिय सत्य (तथाकथित) वैज्ञानिक पध्दतीने सापडणे शक्य नाही, हे सत्य तो ओळखतो व हे ओळखणाऱ्या पॉली, हायजेनबर्ग, जीन्स,

एडिंस्टन यांच्या पंक्तीत जाऊन बसतो. आईन्स्टाइन या दृश्य जगाच्या कार्यकारणभावात (causality) व भौतिक सत्यात (physical reality) च अडकून पडतो व क्वांटम सिध्दांत त्याने अपूर्ण मानला असल्यामुळे भौतिक जगाच्या पलीकडचे सत्य लपवतो ह्या सत्याला तो पारखा होतो. परिणामी तो 'शास्त्रज्ञ' या नात्याने अधांतरी लोंबकळत राहतो. तथापि ते सत्य आहे हे मान्य करणारा तो शास्त्रज्ञ आहे. थोडिंजर हा एकमेव पाश्चात्य शास्त्रज्ञ आहे की जो एकीकडे व्यवहारात शास्त्रीय पध्दतीचा पुरस्कार करूनही दुसरीकडे पूर्ण वेदांताचा, उपनिषद तत्त्वज्ञानाचा पुरस्कर्ता आहे. शंकराचार्याप्रमाणे तो (विज्ञानात) व्यावहारिक सत्य मान्य करूनही (अध्यात्मात) अद्वैतवादी (ब्रह्मवादी) आहे.

क्वांटम सिध्दांत फक्त अतींद्रिय सत्य लपवतो. पण विज्ञानाला अतींद्रिय सत्याचा शोधच लागणे शक्य नाही, ते शोधणे त्याचे कामच नव्हे, असा एक सिध्दांत जॉफ्री च्यू या शास्त्रज्ञाने क्वांटम सिध्दांताचाच परिपाक म्हणून मांडला असून तो भौतशास्त्रात 'बूट स्ट्रॅप' सिध्दांत (Boot-strap theory) या नावाने प्रसिध्द आहे. या सिध्दांतानुसार विश्वात मूलभूत कण (fundamental particles) तर नाहीतच, पण मूलभूत तत्त्वे (घटक) ही नाहीत. तसेच मूलभूत नियम वा समीकरणेही नाहीत. याला hadron boot-strap म्हणतात. कारण हॅड्रॉन हे भौतशास्त्रात मूलभूत मानले गेलेले कण वस्तुतः मूलभूत नाहीत, असे प्रयोगांती आढळून आले आहे; व या प्रायोगिक वस्तुस्थितीच्या शोधावर हा बूटस्ट्रॅप सिध्दांत आधारला आहे. शेवटी भौतशास्त्राचे (विश्वातील) 'नियम' हे मानवी मनातून-विश्व समजावून घेण्याच्या मानवी प्रयत्नातून-निर्माण झाले आहेत, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. ते नियम काही स्वयंभू नाहीत. ते मानव-निर्मित आहेत. म्हणजे मानवी संकल्पनामधून (concepts) ते निर्माण झाले आहेत. त्या संकल्पनांना अर्थातच मर्यादा आहेत. या संकल्पनांच्या मर्यादेतच मानवाला विश्व समजून घेणे शक्य आहे. त्यामुळे त्याचे विश्वाविषयीचे ज्ञान कधीच परिपूर्ण होणार नाही. ते केवळ अंदाजी स्वरूपाचेच (approximate) असणार. या अंदाजी स्वरूपाच्या ज्ञानालाच 'पाश्चात्य विज्ञान' म्हणतात. ही गोष्ट फ्रिजॉफ् काप्रा या भौतशास्त्रज्ञाने पुढीलप्रमाणे सांगितली आहे. "All natural phenomena are ultimately interconnected and in order to explain any one of them we need to understand all the others, which is impossible. What makes science so successful is the discovery that approximations are possible .... Thus one can explain many phenomena in terms of a few, and consequently understand different aspects of nature in an approximate way without having to understand everything at once. This is the scientific method; all scientific theories and models are approximations to the true nature of things."<sup>१५४</sup> या उतान्याचा भावार्थ असा : "विश्वातील सर्व घटना

एकमेकाशी संबंध असल्यामुळे त्यातील कोणतीही एक घटना समजण्यासाठी विश्वातील सर्व घटना समजून घ्याव्या लागतील. हे अर्थात् अशक्य आहे. त्यामुळे काही घटना समजावून घेऊन त्यांच्या आधारे इतर सर्व घटना समजून घेणे क्रमप्राप्त आहे. हे अंदाजी ज्ञान असून ते मिळविण्याचा मानवाचा उद्देश असल्यामुळे विज्ञान शक्य झाले आहे. हीच विज्ञान पध्दती होय. त्यामुळे विज्ञानाला विश्वाचे-त्याच्या मूलभूत स्वरूपाचे खरे ज्ञान कधीच होणार नाही. विज्ञानाचे सिध्दांत नेहमीच अंदाजी स्वरूपाचे राहतील."

'बूट स्ट्रॅप' सिध्दांत मांडणाऱ्या जॉफ्री च्यूने हीच गोष्ट पुढीलप्रमाणे सांगितली आहे : "In the broad sense the bootstrap idea, although fascinating and useful is unscientific... Science as we know it, requires a language based on some unquestioned framework. Semantically, therefore, an attempt to explain all concepts can hardly be called scientific."<sup>३५</sup> याचा अर्थ असा, "विस्तृत दृष्टिकोनातून पाहता बूटस्ट्रॅप कल्पना ही आकर्षक व उपयुक्त असली तरी ती अवैज्ञानिक आहे.. (तिला अवैज्ञानिक म्हणण्याचे कारण) आम्ही समजतो त्या अर्थाच्या विज्ञानाला एखाद्या गृहीत चौकटीवर आधारलेल्या भाषेची गरज असते. भाषेच्या किंवा अर्थाच्या दृष्टीने पाहता सर्व संकल्पनांची उपपत्ती देण्याच्या प्रयत्नाला 'वैज्ञानिक' खासच म्हणता येणार नाही." हेच दुसऱ्या शब्दात सांगायचे तर विश्व (सर्व = all) विज्ञानाच्या भाषेत समजणे अशक्य आहे. च्यूने 'गृहीत चौकट' (unquestioned framework) हा शब्दप्रयोग केला आहे. ही 'गृहीत चौकट' म्हणजे मानवाच्या ज्ञानाची मर्यादा होय. ही मर्यादा निसर्गानेच मानवाला घालून दिली असून त्या मर्यादेतच त्याला विश्व (विज्ञानिक पध्दतीने) समजून घेतले पाहिजे. या मर्यादांना fundamental constants (मूलभूत स्थिरांक) म्हणतात. उदा. क्वांटम सिध्दांतात ही मर्यादा 'प्लँकचा स्थिरांक' (Planck's Constant) या नांवाने ओळखली जाते, व ती  $h$  या अक्षराने गणितात मांडली जाते. या मर्यादेतच त्याला सूक्ष्म जग (micro world) समजून घेतले पाहिजे. सापेक्षता सिध्दांतात प्रकाशाच्या वेगाची मर्यादा निसर्गाने घालून दिली असून या मर्यादेतच त्याला स्थूल विश्व (macro world) समजून घेतले पाहिजे. सापेक्षता सिध्दांतात हा स्थिरांक  $c$  या अक्षराने निर्देशित केला जातो. सूक्ष्म जगात स्थळाची व स्थूल जगात कालाची मर्यादा अशारीतीने मानवाला वैज्ञानिक पध्दतीने ओलांडता येत नाही. (ती ओलांडण्याचा प्रयत्न केला तर बोहमप्रमाणे त्याला अध्यात्मात प्रवेश करावा लागतो!) स्थूलकालाच्या व कार्यकारणभावाच्या बाहेरचे जग हे विज्ञानाच्या कक्षेत येत नाही. म्हणजेच ते शब्दात-म्हणजे मानवी संकल्पनांनी-व्यक्त करता येत नाही. मानवाला स्थूलकालाची व कार्यकारणभावाची मर्यादा 'कर्मा' मुळे प्राप्त झाली

आहे. ती पर्यादा ओलांडायची झाल्यास त्याला कर्मबंधनातून मुक्त व्हावे लागेल. ही गोष्ट फ्रिजॉफ् काप्राने पुढीलप्रमाणे सांगितली आहे, “As long as we try to explain things, we are bound by karma : trapped in our conceptual network To transcend words and explanations means to break the bonds of karma and attain liberation.”<sup>३५६</sup> याचा अर्थ असा की शब्दातून, संकल्पनातून- म्हणजे विज्ञानातून-विश्व समजू घेण्याचा प्रयत्न हा कर्मबंधनात राहून विश्व समजून घेण्याचा प्रयत्न आहे. संकल्पनांच्या जाळ्यात अडकून म्हणजे बुद्धीने विश्व कधीही समजणार नाही. त्यासाठी कर्मबंधनातून मुक्त होणे आवश्यक आहे; आणि कर्मबंधनातून मुक्त होणे म्हणजे जन्ममरणाच्या फेऱ्यातून निसटणे होय. याचाच अर्थ ईश्वररूप (ब्रह्मरूप) होणे किंवा ‘पूर्ण ज्ञानी’ होणे होय.\* असा ज्ञानी (खरे तर ‘विज्ञानी’) आपले ज्ञान शब्दात सांगू शकत नाही. म्हणून केनोपनिषद म्हणते,

यस्यामतं तस्य मतं, मतं यस्य न वेद सः । (२.११) (ज्याला ज्ञान होते तो आपले ज्ञान (शब्दात) सांगत नाही. जो सांगतो त्याला ज्ञान झालेले नसते.)

ब्रह्मसूत्रातील ३.२.१७ या सूत्रावर भाष्य करताना शंकराचार्यांनी बाध्वाची एक गोष्ट सांगितली आहे. ब्रह्माचे स्वरूप विचारणाऱ्या बाष्कलीला बाध्वांनी उत्तरच दिले नाही. पुन्हा दोनदा तोच प्रश्न त्याने विचारल्यानंतर बाध्व म्हणाले, “मी तुला उत्तर दिले आहे, पण ते तुला समजले नाही.” ‘ब्रह्म’ वा ‘आत्मा’ हा बोलण्याचा विषय नाही. अनुभवाचा विषय आहे. म्हणजे विश्वाचे रहस्य बुद्धीला कळणारे नाही. शेवटी त्याला समजावे म्हणून बाध्व म्हणाले, ‘उपशान्तोऽयमात्मा ।’

\* हे वर्णनही परोक्षच आहे. कारण ‘ज्ञान’ हे ‘ज्ञाता’ आणि ‘ज्ञेय’ हे द्वंद्व सूचित करते. याच्या उलट ‘ब्रह्मरूपी’ इंद्रातीत असतो. म्हणून त्याला ‘ज्ञान’ म्हणण्याऐवजी संतांनी व उपनिषदांनी त्याला ‘विज्ञान’ म्हटले आहे. उदा. छांदोग्य उप. म्हणते यदा वै विजानाति अथ सत्यं वदति । म्हणजे ‘विज्ञान’ जाणणारा (विज्ञानी) सत्य बोलतो. म्हणजे सत्याला लक्षणेने ‘विज्ञान’ म्हणावे. अध्यात्मात ‘ब्रह्म’ हेच सत्य आहे म्हणून ‘ब्रह्म’ म्हणजे ‘विज्ञान’ होय. म्हणून एकनाथ महाराज म्हणतात, विज्ञानाचे मुख्य लक्षण / साधक होय पूर्ण ब्रह्म । (एक. भाग. ३०.३९३) रामदास स्वामी म्हणतात, विज्ञानी पावता उन्नम । सहजचि होते ॥ (दा. बो. २०.१०.२५) ‘उन्नमी’ ही समाधी अवस्था होय. म्हणून ते म्हणतात, ‘विज्ञान’ वृत्ती मुरे परब्रह्मी ॥ (दा. बो. ७.४५१) ज्ञानेश्वर म्हणतात, सत्वशुद्धीचियेवेळे । .. ईश्वरतत्त्वीच मिळे ॥ ते ‘विज्ञान’ बरवे । गुणरत्न जेथ आठवे ॥ (ज्ञाने. १८.८४८.९) ‘ईश्वररूप’ किंवा ‘परमब्रह्म’ होणे म्हणजे ‘विज्ञान’ असे येथे रामदास व ज्ञानेश्वर हे दोघेही म्हणतात. रामकृष्ण परमहंस म्हणतात, “Sages like Narada cherished love of God after attaining the knowledge of Brahman. This is vijñan.” (Gospel. p 482) (नारदासारख्या ऋषींनी ब्रह्मज्ञान-ईश्वरज्ञान-झाल्यावर ईश्वरावर प्रेम केले. यालाच (ईश्वरानुभूतीलाच) ‘विज्ञान’ म्हणतात.) तात्पर्य, उपनिषदे व संत ईश्वरानुभूतीला (सत्याच्या प्रत्यक्ष अनुभवाला) ‘विज्ञान’ म्हणतात. त्याच्या दृष्टीने ‘विज्ञान’ अनुभूतीचा विषय आहे, बौद्धिक चर्चेचा नाही.

(आत्मा शांत असतो.)

पण एवढ्याने माणसाचे समाधान होते काय ? तुकारामासारख्या संताचे तरी होत नाही. म्हणून ते म्हणतात, नको ब्रह्मज्ञान आत्मस्थिती भाव । मी भक्त तू देव ऐसे करी ॥ किंवा

मन वाचातीत तुझे हे स्वरूप । म्हणोनिया माय भक्ति केले ॥ १ ॥  
भक्तीचिया माये मोजितो अनंता । इतराने तत्त्वता न मोजवे ॥ २ ॥  
योगयाग तपे देहाचिया योगे । ज्ञानाचिया लागे न सापडसी ॥ ३ ॥  
तुका म्हणे आम्ही भोळ्या भावे सेवा । घ्यावी जी केशवा करितो ऐसी ॥ ४ ॥

कॉंटम सिध्दांताने भौतविज्ञानिकांपुढे निर्माण केलेली 'मापना' ची समस्या (measurement problem) तुकारामांनी अशारीतीने भक्तीच्या 'मापाने' त्याला मापून/मोजून सोडवली आहे. कारण इतर सर्व दृष्टींनी 'अनंत' (infinite) आणि 'अप्रमेय' (immeasurable) [अनाशिनोऽप्रमेयस्य । भ. गी. २.१८] असलेला तो ईश्वर (विश्वाच्या बुडाशी असलेले व कॉंटम सिध्दांताने लपविलेले ते अतींद्रिय सत्य वा तत्त्व) भोळ्या भावाने केलेल्या सेवेनेच मोजला/मापला जातो - प्रसन्न होतो ! (ते तत्त्व 'सांत' व 'प्रमेय' होते ! ) सर्व शास्त्रज्ञांना मोठी समस्या बनलेल्या विश्वविषयक गूढ प्रश्नाची ही तुकारामांची सोडवणूक 'भोळी' आहे, हे खरे. पण भोळ्या (simple) पण अंतःकरणाने प्रेम व भक्ती करणाऱ्या लोकांनाच शेवटी ईश्वर भेटतो. (सत्य सापडते.) बुद्धिमान लोकांना-तथाकथित 'वैज्ञानिकां' ना नाही. म्हणून गीता म्हणते, भक्त्या मामभिजानाति यावान् यश्चास्मि तत्त्वतः । (भ.गी. १८.५५) म्हणजे केवळ भक्तीनेच मला (ईश्वराला) स्वरूपतः जाणणे शक्य आहे. (बुद्धीने नाही.) हीच 'गूढानुभूती' (mystic experience) होय. (हाच 'ईश्वर साक्षात्कार' आहे.)

## समारोप

पदार्थ विज्ञान (physics), भूत, भानामती परामनो-विज्ञान (दैवतशास्त्र = Black/White Magic) आणि ब्रह्मविज्ञान (वेदांत/योगशास्त्र = Spiritual Science) या तिन्हींचा वरवर पाहता परस्पराशी काही संबंध नाही. दुसरे शास्त्र जणू अस्तित्वातच नाही अशा थाटात प्रत्येक शास्त्र वागते. ते अस्तित्वात असल्याचे त्याच्या निदर्शनास आणून दिले तर त्याचा धिक्कारसुध्दा करते ! (कचित त्याला खोटे / अंधश्रद्धासुध्दा म्हणते ! ) अशा परिस्थितीत या तिन्ही शास्त्रांना (होय, ही तीन्ही 'शास्त्रे' च आहेत ! ) एकत्र आणण्याचा 'चमत्कार' प्रस्तुत ग्रंथात केवळ 'विज्ञाना' मुळेच शक्य झाला

आहे. ही तीन्ही 'शास्त्रे' आकाशातून पडलेली नाहीत. त्यांची नाळ परस्पराशी निसर्गतःच जोडली गेली आहे. ती 'माणूस' या प्राण्यामुळे जोडली गेली आहे.

मनुष्य हा भौतिक विश्वातील सर्वश्रेष्ठ प्राणी आहे. उत्क्रांतीचा परमोच्च बिंदू आहे. त्याला स्थूल शरीर आहे. पण या स्थूल शरीरात त्याला वासना, मन, बुद्धी व आत्मा हेही आहेत. त्यामुळे भौतिक जीवन जगण्यासाठी त्याला ज्याप्रमाणे भौतिक (शारीरिक) गरजा भागवाव्या लागतात, त्याचप्रमाणे त्याला वासनात्मक, मानसिक, बौद्धिक व आत्मिक जीवन जगण्यासाठी त्या त्या पातळीवरील गरजाही भागवल्या पाहिजेत. त्या गरजा भागवल्या नाहीत तर तो पूर्ण अर्थाने 'मनुष्य' म्हणून जगू शकणार नाही. पण या गरजा यथायोग्यरीतीने भागवण्यासाठी त्याला 'विज्ञाना'ची कास धरली पाहिजे. अन्यथा त्याचे अपरिमित नुकसान होऊ शकते. उदा. स्थूल शरीराच्या भौतिक गरजा शास्त्रीय ज्ञानाने भागवल्या नाहीत तर ते शरीर अकार्यक्षम (रोगी) बनेल. कदाचित् ते जिवंतसुद्धा राहू शकणार नाही. त्यासाठी त्याला शरीरशास्त्र, आरोग्यशास्त्र, आहारशास्त्र इ. चे ज्ञान असणे आवश्यक आहे. त्याचप्रमाणे त्याला आपल्या भावनिक मानसिक, नैतिक व आध्यात्मिक आरोग्यासाठी सूक्ष्म (अदृश्य) देहांच्या अर्तीन्द्रिय पातळीवरील गरजा भागवल्या पाहिजेत. त्यासाठी त्याला वासनादेह (लिंगदेह), मनोदेह, बुद्धिदेह व आत्मा यांचे शास्त्रीय ज्ञान असणे आवश्यक आहे. हे सूक्ष्म देह स्थूल देहाप्रमाणे 'दृश्य' नसल्यामुळे-ते अदृश्य पातळीवरील देह असल्यामुळे-त्यांच्या आरोग्याकडे मनुष्य नेहमीच दुर्लक्ष करीत असतो. ते देह जणू अस्तित्वातच नाहीत अशा थाटात तो वागत असतो ! त्यामुळे भावनिक, मानसिक, नैतिक व आध्यात्मिक क्षेत्रात (पातळीवर) त्या दुर्लक्षामुळे होणाऱ्या दुष्परिणामापासून त्याचे अपरिमित नुकसान होत असते. ते परिणाम त्याला दिसत नाहीत, म्हणून चुकत नाहीत. ते त्याला भोगावेच लागतात. अर्तीन्द्रिय विज्ञानाच्या माहितीच्या/ज्ञानाच्या अभावामुळे ते त्याला भोगावे लागतात, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. जे डोळ्यांना दिसते ते (दृश्य) भौतिक जग तेवढेच काय ते खरे जग आहे, असे समजून फक्त त्या जगाच्या नियमांच्या शोधालाच 'विज्ञान' म्हणण्याची चूक मोठमोठे शास्त्रज्ञसुद्धा करीत असतात. ही त्यांची खरे तर 'वैज्ञानिक अंधश्रद्धा' आहे. 'वैज्ञानिक' (वैज्ञानिकांची) असली तरी ती अंधश्रद्धाच आहे, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. कारण ज्याप्रमाणे एखादा आंधळा मनुष्य आपल्याला दिसत नाही म्हणून 'प्रकाश'च अस्तित्वात नाही, असे म्हणू शकत नाही, त्याप्रमाणे अर्तीन्द्रिय दृष्टी नसलेला मनुष्य-मग भले तो मोठा शास्त्रज्ञ असेल-लिंगदेह, मनोदेह, बुद्धिदेह व आत्मा हे डोळ्यांना दिसत नाहीत म्हणून ते अस्तित्वातच नाहीत असे म्हणू शकणार नाही. ते अस्तित्वात नाहीत असे

म्हणणाऱ्यांना 'अदृश्य' पातळीवरील त्या देहांचे भौतिक जगातसुद्धा कसे 'दृश्य' परिणाम घडून येतात व इतरांनाही ते कसे पाहायला मिळतात, हे दाखवून देण्याचा या ग्रंथात प्रयत्न केला आहे. त्यामुळे त्यांचे अस्तित्व 'आंधळ्या' भौतिकवादी शास्त्रज्ञांनासुद्धा मान्य करावे लागते. त्यामुळे अतींद्रिय पातळीवरील त्या देहांच्या शास्त्रीय ज्ञानाची गरज, मानवाच्या सर्वांगीण (आध्यात्मिक) विकासासाठी, भौतिक देहाच्या ज्ञानाइतकीच, किंबहुना त्याहूनही जास्त कशी आहे, हे कोणलाही पटण्यासारखे आहे.

अतींद्रिय जगाचे अस्तित्व व मानवी जीवनातील त्याचे महत्त्व तात्त्विक दृष्टीनेसुद्धा भौतशास्त्रज्ञांना स्वतः त्यांचे भौतशास्त्रीय सिध्दांतच कसे दाखवून व पटवून देतात, हेही शेवटी क्वांटम सिध्दांताच्या चर्चेतून व विवरणातून दाखवून दिले आहे. त्यामुळे भौतिक शास्त्रालासुद्धा शेवटी अध्यात्मशास्त्रालाच तात्त्विकदृष्ट्या कसे येऊन मिळावे लागते, हे कळून येते. वास्तविक 'तात्त्विकदृष्ट्या कसे मिळावे लागते' हा शब्दप्रयोगसुद्धा सापेक्षच आहे. कारण मुळात भौतिक विश्व आध्यात्मिक (ब्रह्म) तत्त्वातूनच निर्माण (विकसित) झालेले असल्यामुळे, म्हणजे त्याला आध्यात्मिक तत्त्वाचेच अधिष्ठान असल्यामुळे, त्या तत्त्वाचे सहाय्य घेतल्याखेरीज भौतिक विश्व तत्त्वतः अर्थपूर्णच होणार नाही-शास्त्रीयदृष्ट्या सिध्दच होणार नाही. भौतिक विश्वाचे हे 'शास्त्रशुध्द तात्त्विक ज्ञान' म्हणजे सर्व विज्ञानांचे विज्ञान असलेल्या 'अध्यात्मविज्ञानाचे शास्त्रशुध्द ज्ञान'च असून ते ज्ञानच मानवाच्या व भौतिक विश्वाच्या निर्मितीच्या 'चमत्कारा'चा-या विश्वरूपी (ईश्वरी) नाटकाचा-या ईश्वरी मायेचा-उलगडा करू शकते. किंबहुना विश्व म्हणजे एक ईश्वरी नाटक आहे, ईश्वरी माया आहे, हे सुध्दा ते ज्ञानच दाखवून देऊ शकते. त्या ज्ञानाचे महत्त्व किती सांगावे तितके थोडेच आहे. पण भौतशास्त्रावर (व भौतिकवादावर) अपरंपार विश्वास असणाऱ्यांसाठी ते 'थोडे' तरी सांगितले पाहिजे, म्हणून हा 'थोडा' प्रयत्न केला आहे.

इत्यलम्

○○○○○



## \* संदर्भ व टीपा \*

(१) भौतिक जग 'दृश्य' आहे (अर्थात् रुढ अर्थाने) यालाही वैज्ञानिक आधार नाही. उदा. भौतिक जगाचे अंतिम घटक मानले गेलेले 'क्वॉर्क' व 'ग्लुऑन' हे 'दृश्य' नाहीत, नव्हे तत्त्वतः ते दृश्य होऊच शकत नाहीत असे याविषयीचा शोधसिध्दांत सांगतो. पाहा. **Dreams of Final Theory** (1992) Steven Weinberg.

(२) येथे 'चमत्कारां'ना 'तथाकथित' हे विशेषण लावण्याचे कारण 'चमत्कार' नावाची गोष्ट अस्तित्वात नाही, हे आहे. ज्या घटनांना 'चमत्कार' समजण्यात येते. त्या वास्तविक निसर्ग-नियमानुसार घडणाऱ्या नैसर्गिक घटना असतात. तशा त्या नसत्या तर त्या घडल्याच नसत्या. त्या कशा घडतात याविषयीचे नियम भौतिक शास्त्रातील गृहीतकृत्यांच्या आधारे कळत नसल्यामुळे त्या भौतिक शास्त्राचे नियमोल्लंघन करतात असे भौतिक शास्त्रज्ञ चुकीने-अज्ञानाने-समजतात व त्यांना 'चमत्कार' या सदरात ढकलतात. वास्तविक त्यांच्याविषयीच्या कार्यकारणभावाचे आपले अज्ञान मान्य करणे व घाईने कोणत्याही निर्णयाला न येणे हा वैज्ञानिक शहाणपणा आहे. प्रस्तुत विभागात 'चमत्कार' हा शब्द अवतरण चिन्हात ठेवण्यापाठीमागची लेखकाची हीच भूमिका आहे, हे वाचकांनी ध्यानात घ्यावे. दुसरी गोष्ट, 'चमत्कार' हा शब्द सर्व अतींद्रिय घटनांना उद्देशून या ठिकाणी वापरला आहे, हेही वाचकांनी ध्यानात घ्यावे अतींद्रिय घटनांचे संशोधन व अभ्यास करणाऱ्या शास्त्राला प्रारंभी **Psychical Research** हे नाव देण्यात आले होते. हल्ली त्याला **Parapsychology** (परामानसशास्त्र) असे म्हटले जाते. अतींद्रिय घटनांना पूर्वी **Psychic Phenomena** म्हणत असत. हल्ली त्यांना **Extrasensory Perception (ESP)** म्हणजे 'अतींद्रिय प्रत्यक्ष' म्हणून संबोधले जाते. घटनांची नावे बदलल्यामुळे त्यांचे स्वरूप बदलत नाही. हा नावातील बदल या घटनाकडे पाहण्याचा शास्त्रज्ञांचा दृष्टिकोन अधिक शास्त्रीय बनला असल्याचे सूचित करतो. याचा अर्थ पूर्वीच्या अतींद्रिय घटनांच्या अभ्यासकांचा दृष्टिकोन अशास्त्रीय किंवा कमी शास्त्रीय होता असा मुळीच नाही. **Psychical Research** किंवा **Psychic Phenomena** यामधील अतींद्रिय घटनांचे मूळ स्वरूप निर्देशित करणारा शब्द 'Psyche' हा असून त्याचे दोन अर्थ आहेत. एक 'आत्मा' व दुसरा 'मन' या अतींद्रिय घटनांना 'आत्मा' जबाबदार आहे असे पूर्वीचे संशोधक समजत असत. (म्हणून त्यांचा भर मरणोत्तर आत्म्याच्या अस्तित्वाच्या संशोधनावर प्रामुख्याने असे. त्यांचे तत्कालीन टीकाकार त्यांना 'भूतसंशोधक' म्हणून याच कारणासाठी हिणवत असत ! ) हल्लीचे संशोधक मानवी मनच या घटनांना कारणीभूत आहे असे समजतात. पण मानवी मनाच्या कर्तृत्वाचे संशोधन 'शास्त्रीय' व त्याच्या आत्म्याच्या कर्तृत्वाचे संशोधन 'अशास्त्रीय' (किंवा कमी शास्त्रीय) हे तरी कशाच्या आधारे ठरवणार ? याविषयीचे शास्त्रीय निष्पत्ती कुणालाच माहीत नाहीत. अतींद्रिय घटनांचे कारकत्वं वास्तविक 'आध्यात्मिक तत्त्व' व (**Spiritual Principle**) आहे. यालाच येथे 'अतींद्रिय' हा पर्यायी शब्द वापरला असून 'अतींद्रिय शास्त्र' हेच 'आध्यात्मिक शास्त्र' (किंवा 'ब्रह्मविज्ञान') असल्याचे गृहीत धरून 'मना'च्या वा 'आत्म्या'च्या

कर्तृत्वाचा वादच गैरलागू ठरविण्यात आला आहे. पाश्चात्य अर्तीद्रिय शास्त्रज्ञांना योगशास्त्राचा परिचय नसल्यामुळे वस्तुतः हा वाद निर्माण झाला आहे, हे वाचकानी लक्षात घ्यावे.

(३) पाहा. विज्ञान आणि अंधश्रध्दानिर्मूलन या पुस्तकातील 'अंधश्रध्दानिर्मूलनवाद्याची एक फसवी भलावण' हे प्रकरण.

(४) **Science and Psychical Research** (1938) G N M Tyrrell

(५) 'जीवोत्पत्ती : रुढ जीवशास्त्राला न सुटलेले कोडे' अद्वयानंद गळतगे, नवभारत मासिक, नोव्हेंबर-डिसेंबर, १९९९.

(६) **The Causes of Evolution** - J B S. Haldane, quoted in tyrrell, op. cit.

(७) **Psychic Discoveries Behind the Iron Curtain** (1970) S Ostrander and L Shroeder

(८) **Experiments in Mental Suggestion** (1963) L L Vasiliev अँड्रीजा पुहारिच या शास्त्रज्ञाने नंतर 'फॅरॅडे केज' वापरून असेच प्रयोग मिसिस आयलिन गॅरेट व स्टोन यांच्यावर करून या निष्कर्षांना पुष्टी दिली आहे पाहा **Beyond Telepathy** (1961) Andrija Puharch

(९) **Modern Experiments in Telepathy** (1954) S G Soal & F Bateman.

(१०) **Some Cases of Prediction** (1937) Dame Edith Lyttleton.

(११) **Prophecy and Prediction** (1989) C N Gattey

(१२) **Premonition of the Aberfan Disaster** J C Barker **J. Soc. Psych. Res.** 1967, 44 pp. 169-81

(१३) "Precognition An Analysis I and II" **Journal of the American Society for Psychical Research**, 50 (1956)

(१४) **My Darling Clementine** (1964) Jock Fishman & W H Allen cited in **Psychic Exploration** (1974) Edgar D. Mitchell pp .68-9

(१५) **Hidden Channels of Mind** (1962). **ESP in Life and Lab** (1967) **The Invisible Picture** (1981) L. E Rhine

(१६) **Challenge of Psychical Research** (1961) Gardner Murphy

(१७) **Indian Express**, January 5, 1980

(१८) पिशाचबाधा झालेल्या लोकांना कुनूर या गावच्या मारुतीच्या देवळात ठेवले तर ती बाधा निघून जाते अशी बऱ्याच लोकांची श्रध्दा असल्यामुळे त्या बाईला ६ महिने त्या देवळात ठेवले होते. तेथे भीमापाच्या आत्म्याने त्या बाईच्या तोंडून खुनाची माहिती सांगितली होती या

देवळाचे वैशिष्ट्य म्हणजे तेथे ठेवलेले बाधित लोक निश्चित बरे होऊन जातात, असा अनुभव तेथील लोक सांगतात तसेच तेथे बाधिताला ठेवावे की नाही हे तेथील मारुतीला कौल लावूनच ठरवतात व त्याचा कौलाप्रमाणे हमखास प्रत्यय येतो, असेही सांगण्यात येते.

(१९) **In Search of the Dead** (1992) Jeffery Iverson

(२०) **Indian Express**, Sunday, November 26, 1995.

(२१) 'मृतात्मा' हा शब्दप्रयोग चुकीचा असल्याचे काहीजण म्हणतात. ते चुकीने हा कर्मधारय समास आहे असे समजतात. वास्तविक तो षष्ठी तत्पुरुष समास आहे. आत्मा मृत असू शकत नाही. मृताचाच असू शकतो.

(२२) **Death-bed Observations by Physicians and Nurses** (1961), **At the Hour of Death** (1973) Karlis Osis & Erlandur Haroldson

(२३) **Death-bed Visions** (1926) William Barrett, quoted in op. cit. अशाच प्रकारचे उदाहरण १० व्या प्रकरणात दिले आहे.

(२४) अशा ग्रंथांची यादी १० व्या प्रकरणाच्या शेवटी दिली आहे. त्यानंतरही याविषयावर अनेक ग्रंथ प्रसिध्द झाले आहेत.

(२५) दै. तरुण भारत (बेळगाव). लेखात उद्धृत केलेल्या उदाहरणाचे कात्रण प्रस्तुत लेखकाकडे आहे. अनवधानाने अंकाची तारीख टाकणे राहून गेले, हे नमूद केले पाहिजे.

(२६) **At the Hour of Death** (1973) K. Osis & E. Haroldson

(२७) **Parapsychology and the Nature of Life** (1975) John L. Randall

(२८) **Psychic Discoveries Behind the Iron Curtain** (1970) Sheila Ostrander and Lynn Schroeder

(२९) **Sai Baba : Man of Miracles** (1971) Howard Murphet

(३०) **The Story of Therese Newman** (1947) A.B. Schimberg. एकाचे कर्म (उदा. रोग) दुसरी व्यक्ती स्वतःच्या शरीरात अतींद्रिय सामर्थ्याने घेऊन भोगू शकते हे रामकृष्ण परमहंस, सत्य-साईबाबा, थेरेसा न्यूमन यांच्याप्रमाणे इतर अनेकानी दाखवून दिले आहे. उदा. सायप्रसचा डास्कालोस हा आपल्या जावयाचा पायाचा रोग स्वतःच्या पायात घेऊन अंधरुणात झोपून होता. पण आपले अतींद्रिय सामर्थ्य दाखवण्यासाठी एकदा त्याने ज्या पायावर तो उभाही राहू शकत नव्हता. त्या पायावर अक्षरशः नाचून दाखवले व परत खाटेवर जाऊन बसत म्हणाला, 'आता मला ते कर्म परत घेतले पाहिजे ('Now I must get the karma back.') त्याने सांगितल्याप्रमाणे ते कर्म एक अठवडाभर भोगल्यानंतर त्याचा पाय बरा झाला. **Beyond the Occult** (1988) C. Wilson p. 423-4. अशाच प्रकारचे विलेमहाराजांचे पुढे

उदाहरण देणेत येईल

(३१) **Supernature II** (1986) Lyll Watson

(३२) म्हणून उपनिषत्कार, गीताकार, संत इत्यादींची आध्यात्मिक वचने वैज्ञानिक ठरतात. उदा. श्रध्देचे महात्म्य सांगणारे गीतेचे 'श्रध्दामयोऽयं पुरुषः यो यच्छ्रद्धः स एव सः।' (मनुष्य श्रध्दामय असून तो जशी श्रध्दा बाळगतो तसा बनतो.) हे वचन शास्त्रीयच आहे आणि मनाचे अलौकिक सामर्थ्य सांगणारे 'मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः।' हे ब्रह्मबिंदूपनिषदातील प्रसिध्द वचन मानसशास्त्रीय सत्य सांगणारेच असून तुकारामांनी त्याचाच अनुवाद 'मन करा रे प्रसन्न । सर्व सिध्दीचे कारण । मोक्ष अथवा बंधन । सुख-समाधान इच्छा ते ॥' या प्रसिध्द अभंगात केला आहे. वेगळ्या रीतीने हेच 'मनसैवेदमाप्तव्यं नेह नानास्ति किंचन ।' (मनानेच विश्वाचे स्वरूप एकसंघ-परमात्ममय-आहे हे ओळखून आत्मसात् करायचे आहे) हे कठोपनिषदातील यमाच्या तोंडचे वचन सांगते.

(३३) **Autobiography of a Yogi** (1975) Sri Paramahansa Yogananda.

(३४) **Miracles** (1982) D Scott Rogo

(३५) येथे 'दैवी' हा शब्द ज्याची भौत शास्त्रीय उपपत्ती देता येत नाही, अशी घटना, या अर्थाने वापरली आहे.

(३६) **संयुक्त कर्नाटक** (कन्नड दैनिक), डिसेंबर १९, १९९१

(३७) **Psi-Healing** (1976) Alfred Stetter डोक्यातून आरपार खंजीर खुपसून घेणाऱ्याचे फोटोसह प्रसिध्द झालेले भारतातील एक उदाहरण **विज्ञान आणि बुद्धिवाद** या ग्रंथाच्या ५ व्या प्रकरणाच्या टीपेत दिले आहे. तसेच **Power Within** या अलेक्झांडर कॅनॉनच्या ग्रंथातील अशाच प्रकारची इतर उदाहरणे दिली आहेत

(३८) येथे 'अध्यात्मशास्त्राच्या दृष्टीने' हे शब्द महत्त्वाचे आहेत भौतिक शास्त्राच्या दृष्टीने भौतिक जगाचे जडत्व खोटे नाही.

(३९) **The Secret Science Behind Miracles** (1948) Max Freedom Long ब्रिघॅम हा होनोलुलू येथील प्राचीन वस्तुसंग्रहालयाचा क्युरेटर होय. येथे 'लाव्हा' हा तप्त घनीभूत पदार्थ समजावा. 'रस' समजू नये.

(४०) **Afterlife** (1989) Colin Wilson

(४१) **शक्तिपातयोगरहस्य** (१९७३) के. आर. जोशी.

(४२) **Theories of Everything** (1991) J D Barrow

(४३) न्यूटनने, मला गुरुत्वाकर्षण शक्तीचे-दोन वस्तू एकमेकाकडे का आकर्षिले जातात याचे - रहस्य उलगडता आलेला नाही अशी स्पष्ट कबूली दिली आहे 'Whether this agent

is material or immaterial is a question I have left to the consideration of the readers' (या गुरुत्वाकर्षण शक्तीचे स्वरूप काय आहे या प्रश्नाचे उत्तर माझ्या ग्रंथाच्या वाचकांवर मी सोपवितो) असे त्याने याविषयी म्हटले आहे. नंतरच्या व इतर शास्त्रज्ञांनी Action at a distance असे म्हणून - या शब्दात - आपले हात झटकले आहेत ! (भौतिक शास्त्रात action at a distance - दुरून परिणाम होणे - ही absurdity - मूर्खपणा - समजण्यात येते. स्वतः न्यूटननेच एका मित्राला लिहिलेल्या पत्रात तसे स्पष्टच म्हटले आहे !

(४४) **Origin of the Universe** (1994) J. D. Barrow 'विश्व आणि मानव' हे विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथातील ७ वे प्रकरण पाहा.

(४५) **The Physicist's Conception of Nature** (1973) ed J. Mehra "There may be no such thing as the 'glittering mechanism of the universe' Not machinery but magic may be the better description of the treasure that is awaiting " J A Wheeler (विश्वाचे कार्य यांत्रिक पद्धतीने नव्हे तर जादूने चालते, असे येथे व्हीलर म्हणतो.) क्वांटम सिध्दांताची तुलना व्हीलरने प्रसिध्द जादूगार मर्लिनशी केली असून (हा जादूगार निरनिराळी रूपे धारण करित असे अशी कथा आहे.) भौतिक शास्त्राचे सर्व नियम परिवर्तनीय (बाधित होणारे) असून फक्त क्वांटम सिध्दांताचे नियमच काय ते अबाधित आहेत, असे त्याने प्रतिपादिले आहे. म्हणजेच विश्व अबाधित अशा क्वांटमच्या एकमेव सिध्दांतावर-त्याच्या नियमावर-आधारले आहे आणि उत्पन्नही झाले आहे, असे त्याचे म्हणणे असून हा सिध्दांत म्हणजे स्वतःच जादूगार आहे, असे तो म्हणतो. याच्याही पुढे जाऊन खुद्द भौतिकशास्त्र म्हणजेच एक 'जादूची खिडकी आहे' असे त्याने नंतरच्या एका लेखात म्हटले आहे. "Recent decades have shown that physics is a magic window." **Quantum Theory and Measurement** (1983) ed J A Wheeler and W. H. Zurek p 210) अशारीतीने क्वांटम सिध्दांनामुळेच भौतविज्ञान 'जादूचे विज्ञान' बनले असल्यामुळे त्यावर आधारलेले भौतिक विश्वही जादूचे ('चमत्कारा'चे) विश्व बनले असल्यास नवल नाही ! म्हणूनच त्याने आपल्या लेखाला Law without Law (नियम निसलेला नियम) असा मथळा दिला आहे !- जणू काही नियम नसलेल्याला नियम म्हणता येते ! याविषयी अधिक चर्चा पुढे करण्यात येईल.

(४६) **The Physicist's Conception of Nature** (1973) ed J Mehra "Now more than ever one is certain that no approach to physics that deals only with physics will ever explain physics." J A Wheeler p 244 म्हणजे "भौतशास्त्राची उपपत्ती भौतशास्त्राबाहेरील अभौतिक (अतींद्रिय)- ['चमत्कारा'च्या वा जादूच्या -] क्षेत्रात शोधण्यावाचून गत्यंतर नाही, याची आता भौतशास्त्रज्ञांना पूर्वी कधीही नव्हती इतकी खात्री आता झाली आहे," असा याचा अर्थ आहे !

(४७) हे कसे याचे थोडे वैज्ञानिक दिग्दर्शन प्रस्तुत लेखकाचे पुढील दोन लेखातून केले आहे : 'विज्ञानाच्या दृष्टिकोनातून 'चार्वाकदर्शन' नवभारत (मासिक) ऑक्टो. १९८८; 'वैज्ञानिक

ज्ञानाचे प्रामाण्य' परामर्श (पुणे विद्यापीठ त्रैमासिक खंड १९ अंक ४ फेब्रु. १९९८)

(४८) 'जादू' या शब्दापुढे कंसात 'आध्यात्मिक' हा शब्द घालून दोहोत येथे जे साम्य कल्पिले आहे ते केवळ लाक्षणिक अर्थाने, जादूच्या 'फसवणुकी'च्या अर्थाने नव्हे, हे येथे लक्षात घ्यावे. व्हीलरने याच (लाक्षणिक) अर्थाने क्वांटम सिध्दांताला जादूचा सिध्दांत म्हटले आहे. शून्यातून विश्वाची निर्मिती झाल्याची क्वांटम सिध्दांताची वैज्ञानिक कल्पना ही मुळात आध्यात्मशास्त्रीय कल्पनाच आहे, हे मात्र लक्षात ठेवावे. हे पुढील ज्ञानेश्वरांच्या विश्वनिर्मितीसंबंधीच्या ओवीवरून स्पष्ट होईल. स्थावरजंगम सृष्टीरचनेचे वर्णन करून ज्ञानेश्वर म्हणतात - पाहिजे कवण हे आघवे विद्ये । तव मूळ ते शून्य ॥ (ज्ञाने. ८.२७) (हे सर्व कोणी निर्माण केले हे पाहू जाता मुळात शून्यातून निर्माण झाले असे दिसते.) 'शून्यातून विश्वनिर्मिती' याचा अर्थ आध्यात्मिकदृष्ट्या विश्व 'अव्यक्तातून व्यक्त झाले' असा होतो. अव्यक्तात् व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे । (भ.गी. ८.१८) या श्लोकात गीतेने हे स्पष्ट केले आहे.

(४९) सर्वच भौतिक (दृश्य) विश्व अर्तीन्द्रिय (आध्यात्मिक) तत्त्वावर अधिष्ठित असल्याचे - म्हणजेच भौतिक जग व अर्तीन्द्रिय ('चमत्कारा'चे) जग यात सीमारेषा नसल्याचे - दाखवून देणारी उपर्युक्त 'नियमाच्या उल्लंघना'ची अशास्त्रीय कल्पना ही अशास्त्रीय कशी आहे, हे भौतशास्त्रातील (जडत्व, विश्वोत्पत्ती इ.) गोष्टींची उपपत्ती भौतशास्त्राबाहेरील (आध्यात्मिक वा 'चमत्कार' युक्त) तत्त्वांची कास धरल्याशिवाय भौतशास्त्रज्ञाना देता येत नाही, या वस्तुस्थितीवरून सिध्द होते हे आधुनिक भौतशास्त्रातील शोधामुळेच अशारीतीने सिध्द होत असले तरी भौतशास्त्रातील शोधावर हे सत्य अवलंबून नाही, हे मात्र लक्षात ठेवले पाहिजे. भारतीय ऋषी-मुनींनी हे दृश्य जग आध्यात्मिक तत्त्वावर अधिष्ठित असल्याचे (अर्तीन्द्रिय) सत्य अर्तीन्द्रियदृष्टीतून हजारो वर्षांपूर्वीच शोधून काढले असून वेद व उपनिषदे यातील अनेक वचने याची साक्ष देतात. ती सर्व वचने येथे देण्याचे कारण नाही. येथे फक्त दृश्य जग व आध्यात्मिक (अर्तीन्द्रिय) जग यांच्यात सीमारेषा नसल्याचे सांगणाऱ्या वचनापुरताचा विचार करू. उदा. छांदोग्य उपनिषदातील पुढील वचन, "अथ य आत्मा स सेतुर्विधृतिरेषां लोकानामसंभेदाय" (छां.उप.८.४.१) किंवा बृहदारण्यक उपनिषदातील हे वचन, 'एष (महानज आत्मा) सेतुर्विधरण एषां लोकानामसंभेदाय' (बृ.उप.४.४.२२) यातील 'सेतु' याचा अर्थ bridge असा ह्यामने करून दृश्य व अदृश्य जगांना तो (सेतुरूपी आत्मा) वेगळा किंवा अलग (separate) करतो असे म्हटले आहे. (Thirteen Principal Upanishads - R. E. Hume, 1983) पॉल ड्यूसेन यानेही असाच अर्थ केला आहे. (The Philosophy of Upanishads - Paul Deussen, 1972) आर. डी. (गुरुदेव) रानडे यांनी 'सेतु' याचा अर्थ bund (बांध किंवा बंधारा) असा करून जीवन अस्तित्वरूपी नदी वाहून जाऊ नये म्हणून बांधलेला तो (सेतुरूपी आत्मा किंवा आध्यात्मिक तत्त्व) बंधारा आहे, असे म्हटले आहे. (Constructive Survey of Upanishadic Philosophy - R. D. Ranade, 1926) आद्य शंकराचार्यनी 'सेतु' याचा अर्थ जोडणारा 'सेतु' व 'संरक्षण करणारा - जगाचे नियम सांभाळणारा बंधारा' (विधरणः)

असा दोन्ही रीतीने करून सर्व लोकांना जोडून जग नाश, पावण्यापासून वाचविणारा तो अधिष्ठाता आहे, असे म्हटले आहे. (उपनिषदभाष्य.) वस्तुतः वरील सर्वच अर्थ बरोबर आहेत. हा 'सेतु' दृश्य जग आणि अदृश्य जग यांना अलग ठेवणारा आहे, हे ह्यूम व ड्यूसेन यांचे म्हणणे खरेच आहे. (अर्थात् व्यावहारिक वा भौतिक अर्थाने) पण संकटकाळी या दोन्ही सकृदृशनी अलग जगात कसा सलग संबंध प्रस्थापित होतो (ही दोन्ही जगे कशी अतींद्रिय तत्त्वाने सकटसमयी अनपेक्षितपणे व अतर्क्यरीतीने जोडली जातात) हे आतापर्यंतच्या प्रस्तुत प्रकरणातील विवेचनावरून वाचकाच्या लक्षात आलेच आहे आणि असा संबंध, शंकराचार्य म्हणतात त्याप्रमाणे, जगाचे कर्मबंध वा कार्यकारणसंबंध (नीतिनियम) सांभाळून जगाचे रक्षण करण्यासाठीच जोडला जातो, हे स्पष्ट आहे. उदा. श्रद्धा, भक्ती (सत्यनिष्ठा) व मनोनिग्रह (योग) हे अनुक्रमे काहुना, मदिनाबी व कोमार (पाहा या ग्रंथाचे अनुक्रमे पृ. २३६, ७८, ८८) यांना (नेहमी - व्यावहारिकदृष्ट्या जाळणारा) अग्नी आपला स्वभावधर्म टाकून न जाळता थंड झाला - जाळू शकला नाही - असे आढळून येते. या गोष्टीची उपपत्ती भौतिक जगात दडलेल्या या अतींद्रिय नियमाचा ('सेतू'चा) आधार घेतल्याशिवाय कशी लावणे शक्य आहे बरे ? म्हणूनच गुरुदेव रानडे यांनी या सेतूला ballast (भौतिक जगाचे स्थैर्य सांभाळणारे अतींद्रिय तत्त्व वा साधन) म्हटले आहे. ऋग्वेदात यालाच 'ऋत' म्हटले आहे. (ऋ. ४.२३, ७.१०४ १२) या 'ऋता' (सत्या) मुळेच तापलेली कुन्हाड हातात घेतली तरी त्याने (निर्दोष माणसाचे) हात भाजत नसल्याचे उदाहरण छांदोग्य उपनिषद देते. (छां.उप. ६.१६.२) भानामती (व इतर अनाकलनीय 'चमत्कार' ही) ह्याच 'ऋता' तून घडतात. (हे कसे हे आपण पुढे पाहणार आहोत.)

(५०) नमुन्या दाखल पुढील ग्रंथ पाहा. **The Tao of Physics** (1976) Fritjof Capra; **Mysticism and the New Physics** (1980) M. Talbot, **Physics as Metaphor** (1982) Roger S. Jones, **The Medium, The Mystic and the Physicist** (1966) Lawrence Le Shan; **God and the New Physics** (1983) Paul Davies. **A Brief History of Time** (1988) S. Hawking. **The Dancing Wu Li Masters** (1979) Gary Zukav, **Mind, Matter and Quantum Mechanics** (1993) H. Stapp. **From Physics to Mataphysics** (1995) M. Redhead. **Physics of Immortality** (1996) F. Tipler; **The Quantum world** (1984) J. C. Polkinghorne, **Taking a Quantum Leap** (1981) F. A. Wolf

(५१) **Quantum Implications** (1987) ed. B. J. Hiley and F. David Peat, p. 446

(५२) या दृष्टीने पाहता परामानसशास्त्र (अतींद्रिय जगाचे संशोधन करणारे शास्त्र) हेच सत्यशोधक खरे शास्त्र ठरते. तथापि या शास्त्रातील शोधांना भौतिक शास्त्रे आपल्या क्षेत्रातील शोधांनी कशी बळकटी देत आहेत (टीप ५० पाहा) हे पाहता सर्व शास्त्रे ही सत्यशोधक शास्त्रेच ठरतात.

(५३) विज्ञान आणि बुद्धिवाद या प्रस्तुत लेखकाच्या ग्रंथातील प्रकरण ३ व ६ पाहा.

(५४) Miracles (1981) Martin Ebon

(५५) The New Soviet Psychic Discoveries (1980) Gris and Dick

(५६) संत बहेणाबाईचा गाथा (१९७९) सौ. शालिनी जावडेकर (अभग क्र. १९)

(५७) चौथे एक उदाहरण फक्त चहावर राहणाऱ्या व्यक्तीचे असून ती व्यक्तीही स्त्रीच आहे. तिने मुलांनाही जन्म दिला आहे. पाचवे एक उदाहरण मात्र पुरुषाचे असून तो प्रल्हाद जानी 'साधू' म्हणून ओळखला जातो. त्याचे हल्ली वय ७६ असून गुजरातमधील तीर्थक्षेत्र अंबाजी येथे तो राहतो. गेली ६६ वर्षे त्याने अन्नपाणी अजीबात घेतलेले नाही. आपल्याला अंबाजी देवीचा वयाच्या १० व्या वर्षी आशीर्वाद मिळाला, असे तो सांगतो. या गोष्टीवर विश्वास न बसल्यामुळे त्याची अहमदाबाद येथील स्टर्लिंग हॉस्पिटलमध्ये 'अतिदक्षता' विभागात त्याला १० दिवस ठेवून डॉक्टर लोकांनी जेव्हा कसून तपासणी केली, तेव्हा तो खरोखरच अन्नपाण्याशिवाय राहू शकतो, हे त्यांना मान्य करावे लागले. त्याची दिवसातून दोनदा सोनोग्रॅफी घेण्यात आली असून अन्यही वैद्यकीय तपासण्या करण्यात आल्या आहेत. स्टर्लिंग हॉस्पिटलचे डॉ. दिनेश देसाई म्हणाले की, "तो मलमूत्र विसर्जन करीत नाही. तथापि त्याच्या मूत्राशयात दररोज ४०० मिलिलिटर मूत्र तयार होते, पण ते मूत्राशयात शोषले जाते." अहमदाबादच्या 'असोशियन ऑफ फिजिशियन्स' चे डॉ. व्ही. एन्. शहा म्हणाले, "सामान्यतः मलमूत्रविसर्जन न करता मनुष्य सात दिवसापेक्षा अधिक काळ राहू शकत नाही. तथापि जानी हा सुस्थितीत असून त्याच्या इतर सर्व शारीरिक क्रिया इतर सामान्य लोकाप्रमाणे चालू असलेल्या दिसून येतात." त्याची वैद्यकीय तपासणी करणाऱ्या डॉक्टर लोकात शरीरशास्त्रज्ञ, हृदयरोगतज्ञ (Cardiologists), मज्जाविशारद (Neurologists), न्युरोसर्जन, मधुमेह तज्ञ, पोटातील विकारतज्ञ (Gastroenterologist), आणि घसा - नाक - डोळे यांचे शल्यचिकित्सक अशी तज्ञ मंडळी होती. (New Indian Express, Nov 29, 2003)

(५८) उत्क्रांतिवादाच्या दृष्टीने स्त्रीलिंग मूलभूत व प्राथमिक असून पुल्लिंग हे स्त्रीलिंगातून उत्क्रांत झाले आहे, व म्हणून दुय्यम आहे असे दिसून येते. याविषयीची जीवशास्त्रीय चर्चा प्रस्तुत लेखकाने 'लिंगभेद आणि उत्क्रांती' या मधळ्याखाली नवभारत मासिकातील लेखमालेत नोव्हेंबर १९६९ पासून पुढील सलग ९ अंकात केली आहे.

(५९) I) महायोगिनी माणिकेश्वरी माता (१९८७) मंगमपल्ली वेंकटराजा (हिंदी)  
(तेलुगूवरून भाषांतरित)

II) माते माणिकेश्वरी (१९९५) एम्. एम्. चंडरकी (कन्नड)

III) संत माणिकम्मा (१९७५) डी. एम्. कोठारी (मराठी)

(६०) श्री स्वामी समर्थ (१९७५) गोपाळबुवा केळकर (बखर). योगी कधी झोपत नाहीत याचे चिलेमहाराज यांचे असेच एक उदाहरण श्री. अथणे यांनी दिले आहे. झीरो बल्ब



लावलेल्या खोलीत महाराज झोपलेले पाहून अथणेनी त्यांना रात्री लांबूनच नमस्कार केला. त्यासरशी त्यांनी 'श्री गुरुदेव दत्त' म्हटले. त्यांची पाठ अथणेच्याकडे होती. तरीही त्यांनी नमस्काराला प्रतिसाद दिलेला पाहून त्यांचे मन शंकित झाले. देव सतत जागे असतात काय ? हा प्रश्न सतावू लागला. अथणे पुढे लिहितात, "दुसऱ्या रात्री मला दोन वाजता जाग आली. गुरुदेवांच्या घोरण्याचा आवाज माझ्या कानी आला. माझ्या शंकेचे निरसन करायला मला चांगलीच संधी प्राप्त झाली होती. मी झटकन उठलो आणि मांजराच्या पावलांनी देवांच्या खोलीत गेलो. देव घोरतच होते. त्याच क्षणी मी देवांना लांबून नमस्कार केला. आणि काय आश्चर्य ! ते घोरणे जिथल्या तिथे थांबले आणि त्याऐवजी मला 'श्री गुरुदेव दत्त' ही देववाणी ऐकायला मिळाली. आजही देवांची माझ्याकडे पाठ होती. मी परत येऊन अंथरुणावर पडलो."

"तिसऱ्या रात्रीही मी साडेतीन वाजता मुद्दाम देवांच्या खोलीत गेलो आणि लांबूनच त्यांना नमस्कार केला. 'श्री गुरुदेव दत्त' ही देववाणी पुन्हा त्याचक्षणी माझ्या कानावर आली. मी खिजून गेलो. पुनः पुन्हा देवांच्याबद्दल शंका घेणारा माझ्यासारखा निर्लज्ज दुसरा कोण असेल काय ? पुनः पुन्हा देव मला पटवून देत होते की 'अरे बळड्या, मी देव आहे देव. मला झोप नाही. विश्वकल्याणासाठी मी सतत जागा आहे.'" परब्रह्मगुरु चिलेदेव, पृ. २२४.

(६१) Autobiography of a Yogi (1975) Sri Sri Paramhansa Yogananda p 271.

(६२) Ibid p. 112

(६३) Psychic Discoveries etc (1970) Ostrander & Schroeder p. 330

(६४) I) शारदाबाई जीवनचरित्रे (कन्नड) दीपगळ संरक्षण समिती (दि.)

II) एण्णे इल्लदे उरियुत्तले इरुव दीपगळु - बी. गणपती, तरंग, (कन्नड सामाहिक)  
२ ऑगस्ट १९९८

(६५) या वादाविषयीची थोडी माहिती विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मुलन या ग्रंथातील १० व्या प्रकरणात दिली आहे. क्वॉंटम सिध्दात अपुरा (incomplete) आहे या सदराखाली काही शास्त्रज्ञ अजूनही वाद घालत असतात. याविषयी थोडी चर्चा शेवटी करावयाची आहे

(६६) हा गणिती सबंध प्रस्थापित करण्याचा प्रयत्न आतापर्यंत अयशस्वी झाला असला तरी नवीन तंतूचा सिध्दांत (string theory) हे काम करू शकतो असा भरवसा भौतशास्त्रज्ञांना आता वाटत आहे. तथापि हा सिध्दात अजून बाल्यावस्थेत असून या सिध्दांताचा एक प्रमुख प्रवर्तक शास्त्रज्ञ एडवर्ड विट्टेन म्हणतो की हा सिध्दांत परिपक्व होण्यास अनेक दशके किंवा शेकडो वर्षे देखील लागतील. कारण त्याचे गणित इतके गुंतागुंतीचे आहे की आज-मितीला त्या सिध्दातातील नेमकी समीकरणे कोणती हेच कोणाला माहीत नाही. [If could be decades or even centuries before string theory is fully developed and understood In fact the mathematics of string theory is so complicated that, to-date, no one even knows the exact equations of the theory (The Elegant Universe - (2000) Brian

Green. p 19)] असे असले तरी ज्या Unified Field Theory च्या शोधात आईन्स्टाइनने आपल्या आयुष्याची शेवटची तीस वर्षे काहीही संपादन न करता घालविली तो सिध्दांत शेवटी सापडला असल्याचे समाधान बहुसंख्य भौतशास्त्रज्ञांना या string theory मुळे हल्ली वाटत आहे. मात्र या स्ट्रिंग थिअरीला Unified Field Theory न म्हणता Theory of Everything असे म्हणण्याची फॅशन हल्ली पडली आहे. (टीप ४२ पाहा) पण अतींद्रिय शास्त्राच्या दृष्टीने क्वांटम सिध्दांत व सापेक्षता सिध्दांताचा गुरुत्वाकर्षण सिध्दांत यांच्यात शास्त्रज्ञांना गणिती संबंध प्रस्थापित करता येतो की नाही हा मुळात प्रश्नच नाही. हा संबंध भविष्यात प्रस्थापित झाला तरी त्यामुळे विश्वातील सर्व गोष्टींची उपपत्ती लागते असे जे भौतशास्त्रज्ञ समजतात - आणि String theory ला Theory of Everything मानण्यामागे हाच अर्थ दडला आहे - हेच मुळी चुकीचे आहे, असे अतींद्रिय शास्त्रज्ञांचे म्हणणे आहे. जे डी. बॅरो या लेखकाने आपल्या Theories of Everything या ग्रंथाच्या शेवटी हाच मुद्दा मांडला असून (वर पृ. २३९) 'नवराबायको' चा संबंध न येतानासुद्धा 'बायको' विश्व प्रसवते या अर्थाच्या उपरोल्लेखित ओवीत ज्ञानेश्वरांना हेच सागावयाचे आहे. शून्यातून विश्व कसे निर्माण झाले याचे भौतिक (गणिती) उत्तर भौतशास्त्रज्ञांना कधीच सापडणार नाही, हे ज्ञानेश्वरांनी पूर्वीच सांगून टाकले आहे असे जे वर म्हटले आहे ते याच (आध्यात्मिक) अर्थाने.

(६७) येथे 'तो' (पुरुष वा परब्रह्म) याला 'क्वांटम सिध्दांत' व 'ती' (प्रकृति वा माया) हिला 'गुरुत्वाकर्षण शक्ती' असे रूपक अलंकाराच्या भाषेत (ज्ञानेश्वरांना अनुसरून) म्हटले आहे. भौतशास्त्राचे विवेचन अध्यात्मशास्त्राच्या भाषेतून करण्याचा तो प्रयत्न आहे, वस्तुस्थितीचे ते वर्णन नव्हे, हे वाचकांनी येथे लक्षात घ्यावे.

(६८) आईन्स्टाइनने हे EPR Paradox च्या संदर्भात म्हटले आहे. तथापि त्याचे हे म्हणणे याच अर्थाने येथेही लागू होते. या EPR संबंधी पुढे विवेचन येईल.

(६९) पंढरीचे बा भूत मोठे । आल्यागेल्या झडपे वाटे ॥ तेथे जाऊ नका कोणी । गेले नाही आले परतुनी ॥ (तुकाराम)

(७०) संत बहेणाबाईंचा गाथा - (१९७९) सौ. शालिनी अनंत जावडेकर, पद ३७०

(७१) Isis Unveiled vol I (1877) H. P. Blvatsky p. 227 seq

(७२) परब्रह्मगुरु दिलेदेव (२००२) बाबूराव तवनाप्पा अधणे पृ. १२७

(७३) गमभन (२००१) दिवाळी वार्षिक, पृ. ८-९

(७४) श्री स्वामी समर्थ यांची वखर (१९७५) गोपाळबुवा केळकर पृ. १४१

(७५) Isis Unveiled Vol I p 372-4

(७६) Ibid p 370

(७७) अज्ञापाण्याविना जगण्याच्या अतींद्रिय सामर्थ्याप्राप्तीसाठी केवळ ईश्वरशक्तीच (किंवा ईश्वराचा आशीर्वाद) निर्णायक महत्वाचे असल्याबद्दलचे उदाहरण टीप ५७ मध्ये दिले आहे, ते पाहावे.

(७८) संत बहेणाबाईंचा गाथा - अभंग क्र. १९.४ या श्लोकाचा अर्थ असा - 'मूक प्राण्याला बोलायला लावणाऱ्या व पांगळ्याला डोंगर पार करण्याचे सामर्थ्य देणाऱ्या त्या कृपाळू परमानंद माधवाला (ईश्वराला) मी वंदन करतो.'

(७९) विज्ञान आणि बुद्धिवाद या प्रस्तुत लेखकाच्या ग्रंथातील 'विज्ञानाच्या दृष्टिकोनातून पुनर्जन्म सिद्धांत' या प्रकरणात मागच्या जन्मात पक्षी असलेल्या व्यक्तींची जी दोन उदाहरणे दिली आहेत त्यांच्या खरेपणाचे वस्तुनिष्ठ पुरावे उपलब्ध नसल्यामुळे व परिणामी त्यांच्या तपासणीच्या कसोट्या उपलब्ध नसल्यामुळे त्यांचा फक्त उल्लेख करण्यापलीकडे कसलेही मतप्रदर्शन केलेले नाही. तिसरे उदाहरण पशूचा माणूस झाल्याचे आहे. त्याविषयीचा परिस्थितिजन्य पुरावा थोड्या प्रमाणात उपलब्ध आहे. पशूची मनुष्ययोनीत उत्क्रांती होणे जीवशास्त्रदृष्ट्या अवैज्ञानिक नाही, म्हणजे असंभवनीय नाही. याचा अधिक खुलासा पुढे करण्यात येईल.

(८०) I) Five years of Theosophy (1885) H. P. Blavatsky pp 533-9

II) The Secret Doctrine Vol. II (1888) H. P. Blavatsky p. 672

III) The Divine Plan (2002) G. Barborika p. 91 seq 112-3. 'योनिमन्ये प्रपद्यन्ते शरीरत्वाय देहिनः।' यातील 'देहिनः' हा शब्द बहुवचनात आहे याचा अर्थ 'आत्मे' असा होतो. हे अनेक आत्मे जीवाणूंचे असून ते अनेक योनीत फिरतात; मानवी आत्मा फिरत नाही. (मानवाचे शरीर अनेक जीवाणूंचे बनलेले आहे.)

(८१) The Psychic Power of Animals (1977) Bill Shul मानवेतर प्राण्यांची अनिर्वाच्य भाषा (परावाणी) शब्दार्थ प्रत्ययावर संयम केला तर कळू शकते असे पतजलीनी योगसूत्रातील 'विभूतिपाद' प्रकरणातील सर्वभूतरुतज्ञानम् । या १७ व्या सूत्रात म्हटले आहे इतर अतींद्रिय सामर्थ्याप्रमाणे ते उपजतही असू शकते हे किंबालसारख्यांच्या उदाहरणावरून सिद्ध होते.

(८२) दीनदयाळू आण्णामहाराज लाटकर (२००४) संपादक - भू. ना. कोळी व बी. बी. ऐदमाळे. पृ. ४३-४ (अप्रकाशित)

(८३) Many Lives, Many Loves (1963) Gina Cernunara

(८४) The Psychic Power of Animals (1977) Bill Shul 'ओं' हा मिसीचा आवाज ॐ कारच आहे. असे समजले तर त्या कुत्रीचा पूर्वजन्म एखाद्या मोठ्याने जप करणाऱ्या व्यक्तीच्या सान्निध्यात झाला असावा, असा तर्क करता येतो.

- (८५) आत्मसाक्षात्कारमार्ग प्रदीप (१९९२) ल. ग. बापट.
- (८६) श्री सद्गुरुचरणाखाली (१९९१) संपादक - डॉ. अजित कुलकर्णी
- (८७) I) The Secret Life of Plants (1973) P Tompkins and C Bird  
II) Handbook of Psychic Discoveries (1974) Ostrander & Schroeder
- (८८) उदा. The Strange World of Animals & Pets (1970) V & M Gaddis,  
The Psychic Power of Animals (1977) Bill Shul.
- (८९) Occult Science in India (1987) Louis Jaccollot.
- (९०) परब्रह्मगुरु चिलेदेव (२००२) बाबूराव तवनाप्पा अथणे
- (९१) 'श्री आबाजी गोखले' - परिचय लेखक वि. य. कुलकर्णी, गीतादर्शन (१९७३)
- (९२) श्री. माधव रा. पोतदार यांनी ११ नोव्हेंबर १९९९ रोजी लिहून लेखकाला स्वहस्ताक्षरात पाठविलेली माहिती.

(९३) हे मी माझे स्वतःचे मत सागत नसून नाशिकचे सत्पुरुष गजानन महाराज गुप्ते यांचे मत सागत आहे. एकदा नाशिकचे अंबादास पैठणकर यांनी गजानन महाराजांना विचारले की "समजा की एखाद्याला धार्मिक ग्रंथ वाचून किंवा दुसऱ्या काही कारणाने श्रीकृष्ण, देवी किंवा दुसरी कोणती तरी देवता हिचे प्रत्यक्ष दर्शन झाले तर त्यापासून त्याचा फायदा आहे काय?" यावर गजाननमहाराज म्हणाले, "त्यापासून खरा असा काहीच उपयोग नाही. यावत्कालपर्यंत मन अंतर्मुख झाले नाही आणि वासना नष्ट झाली नाही, यावत्कालपर्यंत या बाह्य दर्शनाचा उपयोग नाही. हे सर्व देखावे मृगजळाप्रमाणे भ्रामक आहेत. सद्गुरुपासून अनुग्रह मिळाल्याशिवाय साधकाला हे सर्व देखावे निरुपयोगी आहेत. श्री पांडुरंग नामदेवापाशी प्रत्यक्ष बोलत होते. तथापि विसोबा खेचरापासून जेव्हा त्याला अनुग्रह मिळाला, तेव्हाच त्याला खरा आनंद प्राप्त झाला." आत्मसाक्षात्कारमार्गप्रदीप (१९९२) श्री गजाननमहाराज गुप्ते यांचे चरित्र व तत्त्वज्ञानावर आधारित - लेखक : ल. ग. बापट, पृ. १६९.

- (९४) संत बहेणाबाईंचा गाथा (१९७९) सौ. शालिनी जावडेकर
- (९५) श्री सद्गुरुचरणाखाली (१९९१) स. डॉ. अजित कुलकर्णी, पृ. २१५
- (९६) परब्रह्मगुरु चिलेदेव (२००२) श्री. बाबूराव त. अथणे, पृ. १५९
- (९७) किता पृ. ४४

(९८) शरीर मनाच्या अधीन असल्यामुळे व मन शरीराच्या अधीन असल्यामुळे हे घडून येते. परिणामस्वरूप शरीराचा परिणाम मनावर व मनाचा परिणाम शरीरावर सतत घडून येत असतो हे सत्य महाभारतात पुढील श्लोकात सांगितले आहे.

द्विविधो ज्यायते व्याधिः शारीरो मानसस्तथा ।  
परस्परं तयोर्जन्म निर्द्वन्दो नोपलभ्यते ॥  
शरीराज्जायते व्याधिर्मानसो नात्र संशयः ।  
मानसाज्जायते वापि शरीर इति निश्चयः ॥

अर्थ : माणसाला शारीरिक व मानसिक अशा दोन प्रकारच्या व्याधी होतात. त्यांचा जन्म एकमेकापासून होतो. शरीरामुळे मनाला व्याधी (वेदना इ.) होतात याविषयी संशय नाही. मनापासून शरीराला रोग होतो हेही (तितकेच) निश्चित आहे.

(१९) Quantum Healing (1990) Deepak Chopra, p. 125

(१००) Supernature II (1988) Lyll Watson

(१०१) परब्रह्मगुरु चित्तेदेव (२००२) श्री. बाबूराव त. अथणे, पृ. १६१

(१०२) श्री सद्गुरुचरणाखाली (१९९१) संपादक - डॉ. अजित कुलकर्णी, पृ. ६७

(१०३) श्री स्वामीसमर्थ (बखर) पृ. २०९

(१०४) दीनदयाळू आण्णामहाराज लाटकर, पृ. १८१

(१०५) विज्ञान आणि बुद्धिवाद, पृ. २१३

(१०६) विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन, पृ. १००

(१०७) कित्ता पृ. १५९. दिलीपकुमार रॉय यांनी Miracles Still Do Happen या ग्रंथात देव नैवेद्य खाल्ल्याचे एक अनोखे उदाहरण दिले आहे.

(१०८) True Experiences (1991) Swami Krishnananda, p. 253

(१०९) परब्रह्मगुरु चित्तेदेव, पृ. ३७३

(११०) "The Blood of Saint Januarius," by D. Scott Rogo, in Miracles ed Martin Ebon (1981)

(१११) Dr. Ranade's Life and Light (1963) M. S. Deshpande. येथे (सर्व गोष्टींची नैसर्गिक उपपत्ती शोधणारे) निसर्गवादी (naturalists) म्हणतील की भाषेच्या उगमाचा परमेश्वराची संबंध जोडणे चुकीचे आहे. पण परमेश्वर म्हणजे निसर्ग हे ब्रह्मविज्ञानाचे मूलभूत तत्त्व आहे, हे विसरू नये.

(११२) श्रीसद्गुरुचरणाखाली, पृ. ४५. यमकनमडीचे संस्कृत तज्ञ संत हरिकाका संत बाळूमामांच्या एकादशीच्या भजनाला उपस्थित राहून, पण द्वादशीचा प्रसाद बगैरेचा विचार न करता परत गावी निघून जाण्यास जेव्हा तयार झाले, तेव्हा बाळूमामांनी भगवद्गीतेतील 'यदहंकारमाश्रित्य' इ. तीन सलग श्लोक म्हणून दाखवले होते व (अर्जुनाप्रमाणे) 'तुला हे सोडून जाता येणार नाही' हे त्यांना समजणाऱ्या भाषेत सुचविले होते. बाळूमामा हे निरक्षर

धनगर (बकरी राखणारे) होते, हे येथे लक्षात ठेवावे. त्यांच्या तोंडून भगवद्गीतेतील समयोचित संस्कृत श्लोक ऐकून आश्चर्यचकित झालेल्या हरिकाकांनी नंतर आपला निर्णय बदलून एकादशीचा उपवास सोडून शेवटी जेवल्यानंतरच्या पत्रावळ्यासुद्धा काढल्या आणि 'प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति।' (तुझा धर्मच तुला हे करायला लावील) हे कृष्णाने अर्जुनाला गीतेत सांगितलेले बोध वचन खरे केले ! देवावतारीबाळूमामा, पृ. ४१-४२

(११३) श्रीस्वामीसमर्थ (बखर), पृ. २१३

(११४) किता, पृ. ५३

(११५) The Secret Life of Plants (1973) Tompkins and Bird

(११६) पैलतीर (१९८७) दिवाळी वार्षिक, पृ. १०१

(११७) किता पृ. २३

(११८) श्रीसद्गुरुचरणाखाली, पृ. १६३. 'परावाणी' ही वैखरी, मध्यमा व पश्यती याच्या पत्नीकडची जीवात्म्याची ४ थी वाणी (किंवा उलटून १ ली) होय. मानवेतर प्राण्यांची भाषा वा विचार याच वाणीच्या माध्यमातून कळू शकतात. (टीप ८१ पाहा) सर्व ऋतूत जांभळे देणारे झाड सोलापूर येथील सेवासदन हायस्कूलमध्ये असून त्याने सद्गुरु नाना पाठक हे सेवासदनात असेपर्यंत आपला हा शब्द पाळला. पुण्याचे पत्रकार श्री. मधु जोशी यांचा या गोष्टीवर "विश्वास न बसल्याने ते मुद्दाम हे झाड पाहण्यासाठी नानांना घेऊन प्रशाळेत आले. बारकाईने पाहूनही एकही जांभूळ श्री. जोशी यांना दिसले नाही व या झाडावर कुठेही जांभळे नाहीत असे ते नानांना सांगत असतानाच नानांनी मान वर करून 'तुमच्या डोक्यावर पाहा' असे म्हटले. विशेष म्हणजे तिथे एक टपोऱ्या जांभळांचा घोंस होता व ते दिवस जांभळांचे मुळीच नव्हते." पृ. १६३

(११९) आत्मसाक्षात्कारमार्गप्रदीप (१९९२) ल. ग. बापट, पृ. ५४

(१२०) किता पृ. १११, ११२

(१२१) किता पृ. १८६ कर्मभोग भोगण्यासाठी पुन्हा जन्म घ्यावा लागतो. म्हणून स्वतःचा रोग बरा न करणारे गजाननमहाराज दुसऱ्यांचे रोग बरे करून त्यांना पुन्हा कर्मभोगासाठी दुसरा जन्म घेण्यास भाग पाडत नाहीत काय ? किंवा कर्मसिध्दांत खोटा ठरवत नाहीत काय ? असा प्रश्न येथे निर्माण होतो. याचे उत्तर असे की ज्या लोकांचे रोग सत्पुरुष/संत बरे करतात, त्यांचा कर्मभोग याच जन्मात संपलेला असतो. अन्यथा ते रोग त्यांनी बरे केलेच नसते. कारण कोणतीही घटना कर्माशिवाय घडत नाही, असा नियम आहे. हे पुढे अधिक स्पष्ट करण्यात येईल.

(१२२) I) A Textbook of Theosophy (1997) C. W. Leadbeater, p. 38

II) Inner Life II (1911) C. W. Leadbeater, p. 380.

III) Man : Visible, Invisible (1999) C. W. Leadbeater, p. 35

(१२३) विज्ञान आणि बुद्धिवाद, पृ. ९६

(१२४) Avatars (2002) Annie Besant. रावणाने सीतेचे अपहरण केल्यानंतर 'माझी सीता' म्हणून राम झाडाना मिठ्या मारतो, पशुपक्षांना तिच्याविषयी विचारतो, हे काहीना रामाच्या ईश्वरी अवताराशी विसंगत वाटते. पण अवतार हा मानवकल्याणासाठी, त्याला मार्गदर्शन करण्यासाठी आहे याचा ज्यांना विसर पडतो अशा लोकांनाच असे वाटते व खटकते. एकदा अवतार घेतला की सर्वसामान्य माणसाप्रमाणे, म्हणजे कर्मबंधनात अडकल्याप्रमाणे अवतारी पुरुषांना वागावे लागते हे विसरून चालणार नाही. आदर्श पतीपत्नीचे संबंध कसे असावेत हे आपल्या अशा प्रकारच्या वर्तनातून त्यांना दाखवायचे असते असे अॅनी बेझंट जे म्हणतात ते अवताराच्या वरील उद्देशांची त्यांना कल्पना असल्यामुळेच होय. मानवाच्या आध्यात्मिक उत्क्रांतीसाठी 'अवतार' आहे, हे अध्यात्मशास्त्रीय सत्य मान्य असेल तर अवतारी पुरुषांना वैवाहिक जीवन जगणाऱ्या सामान्य माणसासाठी एखादा आदर्श त्यांच्यापुढे ठेवावाच लागतो, हे मान्य करावे लागेल. रामाला मर्यादा पुरुषोत्तम असे याच कारणासाठी म्हटले आहे. 'कृष्णावतार' व 'दशावतार' यांचे बेझंटनी या दृष्टीने मूल्यमापन केले असून ते एकाच वेळी वैज्ञानिक आणि आध्यात्मिकही आहे.

(१२५) उदा. Children Who Remember Their Past Lives (1987) Ian Stevenson Twenty Cases Suggestive of Reincarnation (1966), Cases of Reincarnation Type, Vol I, II, & III ही त्यांचीच पुस्तके पाहावीत.

(१२६) Reincarnation : Fact or Fallacy ? (1980) Geoffrey Hodson.

(१२७) उदा. I) Man : Whence, How and Whither (1954) Annie Besant and C. W. Leadbeater (याची पहिली आवृत्ती १९१३ साली प्रसिध्द झाली. II) The Lives of Alcyon (1911) ed. C Jinarajadasa (यात जे. कृष्णमूर्तीच्या अनेक पूर्वजन्मांचा इतिहास आहे.) III) The Soul's Growth Through Reincarnation I, II (1941) and III (1946) ed. C. Jinarajadasa

(१२८) Man : Whence, How and Whither. p vi

(१२९) Ibid p vi

(१३०) थिऑसॉफीच्या आधुनिक ब्रह्मवैज्ञानिकांनी (म्हणजे त्या विज्ञानाच्या सिध्द पुरुषांनी व त्यांच्या हाताखाली कार्य करणाऱ्या ब्लॅव्हेटस्की, लेडबीटर, अॅनी बेझंट इ. कार्यकर्त्यांनी) अतींद्रिय दृष्टीने पाहून बऱ्याच विषयातील गोष्टींची भाकिते केली असून त्यापैकी अनेक भाकिते कशी खरी ठरली आहेत हे येथे विस्ताराने सांगणे शक्य नाही. याविषयी 'अंतर्ज्ञान खरे असते काय?' या वा. ल. चिपळोणकर व रा. स. भागवतलिखित (आवृत्ती २ री, १९९५) दोन भागांच्या पुस्तकात सविस्तर माहिती असून जिज्ञासूनी ते पुस्तक अवश्य पाहावे. त्यात

पदार्थविज्ञानशास्त्र, खगोलशास्त्र, प्राचीन इतिहास, दोन जागतिक महायुद्धे, भारताचे स्वातंत्र्य, टेलिग्रॅटर, अणुबाँब, शंकराचार्य दोन भिन्न व्यक्ती, जीसस ख्रिस्त दोन भिन्न व्यक्ती, श्रीकृष्ण दोन भिन्न व्यक्ती, उपनिषदे आर्यांची की आर्यपूर्वीची ? इ. विषयांची अतींद्रिय दृष्टीने पाहून केलेली भाकिते व वर्णने असून त्यापैकी कित्येक भाकिते कशी खरी ठरली आहेत, हे पुराव्यानिशी दाखवून दिले आहे. अँनी बेझंट व लेडबीटर यांनी अतींद्रिय दृष्टीने पाहून दिलेल्या पुनर्जन्मासंबंधीच्या माहितीसाठी टीप. १२७ मधील पुस्तकाशिवाय अँनी बेझंट यांनी स्वतंत्रपणे लिहिलेली पुढील पुस्तकेही पाहावीत. 1) **Reincarnation** 2) **Karma** 3) **Study in Karma**. अतींद्रिय दृष्टीने पाहून त्यांनी व लेडबीटर यांनी येशू ख्रिस्त भारतात अकराव्या शतकात रामानुजाचार्य म्हणून जन्मले (**Masters and the Path** p. 239), ब्लॅंहेट्स्की यांनी बुध्द हेच जीसस ख्रिस्त म्हणून जन्मले (**Isis Unveiled** Vol. II. p 286, **Secret Doctrine** Vol V p. 369) कुथुमी या सिध्द पुरुषाने येशू ख्रिस्ताचा जन्म इसवी सन सुरु होण्याच्याही १०० वर्षे अगोदर झाला आहे, (**Occult Investigation**, 1938, C Jinarajadasa, p 36). लेडबीटर यांनी शेक्सपीयरची म्हणून समजली गेलेली सर्व नाटके फ्रान्सिस बेकनने लिहिली आहेत यासारख्या अनेकांना अविश्वासाह वाटणाऱ्या गोष्टी लिहिल्या आहेत. या व अशासारख्या अतींद्रिय दृष्टीने पाहून सांगितलेल्या गोष्टीवर विश्वास न ठेवणाऱ्यांना (विशेषतः रुढ शास्त्रज्ञांना) उद्देशून अँनी बेझंटनी म्हटले आहे की “एखाद्या गोष्टीचे अस्तित्व नाकारणाऱ्या शंभर आंधळ्यांच्या शब्दपेक्षा ती प्रत्यक्ष पाहण्याऱ्या एका माणसाच्या शब्दाला जास्त वजन आहे.” (**Reincarnation** p 36) अतींद्रिय दृष्टी इतर अनेक कारणाप्रमाणे कुंडलिनी शक्तीच्या जागृतीने व योगसाधनेने प्राप्त होत असल्यामुळे व ही तपस्या खडतर असून ती करण्याची इच्छा व कुवत फारच थोड्या लोकांत असल्यामुळे बहुसंख्य (शास्त्रज्ञांसुद्धा) लोक अध्यात्मक्षेत्रात ‘आंधळे’च का असतात - त्यातील गोष्टी खोटेच म्हणून त्या का नाकारतात - याचा उलगाडा होतो. अँनी बेझंट व लेडबीटर यांनी ही खडतर तपस्या केल्यामुळेच त्यांना अतींद्रिय दृष्टी प्राप्त झाली होती, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. लेडबीटर यांची कुंडलिनी बेचाळीस दिवसांच्या खडतर तपस्येच्या शेवटी त्यांचे गुरु, कुथुमी यांनी थोडी मध्यस्थी केल्यानंतर जागृत झाल्याचे त्यांनी म्हटले आहे. (**How Theosophy Came to Me**, p. 132) कुंडलिनी शक्तीच्या जागरणासाठी शरीर शुध्द ठेवावे लागते. लेडबीटर, अँनी बेझंट हे दोघेही शुध्द शाकाहारी असण्याचे हेच कारण आहे.

(१३१) **ESP of Quarks and Superstrings** (1999) Stephan M Phillips. या ग्रंथात लेखकाने स्पष्ट केल्याप्रमाणे हल्ली भौतविज्ञानात ‘क्वॉर्क’ हेच मूलभूत अंतिम कण आहेत असे मानण्यात येत असले तरी ते अंतिम कण नसून ते Sub-quark या इतर कणांचे बनले असल्याचे अँनी बेझंट व लेडबीटर यांनी आकृतीसह स्पष्ट केले आहे. भौतशास्त्रज्ञांना त्यांचा अजून शोध लागलेला नसल्यामुळे त्यांनी अजून बरीच मजल गाठली पाहिजे हे उघड आहे.

(१३२) ही दोन्ही उदाहरणे विज्ञान आणि बुध्दिवाद या प्रस्तुत लेखकाच्या ग्रंथाच्या प्रकरण ४ व ५ मध्ये थोड्या विस्ताराने दिली आहेत.



(१३३) **Many Lifetimes** (1968) Joan Grant and Denis Kelsy

(१३४) **New Soviet Psychic Discoveries** (1980) H. Gris & D. Dick

(१३५) **Many Mansions** (1950) Gina Cerminara p. 38

(१३६) ज्योतिषशास्त्र हे ब्रह्मविज्ञानाचे एक अविभाज्य अंग असून ते शास्त्र खोटे म्हणता येत नाही, हे भृगुसंहिता व नाडीग्रंथातील अतींद्रिय दृष्टीने पाहून वर्तविलेले भविष्य कधी चुकत नाही, या वस्तुस्थितीवरून सिध्द होते. (प्रस्तुत लेखकाच्या विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन या पुस्तकातील 'नाडीभविष्य: बुद्धिवाद्यांना खावी लागलेली हार' हे १० वे प्रकरण पाहा. तसेच गमघन (२००२) या दिवाळी वार्षिकातील प्रस्तुत लेखकाचा 'मानवावर ग्रहांचा प्रभाव पडतो काय?' हा लेखही पाहा. याविषयी पुढे चर्चा करावयाची आहे.) पण भविष्य चुकत नसेल तर मानवी जीवनातील सर्व घटना अगोदरच ठरल्या आहेत, त्यात मनुष्य स्वप्रयत्नाने बदल करू शकत नाही, म्हणजेच त्याला स्वतःचे इच्छास्वातंत्र्य नाही, असे ठरत नाही काय ? आणि मनुष्याला इच्छा स्वातंत्र्य नसेल तर त्याला नैतिक शिकवणुकीची काय गरज ? नीतिशास्त्राबरोबरच धार्मिक शिकवणुकीचीही काय गरज ? इ. प्रश्न निर्माण होतात. हा विषय फार मोठा असून त्याचा थोडा विचार पुढे करावयाचा आहे. तथापि ज्योतिष विषयासंबंधीची Secret Doctrine या मॅडम ब्लॅन्केट्स्की यांच्या ब्रह्मविद्येवरील ग्रंथातील पुढील विधाने या विषयावर थोडा प्रकाश टाकणारी असल्यामुळे ती येथे देतो. त्या म्हणतात, "According to the teaching [of Brahmayidya] Maya changes varying with nations and places. But the chief features of one's life are always in accordance with the 'constellation' one is born under or with its characteristics of its animating principle or deity that presides over it . . .

" Yes, our destiny is written under stars ' Only the closer the union between the mortal reflection MAN and his celestial PROTOTYPE, the less dangerous the external conditions and subsequent incarnations - which neither Buddhas nor Christs can escape. This is not superstition, least of all is it Fatalism .... For the only decree of Karma - an eternal and immutable decree - is absolute Harmony in the world of matter as it is in the world of Spirit " (Secret Doctrine Vol I p. 638-9, 643) [ भावार्थ : "मायेमुळे मानवाचे व राष्ट्राचे जीवन बदलत राहते. (मम माया दुरत्यया - भ.गी. ७.१४) ज्या नियमानुसार ते जीवन (मायेच्या अधीन राहून) बदलते ते नियम मात्र ग्रह - तारे निर्धारित करीत असतात; आणि ते ग्रह - तारे सुध्दा दैवी शक्तीच्या अधिपत्याखाली राहूनच आपले निर्धारित कार्य करीत असतात. या दृष्टीने पाहता 'ग्रहतारे आपले नशीब ठरवतात' हे म्हणणे खोटे नाही. तथापि ईश्वराचा प्रतिबिंब असलेला मानव त्या ईश्वराने ठरविलेल्या (विश्वरूपी नाटकातील) स्वतःच्या मूळ भूमिकेशी - म्हणजे ईश्वरी स्वभावाशी (स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते। भ.गी. ८.३) - जितके जास्त जुळवून घेईल, जितका त्याच्याशी जास्त प्रामाणिक राहील (स्वधर्मो निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः। भ.गी. ३.१५) तितकी

त्याची भौतिक परिस्थिती व पुढील जन्म बाह्य संकटापासून व अडचणीपासून मुक्त राहतील. मग तो मानव बुध्द असो अगर येशू असो. त्यांचे हे (ईश्वरनियोजित) कर्म कधीच चुकत नाही. ही अंधश्रद्धा नाही. दैववाद तर मुळीच नाही. ही भौतिक व आध्यात्मिक जगात पूर्ण सुसंवाद साधणारी 'कर्म' नांवाची चिरंतन व अपरिवर्तनीय नियमांची व्यवस्था आहे." ]

(१३७) ब्रह्मविज्ञानानुसार ही गोष्ट सत्य असून ती कशी व का घडते याचे विवेचन कुशुमी या ब्रह्मवेत्त्याने पुढीलप्रमाणे केले आहे, "From the moment of the first planting of the human foetus until it completes its seventh month of gestation, it repeats in miniature the mineral, vegetable and animal cycles, it passed through in its previous encasements and only during the last two develops its future human entity." *The Mahatma Letters to A. P. Sinnett*, p 88-99 अर्थ : 'गर्भावस्थेत प्रत्येक भ्रूणाला खनिज, वनस्पती व प्राणी अवस्थेतून पहिल्या सात महिन्यात जावे लागते. व शेवटच्या दोन महिन्यात ते मानवी रूप घेते.' याचा अर्थ मानवी आत्मा गर्भाचा सातवा महिना पूर्ण झाल्यावरच त्यात प्रवेश करतो, असा होतो, सातव्या महिन्यातच गर्भोदर स्त्रीची ओटी भरण्याचा कार्यक्रम आपल्याकडे करतात, यावरून सामान्य लोकांचे याविषयीचे ज्ञान शास्त्रोक्त असल्याचे सिद्ध होते. हिंदू धर्मातील चाली अंधश्रद्धा नाहीत, हे अशी उदाहरणे दाखवून देतात. (पाणी सोडून देवाला नैवेद्य दाखविण्याच्या प्रथेतील शास्त्र यापूर्वी सोदारण सांगितले आहे.)

(१३८) *True Experiences* (1991) Krishnananda p. 298

(१३९) "The records of the entity are written upon time and space as the skein of things. They may be called as images. For thoughts are things and as they run, so are the impressions made upon what we call space and time." (1562-1) कसातील नंबर केयसीच्या फाइलीतील केस क्रमांक आहे.

(१४०) *Is It True What They Say About Edgar Cayce ?* - Lytle W Robinson संमोहन पद्धतीने व्यक्तींना भविष्यकाळात घेऊन जाण्याच्या पद्धतीने (hypnotic progression) केयसीच्या काही भाकीतांना बळकटी मिळाली असून त्यानुसार अमेरिकेतील न्यूयॉर्क, लॉस एंजल्स, सान्-फ्रान्सिस्को ही शहरे भूकंपात संपूर्ण नष्ट होणार आहेत. पाहा. *Past Lives Future Lives* (1988) Bruce Goldberg p. 164

(१४१) पाहा *Edgar Cayce On Atlantis* (1968) Edgar Evans Cayce आणि *Man : Whence, How and Whither* (1954) Annie Besant and C. W. Leadbeater.

(१४२) *How Theosophy Came to Me* (1930) C. W Leadbeater. p 1

(१४३) पायथॅगोरस हा ब्रह्मवेत्ता होता हे यावरून स्पष्ट होते. त्याने भारतातून ब्रह्मविद्या पश्चिमेकडे नेल्याचे मॅडम ब्लॅन्क्लेट्स्की यांनी म्हटले आहे. *Secret Doctrine*, Vol I p. 348. त्याचा प्रसिध्द 'त्रिकोण' हा त्याने शोध लावलेला त्रिकोण नसून तो पौर्वात्य ब्रह्मविद्येतील

असल्याचेही त्या म्हणतात. Ibid p. 612

(१४४) *An Autobiography* (1939) Annie Besant p. 326

(१४५) हे कसब त्यांना प्राप्त झाले ते त्यांच्या शरीरात अनेक सिध्द पुरुषांनी (ब्रह्मवेत्त्यांनी) 'आवेश' केल्यामुळे होय. हा 'आवेश' कसा होत होता हे स्वतः ब्लॅन्हेट्स्की यांनी आपल्या बहिणीला लिहिलेल्या एका पत्रात स्पष्ट करून सांगितले आहे. त्यावरून असे दिसून येते की त्यांना जागृत अवस्थेत, स्वतःची पूर्ण जाणीव असतानासुद्धा त्यांनी न पाहिलेल्या स्थळांची वा त्यांना माहीत नसलेल्या गोष्टींची माहिती जणू त्या स्थळांना भेटी दिल्याप्रमाणे वा त्या गोष्टी पुस्तकातून वाचल्याप्रमाणे आपोआप होत असे. [The Past, Dec. 1894, quoted in H. P. Blavatsky, *Tibet and Tulku* (1966) G A Barborka p 303 *Old Diary Leaves* Vol I मध्येही ऑलकॉट यांनी ही माहिती दिली आहे.] त्यांनी *Isis Unveiled* आणि *Secret Doctrine* हे ग्रंथ याच पध्दतीने लिहिले आहेत. या दोन ग्रंथासाठी त्यांना ज्या दुर्मीळ ग्रंथांची आवश्यकता होती ते ग्रंथ, त्यातील माहितीचे कोणतेही पृष्ठ, त्यांना हवे तेव्हा त्यांच्या दृष्टीसमोर त्यांनाच दिसेल अशारीतीने साकार होत असे. (याला directive clairvoyance म्हणण्यात येते.) एकदा एका संदर्भ ग्रंथातील माहितीच्या अचूकतेबद्दल कर्नल ऑलकॉट यांच्या मनात संशय निर्माण झाला असता ब्लॅन्हेट्स्की यांनी तो ग्रंथ प्रत्यक्ष मूर्त स्वरूपात त्यांना उपलब्ध करून दिला. तो संदर्भ पाहून तो ग्रंथ त्यांनी जेथे आढळला होता त्या ठिकाणी परत ठेवल्यानंतर थोड्याच वेळात तो अदृश्य झाला, असे त्यांनी म्हटले आहे ! 'मी असे लिहिलेले पाहून काही पाश्चात्य सशयवाद्यांनी मला वेड्यात काढले तरी चालेल' असे आत्मविश्वासपूर्वक उद्गारही ऑलकॉट यांनी या संदर्भात काढले आहेत ! (*Old Diary Leaves* Vol I p. 210) *Isis Unveiled* या ग्रंथालेखनाच्या वेळी पूर्ण वेळ ते ब्लॅन्हेट्स्कींच्या जवळ बसून होते. (त्यांनीच ब्लॅन्हेट्स्की यांचे इंग्रजी लेखन शुध्द केले आहे.) या ग्रंथाला दिलेल्या संदर्भग्रंथांची सख्या १३३९ इतकी प्रचंड आहे. पण प्रत्यक्षात त्यांच्या खोलीत जेमतेम १०० ग्रंथ होते, अशी ऑलकॉट साक्ष देतात.

(१४६) *How Theosophy Came To Me* p 48

(१४७) प्रस्तुत लेखकाच्या विज्ञान आणि बुद्धिवाद ग्रंथातील प्रकरण २ पाहा.

(१४८) *Astral Plane* - C W Leadbeater p. 142 seq.

(१४९) *Old Diary Leaves* Vol I. (1874-78) H S Olcott (spiritualism व त्यानंतरची प्रकरणे पाहा.)

(१५०) Theosophy हा मूळ ग्रीक शब्द असून तो इ.स. २ व्या शतकात अलेक्झांड्रियाच्या नवप्लेटोवाद्यांनी प्रथम वापरला. त्याचा अर्थ 'दैवी ज्ञान' (Theo+sophy) असा आहे.

(१५१) तिसरी एक व्यक्ती 'नारायण' नांवाची असून ते वस्तुतः दक्षिण भारत ज्यांच्या

आध्यात्मिक आधिपत्याखाली असल्याचे मानण्यात येते ते (एका वृद्ध शरीरात वास करणारे) 'अगस्त्य' ऋषी होत, असे जिनराजदास यांनी म्हटले आहे. [Letters From the Masters of Wisdom (1919) First Series, C. Jinarajadasa p 167.] हे ऋषी १८८५ साली मद्रासपासून फार दूर नसलेल्या अशा एका ठिकाणी राहत होते. लेडबीटर व टी. सुब्बाराव (थिऑसॉफीचे एक ब्लॅन्हेट्स्कीचे सहकारी) हे त्यांना एकदा भेटले असल्याचे लेडबीटरनी म्हटले आहे. या 'नारायण' रूपी अगस्त्य ऋषींनीही Isis Unveiled व Secret Doctrine हे ग्रंथ लिहिण्यास ब्लॅन्हेट्स्की यांच्या शरीरात 'आवेश' करून मदत केली आहे. यांनी ऑलकॉटना लिहिलेली काही पत्रे उपलब्ध असून एका पत्राच्या शेवटी 'One of the Hindu Founders of the Parent Theosophical Society (मूळ ब्रह्मविद्यासंघ स्थापणाऱ्या हिंदूपैकी एक) असे लिहिलेले आढळते. वृद्ध शरीरात वास करणाऱ्या मोजक्या प्राचीन ऋषीपैकी ते एक होत असे जिनराजदास यांनी म्हटले आहे. (किता)

(१५२) 'दृश्य' जग याचा योग शास्त्रात (व ब्रह्मविज्ञानात) 'त्रिगुणात्मक, पंचभूतात्मक, भोग व अपवर्ग (मुक्ती) याचे साधन ठरणारे' जग असा अर्थ आहे. (यो.सू. २.१८) हे जग 'साधन' असल्यामुळे 'दृश्य' याचा अर्थ उपाधियुक्त असा होतो. 'साध्य' हे निरुपाधिक असते. 'दृश्य' म्हणजे 'डोळ्यांना दिसणे' असा येथे अर्थ करावयाचा नाही, हे लक्षात ठेवावे.

(१५३) 'शाखाचंद्रन्याय' म्हणजे पाडव्याची (शुक्लपक्षातील प्रतिपदेची) चंद्राची कोर फार बारीक असल्यामुळे सहज दिसत नाही. ती कोठे आहे हे नेमके दाखविण्यासाठी झाडाच्या ज्या फांदीजवळ ती आहे, ती फांदी प्रथम दाखवावी लागते. तसे 'निरुपाधिक ब्रह्म' हे पारमार्थिक सत्य कुठे व कसे आहे हे शब्दात वर्णन करून सांगता येत नसल्यामुळे ते अप्रत्यक्षपणे दाखवण्यासाठी ब्रह्म ज्या 'दृश्य' (उपाधियुक्त) जगाच्या रूपाने व्यक्त झाले आहे, त्या जगाचे वर्णन प्रथम करावे लागते. ही गोष्ट ज्ञानेश्वरांनी पुढील ओवीत सांगितली आहे. पाडव्याची चंद्ररेखा । निरुती दावावया शाखा । दाविजे तेवी औपाधिका । बोली इया ॥ (ज्ञाने. १५.४७०) यालाच शाखा - चंद्र न्याय म्हणतात. म्हणून 'दृश्य' (उपाधियुक्त) जग ही 'अदृश्य' (निरुपाधिक) ब्रह्माची 'खूण' आहे असे म्हणता येईल. तिला पायऱ्या म्हणण्याचे कारण निरुपाधिक ब्रह्म अनेक उपाधीतून व्यक्त झाले असून त्याला पोहोचण्यासाठी अनेक पायऱ्यांनी - म्हणजे त्याच्या अनेक उपाधीतून - जावे (चढावे) लागते. यातील पहिली पायरी भौतिक असून तिला ब्रह्मविद्येत 'स्थूल देह' (Dense or Physical Body) किंवा 'अन्नमय कोष' म्हटले आहे. (याचा भौतिक विज्ञान - physics - अभ्यास करते.) दुसरी पायरी 'सूक्ष्म देह' (Ethereic Body) असून त्याला 'प्राणमय कोष' म्हटले आहे. तिसरी पायरी 'लिंगदेह' किंवा 'वासनादेह' (Astral Body) आहे. हा देह भुवर्लोकात (किंवा कामलोकात) वास करतो. चौथी पायरी 'मनोदेह' (Mental Body) असून त्याला 'मनोमय कोष' म्हटले आहे. (या सर्वांचा अतींद्रिय विज्ञान अभ्यास करते.) पाचवी पायरी 'कारण देह' (Causal Body) असून त्याला 'विज्ञानमय कोष' म्हटले आहे. सहावी पायरी 'बुद्धिदेह' (Buddhic Body) असून त्याला 'आनंदमय कोष' म्हटले आहे. सातवी पायरी 'आत्मा' (Spiritual Body)

आहे. (या सर्वांचा ब्रह्मविज्ञान अभ्यास करते.) 'दृश्य' जगातील 'आत्मा' ही सुध्दा जीवाची एक उपाधी असून तिला 'जीवात्मा' (Monad) म्हटले आहे. केवळ 'ब्रह्म' किंवा 'शुध्द आत्मा' हे निरुपाधिक (पारमार्थिक सत्य) असून ते 'दृश्य' जगाच्या पलीकडे असल्यामुळे ते 'कुठे' आहे हे नेमके सांगता येत नाही. म्हणून त्याचे वर्णन करताना उपनिषदे 'ते सर्वपेक्षा दूर आहे, ते सर्वपेक्षा जवळ आहे.' (दुरात्सुदूरे तदिहान्तिकेच । मुं.उप. ३.१.७) 'ते सर्वपेक्षा जास्त सूक्ष्म आहे, ते सर्वपेक्षा जास्त स्थूल (मोठे) आहे' (अणोरणीयान महतो महीयान् । ऋ.उप. १.२.२०) ('तुला स्थूल म्हणू की सूक्ष्म रे । ज्ञानेश्वर) 'ते सर्वांच्या आंत आहे, ते सर्वांच्या बाहेर आहे' (तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः । ईश उप. ५) 'ते चालते, ते चालत नाही' (तदेजति जन्नेजति । ईश उप.) असे परस्परविरोधी वर्णन केलेले आढळून येते. भगवद्गीतेच्या १३ व्या अध्यायात परब्रह्माची ही सर्व परस्परविरोधी वर्णने आलेली आहेत. (श्लोक १२ ते १६) हीच गोष्ट सत तुकारामांनी 'अणुरेणुया थोकडा तुका आकाशाएवढा ।' या अभंगात सांगितली आहे.

(१५४) न च कर्मविधिश्चुतेः अप्रामाण्यम्, पूर्वपूर्वप्रवृत्तिनिरोधेन उत्तरोत्तर अपूर्वप्रवृत्तिजननस्य प्रत्यगात्माभिमुख्यप्रवृत्त्युत्पादनार्थत्वात् । मिथ्यात्वे अपि उपायस्य उपेयसत्यतया सत्यत्वमेव स्यात् । (भगवद्गीता शांकरभाष्य १८ वा अध्याय, उपसहार प्रकरण)

(१५५) Old Diary Leaves Vol I H S Olcott p 13 14

(१५६) Ibid p. 13-14

(१५७) संत सद्गुरु देवावतारी बाळूमामा (१९९६) स. श्री. सी. एस्. कुलकर्णी

(१५८) The Occult World (1881) A P Sinnett p 129

(१५९) Collected Works of the Mother Vol 4 Questions and Answers, 1950-51, p. 274-6, quoted by A S Dalal in The Hidden Forces of Life, p 113

(१६०) विज्ञान आणि बुद्धिवाद (२०००) अद्वयानंद गळतगे, प्रकरण ८, पृ. २०३

(१६१) उदा. रामदासस्वामी म्हणतात, "तैसे देवदेवता देवते भुते । मिथ्या म्हणो नये त्याते । आपलात्या सामर्थ्ये ते । सृष्टीमधे फिरती ॥ सदा विचरती वायोरुपे । स्वइच्छा पालटती रुपे । अज्ञान प्राणी भ्रमे संकल्पे । त्यास बाधिते ॥ (दा.बो. १०.९ - २०, २१)

(१६२) Beyond the Occult (1988) Colin Wilson p 377

(१६३) 'Some physical and psychological aspects of a series of poltergeist phenomena' W G Roll, Journal of the American Soc. Psy. Res. 1968, 62, 263-308

(१६४) I) The Flying Cow (1975) Guy Playfair,

II) The Secret Science Behind Miracles (1981) Max Freedom Long

(१६५) पिसारा (मासिक) मुंबई, जून १९७९. प्रस्तुत मासिकाचे संपादक श्री. वा. दा. थत्ते यानी कै. रत्नाप्पा कुभार यांच्याबरोबर नरसोबावाडीत श्री. घाटे यांच्या घरी प्रत्यक्ष भेट देऊन हा प्रकार पाहिल्यानंतर या भानामतीचे इतिवृत्त मुद्दाम 'पिसारा' साठी लिहवून प्रसिध्द केले.

(१६६) **The Infinite Boundary** (1987) D Scott Rogo p. 260

(१६७) मंत्रतंत्रविज्ञान (२००१) पंडित सुदर्शन, पृ. ८४

(१६८) **Astral Plane** p 102-5

(१६९) आत्मशक्ती (१९७८) न. खं. क्षीरसागर, पृ १९-२०

(१७०) विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन (२०००) अद्वयानंद गळतगे ३ रे प्रकरण

(१७१) योगसिध्दी आणि ईश्वरसाक्षात्कार (१९६१) डॉ. वि. म. भट. पृ. २२०, माई सामंत नंतर ललिता पंचमीस बाळंत झाल्या. २५ वर्षे वटसावित्रीचे अखंड व्रत करणाऱ्या ललिताबाई वटपौर्णिमेला निवर्तल्या हाही 'योगयोग' लक्षात ठेवण्यासारखा आहे.

(१७२) Poltergeist phenomena are *Via regia* or royal road to an extended understanding of man, of his position in nature and of nature herself " **New Direction in Parapsychology** (1974) ed John Beloff

(१७३) **True Experiences** (1991) Krishnananda, p 38-41

(१७४) **The Seen and the Unseen** (1987) Andrew Mackenzie quoted in **Beyond the Occult** - by C. Wilson, p 243-4

(१७५) संघर्ष (१९८९) वसुंधरा पटवर्धन

(१७६) **Isis Unveiled** Vol I p 142

(१७७) **Occult Science in India** (1987) Louis Jaccolliot p. 221-2 गोविंदस्वामीने जॅकोलियोने पूर्वसूचना न देता दिलेल्या पपयाच्या बियावर प्रयोग करून त्याचे रोप दोन तासात उगवून ८ इंच वाढल्याचे दाखवले होते. आठ दिवसात फुले व १५ दिवसात फळे लागलेली आपण दाखवू शकतो असे तो म्हणाला होता. १५ मिनिटात दीड फूट उंच रोप वाढून त्याला आंबे लागलेले दाखविण्याचा प्रयोग आपल्यासारखा आत्मशक्तीने केलेला अस्सल प्रयोग नसून इतरांच्या (निसर्गात्म्यांच्या) मदतीने केलेला (बाहेरून ती रोपे व फळे अदृश्यरीतीने -apport ने - आणण्याचा) नकली प्रयोग आहे, असे त्याचे म्हणणे आहे. (याच पध्दतीने निसर्गात्म्यांनी ब्लॅन्हेट्स्कींना द्राक्षे दिली होती.) महाभारतात कश्यप ब्राह्मणाने हा प्रयोग केल्याचे वर्णन आहे. (महाभारत, आदिपर्व, ४३.१०) तो वडाच्या झाडाचा प्रयोग आहे.

(१७८) हे विधान लायबनीझ या जर्मन तत्त्ववेत्त्याने प्रथम केले. ते नंतर शास्त्रज्ञांच्या लिखाणात विशेषतः आढळून येते.

(१७९) 'From Relativity to Mutability,' J A Wheeler in *The Physicist Conception of Nature* (1987) J Mehra, p 243

(१८०) *The Occult World* (1881) A. P Sinnett, p 66-70 या संदर्भात सिनेट म्हणतात की मनः सामर्थ्याने अशी वस्तू निर्माण करता येते ही कल्पनाच इतकी विलक्षण आहे की आपले मन त्याविरुद्ध बंड करून उठते.

(१८१) *Ibid*, p. 77-82

(१८२) ए. पी. सिनेट यांनी 'लंडन टाइम्स' चा ताजा अंक त्याच दिवशी भारतातील सिमला येथे मिळवून घ्यावा अशी कुथुमी याना एका पत्रात विनंती केली होती. त्या विनंतीला उत्तर देताना कुथुमी म्हणाले होते की हा प्रयोग वैज्ञानिक असल्यामुळे व अजून मानवाची तितकी वैज्ञानिक प्रगती झालेली नसल्यामुळे त्यावर कोणी विश्वास ठेवणार नाहीत व तो एक चमत्कार आहे असे समजतील; आणि आपण चमत्कार करित नसल्यामुळे तो (वैज्ञानिक) प्रयोग आपण करणार नाही. "Science would find itself unable in its present state to account for the wonders given in its name, and the ignorant masses would still be left to view the phenomena in the light of miracles " (p 95) ब्लॅन्हेट्सकी आपले 'चमत्कार' खासगीत का करत होते, याचे हेही एक कारण आहे. सिनेटनी (लंडन टाइम्सबाबत) सुचवलेली गोष्ट कुथुमींनी जागतिक (सार्वजनिक) पातळीवर केली असती तर गॅलीलियोच्या काळात अणुबाँबचा स्फोट केल्यासारखे झाले असते '

(१८३) "Truly I felt and feel that it is better to be a door-keeper, or even something more menial than that, in the house of the "Lord on High" than to dwell in silken pavilion the selfish world could give me for the asking " (*Old Diary Leaves* Vol I p. 145)

(१८४) 'लिंगदेह' हा शब्द हल्ली सूक्ष्मदेहाला लागू करण्यात येतो. सूक्ष्म देह हा वास्तविक प्राणदेह आहे. हल्ली 'वासनादेह' (astral body) या अर्थाने थिऑसॉफीमध्ये तो वापरला जातो. 'लिंगदेह' या संस्कृत शब्दाचा खरा अर्थ 'नमूनादेह' म्हणजे थिऑसॉफीमध्ये ज्याला Etheric Body म्हणतात, तो आहे. पूर्वी हीच शब्दयोजना (आणि याच अर्थाने) थिऑसॉफीमध्ये रुढ होती. पण ती बदलण्यात आली. हल्ली Etheric Double ला 'प्राणदेह' म्हणतात. प्राणदेह लिंगदेहाहून वेगळा आहे लिंगदेह आणि वासनादेह हे एकच आहेत.

(१८५) पत्रे : समीक्षालेख : खंड २ (१९९४) 'तुकारामांचे सदेह वैकुण्ठगमन' - गुलाबराव महाराज, पृष्ठे ४५ ते ५८

(१८६) किता पृ. 159

(१८७) गुलाबरावाचा 'अदृश्यदीपिका' नावाचा एक ग्रंथ असून तो त्यांच्या चमत्कारांचा संग्रह आहे, असा त्याच्या चरित्रात उल्लेख आहे. पण प्रस्तुत लेखकाला तो ग्रंथ पाहावयास मिळालेला नाही.

(१८८) श्री गुलाबरावमहाराज (चरित्र) पूर्वार्ध (१९६३) राजेश्वरशास्त्री त्रिपुरवार ('मिलिंद') पृ. २३६-७

(१८९) किता पृ. १२४-१२८

(१९०) श्री गुलाबरावमहाराज दि. १३ मार्च १९०५ रोजी थिऑसॉफीचे रीतसर सभासद झाले. (किता पृ. २०७) पण नंतर त्यांनी थिऑसॉफीवर टीका केली. ती अनाठायी आणि असमर्पकही असल्याची दिसून येते; आणि हे स्वाभाविक आहे. कारण त्यांनी स्वतःच एके ठिकाणी थिऑसॉफीचा आपला 'विशेष व्यासंग नाही' हे खुलेपणे मान्य केले आहे. पाहा : श्री गुलाबराव महाराज (चरित्र) उत्तरार्ध (१९६६) पृ. १४७. वेदांत (ब्रह्मविद्या) चमत्कारांचा निषेध करतो हे ऑलकॉट यांनी गुलाबरावांप्रमाणेच म्हटले असून तो निषेध करण्यापाठीमागचा दृष्टिकोन सूतसंहिता, बृहदारण्यक, छांदोग्य ही उपनिषदे आणि भगवद्गीता या ग्रंथांचा संदर्भ देऊन विशद केला आहे. पाहा : Old Diary Leaves Vol. I p 308-9

(१९१) The Occult Training of the Hindus (1931) Ernest Wood p 1

(१९२) Ibid p 2

(१९३) जे. ए. व्हीलर या शास्त्रज्ञाने क्वांटम सिध्दांताला क्षणक्षणाला नवी रूपे धारण करणाऱ्या 'मर्लिन' या जादूगाराची उपमा देऊन तो जादूचा (जणू अनेक रूपे धारण करणारा) सिध्दांत आहे असे म्हटले असून त्यालाच शेवटी विश्वाच्या उत्पत्तीचा मूलभूत सिध्दांत-आधारस्तंभ-म्हटले आहे. (The Physicist's Conception of Nature p 243) या संदर्भात कठोपनिषदातील अग्नी, वायू इ. तत्त्वे (निसर्गात्मे) अर्थात् आध्यात्मिक तत्त्व (ब्रह्म) स्थूल जगात प्रवेश करून (क्षणोक्षणी) (वरील जादूगाराप्रमाणे) कशी निरनिराळी रूपे घेते-नटते हे सांगणारे वचन उल्लेखनीय आहे. (उदा. वायुर्यथैको भुवनं प्रविष्टो रूपंरूपं प्रतिरूपो बभूव । (कठ.उप. २.२.१०) शेवटी शास्त्रज्ञांना अर्थात् प्रामाणिक सत्यशोधकांना - सत्याशी निष्ठा बाळगणाऱ्यांना - आध्यात्मिक सत्य सापडते ते असे. त्यांना शेवटी अध्यात्माकडे यावेच लागते. त्याशिवाय गत्यतरच नाही. (नान्यः पन्था विद्यते अयनाय । श्वे.उप.)

(१९४) Invisible Helpers (1928) C W Leadbeater Chapt III, p. 28

(१९५) Ibid p 33

(१९६) The New Indian Express March 4, 2005.

(१९७) Afterlife (1985) Colin Wilson p. 233 मराठी विश्वकोशकार श्रीधर व्यंकटेश केतकर यांनी एक मुलगा सांभाळला होता तो एका खोलीत रात्री झोपलेला असताना



व खोली बंद असतानाही चौथ्याच खोलीत सकाळी निजलेला आढळायचा, असे प्रत्यक्षदर्शी डोळ्यांचे डॉक्टर सरदेसाई यांनी म्हटले आहे. (संघर्ष पृ. ११०)

(१९८) निसर्गातले व मृतातले अशा करामती करू शकतात याचा भोज येथील प्रस्तुत लेखकाच्या परिचयातील श्री. ज्योती दामाजी साळुंखे या ४० वर्षांच्या गृहस्थाने प्रत्यक्ष अनुभव घेतला आहे. एकदा तो रात्री विहिरीतील मोटर सुरू करण्यास गेला असता कोणीही व्यक्ती जवळ पास नसताना एका अदृश्य शक्तीने त्याला उचलून अक्षरशः विहिरीत फेकून दिले. एखाद्या माणसाने टांगेत हात घालून उचलून फेकावे तसे त्या शक्तीने आपल्याला फेकून दिल्याचे - म्हणजे त्याच्या हातांचा स्पर्श आपल्याला स्पष्ट जाणवल्याचे - तो सांगतो. सुदैवाने त्याला काही इजा झाली नाही व तो पोहून काठावर आला.

(१९९) एकनाथी भागवत: रा. कृ. कामत यांची प्रस्तावना

(२००) गोंदवलेकर महाराज - चरित्र आणि वाङ्मय - के. वि. बेलसरे, पृ. ३२

(२०१) श्री सद्गुरुचरणाखाली, पृ. २५९

(२०२) Encyclopedia of the Unexplained (1997) ed. R. Cavendish and J. B Rhine p 198. याप्रसंगी हॅन्स बेंडर हा प्रसिध्द जर्मन भानामतीसंशोधकही उपस्थित होता. त्याचा स्वयंपाक खोलीजवळ ठेवलेला कोट घराबाहेर तो उभा राहिलेल्या ठिकाणी बर्फावर येऊन पडला.

(२०३) Ibid p 198

(२०४) H. P. Blavatsky Collected Writings Vol. VI p. 123-4 quoted in H. P. Blavatsky, Tibet and Tulku (1966) C. A. Barborka p 26

(२०५) अशाप्रकारे 'करणी' च्या वस्तू काढण्याचा प्रयोग अगात सोमनाथांचा संचार झाल्यानंतर श्रीमती अनुराधा देशमुख वर्षातून एकदा मसले चौधरी (ता. मोहोळ, जि. सोलापूर) येथील सोमनाथ मंदिरात करतात. हा प्रयोग प्रस्तुत लेखकाने दि. १६ एप्रिल २००५ रोजी तेथे जाऊन मुद्दाम पाहिला. हा कार्यक्रम सकाळी ११ वाजता सुरू होऊन जवळजवळ तासभर चालला व या अवधीत ८८ लोकांच्या 'करणी'च्या निरनिराळ्या वस्तू त्यांनी काढल्याचे लेखकाने प्रत्यक्ष पाहिले. आपल्या भोवती त्या भस्माचे रिंगण ओढून त्यामध्ये बसतात व जमिनीवर पालथा हात ठेवतात. त्या हातात त्या 'करणी'च्या वस्तू ५ ते ७ सेकंदात येतात. ज्यांच्यावर करणी केली असेल त्यांना ती वस्तू त्या देतात व ती लगेच जाळण्यास सांगतात. (त्या वस्तू जाळण्यासाठी बाहेर एक अग्नीकुंड पेटते ठेवण्यात आले होते.) प्रस्तुत लेखकाने हा प्रयोग रिंगणापासून तीन फूट अंतरावर बसून सतत सवा ते दीड तास नजर अन्यत्र न वळवता पाहिला आहे. या कार्यक्रमाची व्हिडियो फिल्मही घेण्यात आली आहे. 'करणीग्रस्त' लोकांपैकी काही जणांच्या मुलाखतीही लेखकाने नंतर घेतल्या. बहुतेक 'करणी'ग्रस्त लोक सधन कुटुंबातील होते. (अनेक स्वतःच्या कारमधून आले होते.) करणीच्या वस्तू कापडात बांधलेले धान्य,

हळकुड, काळ्या बाहुल्या, काळे पदार्थ वगैरे प्रकारच्या होत्या व त्या अलीकडील काळातील होत्या. सचाराच्या वेळी हा प्रयोग करण्यात आला असल्यामुळे त्यावेळी काय घडते हे आपल्याला माहीत होत नाही, असे अनुराधाबाई नंतर विचारलेल्या प्रश्नांना उत्तर देताना म्हणाल्या.

(२०६) **Where Science and Magic Meet** (1993) S Roney - Dougal p. 27

(२०७) **The Holographic Universe** (1991) Michael Talbot p. 141

(२०८) १) आत्मसाक्षात्कारमार्गप्रदीप - ल. ग. बापट, पृ. ११७-८

२) परलोकविद्या (१९७९) न. खं. क्षीरसागर, पृ. ८९-९०

(२०९) आत्मसाक्षात्कारमार्गप्रदीप पृ. १२०

(२१०) ऑलकॉट यांना न्यूयॉर्कमध्ये सहज भेटलेल्या एका हिंदू गृहस्थाने त्यांच्या घरी येऊन झोपण्याच्या खोलीचे मोकळ्या जागेत रूपांतर केले आणि त्या जागेत एकदा पाण्याची दृश्ये, आणखी एकदा ढगाळ वातावरण, तिसऱ्या वेळी जमिनीखालच्या गुहा, उफाळणाऱ्या ज्वालामुखी दाखवले. प्रत्येक दृश्यात अनेक तऱ्हेचे व आकृतीचे प्राणी दाखवले. यापैकी काही भयानक राक्षस होते. ते ऑलकॉट यांच्या अंगावर धावून आले. पण ऑलकॉट यांनी आपले मनोबल ढळू न दिल्यामुळे ते विशिष्ट हद्दीच्या पुढे आले नाहीत, मागे सरले असे त्यांनी म्हटले आहे. शेवटी हे देखावे त्याने अदृश्य केले व पुन्हा केव्हा तरी भेटू असे म्हणून तो निघून गेला. पण नंतर तो भेटला नाही, असे ऑलकॉट म्हणतात. (Vol 1 p. 111,112) येथे संपूर्ण खोली अदृश्य करण्याबरोबर नसलेल्या वस्तू दृश्य करणे, हा 'चमत्कार' त्या हिंदू गृहस्थाने केलेला आढळून येतो

(२११) **The World of Ted Series** (1967) Jule Eisenbud प्रस्तुत लेखकाच्या विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथात प्रकरण ६ मध्ये याविषयी सविस्तर माहिती दिली आहे.

(२१२) **Afterlife** (1985) Colin Wilson p 211

(२१३) **Mysteries** (1978) Colin Wilson p 551

(२१४) प्रस्तुत लेखकाला अजाणतपण प्राणप्रतिष्ठा झालेल्या एका मूर्तीचे उदाहरण माहीत आहे. ती मूर्ती म्हणजे काश्मीरच्या श्रीनगरजवळील डोंगरातील शंकराचार्यांच्या मंदिरातील खुद्द शंकराचार्यांचीच मूर्ती होय ! तेथे शंकराचार्यांच्या मूर्ती समोर कापडाच्या अनेक गाठी बांधलेल्या दिसल्या. त्या कशासाठी बांधल्या आहेत अशी लेखकाने चौकशी केली असता मूल न होणाऱ्या जोडप्यांनी या ठिकाणी यऊन शंकराचार्यांचे दर्शन घेण्याचा नवस बोलून मूल झाल्यामुळे त्यांचे येथे येऊन दर्शन घेतल्याची खूण म्हणून या गाठी बांधल्याचे त्याला सांगण्यात आले ! अद्वैत तत्त्वज्ञानाचे अध्वर्यू व बालब्रह्मचारी असलेल्या शंकराचार्यांकडे संतती मागणाऱ्या लोकांचे कौतुक करावे, की त्या नवसाला पावणाऱ्या येथील शंकराचार्यांच्या मूर्तीचे कौतुक करावे, हे कळत नाही. लोकांनी बांधलेल्या गाठी मोजण्यापलीकडे होत्या एवढे मात्र खरे;

शंकराचार्यांच्या मूर्तीची प्राणप्रतिष्ठा खरोखरच येथे झालेली दिसून येते आणि तीही अजाणतेपणे व अज्ञानातून ! शंकराचार्यांना जागृत दैवत मानणाऱ्या मानवी मनाच्या सामर्थ्याला खरोखरच मर्यादा नाही !

(२१५) Astral Plane, p 139

(२१६) The Gospel of Ramakrishna (1974) 'M'. p. 119

(२१७) प्रस्तुत लेखकाला गोडा नैवेद्य मान्य असलेली अन्य (लिंगायत) कुटुंबातील 'ताईबाई' माहीत आहे. बरील उरुणकर व रेळेकर ही कुटुंबे मराठा जातीची आहेत. धर्म व जात यावरून त्या कुटुंबाच्या देवता ठरत असल्या तरी 'प्रथा' हा सर्वात महत्त्वाचा व सामर्थ्यशाली घटक असून तो देवतेचे स्वरूप ठरविण्यात मुख्य पात्र बजावतो असे दिसून येते. टाकळीच्या चौडेचरी देवतेचे पुजारी लिंगायत असूनही ती देवता बळी मागते, यावरून हे सिद्ध होते

(२१८) विजय कर्नाटक (कन्नड दैनिक) १२ एप्रिल २००४. दररोज सध्याकाळी ठरलेल्या वेळी (६ वाजल्यानंतर) त्या भानामतीग्रस्त तरुणाच्या शिस्नातून सुया दाभण बाहेर येत असल्यामुळे ते कसे येतात हे पाहण्यासाठी अनेक स्त्रीपुरुष जमलेले आहेत व मध्यभागी तो तरुण आपले (पुढचे कातडे पूर्ण मागे ओढलेले) शिस्न अतर्जनाच्या फटीतून बाहेर काढून बसला आहे, असा रंगीत फोटो वरील दैनिकात छापला आहे.

(२१९) आत्मशक्ती (१९७८) कै. न. खं. क्षीरसागर, पृ. ३०-३२

(२२०) किता पृ. ३२-३४

(२२१) किता पृ. ३५-३६

(२२२) १६ एप्रिल २००५ रोजी मसले चौधरी (ता. मोहोळ जि. सोलापूर) येथे ८८ लोकांच्या करणीच्या वस्तू काढताना त्यांनी संचार - अवस्थेत ही माहिती दिली. करणीचा प्रकार खोटा मानणारे मुगूड (ता. कागल, जि. कोल्हापूर) येथील प्रसिद्ध जवाहर क्लॉथ स्टोअर्सचे मालक श्री. जवाहर मोतीलाल शहा यांनी करणी खोटी नसते याचा स्वतःच हजारो रुपये खर्च करून प्रत्यक्ष अनुभव घेतला आहे. त्यांची नात (मुलाची मुलगी) १० वर्षांची, चौथीत शिकणारी प्रेरणा हिला अचानक अगात भयंकर वेदना होणे, किंचाळणे असा प्रकार सुरु झाल्यामुळे त्यांनी मिरज येथील प्रसिद्ध 'कृपामयी' या मानसिक उपचार करणाऱ्या देवशिकदार यांच्या दवाखान्यात नेऊन दाखवले. तेथे अनेक तऱ्हेच्या मेंदूच्या (सी.टी.स्कॅन इ.) व शरीराच्या तपासण्या करण्यात आल्या व कित्येक दिवस त्यांचे उपचारही घेण्यात आले. (हॉस्पिटलचे व वैद्यकीय तपासणीचे सर्व कागदापत्र श्री. शहा यांनी प्रस्तुत लेखकाला लेखकाच्या खात्रीसाठी दाखवले आहेत. लेखकाने मुलीची मुलाखतही घेतली आहे.) त्यात हजारो रुपये खर्च झाले. पण त्याच्या काहीही उपयोग न झाल्यामुळे शेवटी स्वतः डॉ. देवशिकदार यांनी एखाद्या देवर्षीला त्या मुलीला दाखवण्यास सांगितले ! त्याप्रमाणे त्यांनी मुगूड जवळच्याच कूर या गावातील धोंडीराम खाडे या देवर्षीला दाखवून त्याचे उपचार सुरु करताच एक पैसाही खर्च न करता

मुलगी पूर्ण बरी झाली. त्या देवर्षीने मुलीवर करणी केली आहे असे सांगून करणी करणाऱ्याचे नाव त्या मुलीच्या तोंडूनच काढून घेतले. त्या व्यक्तीवर ती करणी उलटविण्याचीही तयारी श्री. खाडे यांनी दर्शवली. पण आपणाला ते काही नको, फक्त मुलगी बरी होऊ दे, असे श्री. शहा म्हणाले. पण लेखकाच्या परिचयाच्या दुसऱ्या एका व्यक्तीने (श्री. शेखर कोणे, कोल्हापूर) आपल्या बहिणीच्या मुलावर करणी केल्याचे (करणीचे साहित्य पुरावा म्हणून) आढळल्यामुळे व शेजारच्याच एका स्त्रीचा (ती त्यांच्या घरातून बाहेर येताना एकाने पाहिल्यामुळे) संशय आल्यामुळे एका देवर्षीचा सल्ला घेतला असता व त्याने त्या करणी करणाऱ्या स्त्रीवर ती करणी उलटवून तिला आठ दिवसात रक्त ओकायला लावून मारु काय, असे विचारले असता श्री. कोणे यांनी त्यास संमती दिली व खरोखरच आठ दिवसात ती स्त्री आजारी पडून कोल्हापूर येथील सी.पी.आर. हॉस्पिटलमध्ये अक्षरशः रक्त ओकून मेली. (ही घटना नोव्हेंबर १९९८ मध्ये घडली आहे.) हा देवर्षी कोल्हापूर जिल्ह्यातील गगनबावड्याच्या पश्चिमेला असलेल्या बोरबेट या गावाच्याही पलीकडील निर्जन ठिकाणी राहतो. श्री. शेखर कोणे हे कोल्हापूर येथील 'वक्रतुंड' सर्व्हिस सेंटरमध्ये इन्स्ट्रक्टर आहेत. त्यांच्या या अनुभवामुळे अंधश्रद्धानिर्मूलन ही जीवनाच्या अनुभवाचे अधिष्ठान नसलेली बिनबुडाची चळवळ आहे, असे ते हल्ली मानू लागले आहेत. करणीचा एक सार्वजनिक पुरावा म्हणून चिक्कोडी या ब्रेळगांव जिल्ह्यातील तालुक्याच्या ठिकाणाहून उत्तरेला ४ किलोमीटर अंतरावरील (चिक्कोडी-मिरज रस्त्यावरील) अडीच कोटी रुपयाच्या, करणीमुळे बंद पडलेल्या, श्री. भरत नसलापुरे याच्या स्टार्च फॅक्टरीकडे बोट दाखवता येईल. (हे भरत नसलापुरे निधर्मी जनतादलाचे कर्नाटक असेंब्लीच्या मागच्या निवडणुकीला उभे राहून पडलेले उमेदवार होत) उगारच्या श्री. डोणपाल या पंडिताने करणीच्या वस्तू ऑफीसच्या उंबऱ्याजवळ पुरल्याचे सांगितले. त्याप्रमाणे काँक्रीट फोडून पाहिल्यानंतर केस, प्राण्याची नाखे, लिंबू इ. पदार्थ सापडले. ते काढल्यानंतर थोडी सुधारणा झाली असून थोड्याच दिवसात फॅक्टरी सुरू होईल असा भरवसा श्री. नसलापुरे याना वाटतो.

(२२३) कृष्णानंदांनी झोपेत चालणाऱ्या एका हायकोर्ट जजचे आणखी एक उदाहरण दिले आहे. (पृ. २३६) झोपेतच (डोळे झाकलेल्या अवस्थेत) त्यांनी उठून एका कागदावर लिहिण्यास प्रारंभ केला. पण अक्षरे न उमटल्यामुळे पेनमध्ये शाई नाही हे ओळखून त्यात त्यांनी शाई भरली व एक संपूर्ण कविता लिहिली. हे सर्व त्यांनी पूर्ण अंधारात, डोळे झाकलेल्या अवस्थेत केले असून कृष्णानंदांनी बॅटरीच्या प्रकाशात हे सर्व पाहिल्यामुळे त्यांना हे कळले. पण त्या जजना याची काहीही कल्पना नव्हती. यातील सर्वात मोठा 'चमत्कार' असा की त्या जजना पर्शियन भाषा येत नसूनही त्यांनी लिहिलेली संपूर्ण कविता पर्शियनमध्ये होती ! तिचे पर्शियन तज्ञांकडून इंग्रजीमध्ये कृष्णानंदांनी भाषांतर करून ती कविता आपल्या ग्रंथात दिली असून तिचा आशय 'वाईट लोकांच्या संगती टाळाव्यात' असा आहे. अंधारात डोळे झाकून ही कविता त्या जजनी अतींद्रिय दृष्टीनेच लिहिणे शक्य आहे. (न येणाऱ्या पर्शियन भाषेत, ते कदाचित पूर्वजन्मात पर्शियन भाषातज्ञ असल्यामुळे, लिहू शकले असावेत, असा कृष्णानंदांनी तर्क केला आहे.) अशारीतीने अबोध मन हे अतींद्रिय पातळीवर कार्य करते. मॅडम ब्लॅन्हेटस्की यांनी Isis मध्ये झोपेत चालण्याची सवय असलेल्या लोकांना अतींद्रिय शक्ती

कशी प्राप्त होते, हे पाहण्यासाठी फ्रेंच अँकॅडेमीने केलेल्या एका प्रत्यक्ष प्रयोगाचा दाखला दिला आहे. (Vol 1, p 174 इ.)

(२२४) प्रस्तुत ग्रंथात पृ. २०५ वर प्रस्तुत लेखकाच्या पत्नीला पिशाच दिसायचे पण त्याला स्वतःला दिसायचे नाही, या घटनेचा उल्लेख केला असून पत्नीला त्यापासून शारीरिक त्रास झाल्याचेही म्हटले आहे. याचा अर्थ पत्नीचे मन पिशाचाची बाधा होण्याइतके (व ते प्रत्यक्ष डोळ्यांना दिसण्याइतके) कमकुवत होते, म्हणजे ती अशा गोष्टींना संवेदनशील (sensitive) होती, असा होतो. आधुनिक (रुढ) जीवशास्त्रात यालाच 'hereditary traits' म्हणतात. Heredity (आनुवंशिक गुण किंवा संस्कार) हे पूर्वजन्मातील कर्मानेच ठरत असल्यामुळे त्याला नाव काहीही दिले तरी वस्तुस्थितीत फरक पडत नाही. ज्योतिषशास्त्रात अशा (पिशाचविषयक) संवेदनशीलतेच्या गुणांची तीन गटात (वा गणात) वर्गवारी केलेली असून त्यांना देवाण, मनुष्यगण व राक्षसगण अशी नावे दिली गेली आहेत. पहिल्या गणाच्या लोकांना पिशाच दिसणे वा त्याची बाधा होणे असा प्रकार घडू शकत नाही, बाकीच्या गणांच्या लोकांना मात्र तो अनुभव येतो, असे मानण्यात आले असून त्याची काही लोकांच्या जन्मपत्रिका पाहून प्रस्तुत लेखकाने स्वतःची खात्री केली आहे. मात्र त्याविषयी जास्त मोठ्या प्रमाणात पाहणी होणे आवश्यक आहे.

(२२५) Into the Unknown (1981) ed Will Bradburg p. 164

(२२६) True Life Encounters : Unexplained Natural Phenomena (1997)  
Keith Tutt p. 238

(२२७) Ibid p. 236

(२२८) निरनिराळ्या देशातील मूर्तींच्या डोळ्यातून अश्रू व रक्त येण्याचे विश्वसनीय प्रकारही चार्लस फोर्टने आपल्या संग्रहात समाविष्ट केले आहेत. मात्र ते कशाचे द्योतक हे त्याने सांगितलेले नाही. (म्हणजे शोधले नसावे.) २००१ साली नेपाळच्या दोलाखा येथील भीमसेनच्या मूर्तीतून घाम गळत असल्याची बातमी प्रसिध्द झाली होती; आणि त्या वर्षी नेपाळच्या राजधराण्यातील सर्व लोकांची कतल झाली. जेव्हा-जेव्हा त्या मूर्तीतून घाम गळतो त्या त्या वेळी नेपाळवर सकट आले आहे. अशारीतीन ही सार्वजनिक 'भानामती' नेपाळच्या सामूहिक (राष्ट्रीय) कर्माची द्योतक असल्याचे दिसून येते (Indian Express, July 10<sup>th</sup>, 2004)

(२२९) True Life Encounters, p. 237

(२३०) Ibid p. 225 seq

(२३१) पत्नी रेणुकाभक्त असल्यामुळे नेहमी या बाईकडे अडचणीच्या वेळी जात असे एकदा लेखक गुजरातमधील गिरनार व इतर दत्तक्षेत्रांना भेटी देण्यासाठी पुण्याचे श्री द. (मामा) देशपांडे यांच्याबरोबर जाणार होता. आपल्या पत्नीचा प्रवास निर्विघ्न पार पडावा म्हणून रेणुकेचा

भंडारा आणण्यासाठी त्या बाईकडे पत्नी गेली असता तिला भंडारा देऊन त्या बाईने-म्हणजे 'रेणुके' ने-तिला असे सांगितले की "इतर दोन बसेसना किरकोळ अपघात होतील, पण माझा भंडारा तुझ्या नवऱ्याकडे असल्यामुळे त्या बसला काही होणार नाही;" आणि खरोखर तसेच झाले होते. खुद्द मामा देशपांडे यांच्या बसलाही किरकोळ अपघात झाला होता. पण लेखकाच्या बसला काहीही न घडता ती सुखरूप परत आली होती.

(२३२) **World Vedic Heritage** (1995) P.N Oak, pp. 812-14, 947-50 जगातील निरनिराळ्या देशात सापडलेल्या गणपतीच्या मूर्तीचे फोटो या ग्रंथात दिले आहेत.

(२३३) महाभारत, आदिपर्व, ४२.२९, ३०; ४३.३०

(२३४) परब्रह्म गुरु चित्तेदेव, बाबूराव अथणे, पृ. १९०-१

(२३५) दै. महासत्ता (इचलकरंजी) ३० ऑगस्ट २००९

(२३६) **Mysteries** (1978) Colin Wilson pp. 482-3

(२३७) **Dimensions : A Casebook of Alien Contact** (1988) Jacques Vallee, pp. 26-28

(२३८) **Devas and Men** (1977) Southern Centre of Theosophy, Robe, South Australia, p. 10

(२३९) **UFO Abductions In Gulf Breeze** (1994) ed. Ed Walter, p. 189

(२४०) **Aliens Among Us** (1986) Ruth Montgomery, pp. 215-216

(२४१) *Ibid* p. 47

(२४२) **Devas and Men**, p. 91

(२४३) श्री गुलाबराव महाराज : चरित्र (पूर्वार्ध) पृ. १६२-३.

(२४४) **Dimensions**, p. 277

(२४५) *UFO phenomenon does not give evidence of extra-terrestrial at all. Instead it appears to be interdimensional and to manipulate physical realities outside of our own space-time continuum" (Dimensions p. 136)*

(२४६) *"If UFOs are acting at the mythic level it will be almost impossible to detect it by conventional methods" (Italics in the original) Ibid p. 274*

(२४७) *"UFO phenomenon represents evidence for other dimensions beyond space-time. UFOs may not come from ordinary space but from a multi-*

verse which is all around us and of which we have stubbornly refused to consider the disturbing reality in spite of the evidence for centuries." (Ibid p 284) (Italics in the original)

(२४८) 1) Dreams (1918) C. W. Leadbeater p. 28 seq

11) Journeys Out of Body (1972) R. Munroe p. 85

(२४९) परलोकविद्या (१९७९) न. खं. क्षीरसागर पृ. ५०

(२५०) श्री सद्गुरुचरणाखाली, पृ. २५८

(२५१) Dimensions, p. 38

(२५२) Aliens Among Us, p. 51

(२५३) Beyond the Light, Near Death Experiences : The Full Story  
(1994) P M H Atwater p 120

(२५४) True Life Encounters (1997) Keith Tutt pp. 172-4.

(२५५) श्री सद्गुरुचरणाखाली पृ. ३१९

(२५६) The Gospel of Ramakrishna, p. 255

(२५७) Ibid p. 238

(२५८) हा तुकारामांचा अभंग प्रक्षिप्त असणे शक्य आहे. जोग संपादित तुकाराम गाथ्यात-क्षेपक अभंगातही-तो नाही. तथापि तो प्रस्तुत लेखकांच्या बडिलांना उपलब्ध झालेल्या हस्तलिखितात सापडला असल्यामुळे तो त्यांचाच आहे असे समजून त्याचा खरा अर्थ कर्मसिध्दांताचे त्यात प्रतिपादन असल्याचे संतसाहित्य आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन या प्रा. तु. भगतसंपादित ग्रंथातील 'संत साहित्यातील अंधश्रद्धानिर्मूलन; एक वैज्ञानिक दृष्टीकोन' या लेखात प्रस्तुत लेखकाने स्पष्ट केले आहे.

(२५९) प्रस्तुत प्रकरण स्वतः श्री बाबू मुकरे व त्याची पत्नी यांनी व त्यांच्या नातलगानी लेखकाला जसे सांगितले तसे येथे दिले आहे.

(२६०) The Secret Doctrine (1979) Vol I p. 274)

(२६१) Ibid pp. 126-8

(२६२) Ibid, p. 146.

(२६३) The Secret Doctrine (1979) Vol II pp. 305-6

(२६४) Ibid, Vol I pp. 103, 104, 105

(२६७) 'यज्ञ' याचा 'होम' असा अर्थ घेतला तरी त्यात त्यागच अभिप्रेत असून हा 'त्याग' रूपी होम किंवा यज्ञ केला तर माणसाला भौतिक जीवनासाठी आवश्यक असलेले ('हवे ते') अन्न मिळते, हे गीतेने यज्ञात् भवति पर्जन्यः पर्जन्यात् अन्नसंभवः। (भ.गी. ३.१४) ('यज्ञ केल्याने पाऊस पडतो व पावसामुळे अन्न निर्माण होते') या श्लोकात सांगितले आहे. यज्ञ केल्याने पाऊस पडतो हा चमत्कार नाही व अंधश्रद्धाही नाही, तर ते एक ब्रह्मवैज्ञानिक सत्य आहे. हे सत्य मनुस्मृतीने पुढीलप्रमाणे सांगितले आहे : अग्नी प्रस्ताहुतिः सम्यग् आदित्यं उपतिष्ठति । आदित्याज्जायते वृष्टिः वृष्टेरन्नं तथा प्रजा ॥ (मनु. ३.७६) म्हणजे "अग्नीमध्ये विधिपूर्वक टाकलेली आहुति सूर्यात (सूर्यकिरणात) स्थित होते (पोहोचते). सूर्यापासून पाऊस पडतो, पावसामुळे अन्न व अन्नामुळे प्रजा निर्माण होते." प्रस्तुत गीतोक्त व मनुस्मृत्युक्त वैज्ञानिक सत्याची अनेक उदाहरणे आहेत. मात्र हा यज्ञ वैदिक पद्धतीने (विधिपूर्वक) केला पाहिजे. त्याची अलीकडील काळातील महाराष्ट्रातील दोन उदाहरणे येथे देतो. पहिले उदाहरण म्हसवड या पदरपूर-सातारा रस्त्यावरील गावाचे आहे. म्हसवड भागात ४ वर्षे पाऊस नव्हता. पुण्याच्या श्री. सदाशिवशास्त्री पारखी यांनी सुचविल्यावरून इ.स. २००१ सालच्या ऑक्टोबर महिन्यात पुण्याच्या सर्वश्री चंद्रशेखर कुलकर्णी, गुरुप्रसादशास्त्री पारखी, कृष्णा पारखी व शामसुंदरशास्त्री पारखी यांनी सिध्दनाथाच्या (म्हसवडचे ग्रामदैवत) देवळात पर्जन्येष्टीचा यज्ञ शास्त्रोक्त पद्धतीने केला. पूर्णाहुतीच्या दिवशी इतका पाऊस पडला की यज्ञपात्रे पाण्यात तरंगू लागली. माणगंगेला पूर आला. (पुढच्या पावसाळ्यातही पूर आला.) म्हसवडचे सिध्दनाथ मंदिरातील पूजारी श्री. वाळुंजकर व म्हसवडचे ग्रामस्थ या घटनेचे साक्षीदार आहेत. दुसरे उदाहरण अहमदनगर जिल्ह्यातील पाथर्डीचे आहे. २००३ सालच्या आषाढ महिन्यात ह.भ.प. मुकुंदकाका जाटदेवळेकर यांच्या विनंतीवरून काशीचे श्री. गणेश्वरशास्त्री द्रविड यांनी ४० ब्राह्मणांच्या साह्याने खोलेश्वर मंदिरात वाराही मंत्राची सवालक्ष सहवने केली. दुसऱ्या दिवशी पूर्णाहुतीच्या अगोदरच पाऊस पडला. गीतेतील प्रस्तुत श्लोकात सांगितलेली देवांची माणसाने (पोषणरूपी) सेवा केली तर देवही माणसाची (पोषणरूपी) सेवा करतात याचा या घटना म्हणजे साक्षात ब्रह्मवैज्ञानिक पुरावा आहे.

(२६८) 'यज्ञ' याचा अर्थ 'त्याग' असा असून त्यागी माणसाला ईश्वर 'हवे ते' देतो असा नियम आहे. ब्रह्मविज्ञानात या नियमाला 'यज्ञविधि' (त्यागाचा नियम) म्हणतात. (पाहा : The Law of Sacrifice - C. W Leadbeater आणि The Necessity for Reincarnation : Annie Besant, तसेच The Ancient Wisdom या अँनी बेझंट यांच्या ग्रंथातील The Law of Sacrifice हे प्रकरण) यज्ञयागरूपी त्यागाने मिळवायचे ('हवे ते') म्हणजे वस्तुतः 'अमृतत्व' हेच असून कैवल्योपनिषदात हे अमृतत्व माणसाला देणाऱ्या त्यागाच्या वैश्विक नियमाचा पुढीलप्रमाणे उद्घोष केला आहे : न कर्मणा न प्रजया त्यागेनैके



अमृतत्वमानशुः ॥ (कैव.उप.३) म्हणजे "कर्म, प्रज्ञा व धन यांपैकी कशानेही माणसाला अमृतत्व (जन्ममरणाच्या फेऱ्यातून सुटका) मिळणार असून केवळ त्यागानेच ते मिळणार आहे." हा 'त्यागरूपी यज्ञ' प्रथम देवांनी केल्याचे व तोच 'पहिला धर्म' (धर्माचे अधिष्ठान) असल्याचे ऋग्वेदात म्हटले आहे. (यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवाः तानि धर्मानि प्रथमान्यासन् ॥ (ऋ.१०.१०.१६) गीतेत भूतभावोद्भवकरः विसर्गः कर्मसंज्ञितः ॥ (भ.गी.८.३) म्हणजे ईश्वराच्या विश्वनिर्मिती करण्याच्या पहिल्या त्यागाला 'कर्म' म्हटले असून, ('विसर्ग' म्हणजे 'त्याग') म्हणजे विश्वोत्पत्तीरूपी त्याग हेच ईश्वराचे पहिले 'कर्म' असून, तोच ऋग्वेदातील उपर्युक्त ऋचेत सांगितलेला देवांचा 'पहिला यज्ञ' (धर्माचे अधिष्ठान) आहे असे सुचविले आहे. म्हणजे ईश्वराने विश्वोत्पत्तीरूपी 'त्याग' (यज्ञ) स्वतः करून त्याद्वारे माणसाला 'त्याग' हा धर्माचा पहिला धडा घालून दिला असा याचा अर्थ आहे. बृहदारण्यक उपनिषदाची सुरुवातच या 'त्याग' रूपी यज्ञाच्या मंत्राने झाली असून तेथे पहाट (उषा - म्हणजे विश्वाची उत्पत्ती) हे त्यागरूपी यज्ञीय घोड्याचे 'शिर' (म्हणजे उत्तमार्ग = यज्ञाचा श्रेष्ठ भाग) आहे, असे म्हटले आहे (उषा वै अश्वस्य मेध्यस्य शिरः । बृ.उप.१.१.१)

(२६९) The Life Divine (1939) Aurobindo 1 p. 324

(२७०) Collected works of the Mother. Vol 3 p 60 quoted in The Hidden Force of Life. p 8

(२७१) Ibid p 60

(२७२) माणसाला हा धडा व्यवहारात कसा मिळतो याचे उत्कृष्ट विवेचन अँनी बेझंट यांनी आपल्या Ancient Wisdom या ग्रंथातील Reincarnation या प्रकरणात केले आहे, ते वाचकांनी अवश्य पाहावे. माणूस कसाही वागला तरी निसर्गाच्या (ईश्वराच्या) नियमापुढे त्याला शेवटी मान तुकवावीच लागते. अनेक जन्मात दुःख भोगावे लागल्यानंतर प्रारंभी सुख व नंतर अपरिहार्यपणे दुःख देणाऱ्या मार्गाचा तो स्वेच्छेनेच त्याग करतो. त्याच्यावर सक्ती करावी लागत नाही. कर्मयोग प्रयत्नपूर्वक आचरणाच्या योग्यालासुद्धा अनेक जन्म घ्यावे लागतात (अनेकजन्मसंसिद्धः) असे गीता म्हणते. (भ.गी..६.४५) मग सामान्य लोकांना हा धडा शिकण्यासाठी किती जन्म घ्यावे लागतील याची कल्पना करावी. पण शेवटी त्याला तितक्या जन्मातील दुःख भोगल्यानंतर निश्चित आध्यात्मिक धडा मिळतो व मार्ग सापडतो, यात सशय नाही. कारण There are many roads of error, the road of truth is one (सत्यापासून दूर नेणारे अनेक मार्ग आहेत, सत्याचा मार्ग एकच आहे) हे लक्षात ठेवले पाहिजे.

(२७३) Synchronicity - An Acausal Connecting Principle (1955) C J Jung and Wolfgang Pauli, p. 14

(२७४) विज्ञान आणि बुद्धिवाद, पृ. १९८

(२७५) परब्रह्मगुरु चित्तेदेव, पृ. २२३

(२७६) *Synchronicity etc.* p 33 पुढे जाऊन युंगने या घटनेचा आणखी एक अर्थ सांगितला आहे. इजिप्शियन पुराणकथेनुसार सूर्य रात्री मृत्यू पावतो तेथे त्याचे सोनेरी किड्यात रूपांतर होते, व सकाळी पुनर्जन्म झालेला नवा सूर्य उगवतो, अशारीतीने सोनेरी किडा इजिप्शियन पुराणकथेनुसार पुनर्जन्माचे प्रतीक (symbol) आहे. त्या स्त्रीचा मानसिक पुनर्जन्म झाल्याचे प्रथम स्वप्नात व नंतर प्रत्यक्षात येऊन त्या किड्याने सूचित केले आहे. पुराणकथा अर्थपूर्ण असतात असे युंग याच कारणासाठी मानतो व त्याच्या मानसशास्त्रीय अभ्यासाचा आग्रह धरतो. (अर्थात् त्या कथा शब्दशः घ्यावयाच्या नसतात.) या कथा मानवाच्या सामूहिक अज्ञोदध मनात (collective unconscious) लाखो वर्षांपासून वास करणाऱ्या पुराणजाती (archetypes) असून योग्य वेळ येताच (त्या स्त्रीच्या स्वप्नाप्रमाणे) स्वप्नातून वा जागेपणीसुध्दा प्रकटतात, असा सिध्दांत त्याने मांडला आहे; आणि तो बहुसंख्य मानसशास्त्रज्ञांनी स्वीकारला आहे. पण मागे कावळ्याच्या संदर्भात प्रस्तुत लेखकाने म्हटल्याप्रमाणे या पुराणजाती केवळ प्रतीकरूप नसून वस्तुस्थितिनिदर्शक घटनांचे संदेशवाहकही असतात. ही गोष्ट त्या स्त्रीच्या स्वप्नातील सोनेरी किडा प्रत्यक्षात तेथे तिच्या मानसिक पुनर्जन्माचा संदेश घेऊन आला ही वस्तुस्थिती सिध्द करते. अशारीतीने मानवी मनाचा व बाह्य सृष्टीचा अर्थपूर्ण संबंध आहे, ही गोष्ट अशा घटना सिध्द करतात. या पुराणजाती मानवाला निर्माण करतानाच ईश्वराने त्याच्यात रोपण केल्या आहेत असे केप्लर या शास्त्रज्ञाने म्हटल्याचे याच ग्रंथात बुल्फगॅंग पॉलीने त्याचे प्रत्यक्ष उतारे देऊन दाखवून दिले आहे. (Archetype हा शब्द पुराणजाती या अर्थाने प्रथम केप्लरनेच आपल्या लिखाणात वापरला असून युंगने त्याच अर्थाने तो आपल्या लिखाणात नंतर रुढ केला आहे.)

(२७७) *Memories, Dreams and Reflections* (1961) C J Jung p. 155 फ्रॉइडची परामानसशास्त्र व भानामती याविषयीची दृष्टी कशी पूर्वग्रहदूषित होती याची कल्पना या घटनेनंतर युंगला त्याने लिहिलेल्या पत्रावरून येते. युंगने दिलेले 'परिशिष्ट १' पाहा.

(२७८) *Synchronicity : The Bridge Between Matter and Mind* (1987) F. David Peat. pp 21-2

(२७९) *True Life Encounters*, p. 212

(२८०) *Past Lives Future Lives* (1988) Dr Bruce Goldberg p. 112

(२८१) *Secret Doctrine - II* pp. 612-3

(२८२) *How Theosophy Came to Me* - C W. Leadbeater pp 111-112

(२८३) *Ibid*

(२८४) Quoted in *Mystries* p. 583 from *The Cosmic Clocks* (1967), and *The Scientific Basis of Astrology* (1969) M Gauquelin, अलीकडे फलज्योतिषः

शास्त्र की अंधश्रद्धा (१९९७) ए. जे. आयझेंक (अनुवाद) आणि मायकेल गॉकेलिनचं ज्योतिषशास्त्रीय संशोधन (२००२) ही यशोदा भागवत याची दोन पुस्तके प्रसिध्द झाली आहेत.

(२८५) विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन पृ. ४२

(२८६) १) सृष्टिज्ञान (मासिक) (१९६२) पुणे,  
२) विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन, पृ. ४०,  
३) गमधन (दिवाळी अंक) (२००२) मुंबई.

(२८७) Letters On Yoga : Part One pp 467-8

(२८८) Gospel of Ramakrishna, p. 92

(२८९) Janus : A Summing Up (1978) Arthur Koestler, p. 262

(२९०) या संदर्भात युंगने म्हटले आहे की 'जादूची काडी' (magic wand) आणि 'प्रार्थना' (prayer) या दोहोंची कार्यक्षमता म्हणजे 'एककालिक घटनात्मकते' चेच (synchronicity चेच) उदाहरण, (प्रात्यक्षिक) आहे. (Synchronicity etc. p 141) त्याने असेही म्हटले आहे की या (वरीलसारख्या) 'अंधश्रद्धा' (superstition) म्हणून समजल्या गेलेल्या गोष्टीमध्येही सत्याचा गाभा आहे, हे जाणून घेणे महत्वाचे आहे. जादू ही अंधश्रद्धा नसल्याचा निर्वाळा जे. ए. व्हीलर या भौतशास्त्रज्ञाने 'क्वांटम भौतिकी' (Quantum Physics) हाच जादूचा सिध्दांत आहे असे म्हणून दिला असल्याचे यापूर्वी आपण अनेकदा पाहिले आहेच. प्रार्थनेच्या परिणामाबाबत मागे पृ. २२७ वर खून झालेल्या मिसिस शूच्या आईने शूची वरचेवर प्रार्थना केल्यामुळे ती प्रत्यक्ष हाडामांसाच्या रुपात कशी प्रकट झाली व आपल्या नवऱ्याने आपला कसा खून केला याची भौतिक पुराव्यासह इत्थंभूत माहिती कशी दिली (ज्या माहितीचा भौतिक पुरावा सापडल्यामुळे तिच्या नवऱ्याला कोर्टाने जन्मठेपेची शिक्षा दिली) याची प्रमाणभूत सत्य माहिती दिली आहे. अलीकडे अमेरिकेतील डेट्रॉइट या शहरात एका कार अपघातात भयंकर जखमी झालेली व्हर्जीनिया हॅरिस ही बाई जगणे शक्य नाही असे डॉक्टरांनी जाहीर केले असतानासुध्दा त्यांचे वैद्यकीय उपचार घेण्याचे नाकारून ती व तिचा नवरा घरी गेले व केवळ प्रार्थनेच्या जोरावर दोन आठवड्यात आपल्या पायावर ती बाई उभी कशी राहू शकली, याची माहिती प्रसिध्द झाली आहे. (Indian Express, Dec 17, 1997) कॅलिफोर्निया येथील 'सेन फ्रान्सिस्को जनरल हॉस्पिटल' मधील डॉ. रॅडॉल्फ बायर्ड यानी हृदयाच्या ४०० रुग्णांना (हृदयावर शस्त्रक्रिया केलेल्या) निवडले व त्यातील २०० रुग्णांसाठी केवळ प्रार्थना करण्याचा अनोखा उपचार करण्यात आला. इतर २०० रुग्णांसाठी ही उपचार पध्दती अवलंबिली गेली नाही. प्रार्थना न केलेल्या रुग्णांच्या तुलनेत प्रार्थना केलेल्या रुग्णांच्या हृदयाच्या समस्या निम्म्याने कमी झाल्याच्या नंतर आढळून आल्या. (True Life Encounters. p 76)

(२९१) विज्ञान आणि बुद्धिवाद, पृ. २९.

(२९२) या स्वप्नाची माहिती स्वतः सौ. जाखोटिया यांनी प्रस्तुत लेखकाला प्रत्यक्ष भेटीत दिली आहे व ते स्वप्न त्या दुर्घटनेच्या अगोदर आपल्याला सांगितल्याचे त्याच्या मुलाचे निवेदन व त्याबद्दलचे त्याच्या वडिलांचे अनुमोदन पत्र त्या दोघांनी स्वाक्षरीने पाठविले आहे. ही बातमी नंतर दै. 'सनातन प्रभात' च्या १३ सप्टे. २००१ च्या अंकात प्रसिध्द झाली आहे.

(२९३) **Science and Psychical Phenomena** (1975) G. N. M Tyrrell p 45-7

(२९४) **Clairvoyance**- C. W Leadbeater p. 182-3

(२९५) **Jean Dixon : The Witnesses** (1976) Denis Brian, p. 54

(२९६) **Clairvoyance**, p. 162-3

(२९७) चक्रावून सोडणार चमत्कार : नाडीभविष्य - बिंग कमाडर शशिकांत ओक, पृ. ९८

(२९८) 'Can Quantum Mechanical Description of Physical Reality Be Considered complete?' N Bohr in **Quantum Theory and Measurement** (1983) J D Wheeler and W H Zurek, p 145-6

(२९९) **Causality and Chance in Modern Physics** (1957) David Bohm p. 92

(३००) **Shadows of the Mind** (1994) Roger Penrose, p. 328

(३०१) "The concept of a causal relationship implies (that) the future effects come out of past causes through a process satisfying *necessary* relationships " **Causality and Chance in Modern Physics**, D. Bohm, p. 5-6.

(३०२) "According to modern mechanics each individual particle in a certain sense, at any one time, exists simultaneously in every part of the space occupied by the system " **Where Is Science Going ?** (1933) Max Planck, p. 24

(३०३) पाहा विज्ञान आणि बुद्धिवाद, पृ. २०.

(३०४) गुरुचरित्र अ. ४६.

(३०५) पाहा I) **Cosmic Blueprint** (1987) Paul Davies

II) **Order Out of Chaos** (1984) Ilya Prigogine and Isabelle Stengers

(३०६) "Once it is recognised that life transcends physics and chemistry, there is no reason for suspending recognition to the obvious fact that consciousness is a principle that fundamentally transcends not only physics and chemis-

try but also the mechanistic preinciples of living beings " Michael Polanyi, *Science*, 1968 p. 1308 quoted in *Cosmic Blueprint*, p. 194.

(३०७) "Phenomena such as extrasensory perception, telepathy, precognition and psychokinesis [are] evidence of organisational principles that extend beyond the individual mind and allow for downward causation of mind over matter often in flagrant violation of laws of physics " *Cosmic Blueprint*, p 196.

(३०८) *The Ghost In the Atom* (1986) ed. P.C W. Davies and J R Brown  
हा प्रयोग मेरीलैंड विद्यापीठात कॅरोल अॅली आणि सहकाऱ्यानी केला आहे.

(३०९) *Quantum Theory and Measurement* (1983) ed J.A Wheeler  
and W H Zurek. p. 209

(३१०) *The Undivided Universe* (1993) D Bohm and B J Hiley, p 389

(३११) *Ibid*, p 385-6

(३१२) *Ibid*, p 386. फ्रीमन डायसन या भौतशास्त्रज्ञानेही म्हटले आहे की इलेक्ट्रॉनला एका दृष्टीने 'मन' आहे. उदा. तो म्हणतो, "Mind is inherent in every electron and the processes of human consciousness differ only in degree but not in kind from the processes of choice between quantum states which we call "chance" when they are made by electrons." (*Disturbing the Universe* (1979) Freeman Dyson, p. 249 याचा अर्थ इलेक्ट्रॉनमधील 'मन' व मानवी 'मन' यात प्रमाणात्मक (degree) फरक आहे, गुणात्मक फरक नाही असे तोही भौतशास्त्रज्ञ म्हणतो.

(३१३) *The Holographic Paradigm and Other Paradoxes* (1982) ed  
Ken Wilber, p. 212

(३१४) *Quantum Implications* (1987) ed. B J Hiley and David Peat.  
p 443 & 446

(३१५) उदा *Quantum Physics : Illusion or Reality ?* (1986) या पुस्तकाचा  
लेखक Alastair Rae

(३१६) कठ. उप. (१.३.१०, ११) श्वेता. उप. ८४.१२)

(३१७) "The implicate order manifests in the activity of the particle through the quantum potential." *The Undivided Universe*, p 380 क्वांटम सिध्दांतात दृश्य 'कण' (particle) हा स्थूल जग सूचित करतो व 'तरंग' (wave) नेहमी अदृश्य असल्यामुळे तो सूक्ष्म जग सूचित करतो, हे लक्षात ठेवावे.

(३१८) *Albert Einstein : Philosopher Scientist* (1949) ed P.A Schilpp

(३१९) **Maya in Physics** (1991) N.C. Panda (हा ग्रंथ 'मोतीलाल बनारसी दास' ने प्रसिद्ध केला आहे.)

(३२०) 'Can Quantum Mechanical Description of Physical Reality Be Considered Complete ?' Albert Einstein, B. Podolsky & N. Rosen, **Physical Review** 47, (1935) reprint ed in **Quantum Theory and Measurement**, ed. Wheeler & Zurek pp. 138-143. आइन्स्टाइनने स्थान (position) आणि वेग (momentum) हे एकाच वेळी निश्चित करता येत नाहीत या हायजेनबर्गच्या तत्त्वामुळे निर्माण होणारा विरोधाभास दाखविण्याचा प्रयोग वर्णिला आहे. येथे वाचकांना समजण्यास सुलभ व्हावे म्हणून spin चे उदाहरण घेतले आहे.

(३२१) **Physical Review**, 48 (1935) Reprinted in **Quantum Theory and Measurement**, pp 145-151 बोहरचे उत्तर तांत्रिक स्वरूपाचे असून ते समजण्यास सुलभ अशा व्यावहारिक भाषेत येथे दिले आहे. पृ. ५३३ वरील बोहरचा उतरा त्याच्या याच निबंधातून घेतला आहे.

(३२२) **Wholeness and Implicate Order** (1980) David Bohm, p. 174.

(३२३) **Autobiographical Notes** (1949) A. Einstein

(३२४) "Bell's Theorem and World Process," Henry Stapp, quoted in **Mind Over Matter**, (1981) Kit Pedlar

(३२५) **Ghost in the Atom** (1986) ed. P.C.W. Davies and J.R. Brown

(३२६) **Science**, Dec. 1980, quoted in **Beyond the Quantum** (1988) Michael Talbot, p. 87

(३२७) **Quantum Theory** (1951) David Bohm

(३२८) **Physics and Philosophy** (1990) Werner Heisenberg, p. 78

(३२९) **Second Creation** (1987) R.P. Crease & C.C. Mann

(३३०) Quoted by W. Byers-Brown in "Wolfgang Pauli-Physicist and Dreamer" Lecture given to the scientific and Medical Network, on April 13, 1980, **Synchronicity** -F. David Peat, p. 25

(३३१) **The Mysterious Universe** (1931) James Jeans

(३३२) **Mind, Matter and Quantum Mechanics** (1991) Henry Stapp, p. 175

(३३३) Ibid, p 180

(३३४) Ibid, p. 181.

(३३५) The Ghost In the Atom, p 47

(३३६) The Dancing Wu Li Masters (1980) Gary Zukav, p 318 seq.

(३३७) आईन्स्टाइनने म्हटले आहे की, "What I am really interested is whether God could have made the world in a different way, that is whether the necessity of logical simplicity leaves any freedom at all " म्हणजे "हे विश्व आहे त्याहून वेगळे परमेश्वराने रचले असते काय, या प्रश्नात मला खरोखर रस आहे. कारण विश्व हे तार्किक (गणिती) दृष्टीने समजून घेण्यास इतके सुगम आहे की ते आहे त्यापेक्षा वेगळे रचणे शक्य आहे, असे वाटत नाही." Quoted in *Emperor's New Mind* (1987) Roger Penrose p 432. Also cf *Subtle is the Lord* (1982) A Pais, p 444.

(३३८) *Mind Reach* (1977) Russell Targ and Harold Puthoff, pp. 130-33

(३३९) E. Douglas Dean, "Plethysmograph Recordings of ESP Responses," *International Journal of Neuro psychiatry*, 2 (sept 1966)

(३४०) Cited in *Isis Unveiled*, I p 183

(३४१) i) *Toward a General Theory of the Paranormal* (1973) Lawrevice Le Shan. p. 53

ii) *The Medium, the Mystic and the Physicist* (1974) Lawrevice Le Shan p 31

(३४२) विज्ञान आणि बुद्धिवाद, पृ. २६-२७.

(३४३) परमब्रह्मगुरु चिलेदेव, पृ. ९८-९९.

(३४४) i) *Handbook of Parapsychology* (1977) ed B B Wolman p. 326 ff

ii) *Psychic Exploration* (1974) Edgar Mitchel, p. 179 ff

(३४५) *Mysteries*, p 49 ff

(३४६) Ibid, p 61.

(३४७) *New Soviet Psychic Discoveries*, chapt 9

(३४८) दीनदयाळू आण्णा महाराज लाटकर, (अप्रकाशित)

(३४९) i) *Mind Reach* (1977) Russell Targ and Harold Puthoff,

ii) 'Psychic Research and Modern Physics', in *Psychic Exploration*

(1974) ed John white, pp 524 ff

(३५०) **Margins of Reality** (1987) Robert G Jahn and Brenda J Dunne, pp. 160, 185 quoted in **Holographic Universe** (1991) M. Talbot, p. 206, 207

(३५१) **Journal of Am. Soc. Psy. Res**, 67, (1973) Jule Eisenbud, p. 1-25, quoted in **Holographic Universe**, p. 207.

(३५२) **विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन**, प्रकरण १०.

(३५३) **My Baba and I** (1999) Dr John S Hislop, p. 95-6.

या पुस्तकाचा अनुवाद मनीषा दीक्षित यांनी मराठीत केला असून त्या पुस्तकातील अनुवाद योग्य फेरफारासह येथे दिला आहे.

(३५४) **The Tao of Physics** (1988) Fritjof Capra, p. 277

(३५५) G. F. Chew, " 'Bootstrap' . A Scientific Idea ?" **Science** Vol. 161 (May 23, 1968) pp. 762-65, quoted in *op. cit.* p. 279.

(३५६) **The Tao of Physics**, p. 281





## परिशिष्ट - १

### ‘चमत्कार’ विषयावर एका बुद्धिवाद्याशी ग्रंथकर्त्याचा झालेला पत्रव्यवहार

॥ ॐ ॥

संपादक - ‘गमभन’, मुंबई, यांस,

स. न. वि. वि.

दि. ८-२-२००२

‘गमभन’, २००१ च्या दिवाळी अंकात श्री. नी. र. वऱ्हाडपांडे या बुद्धिवाद्यांनी संतांच्या चमत्कारांविरुद्ध पुढीलप्रमाणे युक्तिवाद केला आहे :

“संतांची इच्छा असेल तेव्हा हे चमत्कार संतांना करता येतात. संत होण्याचा मार्गही ज्ञात आहे. ईश्वरपूज्जी केल्याने संतत्व प्राप्त होते. योग हे तर एक शास्त्रच आहे व त्याची साधना करता येते. तेव्हा संतांचे व योग्यांचे हे वस्तुतः चमत्कार म्हणता येत नाहीत. त्यांना चमत्कार म्हटले तर अनेक हत्तीना घेऊन आकाशात उडणारे विमान व खटका दाबला की लागणारा विजेचा दिवा हेही चमत्कारच म्हणावे लागतील.” (गमभन, दिवाळी अंक २००१, पृ. १५)

येथे संत व योगी यांचे चमत्कार नाकारण्यासाठी वऱ्हाडपांड्यांनी ‘शास्त्रात चमत्कार बसत नाहीत’ हे गृहीतकृत्य वापरले आहे व त्यामध्ये वाचकांची दुहेरी फसवणुक केली आहे. (जादूगार प्रेक्षकांची हातचलाखीने फसवणुक करतो. बुद्धिवादी वाचकांची बौद्धिक युक्तिवादने व शब्दचलाखीने फसवणुक करतो.) पहिली फसवणुक विज्ञान व चमत्कार यात विरोध आहे, असे भासवून त्यांनी केली आहे. पण विज्ञान व चमत्कार यात विरोध नाही. विरोध मानला तर चमत्कार अशक्य (खोटे) ठरतात; व चमत्कार शक्य (खरे) मानले तर विज्ञान अशक्य (खोटे) ठरते. पण विज्ञानाच्या व चमत्काराच्या सत्यत्वाची कसोटी ‘प्रत्यक्ष प्रायोगिक पुरावे’ ही आहे. बौद्धिक युक्तिवाद ही नाही. आणि या कसोटीवर विज्ञानही खरे ठरते व तथाकथित ‘चमत्कार’ ही खरे ठरतात. (पाहा, प्रस्तुत लेखकाचा विज्ञान आणि चमत्कार हा ग्रंथ) तात्पर्य ‘विज्ञानात चमत्कार बसत नाहीत’ हे गृहीतकृत्य खोटे आहे.

वऱ्हाडपांड्यांनी वाचकांची दुसरी फसवणुक, हत्ती नेणारे विमान चमत्कार नव्हे, असे म्हणून भौतिक शास्त्र हेच काय ते शास्त्र आहे, असे (खोटेच) वाचकांना भासवण्याचा प्रयत्न करून केली आहे. पण अतींद्रिय विज्ञान (परामनोविज्ञान - Parapsychology) हेही शास्त्र असून या शास्त्रानुसार ज्यांना ‘चमत्कार’ समजण्यात येते त्या अतींद्रिय घटना प्रायोगिक कसोटीवर प्रयोगशाळेत प्रत्यक्ष सिध्द करून दाखवण्यात आल्या आहेत - म्हणजे हत्ती विमानाने नेणे हा चमत्कार नसेल तर या अतींद्रिय घटनाही चमत्कार नाहीत, हे सिध्द होते.

वऱ्हाडपांड्यांनी आणखी एक वाचकांची दिशाभूल केली आहे. ते म्हणतात, “संतांची इच्छा असेल तेव्हा संतांना चमत्कार करता येतात.” हे खोटे आहे. संतांच्या जीवनात आपोआप चमत्कार घडतात. ते त्यांच्या इच्छेवर अवलंबून नाही. ज्ञानेश्वरांनी भित चालवली, रेड्यामुखी

वेद बोलविले, ते संत म्हणून नव्हे, तर योगी म्हणून. आणि योग हे भौतिक शास्त्रप्रमाणेच एक काटेकोर (exact) शास्त्र आहे.

पुढे वऱ्हाडपांडे म्हणतात, “नुसती भक्ती करून सगळेच संत होऊ शकत नाहीत. त्यासाठी पूर्वजन्मीचे संचित लागते व पूर्वजन्मीचे संचित कोणते हे कळण्यास काही मार्ग नाही. त्यामुळे सतांचे चमत्कार हे शास्त्र म्हणता येत नाही.”

“नुसतेच भक्ती करून सगळेच संत होऊ शकत नाहीत” असे येथे म्हणणारे वऱ्हाडपांडे “ईश्वरभक्ती केल्याने संतत्व प्राप्त होते.” असे वर कसे म्हणाले ? अर्थात् वाचकांची दिशाभूल करण्यासाठी ! येथे ‘संत होण्यासाठी पूर्वजन्मीचे संचित लागते’ असे ते म्हणतात. हा शोध त्यांनी कुठे व कसा लावला हे ते सांगत नाहीत ! बरे, हा त्यांचा शोध खरा धरून चालले तरी ‘पूर्वजन्मीचे संचित कोणते हे कळण्यास मार्ग नाही’ असे जे ते पुढे म्हणतात, ते कसे ? कारण ज्ञानेश्वरांनी ते ओळखण्याची खूण सांगितली आहे : ‘बहुत सुकृतांधी जोडी । म्हणोनि विठ्ठली आवडी ॥’ (म्हणजे फळावरून बीज ओळखता येते.)

वास्तविक सतांचे ‘चमत्कार’ खरे की खोटे या प्रश्नाचा निकाल ते शास्त्र आहे की नाही या बुद्धिवादी चर्चेने लागत नसून पुराव्यांनी लागतो. पुराव्यांच्या आधारे ते ‘चमत्कार’ सत्य ठरले तर त्यांचे स्वतंत्र असे एक शास्त्र आहे असे आपोआपच ठरते. ते कसे हे योग्यांच्या बाबतीतले त्यांचे पुढील म्हणणे पाहिले तर स्पष्ट होईल.

योग्यासंबंधी ते पुढे म्हणतात, “योग हे शास्त्र आहे हे निश्चित. योगोपचाराने काही व्याधी बऱ्या होतात याबद्दल पुरावा उपलब्ध आहे. पण योगसाधनेने अणिमा/गरिमा/आकाशगमनादि सिध्दी प्राप्त होतात हे दावे खरे नाहीत.. या विद्या खऱ्या असतील तर व्यवहारात त्यांचा कुठेही उपयोग होताना का दिसत नाही ?... संगणकाला गणिते करता येतात व चद्रावर जाता येते, याबद्दल कोणी संशय घेतो काय ? सिध्दी सार्वत्रिक उपयोगात येत नाहीत त्या अर्थी सिध्दीचे दावे गप्पाष्टकांच्या रुपाचे आहेत असाच सिध्दांत ठरतो.”

वरील युक्तिवादात योग्यांच्या सिध्दींच्या खरेपणाचा निकष ‘व्यावहारिक उपयोग’ हा गृहीत धरला आहे. पण हे चुकीचे आहे. कोणतेही सत्य हे त्याच्या व्यावहारिक उपयोगावरून ठरत नाही. शास्त्रीय निकषावर ठरत असते. मग त्याचा व्यवहारात उपयोग होवो अथवा न होवो ही गोष्ट अतींद्रिय विज्ञानाने सिध्द केली आहे. उदा. परचित्तज्ञान (Telepathy), दूरवस्तुदर्शन (Clairvoyance), मनश्चलनशक्ती (Psychokinesis) इ. शक्ती माणसात आहेत, पण सुप्त आहेत त्या प्रयत्नाने विकसित करता येतात, हे प्रयोगाने शास्त्रीय निकषाखाली सिध्द झाले आहे. पण या शक्तींचा व्यवहारात फारसा उपयोग होत नाही; होऊ नये अशीच निसर्गाची योजना आहे. पण त्यांचा व्यवहारात उपयोग होत नाही, म्हणून त्या शक्ती खोटेच ठरत नाहीत काही अल्पवयीन मुले मोठमोठी गणिते चुटकीसरशी सोडवतात. ती सोडवण्यासाठी मोठमोठ्या गणितज्ञानाच नव्हे तर गणकयंत्रांनासुद्धा पुष्कळ वेळ लागतो. (पाहा. प्रस्तुत लेखकाचे विज्ञान आणि बुद्धिवाद हे पुस्तक. पृ. २४२) पण या मुलांच्या या शक्तींचा व्यवहारात काहीही उपयोग नसतो. म्हणून ती शक्ती खोटी ठरत नाही. पतंजली मुनींनी तर अणिमा / गरिमा यासारख्या

सिध्दी योग्यांना योगसाधना करताना आपोआपच प्राप्त होतात, पण त्या साधनेत विघ्नकारक ठरतात, असे म्हटले आहे. (पाहा. पातंजल योगसूत्र, ३.३७) तात्पर्य, शास्त्रीय सत्य हे त्याच्या व्यावहारिक उपयुक्ततेवर अवलंबून नाही. या कसोटीवर आईन्स्टाइनचा सामान्य सापेक्षता सिध्दांतही खोटा म्हणावा लागेल ! कारण त्याचा व्यवहारात काहीही उपयोग नाही. म्हणून वऱ्हाडपांडे त्या सिध्दाताला 'गप्पाटका' त ठकलणार काय ? संतांची सर्वश्रेष्ठ अतींद्रिय शक्ती 'ईश्वर' ही असून त्या शक्तीचे व व्यवहाराचे तर पूर्ण वाकडे आहे. व्यवहाराकडे लक्ष ठेवून तिची उपासना केली तर ती मिळतच नाही असा सर्व संतांचा अनुभवाधिष्ठित सिध्दात आहे. म्हणून सर्व संत सिध्दींचा धिक्कार करतात. [अकलकोट स्वामींनी सिध्दीला 'रंडी' म्हटले आहे. म्हणजे संतांच्या दृष्टीने सिध्दींचा व्यावहारिक उपयोग करणारा 'रंडीबाज' ठरतो !] \* सत तुकाराम 'भूतभविष्य कळो यावे वर्तमान । ही तो भाग्यहीन त्यांची जोडी ॥' असे म्हणून या सिध्दी मिळालेल्या लोकांना दुर्भागी ठरवतात. वास्तविक बुद्धिवादी दृश्य जग हेच काय ते खरे मानत असल्यामुळे (म्हणजे अदृश्य-अतींद्रिय-जग नाकारत असल्यामुळे) त्यांच्या दृष्टीने 'भौतिक उपयोग' (भौतिक सुख) हेच खरे ठरावे, तीच त्यांनी सत्याची कसोटी मानावी, यात आश्चर्य नाही. हीच बुद्धिवादी अंधश्रद्धा होय.

संतांचे चमत्कार नाकारण्यासाठी इतरांनी त्यांच्या नावावर अभंग लिहून घुसडले, असे म्हणण्यावाचून बुद्धिवाद्यांना गत्यंतर नाही. (आणि वऱ्हाडपांड्यांनी हेच केले आहे ! ) संतांच्या जीवनातील चमत्कार नाकारण्यासाठी या थराला ज्यांना जावयाचे आहे, त्यांना चमत्कार हे विज्ञानात बसत नाहीत व म्हणून घडणे शक्य नाही, ही तात्त्विक भूमिका प्रथम वैज्ञानिक कसोटीवर सिध्द करावी लागेल. हे आजपर्यंत कोणत्याही बुद्धिवाद्याने सिध्द केलेले नाही. कारण ते सिध्द करणे अशक्य आहे.

- अद्वयानंद गळतगे

प्रती,

श्री. नी. र. वऱ्हाडपांडे, ३८ हिंदूस्तान कॉलनी, अमरावती रोड, नागपूर, ४४००१०

रा. श्री. अद्वयानंद गळतगे यांस

दि. २-३-२००२

स. न. वि. वि.

आपण "गमधन" च्या सम्पादकास माझ्या लेखाबद्दल पाठविलेले पत्र व कार्ड मिळाले.

अध्यात्म व विवेकवाद याबद्दल आपले समाधान मी करून शकेन अशी मला आशा नाही. अध्यात्मावरील विश्वास पुराव्यावर आधारलेला नसतो.<sup>(१)\*\*</sup> म्हणूनच त्याला श्रद्धा म्हणतात. काही व्यक्तींची ती भावनात्मक गरज असते व ही गरज जोपर्यंत कायम आहे तोपर्यंत अध्यात्म हे थोटाण्ड आहे याबद्दल कितीही पुरावे दिले तरी त्यांचा त्यांच्यावर काही

\* नंतर जोडलेली चौकट

\*\* कसातील आकडे ग्रंथकथनि दिले असून ते शेकटी दिलेल्या सदर्मटीपाचे आहे त्यासाठी परिशिष्ट १ संदर्भ दिस पाहाव्यात

परिणाम होण्याचा सभव नसतो.<sup>(३)</sup>

“व्यावहारिक उपयोगअसा माझ्या सत्याचा निकष आहे” असा प्रस्तुत पत्रात आरोप आहे. माझ्या लेखातून असे वाक्य काढून दाखवू शकाल काय ? ज्या सिध्दीचा काहीही सामाजिक उपयोग नाही अशा सिध्दि असू शकतील. अशा सिध्दीचे सत्यत्व पारखण्यास सामाजिक उपयोग ही कसोटी वापरता येणार नाही.<sup>(४)</sup> पण अणिमा / महिमा समाजाला फारच उपयोगी पडण्यासारखा आहेत. अशा सिध्दीचा कुठेच सामाजिक उपयोग होत नसेल तर त्यांचे अस्तित्व गप्पाटकाच्या स्वरूपाचे आहे असे सम्भाव्यतेच्या तर्कशास्त्रानुसार ठरते. अमुक मनुष्य फार मोठा वक्ता आहे पण तो आजपर्यंत कधीच बोलला नाही व बोलणार नाही, अमुक स्त्री फार सुन्दर आहे पण ती नेहमी अदृश्य असते असे दावे माडण्यात आले तर ते खोटारडे आहेत असे अनुमान निघणार नाही काय ?

मागे पैलतीरमध्ये “जागृतीतील अनुभव ही मी सत्याची कसोटी मानतो” असा आपण आरोप केला होता. “विवेकवाद” या ग्रन्थातील “सत्याची कसोटी” हे प्रकरण न वाचल्याचे हे लक्षण आहे.

आपल्याला माझी भूमिका समजून द्यावयाची असेल तर “विवेकवाद” हा ग्रन्थ काळजीपूर्वक वाचून समजून घेतला पाहिजे. त्याची दुसरी आवृत्ती नुकतीच प्रकाशित झाली आहे तीत बटरीड रसेलशी माझी झालेली चर्चा व रामकृष्णपरमहंसांना होत असलेल्या तथाकथित साक्षात्काराचे मानसशास्त्रीय विवेचन आहे. ते समजून घेणे अत्यंत आवश्यक आहे. ‘रामकृष्ण परमहंस’ वरील “आमच्या श्रद्धा तुम्ही दुखविल्या” म्हणून केवळ त्रास करायचा असेल तर हा विषय समजू शकणार नाही, तेव्हा आपण ही आवृत्ती विकत घेऊन वाचावी अशी माझी नम्र विनंती आहे, फुकट मिळालेले पुस्तक कोणी वाचीत नाही असा अनुभव आहे. किंमत ३२५/- आहे माझ्याकडून मागविल्यास टपालखर्च सोडून २००/- ला देता येईल.

हि विनंती वाचल्यावर आपण पेचावर तोड समजून आपले पुस्तक विकत घ्यायला मला सांगाल. पण आपल्या पुस्तकात नसलेल्या कोणत्याही विधानाचा मी आपल्यावर आरोप केलेला नाही. माझी आपल्या पत्रांना दिलेली उत्तरे केवळ आपल्या पत्रावर आधारित असतात. आपल्या पुस्तकावर नव्हे.<sup>(५)</sup> तेव्हा हा प्रश्न केवळ जशास तसे उत्तर देण्याच्या प्रवृत्तीचा द्योतक होईल. “विवेकवाद” या पुस्तकात ज्या मुद्द्यांना उत्तर आहे. तेच मुद्दे मोठे जाडे म्हणून आपण वापरीत असता, त्यामुळे “विवेकवाद” हे पुस्तक वाचल्याशिवाय आपल्याशी माझी चर्चा सार्थ होणार नाही.<sup>(६)</sup>

मागे “पैलतीर” च्या दिवाळी अंकात आपण आधुनिक भौतिकीने आध्यात्म सिध्द होते असा दावा मांडला होता.<sup>(७)</sup> आपला लेख नागपुर विद्यापीठाचे भौतिकीचे प्रमुख व पॅरिसवरून डी.एस.सी घेतलेले डॉ. माण्डे व बंगलोरच्या रामन संस्थेतील भौतिकीचे प्राध्यापक डॉ. हातवळणे यांना दाखविला. दोघानीही या लेखकाला भौतिकीचे काही कळत नाही असे मत दिले. आपले प्रतिपादन कोणत्या भौतिकज्ञाला मान्य आहे त्याचे नाव व पत्ता मला कळविल्यास मी त्याच्याशी उपर्युक्त तज्ज्ञांच्या मदतीने पत्रव्यवहार करू इच्छितो.

॥ ॐ ॥

भोज (बेळगाव) कर्नाटक

दि. १/३/२००२

श्री. नी. र. वऱ्हाडपाण्डे यासी,

स. न. वि. वि.

आपले दि. २/३/२००२ चे पत्र ७/३/२००२ रोजी मिळाले.

प्रतिपक्षाला जेव्हा मुद्देसूद उत्तर देता येत नाही तेव्हा 'तुला काही कळत नाही' असे म्हणून कोणालाही आपली सुटका करून घेता येते.<sup>(१)</sup> यापूर्वी आपण असे केले होते. (पाहा पैलतीर, १९९६) आता पुन्हा तेच केले आहे. हे करण्यासाठी फार शब्द वापरावे लागत नाहीत. त्यामुळे आले पत्र छोटे झाले आहे. पण त्याला उत्तरे देण्यासाठी पुरावे घाबे लागतात. त्यामुळे पत्र मोठे होते. पण त्याला नाइलाज आहे. आपण हे पत्र पूर्ण वाचावे अशी आपल्याला विनंती करतो, अशी विनंती करणे विचित्र दिसते खरे. पण त्याचा शेवटी खुलासा होईल.

“आपले प्रतिपादन कोणत्या भौतिकज्ञाला मान्य आहे” असे आपण मला विचारता हा 'Putting the cart before the horse' प्रकार आहे. कारण ज्याला आपण 'विवेकवाद' म्हणता त्या आपल्या बुद्धिवादाविषयीचे माझे सर्व प्रतिपादन संपूर्ण भौतिकशास्त्रावर आधारले असून त्याविषयीचे माझे कोणतेही प्रतिपादन एखाद्या भौतशास्त्रज्ञाच्या अवतरणाशिवाय (अनुमोदनाशिवाय) मी केलेले नाही. आपल्या 'विवेकवाद' ग्रंथातील आपले प्रतिपादन कोणकोणत्या व किती भौतशास्त्रज्ञांची अवतरणे देऊन (त्यांच्या अनुमोदनाने) आपण केले आहे, हे सांगू शकाल काय ?

तेच तेच म्हणजे पुनःपुन्हा मांडल्याने ते सत्य ठरत नाही. आपल्याला मात्र तसे वाटते. अन्यथा मी खोडून काढलेली आपली विधाने आपण पुनः पुन्हा केली नसती. उदाहरणे देतो. आपण आपल्या पत्रात पुढील विधान केले आहे ;

“मागे 'पैलतीर' मध्ये 'जागृतीतील अनुभव ही मी सत्याची कसोटी मानतो' असा आपण आरोप केला होता. 'विवेकवाद' या ग्रंथातील 'सत्याची कसोटी' हे प्रकरण न वाचल्याचे हे लक्षण आहे.” (हा माझ्यावरील आरोप आपण दुसऱ्यांदा करीत आहात.)

यातील जागृतीतील अनुभवासंबंधीचे आपले म्हणजे आपल्या अवतरणासह देऊन माझ्या 'विवेकवाद' आणि 'गूढानुभूतिवाद' या 'पैलतीर' १९९५ च्या अंकांतील लेखात मी खोडून काढले आहे (विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथाचे १० वे प्रकरण) असे असताना मी आपल्यावर तो आरोप केला असे आपण पुन्हा आपल्या पत्रात कसे म्हणता ? आपल्या ग्रंथातील आपलीच विधाने आपण विसरता काय ? उदाहरणार्थ आपल्या 'विवेकवाद' ग्रंथातील पहिल्याच प्रकरणात पृ. ६ वर आपण पुढील विधान केले आहे : “तुम्हाला गूढानुभूतीत

‘काल मिथ्या आहे’ असा प्रत्यय येत असेल पण जागृतीत काल सत्य आहे असा प्रत्यय सर्वांना येतो.” (पृ.६) (ठळक शब्द माझे) ‘आपण सर्वांना जो जागृतीत अनुभव येतो, तोच सत्य’ मानता ही गोष्ट आपल्या या विधानावरून स्पष्ट होते. यावरून आपली सत्याची कसोटी जागृतीतील अनुभव हीच आहे, हे स्पष्ट होत नाही काय ? मी हा आपल्यावर आरोप केला आहे असे आपण म्हणत असाल तर आपलीच विधाने आपण खोडून काढता असे मला म्हणावे लागेल.

आता ‘सत्याची कसोटी’ हे प्रकरण मी न वाचल्याचे हे लक्षण आहे असे आपण कसे म्हणता हे सागावे. याचा ‘सत्याची कसोटी’ या प्रकरणाशी काय संबंध ? काही संबंध आहे असे समजले तरी (व समजूनच) मी ‘पैलतीर’ १९९६ च्या माझ्या (आपल्याला प्रत्युत्तर देणाऱ्या) लेखात पृ. १७३ वर म्हटले आहे की, “वस्तुतः त्यांच्या [वन्हाडपांड्याच्या] ग्रंथातील या [सत्याची कसोटी] प्रकरणावर मी यापूर्वीच - पैलतीर १९९१ च्या दिवाळी अंकात - स्वतंत्रपणे टीका केली आहे. (वस्तुतः ‘विवेकवादी’ सत्याची कसोटी चुकीची असल्याचे प्रथम सिध्द केल्याखेरीज ‘विवेकवाद’ च्या गूढानुभूतिविषयक दृष्टिकोनावर कोणीही टीका करणार नाही.” (पृ. १७३) (माझा हा ‘सत्याची बुद्धिवादी कसोटी’ लेख माझ्या विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथात ९ वे प्रकरण म्हणून समाविष्ट केला आहे.) पुढे (‘पैलतीर’ मधील) त्याच लेखात पृ. १८६ वर मी पुढील विधाने केली आहेत; “‘सत्याची कसोटी’ व ‘गूढवादाचा गौप्यस्फोट’ या त्यांच्या [वन्हाडपांड्याच्या] ‘विवेकवाद’ ग्रंथातील प्रकरणात भौतिक सत्य हेच काय ते एकमेव सत्य होय, हे चार्वाकीय तत्त्वज्ञान त्यांनी प्रतिपादिले आहे ते कसे अशास्त्रीय तर आहेच, पण तर्कविरुद्ध आहे, हे मी माझ्या ‘सत्याची बुद्धिवादी कसोटी’ या पैलतीर १९९१ च्या दिवाळी अंकातील लेखात साधार दाखवून दिले आहे.” (पैलतीर, १९९६, पृ. १८६ विज्ञान आणि बुद्धिवाद पृ. २६७) आपण या विधानाकडेही डोळेझाक केली असल्याचे वरील आपल्या पत्रातील (‘सत्याची कसोटी’ हे प्रकरण मी वाचले नसल्याचे) विधान सिध्द करते. आपण आपला ‘विवेकवाद’ किती आधळेपणाने स्वीकारला आहे, याचा हा आपणच नव्याने उपलब्ध करून दिलेला पुरावा आहे. पुनःपुन्हा तीच (खोटी) विधाने करून आपण अशारीतीने पुराव्यानिशी हे सिध्द करीत आहात की आपण आपला आंधळा ‘विवेकवाद’ अज्ञानाने स्वीकारलेला नसून (म्हणजे तो acquired नसून) तो आपला उपजत (congenital) गुणधर्म आहे. (ज्ञानेश्वरांच्या भाषेत आपण ‘विवेकवाद’ बाबत ‘जात्यंध’ आहात.) (कारण बुद्धिवादरूपी आंधळेपणा अज्ञानाने स्वीकारला असेल (निर्माण झाला असेल) तर तो पुराव्यांच्या आधारे नाहीसा करता येतो. आपला बुद्धिवादी आंधळेपणा पुराव्यांनी नाहीसा होत नाही, हे आपणच नव्याने त्याविषयी पुरावे उपलब्ध करून देऊन सिध्द करीत आहात.)

अणिमा/गरिमादि सिध्दींच्या संदर्भात आपण दिलेली ‘मोठ्या वक्त्या’ ची व ‘सुंदर स्त्री’ ची उपमा गैरलागू नव्हे, खोटी आहे. कारण न बोलणारा ‘वक्ता’च असू शकत नाही मग तो ‘मोठा वक्ता’ कसा असू शकेल ? ‘अदृश्य स्त्री’च असू शकत नाही. मग ती ‘सुंदर स्त्री’ कशी असू शकेल ? ESP किंवा अणिमा/गरिमा या सिध्दी अस्तित्वातच नाहीत, (म्हणजे

आपल्या उपमेतील स्त्रीचे 'अदृश्य'त्व खरे आहे,) हे आपल्याला प्रथम शास्त्रीय निकषावर सिध्द करावे लागेल. हे सिध्द करणे अशक्य आहे. कारण याच्याविरुद्धच - म्हणजे या सिध्दी खऱ्या असल्याबद्दलच शास्त्रीय पुरावे उपलब्ध आहेत. (ESP च्या शास्त्रीय पुराव्यासाठी विज्ञान आणि बुद्धिवाद हा ग्रंथ पाहावा. अणिमा/गरिमादिविषयीचे आधुनिक काळातील पुरावे माझ्या विज्ञान आणि चमत्कार या ग्रंथात दिले आहेत. "अणिमा/महिमादि सिध्दी समाजाला फारच उपयोगी पडण्यासारख्या आहेत. अशा सिध्दींचा कुठेच उपयोग होत नसेल तर त्यांचे अस्तित्व गप्पाष्टकाच्या स्वरूपाचे आहे." असे आपल्या पत्रात पुन्हा विधान करून सत्याचा निकष आपण व्यावहारिक उपयोग हाच मानता हे आपणच पुन्हा सिध्द करीत आहात ज्या गोष्टीचा सामाजिक/व्यावहारिक उपयोग होत नाही, ती 'खोटी' असे म्हणून आपण सत्याची कसोटी 'व्यावहारिक उपयोग' हीच आहे असे मानता, हे अशारीतीने आपल्या विधानाने आपणच सिध्द करीत असताना तो आरोप मी आपल्यावर करतो असे आपण कसे म्हणता हे सांगाल काय ? Telepathy, Clairvoyance, Precognition, PK या सिध्दी प्रयोगशाळेत शास्त्रीय निकषाखाली सिध्द झालेल्या नाहीत, असे आपण म्हणू शकता काय ? म्हणू शकत नसाल तर, या सिध्दींचा प्रत्यक्षात समाजाला काही उपयोग नाही, तरीही त्या "समाजाला फारच उपयोगी पडण्यासारख्या आहेत" हे आपण नाकारू शकता काय ? म्हणजेच समाजाला 'उपयोगी पडणाऱ्या' पण प्रत्यक्षात ज्यांचा उपयोग होत नाही, अशा सिध्दींचे अस्तित्व आपण शास्त्रीय निकषांचे उल्लंघन न करता नाकारू शकता काय ?

[मसलेचौधरी, ता. मोहोळ, जि. सोलापूर, येथील अनुराधाबाई देशमुख या स्त्रीची रिक्त हातातून भस्म, गुलाल, रुद्राक्ष इ. वस्तू काढण्याची सिध्दी संप्रयोग व शास्त्रीय निकषाखाली प्रस्तुत लेखकाने अनेकदा सिध्द केली आहे. त्या प्रकाराची चित्रफितही (व्हीडीयो फिल्म) त्याने घेतली आहे. महाराष्ट्र अंधश्रद्धानिर्मूलन समितीला तिच्याच (समितीच्याच) अटीखाली त्या सिध्दीची परीक्षा देण्याचीही तयारी त्या स्त्रीने आपल्या स्वाक्षरीने लेखी दर्शवली आहे - नव्हे आपली परीक्षा घ्यावी अशी लेखी खास दूताकरवी, व त्याला प्रतिसाद न मिळाल्याने रजिस्टर्ड ए.डी.पत्राने विनंती केली आहे. पण आपले ५ लाख रुपये जातील व अब्रू ही जाईल या भीतीने समितीने आजपर्यंत ती परीक्षा घेतलेली नाही व रणांगणातून पळ काढला आहे. याचा साद्यंत वृत्तांत सर्व तपशीलासह व पुराव्यानिशी मी माझ्या विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन\* या पुस्तकात दिला आहे. रिक्त हातातून कोणतीही वस्तू काढण्याची सिध्दी 'समाजाला फारच उपयोगी पडण्यासारखी' असताना ती स्त्री (किंवा तशीच सिध्दी प्राप्त झालेले पुढपतींचे सत्यसाईबाबा) तिचा समाजासाठी (समाजाच्या भौतिक सुखासाठी) उपयोग करीत नाहीत. म्हणून ती आपण खोटी म्हणणार काय ?]

बरील सर्व उदाहरणावरून (ज्यापैकी काही 'गमभन' ला पाठविलेल्या पत्रात मी दिली आहेत.) दोन गोष्टी सिध्द होतात : एक, आपला बुद्धिवाद 'जात्यंध' आहे; कारण त्याला पुरावे दिसत नाहीत. (पुरावे देऊनही काही उपयोग होत नाही.) आणि दोन, पुरावे देऊनही ते

\* विज्ञान, बुद्धिवाद आणि चमत्कार या बृहत् ग्रंथाचा ३ रत भाग

दिसत नसल्यामुळे आपण दुसऱ्यावर खोटे आरोप करता आणि तेही वरचेवर करता.

आपले 'विवेकवाद' हे पुस्तक (जे माझ्या सग्रही आहे) न वाचताच मी आपल्यावर टीका केली असा मागे माझ्यावर आरोप केला होता. तो मी पुराव्यानिशी खोडून काढला आहे. (पाहा, पैलतीर १९९५, पृ. १७३) आता आपण "रामकृष्णावरील 'आमच्या श्रद्धा दुखावल्या' म्हणून त्रागा" केल्याचा माझ्यावर नवा आरोप केला आहे. पण आपण याविषयी कसलाही पुरावा दिलेला नसल्यामुळे हे आपल्याच त्राग्याचे प्रतिपक्षात आपल्याला दिसणारे प्रतिबिंब आहे, असे मी समजतो वास्तविक "मिरगी झालेली व्यक्ती 'मी ईश्वर आहे' असे (रामकृष्णांप्रमाणे) म्हटल्याचे एक तरी उदाहरण वन्हाडपांडे देऊ शकतील काय?" असा आपल्याला मी फक्त प्रश्न विचारला आहे. तसेच गूढानुभूती हे मिरगीचे लक्षण असल्याबद्दलचे वैद्यकशास्त्रीय पुरावे द्यावेत अशी मी आपल्याकडे मागणी केली आहे. शास्त्रीय पुरावे विचारणे म्हणजे श्रद्धा 'दुखावल्या जाणे' असा (पुरावे न देता) जो निष्कर्ष काढतो त्याला विवेकवाद म्हणायचे झाल्यास 'विवेकवाद' ही सुध्दा "काही व्यक्तींची भावनात्मक गरज" असते, हे (अध्यात्माला उद्देशून) आपण केलेले विधान आपल्यालाच लागू होते. कारण "अध्यात्मावरील विश्वास पुराव्यावर आधारलेला नसतो, म्हणून त्याला श्रद्धा म्हणतात" असे म्हणून आपण ज्या पुराव्याविषयी इतकी आस्था दाखवली आहे, ते पुरावे न देताच आपण हा आरोप माझ्यावर केला असल्यामुळे आपली 'विवेकवादा'वरील 'श्रद्धा दुखावल्या' मुळेच तो केला आहे असा निष्कर्ष का काढू नये? श्रद्धा ही 'काही व्यक्तींची भावनात्मक गरज असते' असे आपण म्हणता. आपला 'विवेकवाद' आपल्या भावनात्मक गरजेवर अवलंबून नाही हे आपण शास्त्रीय निकषावर सिध्द केले आहे काय? असेल तर ते आपण दाखवून द्यावे. [आपल्या 'विवेकवाद' या ग्रंथातील 'विवेकवाद व भावना' या प्रकरणात 'विवेकवाद' भावनात्मक गरजेवर अवलंबून नाही, हे दाखवून देण्याचा आपण प्रयत्नसुध्दा केलेला नाही. का? कारण उघड आहे. हे दाखवून देताच येत नाही. म्हणून आईन्स्टाइनसारखा बुद्धिनिष्ठ आणि विज्ञाननिष्ठ शास्त्रज्ञसुध्दा म्हणतो की "This emotional conviction of the presence of the superior reasoning power, which is revealed in the incomprehensible universe, forms my idea of God." (बुद्धीला) न समजणाऱ्या या विश्वाच्या रुपाने प्रकट झालेली जी सर्वश्रेष्ठ विचारशक्ती, जिला आईन्स्टाइन God म्हणून संबोधतो, तिच्या अस्तित्वाची 'खात्री' (conviction) जिथे 'भावनात्मक' (emotional) आहे, असे आईन्स्टाइन म्हणतो, तेथे विश्वातील इतर (गौण) गोष्टीच्या खात्रीविषयी - त्यातील गौण सत्याविषयी - काय बोलावे? त्या बुद्धीला कशा समजतील? कारण सर्व विश्वच बुद्ध्यतीत गोष्टींनी व्यापले आहे. म्हणून मॅक्स प्लँक हा कौंटम सिध्दांताचा जनक म्हणतो. "We are always brought face to face with the irrational. Else we could not have faith. And if we did not have faith. .. we should have no science" विज्ञान हेसुध्दा शेवटी श्रध्देवरच का आधारले आहे हे प्लँक येथे सांगत आहे. विज्ञानाचा कार्यकारणभाव हा पायाच मुळी तर्कबाह्य आहे. म्हणून रसेल ह्यूमची साक्ष काढून विज्ञानाला 'अंधश्रध्द' म्हणण्याच्या थराला जातो. याची चर्चा मी माझ्या विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथात केलेली असल्यामुळे येथे अधिक



लिहीत नाही ]

आपण आपले पुस्तक मी विकत घ्यावे म्हणून आपण मला मूळ किमतीत १२५ रु. ची सूट देण्याची तयारी दर्शवली आहे. मी पुस्तकांचे मूल्य पैशात कधीच मोजत नसतो हे आपल्याला नम्रपणे सांगू इच्छितो. (या गोष्टीची साक्ष माझा लाखो रुपयांच्या किमतीचा पुस्तकसंग्रह देऊ शकतो.) पैशाविषयीच्या या माझ्या दृष्टिकोनामुळे आपण देऊ केलेल्या सवलतीचे महत्त्व माझ्या दृष्टीने शून्य आहे. आपण मला आपले पुस्तक विकत घ्यायला सांगताना 'पेचावर तोड' म्हणून मीही माझे पुस्तक आपल्याला विकत घ्यायला सांगेन, या भीतीने आपण एक तथ्यहीन युक्तिवाद करून अगोदरच ही गोष्ट धुडकावून लावली आहे. म्हणजे आपण माझे कोणतेही पुस्तक विकत घेणार नाही व वाचणार नाही, हे आपण अगोदरच स्पष्ट केले आहे. त्यामुळे मला प्रश्न पडला आहे की, प्रतिपक्षाची पुस्तके आपण विकत घ्यायची नाहीत व वाचायची नाहीत, प्रतिपक्षाने मात्र आपली पुस्तके विकत घ्यावीत व वाचावीत असा आग्रह धरायचा; हे कसल्या मनोवृत्तीचे द्योतक समजावे ? हे हुकूमशाही मनोवृत्तीचे लक्षण समजावे की प्रतिपक्षाने सादर केलेले आपल्या विरुद्धचे पुरावे पाहण्याचेच नाकारण्याच्या 'जात्यंध बुद्धिवादा'चे लक्षण समजावे ? निदान, हे माझे पत्र तरी आपण पूर्ण वाचले असेल असे मी समजतो.

आपला

अद्वयानंद गळतगे

टीप : डॉ. मांडे व डॉ. हातवळणे यांनी मला भौतिकीचे काही कळत नाही, असे कोणत्या पुराव्याच्या आधारे म्हटले आहे हे कळवावे किंवा त्याचे पूर्ण पत्ते द्यावेत

नी. र. वन्हाडपाण्डे, ३८ हिन्दुस्तान कॉलनी, अमरावती रोड, नागपूर ४४००१०

श्री. अद्वयानंद गळतगे यास

दि. २२-२-२००३

स.न.वि.वि.

आपले दि. २-३ चे पत्र मिळाले. \* त्यातील माझ्या विवेकवादाशी संबंध असलेली आपली विधाने व त्यावरील माझी उत्तरे अशी :-

१) "आपल्या विवेकवाद ग्रंथातील आपले प्रतिपादन कोणकोणत्या व किती, भौतिकशास्त्रज्ञांची अवतरणे देऊन केले आहे ?"

उत्तर स्पष्ट आहे. "विवेकवाद" हा भौतिकशास्त्रावरील ग्रंथ नाही. तो प्रमाण मीमांसेवरील ग्रंथ आहे. त्यातील एखादे भौतिकशास्त्राविषयीचे विधान भौतिकशास्त्राला धरून आहे की नाही याची खबरदारी घेणे एवढीच माझी जबाबदारी आहे. (४) माझे विवेकवादावरील मूळ लिखाण इंग्रजीत होते. ते बर्टरँड रसेलने वाचले होते व "त्यातील अमुक विधान भौतिकशास्त्राचे अज्ञान दाखविते" असे त्याने म्हटले नाही. (५) बर्टरँड रसेलच्या पत्राचे भाचित्र

\* माझे पत्र १०-३ चे आहे. २-३ चे नाही. (नंतर जोडलेली तळटीप)

“विवेकवादा”च्या दुसऱ्या आवृत्तीत छापले आहे. डॉ. माण्डे यांनी देखील विवेकवाद - निदान त्यातील काही प्रकरणे - वाचली आहेत. मी आपल्या अधिकाराच्या बाहेर जाऊन काही अज्ञानग्रस्त विधाने केली आहेत असे त्यांनी म्हटले नाही.<sup>(१०)</sup> ऑक्सफर्ड मध्ये माझा विषय भौतिकी नसला तरी भौतिकी कोळून प्यालेल्या अनेक तर्कशास्त्रज्ञांशी माझ्या प्रदीर्घ चर्चा झालेल्या आहेत.

जेम्स जीन्स, एडिंग्टन वगैरेंनी भौतिकीवर लिहिलेल्या तत्त्वज्ञानात्मक पुस्तकाचे काटे कोर विश्लेषण रसेल, स्ट्रॉमिंग,<sup>(११)</sup> ब्रॉड,<sup>(१२)</sup> जोड<sup>(१३)</sup> वगैरे डझनावारी विद्वानांनी केले आहे. त्याचा निष्कर्ष असा की तत्त्वज्ञानाचा अभ्यास न केल्यामुळे या पुस्तकात तत्त्वज्ञानी गेल्या तीन हजार वर्षांत केलेल्या चुकांची पुनरावृत्ति झालेली आहे.<sup>(१४)</sup>

भौतिकज्ञ जेव्हा तत्त्वज्ञानावर लिखाण करतो तेव्हा त्याने मांडलेली मते ही भौतिकीची मते नसतात. भौतिकीतून अमुक एक तत्त्वज्ञान प्रतीत होते असे म्हणजे म्हणजे भौतिकीचा सिध्दांत माडणे नव्हे. अलेक्सिस कॅरल नावाचा नोबेल प्राइझ विजेता वैज्ञानिक म्हणतो की आधुनिक विज्ञानाने ख्रिस्ती धर्माची सत्यता व हिंदूधर्मासारख्या ख्रिस्तेतर धर्मांची असत्यता शाबित केली आहे. भौतिकज्ञानी भौतिकीबाहेरच्या क्षेत्रात प्रतिपादलेले मत हे आपण भौतिकीचे मत समजता. त्यामुळे कॅरलचे वरील मतही आपल्याला आधुनिक विज्ञानाचे मत मानावे लागेल.

२) ‘विवेकवाद’ ग्रंथात पृष्ठ ६ वर खालील विधान केले आहे.

“तुम्हाला गूढानुभूतीत काल मिथ्या आहे असा अनुभव येत असेल पण जागृतीत काल सत्य आहे असा प्रत्यय सर्वांना येतो”

“आपण सर्वांना जागृतीत जो अनुभव येतो तोच सत्य मानता असे आपल्या या विधानावरून स्पष्ट होते.”

कसे काय स्पष्ट होते ? याच वाक्याच्या पुढे पुढील वाक्य आहे “गूढानुभव इतर सर्व अनुभवांशी विसंगत आहे व म्हणून तो स्वप्नतुल्य व भ्रामक आहे.”

म्हणजे जागृतीत होणारे अनुभव देखील इतर सर्व अनुभवांशी सुसंगत असतील तरच सत्य ठरतात. केवळ जागृतीतले म्हणून नाही.<sup>(१५)</sup> रज्जूसर्प, शुक्तिरजत वगैरे अनुभव जागृतीतले असून देखील ते सत्य नाहीत कारण त्यांची इतर सर्व अनुभवांशी संगति लागत नाही. सुसंगत असलेले सर्व अनुभव भास का होतो याचा देखील उलगडा करतात. विसंगत व एकाण्डे असलेले भास इतर अनुभवांचा उलगडा करीत नाहीत. सुसंगत अनुभव, स्वप्न पडले तसेच का पडले याचा देखील उलगडा करू शकतात. पण कितीही स्वप्ने एकत्र केली तरी इतर अनुभव आले तसेच का येतात याचा उलगडा करू शकत नाहीत. एवढेच नव्हे तर ही सारी स्वप्ने परस्परांशी देखील विसंगत असतात.<sup>(१६)</sup> गूढानुभूति स्वप्नाप्रमाणेच परस्परांशी देखील सुसंगत नसतात. याबद्दल “गूढवादाचा गौप्यस्फोट” या प्रकरणात चर्चा आहे.

पाण्यात बुडालेली काठी वस्तुतः वाकडी नसताना वाकडी दिसते हा एक जागृतीतील भास आहे. पाण्याबाहेरची काठी सरळ दिसणे हा जागृतीतील अनुभव खरा व पाण्यातील काठी

वाकडी दिसते असा जागृतीतीलच अनुभव खोटा असे आपण म्हणतो कारण पाण्यातील काठी डोळ्यांना वाकडी दिसली तरी इतर इंद्रियांना ती सरळच वाटते. इतर अनुभवावरून किरणांच्या वक्रीभवनाचे ज्ञान होते व पाण्यातील काठी वाकडी दिसण्याचीही उपपत्ति लागते, सर्व अनुभवात सुसंगति व उपपन्नता निर्माण करणारा अनुभव खरा व एकाण्डा असंगत अनुभव खोटा ही अनुभवाच्या सत्यतेची कसोटी आहे.

अनुभवाच्या सत्यतेचे लक्षण अनुभवाचा विषय सत्य असणे हे आहे. हे सत्यत्व पडताळून कसे पहावे याची सुसंगति ही कसोटी सांगितली आहे.

अनुभवाच्या बाबतीत सत्यतेची कसोटी व सत्यतेचे लक्षण यात याप्रमाणे फरक असला तरी वस्तूच्या सत्यतेचे लक्षण व ती पडताळून, पाहण्याची कसोटी ही एकच आहेत.

स्वप्न, रज्जुसर्प व पाण्यात बुडालेली काठी वाकडी दिसणे हे अनुभव ज्या कसोट्यांनी खोटे ठरतात त्याच कसोट्यांनी गूढानुभूतिदेखील खोटी ठरते.

३) भौतिक सत्य हेच काय ते एकमेव सत्य होय हे त्यांनी - म्हणजे वन्हाडपाण्ड्यांनी - प्रतिपादले आहे.

असे वाक्य माझ्या लिखाणात कुठे आहे ? “वाणी आणि वाङ्मय” या ग्रंथात सौन्दर्याच्या सत्यतेचे विवेचन केले आहे. नीतिमूल्यांच्या सत्यतेचे ‘विवेकवादा’त विवेचन आहे. सौन्दर्य व नैतिक मूल्ये ही सत्ये भौतिक नाहीत. विवेकवादाला बुद्धिवाद म्हणणे व प्रत्यक्षवादाला भौतिकवाद म्हणणे हे विवेकवाद व प्रत्यक्षवाद मुळीच न समजल्याचे लक्षण आहे.

४) “अणिमा/गरिमादि सिध्दीच्या संदर्भात आपण दिलेली मोठ्या वक्त्याची व सुंदर स्त्रीची उपमा गैरलागू आहे. कारण न बोलणारा वक्ता व अदृश्य स्त्रीच असू शकत नाही.”

न बोलणारा वक्ता व अदृश्य सौन्दर्य याप्रमाणेच समाजाच्या कधीच उपयोगी न पडणाऱ्या समाजोपयोगी सिध्दि हा वदतोव्याघात आहे

५) “Clairvoyance Precognition, PK या या सिध्दि प्रयोगशाळेत शास्त्रीय निकषाखाली सिध्द झालेल्या नाहीत असे आपण म्हणू शकता काय ?”

याबाबत वेब्सटरच्या विश्वकोशातील खालील विधान पहावे

“Mainstream science is still sceptical about their (of Parapsychologists) methodology and conclusions ”

मी रक्षाविज्ञानखात्यात काम करीत असताना तेथील ग्रंथालयातील “In the Name of Science) या नावाचे एक पुस्तक वाचनात आले. त्यात अतीत मानसशास्त्रज्ञांच्या कामाला मिथ्या विज्ञान ठरविण्यात आले आहे. तेव्हा अतीत मानसशास्त्र विज्ञानसिध्द आहे हा आपला दावा वस्तुस्थितीस धरून नाही. मानसशास्त्राची ही शाखा अजून प्रयोगवस्थेतच आहे.

६) (रामकृष्णांची) “गूढानुभूति हे मिर्गीचे लक्षण असल्याबद्दल वैद्यकशास्त्रीय पुरावे द्यावेत.” “मिर्गी झालेली व्यक्ती” “मी ईश्वर आहे” असे (रामकृष्णांप्रमाणे) म्हणाल्याचे

एकतरी उदाहरण वऱ्हाडपाण्डे देऊ शकतील काय?"

रामकृष्णांची बाब ही मिरगीची बाब आहे असे त्याच्या डॉक्टरांचे व आईबापांचे देखील मत होते. त्यांच्यावर उपचार होऊ न देता लोकांनी त्यांना साक्षात्कारी ठरविले व ललित कलात प्रतिभा असलेला एक कलावंत मारुन अंधश्रद्धा जोपासणारा एक कायमचा व्याधित बनविले. याबद्दल सविस्तर विवेचन विवेकवादाच्या दुसऱ्या आवृत्तीत आहे

मिरगी झाल्याने भास होतात ते अमुक एकाच प्रकारचे असतील असा नियम सांगता येत नाही. 'अहं ब्रह्मास्मि' वगैरे संस्कार मनावर झालेल्या व्यक्तीला मिरगीचा झटका आला तर 'मी ईश्वर आहे' असाही भास होऊ शकेल.

साधारणपणे स्वतःला दुसराच कोणी समजणे हे छिन्नव्यक्तित्व म्हणजे schizophrenia चे लक्षण समजतात. रामकृष्ण मिरगीचे झटके आले असतानाच केवळ नव्हे तर इतर वेळेलाही सातत्याने 'मी ईश्वर आहे' असे म्हणाले असतील तर ही बाब छिन्नव्यक्तित्वाची देखील होती असे म्हणता येईल.

रामकृष्ण केवळ मिरगीच्या झटक्यातच भासाच्या अधीन होत नव्हते तर इतरही वेळी हुकुमीपणे या भासांचा अनुभव घेऊ शकत होते, एवढेच नव्हे तर आपल्या भक्तांनाही तोच भास करविण्याचे त्यांच्यात सामर्थ्य होते. याचा अर्थ असा की त्यांना मोहिनीविद्या अवगत होती.

७) "आपला विवेकवाद भावनात्मक गरजावर अवलंबून नाही हे आपण सिध्द केले आहे काय?"

माझा विवेकवाद माझ्या भावनात्मक गरजावरच अवलंबून आहे मग तो तसा नाही हे कशाला सिध्द करील बसू? सत्यनिष्ठा ही माझी भावनात्मक गरज आहे, सारे मोह दूर सारुन सत्याचा शोध घ्यायचा हे माझे जीवनमूल्य आहे. मूल्ये भावनावर अवलंबून असतात, बुद्धीवर नव्हे. हे मी विवेकवादात स्पष्ट केले आहे असे मला वाट होते पण आपण जे प्रश्न विचारता त्यावरून मी या कामात सफल झालो नाही असे दिसते.

८) आइन्स्टाइन म्हणतो, "This emotional conviction of the presence of a superior reasoning power which is revealed in the incomprehensible universe forms my idea of God."

वरील अवतरणावरून निरीश्वरवादच सिध्द होत नाही काय? विश्वाचे तर्कशास्त्रमय स्वरूप म्हणजे ईश्वर असे म्हणणे म्हणजे जग निर्माण करणारा, प्रार्थनेला पावणारा व नीतिमूल्ये जोपासणारा ईश्वर नाकारणेच होय. आइन्स्टाइनची Superior reasoning power ही ईश्वराप्रमाणे नैतिक शक्ति नाही. मूल्याचे सत्यत्व मानवाधिष्ठित आहे. त्यांचा शोध भौतिक विश्वात घेता येणार नाही.

आइन्स्टाइनची ही खात्री भावनात्मक आहे यावरून काय सिध्द होते? सारे विश्व तर्कशास्त्रात बसू शकते हे सिध्द होऊ शकत नाही कारण जोडलल्या सिध्दांताप्रमाणे कोणतीही तर्कव्यवस्था त्या व्यवस्थेच्या बाहेर असलेल्या काही तत्त्वावर अवलंबून असते, म्हणून आइन्स्टाइन आपल्या विश्वासाला भावनात्मक म्हणतो. पण अंधश्रद्धांच्या मुळाशी असलेल्या

भावना व तर्कशास्त्राने पुनीत केलेल्या भावना यात फरक आहे, हा फरक मी विवेकवाद व भावना या प्रकरणात स्पष्ट केला आहे.

आइन्स्टाइनच्या अवतरणाप्रमाणेच If we did not have faith we should have no science हे प्लँकचे अवतरण आपल्याला ईश्वर, अध्यात्म वगैरेना पोषक वाटते. प्लँकने आपल्याला पदोपदी irrational चा सामना करावा लागतो असे म्हटले आहे. हे विधान अध्यात्माला पोषक आहे असे समजून आपले अध्यात्म हे irrational आहे, अशी आपणच कबुली देत आहात. प्लँकचा विश्वास आपण irrational वर मात करू शकतो हा आहे, आपण irrational ला शरण गेले पाहिजे असा नाही.

“आइन्स्टाइन व प्लँक यांच्या विश्वासाला श्रद्धा म्हणायचे काय ?” असा प्रश्न आपण स्वतःला विचारला नाही. श्रद्धा ही ज्ञानाची दारे बंद करणारी असते. आइन्स्टाइन व प्लँक यांचा विश्वास ज्ञानपिपासेचे संवर्धन करणारा आहे.

१) “रसेल, ह्यूमची साक्ष काढून विज्ञानाला अंधश्रद्धा म्हणण्याच्या धराला जातो ‘ कार्यकारण भाव हा केवळ एक अनुभव आहे, तो आज एक तर उद्या दुसरा असा देखील असू शकतो. पण असे मानले तर विस्तवावर ठेवलेले पाणी तापते व ते का याचा शोधच घेता येणार नाही. कारण विश्वात कार्यकारणभावाची नियमबद्धता आहे असे मानल्या शिवाय अशा नियमांचा शोधच घेता येणार नाही. पण आजपर्यंत असा शोध घेण्यात मानवाला यश आले आहे. म्हणून असा शोध यशस्वी होईल असा विश्वास बाळगणे आवश्यक आहे. पण या विश्वासाला श्रद्धा म्हणता येणार नाही. कारण तो पुराव्यावर आधारलेला आहे व या विश्वासाने ज्ञानाची प्रगती झाली आहे. ईश्वर, पुनर्जन्म वगैरेवरील विश्वासामुळे याप्रमाणे ज्ञानाची वा मूल्याची प्रगती झाली आहे असे म्हणता येईल काय ?

१) प्रोफेसर डॉ. चिंतामणी माण्डे, भरतनगर, नागपूर - १

२) Dr Yashodhan Hatvalane RRI Quarters 1" Main Vyalikaval Bangalore 56003

आपला,  
नी. र. वन्हाडपाण्डे

॥ ३५ ॥

श्री. नी. र. वन्हाडपाण्डे यांसी,

स. न. वि. वि.

आपले २२-३ चे पत्र ६-४ रोजी मिळाले. आपल्या पत्रातील मुद्यांना पुढीलप्रमाणे उत्तर देत आहे.

१) गळतग्यांच्या प्रश्न : “‘विवेकवाद’ ग्रंथातील आपले प्रतिपादन कोणकोणत्या व किती भौतशास्त्रज्ञांची अवतरणे देऊन (त्यांच्या अनुमोदनाने) आपण केले आहे ?”

वन्हाडपांड्यांचे उत्तर : “उत्तर स्पष्ट आहे. ‘विवेकवाद’ हा भौतिकशास्त्रावरील ग्रंथ नाही.

तो प्रमाणमीमांसेवरील ग्रंथ आहे.”

गळतगे : “गळतग्यांच्या प्रश्नाचे उत्तर स्पष्ट आहे. कोणत्याही भौतशास्त्रज्ञांची अवतरणे देऊन वन्हाडपांड्यांनी आपल्या ‘विवेकवाद’ चे प्रतिपादन केलेले नाही.”

“मग वन्हाडपांड्यांनी आपल्या २/३ च्या पत्रात गळतग्यांना ‘आपले प्रतिपादन कोणत्या भौतिकज्ञाला मान्य आहे?’ असा प्रश्न का विचारला? ‘विवेकवाद’त विज्ञानाला काहीच स्थान नसते तर हा प्रश्न त्यांनी विचारला नसता. यावरून हे स्पष्ट आहे की विज्ञानाचे प्रमाण हेच प्रमाणमीमांसेत सर्वात महत्त्वाचे प्रमाण आहे.”

आता गळतग्यांच्या प्रश्न : “विज्ञानाच्या प्रमाणावर वन्हाडपांड्यांचा ‘विवेकवाद’ आधारला आहे काय?” याचे उत्तर देण्यासाठीच गळतग्यांनी ‘विवेकवाद आणि गूढानुभूतिवाद’ हा लेख लिहिला. त्यात हायजेनबर्ग, आईन्स्टाइन इ. भौतशास्त्रज्ञांच्या आधारे स्थलकालाविषयी विज्ञान काय म्हणते हे स्पष्ट केले. म्हणजेच स्थलकालाविषयीची ‘विवेकवादी’ कल्पना वैज्ञानिक निकषावर कशी टिकू शकत नाही, हे दाखवून दिले. याला वन्हाडपांड्यांनी ‘प्राचार्य गळतगे यांचे बौद्धिक अपचन’ या हीन अभिरुचीच्या मथळ्याचा लेख लिहून उत्तर दिले. त्याला प्रत्युत्तर देण्यासाठी गळतग्यांनी पुन्हा ‘विवेकवाद आणि गूढानुभूतिवाद’ हा लेख लिहिला व त्यात विज्ञानातील मूलभूत क्वांटम व सापेक्षता सिध्दांताच्या जनक शास्त्रज्ञांची अवतरणे देऊन पूर्वीच्या लेखातील निष्कर्षांना सविस्तर बळकटी दिली. म्हणूनच “आपल्या ‘विवेकवाद’ चे प्रतिपादन कोणकोणत्या व किती भौतशास्त्रज्ञांची अवतरणे देऊन आपण केले आहे?” असा वन्हाडपांड्यांना गळतग्यांनी आपल्या १०-३ च्या पत्रात प्रश्न विचारला. त्याचे उत्तर वर वन्हाडपांड्यांनी जे दिले आहे, त्यावरून हे स्पष्ट आहे की कोणत्याही भौतशास्त्रज्ञांची अवतरणे देऊन त्यांनी आपले ‘विवेकवाद’ वरील प्रतिपादन केलेले नाही. म्हणजेच वन्हाडपांड्यांचा ‘विवेकवाद’ कोणत्याही वैज्ञानिक प्रमाणावर आधारलेला नाही. म्हणून ‘भौतिकी कोळून प्यालेल्या अनेक तर्कशास्त्रज्ञांशी माझ्या (ऑक्सफर्डमध्ये) प्रदीर्घ चर्चा झालेल्या आहेत’ हे व यासारखी इतर वन्हाडपांड्यांची वाक्ये म्हणजे माझ्या प्रश्नांना सरळ तोंड देता येत नसल्यामुळे वन्हाडपांड्यांनी योजिलेल्या बौद्धिक जादुगिरीच्या (फसवणुकीच्या) ‘ट्रिक्स’ (वाचकांचे लक्ष विचलित करणाऱ्या कल्पना) आहेत, असे म्हणावे लागते.”

“जादूगार आपली फसवणुक कळू नये म्हणून केवळ ‘ट्रिक्स’ च वापरत नाही, उघड उघड खोट्याचाही अवलंब करतो, वन्हाडपांड्यांनी खोट्याचा कसा अवलंब केला आहे, हे पाहा.”

वन्हाडपांडे - “अलेक्सिस कॅरेल नावाचा नोबेल प्राइझ विजेता म्हणतो की आधुनिक विज्ञानाने ख्रिस्ती धर्माची सत्यता व हिंदूधर्मासारख्या ख्रिस्तेतर धर्मांची असत्यता शाबित केली आहे. भौतिकज्ञांनी भौतिकीबाहेरच्या क्षेत्रात प्रतिपादिलेले मत हे आपण [गळतगे] भौतिकीचे मत समजता त्यामुळे कॅरेलचे वरील मतही आपल्याला आधुनिक विज्ञानाचे मानावे लागेल.”

गळतगे - “विज्ञानाचा स्थलकालाविषयीचा निष्कर्ष विज्ञानाबाहेरचा म्हणणाऱ्यांना विज्ञान कळलेले नाही, एवढेच आपण म्हणू शकतो.

आता गळतग्यांचा प्रश्न : अलेक्सिस कॅरेलने वरील मत कुठे प्रतिपादिले आहे ? वन्हाडपाड्याचा याला आधार काय ? आधार शून्य. वास्तविक वन्हाडपाडे म्हणतात याच्या उलट अलेक्सिस कॅरेलचे प्रतिपादन आहे. अलेक्सिस कॅरेलने हिंदूधर्माविरुद्ध तर लिहिले नाहीच, उलट हिंदूधर्म ज्या वेदांतावर आधारला आहे, त्या वेदांताच्या गूढानुभूतिवादाचे त्याने समर्थन केले आहे. याला आधार: पाहा, त्याचा ग्रंथ *Man the Unknown* प्रकरण IV”

२) वन्हाडपाडे : “गूढानुभव इतर सर्व अनुभवाशी विसंगत आहे व म्हणून तो स्वप्नतुल्य आहे.”

गळतगे : “येथे गूढानुभव इतर सर्व अनुभवाची वरच्या (सर्वोच्च) पातळीवरून संगति लावतो. त्याची स्वप्नाशी तुलना करणे हे स्वप्न आणि गूढानुभूति या दोन भिन्न पातळीवरील अनुभवाची गळत करणे आहे.”

वन्हाडपाडे : “विसंगत व एकाडे असलेले भास इतर अनुभवांचा उलगाडा करीत नाहीत.

गळतगे : “येथे गूढानुभूति हा ‘एकांडा भास’ आहे हे अगोदरच वन्हाडपाडे गृहीत धरतात. हे चुकीचे आहे. तो भास आहे की सत्याचा अनुभव आहे, हे वैज्ञानिक निकषावर ठरवायचे आहे. त्याविषयी वैज्ञानिकांनी प्रयोग केले असून त्याची माहिती गळतग्यांनी आपल्या ‘विवेकवाद आणि गूढानुभूतिवाद’ या लेखात दिली आहे. वन्हाडपाड्यांना तो प्रयोग दिसत नाही, हा गळतग्यांचा दोष नाही.”

वन्हाडपाडे : “याबद्दल ‘गूढवादाचा गौप्यस्फोट’ या प्रकरणात चर्चा आहे.”

गळतगे : “या ‘गौप्यस्फोट’च्या प्रकरणाचाच ‘गौप्यस्फोट’ गळतग्यांनी आपल्या विज्ञान आणि बुद्धीवाद या ग्रंथातील ‘सत्याची बुद्धिवादी कसोटी : एक वैज्ञानिक परीक्षण’ या प्रकरणात केला आहे.”

वन्हाडपाडे - “पाण्यातील काठी डोळ्यांना वाकडी दिसली तरी इतर इंद्रियांना ती सरळच वाटते. इतर अनुभवावरून किरणांच्या वक्रीभवनाचे ज्ञान होते व पाण्यातील काठी वाकडी दिसण्याची उपपत्ती लागते.”

गळतगे : “येथे वन्हाडपाडे ‘इतर अनुभवावरून किरणांच्या वक्रीभवनाचे ज्ञान होते’ असे म्हणतात आणि अनुभवाच्या वेगवेगळ्या पातळ्या असू शकतात - असदात - हे मान्य करतात. याचे कारण व्यावहारिक पातळीवरील अनुभवाची संगती त्याच पातळीवर लावता येत नसून ती वेगळ्या, म्हणजे ‘वैज्ञानिक’ पातळीवरून लावली पाहिजे हे आहे. आता वैज्ञानिक पातळीवरचा अनुभव हा ‘जागृती’तील अनुभवच असला तरी तो वेगळ्या - म्हणजे ‘सामान्य जागृती’हून वरच्या ‘जागृती’तील अनुभव आहे. म्हणजे ‘जागृती’च्याही वेगवेगळ्या पातळ्या असू शकतात हे मान्य करावे लागते. हे अधिक स्पष्ट करण्यासाठी अणुविज्ञानातील ‘क्वॉर्क’ व ‘ग्लुऑन’ यांचे उदाहरण घेऊ. कारण वर वन्हाडपाड्यांनी ‘पाण्यातील काठी डोळ्यांना वाकडी दिसली तरी इतर इंद्रियांना ती सरळच वाटते’ असे म्हटले आहे. पण ‘क्वॉर्क’ व ‘ग्लुऑन’ हे कोणत्याही इंद्रियांना न कळणारे ‘कण’ आहेत. मग ते ‘सत्य’ कशावरून ? तर त्यांचे वरच्या (गणितीय) पातळीवर वैज्ञानिकांना ‘अस्तित्व’ जाणवते म्हणून होय. म्हणजे येथे इंद्रियातीत

अशा जाणिवेची एक वैज्ञानिक पातळी असून ही सामान्य वैज्ञानिक 'जागृती' हून वरची आहे, हे मान्य करावे लागते. अशीच एक स्थलकालाविषयीचीही 'जागृती' ची वैज्ञानिक व गूढानुभूतीची पातळी आहे. ती आहे व ती इतर अनुभवांची संगति लावू शकते. हे कळण्यासाठी आपण 'गणितीय वैज्ञानिक' वा 'गूढानुभूतिवादी' च बनले पाहिजे असे मात्र नाही. (कारण ती 'जागृती' येण्यासाठी बरेच कष्ट घ्यावे लागतात.) त्यासाठी त्यांनी केलेले प्रयोग आपण बुद्धीने समजाऊन घेऊ शकतो. वन्हाडपांडे ते समजाऊन घेऊ शकत नाहीत, (मान्य करणे बाजूलाच) याचे कारण त्यांनी आपल्या बुद्धिला 'विवेकवाद' नावाची ढापणे (blinds) लावून घेतली आहेत, हेच आहे."

३) वन्हाडपांडे : " 'भौतिक सत्य हेच काय ते एकमेव सत्य होय हे त्यांनी म्हणजे वन्हाडपांड्यांनी - प्रतिपादिले आहे.' असे वाक्य माझ्या लिखाणात कुठे आहे ? "

गळतगे : " माझे उपर्युक्त 'सत्याची बुद्धिवादी कसोटी : एक वैज्ञानिक परीक्षण' हे प्रकरण वाचा म्हणजे ते वाक्य कुठे आहे, हे कळेल. "

वन्हाडपांडे : " विवेकवादाला बुद्धिवाद म्हणणे व प्रत्यक्षवादाला भौतिकवाद म्हणणे हे विवेकवाद व प्रत्यक्षवाद मुळीच न समजल्याचे लक्षण आहे. "

गळतगे : " जो 'वाद' स्वप्न व गूढानुभूति या दोन भिन्न पातळ्यांवरील अनुभवांची गळत करतो त्याला विवेकवाद म्हणणे हे 'विवेक' कशाला म्हणतात हे न कळल्याचे लक्षण आहे. त्याला 'बुद्धिवाद' मात्र अवश्य म्हणता येईल. कारण बुद्धी वेगवेगळ्या प्रकारची असू शकते व एखाद्याच्या बुद्धीला अनुभवाच्या भिन्न पातळ्या असू शकतात हे न कळणे शक्य आहे. जो भौतिकवादीही नाही व अध्यात्मवादीही नाही अशा तृतीयपंथी (हिजड्या) प्रत्यक्षवादाचा विचार येथे आपल्याला कर्तव्य नाही. " (१७)

४) आणिमा/गरिमा इ. सिध्दीच्या बाबतीत वन्हाडपांडे म्हणतात : " न बोलणारा वक्ता व अदृश्य सौंदर्य याप्रमाणेच समाजाच्या कधीच उपयोगी न पडणाऱ्या समाजोपयोगी सिध्दी हा वदतोव्याघात आहे. "

गळतगे : " हा वदतोव्याघात नाही. वन्हाडपांड्यांना वदतोव्याघात कशाला म्हणतात हे माहीत नाही. वदतोव्याघात म्हणजे आत्मविरोध. उदा. 'मला जीभ नाही' हा वदतोव्याघात आहे. कारण जिभेशिवाय असे कोणीही म्हणू शकत नाही. तसे सिध्दीचे नाही. 'समाजाला उपयोगी पडणारी पण तिचा उपयोग न केली जाणारी सिध्दी असते' या म्हणण्यात आत्मविरोध नाही कारण सिध्दीची सत्यता व तिचा समाजासाठी उपयोग या अगदी भिन्न गोष्टी आहेत. एक दुसऱ्यावर अवलंबून नाही-जसे जिभेवर बोलणे अवलंबून आहे. सिध्दीची सत्यता तिच्या सामाजिक उपयोगावर अवलंबून नाही, किंवा तिचा सामाजिक उपयोग न करण्यावरही अवलंबून नाही. म्हणजेच तिचा समाजासाठी उपयोग करणे अथवा न करणे हे ती सिध्दी खरी की खोटी हे ठरवू शकत नाही. अन्य गोष्ट ठरवू शकते. ते ती सिध्दी प्राप्त असणारे ठरवू शकतात आणि ते त्यांचे ठरविणे हे ती सिध्दी खरी की खोटी यवर अवलंबून नसून ते त्यांच्या आध्यात्मिक वा नैतिक स्वातंत्र्याच्या मूल्यावर अवलंबून आहे. अणुशक्तीची सत्यता जशी त्या शक्तीचा



समाजासाठी उपयोग होतो की नाही यावर अवलंबून नाही, तसेच हे आहे. अणुशक्ती समाजाच्या (भल्याबुऱ्या) उपयोगावर खरी की खोटी हे कोणी ठरवत नाही, अन्य कसोटीवर ते ठरवले जाते. सिध्दी ही अशीच एक शक्ती असून तिच्या उपयोगावर तिची सत्यासत्यता ठरत नाही. पण वन्हाडपांडे तिच्या उपयोगावर तिची सत्यासत्यता ठरवतात. स्वप्न व गूढानुभूति या दोन भिन्न पातळीवरील अनुभवांची जशी गल्लत वन्हाडपांडे करतात, तशीच येथे सिध्दीची सत्यता व सिध्दीचा उपयोग या दोन भिन्न गोष्टींची ते गल्लत करीत आहेत. बुध्दीची अशी गल्लत होऊ शकते, पण विवेक अशी गल्लत करीत नाही. म्हणून गळतगे वन्हाडपांड्यांचा 'वाद' विवेकवाद नसून बुध्दिवाद आहे असे म्हणतात." (१८)

५) गळतगे : "Clairvoyance, PK इ. सिध्दी प्रयोगशाळेत शास्त्रीय निकषाखाली सिध्द झालेल्या नाहीत असे आपण म्हणू शकता काय ?"

वन्हाडपांडे : "याबाबतीत वेब्सटरच्या विश्वकोशातील खालील विधान पाहावे.

Mainstream science is still seepitcal about their (parapsychologists) methodology and conclusions"

गळतगे : "हे विधान वेब्सटरच्या कोणत्या प्रतीत आहे ? १९६९ नंतरच्या प्रतीत असेल तर अमेरिकेचा American Association for the Advancement of Science हा विज्ञानसंघ [ज्याच्या एक घटक सभासदाने चंद्रावर माणूस पाठवला] Mainstream science मध्ये नाही असे म्हणावे लागेल ! कारण त्याने त्यासाली वरील सिध्दीची सत्यता सिध्द करणाऱ्या Para-psychological संघाला मान्यता देऊन आपल्या संघाला जोडून घेतले आहे. (Mainstream science हे फसवे शब्द आहेत. प्रतिपक्षाला एखादी गोष्ट खोटी (हे सिध्द न करताच) सांगण्यासाठी 'जादूच्या कांडी' प्रमाणे त्याचा काहीजण वापर करतात. पण ती आपले अज्ञान लपविण्याचे त्यांचे एक ते साधन असते. उदा. मनाचे स्वतंत्र अस्तित्व mainstream science ला मान्य नाही. कारण मेंदूतून मन कसे निर्माण होते हे त्याला अजून कळलेले नाही. आणि जे आपल्याला कळत नाही ते अस्तित्वात नाही असे ते मानते ! असे असूनही Psychological संघाला ते मान्यता देते ! असे अनेक अंतर्बिरोध त्यात (main stream science मध्ये) आहेत. त्याला सत्याचा मक्तेदार समजून त्याच्याकडे स्वतःची बुध्दी गहाण टाकणाऱ्याजवळ स्वतंत्र विचार करण्याची शक्ती नाही असे समजावे.)

वन्हाडपांडे : " 'In the Name of Science' या नावाचे एक पुस्तक वाचनात आले. त्यात अतीत मानसशास्त्राच्या कामाला मिथ्याविज्ञान ठरविण्यात आले आहे."

गळतगे : "In the Name of Science या पुस्तकाच्या लेखकाचे नाव वन्हाडपांडे का सांगत नाहीत ? कदाचित् ते विसरले असावेत. म्हणून मी ते सांगतो. या पुस्तकाचा लेखक मार्टिन गार्डनर हा असून हे पुस्तक Putnam ने 1952 साली प्रसिध्द केले आहे. हा मार्टिन गार्डनर अतींद्रिय शास्त्र खोटे ठरविण्यासाठी कसा बिनदिक्कतपणे लबाडी व लुच्चेगिरी करतो, याचा किस्सा मिलान रिझल या शास्त्रज्ञाने पुराव्यानिशी शास्त्रीय जगाच्या निदर्शनास आणून दिला आहे. वन्हाडपांड्यांना ही गोष्ट माहीत नाही असे दिसते. (याला पुरावा: पाहा - Journal of

Parapsychology Sept 1990 चा अंक) वऱ्हाडपांड्यांनी लबाड माणसाची साक्ष अज्ञानाने काढली असेल तर ती एकवेळ क्षम्य म्हणता येत असले तरी संपूर्ण अतींद्रिय विज्ञान - जे हजारो शास्त्रज्ञांनी आपले संपूर्ण आयुष्य वेचून उभे केले आहे ते - एखाद्या व्यक्तीच्या साक्षीने संपूर्ण खोटे ठरविणे हा प्रकार निंद्य आहे.

६) गळतगे : “गूढानुभूती हे मिर्गीचे लक्षण असल्याबद्दल वैद्यकशास्त्रीय पुरावे द्यावेत.” “मिरगी झालेली व्यक्ती ‘मी ईश्वर आहे’ असे (रामकृष्णाप्रमाणे) म्हणाऱ्याचे वऱ्हाडपांडे एक तरी उदाहरण देऊ शकतील काय ?”

वऱ्हाडपांडे : “रामकृष्णांची बाब ही मिरगीचीच बाब आहे असे त्यांच्या डॉक्टरांचे व आईबापांचे देखील मत होते. याबद्दल सविस्तर विवेचन विवेकवादाच्या दुसऱ्या आवृत्तीत आहे.”

गळतगे : “रामकृष्णांना मिर्गी होती की नाही हा गळतग्यांचा प्रश्न नसून गूढानुभूती हे मिर्गीचे लक्षण आहे काय - तसे ते असल्याबद्दल वैद्यकशास्त्रीय पुरावे आहेत काय, हा प्रश्न आहे. याविषयी कसलेही शास्त्रीय पुरावे न देता कितीही सविस्तर विवेचन केले तरी त्याची शास्त्रीय किंमत शून्य आहे. गळतग्यांनी विचारल्याप्रमाणे ‘मी ईश्वर आहे’ असे म्हणणाऱ्या एकाही मिर्गीगस्त रुग्णाचे उदाहरण वऱ्हाडपांडे देऊ शकलेले नाहीत, हे स्पष्ट आहे. “ ‘मी ईश्वर आहे’ असाही भास होऊ शकेल” असा (पोकळ) तर्क लढवून त्यांनी कशीतरी वेळ मारून नेली आहे. आता पुन्हा गळतग्यांचे दुसरे प्रश्न - रामकृष्णांचे M- लिखित Gospel वाचणारा एकही वाचक-शास्त्रज्ञसुद्धा-आजपर्यंत ‘ही मिर्गी झालेल्या व्यक्तीची बडबड आहे’ असे का म्हणाला नाही ? मिर्गी झालेल्या असख्य रुग्णांपैकी एकाही रुग्णाच्या बाबतीत असे Gospel का रचले गेले नाही ? या प्रश्नांची वऱ्हाडपांडे उत्तर देऊ शकतात काय ?”

वऱ्हाडपांडे : “साधारणपणे स्वतःला दुसराच कोणी समजणे हे छिन्नव्यक्तित्व म्हणजे schizophrenia चे लक्षण समजतात. रामकृष्ण मिर्गीचे झटके आले असतानाच केवळ नव्हे तर इतर वेळेलाही सातत्याने ‘मी ईश्वर आहे’ असे म्हणाले असतील तर ही बाब छिन्नव्यक्तित्वाची देखील होती असे म्हणता येईल.”

गळतगे : “रामकृष्ण सातत्याने ‘मी ईश्वर आहे’ असे म्हणतच नसत. कधी कधी (भक्तीरसाचा परिपोष झाल्यावेळी) ते भावसमाधीत जात असत. भावसमाधीत गेल्यावेळचे त्यांचे फोटो उपलब्ध आहेत. ते पाहून ‘हा मिर्गीचा झटका आलेल्या किंवा Schizophrenia च्या अवस्थेतील व्यक्तीचा फोटो आहे.’ असे आजपर्यंत कोणत्याही विकृतिमानसशास्त्रज्ञाने म्हटलेले नाही. मिर्गी झालेल्या किंवा स्किझोफ्रेनियाग्रस्त अशा एखाद्या तरी रुग्णाचा अशा अवस्थेतील फोटो वऱ्हाडपांडे उपलब्ध करून देऊ शकतात काय ? विकृतिमानसशास्त्रावरील पुस्तकात तो दाखवू शकतील काय ? म्हणजेच मिर्गीचा रुग्ण अशा भावसमाधीत जात असल्याबद्दलचे वैद्यकशास्त्रीय पुरावे ते देऊ शकतात काय ? ‘असे देखील म्हणतात येते,’ ‘तसेदेखील म्हणता येते’ असे वऱ्हाडपांड्याप्रमाणे, एखादी शास्त्रीय बूड नसलेली व्यक्तीच म्हणू शकते.”

वऱ्हाडपांडे : “आपल्या भक्तांनाही तोच भास (‘मी ईश्वर आहे’ हा) करविण्याचे त्यांच्यात सामर्थ्य होते. याचा अर्थ असा की त्यांना मोहिनीविद्या अवगत होती.”

गळतगे : “रामकृष्णांना मोहिनीविद्या अवगत होती ह्या आजपर्यंत कुणालाही माहीत नसलेल्या गोष्टीचा (जावई) शोध वऱ्हाडपांड्यांनी येथे लावला आहे. याला पुरावा काय ? तर म्हणे आपल्या भक्तांनाही ‘मी ईश्वर आहे’ असा भास ते करवीत होते. याला आधार काय ? शून्य. रामकृष्णांनी बुद्धिवादी नरेंद्राचे अध्यात्मवादी विवेकानंदात रुपांतर केले याला मात्र पुरावा आहे. हे व्यक्तिरुपांतर त्यांनी मोहिनीविद्येने केले असे वऱ्हाडपांड्यांना म्हणायचे असेल तर असे व्यक्तिरुपांतर मोहिनीविद्येने कोणी केल्याचे एक तरी उदाहरण ते देऊ शकतात काय ?”

७) वऱ्हाडपांडे : (आपला ‘विवेकवाद’ आपल्या भावनात्मक गरजावर अवलंबून नाही हे आपण सिध्द केले आहे काय ?’ या गळतग्यांच्या प्रश्नाला उत्तर) “माझा विवेकवाद माझ्या भावनात्मक गरजावर अवलंबून आहे. मग मी तो तसा नाही हे कशाला सिध्द करीत बसू ?”

गळतगे : “मग आध्यात्मिक भावनात्मक गरजावर तोंडसुख घेण्याचा वऱ्हाडपांड्यांना काय अधिकार ? ‘विवेकवादी’ भावनात्मक गरजा आध्यात्मिक भावनात्मक गरजाहून श्रेष्ठ आहेत असे ते मानतात काय ? याचे उत्तर पुढील मुद्यात सापडते.”

वऱ्हाडपांडे : “सत्यनिष्ठा ही माझी भावनात्मक गरज आहे. सारे मोह सारून सत्याचा शोध घ्यायचा हे माझे जीवनमूल्य आहे.”

गळतगे : “सत्यनिष्ठ माणूस शास्त्रीय पुराव्यांकडे दुर्लक्ष करतो काय ? शास्त्रीय पुराव्यांकडे डोळेझाक करून सत्याचा शोध घेता येता काय ? अर्तींद्रिय विज्ञानाने (Parapsychology ने) सिध्दींचे अस्तित्व सिध्द करणारे शास्त्रीय पुरावे सादर करूनही त्यांकडे वऱ्हाडपांड्यांप्रमाणे पाहण्याचे जो नाकारतो तो कोणताही मोह दूर सारून नाकारीत नसून (उलट) आपल्या (आंधळ्या) ‘विवेकवादी’ तत्त्वज्ञानावरील आंधळ्या प्रेमांमुळे - जबरदस्त मोहामुळे - नाकारतो. अशी आंधळी भावनात्मक तत्त्वज्ञानाची गरज हे कोणाही सत्यनिष्ठ माणसाचे जीवनमूल्य होऊ शकत नाही. शास्त्रीय सत्यासाठी कोणतेही तत्त्वज्ञान दूर सारण्यास तयार असणारी डोळस भावनात्मक शास्त्रीय सत्याची गरज हेच कोणाचेही जीवनमूल्य होऊ शकते.”

८) गळतगे : “आईन्स्टाइन म्हणतो, “This emotional conviction of the presence of the superior reasoning power, which is revealed in the incomprehensible universe forms my idea of God.”

वऱ्हाडपांडे : “वरील अवतरणावरून निरीश्वरवादच सिध्द होत नाही काय ?”

गळतगे : “वऱ्हाडपांडे येथे दोन भिन्न ईश्वरीय संकल्पनांमध्ये गळत करीत आहेत. आईन्स्टाइनचा हा ‘God’ ज्यू किंवा ख्रिश्चन यांचा ‘Personal God’ नसून ज्ञानेश्वरांचा ‘विश्वात्मक देव’ (Cosmic God किंवा Cosmic Consciousness) आहे. यालाच ‘गूढानुभूतिवाद’ म्हणतात.

वऱ्हाडपांडे : “विश्वाचे तर्कशास्त्रमय स्वरूप म्हणजे ईश्वर असे म्हणणे जग निर्माण करणारा व नीतिमूल्ये जोपासणारा ईश्वर नाकारणेच होय. आईन्स्टाइनची superior reasoning power ही ईश्वराप्रमाणे नैतिक शक्ती नाही. मूल्याचे सत्यत्व मानवाधिष्ठित आहे. त्याचा शोध भौतिक विश्वात घेता येणार नाही.”

गळतगे : “वरील वाक्यावरून वऱ्हाडपांड्यांना गूढानुभूतिवाद म्हणजे काय हे कळलेले नाही एवढेच सिध्द होते. त्यांना हे माहीत नाही की गूढानुभूतिवाद भौतिक व नैतिक शक्तीत मुळीच फरक करीत नाही. सर्व विश्वच ईश्वरमय ठरल्यानंतर भौतिक व नैतिक शक्तीत फरक कुठे उरला ? केवळ मनुष्यच नव्हे तर संपूर्ण विश्व हे ईश्वराचा एक अंश आहे, असे गूढानुभूतिवादी मानतो. गीतेतील (विभूतियोगातील) ‘विष्टभ्याहं इंद कृत्स्नं एकांशेन स्थितो जगत् ।’ या वचनात हीच कल्पना आहे. म्हणून आईन्स्टाइन वर उद्धृत केलेल्या वाक्याच्या अगोदरच्या वाक्याने म्हणतो, “My religion consists of an humble admiration of the illimitable superior spirit who reveals himself in the slight details we are able to perceive with our frail and feeble minds ” अमर्याद (अनंत) (illimitable spirit) ने व्यापलेले हे विश्व incomprehensible (मानवी बुद्धीला न कळणारे) आहे, त्याचा अल्प (किरकोळ) भागच आपण बुद्धीने समजाऊन घेऊ शकतो, असे म्हणून आईन्स्टाइन येथे आपली गूढानुभूतिवादी दृष्टी व्यक्त करतो. (म्हणूनच त्याने या भौतिक विश्वाला न उघडता येणाऱ्या घड्याळाची उपमा दिली आहे.) आईन्स्टाइनचा गूढानुभूतिवाद पुढील विधानातून स्पष्ट होतो : “The most beautiful thing we can experience is the mysterious. It is the source of all true art and science. He to whom this emotion is a stranger, who can no longer pause to wonder and stand wrapped in awe is as good as dead, his eyes are closed.” खऱ्या अर्थाची कला व विज्ञान यांचे उगमस्थान गूढानुभूती हीच आहे, असे येथे आईन्स्टाइन का म्हणतो (रसेलही असेच म्हणतो) हे गूढानुभूती स्वप्नवत खोटी मानणाऱ्या वऱ्हाडपांड्यांना कधीच कळणार नाही.”

वऱ्हाडपांडे : “जोडलच्या सिध्दांताप्रमाणे कोणतीही तर्कव्यवस्था त्या व्यवस्थेच्या बाहेर असलेल्या काही तत्वावर अवलंबून असते, म्हणूनच आईन्स्टाइन आपल्या विश्वासाला भावनात्मक म्हणतो.”

गळतगे : “संपूर्ण विश्व हे ईश्वरमय ठरल्यानंतर विश्वाच्या व्यवस्थेबाहेर - ईश्वराच्या बाहेर - काही असू शकत नाही. तेव्हा वरील वऱ्हाडपांड्यांचे Godel च्या गणिती सिध्दांताविषयीचे व आईन्स्टाइनच्या भावनात्मक विश्वासबंधीचे सर्व म्हणणे गूढानुभूती न समजल्यामुळे निर्माण झालेले म्हणून अप्रस्तुत ठरते.”

वऱ्हाडपांडे : “आईन्स्टाइनच्या अवतरणाप्रमाणेच ‘If we did not have faith we should have no science’ हे प्लँकचे अवतरण आपल्याला [गळतग्यांना] ईश्वर, अध्यात्म यांना पोषक वाटते.”

गळतगे : “येथे गळतगे प्लँकला काय वाटते हे सांगत आहेत. स्वतःला काय वाटते हे सांगत नाहीत वऱ्हाडपांड्यांनी अज्ञानातून दुसऱ्यांवर आरोप करू नयेत. उदा. Scientific Autobiography या ग्रंथात प्लँक म्हणतो, “Religion and natural science are fighting a joint battle in a second, never ending crusade against skepticism and dogmatism, and against superstition. The rallying cry for this crusade has always been and

always will be 'On to God' " येथे स्वतः प्लॅंकच 'ईश्वराकडे चला !' अशी धर्माप्रमाणे (अध्यात्माप्रमाणे) विज्ञानाचीही हाक आहे असे म्हणतो. (येथे 'धर्म' हा शब्द 'अध्यात्मा' च्या अर्थाने वापरला आहे. कारण अध्यात्मच अंधश्रद्धेविरुद्ध लढू शकते. धर्म नाही.) आधुनिक भौतविज्ञानाचे अधिष्ठान असलेल्या क्वांटम सिध्दांताचा एक जनक शास्त्रज्ञ अध्यात्माप्रमाणेच (गूढानुभूतिवादाप्रमाणेच) विज्ञानाचीही 'ईश्वराकडे चलयण्याची हाक' आहे, असे का म्हणतो, हे आंधळ्या बुद्धिवादाची ढाणणे लावून घेतलेल्या वन्हाडपांड्यांना मुळीच कळणार नाही. कळावे अशी अपेक्षाही नाही."

वन्हाडपांडे : "प्लॅंकने आपल्याला पदोपदी irrational चा सामना करावा लागतो असे म्हटले आहे. हे विधान अध्यात्माला पोषक आहे असे समजून आपले अध्यात्म हे irrational आहे अशी आपणच [गळतगे] कबुली देत आहात प्लॅंकचा विश्वास आपण irrational वर मात करू शकतो हा आहे, आपण irrational ला शरण गेले पाहिजे असा नाही."

गळतगे : "प्लॅंक पदोपदी आपल्याला irrational चा सामना करावा लागतो असे का म्हणतो, हे वन्हाडपांड्यांना माहीत नाही. म्हणून आपण irrational वर मात करू शकतो, हे स्वतःचे मत प्लॅंकवर ते लादतात. प्लॅंक हा आईन्स्टाइनप्रमाणेच गूढानुभूतिवादी होता. आईन्स्टाइन जसे अनंताने व्यापलेले हे विश्व मानवी बुद्धीला समजणे शक्य नाही असे मानत होता, तसेच प्लॅंकही मानत होता बुद्धीला न समजणाऱ्या विश्वाच्या या स्वरूपालाच तो irrational म्हणतो हे माहीत नसल्यामुळे वन्हाडपांड्यांनी वरीलप्रमाणे अकलेचे तारे तोडले आहेत. प्लॅंक असे का म्हणत होता याला (आईन्स्टाइनप्रमाणेच) वैज्ञानिक कारण आहे. आधुनिक भौतविज्ञानाचा आधारस्तंभ असलेला क्वांटम सिध्दात - ज्याचा स्वतः तो जनक आहे - हाच मुळी irrational आहे. तो तसा irrational असल्यामुळेच नील्स बोहर या दुसऱ्या एका क्वांटम सिध्दांताच्या प्रवर्तकाने 'Anyone who is not shocked by Quantum Theory has not understood it' असे उद्गार काढले आहेत. रिचर्ड फेनमन या आणखी एका प्रसिध्द क्वांटम शास्त्रज्ञाने (जो त्यातील 'पाथ इंटेग्रल' चा जनक आहे.) याच्याही पुढे जाऊन असे स्पष्ट म्हटले आहे : "I think, I can safely say that nobody understands quantum mechanics " जो irrational आहे, तो सिध्दांत कोणालाही समजलेला नाही या म्हणण्यात अजिबात अतिशयोक्ति नाही. गॅमट अशी की त्या सिध्दांताला rational स्वरूप देण्याच्या डेव्हिड बोह्रम, व्हीलर, एव्हरेट इ. शास्त्रज्ञांच्या प्रयत्नांमुळे तो अधिकच 'आध्यात्मिक', अधिकच 'गूढ' बनला आहे ! (अध्यात्म irrational आहे असे म्हणणाऱ्या वन्हाडपांड्यांनी हे लक्षात घ्यावे !)"

वन्हाडपांडे : "आईन्स्टाइन व प्लॅंक यांच्या विश्वासाला श्रद्धा म्हणायचे काय ? असा प्रश्न आपण (गळतगे) स्वतःला विचारला नाही. श्रद्धा ही ज्ञानाची दारे बंद करणारी असते."

गळतगे : "आईन्स्टाइन आणि प्लॅंक हे 'God' मानणारे होते ते कोणत्या 'विश्वासा' मुळे ? ज्ञानाची दारे बंद करणारा तो 'विश्वास' आहे, असे समजणाऱ्या वन्हाडपांड्यांनी आईन्स्टाइनच्या पुढील अवतरणावर चिंतन करावे : "Objective knowledge provides us with powerful instruments for the achievement of certain ends but the ultimate goal itself and the longing to reach it must come from another source The knowledge of truth as

such is wonderful, but it is so little capable of acting as a guide that it cannot prove even the justification and the value of the aspiration toward that very knowledge of truth. Here we face, therefore, the limits of the purely rational conception of our existence."

९) "विज्ञानाचा कार्यकारणभाव हाच मुळी तर्कबाह्य आहे. रसेल हूमची साक्ष काढून विज्ञानाला 'अंधश्रद्धा' म्हणण्याच्या थराला जातो" या गळतण्यांच्या विधानावर वऱ्हाडपांडे म्हणतात, "(कार्यकारणभावाच्या) विश्वासाला श्रद्धा म्हणता येणार नाही. (कारण) या विश्वासाने ज्ञानाची प्रगती झालेली आहे. ईश्वर, पुनर्जन्म वगैरेवरील विश्वासामुळे असे म्हणता येणार नाही."

गळतणे : "कार्यकारणभावाला जेव्हा रसेल हूमची साक्ष काढून 'अंधश्रद्धा' म्हणतो तेव्हा त्या भावांने ज्ञानाची प्रगती होत नाही असे त्याला म्हणायचे नाही. विश्व समजून घेण्याविषयीचा विज्ञानाचा मूलभूत आधार जो कार्यकारणभाव तो 'irrational' आहे, असे रसेलला येथे सुचवायचे आहे, हे वऱ्हाडपांड्यांच्या लक्षात आलेले नाही. या समस्येला वऱ्हाडपांड्यांजवळ त्यांच्या बुद्धिवादाजवळ उत्तर नाही. ईश्वराविषयी वर विवेचन आलेच आहे. पुनर्जन्म हा आता कोणाच्याही विश्वासाचा प्रश्न राहिलेला नाही. त्याविषयीच्या शास्त्रीय पुराव्यासाठी Ian Stevenson यांचे त्याविषयावरील ग्रंथ पाहावेत."

१०) डॉ. मांडे व डॉ. हातवळणे यांना आपण दिलेल्या पत्रावर आजच पत्रे लिहिली आहेत.

आपला,

अद्वयानंद गळतणे

(डॉ. मांडे व डॉ. हातवळणे यांनी प्रस्तुत लेखकाने त्यांना लिहिलेल्या पत्राची साधी पोहोचही दिली नाही. उत्तर देणे दूरच.)

□ □ □

### परिशिष्ट १ - संदर्भ टीपा\*

(१) 'अध्यात्मावरील विश्वास' हा शब्दप्रयोग चुकीचा आहे. अध्यात्म हा विश्वासाचा (किंवा श्रद्धेचा) विषय नाही. अनुभवाचा आहे. अनुभवप्रमाणावर अध्यात्माच्या सत्यत्वाची प्रचीती कोणीही घेऊ शकतो. मात्र हे अनुभवप्रमाण इंद्रियप्रत्यक्ष नसून अतींद्रियप्रत्यक्ष (प्रमाण) असते. अतींद्रिय प्रत्यक्ष प्रमाण न मानणाऱ्या तत्त्वज्ञानालाच 'बुद्धिवाद' (ज्याला वऱ्हाडपांडे अज्ञानाने 'विवेकवाद' म्हणतात) म्हणत असून तो कसा खोटा व अशास्त्रीय आहे, हे प्रस्तुत लेखकाने 'विवेकवाद व गूढानुभूतिवाद' या मधळ्याच्या विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथातील शेवटच्या दोन प्रकरणातून सप्रमाण दाखवून दिले आहे. (हे दोन लेख मुळात वऱ्हाडपांड्यांच्या विवेकवाद या ग्रंथातील गूढानुभूतिवादावरील टीकेला उत्तर देणारे असून ते 'पैलतीर' दिवाळी

\* या टीपा ग्रंथ प्रकाशनाच्या वेळी जोडल्या आहेत

वार्षिकाच्या १९९५ व १९९६ या अंकातून प्रथम प्रसिध्द झाले होते. दुसरा लेख माझ्या पहिल्या लेखाला वन्हाडपांड्यांनी दिलेल्या उत्तराला प्रत्युत्तर देणारा आहे.)

(२) 'पुरावे' हा शब्दही चुकीचा आहे. येथे 'पुरावे' या शब्दाने वन्हाडपांड्यांना 'भौतिक पुरावे' (इंद्रियप्रत्यक्ष) म्हणायचे आहे. पण अध्यात्म हा भौतिक पुराव्यांनी (इंद्रियप्रत्यक्षाने) सिध्द करावयाचा विषय नाही. 'अध्यात्म' याचा अर्थच 'अतींद्रिय' (अभौतिक) असा आहे. असे जरी असले तरी 'अतींद्रिय' हे भौतिक स्वरूपात क्वचित प्रकट होऊ शकते. असे ते प्रकट होण्यालाच 'चमत्कार' समजण्यात येते. वास्तविक ते अतींद्रिय केव्हा, कुठे व कसे (कोणत्या नियमानुसार) प्रकट होते, हे भौतिक शास्त्र सांगू शकत नाही. त्यामुळे भौतिक शास्त्रालाच अंतिम सत्याचे मक्तेदार समजणारे लोक (आणि बुद्धिवादींच भौतिक सत्याला अंतिम सत्याचे मक्तेदार समजतात) चमत्कार (आणि पर्यायाने अध्यात्म) नाकारतात. ते खोटे म्हणतात. अशा लोकांसाठी अतींद्रियाचे भौतिक पुरावे (ज्यांची भौतिक शास्त्र उपपत्ती देऊ शकत नाही) सादर करून बुद्धिवाद ही सर्वात मोठी अंधश्रद्धा कशी आहे हे वैज्ञानिक निकषांवर दाखवून देणे अगत्याचे ठरते. त्यासाठीच प्रस्तुत लेखकाने 'विज्ञान, बुद्धिवाद आणि चमत्कार' या ३ खंडांच्या बृहद्ग्रंथाचा प्रपंच केला आहे.

(३) 'ज्या सिध्दींचा काहीही सामाजिक उपयोग नाही अशा सिध्दी असू शकतील. अशा सिध्दींचे सत्यत्व पारखण्यास सामाजिक उपयोग ही कसोटी वापरता येणार नाही' या आपल्या वाक्यांनी वन्हाडपांड्यांनी 'सिध्दींच्या सत्यत्वाची कसोटी सामाजिक उपयोग नाही' हा प्रस्तुत लेखकाचा मुद्दा मान्य केल्यासारखेच होत नाही काय ? तरीही वन्हाडपांडे 'सामाजिक उपयोग हीच सिध्दींच्या सत्यत्वाची कसोटी होय, असे कसे मानतात ? हा त्यांचा अशास्त्रीय हेकटपणा ठरत नाही काय ? 'अशास्त्रीय' म्हणण्याचे कारण कोणत्याही गोष्टीच्या सत्यत्वाची शास्त्रीय कसोटी एकच असू शकते. दोन नाही.

(४) हे केवळ औपचारिक पलायनवादी उत्तर आहे. माझी पुस्तके ज्यांनी मुळी वाचलेलीच नाहीत - ज्यांना ती वाचण्याचीच नाहीत - ते त्यात नसलेल्या विधानाचा माझ्यावर आरोपच करू शकणार नाहीत ! यात वन्हाडपांड्यांचा कोणता गुण (पराक्रम) आहे ?

(५) मीही 'माझे विज्ञान आणि बुद्धिवाद हे पुस्तक वाचल्याशिवाय आपल्याशी चर्चा सार्थ होणार नाही' असे म्हणू शकतो. मी वन्हाडपांड्यांचे विवेकवाद हे पुस्तक वाचल्याचा माझ्या (उपर्युक्त टीप १ मध्ये उल्लेख केलेल्या) लेखात पुरावा देऊनही ते पुन्हा माझ्यावर हा आरोप करतात ते त्याच्या पुस्तकाची २ री आवृत्ती मी विकत घ्यावी यासाठीच असावे !

(६) असा दावा मी मांडलेला नाही. प्रत्यक्षात याच्या उलट 'दावा मांडला' होता. पाहा त्या लेखाच्या शेवटी जोडलेली टीप. ती वाचकांच्या माहितीसाठी येथे पुन्हा उद्धृत करतो : "विज्ञानाचा आणि गूढानुभूतीचा अर्थाअर्थी काही संबंध नाही. (गूढानुभूतिवाद विज्ञानावर अवलंबून नाही किंवा त्याला विज्ञानाच्या कुबड्यांची जरूरी नाही. गूढानुभूतिवादाचा जन्म विज्ञानाच्या जन्माच्या हजारो वर्षे पूर्वी झालेला आहे) विज्ञान गूढानुभूतीचा पुरस्कार करीत

असेल तर तो त्याचा प्रश्न आहे.” आपल्या म्हणण्याविरुद्ध सादर केलेल्या पुराव्याकडे दुर्लक्ष करण्याची वन्हाडपांड्यांची ही नेहमीचीच सवय आहे.

(७) डॉ. मांडे व डॉ. हातवळणे या “दोघांनीही या लेखकाला भौतिकीचे काही कळत नाही असे मत दिले” असे वन्हाडपांड्यांनी आपल्या पत्रात जे विधान केले आहे, त्याला उद्देशून मी हे म्हटले आहे.

(८) ही जबाबदारी वन्हाडपांड्यांनी योग्यरीतीने पार पाडलेली नाही. उदा. कालाविषयीची वन्हाडपांड्यांची विवेकवाद ग्रंथातील विधाने भौतिक विज्ञानाला धरून नाहीत. ते कसे हे प्रस्तुत लेखकाने आपल्या ‘विवेकवाद आणि गूढानुभूतिवाद’ या ‘पैलतीर’ १९९५ दिवाळी अंकातील लेखात आईन्स्टाइन हायजेनबर्गप्रभृति वैज्ञानिकांच्या सिद्धांताच्या व विधानांच्या आधारे दाखवून दिले आहे. (हा लेख विज्ञान आणि बुद्धिवाद ग्रंथातील १० वे प्रकरण आहे )

(९) बर्ट्रँड रसेल हा तत्त्वज्ञ होता. शास्त्रज्ञ नव्हता. प्रत्येक तत्त्वज्ञाचे स्वतःचे एक तत्त्वज्ञान असते. काही जणांचा पथही असतो. रसेलचाही होता. (शास्त्रज्ञांचे मात्र पंथ नसतात. असतील तर तत्त्वज्ञ म्हणून असतील. शास्त्रज्ञ म्हणून नव्हे.) रसेल व वन्हाडपांडे एकाच बुद्धिवाद (rationalism) नांवाच्या पंथाचे अनुयायी आहेत. अशा परिस्थितीत रसेल वन्हाडपांड्यांच्या ‘विवेकवादा’तील दोष कसा दाखवून देईल ?

(१०) डॉ. मांडे मला उद्देशून ‘या लेखकाला भौतिकीचे काही कळत नाही’ असे म्हटल्याचे वन्हाडपांडे म्हणतात. मी अज्ञानग्रस्त विधाने केली आहेत असे तेही माझ्या बाबतीत म्हटल्याचे वन्हाडपांडे म्हणत नाहीत. कारण विज्ञानाविषयी मी स्वतःची कोणतीही विधाने केलेली नाहीत. सर्व विधाने प्रसिद्ध वैज्ञानिकांच्या आधारे (त्यांच्या अनुमोदनाने) केली आहेत. तरीही डॉ. मांडे मला भौतिकीचे काही कळत नाही असे म्हणत असतील तर ते वैज्ञानिक म्हणून म्हणत नसून तत्त्वज्ञ म्हणून - आणि तेही वन्हाडपांड्यांच्या पंथातील (बुद्धिवादी) तत्त्वज्ञ म्हणून म्हणत आहेत हे स्पष्ट आहे. (कारण आधुनिक विज्ञान बुद्धिवादाच्या विरोधात गेले आहे.)

(११) ‘स्टेब्रिंग’ नावाचा कोणी तत्त्वज्ञ होऊन गेल्याचे ऐकीवात नाही. सभव असा दिसतो की वन्हाडपांड्यांना येथे ‘स्टेबिंग’ म्हणायचे असावे. कारण स्टेबिंग (सुसान) नावाची एक तत्त्वज्ञ बाई होऊन गेली असून ती रसेलच्याच तत्त्वज्ञान पंथातील होती. तिने जीन्स व एडिंग्टन यांच्या ग्रंथांवर सडकून टीका करणारे **Philosophy and the Physicist** या नावाचे एक पुस्तक १९३७ साली लिहिले होते. पण विशिष्ट पंथाच्या दृष्टिकोनातून ते लिहिले गेलेले असल्यामुळे त्याची त्या दोघाही शास्त्रज्ञांनी मुळीच दखल घेतली नव्हती. हे पुस्तक प्रस्तुत लेखकाने १९५४ सालीच वाचले होते.

(१२) ब्रॉड हा वास्तववादी तत्त्वज्ञ (Realist) होता. त्याचा उल्लेख करताना वन्हाडपांडे हे विसरलेले दिसतात की ते (वन्हाडपांडे) स्वप्नवत् खोटी मानत असलेली गूढानुभूती तो (ब्रॉड) सत्य मानत होता. (ही गोष्ट त्याच्या टीकेला प्रत्युत्तर देणाऱ्या माझ्या ‘विवेकवाद



आणि गूढानुभूतिवाद' या दुसऱ्या लेखात मी स्पष्ट केली आहे. पाहा : विज्ञान आणि बुद्धिवाद, प्रकरण ११) तसेच त्याने भुतांचे अस्तित्व व इतर अशाच अतींद्रिय घटना ज्या वऱ्हाडपांड्यांच्या बुद्धिवादात बसत नसल्यामुळे ते खोटे मानतात, सत्य असल्याचे आपल्या ग्रंथातून पुराव्यानिशी प्रतिपादिले आहे, हेही त्यांना माहीत नसावे, अगर ते सोयिस्करपणे विसरले असावेत. (पाहा, विज्ञान आणि बुद्धिवाद, पृ. ६८, ७०, ८२, २३८)

(१३) पाश्चात्यांची तत्त्वज्ञाने जगण्यासाठी नसतात तर केवळ शाब्दिक व तार्किक कसरतीसाठी असतात हे दाखवून देणारे जोड हा तत्त्वज्ञ एक उत्तम उदाहरण आहे. उदा. जोड नेहमी रेल्वे खात्याला फसवत असे. एकदा तो असाच विनतिकीटाचा प्रवास करताना सापडला व रेल्वे खात्याने त्याला दंड केला. त्याची लैंगिक नीतीही अशीच शिथिल होती. त्याने असे म्हटल्याची नोंद आहे की जी स्त्री माझ्याशी झोपायला तयार नाही तिच्याशी बोलण्यात मला रस वाटत नाही ! (पाहा, Mysteries, C. Wilson, p 183, Granada)

(१४) वऱ्हाडपांड्यांच्या या विधानामुळे दोन प्रश्न उपस्थित होतात. एक, गेल्या तीन हजार वर्षांत ज्या तत्त्वज्ञांनी चुका केल्या असे वऱ्हाडपांडे म्हणतात ते तत्त्वज्ञ कसले ? आणि दोन, तीन हजार वर्षांनंतर त्यांच्या चुका दाखवून देणाऱ्या वऱ्हाडपांड्यांच्या 'डझनवारी' तत्त्वज्ञांना असा कोणता एकदम साक्षात्कार झाला की ज्यामुळे एकदम त्यांना त्यांच्या चुका कळल्या ? या दोन्ही प्रश्नांचे उत्तर वऱ्हाडपांड्यांकडे आहे काय ? पण वस्तुतः वऱ्हाडपांड्यांचे हे विधानच मुळात खोटे आहे. कारण तत्त्वज्ञ कधीच चुका करीत नाहीत. ते फक्त आपले स्वतःचे तत्त्वज्ञान मांडतात. एवढी अनेक तत्त्वज्ञाने (जी क्वचित परस्परविरोधी असतात) का उदयाला आली असती ? याच्या उलट वैज्ञानिकांच्या हातून चुका होतात. कारण शास्त्रीय प्रयोगांनी ते सत्याचा शोध घेत असतात. आणि प्रयोगात सतत सुधारणा होत असतात. म्हणून वैज्ञानिकात तत्त्वज्ञाप्रमाणे 'पंथ' निर्माण होत नाहीत. (सत्यात पंथ असूच शकत नाहीत) पंथ निर्माण झालेच तर तत्त्वज्ञ म्हणून निर्माण होतील. शास्त्रज्ञ म्हणून नव्हे.

(१५) वऱ्हाडपांड्यांचे हे पक्षात् बुद्धीचे स्पष्टीकरण आहे. आणि ते भ्रामक आहे. 'जागृतीत काल सत्य आहे असा प्रत्यय सर्वांना येतो.' या वाक्यात 'जागृती' शब्दाला प्राधान्य आहे. कारण तो शब्द गूढानुभूती 'स्वप्नवत्' खोटी म्हणून तिची (गूढानुभूतीची) ज्याच्याशी त्यांनी तुलना केली आहे त्या 'स्वप्न' शब्दाचा प्रतिद्वंदी शब्द असल्याने महत्वाचा आहे. आणि म्हणून स्वप्न खोटे या गृहीतकृत्यावर 'जागृतीतील' (काल सत्य असल्याचा) अनुभव सत्य म्हणणारा वऱ्हाडपांड्यांचा वाद म्हणजेच 'जागृती हीच सत्याची कसोटी' म्हणणारा त्यांचा वाद आहे हे माझे म्हणणे खोटे ठरत नाही. 'गूढानुभव इतर सर्व अनुभवाशी विसंगत आहे व म्हणून तो स्वप्नतुल्य व भ्रामक आहे' हे त्यांचे पुढील वाक्य सत्य म्हणून का स्वीकारावे याला त्यांनी काहीही कारण (वा पुरावा) दिलेला नाही. उलट मी गूढानुभूतीच्या सत्यत्वाचा पुरावा (शास्त्रीय प्रयोग) सादर केला आहे. (पाहा, विज्ञान आणि बुद्धिवाद, पृ. २२७-८)

(१६) स्वप्नाविषयीचे वऱ्हाडपांड्यांचे हे सर्व म्हणणे अज्ञानमूलक आहे. ते सर्वच स्वप्नांना

लागू होत नाही याविषयीचे विवेचन प्रस्तुतग्रंथात प्रकरण १६ मध्ये आले आहे.

(१७) वऱ्हाडपांड्यांच्या प्रत्यक्षप्रमाणवादाला तृतीयपंथी (हिजडा) प्रत्यक्षप्रमाणवाद म्हणण्याचे कारण असे : वऱ्हाडपांडे यांनी आपण चार्वाकवादी असल्याचे विवेकवाद या ग्रंथात चार्वाकावर एक खास प्रकरण लिहून दाखवून दिले आहे. चार्वाकवाद हा प्रत्यक्ष प्रमाणवादी आहे. उलट सौंदर्य व नीती ही अमूर्त (अप्रत्यक्ष) मूल्ये सत्य असल्याचे वऱ्हाडपांडे प्रतिपादितात. वऱ्हाडपांड्यांचे हे प्रतिपादन त्यांच्या चार्वाकीय प्रत्यक्षप्रमाणवादाशी विसंगत आहे, हे स्पष्ट आहे. त्यांनी आपल्या या प्रत्यक्षप्रमाणवादाला 'विवेकवाद' हे गोंडस नाव दिल्याने त्यांच्या विचारातील ही विसंगती लपून राहत नाही. चार्वाकवाद हा मुळात देहसुखवादी आहे. वस्तुतः चार्वाकवाद प्रत्यक्षप्रमाणवादी व भौतिकवादी-म्हणजे आत्मा नाकारणारा-बनला आहे ते तो मुळात देहाचे सुख हेच एकमेव व खरे सुख मानतो म्हणून होय, हे लक्षात ठेवले पाहिजे. याच्या उलट नैतिक मूल्यावरील निष्ठा ही अनुभवप्रमाणवादातून-म्हणजे आत्मा सत्य मानणाऱ्या प्रमाणवादातून-जन्म पावते. अनुभवप्रमाणवाद म्हणजे नैतिक अनुभवांचे अधिष्ठान आत्मा आहे, देह नाही, असे मानणारा प्रमाणवाद होय. अशारीतीने अध्यात्मवादी (आत्मा मानणारा) अनुभवप्रमाणवादातून नैतिक मूल्यांचा उगम होत असल्यामुळे ती मूल्ये 'अप्रत्यक्ष' असली तर सत्य मानतो. याच्या उलट आत्मा नाकारणारा व दृश्य देहच सत्य मानणारा चार्वाकीय प्रत्यक्षवाद 'अप्रत्यक्ष' नैतिक मूल्ये सत्य मानूच शकत नाही. पण वऱ्हाडपांडे ती मूल्ये सत्य मानतात. अशारीतीने त्यांचा तथाकथित 'विवेकवाद' हा आत्मविसंगतीने भरला आहे. म्हणून मी माझ्या 'विवेकवाद आणि गूढानुभूतिवाद' या लेखात म्हटले आहे की "मूल्यांमध्ये जो विवेक करतो तो केवळ प्रत्यक्षप्रमाणवादी चार्वाकवादी असूच शकत नाही; आणि जो चार्वाकवादी आहे, तो विवेकवादी असू शकत नाही." (विज्ञान आणि बुद्धिवाद पृ. २६१) म्हणून एकीकडे सौंदर्य व नैतिक मूल्ये सत्य मानणाऱ्या व दुसरीकडे आत्मा नाकारणाऱ्या वऱ्हाडपांड्यांच्या विसंगत प्रत्यक्षप्रमाणवादाला मी येथे तृतीयपंथी (हिजडा) प्रत्यक्षप्रमाणवाद म्हटले आहे. आपल्याला त्याचा विचार येथे कर्तव्य नाही असे मी म्हटले असले तरी हा वाद कसा आंधळा आहे, हे स्वतः वऱ्हाडपांड्यांनी दिलेले उदाहरण घेऊनच मी माझ्या 'सत्याची बुद्धिवादी कसोटी' या लेखात सप्रमाण दाखवून दिले आहे. (विज्ञान आणि बुद्धिवाद, पृ. २१८)

(१८) हे अर्थात् वऱ्हाडपांड्यांच्या पत्रातील मुद्दा खोडून काढणारे (संदर्भोचित) उत्तर झाले. त्यांच्या वादाला 'बुद्धिवाद' म्हणण्याचे मुख्य कारण वऱ्हाडपांडे केवळ प्रत्यक्षप्रमाणवादी (चार्वाकवादी) आहेत हे आहे. कारण चार्वाकवाद विवेकवादी असूच शकत नाही. चार्वाकवाद आत्मा (अदृश्य) नाकारतो. म्हणजेच तो दृश्य (भौतिक किंवा ऐंद्रिय) जग आणि अदृश्य (आध्यात्मिक वा अतींद्रिय) जग यात विवेक करत नाही. (विवेक म्हणजे वि + विच् = फरक करणे, होय.) म्हणून त्याला बुद्धिवाद म्हणता येईल. कारण काही जणांच्या बुद्धीला हा फरक न कळणे शक्य आहे. आणि हे स्वाभाविकही आहे. कारण माणसाच्या बुद्धी अनेक प्रकारच्या असू शकतात. म्हणून गीतेने 'बहुशाखाः अनंताश्च बुद्धयः' (२.४१) म्हटले आहे. या अर्थात् भरकटत जाणाऱ्या (अव्यवसायात्मिका) बुद्धी आहेत. व्यवसायात्मिका (निश्चयात्मक)

= न भरकटणारी) बुद्धी मात्र एकच असून तिलाच साधनचतुष्टयात 'नित्यानित्यवस्तुविवेक' म्हणून पहिले स्थान दिले आहे. हाच 'आत्मानात्मविवेक' होय. म्हणजे आत्मा (अदृश्य) आणि अनात्मा (दृश्य देह) यात फरक करणे होय. कारण आत्मा नित्य आहे, अनात्मा (जड देह) अनित्य आहे, आत्मसुख व देहसुख यात निश्चयात्मक बुद्धीच फरक करू शकते, भरकटणारी बुद्धी नाही. या निश्चयात्मक बुद्धीला 'विवेक' व अशा बुद्धीच्या वादाला 'विवेकवाद' म्हणतात. तात्पर्य विवेकवाद आणि अध्यात्मवाद एकच आहेत.



## परिशिष्ट - २

### नाडीभविष्यासंबंधी एका अंधश्रध्दानिर्मूलनवाद्याशी ग्रंथकर्त्याचा झालेला पत्रव्यवहार

प्रकाश घाटपांडे

४ सी/२ कृत्तीका सोसायटी,

तेजसहॉल जवळ कोथरुड,

पुणे - ४११ ०२९, ☎: ५५८०९३८

श्री अद्वयानंद गळतगे

दि. १४-३-२००९

सप्रेम नमस्कार

आपले विज्ञान आणि अंधश्रध्दानिर्मूलन हे पुस्तक मी विकत घेऊन वाचले. आपण एवढे कष्ट घेऊन सातत्याने लेखन करीत आहात त्यातील मुद्दे पटत नसले तरी या बद्दल कौतुक वाटते.

पुस्तकातले परिशिष्ट चार हे मला लिहिलेले पत्र आपण अनिसला उत्तर म्हणून म्हटले आहे ते योग्य नव्हे, अनिसचा पत्रव्यवहार हा बोध अंधश्रध्देचा या पुस्तकात आलेला आहे. आपण ता क. मध्ये मी अनिसचा बौद्धिक कार्यकर्ता आहे असे म्हटले आहे त्यावर आक्षेप नाही. पण मी हा पत्रव्यवहार व्यक्तिगत केलेला असताना त्याला अनिसला उत्तर असे म्हणणे तर्काला धरून नाही. मी माझी पत्रव्यवहाराची प्रत अनिसचे कार्याध्यक्ष यांना फक्त माहिती करिता दिलेली आहे. ज्या लेखाच्या अनुषंगाने पत्रव्यवहार झाला तो लेख आपण छापला असता तर वाचकांना आपल्या लेखनाची लिंक लागली असती तसेच दुसरी बाजू आमच्याच भाषेत लोकांच्या समोर आली असती. कदाचित आपणास ते गैरसोयीचे असावे.

त्याच परिशिष्टातील पान क्र. १८७ वरील तळटीपशी मी सहमत आहे. तसा उल्लेख मी पेंडसे यांना लिहिलेल्या पत्रात पण केला आहे. सदर लेख अनेक वेळा मी संस्कारित केला असल्याने त्यात बदल होणे स्वाभाविक होते. तो लेख अनिस वार्तापत्रात छापण्याचे कारण ते त्यातील काही मुद्द्यांशी तरी सहमत असावेत. अनिसचे आवाहन वा आव्हान हा मुद्दा लेखाच्या मध्यवर्ती कुठेही नव्हता. पान क्र. १९३ र तळटीपेत आपण मी शांताराम आठवल्यांचे पुस्तक वाचलेच नाही असा तर्क काढला आहे. शांताराम आठवल्यांनी नाडीग्रथावर टीका केली आहे. पुस्तकात आत्मानंद यांची मते दिलेली आहेत व ती टीकात्मक आहेत. आपण पूर्वग्रहदूषित दृष्टिने पत्र वाचले असावे. ही टीका काही पहिलीच नाही हे वाचकांना समजावे म्हणून तो फक्त संदर्भ आहे. 'ते प्रमाण मानावे असे माझे म्हणणे आहे' असा त्याचा गर्भित आपण काढला असेल तर त्याला नाईलाज आहे.

चर्चाही अगस्ति नाडी केंद्र मध्यवर्ती धरूनच केलेली आहे. कारण त्यात नावानिशी व्यक्तिगत पट्टी येते. पट्ट्यांची संख्या व कूटलिपी हा मुद्दा स्पर्शूनही दुर्लक्षित राहिला आहे. ज्या

अर्थी एवढे नाडीवाचक... त त्या अर्थी ती कूट लिपी फार दुष्प्राप्य आहे असे अजिबात नाही ओक व आपण मंडळी... एवढा नाडीकेंद्रात बट आहे तर आपणच तो कूट लिपीचा उलगाडा का करित नाही ? आम्हा पामरांना का सांगता ? आणि पट्ट्यांच्या संख्येविषयी काय ? सत्यशोधन आपणासही करायचे आहे ? ते केवळ अंनिस वा फलज्योतिष चिकित्सा मंडळाच्या घाटपांडे वा रिसबूड यांनाच करावयाचे नाही. आम्ही संदर्भ देऊन जे मुद्दे मांडतो ते संदर्भ आपल्याच वर्तुळातले असतात. जनमानसातील मान्यवर व्यक्तीचे दाखले हे लोकांनी विचार करावा म्हणून आम्ही देतो. अंनिस सुध्दा नवीन असं काहीच खरं सांगत नाही. त्यांनी सांगितलेले विचार हे संतांनी व सुधारकांनी केव्हाच सांगितले आहेत. आपण विनाकारण अंनिसला महत्त्व देत आहात. आता आव्हानाची कल्पना मात्र जनसामान्यांना मनोरंजक वाटते. पण आव्हान प्रक्रिया मात्र प्रत्यक्ष घडत नाही. कारण अंनिसने सांगितलेल्या अटी आयत्यावेळी संबंधीत नाकारतात. आम्ही मात्र याकडे आवाहनात्मक वा प्रयोगात्मक पातळीवर बघतो कारण आमचा दृष्टिकोण हा फलज्योतिष चिकित्सा असा आहे.

आपला विश्वासू,

प्रकाश घाटपांडे (सही)

प्रत माहिती करिता

विंग कमांडर ओक, श्री. दाभोलकर

श्री. प्रकाश घाटपांडे

सप्रेम नमस्कार,

आपले १४ मार्च २००१ चे पत्र मिळाले. त्यातील आपणाला न 'पटणाच्या' पुढील मुद्यांना हे पत्र उत्तर आहे.

मुद्दा क्र. १ : "मी हा पत्रव्यवहार व्यक्तिगत केलेला असताना त्याचा अंनिस ला उत्तर असे म्हणणे हे तर्काला धरून नाही."\*

उत्तर : जो लेख अंनिसच्या मुखपत्रात जाहीरपणे छापला जातो तो लेख एखाद्या व्यक्तीला पाठविला की त्याविषयीचा पत्रव्यवहार व्यक्तिगत होतो हे अजब तर्कशास्त्र आहे. आपल्या जाहीर लेखाला माझे परिशिष्ट ४ हे जाहीर उत्तर आहे, हे ध्यानात घ्या.

मुद्दा क्र. २ : "ज्या लेखाच्या अनुषंगाने पत्रव्यवहार झाला तो लेख आपण छापला असता तर.... कदाचित आपणास ते गैरसोयीचे असावे."

उत्तर : ज्या लेखाला सडेतोड उत्तर दिले आहे तो लेख गैरसोयीचे म्हणून छापले न जाणे शक्य नाही. ते न छापण्याचे कारण उघड आहे. 'विंग कमांडर तमाशाचा फड उभा करतात आणि त्यात गळतगे ढोलकी वाजवतात' हा त्या लेखाचा मधळाच त्या लेखाचा दर्जा व वकूब काय आहे हे न सांगता जाहीर करतो. तो छापण्याची जुरी नाही.

\* 'अंधश्रद्धानिर्मूलन समितीच्या वार्तापत्रा'त छापलेल्या घाटपांड्यांच्या लेखाला विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन या पुस्तकाच्या परिशिष्ट ४ मध्ये दिलेल्या ग्रंथकर्त्यांच्या उतराला उद्देशून हे विधान घाटपांड्यांनी केले आहे (नंतर जोडलेली तळटीप)

मुद्दा क्र. ३ : “तो लेख अंनिस वार्तापत्रात छापण्याचे कारण ते (अनिसवाले) त्यातील काही मुद्यांशी तरी सहमत असावेत. अंनिसचे आवाहन वा आव्हान हा मुद्दा लेखाच्या मध्यवर्ती कुठेही नव्हता.

उत्तर : अंनिस घाटपांड्याशी सहमत आहे की नाही हा प्रश्नच नाही ! प्रश्न आहे घाटपांड्यांनी अंनिसकडे आपला लेख का पाठवला हा ! घाटपांडे अंनिसशी सहमत नसते व अंनिसने ओकांना नाडीविषयी आव्हान दिले नसते तर घाटपांड्यांनी अंनिसकडे लेख पाठविला असता काय ? घाटपांडे महाशय, आपण वेड पोंधरुन पेढगावला का जाता ?

मुद्दा क्र. ४ : “पान क्र. १९३ वर तळटीपेत आपण मी शांताराम आठवले यांचे पुस्तक वाचलेच नाही असा तर्क काढला आहे. शांताराम आठवल्यांनी नाडीग्रंथावर टीका केली असे मी कुठेही म्हटलेले नाही. त्यांच्या पुस्तकातसुद्धा टीकेचा उल्लेख आहे असे म्हटले आहे.”

उत्तर : आपल्या ज्या विधानासंदर्भात मी तळटीप दिली आहे ते आपले मूळ विधान असे : “नाडीग्रंथावरील टीका ही काही पाहिलीच नाही. या अगोदर अमृतगुषार, ले, आत्मानंद, नाडीग्रंथ : एक अभ्यास, ले, शांताराम आठवले या जुन्या काळातील पुस्तकातही टीकेचा भाग आहे.” हे आपले विधान वाचून ही दोन्ही पुस्तके नाडीग्रंथावर टीका करणारी आहेत अशी ती पुस्तके न वाचलेल्या वाचकाची समजूत होते. वस्तुस्थिती मात्र अगदी उलटी आहे. फक्त पहिल्या पुस्तकातील फक्त एका प्रकरणात नाडीवरील टीकेचा भाग आहे. उलट दुसरे पुस्तक नाडीची (सत्य) बाजू पूर्ण उचलून धरणारे आहे. आपण मात्र टीकेचा भागच उचलून धरता. त्या ग्रंथाच्या सत्यत्वाच्या बाजूला पूर्ण बगल देता. हे कुठल्या सत्यशोधनाच्या तर्कशास्त्रात बसते ? आठवल्यांचे ‘नाडीग्रंथ’ हे पुस्तक पूर्ण वाचणारा प्रामाणिक मनुष्य असे करील काय ? याचे उत्तर आपण प्रथम द्या.

मुद्दा क्र. ५ : “पुस्तकात आत्मानंद यांची मते दिली आहेत व ती टीकात्मक आहेत. आपण पूर्वग्रहदूषित दृष्टीने पत्र वाचले असावे. ही टीका काही पाहिलीच नाही हे वाचकाना समजावे म्हणून तो फक्त संदर्भ आहे. ‘ते प्रमाण मानावे असे माझे म्हणणे आहे’ असा त्याचा गर्भित (अर्थ) आपण काढला तर त्याला माझा नाइलाज आहे.”

उत्तर : आठवल्यांच्या पुस्तकात फक्त एकट्या आत्मानंदांच्याच टीकेचा उल्लेख आहे. आणि तोही त्यांच्याशी आठवल्यांचा वैयक्तिक संबंध असल्यामुळे व त्याची दखल घेतली नाही तर आपण नाडीग्रंथाकडे केवळ अंधश्रद्धेतून पाहतो असा वाचकांचा ग्रह होईल अशी त्यांना भीती वाटल्यामुळे त्यांनी केला आहे. यावरून नाडीग्रंथ खोटे हे सिध्द करण्यासाठी त्या टीकेचा उल्लेख नसून त्या ग्रंथाकडे कोणी अंधश्रद्धेतून पाहू नये (सत्यान्वेषणाच्या दृष्टीने पाहावे) हे आठवल्यांना वाचकांना सांगायचे आहे, हे स्पष्ट होते. (तसे त्यांनी तेथे स्पष्ट म्हटलेही आहे. पृ. १३८ पाहा.) २२ प्रकरणांच्या आठवल्यांच्या पुस्तकातील केवळ दीड पानाच्या एका क्षुल्लक प्रकरणाचेच (तेही काही परिच्छेदांचेच) घाटपांड्यांना महत्त्व वाटते. संपूर्ण पुस्तकातील २१ प्रकरणातील (अनुभवावर आधारलेले) नाडीचे सत्यप्रतिपादन महत्त्वाचे वाटत नाही, या वस्तुस्थितीवरून कुणाची दृष्टी पूर्वग्रहाने दूषित आहे हे स्पष्ट होते. ‘काय प्रमाण मानावे’ हे गळतग्यांनी सांगितलेलेच नाही. स्वतः घाटपांड्यांनीच ते सूचित केले आहे.

मुद्दा क्र. ६ : “पट्ट्यांची संख्या व कूटलिपी हा मुद्दा स्पर्शनही दुर्लक्षित राहिला आहे.”

उत्तर : पट्ट्यांची संख्या व कूटलिपी या मुद्द्यांना ‘स्पर्श’ केला आहे म्हणजे काय केले आहे ? म्हणजे त्याविषयीच्या आक्षेपांना समर्पक उत्तर दिले आहे ! (ज्या मुद्याला ‘स्पर्श’ केला जातो तो मुद्दा ‘दुर्लक्षित’ कसा राहतो हे घाटपांडे सांगतील काय ?)

मुद्दा क्र. ७ : “ओक व आपण मंडळीचा एवढा नाडीकेंद्रात वट आहे तर आपणच तो कूटलिपीचा उलगडा का करीत नाही ? आम्हा पामरांना का सांगता ?”

उत्तर : ओकांचा नाडीकेंद्रात ‘वट’ आहे हे मान्य करता येईल. पण गळतग्यांचा तो आहे हा शोध घाटपांड्यांनी कुठे व कसा लावला ? ओकांनी गळतग्यांना कूटलिपीतील काही भागाचा उलगडा करून सांगितला आहे. तो आपल्यालाही कळावा अशी घाटपांड्यांना तीव्र इच्छा असेल तर त्यांनी नाडीकेंद्रांना भेट देऊन गळतग्यांप्रमाणे त्या ग्रंथाचा प्रथम अनुभव घ्यावा व मग ओकाशी गळतग्यांप्रमाणे संधान बांधावे एवढेच घाटपांड्यांना या संदर्भात गळतगे सांगू शकतात. पण घाटपांडे ‘पामर’ राहणेच पसंत करतात याला कोण काय करणार ?

मुद्दा क्र. ८ : “जनमानसातील मान्यवर लोकांचे दाखले हे लोकांनी विचार करावा म्हणून आम्ही देतो.”

उत्तर : नाडीग्रंथाबाबत बोलायचे तर वास्तविक त्या ग्रंथांचा अनुभव घेणारेच मान्यवर ठरतात. अनुभव न घेणारे मान्यवर कसे ठरतात हे घाटपांडे सांगतील काय ? आत्मानदाना त्या ग्रंथांचा अनुभव आला नसेल. पण म्हणून आठवल्यासारख्या इतर असंख्य लोकाना आलेला अनुभव त्यामुळे छोटा कसा ठरतो ? आत्मानंदांचा एकट्यांचा अनुभव प्रमाण व इतर अगणित लोकांचा अनुभव मात्र अप्रमाण हे कसले तर्कशास्त्र ? इतरांच्या खऱ्या अनुभवांचे दाखले घाटपांडे का विचारात घेत नाहीत ? कुणी आत्मानंदांना फसविले म्हणून सर्व नाडीग्रंथच फसवणूक ठरतात काय ? फसवले जाणारे ‘मान्यवर’ असतील तर फसवणुकीचा अनुभव न आलेल्यांना घाटपांडे काय म्हणणार आहेत ? आणि अशा लोकांचे दाखले न देणे वा विचारातही न घेणे हे कशाचे लक्षण ?

मुद्दा क्र. ९ : “आपण विनाकारण अंनिसला महत्व देत आहात.”

उत्तर : अंनिसने असत्य प्रचारासाठी रचलेली कुलंगडी बाहेर काढणे हे अंनिसला महत्व देणे नसून उलट सत्यप्रतिपादनाला महत्त्व देणे आहे. याच्या उलट अशी कुलंगडी रचून असत्य प्रचार करणाऱ्या अंनिसकडे आपला लेख पाठविणे व तद्द्वारा सत्य प्रतिपादणाऱ्या गळतग्यांसारख्यांच्या प्रयत्नाला (हीन भाषेत) दूषण देणे हेच अंनिसला महत्व देणे असून शिवाय असत्य प्रचाराला खतपाणी घालणेही आहे ! याला ‘चोराच्या उलट्या ....’ म्हटले तर घाटपांडे गळतग्यांना दोष देणार नाहीत अशी आशा आहे.

मुद्दा क्र. १० : “अंनिसने सांगितलेल्या अटी आयत्या वेळी संबंधित नाकारतात.”

उत्तर : कोणत्या अटी हे न सांगता असे मोघम (संदर्भहीन) विधान करणाऱ्यांना काय उत्तर देणार ? पण ‘बोध अंधश्रद्धेचा’ या पुस्तकात या आक्षेपाची दखल घेऊन समर्पक उत्तर दिले आहे.

माझ्या विज्ञान आणि अंधश्रध्दानिर्मूलन या पुस्तकात अंनिसच्या कूटनीतीवर पुराव्यानिशी स्वच्छ प्रकाश पाडलेला असताना आपणाला त्याची दखल घ्यावीशी वाटत नाही. उलट तिची बाजू अजूनही आपण उचलून धरता. यावरून असा निष्कर्ष काढावा लागतो की आपणाला अंनिसवरील आंधळ्या प्रेमापोटी 'पाभर' बनणे व राहणे तर पसंत आहेच, पण वेड पांघरून पेडगावला जाणेही आवडते !

आपला,  
अद्वयानंद गळतगे

माहितीसाठी प्रती,  
विंगकमांडर ओक, दाभोलकर, रिसबूड.





## परिशिष्ट - ३

ब्रह्मविद्या खोटी ठरवू पाहणारे जेव्हां स्वतःच खोटे ठरतात.  
(मॅडम ब्लॅव्हॅट्स्कीवरील खोट्या दोषारोपांचे १०१ वर्षांनंतर निरसन\*)

॥ ॐ ॥

श्री. केशवचन्द्र गं. भट्टभाडे

आंतरराष्ट्रीय थिऑसॉफिकल सोसायटीच्या (४८ देशांत विस्तार असलेल्या) एक संस्थापिका, मॅडम हेलेना पेद्रोव्हना ब्लॅव्हॅट्स्की यांच्यावर लंडनच्या 'सोसायटी फॉर सायकिकल रिसर्च' (एस.पी.आर.) ने इ.स. १८८५ साली (१०६ वर्षांपूर्वी) अत्यंत अन्यायपूर्वक खोटेपणा, फसवेगिरी, बनावट पत्रे व बनावट सद्द्या करण्याबद्दलचे आरोप डॉ. रिचर्ड हॉजसन् याच्या 'सायकिकल रिसर्च' जर्नल मध्ये प्रसिध्द केलेल्या अहवालात होते.

त्यावर 'सायकिकल रिसर्च' च्या एप्रिल १९८६ च्या अंकात (खंड ५३) मॅ. ब्लॅव्हॅट्स्कीवर केलेले आरोपच खोटे, अन्यायाने केलेले होते असे प्रकाशित केले आहे. ज्या कुलम्ब दापत्याची पत्रे खरी मानून हे आरोप केले होते, ती पत्रेच बनावट (फोर्ज्ड) होती, असा निष्कर्ष पुष्कळ संशोधनानंतर सुप्रसिध्द हस्ताक्षरतज्ञ डॉ. हॅरिसन, जे एस.पी.आर. चे खूप जुने सदस्य आहेत, त्यांनी काढला. त्यांनी १८८५ चा संपूर्ण रिपोर्टच आमूलाग्र पूर्णपणे बारकाईने तपासून संशोधित केला. डॉ. व्हर्नान हॅरिसन बनावट लेख, हस्ताक्षर सद्द्या ओळखण्यात निष्णात समजले जातात.

बादग्रस्त असलेले दोन पत्र-संच होते. 'त्यातला एक गैरवर्तणुकीसाठी थिऑसॉफिकल सोसायटीने कामावरून काढून टाकलेल्या कुलम्ब नावाच्या दापत्याने मॅडम ब्लॅव्हॅट्स्कीच्या हस्ताक्षरातला म्हणून पुढे आणलेला पत्र-संच होता व दुसरा मॅ. ब्लॅव्हॅट्स्कीच्या समर्थनार्थ हिमालयस्थ महात्म्यांनी लिहिलेला होता. डॉ. हॉजसन् यांनी पहिला पत्र-संच प्रमाण मानून दुसरा मॅडम ब्लॅव्हॅट्स्की व त्यांच्या सहकान्यांच्या हस्ताक्षरात नव्हता असा निष्कर्ष काढला होता. त्यावरून मॅडम ब्लॅव्हॅट्स्कीना लबाड, खोट्या, फसव्या ठरवले होते.

डॉ. हॅरिसन म्हणतात की पहिल्या पत्र-संचातील डॉ. हॉजसन् यांनी खरी मानलेली पत्रेच बनावट होती व ती काढून टाकलेल्या कामगारांनी सूड भावनेने तयार केलेली होती. दुसऱ्या संचातील पत्रे महात्म्यांनी त्यांच्या विशिष्ट हस्ताक्षरात लिहिलेली होती व मॅडम ब्लॅव्हॅट्स्कीच्या हस्ताक्षरात नव्हती. डॉ. हॅरिसन पुढे म्हणतात की सन १८८५ च्या रिपोर्टाचे जितके जास्त संशोधन होत गेले, तितके हे जास्त जास्त स्पष्ट होत गेले की डॉ. हॉजसन्ने अगदी क्षुल्लक व संशयास्पद पुरावा खरा व प्रमाण मानून ब्लॅव्हॅट्स्कीवर आरोप सिध्द करण्याचा प्रयत्न केला, व त्यांचे समर्थन करू शकेल असा पुरावा जाणून-बुजून दुर्लक्षित केला. त्यामुळे संशोधक म्हणून हॉजसन् अगदी उणा पडला. त्याने केलेले दोषारोध खरे ठरलेले नाहीत.

\* पैलतीर, दिवाळी वार्षिक १९९१, (कोल्हापूर) स. कृष्णा गुरव यावरून पुनर्मुद्रित.

डॉ. जॉन बेलॉफ- एस.पी.आर. चे संपादक, -मानसशास्त्र प्राध्यापक होते- म्हणतात की इतर समीक्षकांनीही १८८५ च्या रिपोर्टवर विरोधी टीका केलेली आहे. हा रिपोर्ट-केवळ गैरसमज-एस.पी.आर.चे अधिकृत मत मानला गेला होता. खरी गोष्ट म्हणजे एम्.पी.आर. ला स्वतःची मतेच नाहीत. डॉ. हॅरीसन यासंस्थेचे सभासद असले तरी थिऑसॉफिकल सोसायटीशी त्याचा मुळीच संबंध नाही. डॉ. बेलॉफ म्हणतात की, 'मॅडम ब्लॅव्हॅटस्कीचे समर्थक थिऑसॉफिकल सोसायटीचे सभासदांनी एस.पी.आर. बद्दल इतकी वर्षे वाटणारा सार्थ दुरावा या नवीन सशोधनाने कमी होईल अशी आशा करू या.'

### डॉ. कोऊर व थिऑसॉफिस्ट

ख्रिस्तवासी डॉ. अब्राहम कोऊर हे बुद्धिप्रामाणवाद्यांचे फार मोठे आधारस्तंभ मानले जातात. त्यांनी त्यांच्या १९८० मध्ये प्रकाशित झालेल्या 'गॉड्स, डेमन्स व स्पिरिट्स' या पुस्तकाच्या १६ व्या प्रकरणात मॅडम ब्लॅव्हॅटस्की, डॉ. अँनी बेझंट, बिशप लेडबीट, कर्नल ऑलकॉट व जे. कृष्णमूर्ती आदि थिऑसॉफिकल सोसायटीच्या वंध्य मानल्या गेलेल्या पुढाऱ्यांवर खोटेनाटे, निराधार आरोप करून अर्वाच्य मिंदा नालस्ती केली आहे. हे सर्वच आरोप जाणून-बुझून चारित्र्य हननाचा, हेतु पुरःसर केलेला प्रयत्नच आहे. १९८० मध्ये श्री. कृष्णमूर्तीखेरीज बाकीचे पुढारी हयात नव्हते. दिवंगत व्यक्तींवर गलिच्छ व खोटेनाटे आरोप, जे त्या व्यक्ती त्याला उत्तर देऊ शकत नसताना, करणे हे नैतिकदृष्ट्या समर्थनीय म्हणता येईल काय ? महाराष्ट्रातील एका बुद्धिप्रामाण्यवादी लेखकाने या लेखाचे मराठी भाषांतर केले व 'माणूस' साप्ताहिकाच्या ६ डिसें. १९८० च्या अंकात संपादकांनी ते छापले. डॉ. कोऊरांच्या अनर्गल विधानांची सत्यासत्यता पडताळून न पहाता असे गलिच्छ आरोप असलेला लेख 'प्रबोधनासाठी लिहिला' असे अनुवादकांनी मला लिहिले. यावरून बुद्धिप्रामाण्य-वादी विकृत व घाणरेड्या विधानांनी भरलेला लेख लिहिताना त्यात किती तथ्य आहे याची खात्री करून घेत नाहीत, हे भाबडेपणाचे व अ-बुद्धिप्रामाण्यवादीपणाचे लक्षण नाही काय ?

बुवाबाजी करणाऱ्या समाजाच्या खालच्या थरातील, दुष्ट लपट, अंध-श्रद्धाळू, लोभी व दारुबाज लोकांविरुद्ध आघाडी उघडणे नितांत आवश्यकच आहे पण गत शंभराहून अधिक वर्षांच्या काळात, जागतिक कीर्ती पावलेल्या सत्शील थिऑसॉफिस्टांना नीच बुवाबा ज्यांच्या पंक्तीला नेऊन बसवण्याचा प्रयत्न करणे हा कोणता बुद्धिप्रामाण्यवाद ?

याला उत्तरादाखल त्या सर्व आरोपांचे, साधार, सप्रमाण व स-संदर्भ खंडन करणारा, संपादक महाशयांच्या सम्मतीने मी स्वतः लिहिलेला लेख, संपादकांनी 'आता उशीर झाला' अशा सबबीवर छापण्याचे नाकारले. प्रसिध्द व्यक्तींवर गलिच्छ आरोप करणारा लेख प्रकाशित करताना संपादकांची काहीच नैतिक जबाबदारी नसावी हे विलक्षण आहे. सत्य प्रकाशात आणल्यावर चुकीने घडलेल्या प्रमादाचे परिमार्जन अंशतः तरी करता आले नसते काय ? चुकीबद्दल दिलगिरी व्यक्त करता आली नसती काय ?

विकृत मनोवृत्तीमुळे चारित्र्य हननाचा प्रयत्न ही डॉ. कोऊरांची चाल तशी नवी नाही. वरील पुस्तकात अशी अनेक उदाहरणे आहेत. पूज्य सत्य साईबाबांच्यावर आक्षेपही त्यांनी

घेतलेले आहेत. या पुस्तकात पृ ५९ वर पुढील वाक्ये आहेत. 'ड्यूक युनिव्हर्सिटी डिसबॅण्डेड इट्स पॅरासायकॉलॉजी यूनिट, डिस्कंटीन्यूड न्हाइन्स रीसर्चेस.

'न्हाइन स्टार्टेड अगेन री एस्टॅब्लिशिंग द इन्स्टिट्यूट फॉर पॅरासायकॉलॉजी अँड डरहॅम नॉर्थ कॅरोलिना.' (सायन्स टुडे नोव्हें. १९७४)

वरील विधान निखालरा खोटे, विपर्यस्त व गैरसमज उत्पन्न करणारे आहे. खरी वस्तुस्थिती अशी :

'ड्यूक युनिव्हर्सिटी' त निवृत्तीचे वय ७० वर्षे होते. (आता अमेरिकेत ते ७५ वर्षे आहे.) डॉ. न्हाइन १९६५ मध्ये ७० व्या वर्षी निवृत्त झाले. निवृत्त होण्यापूर्वी तीन वर्षे १९६२ मध्ये त्यांनी 'फौंडेशन फॉर रिसर्च ऑन द नेचर ऑफ मॅन' हे प्रतिष्ठान स्थापन केले. त्याची इमारत ड्यूक युनिव्हर्सिटीला लागूनच होती. डॉ. न्हाइन यांनी 'इन्स्टिट्यूट फॉर पॅरासायकॉलॉजी' ही संस्था त्या प्रतिष्ठानशी संलग्न केली व ड्यूक विद्यापीठाच्या कार्यकारणीशी विचार विनिमय करून तेथील पॅरासायकॉलॉजी लॅबोरेटरी या नवीन प्रतिष्ठानाच्या जागेत हलवली. १९६३ साली प्रा. वसंतराव वि. अकोलकर (पुणे) डॉ. न्हाइन यांच्या प्रयोगशाळेत, त्यांच्या मार्गदर्शनाखाली ड्यूक विद्यापीठातच सशोधन करीत होते. प्रा. अकोलकरानी स्वतः वरील माहिती त्याच्याजवळच्या कागदपत्रांच्या आधारे मला दिली होती.

या सदर्भात प्रा. वसंतरावांनी सांगितले की, १९८७ त ड्यूक विद्यापीठात अभ्यास विषय म्हणून पॅरासायकॉलॉजीचा 'क्रेडिट कोर्स' म्हणून शिकवला जात होता. बुलेटिन क्र. ३२, विंटर १९८७) हे बुलेटिन् व त्या सोबतचे व्यवस्थापिकेचे ७ एप्रिल १९८७ चे पत्रही त्यांनी मला दाखवले. त्यावरून वर उद्धृत केलेला मजकूर लिहिला आहे.

[ ब्रह्मविद्येचा जगभर (व विशेषतः भारतात) प्रसार करणाऱ्या मॅ. ब्लॅन्हेडस्की यांना खोट्या ठरवून बदनाम करण्यासाठी व ख्रिश्चन धर्मप्रसारातील अडसर दूर करण्यासाठी कूलंब दांपत्याच्या ब्लॅन्हेडस्कीबदलच्या वैयक्तिक शत्रूत्वाचा भारतातील ख्रिश्चन मिशनऱ्यांनी वरीलप्रमाणे धूर्त वापर करून घेतला, या वस्तुस्थितीचा वरील लेखात उल्लेख नाही. मिशनऱ्यांच्या या कारस्थानावर कर्नल ऑलकॉर्ट यांनी Old Diary Leaves या सहा खंडांच्या लेखनात स्वच्छ प्रकाश पाडला आहे. प्रस्तुत ग्रंथातील पृ. ३५५-६ व तळटीप पाहा

- ग्रंथकर्ता]



## परिशिष्ट - ४

### दृष्टिक्षेपात ब्रह्मविज्ञान\* (Brahma-Vidya at a glance)

#### पुरुषार्थ

धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष हे चार पुरुषार्थ आहेत. अर्थ-काम अनित्य आहेत. कारण 'क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोके विशन्ति ।' पुण्य क्षीण होताच मानव पुन्हा मृत्युलोकी येतो. याचा अर्थ धर्म अनित्य आहे. मोक्ष हा पुरुषार्थ नित्य eternal आहे. तोच परम पुरुषार्थ आहे. म्हणून तो साधण्याचा प्रयत्न करावा. त्यामुळे पुनर्जन्माचे चक्र थांबते. धर्म पुरुषार्थाचे काटेकोर आचरण दीर्घकाळ केल्याविना सत्त्वाचा उत्कर्ष होत नाही आणि मोक्ष-साधनाचा अधिकार प्राप्त होत नाही, हे विसरू नये.

#### ‘पूर्ण स्वातंत्र्य’ म्हणजे ‘मोक्ष’ कशाने मिळतो ?

ब्रह्मज्ञानाने । जे आत्मस्वरूपाला जाणतात ते मृत्यूचा अतिक्रमण करून जातात. न च पुनर् आवर्तते अशी श्रुती आहे. मोक्ष वा पूर्ण स्वातंत्र्य-प्राप्तीला ज्ञानावाचून दुसरा मार्ग नाही. जो ज्ञानाने ब्रह्मस्वरूपाला जाणतो तो त्याच परब्रह्म-स्वरूपी ऐक्य भावाने लीन होतो.

#### ब्रह्म कसे जाणावे ?

“अध्यारोप अपवादाने , सर्व संग वा आसक्ती सोडून जाणावे. *अध्यारोप अपवादाभ्यां ज्ञातव्यस्तत्त्वनिर्णयः।* प्रजोत्पदनाने धनाने, कर्माने मोक्ष होत नाही. न प्रजया न धनेन । त्यागेनैके अमृतत्वमानशुः । म्हणजे अनेकजण सर्वसंग परित्याग करून ज्ञानाने मुक्त झाले. अशी श्रुती आहे. म्हणून अध्यारोप आणि अपवाद अवश्य जाणावे.”

#### अध्यारोप-अपवाद म्हणजे काय ?

शिंपले चांदी वाटते, दोरीवर साप भासतो. झाडाचा बुन्धा चोर वाटतो. तसे हा प्रपंच ब्रह्मस्वरूपी भासतो. त्याला अध्यारोप म्हणतात. असते दोरी आणि अंधुक प्रकाशात दिसतो साप साप हा भ्रम आहे. दोरीच्या अधिष्ठानावर साप दिसतो. दोरी नसेल तर साप दिसणार नाही. भ्रमाने दोरी म्हणजे साप वाटतो. तसा प्रपंच हा भ्रम आहे. या प्रपंचाचे अधिष्ठान ब्रह्म आहे. जशी दोरी । याला ‘अध्यारोप’ म्हणतात.

अध्यारोप = अविद्या = तम = मूल प्रकृती = प्रधान = गुणसाम्य = मूल माया = अज्ञान हे सगळे समान अर्थाचे शब्द आहेत. ही प्रकृती त्रिगुणमयी आहे.

\* प.पू. डॉ. काटे स्वामीजी यांच्या घनगर्जित मासिक, एप्रिल २००६ वरून किंचित सुधारून पुनर्मुद्रित.

## अपवाद... म्हणजे काय ?

कारणाविना कार्य असूच शकत नाही. अधिष्ठानाशिवाय-दोरीशिवाय-काही साप नाही. शिंपलीत चांदी नाही. दिसते तो भ्रम ! (याला वेदांतात 'विवर्त' म्हणतात. विवर्त म्हणजे 'परिणाम' किंवा 'कार्य' नव्हे. साप दिसणे हा दोरीचा 'परिणाम' नव्हे, पाहणाऱ्याचे अज्ञान-भ्रम !) भ्रम नाकारणे हा अपवाद. तसेच ब्रह्मात नानाविधता नाही. ती नाकारणे, हा अपवाद.

## त्रिगुण म्हणजे काय ?

सत्त्व-रज-तम हे त्रिगुण आहेत. सत्त्व-पांढरा, रज-तांबडा. तम हे काळे असते. ती तीन रंगाची दोरी आहे. ती रज-सत्य-तमोगुणरूपी मूळ प्रकृती आहे. या मूळ प्रकृतीला साम्यावस्था = महासुषुप्ती = प्रलय म्हणतात. हे एकाच अर्थाचे शब्द आहेत. या प्रकृती मध्ये प्रलय काळी सर्व जीव आपल्या कर्म-वासना सहित लीन होतात. हा अनुभव प्रत्येकाला नेहमी निद्रेमध्ये येतो.

## माया आणि ईश्वर या संबंधी.....

सृष्टीकाळी ही मूळ प्रकृती जीवांची कर्मे परिपक्व झाली असता माया (ईश्वर), अविद्या (जीव), तामसी (जगत) अशी तीन रुपाने प्रकट होते. तीन वर्णांचे गोफ वेगळे होतात. पांढरा-तांबडा-काळा, सत्त्व-रज-तम, तीच माया ! विशुद्ध सत्त्वात ही माया आहे. तिच्यात जे चैतन्य प्रतिबिंबित होते तो सृष्टीच्या आधी ईश्वर होतो. त्याला अव्यक्त अंतर्दामी म्हणतात. तो सृष्टीचा कर्ता. तो पंचभूते या रुपाने उत्पादक/कारक होतो. पूर्ण ब्रह्म चैतन्य तामसीमध्ये प्रतिबिंबित होऊन पंचभूत रुपाने जगाला उपादान कारण हाते. पंचभूतांची सृष्टी होते. एखादा कोळी आपल्या तनूतून तंतू निर्माण करतो. त्या तंतूचे तो निमित्त कारण आहे आणि आपल्या उपाधीने उपादान कारण आहे.\*

## ईश्वर सृष्टी कशी करतो ?

विशुद्ध मायेत पडणारे चैतन्य म्हणजे ईश्वर. तोच सत्त्व, शुध्दी तारतम्याने अनंत अविद्यारूप जीव होतो. त्या अविद्येत प्रतिबिंबित जीव अविद्या होतात. मूळ प्रकृती त्या जीवांची व्यष्टिरूप अविद्या आहे आणि ईश्वराची समष्टी रूप प्रकृती तीच आहे. हेच 'कारण' शरीर आहे याला आनन्दमय कोश म्हणतात. अशी ही कारण सृष्टी आहे.

## आता सूक्ष्म सृष्टी पाहू

मायेतून ईश्वराच्या ईक्षणाने 'महत्' होते. त्यापासून अहंकार झाला. त्या अहंकारापासून सूक्ष्म आकाश, वायु, तेज, जल आणि पृथ्वी हे झालेत. त्यांना तन्मात्रा किंवा अपंचीकृत भूते म्हणतात. यांना अपंचीकृत सूक्ष्म भूते असे देखील म्हणतात. अपंचीकृत म्हणजे परस्परांत न मिळालेली भूते, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध या तन्मात्रा आहेत. ही सूक्ष्म सृष्टी झाली.

\* निमित्त कारण = efficient cause (उदा कुंभार) उपादान कारण = material cause (उदा. माती)  
(Aristotle)

## आता ज्ञानेंद्रिय पाहू

शब्द तन्मात्रेपासून श्रोत्र, स्पर्श - तन्मात्रेपासून - त्वचा, रसापासून - जिह्वा, रूपपासून-नेत्र, गंध-पासून घ्राण (नाक) ही ज्ञानेंद्रिये झाली. या सर्वांचे सत्त्वांश एक होऊन अतःकारण झाले. एकच अंतःकरण मन, बुद्धी, चित्त, अहंकार असे झाले. काही लोक चित्ताचा मनामध्ये अंतर्भाव करतात. अशारीतीने सत्त्वगुणापासून ज्ञानेंद्रिये झाली.

## आता कर्मेन्द्रिये पाहू

या तन्मात्रांच्या रजोशापासून कर्मेन्द्रिये झाली. आकाशादिकांच्या रजोगुणापासून, जीभ, हात, पाय, गुद आणि उपस्थ ही कर्मेन्द्रिये क्रमाने झालीत. या पाचही तन्मात्रांचे रजोशापासून प्राण झाला. तो प्राण पाच प्रकारचा झाला. प्राण-अपान-व्यान-उदान-समान. अशा सतरा तत्त्वांचा (पाच प्राण, पाच ज्ञानेंद्रिये, पाच कर्मेन्द्रिये, मन, बुद्धी) सूक्ष्म देह झाला. याला लिंगदेह म्हणतात. हा लिंग देह सुखदुःखाचे साधन आहे. या सूक्ष्म शरीरात प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय हे कोश, सामावले जातात. इथे स्वप्नावस्था अनुभवास येते. अशी ही सूक्ष्म सृष्टी आहे.

## आता स्थूल सृष्टी पाहू....

तन्मात्रांच्या तमोगुणापासून स्थूल सृष्टी झाली. तमोगुण प्रधान आकाश आणि पंचभूते (म्हणजे आकाश, वायु, तेज, जल, पृथ्वी) अशी स्थूल सृष्टी झाली. ही तमोगुण प्रधान पंचीकृत सृष्टी आहे. ही पंचभूते परस्परांत मिसळलेली असतात. पंचीकरणाने ही स्थूल सृष्टी होते.

## पंचीकरणाचा प्रकार असा

आकाशतत्त्वाचा अर्धा भाग आणि उरलेले वायु, तेज, जल, पृथ्वी या चार भूतांचा एक अष्टांश भाग, असे मिळून आकाश होते. अशा प्रकारे प्रत्येक भूताचा अर्धा भाग आणि बाकीच्या चार भूतांचा एक अष्टांश भाग मिळून पंचीकरण होते. अशारीतीने प्रत्येक तत्त्वात इतर चार तत्त्वेही अष्टांशाने असतात.

पृथ्वी तत्त्वापासून रोम-त्वचा-मांस-नाडी-अस्थि (मज्जा) हे स्थूलदेहाचे भाग होतात. जलापासून मूत्र-रेत-धाम-रक्त-लाळ हे पाच होतात. तेजापासून क्षुधा, तृष्णा, निद्रा, तन्द्रा, कांति हे पाच होतात. वायुपासून, चालणे, धावणे, आकुंचन, प्रसरण, लंघन हे पाच होतात. आकाशापासून काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय हे पाच होतात. पंचीकरणापासून असे पंचवीस होतात. या पंचीकरणापासूनच ब्रह्मांड होते. या ब्रह्मांडात चौदा भुवने (स्वर्गादि वरील सात आणि पातालादि खालील सात) आहेत. ही सगळी या पंचीकरणानेच होतात. चार जातींचे जीव होतात. तसेच जीवाकरीता भोग्य पदार्थ होतात. या पंचीकृत भूतांनी झालेल्या देहाला शरीर म्हणतात. याला अन्नमय कोश म्हणतात. अशाच प्रकारे व्यष्टी आणि समष्टी ही सृष्टी झाली.

## तीन अवस्था

सुषुप्ति = ईश्वर = प्राज्ञ = रुद्र (महेश)

स्वप्न = हिरण्यगर्भ = तैजस = विष्णु

जाग्रत = वैश्वानर = विश्व = ब्रह्मा

अज्ञानाच्या दोन शक्ती आहेत १) आवरण २) विक्षेप

आवरण शक्तीने घनदाट अंधाराप्रमाणे आत्मा आणि पचकोश यातला फरक झाकून टाकला. (ईश्वर आणि आत्मवेत्ते त्याला अपवाद आहेत.)

विक्षेप शक्तीने पंचतत्त्वाच्या देहालाच खरे समजण्याचे चुकीचे ज्ञान (अज्ञान) झाले. हे तत्त्वज्ञानाने नाहीसे करता येते.

तत्त्वज्ञानाचे दोन स्तर आहेत.

१) परोक्ष २) अपरोक्ष

परोक्ष = indirect = अप्रत्यक्ष ज्ञान, अपरोक्ष = direct = प्रत्यक्ष ज्ञान = साक्षात् अंतःसंवितचे स्फुरण intuition ज्ञान. हस्तामलकवत् = हातावरच्या आवळ्यासारखे प्रत्यक्ष असे ज्ञान. विक्षेप ही अज्ञानाची शक्ती आहे. अज्ञानाची आवरण शक्ती आत्म्याला झाकून टाकते. आवरणामुळे विक्षेप होतो.

गुरुमुखाने श्रवण केल्यावर असत्त्वावरण दूर होते. याला परोक्ष ज्ञान म्हणतात. श्रवण व मननाने सर्व शंका, विपरीत भावना, नष्ट होतात. निदिध्यासनाने साक्षात् अनुभूति येते.

## माया

माया.. या मा सा माया । जी नाही ती माया.

माया म्हणजे अध्यारोप, आता तो नाहीसा होतो. ब्रह्माविना अन्य काही नाहीच ही अनुभूति येते. हीच ब्रह्मानुभूति ! आत्मानुभूती ! अहं ब्रह्मास्मि हे अंतःस्फुरण, ही संवित्, हे ज्ञान, हाच जीवनमुक्तीचा मार्ग आहे ! वेदांताचे हेच रहस्य आहे.



## \* शुद्धिपत्रक \*

| पृष्ठ क्र. | ओळ                 | चूक                       | बरोबर                           |
|------------|--------------------|---------------------------|---------------------------------|
| ८६         | वरुन ३ री ओळ       | आहे                       | आहेत                            |
| १०७        | वरुन १४ वी ओळ      | शोध तावत्याची आहे.        | शोध तावत्याची निदर्शक आहे.      |
| ११६        | वरुन ६ वी ओळ       | चक्षुषक्षुः               | चक्षुषक्षुः                     |
| ११६        | खालून १३ वी ओळ     | (याचे ज्ञान               | (ज्याचे ज्ञान                   |
| ११८        | खालून १५ वी ओळ     | यासवत्क्य                 | याज्ञवत्क्य                     |
| १२३        | वरुन ९ वी ओळ       | काम                       | काय                             |
| १२९        | तळटीप              | वार्षिकात ज्ञाली          | वार्षिकात प्रसिध्द ज्ञाली       |
| १४२        | तळटीप              | १९९४ च्या                 | १९९५ च्या                       |
| १४६        | शेवटची ओळ          | आपला वेळ                  | आपली वेळ                        |
| १५४        | खालून १२ वी ओळ     | परत आणले                  | परत आणले"                       |
| १५४        | खालून ११ वी ओळ     | "पुढील घटना               | पुढील घटना                      |
| १५८        | खालून १३ वी ओळ     | पैसे दिसले हा भ्रम नव्हता | पैसे दिसले नाहीत हा भ्रम नव्हता |
| १६१        | तळटीपेची शेवटची ओळ | अनुभवावर आहे.             | अनुभवावर आहे. (तळटीप पुढे चालू) |
| १७७        | वरुन ११ वी ओळ      | तासांक्षेय                | तांस्तक्षेय                     |
| १८२        | खालून ११ वी ओळ     | आहे                       | आले                             |
| १९४        | खालून २ री ओळ      | तो म्हणजे असे             | तो म्हणत असे                    |
| २०१        | खालून १३ वी ओळ     | संकट                      | संकट कोण                        |
| २०२        | वरुन ८ वी ओळ       | हातच                      | हातचे                           |
| २०५        | तळटीप              | स्वतःचा                   | *स्वतःचा                        |
| २१७        | खालून १० वी ओळ     | हेल्महॅट्झ                | हेल्महॉल्ट्झ                    |
| २२४        | वरुन १ ली ओळ       | होतो                      | होतात                           |
| २३३        | खालून ४ थी ओळ      | या जागी                   | या जोगी                         |
| २३६        | वरुन ६ वी ओळ       | (खोटा)                    | (खोटे)                          |
| २४२        | वरुन १७ वी ओळ      | आहे                       | आहेत                            |
| २४४        | खालून ४ थी ओळ      | डेव्हिस                   | डेव्हिड                         |
| २५३        | खालून १२ वी ओळ     | सोडम                      | सेडम                            |
| २६९        | खालून ६ वी ओळ      | ४७ क्रमांकाची             | ४८ क्रमांकाची                   |



काही वृत्तपत्रांचे ग्रंथ समीक्षक आणि महाराष्ट्रातील इतर काही मान्यवरांनी

## १) विज्ञान आणि बुद्धिवाद

(बापूसाहेब ढाक्रे कला अकादमी, दानापूर, जि. अकोला यांचा विज्ञान पुरस्कार प्राप्त)

## २) विज्ञान आणि अंधश्रद्धा निर्मूलन

या ग्रंथाविषयी व त्यातील लेखांविषयी व्यक्त केलेली काही मते

### दै. पुढारी

विज्ञान आणि बुद्धिवाद व विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन हे ग्रंथ मी वाचले आणि केवळ थक झालो. अनेक अभ्यासपूर्ण संदर्भ आणि वास्तववादी उदाहरणे देऊन लेखकाने दैवी चमत्कार व दैवी अथांगपणा उलगडून दाखवला आहे.. आज विज्ञानाच्या नावाखाली ईश्वर आणि त्याची शक्ती बदनाम केली जात आहे. पण ईश्वर शक्ती केवळ श्रद्धेने नव्हे तर प्राचीन ऋषी-मुनी यांची योगसाधना, अंतःस्फूर्ती आणि तपःसाधना यावर आधारित होती हे प्रा. गळतगे यांनी सप्रमाण सिध्द केले आहे. जागोजाग ग्रंथांचे संदर्भ आणि ग्रंथसूची देण्यास ते विसरले नाहीत. त्यामुळे ज्यांना पुरावाच हवा असतो त्यांचे तोंड बंद होईल यात शंका नाही. अभ्यासपूर्ण ओघवती भाषा हे या दोन्ही पुस्तकांचे वैशिष्ट्य आहे. वाचत असताना जणू काही लेखक आपल्याशी बोलतोच आहे, असे वाटत राहते. एकदा वाचून समाधान होत नाही. काही प्रकरणे पुनःपुन्हा वाचावीशी वाटतात.

- दीपक भागवत, कोल्हापूर.

### दै. लोकमत

श्रद्धेचे अस्तित्व मानवी जीवनात अपरिहार्य आहे हे प्रमेय विज्ञानाच्या आधारेच सिध्द करण्यासाठी अद्वयानंद यांनी पाश्चात्य शास्त्रज्ञ संशोधकांचा आधार घेऊन केलेला युक्तीवाद खरोखरच स्तिमित करणारा आहे. बुद्धिवादाचा तसेच विज्ञाननिष्ठेचा मक्ता आपल्याकडेच आहे असे मानणाऱ्यांनी या पुस्तकातील युक्तिवाद आपल्या भूमिकेकडे नव्या दृष्टीने पाहण्याची निकड जाणवून देईल. या पुस्तकाचा सखोल अभ्यास प्रत्येक विचारवंत तरुणाने करायला हवा.

- शंकर सारडा, पुणे.

### दै. सकाळ

विज्ञान बुद्धिप्रधान असूनही बुद्धिवादी नाही यांचे सुंदर विवेचन विज्ञान आणि बुद्धिवाद या ग्रंथात लेखकाने केले आहे. प्रत्येक विज्ञानवादी व बुद्धिवादी माणसाबरोबरच सर्व सामान्य वाचकानेही या लेखनकृतीचा आस्वाद घेणे एकविसाव्या शतकात गरजेचे आहे.

- दत्ता उमराणीकर, कोल्हापूर.

दै. तरुण भारत

विज्ञान आणि अंधश्रद्धानिर्मूलन हे पुस्तक अंधश्रद्धानिर्मूलन समितीबद्दल आंधळी भक्ती व विश्वास बाळगणाऱ्या लोकांनी तर वाचलेच पाहिजे. पण विज्ञान व त्याची सामाजिक बांधिलकी या विषयाची आस्था बाळगणाऱ्यांनीही अवश्य वाचले पाहिजे, असे आग्रहाने म्हणावेसे वाटते.

- रामचंद्र रेडकर, बेळगांव.

पैलतीर (दिवाळी वार्षिक)

प्राचार्य गळतगे यांचे लेखन त्यांच्या ज्ञानाची आणि अभ्यासाची सखोलता दर्शविते.

- स्वामी विद्याशंकर भारती, शंकराचार्यपीठ, करावीर

प्रा. गळतगे यांचे लेखन प्रांजळ आधुनिकांची झोप उडवून टाकणारे आहे. विज्ञानाचा बदललेला दृष्टिकोन व अतींद्रिय मानसशास्त्राचे भरीव स्वरूप त्यांच्या लेखनामध्ये सप्रमाण पाहावयास मिळते... अद्ययावत् माहिती व बिनतोड युक्तिवाद स्वतःला बुद्धिवादी आणि विज्ञानवादी म्हणविणाऱ्यांचा चांगला पाणउतारा करतात. अतींद्रिय संशोधनातील साधक-बाधक बाजू त्यांनी समर्थपणे मांडल्या आहेत. त्यांची प्रशंसा करावी तेवढी थोडीच.

- डॉ. व. स. येरकुंटवार, संपादक 'प्रज्ञालोक' नागपूर.

प्रा. गळतगे यांनी तथाकथित बुद्धिवाद्यांवर व त्यांच्या अकलेवर चांगला प्रकाश टाकला आहे. त्यांचे वाचन किती दांडगे आहे व अभ्यास किती खोल आहे याचे यथार्थ ज्ञान होते व कौतुक वाटते. प्रत्येकाने वाचावे असे हे सुंदर पुस्तक आहे.

- डॉ. प. वि. वर्तक, पुणे

प्रा. अद्वयानंद गळतगे यांचा तत्त्वज्ञान, मानसशास्त्र व विज्ञान यांचा व्यासंग विस्मयकारक आहे. आपल्या लेखनास आधार म्हणून त्यांनी अगदी अद्ययावत् ग्रंथांचा उल्लेख केला आहे. त्यांचे लेखन प्रत्येकाने मनन करावे असेच आहे.

- डॉ. भा. प. बहिरट, पंढरपूर

प्रा. गळतगे यांचे परामानसशास्त्राचे विवेचन विचारप्रवर्तक व आव्हानात्मक वाटते. तथाकथित अंधश्रद्धानिर्मूलकांच्या हातात काही दैनिके आहेत. त्यामुळे गोबेल्सचे प्रचारतंत्र ते वापरू शकतता; आणि सामान्य जनता त्यामुळे फसते. त्यामुळे प्रा. गळतगे यांचे वैज्ञानिक विवेचन सामान्य जनतेपर्यंत पोचणे अवघड होते.

- श्री. ग. वा. तगारे, सांगली

प्राचार्य गळतगे यांच्या लेखनावरून त्यांचा अभ्यास, वाचन व चिंतन किती प्रचंड आहे. याचा प्रत्यय आला.

- श्री. वा. ज. खेर, बारशी

## लेखक



प्राचार्य अद्वयानंद गळतगे

डोळ्यांना दिसणारे भौतिक जग हेच फक्त खरे जग समजून त्या जगाच्या नियमांच्या शोघालाच 'विज्ञान' म्हणण्याची हत्ती जी प्रथा आहे. ती कशी चुकीची आहे, डोळ्यांना न दिसणारे अतींद्रिय जगही भौतिक जगाइतकेच कसे खरे आहे व त्या जगाच्या नियमांचे परिणाम भौतिक जगातसुद्धा कसे होतात हे अनेक भौतिक पुराव्यानिशि या ग्रंथात दाखवून दिले आहे. त्यामुळे विज्ञान सत्य शोधते हे मान्य असणाऱ्या विज्ञाननिष्ठाना हे अतींद्रिय भौतिक पुरावे विचारात घ्यावे लागतील. हे अतींद्रिय व भौतिक पुरावेनिष्ठ 'विज्ञान' म्हणजे मानवाचे अंतिम कल्याण करणारे 'अध्यात्म विज्ञान' च कसे आहे हे अनेक भौतशास्त्रीय व अध्यात्मशास्त्रीय प्रमाणांनी या ग्रंथात लेखकाने दाखवून दिले आहे.

**विज्ञान आणि वनत्कार** या ग्रंथाचे लेखक प्राचार्य श्री अद्वयानंद गळतगे यांच्या यापूर्वी लिहिलेल्या 'विज्ञान आणि बुद्धीवाद' व 'विज्ञान आणि अंधश्रद्धा निर्मूलन' या ग्रंथाविषयी काही वृत्तपत्रांनी व माध्यवरांनी व्यक्त केलेली मते.

### डॉ. पुढारी : दिपक भागवत कोल्हापूर

'विज्ञान आणि बुद्धीवाद' व 'विज्ञान आणि अंधश्रद्धा निर्मूलन' हे ग्रंथ मी पाचले आणि केवळ थळ झालो..... अभ्यासपूर्ण ओघवली भाषा हे या दोन्ही पुस्तकांचे वैशिष्ट्य आहे. वाचत असताना जणू काही लेखक आपल्याशी बोलतोच आहे, असे वाटत राहते. एकदा वाचून समाधान होत नाही काही प्रकरणे पुन्हा पुन्हा पाचावीशी वाटतात.

### डॉ. लोळवत : शंकर सारडा, पुणे

श्रद्धेचे अस्तित्व मानवी जीवनात अपरिहार्य आहे. हे प्रमेय विज्ञानाच्या आधारेच सिध्द करण्यासाठी अद्वयानंद यांनी पाश्चात्य शास्त्रज्ञ संशोधकांचा आधार घेऊन केलेला युक्तीवाद खरोखरच स्तिमित करणारा आहे.....या पुस्तकाचा सखोल अभ्यास प्रत्येक विचारवंत तरुणाने करतायला हवा.

### डॉ. सकाळ : दत्ता उमरानीकर, कोल्हापूर

विज्ञान बुद्धीप्रधान असूनही बुद्धीवादी नाही याचे सुंदर विवेचन 'विज्ञान आणि बुद्धीवाद' व 'विज्ञान आणि अंधश्रद्धा निर्मूलन' या ग्रंथात लेखकाने केले आहे. प्रत्येक विज्ञानवादी व बुद्धीवादी भाणसाबरोबरच सर्वसामान्य वाचकानेही या लेखनकृतीचा आस्वाद घेणे एकविसाव्या शतकात गरजेचे आहे.

**पैलटोर दिवाळी वार्षिक अंक : स्वामी विद्याशंकर भारती, शंकराचार्यपीठ, करवीर**  
प्राचार्य गळतगे यांचे लेखन त्यांच्या ज्ञानाची आणि अभ्यासाची सखोलता दर्शविते.

### डॉ. व. स. घेरकुंटवार, संपादक 'प्रज्ञालोक' नागपूर :

प्राचार्य गळतगे यांचे लेखन प्रांजळ आधुनिकांची झोप उठवून टाकणारे आहे. विज्ञानाचा बदललेला दृष्टीकोन व अतींद्रिय मानसशास्त्राचे भरीव स्वरूप त्यांच्या लेखनामध्ये पहावयास मिळते.....त्यांची प्रशंसा करावी तेवढी खोडीच आहे.